महात्मा गांधी के विचार

संकलन एवं संपादन
आर. के. प्रभु तथा यू. आर. राव
प्राककथन
आचार्य विनोबा भावे
तथा
डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन
अनुवाद
भवानी दत्त पंड्या

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित पुस्तक The Mind of Mahatma Gandhi का यह हिंदी अनुवाद महात्मा गांधी की 125 वीं जयंती के अवसर पर 2 अक्टूबर, 1994 को प्रकाशित

मूल © नवजीवन ट्रस्ट | हिंदी अनुवाद © नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 1994
नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद – 380 014 (भारत) की अनुमति से निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया,
ए-5, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली – 110 016 द्वारा प्रकाशित
विषय सूची

प्राकृतिक
भूमिका
पाठकों से

1. अपने बारे में
2. सत्य
3. अभय
4. आस्था
5. अहिंसा
22. अहिंसा की शक्ति
23. अहिंसा के लिए प्रशिक्षण
24. अहिंसा पर अमल
25. अहिंसक समाज
26. अहिंसक राज्य
27. हिंसा और आतंकवाद
28. हिंसा और कायरता के बीच चुनाव
29. आक्रमण का प्रतिरोध
30. भारत के सामने चुनने के लिए मार्ग
31. भारत और अहिंसक मार्ग
32. भारत और हिंसक मार्ग

6. सत्याग्रह
33. सत्याग्रह का दिव्य संदेश
34. सत्याग्रह की शक्ति
35. असहयोग
36. उपवास और सत्याग्रह

7. अपरिग्रह
37. अपरिग्रह का दिव्य संदेश
38. गरीबी और अमीरी
39. दरिद्रनारायण

8. श्रम
40. रोटी के लिए शारीरिक श्रम का सिद्धांत
41. श्रम और पूंजी
42. हड़तालें – वैध और अवैध
43. खेतिहर किसान
44. श्रमिक वर्ग के सामने मौजूद रास्ते

9. सर्वोदय
45. सर्वोदय का दिव्य संदेश
46. यज्ञ का दर्शन
47. यह शैतानी सभ्यता
48. मनुष्य बनाम मशीन
49. औद्योगिकरण का अभिशाप
50. समाजवाद
51. समाज का समाजवादी ढांचा
52. साम्यवादी पंथ – बीज

10. न्यासिता

53. न्यासिता का दिव्य संदेश
54. अहिंसक अर्थव्यवस्था
55. आर्थिक समानता

11. ब्रह्मचर्य

56. ब्रह्मचर्य का दिव्य संदेश
57. विवाह का आदर्श
58. बच्चे
59. संतति-निग्रह
60. समाज में स्त्रियों की स्थिति और भूमिका
61. यौन शिक्षा
62. स्त्रियों के विरुद्ध आपराध
63. आश्रम के प्रति

12. स्वतंत्रता और लोकतंत्र

64. स्वतंत्रता का दिव्य संदेश
65. स्वराज का मेरे लिए क्या अर्थ है
66. मैं ब्रिटेन-विरोधी नहीं हूँ
67. रामराज्य
68. कश्मीर
69. भारत में विदेशी बसियां
70. भारत और पाकिस्तान
71. भारत का ध्येय
72. लोकतंत्र का सार
73. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस
74. लोकप्रिय मंत्रिमंडल
75. मेरे सपनों का भारत
76. वापस गांवों की ओर
77. समग्र ग्राम सेवा
78. पंचायत राज
79. शिक्षा
80. भाषावाद प्रांत
81. गोरक्षा
82. सहकारी पशुपालन
83. प्राकृतिक चिकित्सा
84. सामूहिक स्वच्छता
85. सांप्रदायिक साधनाकां

13. स्वदेशी

86. चरखे का दिव्य संदेश
87. स्वदेशी का अर्थ

14. भाईचारा

88. प्रेम का दिव्य संदेश
89. समस्त जीवन एक है
90. मैं सांस्कृतिक अलगाव नहीं चाहता
91. राष्ट्रभक्ति बनाम अंतरराष्ट्रीयतावाद
92. नस्लवाद
93. युद्ध और शांति
94. परमाणु युद्ध
95. शांति का मार्ग
96. कल की दुनिया

15. प्रासंगिक विचार

स्तोत्र
स्तोत्र-संदर्भ
कालानुक्रम
अनुक्रमणिका
प्राक्कथन

(संशोधित अंग्रेजी संस्करण का)

कुछ प्राक्कथन है कि श्री प्रभु और श्री राव द्वारा संपादित ‘महात्मा गांधी के विचार’ की नयी परिषद्ध और परिवर्धित आवृत्ति नवजीवन ट्रस्ट की तरफ से प्रकाशित की जा रही है।

इस नये संस्करण में गांधीजी के अंतिमतम विचार भी उद्धृत किए गए हैं। इससे यह संस्करण अद्यतन बना है, ऐसा कह सकते हैं।

“लोकोंतराणां शेतांसि को हि विश्वासमहिति” –

लोकोंतर पुरुषों का मानस कौन जान सकता है, यह भवभूति का वचन सर्वश्रूत है। गांधीजी ने लोकोंतर पुरुषों का मानस कौन जान सकता है, यह भवभूति का वचन सर्वश्रूत है।

लोकोंतर पुरुषों का मानस कौन जान सकता है, यह भवभूति का वचन सर्वश्रूत है। गांधीजी ने लोकोंतर पुरुषों का मानस कौन जान सकता है, यह भवभूति का वचन सर्वश्रूत है।

पड्राव – किशनगंज
जिला – पूर्णिया, बिहार प्रदेश
12-5-1966
प्राकथन

(प्रथम और द्वितीय अंग्रेजी संस्करणों का)

ऐसा कभी-कभी ही होता है कि सामान्य स्तर से ऊपर उठकर कोई असाधारण आत्मा, जिसने ईश्वर के विषय में अचिक गहराई से चिंतन किया है, देवी हेतु का अधिक सप्तता के साथ प्रतिसंवेदन करती है और देवी मार्गदर्शन के अनुरूप वीरतापूर्वक आचरण करती है | ऐसी महान आत्मा का आलोचक अंतर्कार कर्म और अतिव्यस्त संसार के लिए प्रकट संकेत-दीप का काम देता है | गांधीजी उन पैगंबरों में से हैं जिनमें हृदय का शैल, आत्मा का शील और निर्भरक व्यक्ति की हंसी के दर्शन होते हैं | उनका जीवन और उनके उपदेश उन नूतनों के साध्व हैं, जो राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय की सीमा से परे सार्वभौम हैं और जो युगों से इस देश की धरोहर रहे हैं – आत्मा में आत्मा, उसके रहस्यों के अनुसार आदर-भाव, पवित्रता में निहित सौंदर्य, जीवन के कर्तव्यों का स्वीकार, चरित्र की प्रामाणिकता |

ऐसे अनेक लोग हैं, जो गांधीजी को एक ऐसा पैगंबर राजनीतिज्ञ मानकर खाररज कर देते हैं, जो नाजुक मौकों पर अनाड़ी साहित्य होता रहा | एक यथार्थवादी और आत्मसृजनीक पूर्वकाल में दक्ष हो | एक दूसरे अर्थ में, राजनीतिज्ञ एक कर्तव्य है और राजनीतिज्ञ जिसने कुछ आत्मा की रचना करने, उन्हें ईश्वर के प्रति आस्था रखने और मानवता से प्रेरण करने की प्रेरणा देने अपना जीवन-लक्ष्य मानता है | यह एक अनेक लोगों ने कहा है कि यदि हम आत्मा का पश्चात्त्व अपनी शक्तियों में विस्तार करते हैं और उन नूतनों की रचना करते हैं जिनमें हम अपने लक्ष्य के प्रति अजेय आस्था उत्पन्न करते हैं, तो हम उन्हें इस बात का पक्का शख्स होते हैं कि वह अपने लक्ष्यों के मन में अपने नये लक्ष्य के प्रति अपनी आस्था उत्पन्न करने में अधिक सह्य होते हैं | गांधी मूलतः इस द्वितीय अर्थ में ही राजनीतिज्ञ है | उन्हें इस बात का पक्का शख्स होता है कि वह हम आत्मा का पश्चात्त्व अपनी शक्तियों में विस्तार करते हैं और उन नूतनों की रचना करते हैं जिनमें हम अपने नये लक्ष्य के प्रति अपनी आस्था उत्पन्न करते हैं | यह एक दूसरा लक्ष्य, एक अव्यवहारिक 'यूटीपिया' मालूम हो सकता है लेकिन यह अप्राप्य नहीं है, क्योंकि इस पर आज ही और अभी से अमल किया जा सकता है | कोई भी व्यक्ति दूसरों की प्रतीक्षा किए बिना भावी संसार की जीवन-पद्धति को – अहिंसा पद्धति को – अपना सकता है | और यदि व्यक्ति ऐसा कर सकता है तो कैसे अहिंसक मानव शक्ति समूह नहीं कर सकते ? लोग अक्सर शुरुआत करने से इसलिए हिचकते हैं कि उन्हें लगता है कि लक्ष्य को पूरी तरह प्राप्त नहीं किया जा सकेगा | हमारी यह मनोवृत्ति ही प्रागैतिक अनुष्ठान की सबसे बड़ी रुकावट है – यह रुकावट ऐसी है जिसे इस दर्शन के अनुसार अभी तक नहीं कर सकता है।"
एक आम आलोचना यह है कि गांधीजी की दृष्टि उनके गृहीत ज्ञान से कहीं ऊंची उड़ान भरती है, कि वे इस सुगम कित्तु भाँति धारणा को लेकर आगे बढ़ते हैं कि सनसार सत्तुर्वों से भरा पड़ा है | यह वस्तु: गांधी के विचारों का मिथाक्षण है | वे अच्छी तरह समझते हैं कि जिंदगी ज्ञाता-से-ज्ञाता दूसरे दर्ज की जिंदगी होती है और हमें बराबर आदर्श तथा संभाव्य के बीच समझौता करते हुए चलन पड़ता है | स्वर्ग में कोई समझौता नहीं है, न कोई व्यावहारिक सीमाएं हैं लेकिन पृथ्वी पर तो हम प्रकृति के कुछ नियमों से बंधे हैं | हमें मानवीय विकारों को स्वीकार करते हुए ही व्यवस्थित विश्व की रचना करनी है | बड़े प्रयास और कठिनाई से ही आदर्शों की सिद्धि हो पाती है | यह महसूस करते हुए भी कि सभ्य समाज का आदर्श अहिंसा ही है, गांधी जी हिंसा की अनुमति देते हैं | “यदि व्यक्ति में साहस का अभाव हो तो मैं चाहूँगा कि वह खतरा सामने देखकर कारणों की तरह भाग खड़े होने के बजाय मारने और मरने की कला सीखे.” 2 | जीवन जीने की प्रक्रिया में ही कूड़ने का हिंसा होती है और हमें ज्यूनतम हिंसा का रास्ता चुनना पड़ता है | 3 समाजों की प्रगति के तीन चरण स्पष्ट हैं: परिलक्षित हैं – पहले चरण में जंगल का नियम चलता है जिसमें हिंसा और स्वार्थ का बोलबाला होता है; दूसरे चरण में विधि का नियम और अदालतों, पुलिस तथा कारागृहों सहित निष्पक्ष न्याय की व्यवस्था होती है; और तीसरा चरण वह है जिसमें अहिंसा और निस्स्वार्थ भाव का प्राधान्य होता है तथा प्रेम और विधि एक ही होते हैं | यह अंतिम चरण ही सभ्य मानवता का लक्ष्य है और गांधी जैसे लोगों का जीवन तथा कार्य हमें उसी के निकट ले जाते हैं | गांधी के विचारों और उनकी चित्तन-प्रक्रिया को लेकर आज बड़ी भ्रातिया फैली हुई है | मुझे आशा है कि यह पुस्तक, जिसमें गांधी की आस्था और आचरण के केंद्रीय सिद्धांतों के विषय में उनके अपने ही लेखन से संगत उद्दर्नों का संकलन किया गया है, आधुनिक व्यक्ति के मन में गांधी की स्थिति को सुपस्थित करने में सहायक सिद्ध होगी | बनारस 4 अप्रैल, 1945 -सर्वपल्ली राधाकृष्णन 1. लिबर्टी, लंदन, 1931. 2. हरिजन, 15-1-1938, पृ. 418. 3. हरिजन, 28-9-1934, पृ. 259.
भूमिका

(संशोधित अंग्रेजी संस्करण की)
किसी महापुरुष का, उसके जीवन-काल में, मूल्यांकन करना अथवा इतिहास में उसके स्थान का निर्धारण करना, आसान काम नहीं है | गांधीजी ने एक बार कहा था: “सोलन को किसी व्यक्ति के जीवनकाल में, उसके सुख के विषय में निर्णय देने में कठिनाई अनुभव हुई थी; ऐसी सूत्र में, मनुष्य की महानता के विषय में निर्णय देना और भी कठिना कठिन काम हो सकता है?” 1 एक अन्य अवसर पर, अपने बारे में बात करते हुए उन्होंने कहा था: “मेरी आँखें मुंद जाने और इस काया के भस्मीभूत हो जाने का बाद, मेरे काम पर निर्णय देने के लिए काफी समय शेष रह जाएगा.” 2 अब उनकी शहादत को उसीस बरस हो चुके हैं।

उनकी मृत्यु पर सारी दुश्मन ने ऐसा खोक मनाया जैसा मानव इश्क्ष्म में किसी अन्य मृत्यु पर नहीं मनाया गया था | जिस तरह उनकी मृत्यु हुई, उससे यह दुख और भी बढ़ गया था | जैसा कि किसी प्रेक्षक ने कहा था, उनकी हत्या की याद शांतिबिहियों तक ताजा रहेगी | सं. रा. अमरीका की 'हस्पक प्रेस' का मानना था जैसा ही शहादत के बाद से मानव इतिहास में किसी अन्य मृत्यु का दुश्मन पर इतना भावात्मक प्रभाव नहीं पड़ा। 3 गांधीजी के बारे में भी यह कहना उचित ही होगा कि “वे अब युगपुरुषों की कोशियों में आ गए हैं” उस अंधकारमय राशत्र को जवाहरलाल नेहरु द्वारा कहे अशवस्मरणीय इरबबस कानों में गूंज जाते हैं: “हमारे जीवन से एक ज्योति लुप्त हो गई है” इसी भावना को रेखांकित करते हुए 'न्यूयार्क टाइम्स' 31 जनवरी, 1948 को यह और जोड़ा था कि अब जो कुछ कहने के लिए बचा है, वह इतिहास के कूर हाथों लिखा जाएगा | प्रश्न यह है कि इतिहास गांधीजी के बारे में क्या फैसला देगा?

यदि समसामयिक अभिमानों को महत्वपूर्ण मानी तो गांधीजी की गिनती मानव इतिहास के महानतम पुरुषों में की जाएगी | जहां इ. इ. फॉस्टर की धारणा थी कि गांधी को संभवतः हमारी शाकाहारी का महानतम व्यक्ति माना जाएगा, आर्नल्ड टायनबी को व्यक्ति विश्वास था कि ऐसा अवश्य होगा | डॉ. जे. एच. होम्स ने यह कहकर कि "गांधीजी गैरान्तु बुद्ध के बाद महानतम भावतय थे और ईसा मसीह के बाद महानतम व्यक्ति थे" गांधीजी का और भी ठोस मूल्यांकन कर दिया था | लेकिन अपने देशवासियों के हृदयों में तो वे संभवतः महात्मा के रूप में अकिंत रहेंगे या फिर वे उन्हें और भी प्यार से बापू-'रास्त्रमिता'- कहकर याद रखेंगे जिसीं वे एक रक्तहीन क्रांति के जरिए उन्हें विदेशी दासता से मुक्त कराया था।

गांधीजी के बे कौन-से गुण हैं जो महानता के अवयव हैं ? वे केवल एक महान व्यक्ति ही नहीं थे; वे महापुरुष और सत्पुरुष, दोनों थे – यह योग, जैसा कि एक आलोचक का कहना है, अत्यंत दुर्लभ है और लोग प्राय: इसका महत्व
भावनाओं और आचरण के इस व्यक्ति के पीछे कोई भी निष्ठुर कारण नहीं थे। उन्होंने सच्चे पुजारी के समक्ष नये-नये रूपों में उजागर होता है, उन्होंने अशहंसा के शस्त्र के प्रयोग करने का प्रयास नहीं किया था।

राज्य की संवधक नील है, अतः: अपने सच्चे पुजारी के समक्ष नये-नये रूपों में उजागर होता है, उन्होंने अहिंसा के सिद्धांत के
नये आयामों और नयी शक्तियों को खोजने में सफल होने का दावा किया था | यह ठीक है कि वह सिद्धांत सत्य के सिक्के का ही दूसरा पहलू था लेकिन इसी कारण, वह उससे अभिन्न था | गांधीजी ने सारी दुनिया में फैले अपने सहयोगियों के मन में इस बात को बिठाना अपना जीवन-ध्येय मान लिया था कि व्यक्ति, समुदाय अथवा राष्ट्र के रूप में उन्हें तब तक चैन नहीं मिल सकता जब तक वे अहिंसा और सत्य के मार्ग पर चलने का निश्चय नहीं कर लेते |

एक आलोचक के अनुसार, राजनीति में इस मार्ग का अर्थ था – और है – एक आमूल क्रांति अर्थात समूचे व्यक्तिगत अथवा राजनीतिक जीवन में एक बदलाव, जिसके बिना कोई समाधान संभव नहीं | लेकिन, गांधीजी व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन अर्थात मनुष्य के अंतर्गत और बहिर्गत जीवन के बीच किसी भेदभाव दीवार के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते थे | इस अर्थ में वे विश्व के अधिकांश राजनीतिज्ञों और राजनेताओं से बिलकुल अलग थे | और, इसी में उनकी शक्ति का रहस्य छिपा था |

गांधीजी ने स्वयं कहा था कि उनके पास जो भी शक्ति अथवा प्रभाव है, वह धर्म से उद्भूत है | स्टेफोर्ड क्रिस्क के मन में शायद यहीं बात थी जब उन्होंने कहा था कि हमारे जीवन में सारी दुनिया के अंदर गांधीजी से बड़ा आध्यात्मिक नेता पैदा नहीं हुआ | गांधीजी के व्यक्तित्व के इसी पक्ष को सार रूप में प्रस्तुत करते हुए ‘मानचेस्टर गांजियन’ ने 31 जनवरी 1948 को लिखा था : “सबसे बढ़कर, वे ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने धर्म के अर्थ और उसके मूल्य के विषय में हमारी धारणा को पुनरुज्जीवित किया और उसे स्फूर्ति प्रदान की | यद्यपि वे एक ऐसी सर्वसमावेशी प्रजाअथवा भावात्मक संपत्ति के धनी नहीं थे कि किसी नये दर्शन या नये धर्म को जन्म देने लेने लगे और इसके नैतिक प्रकृति की शक्ति और शृंगार स्पष्ट रूप से उनकी गहरी धार्मिक भावनाओं से उत्पन्न हुई थीं....”

आज दुनिया निश्चित रूप से विनाश के किनारे पर खड़ी है जिससे उसकी रक्षा करना काफी कठिन दिखाई दे रहा है | इसके कारण है : सतत वैचारिक संघर्ष, विकत जातीय द्वेष जिनके परिणामस्वरूप ऐसे युद्ध छिप़क सकते हैं जिनकी मिसाल इतिहास में नहीं मिलती, और परमाणु अस्तित्व के रूप में अधानुभूत व्यक्ति का बराबर बना हुआ खतरा जिससे अक्सर प्रजाएं चाहते हैं कि किसी नये दर्शन या नये धर्म को जन्म देने लगे लेकिन उनकी नैतिक प्रकृति की शक्ति और शृंगार स्पष्ट रूप से उनकी गहरी धार्मिक भावनाओं से उत्पन्न श्रद्धा इश्यु हुई थी | तथापि, जब भी इस श्रद्धा की उपेक्षा करने से उसका अपना अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है |
इस पुस्तक में गांधीजी अपने ही शब्दों में अपना पक्ष प्रस्तुत करते हैं; यहां उनके और पाठकों के बीच में कोई व्याख्याकार नहीं है, चूंकि उसकी आवश्यकता ही नहीं है | पश्चिम के लोगों को कभी-कभी गांधीजी को समझने में कठिनाई होती है | उदाहरण के लिए, हॉरेस एजेंडर की टिप्पणी देखें जिसमें उन्होंने बताया है कि गांधीजी के गहन पराभूतिक तर्क को पकड़ने में एंग्लो-सेक्सन बुद्धि कहीं-कहीं बहुत चकरा जाती है | इस पुस्तक में नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक विषयों पर गांधीजी के विचारों को समझने के लिए आधारभूत सामग्री उपलब्ध की गई है इसमें मनोविज्ञान के प्रबुद्ध विद्वानों को संबंधत: गांधीजी की प्रेरणा और आचरण के मूल स्रोतों का गहराई से अध्ययन करना होगा | उसके लिए वर्तमान पुस्तक एक स्रोत-संदर्भ का ही काम दे सकती है | वर्तमान संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण पिछले संस्करणों से बीस वर्ष से भी अधिक समय के बाद प्रकाशित हो रहा है | इसमें वह सामग्री समाविष्ट है जो पिछले संस्करणों में शामिल नहीं हो सकती थी: अपने निर्णयांकित अंतिम वर्षों 1946-48 में गांधीजी के विचार और दर्शन, जब वे जाति, पंथ, दल, यहां तक कि देश से भी ऊपर उठकर मानव आत्मा की लोकोत्तर ऊर्जाओं को छू गए थे तब वे सच्चतिरंग प्रकाश का हो गए थे | इन वर्षों में, जिनकी परिप्रेक्षा उनकी शहदत में हुई, वे मानव धर्म का ही प्रचार और व्यवहार करने लगे थे, क्योंकि केवल वही मानवता के अंतिम की रक्षा करने में समर्थ है | इसकी कारण उन अंतिम वर्षों में उनके द्वारा व्यक्त विचार और अभिव्यक्ति हमारे और भारतीय समस्याओं पर गांधीजी के विचार प्रायः समाविष्ट नहीं हो पाए थे | इसका एक कारण स्थानान्तर और दूसरा, विदेशी पाठकों की आवश्यकता को ध्यान में रखना था | गांधीजी के व्यक्तित्व और उनकी दृष्टि को पूरी तरह समझने के लिए इस वर्षों में उनके दर्शन का दृष्टि और व्याख्याता बनाए जाए | वर्तमान पुस्तक में इस सामग्री का समावेश करने के लिए हमें कई नये अथाय जोड़ने पड़े हैं और गत संस्करणों के कुछ अथायों का कलेवर बढ़ाना पड़ा है | इसके अतिरिक्त पिछले संस्करणों में एक दोष यह था कि उनमें विश्वास रूप से भारतीय समस्याओं पर गांधीजी के विचार प्रायः समाविष्ट नहीं हो पाए थे | इसका एक कारण स्थानान्तर और दूसरा, विदेशी पाठकों की आवश्यकता को ध्यान में रखना था | गांधीजी के व्यक्तित्व और उनकी दृष्टि को पूरी तरह समझने के लिए इस वर्षों में उनके दर्शन का दृष्टि और व्याख्याता बनाए जाए | वर्तमान पुस्तक में इस सामग्री का समावेश करने के लिए हमें कई नये अथाय जोड़ने पड़े हैं और गत संस्करणों के कुछ अथायों का कलेवर बढ़ाना पड़ा है | पुस्तक के अभिप्राय और प्रयोजन की बेहतर पूर्ति के लिए सामग्री का उल्लेखनीय पुन:संगठन और पुनर्विन्यास भी किया गया है | इस पुस्तक की तैयारी में जिन-जिन पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं से सामग्री संकलित की गई है, उन सभी के प्रकाशकों के प्रति संकलनकर्ता अपना हार्दिक आभार प्रकट करते हैं | इस नये संस्करण के लिए आचार्य विनोबा भावे ने बड़ा ही महत्वपूर्ण प्राक्कल्पन लिखा है जिसके लिए हम उनके अतिम कृतज्ञ हैं |
अंतिम बात, अंतिम कहानी नहीं है | पाठक देखेंगे कि इस भूमिका के नीचे केवल एक ही संकलनकर्ता के हस्ताक्षर हैं | कारण यह है कि मेरे दूसरे साथी अब इस दुनिया में नहीं हैं | गांधीजी के उपदेशों के आजीवन अध्येता और प्रमाणित व्याख्याता, तथा मुझ समेत अनेक लोगों के मित्र एवं मार्गदर्शक श्री आर. के. प्रभु का 4 जनवरी को निधन हो गया | यह दुखद घटना नये संस्करण की भूमिका लिखिये जाने तथा पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व ही घट गई | इसलिए यहाँ जो कुछ लिखा गया है, उसकी जिम्मेदारी अब केवल मेरी है; इसी प्रकार जो कहा जाना चाहिए था, पर कहने से रह गया है, उसके लिए मैं ही दोषी हूँ | किंतु मेरी जिम्मेदारी तथा दोष कुछ सीमा तक इसलिए कम माना जा सकता है कि प्रभु अपने अंतिम दिन तक मुझे बराबर पत्र लिखकर अपने पाठित्यपूर्ण विचारों से लाभार्थित करते रहे | मुझे दीस वर्ष तक प्रभु की मित्रता का सौभाग्य प्राप्त रहा और इस दौरान काफी समय मैंने उनके साथ सक्रिय सहयोगी के रूप में काम किया | इसलिए मैं उनकी जितनी भी प्रशंसा करूं, मेरी हित में कम ही होगी; और इसी कारण मैं उनके बारे में जो भी कहं, यहां प्रभु उसे भर निष्क्रिय नहीं मानेंगे | प्रभु एक ‘विशाल’ गांधी परियोजना के उद्देश्यके तुरंत तत्त्वात्मिक मार्गों के उपर अपने संस्करण के साथ प्रदर्शित कर सके | सौभाग्यवश, प्रभु ने स्वयं ही कई छोटे-बडे प्रयास किये, जो सभी नवजीवन द्वारा प्रकाशित हुए हैं | गांधी वाक्यपद, कोई गंभीर अभ्यास अयोग्य ही प्रभु के योगदान का मूल्यांकन कर सकेगा | मुझे तो उनसे मिली प्रेरणा, नेतृत्व और साहचर्य के लिए उनके रूप को स्वीकार करके ही संतोष मानना होगा | पर, मैं यहां गांधी-संकलनों के क्षेत्र में प्रभु के स्थान विषय में दो बड़ी विश्वास एवं अनावरित टिप्पणियों का उल्लेख करना चाहूँगा | पहली टिप्पणी स्वयं गांधीजी की है जो उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र, पूना में 27 जून, 1944 को दोनों के साथ एक अविस्मरणीय साक्षात्कार के दौरान दी थी | उन्होंने कहा था: “प्रभु, तुम मेरे लेखन की धारावाहिक से ओप्टिस्ट्री हो |” दूसरी टिप्पणी गांधीजी के प्रसिद्ध दार्शनिक-व्याख्याता डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की है जो उन्होंने प्रभु के निधन पर भेजे गए अपने व्यक्तित्व शोक-संदेश में दी थी: “गांधीजी पर किए गए उनके काम का प्रकाशन हम सभी के लिए उनके जीवन के मुख्य ध्येय की अच्छी यादगार साबित होगा।”

नई दिल्ली, 13 जनवरी, 1967

- यू. आर. राव

1. हरिजन, 10-12-1938, पृ. 377.
2. हरिजन, 4-4-1920, पृ. 107.
3. सर्वपल्ली राधाकृष्णन: ‘महात्मा गांधी, एसेज एंड रिफलेक्शन्स आन हिज लाइफ एंड वर्क’, जोर्ज एलन एंड अनविन, लंदन (1949), पृ. 537.
भूमिका

(प्रथम और द्वितीय अंग्रेजी संस्करणों की)

‘गांधी एक गूढ पहेली है’ – यह बात अक्सर न केवल उन लोगों के मुंह से सुनने में आती है जो गांधीजी की उक्तियों और कृत्यों के आलोचक हैं बल्कि वे लोग भी कहते हैं जिनसे उनका काफी निकट का संबंध रहा है।

यह बात इसलिए और भी आश्चर्यजनक है कि पिछले पचास वर्षों से गांधीजी का अपना निजी जीवन लगभग नहीं के बराबर रहा है। वे शायद ही कभी अकेले होते हों; उनका कामकाज, बातचीत, ध्यान, प्रार्थना तथा भोजन, सभी अपने सहयोगियों की संगति में होता है। वे सोते भी खुले आकाश के नीचे एक शायनशाला में हैं; अलग कमरे में तो शायद ही कभी सोते हों।

गांधीजी ने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है कि उनके जीवन में अंतर्विश्वास रहे हैं। इनके लिए खेद प्रकट करने की बात तो दूसरे, उनका कहना है कि ‘मैंने कभी सुसंगति की अंधपूजा नहीं की है जैसे मैं न केवल उनके मन का उपयोग नहीं करता हूँ, यह भी कहते हैं।’ इन दो विषयों के बीच होने वाली यह संबंध रहा है।

यह बात इसलिए और भी आश्चर्यजनक है कि शजन से उनका काफी शक्ति रहा है। यह भी कहा जा सकता है कि इस प्रकार भी जीवन भर सत्य के प्रशत आग्रह ने ही मुझे समझ ते की खूबी को सराहने की सीख दी है।

उन्होंने कहा है, “जीवन भर सत्य के प्रति आग्रह ने ही मुझे समझाती हुई जाती रही है।” इसके साथ ही, उनकी धारणा है कि कुछ ऐसे शास्त्रीय विचार हैं जिन पर कोई समझ ता नहीं की जा सकता और मनुष्य को उन पर आचरण करने के लिए अपने प्राणों तक की आहुंशत देने के लिए तैयार रहना चाहिए।

गांधी के मानस की पहेली उनकी आत्मा की पहेली है। अंतःकरण के अपने तर्क होते हैं, जिन्हें तर्कशत्रु जानती ही नहीं।”

इस आरोप के जवाब में उन्होंने यही कहा है जैसे-जैसे मेरी शजनस्वभाव के यह कहना चाहिए: "मैंने कभी सुसंगति की अंधपूजा नहीं की है। अतः मैं अपनी आत्मा का प्रयोग करता हूँ।"
कि वह सत्य को जैसा देख रहा है, वैसा व्यक्त कर दे | यदि व्यक्ति का इरादा शुद्ध हो तो कोई हानि होने की संभावना नहीं होती | मुझे विश्वास है कि इरादा पूरी तरह ठीक होने के बावजूद यदि व्यक्ति से गलतियां हो जाएं तो उनसे दुनिया को या किसी व्यक्ति विशेष को कल्पित, कोई हानि नहीं पहुंचती।

आध्यात्मिक विषयों में, उनका कहना है कि वे वैज्ञानिकों द्वारा व्यवहार प्रयोगात्मक पद्धति अर्थात प्रयोग और भूमि से सीखनें की पद्धति का आश्रय लेते हैं और भले ही वे किसी अंतिम निष्कर्ष में तक न पहुंच पाएँ हों, पर किसी खगोलशास्त्री की भावना जो आइस्टाइन के सापेक्षता के सिद्धांत की जानकारी से बाढ़त हुए बिना कह देता है कि पृथ्वी से सूर्य की माध्यम द्वारा 2,38,857 मील है, गांधीजी भी आजीवन ‘सत्य के प्रयोग’ करने के बाद एक ऐसी स्थिति का प्राप्त हो गए हैं जहां उनके नैतिक निर्णय तोस और सुनिश्चित होते हैं | अपने इस ब्रह्मांड में, गांधीजी सत्य, प्रेम और श्रम के नक्षत्रों से मान्य धर्म ग्रहण करते हैं | उनका कहना है : “आमशुद्धिकरण के लिए अथवा प्रयास करते हुए मैंने अपनी अंतरंगण को सुनने की किंचित क्षमता विकसित कर ली है।” और गांधीजी की दृष्टि में वह अंतरंगण है ‘सत्य’ | प्रेम और ईर्ष को वे एक-दूसरे का पर्याय मानते हैं : “मेरा लक्ष्य समूही दुनिया के साथ मित्रता स्थापित करना है...” “मैं मानव प्रकृति को संदेह की दृष्टि से नहीं देख सकता | वह किसी भी उदात्त और मेधात्मिक कार्य का प्रयत्न देने, जबकि देने” “अंत में, उनका विश्वास है कि “श्रम पर जितना बल दिया जाए, यद्यपि” “यदि सब लोग केवल रोटी कमाने के लिए ही शारीरिक श्रम करें तो भी वे पर्याय भोजन और श्रम भी मिल सकता है।” “तब हम जीने के लिए खाएंगे, खाने के लिए नहीं खेजेंगे।” गांधीजी का सरोकार व्यक्ति की आत्मा की उैश्वर्य से है और उनकी दृष्टि में उच्च विवाह को सादा जीवन से अलग नहीं किया जाना चाहिए | “मैं विकास चाहता हूँ, मैं आत्मनिर्भर चाहता हूँ, मैं स्वतंत्रता चाहता हूँ, लेकिन ये सब चीजें में आकाश के लिए चाहता हूँ।”

पाठक संबंधत: यह जानना चाहिए कि इस पुस्तक की रचना की पूर्वभूमिका क्या है | लगभग बारह वर्ष पूर्व हम में से किसी के मन में यह विचार आया कि गांधीजी द्वारा अपने लेखन और भाषणों में ‘शाश्वत सत्य’ उजागर किए गए हैं, उन्हें व्यवस्थित दंग से संकल्पित किया जाए और इस रूप में पिरो दिया जाए कि उनके पीछे जो दार्शनिक चिंतन है, वह स्पष्ट हो सके और गांधीजी के जीवन-दर्शन की अंतर्ग झाँकी मिल सके | तब हमने देखा, अहिंसा, सत्याग्रह, प्रेम, आश्व, अपरिश्रम, स्वतंत्रता, उपवास, प्रार्थना, ब्रह्मचार्य, श्रम, मशीनों के आदि विषयों पर गांधीजी के विचारों का समावेश करते हुए एक दर्जन खंड प्रकाशित करने की योजना बनाई और यह भी सोचा कि एक खंड अलग से भी तैयार किया जाए जिसमें इन विषयों पर गांधीजी के विचारों का सार दिया जाए | इसके पक्षात्मक सामग्री संकलिंग करने का कार्य आरंभ किया गया | कुछ ही वर्षों में लगाए लगा कि यह काम इतना विशाल है कि इसके लिए किसी एक सामाजिक कार्यकर्ता की सहयोग लेना आवश्यक है | और तब से हम दोनों निरंतर इस काम पर जुटे रहे हैं | पिछले दो वर्षों के दौरान कुछ ऐसी घटनाएं घटी हैं जिन्होंने हमें अपना धार्मिक अंतिम खंड पर केंद्रित करने के
लिए बाध्य कर दिया। यह अंतिम खंड वही था जिसमें हम गांधीजी के समग्र उपदेशों का सार देना चाहते थे; वही खंड अब पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं, हालांकि हमारी मूल योजना की तुलना में यह कुछ अधिक संक्षिप्त है।

इस पांडुलिपि के प्रूफ गांधीजी को प्रस्तुत किए गए थे और उन्होंने इनको पढ़ा है। गांधीजी ने हमारे प्रयास का अनुमोदन किया जिसके लिए हम उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। हम नवजीवन ट्रस्ट के भी आभारी हैं जिन्होंने हमें गांधीजी के लेखन का इस्तेमाल करने की अनुमति दी। श्री कनु गांधी ने हमें गांधीजी के चित्रों में से एक चित्र का इस्तेमाल मुखपृष्ठ पर करने की अनुमति दी जिसके लिए हम उनके प्रति भी धन्यवाद-ज्ञापन करते हैं।

-आर. के. प्रभु
-यू. आर. राज

_____________________
1. हररजन, 28-9-1934, पृ. 260.
2. यंग इंडिया, 13-2-1930, पृ. 52.
3. आलकथा, पृ. 107.
4. पेस्कल, पेन्सीज़, iv, 277.
5. यंग इंडिया, 3-1-1929, पृ. 6.
6. द एपिक फास्ट, पृ. 34.
7. यंग इंडिया, 10-3-1920, पृ. 5.
8. यंग इंडिया, 4-8-1920, पृ. 5.
10. हररजन, 29-6-1935, पृ. 156.
11. वही।
12. यंग इंडिया, 13-10-1921, पृ. 325.
पाठकों से

अपने अध्यक्षसाही पाठकों और उन अन्य लोगों से, जिन्हें मेरे लिखे में रुचि है, मैं कह दूं कि मुझे सुसंगत दिखाई देने की तनिक भी चिंता नहीं है | सत्य की अपनी खोज में, मैं अनेक विचारों को ल्यागता गया हूं और नयी-नयी बातें सीखता रहा हूं | हालांकि मैं अब बूढ़ा हो चला हूं, पर मुझे यह अनुभव नहीं होता कि मेरा आंतरिक विकास रुक गया है अथवा मेरे पार्थिव शरीर के अवसान के साथ मेरी आंतरिक वृद्धि रुक जाएगी | मेरा सरोकार सिर्फ इस बात से है कि मैं अपने ईश्वर, अर्थवस्त्र के आदेश का प्रतिक्षण पालन करने के लिए तत्पर रहूँ, और इसलिए यदि किसी को मेरी लिखी कितनी दो बातों में असंगति दिखाई दे, और उसे फिर भी मेरी विवेकशीलता में विश्वास हो, तो उसे उसी विषय पर मेरी बाद की तारीख में लिखी बात को मेरा मंत्रव्य मानना चाहिए |

मोहनदास करमचन्द गांधी

हरिजन, 29-4-1933, प. 2.
मेरे जीवन में कोई अंतर्विरोध पाता हूं, न कोई पागलपन यह सही है कि जिस तरह आदमी अपनी पीठ नहीं देख सकता, उसी तरह उसे अपनी त्रुटिया या अपना पागलपन भी दिखाई नहीं देता। लेकिन मनीषषय ने धार्मिक व्यक्ति को प्रायः पागल जैसा ही माना है। इसलिए मैं इस विषय को गले लगाए हूं कि मैं पागल नहीं हूं बल्कि सबे अर्थों में धार्मिक हूं। मैं वस्तु: इन दोनों में से क्या हूं, इसका निर्णय मेरी मृत्यु के बाद ही हो सकेगा।

(यंग, 14-8-1924, पृ. 267)

मुझे लगता है कि मैं अहिंसा की अपेक्षा सत्य के आदर्श को ज्ञाता अच्छी तरह समझता हूं और मेरा अनुभव मुझे बताता है कि अगर मैंने सत्य पर अपनी पकड़ ढीली कर दी तो मैं अहिंसा की पहली को कभी नहीं सुलझा पाऊंगा। दूसरे शब्दों में, सीधे ही अहिंसा का मार्ग अपनाने का साहस शायद मुझे नहीं है | सत्य और अहिंसा
तत्व: एक ही है और संदेह अनिवार्यतः आस्था की कमी या कमजोरी का ही परिणाम होता है | इसीलिए तो मैं रात-दिन यही प्रार्थना करता हूँ कि ‘प्रभु, मुझे आस्था दें’ | (ए, पृ. 336)

मेरा मानना है कि मैं बचपन से ही सत्य का पक्षधर रहा हं और संदेह अशनवायक था | मेरी प्रार्थनामय खोज ने ‘ईश्वर सत्य है’ के सामान्य सूत्र के स्थान पर मुझे एक प्रकाशमान सूत्र दिया : ‘सत्य ही ईश्वर है’ | यह सूत्र एक तरह से मुझे ईश्वर के रू-ब-रू खड़ा कर देता है | में अपनी सत्य-कण में ईश्वर को व्याप्त अनुभव करता हूँ | (हरि, 9-8-1942, पृ. 264)

सच्चाई में विश्वास

मैं आशावादी हूँ, इसलिए नहीं कि मैं इस बात का कोई सबूत दे सकता हूँ कि सच्चाई ही फलेगी बल्कि इसलिए कि मेरा इस बात में अदम्य विश्वास है कि अंतः सच्चाई ही फलती है.... हमारी प्रेरणा केवल हमारे इसी विश्वास से पैदा हो सकती है कि अंतः सच्चाई की ही जीत होगी | (हरि, 10-12-1938, पृ. 372)

मैं किसी न-किसी तरह मनुष्य के सर्वोक्त कुणों को उभार कर उनका उपयोग करने में कामयाब हो जाता हूँ, और इससे ईश्वर तथा मानव प्रकृति में मेरा विश्वास दढ़ रहता है | (हरि, 15-4-1939, पृ. 86)

संजोकर रहने की कतई जरूरत नहीं है

मैंने कभी अपने आपको संजोकर नहीं कहा | संजोकर बड़ी कठिन चीज़ है | में तो स्वयं को एक गृहस्थ मानता हूँ जो अपने सहकर्मियों के साथ भलकर, मित्रों की दानशीलता पर जीवन निर्वाह करते हुए, सेवा का विमान जीवन जी रहा है .... मैं जो जीवन जी रहा हूँ वह पूर्णतः सुगम और बड़ा सुखकर है, यदि सुगमता और सुख को मन:स्थिति मान लेते हो | मुझे जो कुछ चाहिए, वह सब उपलब्ध है और मुझे व्यक्तिगत पूंजी के रूप में कुछ भी संजोकर रखने की जरूरत नहीं है | (यंग, 1-10-1925, पृ. 338)

मेरी लंगोट्सी मेरे जीवन का सहज विकास है | यह अपने आप आ गई, न मैंने इसके लिए कोई प्रयास किया, न पहले से सोचा | (यंग, 9-7-1931, पृ. 175)

मैं विश्वासःधिकार और एकाधिकार से घृणा करता हूँ | जिसमें जनसाधारण सहभागी न हो सके, वह मेरे लिए त्याज्य है | (हरि, 2-11-1934, पृ. 303)

मुझे संजोकर कहना गलत है | मेरे जीवन जिन आदर्शों से संस्कृतित है, वे आम आदमियों द्वारा अपनाए जा सकते हैं | मैंने उन्हें धीरे-धीरे विकसित किया है | हर कदम अच्छी तरह सोच-विचार कर और पूरी सावधानी बरतते हुए उठाया गया है |
मेरा इंद्रिय-निग्रह और अहिंसा, दोनों मेरे व्यक्तिगत अनुभव की उपज हैं, जनसेवा के हित में इधरे अपनाना आवश्यक था। दक्षिण अफ्रीका में गृहस्थ, वकील, समाज-सुधारक या राजनीतिज्ञ के रूप में जो अलग-थलग जीवन मुझे बिना ठहराया, उसमें अपने कर्तव्यों के समय निर्वाह के लिए यह आवश्यक था कि मैं अपने जीवन के यौन रूप फिर कठोर नियंत्रण रखूं, और मानवीय संबंधों में, वे चाहे अपने देशवासियों के साथ हों अथवा यूरोपियनों के साथ, अहिंसा और सत्य का उल्लंघन करना आवश्यक है। (हर, 3-10-1936, पृ. 268)

अनवरत काम के बीच मेरा जीवन आनंद से पररपूणक रहता है। मेरा कृत्यों का भाग्य करता है। मैं कभी उन्हें खोजने नहीं जाता। वे उनके पास आते हैं। मेरे संपूर्ण जीवन का – दक्षिण अफ्रीका में और भारत लौटकर आने के बाद से अब तक – क्रम यही रहा है। (यंग, 7-5-1925, पृ. 163)
अल्प पुस्तकीय ज्ञान

मैं अपनी सीमाओं को स्वीकार करता हूँ | मैंने कोई उल्लेखनीय विश्वविद्यालयी शिक्षा प्राप्त नहीं की | हाई स्कूल तक मैं कभी औसत से ऊपर का छात्र नहीं रहा | मैं परीक्षा में पास हो जाता था तो शुक्रगुजर होता था | स्कूली परीक्षाओं में विशेष योग्यता प्राप्त करने की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था | (हरि, 9-7-1938, पृ. 176)

अपनी पढ़ाई के दिनों में मैंने पाठ्यपुस्तकों के अलावा अच्छी शिक्षा प्राप्त की हाई स्कूल तक मैं कभी औसत से ऊपर का छात्र नहीं रहा | मैं परीक्षा में पास हो जाता था तो शुक्रगुजर होता था | हाई स्कूल परीक्षाओं में शवस्थगी प्राप्त करने की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था | बहरहाल, मेरे इस विश्वासवादी संप्रेक्ष से कोई शवशास्त्री हानि हुई नहीं दिखती | इससे उलट, हुआ यह है कि कम किताबें पढ़ने के कारण मुझे ये योग्यता आई कि जो पढ़े, उसे भीतर भली भांति गुज़र मनन करूँ।

इन पढ़ी हुई पुस्तकों में से जिस एक पुस्तक ने मेरे जीवन में तक्काल और व्यवहारिक रूपांतरण कर डाला, वह थी ‘अनूठे दिस्त लास’ | मैं गुजराती में, इसका अनुवाद किया जिसका शीर्षक रखा ‘सबोदय’ (सब का कल्पण) | मेरा विश्वास है कि रस्किन के इस महान पुस्तक में मुझे अपनी ही हार्दिक अंतर्दृष्टि प्रतिभित होती दिखाई दीं और यही कारण है कि इसने मुझे विमुख करके मेरे जीवन का रूपांतरण कर डाला | (ए, पृ. 220)

तब मैं दक्षिण अफ्रीका में रह रहा था | मैंने ‘अनूठे दिस्त लास’, पैंतीस वर्ष की अवस्था में 1904 में, डरबन जाते समय रेल में पढ़ी | इस पढ़ाई के लिये मैंने अपने संपूर्ण बाहरी जीवन को बदल डालने का निर्णय लिया | मैं बस यही कह सकता हूँ कि रस्किन के शब्दों ने मुझे विमुख कर दिया | मैं एक साथ पूरी पुस्तक पढ़ गया और उसके बाद रात भर तक इसके संस्मरण करने का तोहफा लिया | टाल्सटे के समय मैं भी यही कह सकता हूँ कि रस्किन ने मुझे विमुख कर दिया | मैं बस यही कह सकता हूँ कि मैं एक साथ पूरी पुस्तक पढ़ गया और उसके बाद रात भर तक इसके संस्मरण करने का तोहफा लिया | (ए, पृ. 245)

गरीबों की सेवा

हृदय से की सच्ची और शुद्ध कामना अवस्था पूरी होती है | अपने अनुभव में, मैंने इस कथन को सदा सही पाया है | गरीबों की सेवा मेरी हार्दिक कामना रही है और इसने मुझे सदा गरीबों के बीच ला खड़ा किया है और मुझे उनके साथ तादात्म्य स्थापित करने का अवसर दिया है | (ए, पृ. 110)

मैंने जीवन भर निर्धनों से सदा प्रेम किया है और भरपूर मात्रा में किया है | मैं अपने विगत जीवन के अनेक उदाहरण देकर यह स्पष्ट कर सकता हूँ कि मेरा यह प्रेम मेरे स्वभाव का अंग था | मुझे गरीबों के और अपने बीच कोई फर्क महसूस नहीं हुआ और मुझे वे सदा अपने सगे-संबंधी ही लगे हैं | (हरि, 11-5-1935, पृ. 99)

मुझे संसार के नाशवाद सामाजिक कोई कामना नहीं है | मैं तो स्वर्ग के सामाजिक के लिये प्रयासरत हूँ, जोकि ‘मोक्ष’ है | मुझे इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए फुका में जाकर वास करने की आवश्यकता नहीं है | आवश्यकता होती तो मैं ऐसा ही करता |
मुझे जीवन ईश्वर के, और इसीलिए मानवता के, परम एकत्र में विश्वास करता हूँ। यदि हमारे शरीर अलग-अलग हो तो क्या हुआ? आत्मा तो एक है। सूर्य की किरणें अपर्योग के कारण अंकें हो जाती हैं, उनका कोई कोई हो नहीं। इसलिए मैं बड़ी-से-बड़ी द्वारा भी अपने को विलग नहीं कर सकता। जो कि, मुझे संपूर्ण मानवता को अपने प्रयोग में भागीदारी बनाना चाहिए, में प्रयोग करना भी नहीं कहीं छोड़ सकता। जीवन प्रयोगों की एक अनंत श्रृंखला ही है।

यह मेरा दुभाग्य अथवा स्वाभाविक रहा है कि मैं दुनिया को हैरान में डाल देता हूँ। नये प्रयोगों, या नये तरीके से किए गए पुराने प्रयोगों से कभी-कभी भांत साक्ष्य उत्पन्न हो ही जाता है।

वस्तुतः मैं एक व्यावहारिक स्वप्प्रक्ष हूँ। मेरे स्वप्न होते हैं। मैं अपने स्वप्नों को जहां तक संभव हो, यथार्थ में परिवर्तित करना चाहता हूँ।

(हरर, 17-11-1933, पृ. 6)
यदि मेरे द्वारा पवित्र माना गया मेरा कोई कार्य अव्यवहारिक सिद्ध हो जाए तो उसे असफल घोषित कर दिया जाना चाहिए। मेरा पक्का विश्वास है कि सत्त्वधिक आधारित कर्म सच्चे अर्थ में सत्त्वधिक व्यवहारिक होता है।

(हरी, 1-7-1939, पृ. 181)

मेरी चूँकि

मैं स्वयं को एक साधारण व्यक्ति मानता हूँ जिससे अन्य मनुष्यों की ही तरह गलतियाँ हो सकती हैं। हां, मेरे अंदर इतनी बिनमृत्तता जरूर है कि मैं अपनी गलतियों को खीरकर तो सरकूँ और उनका सुधार कर सकूँ। मैं यह भी मानता हूँ कि ईश्वर और उसकी दयालुता में मेरा अविकल विश्वास है। साथ ही, मेरा सत्य और प्रेम में असीम अनुराग है। लेकिन, यह भावना क्या प्रस्तेक मनुष्य के भीतर अंतर्निहित नहीं है?

(यंग, 6-5-1926, पृ. 164)

जिन्होंने सरस्त्री तौर पर भी मेरे साधारण लोक क्रम पर दश्यपात किया है, उनके ध्यान में यह बताता है कि मैंने जीवन में एक पापों को स्वीकार कर सकता हूँ। मैं अपनी अनुभव को सुधार कर सकता हूँ। मैं यह भी मानता हूँ कि मैंने भयंकर खाशमयां नहीं किए और मैंने वे जान-बूझकर कभी नहीं कीं।

(ऐफ़ा, पृ. 133)

मैंने अपने अनेक पापों को बिनलकु संपप्त रूप से स्वीकार किया है। लेकिन मैं इन पापों की गठरी को अपने कंधों पर लादकर नहीं चलता। मैं ईश्वर की ओर अग्रसर हूँ, जैसा मैं अनुभव करता हूँ, तो मैं सुंदक्षत हूँ।

(यंग, 10-2-1927, पृ. 44)

यदि मैं किसी को उसके प्राप्तव्य से कम दूः तो मुझे अपने प्रभु और सिरजनहार के सामने जवाब देना होगा, लेकिन मुझे पक्का विश्वास है कि यदि वह यह देखता है कि मैंने किसी को उसके प्राप्तव्य से अधिक दिया है तो वह मुझे आशीर्वाद अवध प्रदे।

(यंग, 10-3-1927, पृ. 80)
मैं किसी व्यक्ति के द्वारा नाराज नहीं होता, क्योंकि मुझे इस बात का अच्छी तरह अहसास है कि मेरी जाति के प्राणी अथवा मानव कितने दोष हैं | मैं जहां भी कोई बुराई देखता हूं तो उसे दूर करने का प्रयास करता हूं। उसके लिए दोषी व्यक्ति को चोट पहुंचाने की कोशिश नहीं करता, चूंकि मैं भी तो यह नहीं चाहूंगा कि मुझे निरंतर होने वाली गलतियों के लिए कोई मुझे चोट पहुंचाए। (यंग, 12-3-1930, पृ. 89-90)

मैं सच्चे हृदय से यह बात कह सकता हूं कि मैं अपने साथियों के दोष दूर करने में बड़ा विश्वास हूं और चूंकि स्वयं मेरे भीतर इतने सारे दोष हैं, मैं जहां भी देखता हूं तो उसे दूर करने का प्रयास करता हूं। वे भी भी तो यह नहीं चाहते कि मुझे इन साथियों की उदारता की जरूरत हो | यह भी अहिंसा की ही विजय है। (वहीं, पृ. 86)

मैं जान-बूझकर किसी प्राणी को चोट नहीं पहुंचाऊंगा और साथी मानवों को तो और भी नहीं, भले ही वह मेरे साथ कितनी ही बुराई से पेश आएं। (यंग, 12-3-1930, पृ. 93)

मेरे द्वारा पिछले 50 वर्षों में किए गए किसी एक भी काम के बारे में कोई व्यक्ति यह सिद्ध नहीं कर सकता कि वह किसी आदमी या समुदाय के विरोध में किया गया था | मैंने कभी किसी को अपना शत्रु नहीं माना | मेरा धर्म मुझे किसी को भी अपना शत्रु मानने की आज्ञा नहीं देता | मैं किसी प्राणी के प्रति दुर्भिक्षा नहीं रख सकता। (हरि, 11-3-1939, पृ. 4)
2. मेरा महात्मापन

महात्मा नहीं
मुझे नहीं लगता कि मैं महात्मा हूँ, लेकिन मैं यह अवश्य जानता हूँ कि मैं ईश्वर के सर्वविध दीन-विनीत प्राणियों में से एक हूँ। (यंग, 27-10-1921, पृ. 342)

इस महात्मा की पदवी ने मुझे बड़ा कष्ट पहुँचाया है, और मुझे एक क्षण भी ऐसा याद नहीं जब इसने मुझे गुदगुदाया न हो। (ए, पृ. xiv)

मेरी महात्मा की पदवी व्यर्थ है कि यह मेरे बाहर कार्यकलाप के कारण है, मेरी राजनीति के कारण है जो मेरा लघुतम पक्ष है और इसलिए, क्षणजीवी भी है। मेरा वास्तविक पक्ष है सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य के प्रति मेरा आग्रह, और इसी का महत्व स्वयं है। यह पक्ष चाहे जितना छोटा हो पर इसकी उपेक्षा नहीं करूँगा। (यंग, 25-2-1926, पृ. 78-79)

दुनिया बहुत कम जानती है कि मेरी यथाक्षण महानता किस कदर मेरे मूक, निद्रावन, योग्य और शुद्ध कार्यकर्ताओं – स्त्री एवं पुरुषों – के अनवरत कठोर परिश्रम पर और अन्य राजनीतिक कारणों में भी उनकी लगत पर आकर्षित है। (यंग, 26-4-1928, पृ. 130)

मेरे लिए सत्य 'महात्मापन' से कहीं अधिक प्रिय है। 'महात्मापन' तो मेरे ऊपर सिर्फ एक बोध है। यह अपनी सीमाओं और अंतिमता का बोध ही है जिसने मुझे 'महात्मापन' के अप्राप्त स्वरूप से बचाया रखा है। (यंग, 1-11-1928, पृ. 361)

स्तुति-अभिनंदन से परेशान
मैं अविस्मरणीय लोगों द्वारा की जाने वाली आराधना-स्तुति से सचमुच परेशान हो गया हूँ। इसके स्थान पर यदि वे मेरे ऊपर धूकते तो मुझे अपनी असत्यता का सही अंदाजा रहता। और तब मुझे अपनी भयंकर भूलों और अन्य मिथानुमानों को खड़ा करने, अपने कदमों चढ़ने या कार्यकलापों का पुनर्निर्माण करने की आवश्यकता न पड़ती। (यंग, 2-3-1922, पृ. 135)

मुझे भेट किए गए अभिनंदन-पत्रों में से अधिकांश में मेरे लिए ऐसे-ऐसे विशेषणों का प्रयोग किया जाता है जिनके मेरे कदाचित्त योग्य नहीं हैं। इनसे न इनके लेखकों का कुछ भेला होता है, न मेरा। इनके कारण मुझे अकारण शांतिदा होना पड़ता है, क्योंकि मुझे यह स्वीकार करना पड़ता है कि मैं इन विशेषणों के योग्य नहीं हूँ। जो विशेषण उपयुक्त भी हैं, उनका अतिशय प्रयोग कर दिया जाता है। ऐसे अभिनंदनों से मेरे गुणों की शक्ति बढ़ने
में कोई मदद नहीं मिलती | बल्कि यदि मैं सावधान न रहूं तो उनसे मेरा सिर फिर सकता है | अच्छा तो यही है कि आदमी के सुकृतम की भी बहुत चर्चा न की जाए | सबसे उपयुक्त प्रशंसा तो उनका अनुकरण ही है | (यंग, 21-5-1925, पृ. 176)

मुझे इस महात्मा की पदवी को अपने हाल पर छोड़ देना चाहिए | बब्लि यशद मैं सावधान न रहं तो उनसे मेरा शसर शफर सकता है | अच्छा तो यही है | (यंग, 17-3-1927, पृ. 86)

सच्चा सम्मान
मेरे मित्र मेरा सर्वाधिक सम्मान मेरे कार्यक्रमों को अपने जीवन में लागू करके यदि वे इनमें विश्वास न करते हों तो उनका भरपूर विरोध करके कर सकते हैं | (यंग, 12-6-1924, पृ. 197)

यह तो अच्छे धन का अपवाद होगा … किसी आदमी की मिट्टी या धातु की प्रतिमा खड़ी करना – आदमी जो खुद मिट्टी का बना है और उस कांच की चूड़ी से भी अधिक भंगर है जिसे आप परिरक्षण के द्वारा हजार वर्ष तक रख सकते हैं; मानव शरीर तो नित्य विघटित होता है और आयुष्य पूरा होने पर अंतिम रूप से विघटित हो जाता है | अपने मुसलमान मित्रों से, जिनके बीच मैंने अपने जीवन के सर्वोत्तम वर्ष व्यतीत किए हैं, मैंने अपने रूपाकार की प्रतिमाओं और चित्रों को नापसंद करना सीखा है …

ये पंक्तियां उन लोगों के लिए चेतावनी बनें जो मेरी प्रतिमाएं खड़ी करके अथवा मेरी आकृति के चित्र लगाकर मेरा सम्मान करना चाहते हैं – वे समझ लें कि मुझे इन प्रदर्शनों से हार्दिक अरुचि है | जिन्हें मुझमें आस्था है, वे यदि मेरे प्रिय कार्यकलाप को आगे बढ़ाने की कृपा करें तो मैं समझूंगा कि मेरा पर्याप्त सम्मान हुआ है | (हरि, 11-2-1939, पृ. 1)

मेरे अवतार नहीं
अपने को श्रीकृष्ण बताया जाना मैं प्रभु-निदित मानता हूं | मैं तो एक अदना-सा कार्यकर्ता हूं और एक महान कार्य में लगे अनेक लोगों में से एक हूं | इस कार्य के नेताओं का प्रशासन-गान करने से इसे लाभ पहुंचने के बजाय हानि ही पहुंचमें | किसी कार्य की सफलता की सर्वाधिक संभावना तब होती है जब उसके गुण-दोषों की समीक्षा की जाए और उनके आधार पर ही उनका अनुमान किया जाए | प्रगतिशील समाज में, मनुष्यों से अधिक महत्व लक्ष्यों को दिया जाना चाहिए क्योंकि मनुष्य अंतः उन लक्ष्यों की घृंटि के लिए प्रयासरत अपूर्ण साधन मात्र है | (यंग, 13-7-1921, पृ. 224)
मैं केवल जिस एक गुण का दावा करना चाहता हूँ, वह सत्य तथा अहिंसा | मेरा किसी अतिमानवीय शक्तियों का दावा नहीं है, न ही मुझे उनकी कामना है | मैं उसी नश्वर अध्व-मांस का दावा नहीं है जिसके मेरे दुर्वृत्ततम साथी भाव है, इसलिए आम इसान की तरह मैं गलतियाँ कर सकता हूँ | मेरी सेवाओं की अनेक सीमाएँ हैं, लेकिन इस्लाम ने मेरी अपूर्णताओं के बावजूद अभी भी तक मेरी सेवाओं पर अपना वरदहस्त रखा है | (यंग, 16-2-1922, पृ. 102)

मैं अपने भीतर किसी अनन्य दैवी शक्ति का कोई दावा नहीं करता | मैं पागलबरी का दावा नहीं करता | मैं तो एक विनम्र सत्यशोधक हूँ और सत्य की ही प्राप्ति के लिए कृतसंकल्प हूँ | ईश्वर के साक्षात्कार के लिए मैं कितने भी बड़े ल्याग को अधिक नहीं मानता | मेरे समस्त कार्यकलाप, चाहे उन्हें सामाजिक कहा जाए या राजनीतिक, मानवीय अथवा नैतिक, उसी लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अभिमुख हैं | और चूँकि मैं जानता हूँ कि ईश्वर का वास उच्च और शक्ति-संपत्तियों की अपेक्षा अधिक है, मैं उनकी सेवा किए बगैर नहीं कर सकता | इसलिए मैं उनकी कामना है, मैं उसी नश्वर हाड़-मांस का भविष्य बने हूँ, इसलिए आम इसान की तरह मैं गलतियाँ कर सकता हूँ | मैं उनसे सामाजिक कहा जाए या राजनीतिक, मानवीय अथवा नैतिक, उसी लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अभिमुख है | (यंग, 11-9-1924, पृ. 298)

यह देखकर अच्छा होता है कि हम किस तरह अपने को छलते हैं | हम यह भ्रम पाल लेते हैं कि इस भंगूर शरीर को अपराजेय बनाया जा सकता है और आत्मा की प्रक्रमश शक्तियों का जागरूक करना असंभव मान बैठते हैं | यदि मैं उसके जरूरत मानवता का एक संघर्ष, भूत-चौक करने वाला और विनम्र सेवक हूँ | (यंग, 6-5-1926, पृ. 164)

मैं स्वयं को यह योग्य नहीं मानता कि मेरी गिनती पागलबरों में की जाए | मैं एक विनम्र सत्यशोधक हूँ | मैं इसी जन्म में आत्म-साक्षात्कार करने, मोक्ष प्राप्त करने के लिए आत्म-अन्वय हूँ | देश-सेवा मेरे लिए अपनी आत्मा को इस देश के बंधन से मुक्त करने की साधना का ही एक अंग है | इस अर्थ में इस सेवा को मेरा शून्य सामाजिक जन्म नहीं कर सकता है | मुझे संसार के नश्वर सामाजिक कोई कामना नहीं है | मैं तो स्वयं के सामाजिक अर्थत मोक्ष के लिए प्रयासरत हूँ | (यंग, 3-4-1924, पृ. 114)

औसत से भी कम योग्यता वाले एक साधारण मानव से अधिक कुछ होने का भविष्य शक्ति का दावा नहीं है | परिश्रमपूर्ण अनुसंधान के जरूरे जो कुछ अहिंसा या आत्मसंघम में अर्जित कर सका हूँ, उसके लिए मुझे कोई विशेष योग्यता पहले से रही है, इसका दावा मैं नहीं करता | मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि कोई भी स्त्री अथवा पुरुष वह सब उपलब्ध कर सकता है, जो मैंने किया; यदि वह इतनी ही आशा और विश्वास के साथ इतनी ही प्रयास करे | (हरि, 3-10-1936, पृ. 269)
मुझे पत्र लिखने वाले कुछ लोग यह समझते हैं कि मैं चमकार कर सकता हूँ | सत्य का पुजारी होने के नाते मैं यह कहना चाहूँगा कि मेरे पास ऐसा कोई सामर्थ्य नहीं है | मेरे पास जो भी शक्ति है, वह सब ईश्वर की दी हुई है | लेकिन ईश्वर प्रत्यक्ष कार्य करते नहीं दिखाते | वे अपने असंख्य अभिकरणों के द्वारा काम करते हैं | (हरिज, 8-10-1938, पृ. 285)

### सीमाओं की सजगता

मैं स्वयं को एक दूरदर्शी कार्यकर्ता मानता हूँ | मेरी दूरदर्शिता का अर्थ यह और केवल यह है कि मुझे अपनी सीमाओं का सम्यक ज्ञान है | मुझे उम्मीद है कि मैं कभी अपनी सीमाओं को नहीं लांघता | निष्ठित रूप से, मैने कभी जान-बुझकर ऐसा नहीं किया है | (यंग, 23-6-1920, पृ. 3)

अपनी सीमाओं के प्रति मैं सजग हूँ | यह सजगता ही मेरी एकमात्र शक्ति है | मैं अपने जीवन में जो कुछ कर पाया हूँ, वह किसी अन्य बात की अपेक्षा अपनी सीमाओं को पहचानने की भरोसा हृदय के कारण ही है | (यंग, 13-11-1924, पृ. 378)

यदि मैं वह होता जो मैं चाहता हूँ तो उपवास की आवश्यकता ही न पड़ती | मुझे तब किसी से बहस करने की भी जरूरत न होती | मेरा शब्द ही काम कर जाता | सच पूछा जाए तो मुझे बोलने की भी आवश्यकता न पड़ती | मेरी इच्छा ही अभीष्ट परिणाम प्राप्त करने का कारण है | (यंग, 15-4-1939, पृ. 86)

लोग जब-जब गम्भीर भूलें करें, मैं उन्हें भूलों के रूप में स्वीकार करता जाऊँगा | मैं दुनिया में एक ही निरंकुश शक्ति को मानता हूँ और वह है मेरे अंतःकरण की हल्की-सी आवाज | और यदयि इस बात की संभावना है कि मैं अपने मार्ग पर चलने के लिए अकेला रह जाऊँ पर मुझे विश्वास है कि मुझमें इतने विकट अत्यंत में रहने का साहस है | (यंग, 2-3-1922, पृ. 135)

मेरा मानना है कि मैं मानव प्रकृति का काफी अच्छा पारंपरिक और अपनी असफलताओं का शल्य-चिकित्सक हूँ | मैने पाया है कि मनुष्य अपने द्वारा प्रतिपादित पद्धति से श्रेष्ठ नहीं है | (मगां, पृ. 241)

मुझे उम्मीद है कि मुझमें दर्प-भाव नहीं है | मुझे लगता है कि मैं अपनी कमजोरी पूरी तरह पहचानता हूँ | पर भगवान और उसकी शक्ति तथा प्रेम में मेरी आस्था अड़हाया है | मैं तो अपने कुछ कार्य के हाथों में मिट्टी के एक लोदे के समान हूँ | (यंग, 26-1-1922, पृ. 49)

मुझे कहीं प्रतिष्ठा मिले, इसकी मुझे कोई कामना नहीं है | प्रतिष्ठा तो राजाओं के दरबार की सजावट है | मैं जिस प्रकार हिंदुओं का सेवक हूँ उसी प्रकार मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों और यहूदियों का भी हूँ | और, सेवक को
तो प्यार चाहिए, प्रतिष्ठा नहीं | जब तक मैं एक निश्चित नेता बना रहूँगा, प्यार मुझे अवश्य मिलेगा | *(यंग, 26-3-1925, पृ. 112)*

शहादत की तैयारी
कुछ बाते ऐसी हैं जिनसे आप तकलीफ मुक्त नहीं हो सकते, भले ही आप उसके लिए प्रयास करते रहें | मेरा यह पारिवर्ध क्षेत्र विश्व जिसमें मैं बंदी हूँ, मेरे जीवन का भार है पर मुझे इसे वहन करना ही होगा, बल्कि इसे प्रस्तुत भी रखना होगा | *(यंग, 27-10-1921, पृ. 342)*

मेरी रक्षा के लिए कोई प्रयास न कीजिए | सर्वशक्तिमान सदैव हम सबकी रक्षा करता है | आप पक्ष के तौर पर समझ लें कि जब मेरा समय पूरा हो जाएगा तो उसका का बड़े-से-बड़ा आदमी भी ईश्वर के और मेरे बीच बाधा नहीं बन सकेगा | *(यंग, 2-4-1931, पृ. 54-55)*

मुझे अपने सिरजनहार के प्रति सच्चा बने रहना चाहिए और जिस क्षण मुझे लगे कि अब यह शरीर मैं नहीं चला पा रहा, मैं समझ लूँ कि मुझे इसका मोह ल्याया जाए तो इसकी रक्षा करेगा | *(एफा, पृ. 114)*

मेरी रक्षा के लिए आरक्ष की मांग करता हूँ और जिस क्षण मुझे लगे कि अब यह शरीर मैं नहीं चला पा रहा, मैं समझ लूँ कि मुझे इसका मोह ल्याया जाए तो इसकी रक्षा करेगा | *(एफा, पृ. 114)*

लोगों से मिलें अपने सेवक की मैं कदर करता हूँ लेकिन उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि मेरी रक्षा की चिंता करने से यदि राष्ट्र अपने प्रमुख घोषण से विचलित होता है तो यह शरीर रक्षा का योग्य नहीं है | *(हरर, 11-3-1939, पृ. 44)*

अतः मेरी जान लेने की कई कोशियों की गई हैं, पर अभी तक ईश्वर ने मेरी रक्षा की है और हमलावरों ने अपने क्षण पर पछतावा जाहिर किया है | *(बांक्रा, 9-8-1942)*

केवल भगवान ही मेरा रक्षक है | कोई अदना आदमी जो खुद नहीं जानता कि कल उसका क्या होगा, वह किसी दूसरे की रक्षा का जिम्मा कैसे ले सकता है? मैं भगवान के आश्वासन में संतुष्ट हूँ | वह रक्षा करें या नाश | मैं जानता हूँ कि कभी-कभी रक्षा के लिए वह नाश भी करता है | *(हरर, 9-6-1946, पृ. 170)*
मैं अपनी कार्यशक्तियों के क्रमिक हास के फलस्वरूप..एक पराजित मनुष्य की भांति मरना नहीं चाहता | किसी हत्यारे की गोली मेरी जान ले ले, मैं इसे बेहतर समझूगा | अपनी अंतिम श्रास्त तक मैं अपना कर्त्तव्य करते- करते मरूं, यह मुझे सबसे प्रयोग होगा | (महात्मा, 1, पृ. 562)

अपने ध्येय की पूर्ति करते हुए मर जाने से मैं नहीं डरता | यदि मेरे भाष्य में यही है तो ऐसा ही हो | (हरर, 27-4-1947, पृ. 127)

क्रोध का परिहार

मैंने कटु अनुभव के द्वारा अपने क्रोध को परियोजित करने का उत्तम पाठ पढ़ लिया है; जिस प्रकार उद्थान को परियोजित करने के उद्देश्य में बदला जाता है उसी प्रकार क्रोध को नियंत्रित करके एक ऐसी शक्ति में रूपांतरित किया जा सकता है जो सारी दुनिया को हिला सकती है | (यंग, 15-9-1920, पृ. 6)

गौरवपूर्ण आचरण से दूर जाने वाले व्यक्ति को मैं बक्चाता नहीं – फिर वह दोस्त हो या दुश्मन | यह बड़ी दंभपूणक उपाधि है, है न? लेकिन मैं यह बात अवगुन्थित नहीं कर सकता हूँ, क्योंकि मुझे क्रोध को परियोजित करने का उत्तम पाठ पढ़ लिया है | (हरर, 11-5-1935, पृ. 98)

मैं द कन, यशद कोई है तो, यह नहीं मानता शक मैं अपने ध्येय को बाहरी तत्त्वों से कोई संदेह न होता है | (यंग, 18-8-1921, पृ. 238)

मैं अपने आप से बहुत सी बातों की उम्मीद करता हूँ | मैं मुझसे मालूम है कि वे सारी बातें मुझसे बाहर कर सकते हैं, क्योंकि मैं अभी एक पूर्ण प्राणी नहीं हूँ | मैं पूर्ण प्राणी हो तो मैं अपने बातों की जरूरत न होगी | (यंग, 13-8-1925, पृ. 279-80)

मेरा दर्शन, यदि कोई है तो, यह नहीं मानता कि किसी के ध्येय को बाहरी तत्त्वों से कोई हानि पहुँच सकती है | मेरा दर्शन, यदि कोई है तो, यह नहीं मानता कि किसी के ध्येय को बाहरी तत्त्वों से कोई हानि पहुँच सकती है | (हरर, 25-7-1936, पृ. 185)
3. जानता हूं मार्ग मैं

मैं मार्ग जानता हूं। वह सीधा और संकरा है। वह तलवार की धार की तरह है। मुझे उस पर चलने में आनंद होता है। जब मैं उससे फिसल जाता हूं, तो रोता हूं। ईश्वर का वचन है: जो प्रयास करता है, वह कभी नष्ट नहीं होता।

मुझे इस वचन में पूरी आशा है। इसलिए अपनी कमजोरी की वजह से मैं चाहे हजार सारे बार नाकामयाब रहूं तर मेरी आशा कभी नहीं जिंदेगी। बल्कि यह आशा कायम रहेगी क्योंकि जिस दिन यह शरीर पूरी तरह नियंत्रण में आ जाएगा, उस दिन मुझे ईश्वर की अलौकिक आभा के दर्शन हो जाएगा। और ऐसा होगा जरूर। (यांग, 17-6-1926, पृ. 215)

मेरी आत्मा जब भक्त शरीर भाषण की विवश साक्षी है तब तक वह संतोष का अनुभव नहीं कर सकती। लेकिन मेरे ज्ञान दुर्गन, भविष्य और दीन व्यक्ति के लिए हर दोष को दूर करना या जो भी दोष मैं देखता हूं उस सबसे स्वयं को मुक्त मानना सम्भव नहीं है।

मेरी अंतःशीतलता मुझे एक दिशा में ले जाती है और शरीर विपरीत दिशा की ओर जाना चाहता है। इन दोनों विरोधी दलों के कार्यों से मुक्त पाई जा सकती है, पर वह मुक्त कई ध्येय से और पीड़ा चरणों से गुजरते हुए ही प्राप्त है। मैं यह मुक्ति कर्म का यंत्रतप मानना स्वभाव पर बाहर होता है।

इस संघषक में देह को शरण तपाना पड़ता है, तब जाकर अंतःशीतलता पूरी तरह स्वतंत्र हो पाती है। (यांग, 17-11-1921, पृ. 368)

सत्य की खोज

मैं श्रीकृष्ण एक सत्यशोधक हूं। मेरा मानना है कि मैंने सत्य तक पहुंचने का मार्ग बूढ़ा लिया है। मैं उसे पाने का निरंतर प्रयास कर रहा हूं। लेकिन मैं स्वीकार करता हूं कि मैं अभी तक अपना ध्येय में सफल नहीं हो सका हूं।

सत्य को पूर्ण रूप से पाना अत्यंत अविभाज्य और अशत्विक भाव से प्रभावित करके ही पाई जा सकती है। इस संघषक में देह को निरंतर तपाना पड़ता है, तब जाकर अंतःशीतलता पूरी तरह स्वतंत्र हो पाती है।

यदि मैं पूर्ण मनुष्य होता हूं और मुझे अपने दृष्टियों के दुख देखकर वैसा महसूस न होता जैसा कि होता है। पूर्ण मनुष्य के रूप में मैं उसके स्वरूपों को देखकर उन्हें दूर करने के उपाय बता देता हूं और जिसके अन्य सत्य के बल पर उन्हें अपनाने के लिए लोगों को बाध्य कर देता। पर अभी तो मैं ध्यान के धुमिल शीशे के जरिए ही देख पाता हूं और इसलिए धीरे-धीरे तथा कष्टक्रम प्रक्रिया द्वारा विश्वास की गई पाता हूं और तब भी सदा सफल नहीं होता।
ऐसी स्थिति में, यदि मैं अपने चहुं और व्याप्त परिवार्य दुःख की जानकारी होती हुई भी और विश्व के नियंत्रा की छाया तले, कंकालेश्वरों को देखकर भी, भारत के करोड़ों मूक दीन–दुर्दूखियों के साथ सहानुभूति का अनुभव न करूं तो मैं मनुष्य से अधम जीव होऊंगा। (वही, पृ. 377)

**भगवान पर भरोसा**

मैं इस संसार में व्याप्त अंधकार के बीच से निकलकर आती तक पहुंचने का प्रयास कर रहा हूं। मुझ्से अक्सर गलसमायों हो जाती है या मिथ्या अनुमान लगा बैठता हूं। भारत के करोड़ों मूक दीन–दुब्लखयों के साथ सहानुभूति का अनुभव न करूं तो मैं मनुष्य से अधम जीव होऊंगा। (यंग, 4-12-1924, पृ. 398)

मैं सारी दुनिया को प्रसन्न करने के लिए भगवान से शवश्वासघात नहीं करूंगा। (हरर, 18-2-1933, पृ. 4)

मैं इसे संसार में पररव्याप्त अंधकार के बीच से उभरती हैं। (यंग, 11-12-1924, पृ. 406)

मेरा जीवन एक खुली बनता रहा है। मेरे न कोई रहस्य है और मैं रहस्यों को प्रश्रथ देता हूं। (यंग, 19-3-1931, पृ. 43)

मैं पूरी तरह भला बनने के लिए संघर्ष संघर्ष एक अदना–सा इंसान हूं। मैं मन, वाणी और कर्म से पूरी तरह सच्चा और पूरी तरह अहिस्क बनने के लिए संघर्ष संघर्ष हूं। यह लक्ष्य सच्चा है, यह मैं जानता हूं। पर उसे पाने में बार–बार असफल हो जाता हूं। मैं मानता हूं कि मैं इस तरह तक पहुंचना नहीं करेंगा, यह तक पहुंचना ही आनंद है। (यंग, 9-4-1924, पृ. 126)

जब मैं एक और अपनी लघुता और अपनी सीमाओं के बारे में सोचता हूं, और दूसरी ओर मुझ्से लोगों को जो अपेक्षाएं हो गई हैं, उनकी बात सोचता हूं। तो यह क्षण के लिए तो मैं सत्य रह जाता हूं। लेकिन फिर यह समझकर प्रकृतिस्थ हो जाता हूं कि मैं अपेक्षाएं मुझसे नहीं हैं, जोकि अन्वेष और सुरे का एक अजीब-सा मिश्रण है, बल्क लय्य और अभिस्से के दो अमूल्य गुणों के मुझसे अवतरण के प्रति है। यह अवतरण कितना ही अपूर्ण है पर
मुझे अपेक्षाकृत अधिक द्रष्ट्व्य है | इसलिए पश्चिम के अपने सह-शोधकों की मुझसे जो कुछ सहायता बन पड़े, उसकी जिम्मेदारी से मुझे विमुख नहीं होना चाहिए | (यंग, 3-10-1925, पृ. 344)

मार्गदर्शन

मैं अचूक मार्गदर्शन अथवा प्रेमण प्राप्त होने का दावा नहीं करता | जहां तक मेरा अनुभव है, किसी भी मनुष्य के लिए अचूकता का दावा करना अनुचित है, क्योंकि प्रेमण भी उसी को मिलती है जो विरोधी तत्वों की क्रिया से मुक्त हो, और किसी अवसर विशेष के संबंध में यह निर्णय करना मुश्किल होगा कि विरोधी युग्मों से मुक्त का दावा सही है या नहीं | इसलिए अचूकता का दावा करना बड़ा खतरनाक है | लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि हमें कोई मार्गदर्शन उपलब्ध ही नहीं है | विश्व के मनुष्यों का समग्र अनुभव हमें उपलब्ध है और सदा उपलब्ध रहेगा |

इसके अलावा, मौलिक सत्य अनेक नहीं है बल्कि एक ही हो, जो सत्य स्वयं है जिसे आहिसा भी कहा जाता है | सीमा में बंधा मनुष्य सत्य और प्रेम के संपूर्ण स्वरूप को, जो अनंत है, कभी नहीं पहचान पाएगा | लेकिन जितने हमारे मार्गदर्शन के लिए आवश्यक है उतना तो हम जानते ही हैं | हम उस पर आवश्यक करते समय जुटी कर सकते हैं और कभी-कभी जुटी भयंकर भी हो सकती है | लेकिन मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो अपने को नियंत्रित कर सकता है और जिन्यंत्रण की इस शक्ति में जिस प्रकार जुटी करने की शक्ति समाहित है, उसी प्रकार जुटी का पता चलने पर उसका सुधार करने की शक्ति भी है | (यंग, 21-4-1927, पृ. 128)

मैं अपने देशवासियों से कहता हूँ कि उन्हें आत्मत्याग के अनुसार और किसी सिद्धांत का अनुसरण करने की जरूरत नहीं है – प्रत्येक युद्ध से पहले आत्मत्याग आवश्यक है | आप चाहे हिंसा के पक्षधर हों या अहिसा के, आपको त्याग और अनुशासन की अप्रियता से गुजरना ही होगा | (वहीं, पृ. 532)

मैं दुनिया के सामने घोषणा करना चाहता हूँ, यद्यपि पश्चिम के अनेक मित्रों के आदर से मैं वंचित हो गया हूँ – और मुझे ग्लानि से अपना सिर झुका देना चाहिए: किंतु उनकी मित्रता अथवा प्रेम की खातिर भी मुझे अपनी अंतराला की आवाज को दबाना नहीं चाहिए – मेरी अनुभवता प्रकृति आज मुझे इसकी प्रेमण दे रही है | मेरे अंदर कुछ है जो मुझे अपनी सत्य को चीख-चीखकर सुना देने के लिए बाध्य कर रहा है | मैं आत्मत्याग के आवश्यक बंधा मनुष्य सत्य और प्रेम के संपूर्ण स्वरूप को, जो अनंत है, कभी नहीं पहचान पाएगा | मैं आत्मत्याग के आवश्यक हूँ (स्पीरा, पृ. 531)
मनोविज्ञान का भी थोड़ा-बहुत अध्ययन किया है | ऐसा आदमी बात को ठीक-ठीक समझता है | मुझे इसकी चिंता नहीं कि आप इसे क्या कहकर पुकारते हैं | मेरी अंतरात्मा की आवाज मुझसे कहती है, “तुहे सारी दुनिया के विरोध में खड़ा होना है, भले ही तुम अकेले खड़े हो | दुनिया तुम्हें आपेक्षिक दृष्टि से देखे, पर तुहे उनसे आंख मिलाकर खड़े रहना है | डरो मत | अपनी अंतरात्मा की आवाज का भरोसा करो |“ यह आवाज कहती है : “मित्रों का, पत्नी का और सभी का लागू कर दो किंतु जिसके लिए तुम जिते हो और जिसके लिए तुहे मरना है, उसके प्रति सच्चे बने रहो |” ( माना, पृ. 201-2)

पराजय की भावना नहीं

पराजय मुझे हतोत्साहित नहीं कर सकती | यह मुझे केवल सुधार सकती है.... मैं जानता हूँ कि ईश्वर मेरा मार्गदर्शन करेगा | सत्य मानवीय बुद्धिमत्ता से श्रेष्ठतर है | ( योग, 3-7-1924, पृ. 218 )

मैंने कभी अपनी आशावादिता की लागू नहीं किया है | प्रत्यक्षत: घोर विपत्ति के कालों में भी मेरे अंदर आशा की प्रक्ष ज्योति जलती रही है | मैं स्वयं आशा को नहीं मार सकता | मैं आशा के ओरिजल्ड का प्रत्यक्ष प्रदर्शन नहीं कर सकता, पर मुझ में पराजय की भावना नहीं है | ( हरि, 25-1-1935, पृ. 399 )

मैं भविष्यदर्शन करना नहीं चाहता | मेरा काम वर्तमान की चिंता करना है | ईश्वर ने मुझे आगामी क्षण पर कोई नियंत्रण नहीं दिया है....

भरोसा

यह सही है कि लोगों ने मुझे प्राय: निराश किया है | बहुतों ने मुझे धोखा दिया है और बहुतों ने अपने कर्तव्य का निर्वाह नहीं किया है | लेकिन मुझे उनके साथ काम करने का कोई पछतावा नहीं है | कारण, कि मैं जिस तरह सहयोग करना जानता हूँ, उसी तरह असहयोग करना भी जानता हूँ | दुनिया में काम करने का सबसे व्यावहारिक और गरीबमाम तरीका यही है कि जब तक किसी व्यक्ति के बारे में निश्चित रूप से कोई विरोधी साक्ष्य सामने न आए, उसकी बात का भरोसा किया जाए | ( योग, 26-12-1924, पृ. 430 )

मुझे भरोसा करने में विश्वास है | भरोसा करने से संबंध है | संदेह दर्जनभर है और इससे सिर्फ़ सड़न पैदा होती है | जिसने भरोसा किया है, वह दुनिया में आज तक हारा नहीं है | ( योग, 4-6-1925, पृ. 193 )

वचन-भंग मेरी आत्मा को झकझोर देता है, विशेषकर तब जबकि वचन-भंग करने वाले से मेरे कोई संबंध रहा हो | सत्तर वर्ष की अवस्था में मेरे जीवन का कोई भी बीमा मूल्य शेष नहीं है | इसलिए यदि किसी व्यक्ति और गंभीर वचन का विधवत पालन करने के लिए मुझे अपने जीवन की आहुति भी देनी पड़े तो मुझे सहर्ष इसके लिए तत्पर रहना चाहिए | ( हरि, 11-3-1939, पृ. 46 )
जहां तक मेरी जानकारी है, अपने संपूर्ण सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत जीवन में, मैंने कभी वचन-भंग नहीं किया है।

(हरिद, 22-4-1939, पृ. 100)

मेरा नेतृत्व

उनके अनुसार मेरा दावा है कि मैं किसी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा मानव प्रकृति को अधिक अच्छी तरह समझता हूँ। मेरा विश्वास है कि मेरा यह दावा यही है, तबकि अगर मुझे अपनी सच्चाई और अपने तरीकों में विश्वास न हो तो मैं शीर्ष स्थान ग्रहण करने के योग्य नहीं हूँ। (यंग, 1-1-1925, पृ. 8)

जहां तक मेरे नेतृत्व का प्रश्न है, यदि मैं नेता हूँ तो, यह पद मुझे मांगने से नहीं बल्कि निश्चयपूर्व सेवा करने के फलस्वरूप प्राप्त हुआ है। जिस तरह व्यक्ति अपनी तर्क के रंग को नहीं छोड़ सकता, उसी प्रकार ऐसे नेतृत्व का ल्यान भी नहीं कर सकता। और चूँकि मैं अपने राष्ट्र का अभिमुख अंग बन चुका हूँ, उसे मुझे मेरी सभी खासियों और सीमाओं के साथ अंगीकार करना होगा। इनमें से बहुत-सी स्थितियाँ और सीमाओं का मुझे दुखद बोध है और शोष का स्मरण मेरे स्पष्ट्वादी आलोचक मुझे बराबर कराते ही रहते हैं। (यंग, 13-2-1930, पृ. 52)

वह बढ़ई अयोग्य है जो अपने औराजों में कमियाँ निकालता है। वह सेनापति अयोग्य है जो घतिया कारगुजारी के लिए अपने सिपाहियों को दोष देता है। मैं जानता हूँ कि मैं अयोग्य सेनापति नहीं हूँ। मुझे इतनी अक्ल है कि मेरी सीमाओं का पहचान सकूं। यदि मेरे भाग्य में दिवालियापन लिखा होगा तो इश्वर मुझे इसकी घोषणा करने की शक्ति देगा। विवाद लगभग आधी शताब्दी से मैं इश्वर की अनुमति से जो काम करता आ रहा हूँ, उसके लिए जब मेरी जरूरत नहीं रहेगी तो संभवतः वह मुझे स्वयं उठा लेगा। लेकिन मुझे लगता है कि अभी मेरा काम बाकी है; जो अंधकार मेरे चारों और फैल गया है, वह दूर हो जाएगा। और डांडी मार्च से भी शानदार किसी अभिमान के परिणामस्वरूप अथवा उसके विना ही, भारत अविस्मरित उपायों से अपने सच्चे स्वरूप को प्राप्त कर सकेगा। मैं उस आलोक के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ जिस अंधकार को दूर कर देगा। जिन्हें अहिंसा में जाग्रत विश्वास है, वे मेरी इस प्रार्थना में समर्पित हो जाएं। (हरिद, 23-7-1938, पृ. 193)

मेरा काम

जो काम मेरे सामने है, उसे करने में संतुष्ट हूँ। क्यों कि अस्पष्ट सिफारिश मैं नहीं करता। विवेक हमें इस बात को समझने में सहायक होता है कि जिन चीजों की थान हमें नहीं है, उनमें अपनी टंग न घुसें। (हरिद, 7-9-1935, पृ. 234)

यदि मैं मानवजाति को यह विश्वास दिलाने में सफल हो तोकि नियम स्वतंत्र अध्वा पुरुष, वह शरीर से दिक्तना ही दुर्वृत हो, अपने आकांक्षाओं और स्वतंत्र्य का रक्षक रख दिया है तो मैं समझूं कि मेरा काम पूरा हो गया है।
प्रतिरोधी व्यक्ति के विरूद्ध सारी दुनिया एक हो जाए तो भी यह रक्षोपाय उपलब्ध रहना चाहिए। (हिंसा, 6-8-1944)

मेरी आंखें मूंद जाने और इस काया के भस्मीभूत हो जाने के बाद भी मेरे काम पर निर्णय देने के लिए काफी समय लेएगा। (यंग, 4-4-1929, पृ. 107)
4. मेरा जीवन-लक्ष्य

मैं दिव्यद्रश्न नहीं हूँ | मैं तो एक व्यावहारिक आदर्शवादी हूँ | अर्थिः का धर्म केवल ऋषियों और संतों के लिए नहीं है | यह साधारण लोगों के लिए भी है | अर्थिः मानवजाति का नियम है, बैसे ही जैसे कि हिन्दु पशु का | पशु में आत्मा सुपुत्र रूप में निवास करती है, इसलिए वह केवल शारीरिक शक्ति के नियम को ही जानता है | मनुष्य की गरिमा एक उच्चतर नियम के पालन की अपेक्षा रखती है – वह नियम है आत्मा की शक्ति | (यंग, 11-8-1920, पृ. 3)

मेरे सार्वजनिक जीवन में कई अवसर ऐसे आए हैं जबकि प्रतिकार का सामर्थ्य होते हुए भी मैंने स्थायित्व को बेहतर करने से रोका है और अपने मित्रों को भी ऐसा ही करने की सलाह दी है | मेरा जीवन इसी सिद्धांत को समर्पित है | मैंने दुनिया के सभी महान गुरुओं – जरथुश्त, महावीर, वेश्यल, ईशु, मोहम्मद, नानक और अन्य अनेक – के उपदेशों में इसे पाया है | (यंग, 9-2-1922, पृ. 85)

मेरे धर्म का पहला नियम अर्थिः है | यही मेरे पंथ का अंतिम नियम भी है | (यंग, 23-3-1922, पृ. 166)

मेरे धर्म का पहला नियम अर्थिः है | यही मेरे पंथ का अंतिम नियम भी है | (यंग, 23-3-1922, पृ. 166)

मेरे धर्म का पहला नियम अर्थिः है | यही मेरे पंथ का अंतिम नियम भी है | (यंग, 23-3-1922, पृ. 166)

मेरा सत्याग्रह का लक्ष्य

मेरा धैया अत्यंत संयम के साथ, उदाहरण और उपदेश देते हुए सत्याग्रह के बेजोड़ अस्त के प्रयोग की शिक्षा देना है – सत्याग्रह जो अर्थिः तथा सत्य की प्रत्यक्ष परिणति है | मैं यह प्रदर्शित करने के लिए उत्सुक ही नहीं अपितु आतः हूँ कि जीवन की बहुत-सी बुराइयों का इलाज केवल अर्थिः है....

जब मैं बुराई करने के नाकाबिल हो जाऊंगा और मेरे विचारों की दुनिया में कोई कट्टा या दंभपूर्ण बात क्षणमात्र के लिए भी टिक नहीं सकेगी तब, और सिर्फ तब, मेरी अर्थिः दुनिया भर के लोगों के हृदयों को दर्शाता है | मैं अपने और अपने पाठकों के सामने कोई अपराध आदर्श या इम्तहान नहीं रखा है | इसे प्राप्त करना मनुष्य का विशेषाधिकार और जन्मसिद्ध अधिकार है |

हमने स्वर्ग को खो दिया है, पर इसे दुःखार अवश्य प्राप्त करेंगे | यदि इसमें समय लगता है तो वह काल के अन्त चक्र में एक मनके के बराबर है | गीता के दिव्य गुरु भगवान कृष्ण ने कहा ही है कि मनुष्य के लाखों दिन ब्रह्म के एक दिन के बराबर होते हैं | (यंग, 2-7-1925, पृ. 232)
अहिसा मेरा भगवान है और सत्य मेरा भगवान है | जब मैं अहिसा को खोजता हूँ तो सत्य कहता है, ‘इसे मेरे माध्यम से दूंढ़’ | और जब मैं सत्य को खोजता हूँ तो अहिसा कहती है 'इसे मेरे माध्यम से दूंढ़ो' | (यंग, 4-6-1925, पृ. 191)

मुझे लगता है कि अहिसा मेरे रोम-रोम में बसी है | अहिसा और सत्य मेरे दो फेफड़े हैं | इनके बिना मैं जी नहीं सकता | अमर में प्रतिक्रिया अधिकाधिक स्पष्टता के साथ अहिसा की अद्वैत शक्ति और मनुष्य की लघुता का कायल होता जाता हूँ | एक बनवासी भी अपनी असीम करुणा के बावजूद हिंसा से सर्वथा मुक्त नहीं होता | अपनी हर श्रास के साथ वह थोड़ी-बहुत हिंसा करता ही है |

यह शरीर स्वयं एक बूढ़ा खाना है, अतः शरीर से मुक्त में ही मोक्ष और परमानंद निहित हैं | इसलिए मोक्ष के आनंद के सिवा सभी प्रकार के सुख क्षणिक और अपूर्ण हैं | वस्तुतः यह है कि हमें अपने दैनिक जीवन में हिंसा के अनेक कट्टे घुंटे पीने पड़ते हैं | (यंग, 21-10-1926, पृ. 364)

अहिसा की प्रयुक्ति

हमें सत्य और अहिसा को व्यक्तिगत आचरण की ही नहीं बल्कि समूह, समुदायों और राष्ट्रों के आचरण की वस्तु बनाना होगा | कम-से-कम मेरा स्वप्न सत्य है और, मैं इसकी प्राप्ति का प्रयास करता हूँ ही ही रीतिया और मुक्ता |

मेरा विश्वास मुझे प्रतिदिन नये सत्यों की खोज करने में सहायक होता है | अहिसा को आत्मा का स्वभाव है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को जीवन के सभी कार्यक्षणों में इस पर आचरण करना चाहिए | यदि यह सर्वत्र प्रयोग में न लाई जा सके तो इसका कोई व्यवहारिक मूल्य नहीं है | (हरै, 2-3-1940, पृ. 23)

सत्य और अहिसा में मेरी आस्था बराबर बढ़ती जाती है | और जैसे-जैसे मैं अपने जीवन में इनका अनुसरण करना का प्रयास करता हूँ, मेरा विश्वास होता जाता है | मेरे सामने उनके नये-नये निहितार्थ आते जाते हैं | मैं प्रतिदिन उन्हें एक नए आलोक में देखता हूँ और उनमें नये-नये अर्थ पाता हूँ | (हरै, 1-5-1937, पृ. 94)

मेरा लक्ष्य किसी धुंधतू शूरवीर जैसा नहीं है जो सर्वत्र धुंधकर लोगों को उनकी विपत्ति से मुक्ति दिलाता है | मेरा विनिमय कार्य तो लोगों को यह दिखाता है कि वे अपनी कठिनाईयां स्वयं कैसे दूर कर सकते हैं | (हरै, 28-6-1942, पृ. 201)

मेरी अपूर्णताएं और असफलताएं भी उसी प्रकार भगवान का वरदान हैं जैसे कि मेरी सफलताएं और मेरी योग्यताएं, और मे दोनों को उसके चरणों में निवेदित कर देता हूँ | मेरे जैसे अपूर्ण व्यक्ति को उसने इतने महान प्रयोग के लिए क्यों चुना? मेरी समझ में उसने जान-बूझकर ऐसा किया है | उसे लाखों निर्धन, मूरक और
अज्ञातियों की सेवा करना अभीष्ट रहा होगा | कोई पूर्त्ता प्राप्त मनुष्य तो उनको संभवते निराश ही करता | जब उन्होंने देखा कि उन जैसी कमजोरियों वाला एक यक्ति अहिसा के मार्ग पर अग्रसर है तो उनमें भी अपने सामर्थ्य के प्रति आमलविश्वास जगा | यदि कोई पूर्त्ताप्राप्त यक्ति ने तुल के लिए आया होता तो हम उसे मान्यता देते और शायद हम उसे गुफावास के लिए खड़े देते | हो सकता है कि मेरा अनुसरण करने वाला यक्ति मुझसे अधिक पूर्त्त सिद्ध हो सके और तुम उसका संदेश ग्रहण कर सको। (हरि, 21-7-1940, पृ. 211)

कोई गांधीवादी संप्रदाय नहीं

मैं खैर को भारत और मानवता का एक अदना सेवक मानता हूँ और इसी प्रकार सेवा करते हुए मर जाना पसंद करूंगा | मुझे कोई संप्रदाय चलाने की कामना नहीं है | मैं स्वचालित इतना महत्वाकर्षक हूँ कि मेरा अनुमन केवल एक संप्रदाय करे, इससे मुझे संतोष नहीं होगा | चूँकि में किसी नये सत्य के प्रतिनिधित्व नहीं करता, मैं (घरेलू) सत्य का, जैसा कि उसे ज्ञात है, अनुमन और प्रतिनिधित्व करने का प्रयास करता हूँ | हां, यह अवश्य है कि मैं अनेक पुराने सत्यों पर नयी रोड नीलाम कर सकता हूँ। (यंग, 21-7-1940, पृ. 211)

मैंने कोई नये सिद्धांत प्रस्तुत नहीं किए हैं बल्कि पुराने सिद्धांतों को ही पुन: प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है।

(यंग, 2-12-1926, पृ. 419)

'गांधीवाद' जैसी कोई बीज नहीं है, और मैं अपने बाद कोई संप्रदाय छोड़ कर जाना नहीं चाहता | मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने किसी नये सिद्धांत को जन्म दिया है | मैंने तो सनातन सत्यों को अपने देनांदिन जीवन और समस्तों के समाधान में अपने ढंग से लागू करने का प्रयास किया है।

दुनिया को सिखाने के लिए मेरे पास कोई नयी बात नहीं है | सत्य और अहिसा उतने ही पुराने हैं जिनमें पर्वत | मैं तकनीक इन दोनों को लेकर बड़े-बड़े पैमाने पर प्रयोग करने का प्रयास किया है | ऐसा करते समय मुझे गलतियाँ हुई हैं और इन गलतियों से मैंने सबक लिया है।

इस प्रकार, जीवन और उसकी समस्तों ने मेरे लिए सत्य और अहिसा पर आचरण के अनेक प्रयोगों का रूप ले लिया है।

स्वभाव से मैं सत्यवादी हूँ, अहिसक नहीं | जैसा कि किसी जैन मुनि ने एक बार ठीक ही कहा था, मैं अहिसा का उत्तम पक्षधर नहीं हूँ जितना कि सत्य का और मैं सत्य को प्रथम स्थान देता हूँ और अहिसा को दूसरी | क्योंकि, जैसा कि उन मुनि ने कहा, मैं सत्य के लिए अहिसा की बलि दे सकता हूँ | दरअसल, अहिसा को मैंने सत्य की खोज करते हुए पाया है। (हरि, 28-3-1936, पृ. 49)

गांधीवाद क्या है, मैं खैर नहीं जानता | मैं अज्ञात समुद्र में अपनी नाव खो रहा हूँ | मुझे बार-बार समुद्र की धार लेनी पड़ती है। (हरि, 17-12-1938, पृ. 385)
भला ‘गांधीवादी’ भी कोई नाम में नाम है? उसकी बजाय ‘अहिसाबादी’ क्यों नहीं? क्योंकि गांधी तो अच्छाई और बुराई, कमजोरी और मजबूती, हिंसा और अहिसा का मिश्रण है जबकि अहिसा में कोई मिलावट नहीं है। (हरी, 13-5-1939, पृ. 121)

अब मैं तथाकथित ‘गांधीवादी’ सिद्धांत और उसके प्रचार के उपायों की चर्चा करूंगा। सत्य और अहिसा का प्रचार पुस्तकों के माध्यम से उतनी अच्छी तरह नहीं किया जा सकता जितना कि उन पर आचरण के द्वारा किया जा सकता है। सच्चाई से जी गई बिंदगी पुस्तकों से ज्यादा प्रभावकारी होती है। (हरी, पृ. 122)

मेरे सभी परामर्शों में बचाव का एक वाक्य हमेशा जुड़ा रहता है। वह यह कि जब तक मेरा परामर्श दिलो-दिमाग को सही न लगे, तब तक उसे मानने की जरूरत नहीं है। जिसे सचमुच अपने अंदर की आवाज सुनाई देती है, उसे मेरा परामर्श मानने की खातिर अपने अंदर की आवाज की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, मेरा परामर्श उन्होंने के अनुसरण के लिए है जिन्हें अपने अंदर की आवाज का बोध नहीं है और जिन्होंने मेरे अपेक्षाकृत अधिक अनुभव तथा सही निर्णय लेने की क्षमता पर भरोसा है। (हरी, 15-7-1939, पृ. 197)

अगर गांधीवाद भ्राति पर आधारित है तो उसका नष्ठ हो जाना ही उचित है। सत्य और अहिसा कभी नष्ठ नहीं होगे किंतु यदि गांधीवाद किसी पंथ-संप्रदाय का पर्याय है तो उसका नष्ठ हो जाना ही उचित है। यदि मुझे अपनी मृत्यु के बाद पता चले कि मैं जिन आदर्शों के लिए जिया, उनका कोई पंथ-संप्रदाय बन गया है तो मुझे गहरी बेदना होगी।

कोई यह न कहे कि वह गांधी का अनुगमी है। अपना अनुगमन में स्वयं करूँ, यही काफ़ी है। मुझे पता है, मैं अपना निर्णय अपूर्ण अनुगमी हूँ, क्योंकि मैं अपनी आश्चर्यों के अनुरूप जी नहीं पाता। आप मेरे अनुगमी नहीं हैं बल्कि सहपाठी हैं, सहयोगी हैं, सहकर्मी हैं और सहयोगी हैं। (हरी, 2-3-1940, पृ. 23)

अगर कोई गांधीवादी हो तो वह मुझे होना चाहिए। लेकिन मुझे आश्चर्य है कि मैं ऐसा कोई दावा करने का दंभ नहीं करूंगा। गांधीवाद का अर्थ है गांधी की पूरा करने वाला। पूर्णता को इश्क तो कीजिए तो जाना ही जाता है। मैंने इश्क का दावा करने का दंभ भी नहीं किया, अतः कोई मेरा भक्त नहीं कहला सकता। (हरी, 21-11-1947, पृ. 389)

पीड़ा का नियम

मैंने भारत के सामने आत्मांग के प्रचीन नियम को प्रस्तुत करने का जोखिम उठाया है। वस्तुतः सत्याग्रह और उसकी शाखा-प्रशाखा-असहयोग और सत्य प्रति प्रतिकार, और कुछ नहीं है, सिवाओ आत्मांग एवं कष्ट सहन के नियमों के नये नामों के।

वे ओशो न्यून से भी अधिक प्रतिभाशाली थे जिन्होंने हिंसा के बीच रहते हुए अहिसा के नियम की खोज की। वे वेलिंटन से भी बड़े योद्धा थे कि अस्त्रों के प्रयोग के स्ताण रहने पर भी जिन्हें उनकी व्यर्थता को पहचाना और परेशान दुनिया को सिखाया कि उसकी मुक्ति हिंसा में नहीं अपितु अहिसा में निहित है।
अपनी गत्यात्मक स्थिति में, अहिंसा का अर्थ है विवेकपूर्वक कष्ट-सहन | इसका अर्थ अत्याचारी की इच्छा के समक्ष कार्य सम्पन्न नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है अत्याचारी की इच्छा के विरुद्ध अपनी पूरी आत्मिक शक्ति से उठ खड़े होना | इस नियम पर चलते हुए कोई आदमी अकेला ही अपने समान, अपने धर्म और अपनी आत्मा की रक्षा के लिए किसी अन्यायी साम्राज्य की समूही शक्ति को चुनौती दे सकता है और उस साम्राज्य के पतन अथवा नवजीवन की नींव रख सकता है |

भारत की भूमिका

अत: मैं भारत से अहिंसा के लिए उठ सकता हूँ कि वह अपने बल और अपनी शक्ति के प्रति सचेत रहते हुए अहिंसा का आचरण करे | भारत को अपने बल को पहचानने के लिए हथियारों के प्रशिक्षण की जरूरत नहीं है | हमें इसकी जरूरत इसलिए महसूस होती है कि हम अपने को केवल इंडु-मांस का ढेर समझते हैं |

मैं चाहता हूँ कि भारत की भूमिका बोध हो कि उसकी एक आत्मा है जो अविनाशी है और जो प्रत्येक भौतिक दुर्बलता से ऊपर उठकर विजयी हो सकती है और समस्त संसार के भौतिक बल को चुनौती दे सकती है | (यंग, 11-8-1920, पृ. 3-4)

विश्वसंघ}

मेरा जीवन-लक्ष्य केवल भारतवासियों में बंधुत्व की स्थापना करना नहीं है | मेरा लक्ष्य केवल भारत की आज्ञादी नहीं है, यद्यपि इसमें संदेह नहीं कि आज मेरा लगभग संपूर्ण जीवन और पूरा समय इसी में लगा है | किंतु, भारत की आज्ञादी के जरिए, मैं विश्वसंघ के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता हूँ |

मेरी देशभक्ति कोई व्यावहारिक वस्तु नहीं है | यह सर्वसमावेशी है और मैं उस देशभक्ति को लागू दृष्ट जो अन्य राष्ट्रों को व्यक्ति अथवा शोषित करके अपनी प्रभाव नियंत्रण करने का प्रयास करे | देशभक्ति के मेरे विचार की यदि निरपेक्ष प्राप्त रूप से समस्त मानवता के अधिकाधिक कल्याण के साथ संगति न हो तो वह बेकार है |

यही नहीं, मेरा धर्म और धर्म से व्युत्पन्न मेरी देशभक्ति समस्त जीवन को परीक्षा करती है | मैं केवल मानवों के साथ ही तदात्म अथवा बंधुत्व स्थापित करना नहीं चाहता, अपितु पूरी पर रंगने वाले कीड़े-मकोड़ों के साथ भी तदात्म अथवा बंधुत्व स्थापित करना चाहता हूँ .... क्योंकि हम यह मानते हैं कि हम सब उसी ईश्वर की समर्थन है और इसलिए, जीवन जिस रूप में भी दिखाई देता है, तत्वत: एक ही होना चाहिए | (यंग, 4-4-1929, पृ. 107)
मुझे अपने जीवन-लक्ष्य में इतनी गहरी आशा है कि यदि उसकी प्राप्ति से फलता मिलती है – और मिलना अवश्य भविष्यवादी है – तो इतिहास में यह बात दर्शाती होगी कि यह आंदोलन विश्व के सभी लोगों को एक सूत्र में पिरोने के लिए था जो एक-दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि एक समस्ति के अंग होंगे।

(हरर, 26-1-1934, पृ. 8)

अहिंसक मार्ग

मेरी महात्माकाॅंक्षा सीमित है। ईश्वर ने मुझे सारी दुनिया को अहिंसा के मार्ग पर ले जाने की शक्ति प्रदान नहीं की है। लेकिन मेरी कल्पना है कि उसने भारत की अनेक बुराइयों के समाधान के लिए उसे अहिंसा का मार्ग दिखाने के वास्ते मुझे अपने साधन के रूप में चुना हुआ है। इस दिशा में अब तक की प्रगति बड़ी भारी है। और अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

(हरर, 23-7-1938, पृ. 193)

छल-कपट और असत्य आज दुनिया के सामने सीना ताने खड़े हैं। मैं ऐसी स्थिति का विवश साधक नहीं बन सकता। यदि आज मैं चुपचाप और निर्भय बन कर बैठ जाऊं तो ईश्वर मुझे इस बात के द्वारा दंशित करेगा। मैं ऐसी ब्लस्थशत का शवरोध साक्षी नहीं बन सकता।

(बांक्रा, 9-8-1942)

मैं दूसरों पर अपने निजी विश्वासों का प्रयास कर सकता, किसी राष्ट्रीय संगठन पर तो कभी नहीं। मैं तो केवल राष्ट्र को उसकी सुंदरता और उपादेयता का भरोसा दिलाने का प्रयास कर सकता हूँ।

यह अन्य कोई होगा यदि मैं अपनी आदर्शता से देश को अन्य साधनों के जरिए प्रगति करने दूं। जब तक कि मेरे साधन निष्कृतिपूर्ण रूप से शारातपूर्ण और हानिकार न हों। उदारता के लिए, मुझे वास्तविक हिंसा का विरोध करना चाहिए। भले ही की विरोध करने वाला मैं अकेले विक्षित होऊँ। लेकिन मैं तो स्वीकार करता हूँ कि राष्ट्र को यह चाहे तो, इस बात का अधिकार है कि वह वास्तविक हिंसा का इस्तेमाल करके भी अपनी आजादी हासिल कर ले। सिर्फ यह होगा कि तब भारत मेरे जन्म की भूमि होने के बावजूद मेरे प्रेम की भूमि नहीं रह जाएगा।

(यंग, 20-11-1924, पृ. 382)

मुझे सार्वभौम अहिंसा का प्रचार करने की क्षमता नहीं है। इसलिए मैं अपनी आजादी हासिल करने के सीमित लक्ष्य के लिए अहिंसा के इस्तेमाल का प्रचार कर रहा हूँ। और इसलिए शायद अंतरराष्ट्रीय संबंधों का अहिंसक उपायों से नियमन करने का प्रयास करना है। सार्वभौम अहिंसा का प्रचार करने से पहले मुझे वासनाओं से पूरी तरह मुक्त हो जाना आवश्यक है और ऐसी स्थिति को भी हासिल करना आवश्यक है जिसमें मुझे कभी कोई पाप न हो।

(हरर, 25-1-1942, पृ. 15)

मेरा उपदेश और सीख भवनात्मक या अव्यवहारिक नहीं है। मैं वही सीख देता हूँ जो प्राचीन काल से चली आ रही है और जो उपदेश देता हूँ। उस पर ख्यात आचरण करने का प्रयास करता हूँ। और मेरा दावा है कि मेरे समान
आचरण सभी कर सकते है क्योंकि मैं एक अश्वास्वय साधारण देहधारी हूं और उन सभी प्रतिबिंबों और दुर्बलताओं का शिकार हो सकता हूं जिनका कि हममें से घटिया-से-घटिया आदमी हो सकता है | (यंग, 15-12-1927, पृ. 424)

मैं सार्वभौम अहिंसा की बात तो करता हूं, पर मेरा प्रयोग भारत तक सीमित है | अगर मैं कामयाब हो जाता हूं तो पूरी दुनिया इसे सहज ही सीकार कर लेगी | लेकिन यह ‘आर’ बहुत बड़ी है | विलंब की चिंता में नहीं करता | अभिव्यक्ति अंधकार में मेरा विश्वास सर्वाधिक प्रकाशमान रहता है | (हरि, 11-2-1939, पृ. 8)

पता नहीं क्यों, मुझे यूरोप और अमेरिका जाने में भय लगता है | इसलिए नहीं कि मुझे अपने देशवासियों की अपेक्षा उनका अविश्वास अधिक है, पर इसलिए कि मुझे स्वयं पर विश्वास नहीं है | मुझे स्वास्थ्य सुधारने अथवा देशभक्ति के लिए परम्परा की यात्रा करने की कोई कामना नहीं है | मुझे सार्वजनिक भाषण देने की भी कामना नहीं है | मुझे महिमामूड़ से जाना जाए, इसे में कतई पसंद नहीं करता | मेरे ख्याति से मुझमें सार्वजनिक भाषण देने और सार्वजनिक प्रदर्शनों में भाग लेने के श्रीकांत तनावों को साफ लाते लोगों की स्वीकार करता हूं | लेकिन मैं अनुभव करता हूं कि मेरे पास परम्परा का व्यक्तिगत रूप से देने के लिए कोई संदेह नहीं है | मेरा विश्वास है कि मेरा संदेह सार्वभौम है, पर मैं अब यह अनुभव करता हूं कि मैं अपने ही देश में काम करके इसे ज्यादा अच्छी तरह पहुँचा सकता हूं | यदि मैं भारत में प्रत्यक्ष सफलता प्रदर्शित कर सकूं तो मेरा संदेह पूरा तरह लोगों तक पहुँच जाएगा | यदि मैं इस नतीजे पर पहुँचता हूं कि भारत के लिए मेरे संदेह का कोई उपयोग नहीं है तो उसके प्रति आश्चय होने पर भी मुझे अन्य श्रोतों तक उसे पहुँचाने के लिए कहीं बाहर जाने की फिक्र नहीं करनी चाहिए | अगर मैं बाहर जाऊं तो मुझे पहले इस बात का विश्वास होना चाहिए, चाहे सबकी तसल्ली के लायक मैं उसका प्रमाण न दे सकूं, कि मेरा संदेह भारत में ग्रहण किया जा रहा है, भले ही उसकी गति बिलकुल धीमी हो | (म. II, पृ. 417)

जब मैं ऐसा हो जाऊंगा कि मुझे मुझे बुराई हो ही नहीं और मेरे प्रवर्तक की दुनिया में कोई कटू या दंभपूर्ण बात क्षणमात्र के लिए भी टिके नहीं, तब, और सिर्फ तब, मेरी अहिंसा दुनिया भर के लोगों के हृदयों को व्रजित कर देगी | (यंग, 2-7-1925, पृ. 232)

प्रत्यावेश उनकी होगी, (सत्य के) सनातन नियम की कभी नहीं | (म. VIII, पृ. 23 )
5. अंत:करण की आवाज़

जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब कुछ चीज़ों के लिए हमें बाह्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती | हमारे अंदर से एक हल्की-सी आवाज़ हमें बताती है, तुम सही रास्ते पर हो, दाएं-बाएं मुड़ने की ज़रूरत नहीं है, सीधे और संकरे रास्ते पर आगे बढ़ते जाओ | (ली, 25-12-1916)

तुम्हारे जीवन में ऐसे क्षण आएंगे जब तुम्हें कदम उठाना होगा, तो तुम अपने घनिष्ठ-से-घनिष्ठ मित्रों को भी अपना साथ देने के लिए सहमत न कर सको | जब कर्तव्यविमृद्ध हो जाओ तो सदैव ‘अंत:करण की आवाज़’ को ही अपना अंतिम निर्णय कार्य करो | (यंग, 4-8-1920, पृ. 3)

आत्मशुद्धि का अनवरत प्रयास करने के मेंने ‘अंत:करण की आवाज़’ को सही-सही और स्पष्ट रूप से सुन पाने की किंचित शक्ति अर्जित कर ली है | (एफा, पृ. 34)

जिस क्षण में अंत:करण की छोटी-सी आवाज़ की अवरुद्ध कर दूंगा, मेरी उपयोगिता ही समाप्त हो जाएगी | (यंग, 3-12-1925, पृ. 422)

मेरे प्रायोजित कोई यात्रिक क्रियाएं नहीं हैं | ये अंत:करण की आवाज़ के आदेश पर किए जाते हैं | (यंग, 2-4-1931, पृ. 60)

झूठा दावा नहीं

यदि कोई व्यक्ति देवी प्रेरणा या अंत:करण की आवाज़ के अभाव में भी उसका अनुगमन करने का दावा करता ही उसका हत्या उससे भी बुरा होगा जो किसी तौर पर समार के प्रावधार के अनुसार काम करने का झूठा दावा करता है | लौकिक समार के झूठे अनुगमी को तो भंडा फूटने पर केवल शारीरिक दंड मिलेगा, लेकिन अंत:करण की आवाज़ सुनने का झूठा दावा करने वाला शरीर और आत्मा, दोनों का विनाश कर बैठेगा |

उदार आलोचक मुझे कपटी तो नहीं मानते, लेकिन उनका ख्याल है कि मैं संभवतः किसी विचार का शिकार होकर काम करता हूं | यदि यह सही हो, तो इसका नतीजा भी उससे कोई ज्यादा भिन्न नहीं होगा जैसा कि झूठे दावेदार का होगा | मेरे अपने साधारण खोजों को अलंकार साथ करने की आवश्यकता है और अपना मानसिक संतुलन बनाए रखने के लिए, उसे अपनी अस्तित्व को पूरी तरह मिटा देना होगा, तभी ईश्वर उसका पथप्रदर्शन करेगा |

मैं इस विषय की ओर अधिक चर्चा नहीं करूँगा | मेरे विश्वास के अनुसार तब तो इसका प्रश्न ही नहीं है | मैंने एक सीधा-सादा वैज्ञानिक सत्य प्रस्तुत किया है जिसे वे सभी लोग जांच-परख सकते हैं जिनमें इसके लिए अपेक्षित योग्यताओं को अर्जित करने की इच्छा और धैर्य हो | स्वयं
इन योग्यताओं को समझना और अर्जित करना बेहद आसान है बस्ती कि व्यक्ति में दढ़ इच्छा हो | (बांक्रा, 18-11-1932)

तुम्हें किसी और पर नहीं, अपने पर विचार करने की आवश्यकता है | तुम्हें अंत:करण की आवाज़ को सुनने का प्रयास करना होगा | तुम इसे ‘अंत:करण की आवाज़’ न कहना चाहो में तर्क-बुद्धि का निर्देश’ कह सकते हो, पर उसका तुम्हें पालन करना चाहिए, और यदि तुम ईश्वर का नाम नहीं लोगे तो निस्संदेह किसी और का लोगों जो अंतत: ईश्वर ही साबित होगा, क्योंकि इस ब्रह्मांड में ईश्वर के अलावा और कुछ है ही नहीं |

मैं यह भी निवेदन करना चाहूगा कि अंत:करण की आवाज़ की प्रेरणा पर कार्य करने का दावा करने वाले प्रयेक्त व्यक्ति को वह प्रेरणा नहीं होती | यह क्षमता की तरह अंत:वाणी को सुनने की क्षमता भी पूरा प्रयास और प्रशिक्षण से विकसित होती है | किसी अन्य क्षमता के विकास के लिए जितना प्रयास और प्रशिक्षण अपेक्षित है, उससे कहीं ज्यादा अंत:करण की आवाज़ को सुनने की क्षमता विकसित करने के लिए आमप्रशिक्षण चाहिए | अगर हजारों दावेदारों में से कुछ थोड़े-से लोग भी अपने दावा सिद्ध करने में सफल हो पाएं तो संदेहास्पद दावेदारों को बर्दशित करने का खतरा उठाने में कोई हासिल नहीं है | (म, III, पृ. 229)

मेरी जानकारी में किसी ने इस संभावना से इंकार नहीं किया है कि कुछ लोगों को ‘अंत:करण की आवाज़’ सुनाई देती है और अगर एक आदमी का भी दावा सच्चा हो कि वह अंत:करण की आवाज़ के आदेश पर अपनी बात कहता है तो इससे दुनिया का फायदा है | दावा बहुत-से लोग कर सकते हैं, पर वे उसकी सच्चाई का प्रमाण नहीं दे पाएंगे | लेकिन इस दावेदारों को रोकने की खातिर सच्चे दावेदारों का दावा करने का दावा करने का खतरा उठाने में कोई असाध्य नहीं है | (म, III, पृ. 229)

अगर ऐसे बहुत-से लोग हों जो अंत:करण की आवाज़ का ईमानदार भावना से प्रतिनिधित्व कर सकें तो कोई हानि नहीं | पर ज्यादा से, ज्यादा का कोई इलाज नहीं है | सदृश दावे का दावा करने का दावा करने के लिए मनुष्य का बड़ी लंबी और काफी कठिन साधना करनी पड़ती है और ‘अंत:करण की आवाज़’ जब बोलना लगता है तो वह अमोघ होती है | दुनिया को आप सदा के लिए मूर्ख बनाने में कामयाब नहीं हो सकते | इसलिए अगर मेरे जैसे अदना आदमी का दावा न किया जा सके और वह इस विश्वास के आधार पर कि उसने अंत:करण की आवाज़ सुन ली है, उसके आदेश को मुखर करने का दावा करे तो संसार में अराजकता फैलने का कोई खतरा नहीं है | (हरें, 18-3-1933, पृ. 8)
मेरा दावा कि मैं ईश्वर की आवाज़ को सुन सकता हूँ, कोई नया दावा नहीं है। दुर्भाग्य से, अपने कामों के परिणामों के अलावा कोई और तरीका मुझे इस दावे को प्रमाणित करने का ज्ञात नहीं है। ईश्वर अपने बंदों को इस बात की अनुमति दे दे कि वे उस प्रमाण का पत्र बना सकें तो फिर वह ईश्वर ही क्या? लेकिन यह अवश्य है कि वह अपने सेवक को बड़ी-से-बड़ी अप्रियरीक्षा में खरा उतरने की शक्ति देता है।

मैं गत आधी शताब्दी से भी अधिक समय से इस अलग-अलग कठोर स्वामी का तत्पर सेवक बना हुआ हूँ। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, उसकी आवाज़ मुझे अधिकाधिक स्पष्ट सुनाई देती जाती है। उसने घोर विपत्ति में भी मेरा साथ नहीं छोड़ा है। उसने प्राप्त घटनाओं में नए प्रमाणों का पात्र बनाने की कल्पना की प्रशंसनीय नहीं।

इश्वरीय वाणी

मेरे लिए ईश्वर की, अंतःकरण की अप्राप्त सत्य की वाणी, अंतःकरण की आवाज़ या ‘हल्की-सी-भैरवी आवाज़’ सब एक ही चीज़ है। मुझे ईश्वर के कभी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हुए। मैंने इसके लिए कभी प्रयास भी नहीं किया – मैंने ईश्वर को सदा निराकार माना है। लेकिन मैंने जो सुनी वह वाणी कहीं दूर से आ रही थी, पर फिर भी काफी नज़रदीव लगती थी। उसे सुनने में मुझे कोई चुक नहीं हुई है, वह इतनी स्पष्ट थी जैसे कोई आदर्श मुझे बात कर रहा हो। उस आवाज़ में एक अदर्श आकर्षण था। जिस समय मैंने वह आवाज़ सुनी, मैं स्पष्ट नहीं देख रहा था। उस आवाज़ को सुनने से पहले मेरे अंदर घोर संग्राह छिड़ा था। अचानक मुझे वह आवाज़ सुनाई दी। मैंने उसे सुना, जब निश्चित हो गया कि यह आवाज़ उसी की है तो अंदर का संग्राम समाप्त हो गया। मैं शांत हो गया। तदनुसार संकल्प कर लिया, उपवास की तारीख और समय निश्चित हो गए।

क्या मैं इसका कोई प्रमाण दे सकता हूँ कि जो आवाज़ मैंने सुनी थी, वह सच्चास ईश्वरीय वाणी ही थी, मेरी अपनी उत्तेजित कल्पना की प्रतिध्वनी नहीं थी? संदेहातुलों को आश्वस्त करने के लिए मेरे पास कोई और प्रमाण नहीं है। वह यह कहने के लिए स्वतंत्र है कि यह मेरी अपनी श्रद्धा अथवा विभ्रम है। हमें भी सक्ता है। मेरे पास इस विचार को खंडित करने के लिए भी कोई तर्क नहीं है। लेकिन मैं एक बात कहना चाहूँगा कि अगर सारी दुनिया बहुत स्वतंत्र से इसे स्फूट करने तो भी मेरा यह विश्वास अहिंसावाद है कि मैंने जो आवाज़ सुनी थी, वह ईश्वरीय वाणी ही थी।

लेकिन कुछ लोगों का मानना है कि ईश्वर स्वयं हमारी कल्पना की सृष्टि है। अगर यह दशक्की ठीक है तो कुछ पर भी वास्तविक नहीं है, सब कुछ हमारी कल्पना की सृष्टि ही है। तब भी, जब तक मेरी कल्पना मुझे पर नाती है, मैं उसी के सम्मोहन में बंधकर काम कर सकता हूँ। वास्तविक-से-वास्तविक चीज़ें भी सापेक्ष रूप से ही वास्तविक होती हैं। मेरे लिए यह ईश्वरीय वाणी मेरे अपने अंतिम से भी अधिक वास्तविक थी। उसने कभी मुझे धोखा नहीं
दिया है, किसी को नहीं देती | और जो चाहे, उस आवाज़ को सुन सकता है | वह सबके भीतर मौजूद है | लेकिन अन्य सभी चीज़ों की तरह उसके लिए भी पहले निष्क्षत तैयारी की जरूरत है | (हरी, 8-7-1933, पृ. 4)

सही या गलत, मैं जानता हूँ कि सत्याग्रही के रूप में हर संभव कठिनाई में मेरे पास ईश्वर की सहायता के अलावा और कोई साधन नहीं है | और मैं चाहूँगा कि लोग यह विश्वास करें कि मेरे दुर्बाध लगने वाले काम मैंने वस्तुतः अपने अंदर की आवाज़ के आदेश पर किया है |

यह मेरी उत्तेजित कल्पना की उपज भी हो सकती है | अगर ऐसा है तो मैं उस कल्पना की कद्र करता हूँ जिसने पचपन से भी अधिक वर्षों तक मेरे जीवन के उत्तर-चढ़ावों में मेरा साथ दिया है; पचपन वर्ष इसलिए कहता हूँ कि मैंने पंद्रह वर्ष का होने से पहले ही सचेतन रूप से ईश्वर पर भरोसा करना सीख लिया था | (हरी, 11-3-1939, पृ. 46)
6. मेरे उपवास

मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि जब-जब आप ऐसे कष्ट में हों जिसका निवारण न कर सकें तो उपवास और प्रार्थना करें। (यंग, 25-9-1924, पृ. 319)

ये (उपवास) मेरे अस्तित्व का अंग हैं | मिसाल के तौर पर, मेरे लिए जितनी जरूरी मेरी आंखें हैं, उतने ही जरूरी उपवास भी हैं | बाहर जगत के लिए जो महत्व आंखें का है, अंतःकरण के लिए वही महत्व उपवासों का है। (यंग, 3-12-1925, पृ. 422)

ऊपरी आदेश

इन उपवासों का उत्तरदायित्व मेरा नहीं है | मैं इन्हें अपने मनोरंजन के लिए नहीं करता | मैं ख्याति अर्जित करने के लिए अपने शरीर को कष्ट नहीं द्वारा | यद्यपि मैं भूख की तड़प और उपवास के अन्य कष्टों को सहर्ष सहन करता हूँ, पर कोई यह न समझे कि मुझे कष्ट नहीं होता | मैं इन उपवासों को इसीलिए सहन कर पाता हूँ कि इन्हें कोई उच्चतर शक्ति मुझ पर आपैतृक करती है और वही मुझे इनके कष्टों को सहन की क्षमता भी देती है। (हर, 24-8-1934, पृ. 223)

मैं इन उपवासों को किसी के आदेश पर शुरू नहीं करता | आमरण उपवास कोई हल्की-फुल्की चीज नहीं है | वे पूर्णतः अवांछनीय भी माने जा सकते हैं | इन्हें क्रोध में आकर नहीं किया जा सकता | क्रोध तो अल्पजीवी पागलपन है | इसलिए, मुझे उपवास तभी करना चाहिए जब मेरी अंतःकरण की आवाज मुझे इसका आदेश दे। (हर, 15-6-1947, पृ. 194)

उपवास और प्रार्थना

सच्चा उपवास शरीर, मन और आत्मा - तीनों की शुद्धि करता है | यह देह को यंत्रणा देता है और उसी सीमा तक आत्मा को स्वतंत्र करता है | इसमें सच्छे हद्दों से की गई प्रार्थना आक्षरक तरीके से कर सकती है | यह आत्मा की और अधिक शुद्धि के लिए की जानेवाली आत्मसंज्ञा ही है | इस प्रकार प्राप्त की गई शुद्धि जब किसी शुभ उद्देश्य के लिए प्रयुक्त होती है तब वह प्रार्थना बन जाती है। (यंग, 24-3-1920, पृ. 1)

मेरा मानना है कि उपवास के बिना प्रार्थना नहीं हो सकती और प्रार्थना के बिना सच्चा उपवास नहीं हो सकता। (हर, 16-2-1933, पृ. 2)

पूर्ण उपवास पूर्ण और सच्चा आत्मायाम है | यह सर्वात्मा प्रार्थना है | मेरा जीवन ले लो, यह सदा तेरे और केवल तेरे लिए है | की पुकार मुख से निकलने वाली निर्भर्ष या प्रतीकामक बात नहीं होनी चाहिए | यह बिना किसी हिचकिचाहट के अपने आपको बेफिक्र होकर सहर्ष समर्पित कर देने की भावना से युक्त होनी आवश्यक है।
भोजन और यहां तक कि जल का त्याग भी केवल उसकी शुरुआत है; यह तो समर्पण का सबसे कम महत्वपूर्ण पक्ष है | (हरि, 15-4-1933, पृ. 4)

देह का वशीकरण

जब तक भगवद्गुप्ता का परिणाम न हो तब तक उपवास, और ज्ञान बुरा नहीं तो, व्यर्थ भूखा मरना है | (हरि, 11-4-1939, पृ. 46)

मैं जानता हूँ कि मन की वृत्ति ही सब कुछ है | जिस प्रकार प्रार्थना विद्या की चटर-चटर के समान केवल पात्रिक भी हो सकती है, उसी प्रकार उपवास भी मात्र देह की यंत्रणा का रूप ले सकता है.... न ऐसी प्रार्थना अंतरात्मा का स्पर्श करेगी, न ऐसा उपवास | (यंग, 16-2-1922, पृ. 103)

मेरा पक्का शवश्वास है शक ज्यों-ज्यों देह आपके  शवरुद्ध होती जाती है, त्यों-त्यों आत्मा की ब्लक्त बढ़ती जाती है | (यंग, 23-10-1924, पृ. 354)

जब मनुष्य की देह उसके विरुद्ध विद्रोह करने लगे तो उसका दमन करना आवश्यक हो जाता है; देह वश में आ जाए और सेवा के साधन के रूप में इस्तेमाल की जा सके तो फिर उसका दमन करना पाप है | दूसरे शब्दों में, देह का दमन अपने आप में कोई अच्छी बात नहीं है | (हरि, 2-11-1935, पृ. 299)

देहावेगों के तुल्यकरण का त्याग भी कुछ मायने रखता है | जब तक दैहिक आवेगों की बलि नहीं दी जाती, ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता | भगवान के मंदिर के रूप में देह की देखभाल एक बात है और दैहिक आवेगों की अनदेखी करना दूसरी बात है | (हरि, 10-12-1938, पृ. 373)

अपने और अपने सनकी साशथयों के पूर्ण अनुभव के बल पर मैं बिना हिचक कहता हूँ कि उपवास करना तब ठीक है जब आपको (1) कब्ज हो, (2) खून की कमी हो, (3) ज्वर हो, (4) अपच हो, (5) सिरदर्द हो, (6) वायुविकार हो, (7) संधिमार्ग हो, (8) खीज और गुस्सा आ रहा हो, (9) विषाद हो, या (10) हर्षतिरंगे हो | यदि आप ऐसे करेंगे तो न डाक्टरी नस्सहें के जरूरत पड़ेंगी, न पेटेंट्ेदवाइयों की | (यंग, 17-12-1925, पृ. 442)

पीढ़क उपवास

उपवास केवल उसके विरुद्ध किए जा सकते हैं जिससे आपको प्रेम हो | उपवास का उदेश्य प्रेमी से कोई अधिकार हथियार नहीं बलिक उसका सुधार करना होना चाहिए; मिसाल के तौर पर, पुत्र अपने पिता की शराब की लत छूड़वाने के लिए उपवास कर सकता है | बंबई और उसके पश्चात बारदोली के मेरे उपवास इसी तरह के थे | मैंने उनके सुधार के लिए उपवास किए थे जो मुझसे प्रेम करते थे | लेकिन मैं जनरल डायर को सुधारने के लिए उपवास नहीं करूंगा जो मुझे प्रेम नहीं करता बलिक अपना शत्रु मानता है | (यंग, 1-5-1924, पृ. 145)
इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि उपवास सचमुच पीड़क अर्थात दबाव डालने वाला हो सकता है | ऐसे उपवास किसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए किए जाते हैं | किसी मनुष्य से पैसा ऐंठने या ऐसे ही किसी व्यक्तिगत प्रयोजन से किया गया उपवास प्रपीड़क या अनुचित दबाव डालने वाला माना जाएगा | मैं ऐसे अनुचित दबाव का प्रतिरोध करने की निस्संकोच हिमायत करता हूँ | मैंने स्वयं अपने विरुद्ध या मुझे धमकाने के लिए किए गए उपवासों का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया है | और यदि यह तर्क दिया जाए कि स्वार्थ और निस्स्वार्थ भाव में तो बड़ा सूक्ष्म अंतर है तो मेरा कहना है कि यदि कोई व्यक्ति यह समझता है कि उसके विरुद्ध किए जा रहे उपवास का उद्देश्य स्वार्थपूर्ति या कोई और घटिया बात है तो उसे इसका द्वितलापूर्वक प्रतिरोध करना चाहिए, भले ही इससे उपवास करने वाले व्यक्ति का प्राणांत हो जाए | यदि लोग गलत उद्देश्यों के लिए किए जाने वाले उपवासों की उपेक्षा करने लगें तो उपवासों से प्रपीड़न और अनुचित प्रयोग का दोष दूर हो जाएगा |

अन्य सभी मानव संस्थाओं की तरह, उपवास भी उचित और अनुचित, दोनों प्रकार का हो सकता है | लेकिन सत्याग्रह के साधनों में उपवास एक बड़ा महत्वपूर्ण अस्त्र है और इसके संभावित दुरुपयोग के कारण इसे त्याग देना संभव नहीं है | (हरर, 9-9-1933, पृ. 5)

मैं जानता हूँ कि उपवास के अस्त्र को साधन कोई साधारण बात नहीं है | यदि उपवास करने वाला व्यक्ति इसकी कला में कुशल न हो तो उपवास में सहज ही हिंसा का पुट आ सकता है | मेरा मानना है कि मैं उपवास की कला में कुशल हूँ | (हरर, 11-3-1939, पृ. 46)
7. मेरी असंगतियाँ

मैं जिन पुरानी बातों या व्यवहारों को समझ नहीं सकता या नैतिक आधार पर इस्लामी सब ही नहीं ठहरा सकता, उन्हें आँख मूंढ़कर मानने से इंकार करता हूँ। (यंग, 21-7-1921, पृ. 228)

मेरे कहने का कहना है कि मुझमें अनेक असंगतियाँ हैं | लेकिन चूंकि लोग मुझे ‘महात्मा’ कहते हैं इसलिए मैं इसलिए उन्हें आंख मूंढ़कर मानने से इंकार करता हूँ कि मेरे विचार और सार्वजनिक व्यवहार की उक्ति को साधीकर दुखाते हुए कह सकता हूँ कि ‘मूर्खतापूर्ण सुसंगति छोटे दिमागों का होता है’ | मेरा ख्यात है कि मेरी असंगतियाँ में भी एक पद्धति है | मेरे विचार में, मेरी जो बातें असंगतिपूर्ण दिखाई देती हैं उनमें भी सुसंगति का एक सूत्र दिखाई देता है, उसी प्रकार जैसे कि मैंने वैविध्य का दर्शन होने के बावजूद प्रकृति में एकत्व किया है। (यंग, 13-2-1930, पृ. 52)

मैं यह मानता हूँ शक मेरे में अनेक असंगशत हैं | लेकिन चूंकि लोग मुझे महात्मा कहते हैं इसलिए मेरा इमसकन की उब्लक्त को सांशधकार दुहराते हुए कह सकता हूँ: 'मूखकतापूणक सुसंगशत छोटे शदखाई है | मेरा ख्यात है कि मेरे में असंगशत को सामना होता है, उन्हें सुसंगति का एक सूत्र दिखाई देता है, उसी प्रकार कि मैंने वैविध्य का दर्शन होने के बावजूद प्रकृति में एकत्व किया है। (यंग, 16-4-1931, पृ. 77)

सुसंगति की जड़पूजा

मैं इस बात की कठिन परवाह नहीं करता कि मैं सुसंगत दिखाई दूँ | सत्य की खोज करने हेतु मैंने अनेक विचारों का स्थान किया है और बड़ह-से नयी बातें सीखी हैं | जबधपि मैं वृद्ध हो गया हूँ, पर मुझे यह विलकुल अनुभव नहीं होता कि मेरा अंतरिक्ष विकास रुक गया है या कि मेरी देह के विघटन के साथ एक विकास रुक जाएगा | मुझे सिर्फ इस बात से सोचकर है कि मैं अपने ईश्वर, अथर्व सत्य, द्वारा समय-समय पर दिए जाने वाले आदेशों का पालन करने के लिए तत्पर रहूँ। (हरर, 29-4-1933, पृ. 2)

मैंने सुसंगति की जड़पूजा कभी नहीं की | मैं सत्य का हिमायती हूँ और किसी मुद्दे पर जिस समय जो महसूस करता हूँ और सोचता हूँ, वही कहता हूँ और इस बात की चिंता नहीं करता कि इस मुद्दे पर पहले मैं क्या कह चुका हूँ, जैसे-जैसे मेरी दृष्टि स्पष्ट होती है, दैनिक अभ्यास से मेरे विचार भी स्पष्टतर होते जाते हैं | जहां मैंने जान-ज्ञान राय बदली है, परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देगा – केवल सावधान व्यक्ति ही उस परिवर्तन के क्रमिक एवं सूक्ष्म विकास को समझ पाएगा। (हरर, 28-9-1934, पृ. 260)
मेरा ध्येय किसी मुद्दे पर अपने पूर्व विचारों के साथ सुसंगति बनाए रखना नहीं है बल्कि किसी निश्चित क्षण पर जो सत्य दिखाई देता है, उससे सुसंगति रखते हुए अपनी बात कहना है। इसका परिणाम यह है कि मैं एक सत्य से दूसरे सत्य की ओर प्रगति करता गया हूँ। (हरेर, 30-9-1939, पृ. 288)

मैं राजनीतिक लाभ उठाने के लिए कभी किसी सिद्धांत की बलि नहीं दूं। मुझे नहीं समझता कि मैं अपने जीवन में एक भी काम ताक्तक और गुरू को देखकर किया है। मैंने हमेशा यह माना है कि सत्य नैतिकता ही सत्य और चिंता भी है। (हरेर, 8-12-1933, पृ. 8)

समझौता

मुझ पर आप यह आरोप लगाया गया है कि मैं जिसी स्वभाव का हूँ। लोग बताते है कि मैं बहुमत के निर्णय के आगे नहीं घुटका। मुझ पर तानाशाह होने का आरोप लगाया गया है – मैं जिद्धीवन या तानाशाही के आरोप से कभी सहमत नहीं हो जा सकता हूँ। इसके विपरीत, मुझे तो इस बात का फक्त है कि मैं उन मुद्दों पर लचीला रुख अपना सकता हूँ जो महत्वपूणक नहीं हैं। (यंग, 14-7-1920, पृ. 4)

मेरे संपूणक जीवन में आग्रह और अनाग्रह मेरे बाद में आते वृश्चिक के कारण मुझे प्राण और स्वतंत्रता को अपने स्वभाव का है। मेरे संपूणक जीवन में आग्रह और अनाग्रह हमेशा साथ-साथ ही चलते रहे हैं। सत्याग्रह में यह अनिवार्य है, इसका अनुभव मैं बाद में कई बार किया है। इस समझौता-वृत्ति के कारण मुझे कितनी ही बार अपने प्राणों को संकट में डालना पड़ा है और मित्रों का असंतोष सहना पड़ा है। पर सत्य वज्र के समाप स्वतंत्रता को भी आश्वास्त न कर सकता हूँ। (ए, पृ. 107)

मनुष्य-जीवन समझौतों का एक सिलसिला है और जो बात इंसान सिद्धांत के तौर पर सही पाता है, उसे व्यवहार में उतारना हमेशा आसान नहीं होता। (हरेर, 5-9-1936, पृ. 237)

कुछ समझौते सिद्धांत ऐसे हैं जिन पर कोई समझौता नहीं किया जा सकता और मनुष्य को उन पर आचरण करते हुए अपने जीवन की बलि देने के लिए उद्यम रहना चाहिए। (वही, पृ. 238)
8. मेरा लेखन

बोलने में मेरी हिंचक जो कभी दंभलाहट पैदा करती थी, अब बड़ा सुख देती है । इसका सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि इसने मुझे मितभावी होना सिखा दिया है । मैंने स्वभावतः अपने विचारों में संयम से काम लेने का अभ्यास डाल लिया है । और मैं अब अपने आपको यह प्रमाणपत्र दे सकता हूँ कि बिना सोचे-समझे शायद एक शब्द भी कभी मेरी जिह्दा अथवा लेखनी से नहीं निकल सकता । मुझे याद नहीं आता कि कभी मुझे अपने भाषण या लेख के किसी अंश पर खेड़ व्यक्त करना पड़ा हो । इसका सबसे बड़ा लाभ और समय के अपवय से बच सका हूँ । (ए. पृ. 45)

इंडियन ओपीनियन" के प्रथम मास में ही मैं समझ गया था कि पत्रकारिता का एकमात्र ध्येय सेवा होना चाहिए । समाचारपत्रों के पास बड़ी भारी ब्लक है, लेकिन जिस प्रकार अनियंत्रित बाढ़ का पानी दुर्भाग्य का दर्द देता है और फसलों को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार अनियंत्रित लेखनी की सेवा भी विनाशकारी होती है । यदि उसका नियंत्रण बाहर से किया जाए तो वह नियंत्रणहीनता से भी अधिक अनिष्कासित होता है । प्रेस का नियंत्रण तभी लाभकारी हो सकता है जब प्रेस उसे स्वयं ऊपर लागू करे । यदि यह तक सही है तो दुनिया के किंतने पत्र इस कसौटी पर पढ़े उतरेंगे । बिना जो पत्र-पत्रिकाएं निकलती हैं, उन्हें कौन रोके ? अच्छी और बुराई के तरह, निकले और उपयोगी भी साथ-साथ चलेंगी और मनुष्य को अपना चुनाव खुद करना होगा । (चौथी, पृ. 211)

मेरे लेखन में किसी व्यक्ति के प्रति घृणा का भाव हो ही नहीं सकता, क्योंकि मेरा यह पक्का शवश्वास है कि यह दुनिया प्रेम के सहारे ही चल रही है । (सली, सं, 5, 17-9-1919)

मेरी पत्रकारिता

मैंने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश स्वयं पत्रकारिता की खातिर नहीं किया है बल्कि यह मेरे जीवन के ध्येय की पूर्ति में सहायक है, ऐसा मानकर किया है । मेरा ध्येय अत्यंत संयम के साथ, उदाहरण और उपदेश देते हुए, सत्याग्रह के बेजोड़ अस्त्र के प्रयोग की शिक्षा देना है । सत्याग्रह जो अहिंसा तथा सत्य का प्रत्यक्ष पररणाम है । इसलिए यदि मुझे अपने धर्म पर आरूढ़ रहना है तो मुझे क्रोध में आकर या विद्वेष की भावना से नहीं लिखना है । मुझे निष्प्रयोजन नहीं लिखना है । मुझे केवल उत्तेजना फैलाने के लिए नहीं लिखना है ।

पाठक इस बात को समझ ही नहीं सकते कि मुझे हफ्ते-दर-हफ्ते शीर्षकों और शब्दों के चुनाव में कितना संयम बरतना पड़ा है । यह मेरे लिए एक प्रशिक्षण है । इससे मुझे अपने अंदर झांकने और अपनी कमजोरियों का पता लगाने का मौका मिलता है । कई बार मेरा दंभ मुझे चुभने वाली भाषा का प्रयोग करने या मेरा क्रोध मुझे कोई सख्त विशेषण लगाने का आदेश देता है । यह बड़ी विकट परिस्थिति है, पर दुर्भावनाओं को दूर करने का यह एक उत्तम उपाय है । (यंग, 2-7-1925, पृ. 232)
लिखते समय मेरी अंतरामा मुझसे जो लिखती है, मैं लिखता जाता हूँ। मैं निश्चित रूप से यह जानने का दावा नहीं करता कि मेरे सभी सचेतन विचार और कार्य अंतरामा द्वारा निर्देशित होते हैं। लेकिन अपने जीवन में जो बड़े-बड़े कदम मैंने उठाए हैं – और छोटे-से-छोटे भी – उनकी परीक्षा करने पर मैं समझता हूँ कि यह कहना अनुचित नहीं होगा कि वे सभी अंतरामा द्वारा निर्देशित थे। (ए, पृ. 206)

जहां तक विचारों की उत्पत्ति का संबंध है, मुझमें कुछ मौलिकता है। लेकिन लेखन तो एक उपोपाद है, मैं अपने विचारों का प्रचार करने के लिए ही लिखता हूँ। पत्रकारिता मेरा व्यवसाय नहीं है। (हरिर, 18-8-1946, पृ. 270)

अंततः मेरा काम ही शेष रह जाएगा, जो मैंने कहा अथवा लिखा है, वह नहीं। (हरिर, 1-5-1947, पृ. 93)
2. सत्य

9. सत्य का दिव्य संदेश

सत्य... क्या है? यह एक कठिन प्रश्न है, लेकिन अपने लिए मैंने इसे यह कहकर सुलझा लिया है कि जो तुम्हारे अंतर्करण की आवाज़ कहे, वह सत्य है। आप पूछते हैं कि यदि ऐसा है तो भिन्न-भिन्न लोगों के सत्य परस्पर भिन्न और विरोधी क्यों होते हैं? चूँकि मानव मन असंख्य माध्यमों के जरिए काम करता है और सभी लोगों के मन का विकास एक-सा नहीं होता इसलिए जो एक व्यक्ति के लिए सत्य होगा, वह दूसरे के लिए असत्य हो सकता है।

अतः, जिन्होंने ये प्रयोग किए हैं, वे इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि इन प्रयोगों को करते समय कुछ शर्तें का पालन करना जरूरी है।

ऐसा इसलिए है कि आजकल हर आदमी किसी तरह की कोई साधना किया बगैर अंतर्करण के अधिकार का दावा कर रहा है, और हेरान दुनिया को जाने कितना असत्य धमाया जा रहा है। मैं सच्ची विनम्रता के साथ तुमसे कहना चाहता हूँ कि जिस व्यक्ति में विनम्रता कूट-कूट न भरी हो, उसे सत्य नहीं मिल सकता। यदि तुम्हें सत्य के सागर में तैरना है, तो तुम्हें अपनी हस्ती को पूरी तरह मिटा देना होगा।

केवल सत्य और प्रेम - अहिंसा - ही महत्वपूर्ण है| जहां ये हैं, वहां अंततः सब कुछ ठीक हो जाएगा। यह इस नियम का कोई अपवाद नहीं है।

सर्वांच सिद्धांत

मेरे लिए सत्य सर्वांच सिद्धांत है, जिसमें अन्य अनेक सिद्धांत समाविष्ट हैं। यह सत्य केवल वाणी का सत्य नहीं है अपितु विचार का भी है, और हमारी धारणा का सापेक्ष सत्य ही नहीं अपितु निरपेक्ष सत्य, सनातन सिद्धांत, अर्थात् ईश्वर है। ईश्वर की असंख्य परिभाषाएं हैं, क्योंकि वह असंख्य रूपों में प्रकट होता है। ये असंख्य रूप देखकर मैं आधारों और भय से अभिभूत हो जाता हूँ और एक क्षण के लिए तो स्वीकार करता हूँ।

पर मैं ईश्वर को केवल सत्य के रूप में पूजता हूँ। मैं अभी उसे प्राप्त नहीं कर सकता हूँ, पर निरंतर उसकी खोज में हूँ। इस खोज में मैं अपनी सत्यविधि प्रिय वस्तुओं का याग करने के लिए तैयार हूँ। यदि मुझे इसके लिए अपने जीवन का भी उत्सर्ग करना पड़े तो मुझे आशा है कि मैं उसके लिए तैयार रहूँगा। लेकिन जब तक मुझे इस निरपेक्ष सत्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे अपनी धारणा के सापेक्ष सत्य पर ही अवलंबित रहना होगा। तब तक यह सापेक्ष सत्य ही मेरा प्राप्त भावाश्रय है, मेरी ठाण और मेरी फरी है। यद्यपि सत्य की खोज का मार्ग कठिन और संकर तथा तलवार की धार की तरह तेज है, पर मेरे लिए यह दुःखतम और सरलतम है। इस मार्ग पर दृढ़तापूर्वक चलते जाने के कारण, अपनी भयंकर भूलें भी मुझे नगण्य प्रतीत हुई हैं। इस मार्ग ने मुझे संताप से बचाया है और
मैं अपनी प्रकाश-किरण का अनुगमन करते हुए आगे बढ़ता गया हूँ | मार्ग में चलते-चलते मुझे प्रायः निरपेक्ष सत्य-ईश्वर की हल्की-सी झलक दिखाई दी है, और मेरा यह विश्वास दिनोंदिन दृढ़तर होता जाता है कि केवल ईश्वर ही वास्तविक है और शोष सब अवास्तविक है।

सत्य की खोज

...एक बात और मेरे मन में पक्की होती जा रही है कि जो कुछ मेरे लिए संभव है, वह एक बच्चे के लिए भी संभव है | यह बात में ठोस कारणों के आधार पर कह रहा हूँ | सत्य की खोज के साधन जितने कठिन हैं, उतने ही आसान भी हैं | अंदरूनी व्यक्ति को वे काफ़ी कठिन लग सकते हैं और अबोध शिशु को पर्याप्त सरल ।

सत्य के खोज को पूरा करने के कण से भी अधिक विनम्र होना चाहिए | पूरा करने के कण को तो दुनिया अपने पौरों तले रौंदती है, लेकिन सत्य का खोज इतना विनम्र होना चाहिए कि उसे पूर्णिकण भी रौंद न सकें | तभी, और केवल तभी, उसे सत्य के दर्शन सम्भव होंगे | (ए. पृ. XV)

सत्य एक विशाल वृक्ष की तरह है | अप जितना उसका पोषण करें, उतने ही ज्यादा फल यह देगा | सत्य की खान को जितना ही गहरा खोदें, सेवा के नये-नये मार्ग के रूप में, यह उतने ही अधिक हीरे-जवाहर देगा | (वहीं, पृ. 159)

मेरे विचार में, इस संसार में निश्चितताओं की आशा करना गलत है – यहां ईश्वर अर्थात सत्य के अलावा और सब कुछ अनिश्चित है | जो कुछ हमारे चारों ओर दिखाई देता है अथवा घटित हो रहा है, सब अनिश्चित है, अनियम है | बस, एक ही सर्वाधिक सत्य यहां है जो गोपन है किंतु निश्चित है, और वह व्यक्ति भाग्यशाली है जो इस निश्चित तत्व की एक झलक पाकर उसके साथ अपनी जीवन नैया को बांध देता है | इस सत्य की खोज ही जीवन का परमार्थ है | (वहीं, पृ. 184)

सत्य की खोज में क्रोध, स्वार्थ, घृणा और धृष्टि विकार भविष्यवात: छूटते जाते हैं अन्यथा सत्य की प्राप्ति असंभव ही हो जाए | जो व्यक्ति वासनाओं के वश में है, उसकी नीति साफ होने पर भी वह कभी सत्य की प्राप्ति नहीं कर सकेगा | सत्य की खोज में सफलता प्राप्त होने पर मनुष्य प्रेम और घृणा, सुख और दुःख आदि के द्वारा से पूर्णत: मुक्त हो जाता है | (वहीं, पृ. 254-55)

सत्य का दर्शन

सत्य की सार्वभौम एवं सर्वव्यापी भावना के प्रत्यक्ष दर्शन वही कर सकता है जो क्षुद्रतम व्यक्ति से भी उतना ही प्रेम कर सके जितना कि स्वयं को करता है | और जो ऐसे करने का आकांक्षा हो, वह जीवन के किसी क्षेत्र से अपने को असंपृक्त नहीं रख सकता | यही कारण है कि सत्य के प्रति मेरे अनुराग ने मुझे राजनीति के क्षेत्र में ला खड़ा
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

किया है; और मैं बिना किसी हिचक के, किंतु विनोभात्तूर्वक यह कह सकता हूँ कि जो यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई लेना-देना नहीं है, वे यह नहीं जानते कि धर्म क्या है। (वही, पृ. 370-71)

सत्य और मैं

मैंने अपने जीवन में ऐसी बातें कहने की गलती कभी नहीं की है जिनका मेरा अभिप्राय न हो — मेरा स्वभाव बात की तहत तक सीधे पहुंचने का है, और यदि मैं कुछ समय के लिए तह तक न पहुंच पाऊँ तो भी मैं जानता हूँ कि सत्य अंततः लोगों को अपनी वाणी सुनाने और महसूस कराने में सफल हो जाएगा | मेरे अनुभव में प्रायः ऐसा ही घटित हुआ है। (वही, 20-8-1925, पृ. 285-86)

मेरे जैसे सैकड़ों लोग नष्ट हो जाएं, पर सत्य की विजय हो। मेरे जैसे ब्रटिप्रवण मनुष्यों का मूल्यांकन करने के लिए सत्य के मानदंडों को लेशमात्र भी नीचा करने की आवश्यकता नहीं है। (पृ. xv)
अपना मूल्यांकन करते समय मैं सत्य के समान कठोर बनने का प्रयास करूंगा और चाहता हूँ कि अन्य लोग भी ऐसा ही करें। उस मानदंड से अपने को मापने पर मुझे सुरदास के सुर में सुर मिलाकर कहना होगा।

“मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जेहि तनु दियो ताहि बिसरायो ऐसो नमकहरामी।” (वही, पृ. xvi)

मेरी त्रुटियाँ
मैं कितना ही तुच्छ होऊं, पर जब मेरे मात्रम से सत्य बोलता है तब मैं अजेय बन जाता हूँ। (एफा, पृ. 71)

मेरा अनुराग केवल सत्य के प्रति है, और मैं सत्य के अलावा किसी और का अनुशासन नहीं मानता। (हरि, 25-5-1935, पृ. 115)

मैं एक ही ईश्वर का दास हूँ और वह है सत्य। (हरि, 15-4-1939, पृ. 87)

सत्य के प्रति आग्रह से जो शक्ति प्राप्त होती है, उसके अतिरिक्त मेरे पास कोई और शक्ति नहीं है। इसी आग्रह से अहिंसा का प्रस्फुटन होता है। (हरि, 7-4-1946, पृ. 70)

मैं सत्य का एक साधारण-सा किंतु बड़ा उत्साही ठोकराता हूँ। अपनी खोज में मैं अपने साथी ठोकरात्मकों को अधिकतम विश्वास में लेकर चलता हूँ, ताकि मैं अपनी त्रुटियों को पहचान सकूं। उससे सुधार सकूं। मैं मानता हूँ कि अपने अनुभवों और निर्णयों में मुझे जिहद प्राप्त हुई है, और चूक के प्रति लगभग मेरे मान्यताओं में मैंने अपनी त्रुटि को सुधारना लिया है। इसलिए कोई स्वास्थ्यी हानि नहीं होने पाए हैं। हालांकि यह अहिंसा का मौलिक सत्य पहले के किसी तरह से धस्यात्मक हानि नहीं हुई है। (यंग, 21-4-1927, पृ. 128)

मैं तो स्वयं ही नौसिखिया हूँ, मुझे कोई स्वार्थ सिद्ध नहीं करना, और मुझे जहाँ भी सत्य दिखाई देता है, मुझे उसका पक्ष लेकर, उसके अनुसार कार्य करने का प्रयास करता हूँ। (यंग, 11-8-1927, पृ. 250)

मेरा विश्वास है कि पूरी नेत्रनीदित्व से काम करने पर भी यदि किसी से गलती हो जाए तो उससे वस्तुत: दुनिया की ही नहीं बल्कि किसी व्यक्ति की भी, कोई हानि नहीं होती। अपने भीस रेक्टों की अनजाने में हुई गलतियों से ईश्वर दुनिया को कोई हानि नहीं पहुंचने देता।

मेरा अनुसरण करने के कारण जिनके गलत रास्ते पर चले जाने की आशंका है, उन्हें मेरे काम की जानकारी न भी होती तो भी वे उसी रास्ते पर जाते। कारण यह है कि मनुष्य अपने आकार में अंत: अपनी अंत:प्रेरणा से ही परिचालित होता है, भले ही दूसरों के उदाहरण कभी-कभी उसका मार्गदर्शन करते प्रतीत होते हैं। जो भी हो, मैं यह जानता हूँ कि मेरी त्रुटियाँ के कारण दुनिया को कभी हानि नहीं उठानी पड़ी है, क्योंकि ये त्रुटियाँ मुझसे
अज्ञानव हुई थीं | मुझे इस बात का दृढ़ विश्वास है कि मेरी जो त्रुटियाँ बताई जाती हैं, उनमें से एक भी त्रुटि मैंने जान-बुझकर नहीं की थी | (यंग, 3-1-1929, पृ. 6)

सच पूछा जाए तो, एक व्यक्ति को जो बात स्पष्टतया गलत लगती है, वह दूसरे को एकदम बुढ़मतपूर्ण लग सकती है | वह विश्वास में हो तब भी अपने को उसे करने से रोक नहीं सकता | तुलसीदास ने सच ही कहा है –

रजत सीप महुं भास जिम्बा जळता भानु कर बारे |

जदपि मृषा तिंवृ काल सोइ भ्रम न सकइ कोउ बारे |

मेरे जैसे आदमियों के साथ, जो संभवतः महान विश्वास से ग्रस्त हैं, यहीं होता हेंगा | ईश्वर निशित रूप से उन्हें क्षमा कर देगा, पर दुनिया को ऐसे लोगों को बदरायत करना चाहिए | अंततः सत्य की ही विजय होगी | (वहीं)

सत्य न्यायोचित ध्येय को कभी नुकसान नहीं पहुंचाता | (हरर, 10-11-1946, पृ. 389)

सत्य का पररत्याग नहीं

मेरा विश्वास करो, मैं अपने 60 वर्ष के व्यक्तिगत अनुभव से कहता हूँ कि सत्य के मार्ग का परित्याग करना ही वास्तविक दुबकलता है | यदि तुम इसे समझ सको तो ईश्वर से तुम्हारी एक ही प्रार्थना होगी कि सत्य का अनुसरण करते हुए तुम्हें कितनी भी परीक्षाओं और कठिनाइयों से गुजरना पड़े, ईश्वर तुम्हें उनसे पार पाने का सामर्थ्य दे | (हरर, 28-7-1946, पृ. 243)

केवल सत्य ही टिकेगा, बाकी सब कालकवशलत हो जाएगा | इसलिए मुझे सभी लयाग दे लो भी मुझे सत्य का साक्षी बने रहना चाहिए | मेरी वाणी आज अरण्यरोदन हो सकती है, किंतु यदि यह सत्य की वाणी है तो शेष सभी वाणियाँ मुक्त हो जाने के उपरांत मेरी वाणी ही सुनाई देगी | (हरर, 25-8-1946, पृ. 284)

सारी दुनिया झूठ की चपेट में आती प्रतीत होते ही आस्थावान व्यक्ति सत्य का परित्याग नहीं करेगा | (हरर, 22-9-1946, पृ. 322)

प्रासंगिक होने पर, सत्य अवश्य कह देना चाहिए, चाहे वह कितना ही अप्रिय हो | जो अप्रासंगिक है, वह सदा असत्य है, और उसे कभी नहीं कहना चाहिए | (हरर, 21-12-1947, पृ. 473)
10. सत्य ईश्वर है

ईश्वर है

एक ऐसी अपरिभाषित रहस्यमय शक्ति है जो सर्वेक्षण व्याप्त है | मैं उसका अनुभव करता हूँ, हालांकि वह दिखाई नहीं देती | यह अद्वितीय शक्ति महसूस तो होती है लेकिन उसका कोई प्रमाण देना संभव नहीं है, क्योंकि यह इंद्रियग्राहा वस्तुओं से सर्वथा भिन्न है | यह इंद्रियातीत है | लेकिन ईश्वर के अस्तित्व का धो़ा-सा तर्क दिया जा सकता है |

मुझे एक क्षण अनुभूति होती है कि जहां मेरे चारों ओर मौजूद सभी चीजें निरंतर परिवर्तनशील हैं, निरंतर नाशवान हैं, वहां इन सारे परिवर्तनों के पीछे एक ऐसी सीतामय शक्ति है जो परिवर्तनशील है, जो सबको धारण करती है, सबकी सृष्टि करती है, संहार करती है, और पुनः सृजन करती है | सभी को अनुप्राणित करने वाली यह शक्ति अथवा आत्मा ही ईश्वर है | और चूंकि केवल इंद्रियों से ग्राह अन्य कोई वस्तु अनश्वर नहीं हो सकती और न होगी, इसलिए केवल ईश्वर ही अनश्वर है |

यह शक्ति उपकारी है अथवा अपकारी ? मुझे यह विशुद्ध रूप से उपकारी लगती है | कारण कि, मैं पाता हूँ कि मृत्यु के बीच जीवन का सातत्य है, झूठ के बीच सत्य का सातत्य है और अंधकार के बीच प्रकाश का सातत्य है | इसलिए मैं समझता हूँ कि ईश्वर जीवन है, सत्य है, प्रकाश है | वह साक्षात प्रेम है | वही सवोच्च आत्म है |

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने....तर्क के द्वारा....तुमको आश्वस्त नहीं कर सकता | आत्मा तर्क से ऊपर है | मैं यही परामर्श दे सकता हूँ....कि असंभव को संभव बनाने का प्रयास न करो | दुनिया में बुराई कोई है, इसका कोई तर्कपूर्व उत्तर मैं नहीं दे सकता | ऐसा प्रयास करना ईश्वर की बराबरी करना होगा | अत: मैं दुनिया के साथ बुराई के अस्तित्व को मान लेता हूँ, और कहता हूँ कि ईश्वर दीर्घकाल से पीड़ा भोग रहा है और घृणा प्रदर्शित कर रहा है, क्योंकि उसने दुनिया में बुराई को चलते रहने की अनुमति दी है | मैं जानता हूँ कि ईश्वर में बुराई का लेश भी नहीं है, पर फिर भी यदि दुनिया में बुराई हो तो उसका सर्व कहीं वही है, यद्यपि वह उसे छू नहीं सकती |

मैं यह भी जानता हूँ कि यदि मैं बुराई से न लड़ूँ और इस संघर्ष में प्राणों की बाजी न लगा दूँ तो मैं कभी ईश्वर को नहीं जान पाऊँगा | मेरे साधारण और सीमित अनुभव ने मेरे इस विश्वास को और भी हट कर दिया है | मैं जितना ही शुद्ध बनने का प्रयास करता हूँ, अपने को उतना ही ईश्वर के निकट अनुभव करता हूँ | मेरी आत्मा जब एक बहाना मात्र नहीं रह जाएगी, जैसे कि वह आज है, अपितु हिमालय की तरह अड़िया और उसके शिखरों पर मंडित हिम के समान ध्वनि तथा प्रकाशमान हो जाएगी तो मैं ईश्वर के कितने निकट पहुँच पाऊँगा | (यंग, 11-10-1928, पृ. 340-41)
मेरी आस्था
संसार का परित्याग तो मेरे लिए सरल है | लेकिन मैं ईश्वर का परित्याग करूं, यह अविचारणीय है | (यंग, 23-2-1922, पृ. 112)
में जानता हूं कि मैं कुछ भी करने में समर्थ नहीं हूं | ईश्वर सर्वसम्मत है | हे प्रभु, मुझे अपना समर्थ साधन बनाएं और जैसे चाहें, मेरा उपयोग करें | (यंग, 9-10-1924, पृ. 329)
मैंने ईश्वर के न तो दर्शन किए हैं और न ही उन्हें जाना है | मैंने ईश्वर के प्रति दुनिया की आस्था को अपनी आस्था बना लिया है, और चूँकि मेरी आस्था अवैद्यक हैं, मैं उस आस्था को ही अनुभव मानता हूं | लेकिन यह कहा जा सकता है कि आस्था को अनुभव मानना तो सत्य के साथ छेड़छाड़ करना है; सच्चाई शायद यह है कि ईश्वर के प्रति अपनी आस्था का वर्णन करने के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं है | (ए, पृ. 206)
आप और मैं इस कमरे में बैठे हैं, इस तथा से भी ज्यादा पक्का भरोसा मुझे ईश्वर के अस्तित्व में है | इसलिए मैं यह भी निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि मैं वापस और जल के बिना तो जीवित रह सकता हूं, पर ईश्वर के बिना नहीं रह सकता | आप मेरी आँखें निकाल लें, परंतु उससे मरना नहीं | आप मेरी नाक काटें, परंतु उससे मरना नहीं | पर ईश्वर के प्रति मेरी आस्था को ध्वस्त कर दें तो मैं भी मर जाऊँगा | आप इस अंधविश्वास कह सकते हैं, पर मैं स्वीकार करता हूं कि मैं इस अंधविश्वास को उसी प्रकार श्रद्धापूर्वक गले लगाए हूं, जिस प्रकार कोई खतरा या संकट अपने पास राम नाम का श्रद्धापूर्वक जप करने लग जाता था | इसकी सीख मुझे एक बुद्धी परिचारिका ने दी थी | (हरिर, 11-5-1938, पृ. 109)
मेरा विश्वास है कि हम सभी ईश्वर के संदेशवाहक बन सकते हैं, यदि हम मनुष्य से डरना छोड़ दें और केवल ईश्वर के सत्य की शोध करें | मेरा पक्का विश्वास है कि मैं केवल ईश्वर के सत्य की शोध कर रहा हूं और मनुष्य के भय से सर्वथा मुक्त हो गया हूं |
....मुझे ईश्वरीय इच्छा का कोई प्रकार का इच्छा नहीं है | मेरे दर्द विश्वास है कि वह प्रत्येक वक्ता के सामने निष्ठा अपना प्रकट नहीं करता है, लेकिन हम अपने 'प्रत्यक्ष' के लिए कान बंद कर लेते हैं | हम अपने समुख दैवीय अवस्थान अप्रसंशित से आंख मौच लेते हैं | मैं उसे सर्वव्यापी पाता हूं | (यंग, 25-5-1921, पृ. 161-62)
मूल्यन पत्र लिखने वालों में से कुछ यह समझते हैं कि मैं चमकदार दिखा सकता हूं | सत्य के पुजारी होने के नाते मेरा कहना है कि मेरे पास ऐसा कोई सामर्थ्य नहीं है | मेरे पास जो भी शक्ति है, वह ईश्वर देता है | लेकिन यह सामने आकर काम नहीं करता | वह अपने असंख्य माध्यमों के जरिए काम करता है | (हरि, 8-10-1938, पृ. 285)
ईश्वर की प्रकृति

मेरे लिए ईश्वर सत्य है और प्रेम है, ईश्वर आचार्य नीति है और नैतिकता है, ईश्वर अभय है | ईश्वर प्रकाश और जीवन का स्रोत है और फिर भी इन सबसे ऊपर और परे है | ईश्वर अंतर्करण है | वह नासिक की नासिकता भी है, चूँकि अपने अंतर्मन प्रेमवश ईश्वर नासिक को भी रहने की छूट देता है | वह हृदयों को परतालता है | वह वाणी और तर्क से परे है | वह हमें और हमारे हृदयों की सत्य हमसे बेहतर जानता है | वह हमारी कहीं हुई बातों को सच नहीं मानता, क्योंकि वह जानता है कि कई बार जान-बुझकर और कई बार अनजाने, हम जो बोलते हैं, हमारा अभिप्राय वह नहीं होता |

जिन्हें ईश्वर की व्यक्तिगत उपस्थिति की दरकार है, उनके लिए वह व्यक्तिगत ईश्वर है | जिन्हें उसका स्वर्ण बनायें, उनके लिए वह साक्षी है | वह विश्वास तत्त्व है | जिन्हें अपने प्रेम के लिए सब कुछ है | वह हमारे भीतर है, फिर भी हमसे ऊपर और परे है....

उसके नाम पर प्रत्यक्ष दुराचार या अमनवीय कृतांत की जाती है, पर इनसे उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हो सकता | वह दीर्घकाल लेते हुए भोग रहा है | वह धर्मवाल है, पर वह भूलकर भी है | वह इस दुनिया और आने वाली दुनिया की सबसे कठोर हस्ती है | जैसा व्यवहार हम अपने प्रोसेसियों – मनुष्यों और पशुओं – के साथ करते हैं, वैसा ही ईश्वर हमारे साथ करता है |

वह अज्ञाता को क्षमा नहीं करता | इसके बावजूद नियम शक्तिशाली है, क्योंकि वह हमें सदा पश्चात्ताप करने का अवसर देता है |

संसार में उस जैसा लोकतांत्रिक दृश्य नहीं है, क्योंकि हमको अच्छाई और दुराचार में से चुनाव करने के लिए 'प्राणु छोड़ देता है | उस जैसा अत्याचारी भी आज तक नहीं हुआ जो प्राय: हमारे होटों से प्याला छीन लेता है और स्वेच्छा के नाम पर, हमें हाथ-पैर फेंकने के लिए अत्यंत संकुचित क्षेत्र देकर फिर हमारी अवधारणा पर हंसता है |

इसलिए हिंदू धर्म में कहा गया है कि यह सब उसका खेल अर्थात उसकी 'लीला' है, अथवा भ्रम यानी माया है | हम नहीं हैं, मात्र सच है | वह हम हैं तो हम निरंतर उसका स्तुतिगान करना है और उसकी इच्छानुसार कार्य करना है | हम उसकी बंसी की धुन पर नाचोते ही सब कुछ ठीक हो जाएगा | (यंग, 5-3-1925, पृ 81)

जहां तक मैं समझता हूँ, ईश्वर दुनिया का सबसे कठोर अधिकारी है, वह तुम्हारी जमकर परीक्षा लेता है | और जब हमें लगता है कि तुम्हारी आवश्यकता है और तुम्हारे शरीर की जरूरत है और तुम्हारे बाहर है | वह तुम्हें अपनी आवश्यकता नहीं छोड़नी चाहिए | वह सदा तुम्हारे इशारे पर दोढ़ा चला आएगा, लेकिन अपनी आशा नहीं छोड़नी चाहिए | वह तुम्हारे इशारे पर दोढ़ा चला आएगा, लेकिन अपनी आशा नहीं छोड़नी चाहिए | वह सदा तुम्हारे इशारे पर दोढ़ा चला आएगा, लेकिन अपनी आशा नहीं छोड़नी चाहिए |
| मैंने तो उसे ऐसा ही पाया है | मुझे एक भी उदाहरण ऐसा याद नहीं आता जब ऐन मौके पर उसने मेरा साथ छोड़ दिया हो। (स्थित, पृ. 1069)
| शैक्षवकाल में मुझे विष्णुसहस्त्रनाम का पाठ करना सिखाया गया था | लेकिन भगवान के ये हजार नाम ही नहीं हैं | हिंदुओं का विश्वास है – और मैं समझता हूँ कि यह सत्य है – कि संसार में जितने प्राणी हैं, उन्हें ही भगवान के नाम हैं | इसीलिए हम यह भी कहते हैं कि भगवान अनाम है, और चूँकि भगवान के अनेक रूप हैं इसीलिए हम उसे निराकार मानते हैं, और चूँकि वह हमसे अनेक वाणियों के माध्यम से वार्तालाप करता है, हम मानते हैं कि वह अवाक है, इत्यादि | जब मैंने इस्लाम का अध्ययन किया तो मैंने पाया कि इस्लाम में भी खुदा के बहुत-से नाम हैं।
| जो कहते हैं कि ईश्वर प्रेम है, उनके साथ स्वर मिलाकर मेरे भी कहूँगा कि ईश्वर प्रेम है | लेकिन अपने अंतर्गत में मेरा मानना है कि यद्यपि ईश्वर प्रेम है, पर सवैपरी ईश्वर सत्य है | यदि मनुष्य की वाणी के लिए ईश्वर का पूरा-पूरा वर्णन करना संभव हो तो मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि, जहां तक मेरा संबंध है, ईश्वर सत्य है।
| लेकिन दो वर्ष पहले मैंने एक कदम और आगे बढ़ाकर कहा कि सत्य ईश्वर है | इन दो कथनों – ईश्वर सत्य है और सत्य ईश्वर है – के स्वस्त्वभ को आप समझें | मैं इस निष्कर्ष पर लगभग पचास वर्ष तक सत्य की निरंतर खोज करते रहने के बाद पहुँचा हूँ।
| मैंने तब पाया कि सत्य तक पहुँचने का सबसे छोटा रास्ता प्रेम के माध्यम से है | लेकिन मैंने देखा कि कम-से-कम अंग्रेजी भाषा में, प्रेम के अनेक अर्थ हैं और वास्तव के अर्थ में मानव प्रेम पतनकारी प्रवृति भी हो सकता है।
| मैंने यह भी देखा कि ‘अहिंसा’ के अर्थ में, प्रेम को मानने वाले लोग, इस दुनिया में बहुत कम हैं। लेकिन सत्य के कभी दो अर्थ मैंने नहीं देखा, और नासिक भी सत्य की आवश्यकता अथवा शक्ति के विषय में आपत्ति नहीं करते।
| लेकिन सत्य की खोज करने के उद्देश्य में, नासिकों ने ईश्वर के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगाया दिया है जो उनकी दृष्टि से सही है।| इस तर्क के कारण ही मुझे लगा कि ‘ईश्वर सत्य है’ के स्थान पर मुझे ‘सत्य ईश्वर है’ कहना चाहिए। (पंजी, 31-12-1931, पृ. 427-28)
| ईश्वर सत्य है, पर और भी बहुत कुछ है | इसीलिए मैं कहता हूँ कि सत्य ईश्वर है... केवल यह स्मरण रखें कि सत्य ईश्वर के अनेक गुणों में से एक गुण नहीं है | सत्य तो ईश्वर का जीवन स्वरूप है, यही जीवन है, मैं सत्य की ही परिपूर्ण जीवन मानता हूँ | इस प्रकार यह एक मूर्ति बसू है, क्योंकि संपूर्ण सृष्टि, संपूर्ण सत्ता ही ईश्वर है और जो कुछ विद्यमान है – अर्थात सत्य – उसकी सेवा ईश्वर की सेवा है। (हरिम, 25-5-1935, पृ. 115)
| पूर्णता ईश्वर का गुण है, पर फिर भी वह कितना लोकतांत्रिक है | वह हमारी कितनी बुराइयों और चुन-कपट को बर्दाश्त करता है | वह यहां तक बर्दाश्त करता है कि हम, जो उसी की अंकित सृष्टि हैं, उसके अस्तित्व पर
ही शंका करें, यद्यपि वह हमारे चारों ओर और हमारे भीतर प्रत्येक अंग में विद्यमान है | लेकिन यह अधिकार उसने अपने पास सुरक्षित रखा है कि वह जिसे चाहता है, उसे अपना साक्षात कराता है | उसके न हाथ हैं, न पैर हैं, और न और कोई अंग है लेकिन वह जिसे अपना साक्षात कराना चाहे, वह उसका दर्शन कर सकता है | (हरि, 14-11-1936, पृ. 314)

**सेवा के द्वारा ईश्वर**

यदि मैं अपने अंदर ईश्वर की उपस्थिति अनुभव न करता तो प्रतिदिन इतनी कंगली और निराशा देखते-देखते प्रलापी पागल हो गया होता या हुगली में छलांग लगा लेता | (यंग, 4-8-1927, पृ. 247-48)

यदि मुझे भारत के सबसे हीन, बल्कि विश्व के सबसे हीन, व्यक्तियों के दुख के साथ अपना तादात्म्य करना है तो मुझे अपनी देखरेख में रहने वाले साधारण व्यक्तियों के पापों के साथ तादात्म्य करना चाहिए | और, मुझे आशा है कि पूर्ण विनम्रता के साथ ऐसा करने-करने मैं किसी दिन ईश्वर – सत्य – का साक्षात कर सकूंगा | (यंग, 3-12-1925, पृ. 422)

मैं ईश्वर को मानवता की सेवा के जरिए पाने का प्रयास कर रहा हूं, क्योंकि मैं जानता हूं कि ईश्वर न स्वर्ग में है, न पाताल में, बल्कि हम सब में हैं | (यंग, 4-8-1927, पृ. 247-48)

मैं समस्त एक अंग हूं, और ईश्वर को शेष मानवता से पृथक ढूंढ नहीं सकता | मेरे देशवासी मेरे सबसे निकटस्थ पड़ोसियों हैं | वे इतने असहाय, साधनहीन और जड़ हो गए हैं कि मुझे अपना पूरा ध्यान उनकी सेवा पर लगा देना चाहिए | यदि मैं अपने को यह विश्वास दिला सकता कि ईश्वर हिमालय की गुफा में मिलेगा तो मैं तकाल वहां के लिए प्रस्थान कर देता | लेकिन मैं जानता हूं कि मानवता से दूर वह नहीं ढूंढ जा सकता | (हरि, 29-8-1936, पृ. 226)

मैं अपने लाखों-करोड़ों देशवासियों को जानता हूं | मैं दिन के जोखिमों घंटे उनके साथ रहता हूं | उनकी सेवा करना मेरा प्रथम और अंतिम कर्तव्य है, क्योंकि करोड़ों मूक लोगों के हृदयों के अलावा कहीं और ईश्वर की उपस्थिति में स्वीकार नहीं करता | इन मूक व्यक्तियों को ईश्वर की उपस्थिति का आभास नहीं होता, मुझे होता है | और, मैं इन लाखों-करोड़ों लोगों की सेवा के जरिए ईश्वर जो सत्य है अथवा सत्य जो ईश्वर है, उसकी पूजा करता हूं | (हरि, 11-3-1939, पृ. 44)

**पथप्रदर्शक और संरक्षक**

मुझे आगे बढ़ना होगा.... ईश्वर को अपना एकमात्र पथप्रदर्शक मानते हुए | वह बड़ा ईश्वर है | अपने प्राथिकार में किसी की भागीदारी नहीं होने देगा | इसलिए उसके समस्त अपनी सभी दुर्बलताओं के साथ, खाली
हाथ और पूर्ण समर्पण के भाव से उपस्थित होना होगा | और तब वह तुम्हें पूरी दुनिया का सामना करने की शक्ति देगा और सभी खतरों से तुर्माहरू रक्षा करेगा | (यंग, 3-9-1931, पृ. 247)

मैंने एक सबक सीखा है कि जो काम मनुष्य के लिए असंभव है, वह ईश्वर के लिए बच्चों का खेल है, और यदि हमें उस ईश्वर पर विश्वास है जो अपनी निकृष्टतम सृष्टि का भी भाग्यविधाता है तो मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि सब कुछ संभव है; मैं इसी अंतिम आशा में जीता और अपना समय व्यतीत करता हूं तथा ईश्वर की इच्छा का पालन करने का प्रयास करता हूं | (यंग, 19-11-1931, पृ. 361)

घोर निराशा में भी जब सारी दुनिया में न कोई सहायक दिखाई देता है, न सांत्वना देने वाला, तब उसी का नाम शक्ति प्रदान करके हममें प्रेरणा जगाता है और सभी शंकाएं तथा निराशाएं दूर भगा देता है | आज आकाश मेघाच्छन्न हो सकता है, पर ईश्वर से की गई भक्तियुक्त प्रार्थना उन्हें अवश्य छोट देगी | यह प्रार्थना का ही प्रभाव है कि मुझे कभी निराशा का मुंह नहीं देखना पड़ा है |

....मैं कभी निराशा नहीं हुआ हूं | तब तुम क्यों निराशा होते हो? हम प्रार्थना करें कि यह हमारे हृदयों से छुट्टी नामित करे और छल को समाप्त करके उन्हें अवश्य रोक देगी | मैं ऐसे अनेक लोगों को जानता हूं जिन्होंने शक्ति के इस अमोघ स्वरूप का सहारा लिया है | (हरर, 1-6-1935, पृ. 123)

मैंने देखा है, और मेरा विश्वास है, कि ईश्वर सच्चाई नहीं बल्कि कार्यरूप में प्रकट होता है और इसी से आपको घोर विपत्तियों से छुटकारा मिलता है | (हरर, 10-12-1938, पृ. 373)

व्यक्तिगत आराधना का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता | यह निरंतर, और यहां तक कि अचेतन रूप से, चलती रहती है | एक क्षण भी ऐसा नहीं जाता जब मैं उस साक्षी की उपस्थिति का अनुभव न करूं जिसकी आंख से कोई चीज़ चूक नहीं सकती | मैं इसी साक्षी के अनुरूप चलने का प्रयास करता हूं | (हरर, 24-12-1938, पृ. 395)

अत्मसाक्षात्कार

मेरा विश्वास है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए उस धन्य, अवर्णीय एवं पापमुक्त स्थिति को प्राप्त करना संभव है जिसमें वह अपने अंतःकरण में ईश्वर – मात्र ईश्वर – की उपस्थिति का अनुभव करता है | (हरर, 17-11-1921, पृ. 368)
मैं जो प्राप्त करना चाहता हूं – जिसके लिए प्रयासरत और लालाशयत हूं...., वह है आमसाक्षाकार अर्थात् ईश्वर का साक्षात्, मोक्ष की प्राप्ति | इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मैं जीता तथा चलता-फिरता हूं और अपना सत्व बनाए हुए हूं | मेरे सभी भाषण, समस्त लेखन और राजनीतिक क्षेत्र के सभी कार्य उसी लक्ष्य की ओर अभिमुख हैं | (ए, पृ. xiv)

यह विचार मुझे निरंतर यंत्रणा देता रहता है कि जिसका मेरे जीवन की हर श्वास पर अधिकार है और जिसकी मैं संतान हं, उससे अभी तक कितनी दूर हूं | मैं जानता हूं कि अपने अंदर की दुःख वासनाओं के कारण ही मैं उससे इतनी दूर हूं और फिर भी, मैं उन वासनाओं से अपने को मुक्त नहीं कर पाता | (वहीं, पृ. xvi)

ईश्वर में यह विश्वास आस्था पर आधारित होना चाहिए जो तकनीकी है | वस्तुतः तथाकथित सिद्धि के मूल भी आस्था का तत्त्व होता है जिसके अभाव में वह टिक नहीं सकती | ऐसा होना अविराम है | अपने सत्व की सीमाओं का अतिक्रमण कौन कर सकता है?

मेरी धारणा है कि इस पार्थिव जीवन में पूर्ण सिद्धि प्राप्त करना असंभव है | यह आवश्यक भी नहीं है | मनुष्य जिस पूर्ण आध्यात्मिक ऊंचाई तक पहुंच सकता है, उसे प्राप्त करने के लिए केवल एक जीत-जागती अटूट आस्था की आवश्कता है | ईश्वर हमारी इस नश्वर देह से बाहर नहीं है | इसलिए, आवश्कता हो तो भी, बाह्य प्रमाण का कोई विशेष लाभ नहीं है | हम इंद्रियों के माध्यम से ईश्वर का अनुभव नहीं कर सकते, क्योंकि वह इंद्रियात्तीत है | हम चाहें तो इंद्रियों से अपने को मुक्त करके, ईश्वर का अनुभव कर सकते हैं | हम सबके भीतर अनहद नाद हो रहा है, लेकिन हमारी इंद्रियों का कोलाहल उस कोमल संगीत को दबा देता है – यह वह संगीत है जो हमारी इंद्रियों के लिए यादगार अथवा श्रव्य किसी भी संगीत से भिन्न एवं अत्यधिक श्रद्धा मेरी धारणा है कि इस पार्थिव जीवन में पूर्ण सिद्धि प्राप्त करना असंभव है | यह आवश्यक भी नहीं है | मनुष्य जिस पूर्ण आध्यात्मिक ऊंचाई तक पहुंच सकता है, उसे प्राप्त करने के लिए केवल एक जीत-जागती अटूट आस्था की आवश्कता है | ईश्वर हमारी इस नश्वर देह से बाहर नहीं है | इसलिए, आवश्कता हो तो भी, बाह्य प्रमाण का कोई विशेष लाभ नहीं है | हम इंद्रियों के माध्यम से ईश्वर का अनुभव नहीं कर सकते, क्योंकि वह इंद्रियात्तीत है | हम चाहें तो इंद्रियों से अपने को मुक्त करके, ईश्वर का अनुभव कर सकते हैं | हम सबके भीतर अनहद नाद हो रहा है, लेकिन हमारी इंद्रियों का कोलाहल उस कोमल संगीत को दबा देता है – यह वह संगीत है जो हमारी इंद्रियों के लिए यादगार अथवा श्रव्य किसी भी संगीत से भिन्न एवं अत्यधिक श्रद्धा
11. सत्य और सौंदर्य

कला की आंतरिकता

वस्तुओं के दो पक्ष होते हैं। बाह्य और अंतरिक। बाह्य का मूल्य केवल यह है कि वह अंतरिक की सहायता करे | इस प्रकार प्रत्येक सच्ची कला आत्मा की अभिव्यक्ति होती है | बाह्य रूपों का मूल्य यही है कि वे मनुष्य की अंतरिक भावना की अभिव्यक्ति हैं | (यंग, 13-11-1924, पृ. 377)

मैं जानता हूँ कि बहुत-से व्यक्ति अपने को कलाकार कहते हैं, और उन्हें इस रूप में मान्यता भी प्राप्त है, लेकिन उनकी कृतियों में आत्मा के उद्देश्य आंदोलन और आंदोलन का लेख भी नहीं होता | (वही)

प्रत्येक सच्ची कला आत्मा के अंतरिक स्वरूप की सिद्धि में सहायक होनी चाहिए | यहाँ तक मेरा तालुक है, मुझे अपनी आत्मसिद्धि में बाह्य रूपों की सहायता की कटर जरूरत नहीं है | इसलिए मैं यह दावा कर सकता हूँ कि मेरे जीवन में सच्ची फलदायी कला है, हालांकि मैं कोई कलाकृतियाँ प्रस्तुत नहीं कर सकता।

हो सकता है कि मेरे कमरे की दीवारें नंगी हों; मुझे तो शायद सिर पर छत की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि तब में असीम विस्तार वाले तारों भरे आकाश को निहार सकता हूँ। जब मैं चमकते तारों से भरे आकाश को निहारता हूँ तो मेरे सामने इस सत्य की अशभव्यबन्धकता होती है | मैं जानता हूँ, इससे मेरा तालुक है, मुझे अपनी आत्मशज्ञता की मान्यता भी प्राप्त है | लेकिन मेरे कमरे की दीवारें नंगी नहीं होंगी; मुझे किसी भी विद्यालय की जरूरत नहीं है, क्योंकि मेरे जीवन में सच्ची कला है, हालांकि मैं कोई कलाकृतियाँ प्रस्तुत नहीं कर सकता।

हो सकता है कि मेरे कमरे की दीवारें नंगी हों; मुझे तो शायद सिर पर छत की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि तब में असीम विस्तार वाले तारों भरे आकाश को निहार सकता हूँ। जब मैं चमकते तारों से भरे आकाश को निहारता हूँ तो मेरे सामने इस सत्य की अशभव्यबन्धकता होती है | मैं जानता हूँ, इससे मेरा तालुक है, मुझे अपनी आत्मशज्ञता की मान्यता भी प्राप्त है, लेकिन मेरे कमरे की दीवारें नंगी नहीं होंगी; मुझे किसी भी विद्यालय की जरूरत नहीं है, क्योंकि मेरे जीवन में सच्ची कला है, हालांकि मैं कोई कलाकृतियाँ प्रस्तुत नहीं कर सकता।

पहले सत्य

सत्य की शोध पहली चीज है, सौंदर्य और शुभल्य उसमें अपने आप जुड़ जाएँगे। मैं समझता हूँ कि इसा मसीह सर्वोपरिक कलाकार थे, चूंकि उन्होंने सत्य के दर्शन किए थे और उसे अभिव्यक्त किया था; ऐसे ही मोहम्मद भी थे जिनकी कुरान संपूर्ण अरबी साहित्य की सबसे श्रेष्ठ कृति है – कम-से-कम विद्वानों का मत यह है | कारण यह है कि दोनों ने पहले सत्य को पाने का प्रयास किया था, इसलिए उनकी वाणी में अभिव्यक्ति का सौंदर्य सहज ही आ गया, हालांकि उन्होंने कोई कला-रचना नहीं की थी | मुझे इसी सत्य और सौंदर्य का चाह है, मैं इसी के लिए जीऊंगा और इसी के लिए मरूंगा। (यंग, 20-11-1924, पृ. 386)

करोड़ों के लिए कला

अन्य सभी बातों की तरह इसमें भी मैं करोड़ों जनता के संदर्भ में सोचता हूँ | करोड़ों लोगों को अपने में ऐसा सौंदर्य-बोध पैदा करने का प्रशिक्षण नहीं दिया जा सकता कि वे सौंदर्य में सत्य के दर्शन कर सकें | इसलिए पहले
उन्हें सत्य के दर्शन कराओ, सौदर्य के दर्शन वे बाद में कर लेंगे....इन करोड़ों लोगों के लिए जो भी उपयोगी हो सकता है, मेरी दृष्टि में वही सुंदर है | पहले उन्हें जीवन के लिए अनिवार्य वस्तुएं दो, शोभा और अलंकरण की वस्तुएं बाद में आ जाएंगी | (वही)

मैं उस कला और साहित्य का पक्ष करता हूँ जो जनता से जुड़ा है, उसके लिए जो पुरूषों और स्त्रियों के हाथों का कोमल सजीव स्पर्श चाहिए | (यंग, 20-27-1926, पृ. 196)

आखिर, कला बढ़ती पैमाने पर उत्पादन करने वाली निर्जीव विद्वृत्तचालित मशीनों के जरिए तो प्रकट की नहीं जा सकती, उसके लिए तो पुरुषों और स्त्रियों के हाथों का कोमल सजीव स्पर्श चाहिए | (यंग, 14-3-1929, पृ. 86)

आंतरराष्ट्रीय साहित्य

सच्चा कला केवल आकार पर ही नहीं बल्कि उसकी पृष्ठभूमि में जो है, उस पर भी ध्यान केंद्रित करती है | एक कला वह है जो मारती है और एक कला वह है जो जीवन देती है....सच्ची कला अपने रचनाकार की सुख-शंति, संतोष और शुभचित्त का प्रमाण होनी चाहिए | (यंग, 11-8-1921, पृ. 253)

आखिर, सच्चा सौदर्य हृदय की शुभचित्त में ही तो निहित है | (एग्रे, पृ. 228)

मैं संगीत और अन्य सभी कलाओं का प्रेमी हूँ, लेकिन मैं उनको उतना महत्व नहीं देता जबतना जीवन उसके तर पर दिया जाता है | मिसाल के तौर पर, मैं उन कार्यकलापों के महत्व को स्वीकार नहीं कर सकते जिन्हें संप्रभु के लिए तकनीकी ज्ञान की जरूरत होती है | अब जब मैं अपने संपूर्ण अनुभव के बजर पर कह सकता हूँ कि इससे ज्यादा झूठी बात और कोई नहीं हो सकती | अब जब मैं अपने ऐसे जीवन के अंतिम अवसथा में हूँ, मेरा कहना है कि जीवन की शुभचित्त सबसे ऊँची और सबसे सच्ची कला है | आवाज का परिचारक करके अच्छा संगीत उत्पन्न करने की कला बहुत-से लोग अर्जित कर सकते हैं, लेकिन शुभचित्तपूर्ण जीवन के सामंजस्य से वैसा संगीत पैदा करने की कला बिना ही लोगों में आ सकती है | (हारे, 19-2-1938, पृ. 10)

सत्य में सौदर्य

मैं सत्य में अथवा सत्य के द्वारा सौदर्य को खोजता और पाता हूँ | सत्य के सभी रूप - केवल सच्चे विचार ही नहीं बल्कि सच्ची तस्वीरें या गीत भी - अलंकरण सुंदर होते हैं | को प्राप्त है: सत्य में सौदर्य के दर्शन नहीं कर पाते, आम
आदमी उससे दूर भागता है और उसमें सौदर्य के दर्शन की क्षमता ही खो बैठता है | जब लोग सत्य में सौदर्य के दर्शन करने लगेंगे तब सच्ची कला का उदय होगा | (यंग, 13-11-1924, पृ. 377)

सच्चे कलाकार की दृष्टि में वही मुख सूंदर है जो अपने बाह्य रूप से भिन्न, आत्मा के भीतर प्रतिनिधित सत्य से आलोकित है | सत्य से भिन्न कोई सौदर्य.... नहीं है | इसके विपरीत, सत्य अपने आपको ऐसे रूपों में प्रकट कर सकता है जो बाहर से तनिक भी सूंदर न हों | कहा जाता है कि सुकरात अपने ज्ञान का सबसे सत्यनिष्ठ व्यक्ति था, लेकिन कहते हैं कि उसकी मुखाकृति ग्रीस में सबसे कुरुप थी | मेरी दृष्टि में, सुकरात सूंदर था क्योंकि उसने आजीवन सत्य के लिए संघर्ष किया, और आपको याद होगा कि सुकरात की बाह्याकृति के कारण फिदेंस को उसके अंदर के सत्य को सराहने में कोई बाधा नहीं आई, हालांकि कलाकार के नाते वह साधारणतयाओं में भी सौदर्य के दर्शन का अभ्यस्त था | (वही)

सत्य और असत्य प्रायः साथ-साथ रहते हैं, उसी तरह अच्छी और बुरी का भी सच है | कलाकार में भी अनेक बार वस्तुओं की सच्ची और झूठी धारणा का सह-असिल रहता है | सच्चे सूंदर क्रम तब जन्म लेती है | जब कलाकार सच्ची धारणा से प्रेरित होता है | यशद इसके उदाहरण जीवन में हैं और उनके क्षेत्र में भी सुंदर ही हैं | (दूहरी)

ये सुंदर दृश्य ('सूर्यस्त अथवा तारों की सृश्यता') सत्यमय हैं, क्योंकि इन्हें देखकर मेरा ध्यान इनके सर्जक की ओर आकर्षित होता है | इनकी सृश्यता के केंद्र में सत्य है, इसीलिए तो ये सूंदर हैं | जब मैं सूर्यस्त के अदभुत दृश्य अथवा चंद्रमा के सौदर्य की सराहना करता हूँ तो मेरी आत्मा विकसित होकर इनके सर्जक की आराधना में ललित हो जाती है | मेरी इन सभी दृश्यों में ईश्वर और उनकी अनुकंपाओं के दर्शन करता हूँ | लेकिन ये सूर्यस्त और सूर्योदय भी यदि मुझे ईश्वर के स्मरण में सहायक न हों तो मात्र अवरोध ही सिद्ध होंगे | आत्मा की उद्धारन में अवरोध पैदा करने वाली हर चीज़ एक भ्रम है और पाश है; देह भी ऐसी ही चीज़ है जो प्रायः मुक्ति के पथ में अवरोध पैदा करती है | (दूहरी, 13-11-1924, पृ. 378)

तुम सब्जियों के रंग में सूंदरता क्यों नहीं देख पाते ? और निरंभ आकाश भी तो सूंदर है | लेकिन नहीं, तुम तो इंद्रधनुष के रंगों से आकर्षित होते हो, जो केवल एक दृष्टीभ्रम है | हमें यह मानने की शक्षा दी गई है कि जो सूंदर है, उसका उपयोगी होना आवश्यक नहीं है और जो उपयोगी है, वह सूंदर नहीं हो सकता | मैं यह दिखाना चाहता हूँ कि जो उपयोगी है, वह सूंदर भी हो सकता है | (दूहरी, 7-4-1946, पृ. 67)
3. अभय

12. अभय का दिव्य संदेश

अभय आध्यात्मिकता की पहली शर्त है | कायर कभी नैतिक नहीं हो सकता | (यंग, 13-10-1921, पृ. 323)

जहां भय है, वहां धर्म नहीं हो सकता | (यंग, 2-9-1926, पृ. 308)

गीता का प्रत्येक पाठक जानता है कि गीता के सोलहवें अध्याय में जो दैवी गुण गिनाए गए हैं, उनमें अभय पहले नंबर पर है ऐसा केवल छंद की आवश्यकता को देखते हुए किया गया है या अभय को जान-जानकर सर्वापर स्थान दिया गया है, यह मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता | लेकिन मेरी राय में, अभय को जो पहला स्थान दिया गया है, भले ही यह संयोगवश हो, वह सर्वत्र उचित है जहां उदात गुणों के विकास के लिए अभय अनिवार्य शर्त है | अभय के बिना मनुष्य सत्य की खोज अथवा प्रेम की कदर कैसे कर सकता है ? जैसा कि प्रीतम ने कहा है, हरर (ईश्वर) तक पहुंचने का माग वीरों का है, कायरों का नहीं है | यहां हरर का अभिप्राय सत्य से है, और वीरों का अभिप्राय उनसे नहीं जिनके पास तलवार, राइफल या अन्य भौतिक शस्त्र हैं, जिन्हें केवल कायर पसंद करते हैं, बल्कि उनसे है जो अभय से सजित है | (यंग, 11-9-1930, पृ. 1-2)

अभय का अर्थ है सभी बाह्य भयों से मुक्त जैसे कि बीमारी, शारीरिक क्षति या मृत्यु का भय, स्वामित्व-हरण का भय, प्रियजनों से बिल्कुल नहीं हानि अथवा अपमान का भय, आदि-आदि | (वही, पृ. 2)

अभय की प्राप्ति

पूरी तरह निर्भरक तो वही हो सकता है जिसने सर्वशक्तिमान को प्राप्त कर लिया हो, क्योंकि वही भौतिक या सर्वथा मुक्त हो जाने की अवस्था है लेकिन मनुष्य दृढ़ और सत्य प्रयास से तथा अधिकाधिक आत्मविश्वास के बल पर उस मार्ग पर प्रगति अवश्य करता रह सकता है....

जहां तक आंतरिक शत्रुओं का प्रश्न है, हमें सदैव उनसे भय मानना चाहिए | कामवासना, क्रोध आदि से भय खाना ठीक ही है | आंतरिक शत्रुओं पर विजय पाते ही बाह्य भय अपने आप समाप्त हो जाते हैं | सभी प्रकार के भयों का केंद्र हमारी देह है, और एक बार देह से आसक्ति समाप्त हो जाए तो फिर हमें कोई भय सताना नहीं चाहिए | इस प्रकार, हम पाते हैं कि सभी प्रकार के भय हमारी कल्पना की निरंतर सुषग दृष्टि हैं जैसे ही हम अपने धन, परिवार और शरीर के प्रति आसक्ति से मुक्ति पा लेते हैं, हमारे हृदयों में भय के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता | तेन त्यक्तेन भुंजीथा' (सांसारिक वस्तुओं का त्यक्त करते हुए उन्हें भोगो) बड़ा उदात धमादिश है | धन, परिवार
और शरीर यथावत रहें, हमें केवल उनके प्रति अपनी मनोवृत्ति को बदलने की आवश्यकता है | ये हमारे नहीं, 
ईश्वर के हैं | तब फिर भय कैसा ?

इसीलिए उपनिषद हमें आदेश देता है, “वस्तुओं का भोग करते हुए भी उनके प्रति आसक्ति का त्याग कर दो |”
तात्पय यह है कि हम स्वयं को उनका स्वामी नहीं, अपितु न्यासी मानना चाहिए | जिस ईश्वर की ओर से हम इनके 
धारक बने हुए हैं, वही इनकी रक्षा के लिए हमें आत्म्रक्षा और अपेक्षित शत्रु उपलब्ध कराएगा |

इस प्रकार, जब हम स्वामी न रहकर अपने पांव तले की धूलि से भी अधिक साधारण सेवक की भूमिका में उतर 
आएंगे तो सभी भय धुंध की तरह छट जाएंगे, तब हमें अनिवर्चनीय शांति की प्राप्ति हो जाएगी और हम 
सत्यनारायण (सत्य का ईश्वर) का साक्षात कर सकेंगे | (वही)

ईश्वर से भय

हम ईश्वर से डरें तो मनुष्य का डर छूट जाएगा | (व्यूराम, पृ. 130)

हमारे चतुर्दिक इतना अद्भुतक मानिस और पाखंड व्याप्त है कि हम सही काम करने से भी डरते हैं | लेकिन आदमी 
भय के वश में हो जाए तो सत्य का भी दमन करना पड़ेगा | स्वर्णिम नियम यह है कि जो काम तुम्हें ठीक लगे.
निर्भय होकर करो | (हरर, 2-6-1946, पृ. 160)

अभ्य का अर्थ है या आक्रामक व्यवहार नहीं है | वह तो स्वयं भय का प्रतीक है | अभ्य की पहली शांति है जो 
की शांति | इसके लिए ईश्वर में जीवित विश्वास होना आवश्यक है | (हरर, 3-11-1946, पृ. 388)

भय को मैं बिलकुल पसंद नहीं करता | एक आदमी दूसरे आदमी से भयभीत क्यों हो ? मनुष्य को केवल ईश्वर से 
भय खाना चाहिए, उसके बाद वह सब भयों से मुक्त हो जाएगा | (हरर, 5-1-1947, पृ. 477)

आत्मा की वैरता

प्रत्येक योग्यता को आधरक्षा की कला सिखाई जानी चाहिए | इसमें शरीर को प्रतिकार के लिए प्रशिक्षित करने से 
ज्ञान मानसिक स्थिति को द्रढ़ करने की जरूरत है | अभ्य के तरीके से ईश्वर में बेबसी की 
भावना पैदा करता रहा है | वैरता शरीर का नहीं, आत्मा का गुण है | मैने हृदपूर्ण शरीर वाले लोग कायर देखे हैं
और क्षणितम काया में अद्भुत सहाय के दर्शन किए हैं | हमें स्वार्थी, स्वार्थी, दुनिया से दुर्भाद्वा
के भी खेतरों का सामना करने और वैरता का परिचय देने की शिक्षा दी जानी चाहिए | (यंग, 20-10-1921, पृ. 335)

हम एक सांत्वप्रकाश की देहरी पर खड़े हैं – यह सांत्वप्रकाश प्राप्तकाल का है या संध्या का है, हम नहीं जानते |
एक बार रात होती है और दूसरे के बाद सूर्योदय | यदि हम इस सांत्वप्रकाश के पक्षतु दुर्भावी रात नहीं 
बल्कि उज्ज्वल दिन देखना चाहते हैं तो हमें से प्रत्येक के लिए उचित है.... कि वह समय के सत्य को पहचाने,
सभी प्रतिकूलताओं का सामना करके उसकी हिमायत करें और निर्भर होकर किसी भी कीमत पर, उसका प्रचार तथा अनुगमन करें | (स्पीरा, पृ. 303)

हमने आजादी की ओर बढ़ने के लिए सत्य और अहिंसा का प्राणी मार्ग चुना है और हमें ईश्वर के इस वचन से अपने में आशा और विश्वास सजाना चाहिए कि जो इस सीधे और संकरे रास्ते पर चलते हैं, उन्हें कभी असफलता का मुंह नहीं देखना पड़ता | (यंग, 2-4-1931, पृ. 54)

आत्मदमन और भीरुता, जो लगभग कायरता ही है, के इस देश में.... हमें बहुत अधिक वीरता और बहुत अधिक आत्म-बलिदान के दर्शन नहीं हो सकते.... मे बिनम, सीम्या और अहिंसक की श्रेष्ठता वीरता.... की कामना करता हूँ; यह वह वीरता है जो एक भी व्यक्ति को चोट पहुँचाए अथवा चोट पहुँचाने का विचार मन में लाए बगैर सूली पर छोड़ जाएगी | (कही, पृ. 58)

बड़ी-बड़ी लौटिक शक्ति के सम्मुख घुटने टेकने से साफ इंकार करने और मन में कटुता लाए बिना इस बात पर पूर्ण विश्वास रखने के केवल आत्मा अमर है, शेष कुछ भी नहीं, से बढ़कर और कोई वीरता नहीं है | (हरर, 15-10-1938, पृ. 291)

हमारे सामने दो विकल्प हैं | हम एक बहुत बड़ी सैनिक शक्ति बन सकते हैं या, मेरे मार्ग पर चलकर, एक महान अहिंसक और अजेय शक्ति बन सकते हैं | दोनों ही विकल्पों की पहली शर्त यह है कि हम सभी भयों से अपने को मुक्त करें | (हरर, 26-10-1947, पृ. 382)
4. आस्था

13. आस्था का दिव्य संदेश

आस्था ही है जो हमें तूफानी समुद्रों के पार ले जाती है, आस्था पर्वतों को हिला सकती है, समुद्र को लांघ सकती है | यह आस्था और कुछ नहीं, अपने अंतिकारण में विराजमान ईश्वर का जीवित और सुस्पष्ट बोध है | जिसे यह आस्था मिल गई, उसे फिर कुछ नहीं चाहिए | वह शरीर से रुग्ण होगा पर आत्मा से स्वस्थ होगा, भौतिक रूप से निर्धन होगा पर आध्यात्मिक संपदा से मालामाल होगा | (यंग, 24-9-1925, पृ. 331)

आस्था के बिना यह संसार एक मिनट नहीं टिक सकता | सच्ची आस्था उन विश्वसनीयों के तर्कसम्मत अनुभव को स्वीकार कर लेना है जिनके बारे में यह माना जाता है कि उन्होंने प्रार्थना और तप से शुद्ध किया गया जीवन जिया था | अतः सुदूर युगों के पैगंबरों और हिंदू अवतारों के प्रति आस्था रखना व्यथक का अंधश्वास नहीं है बल्कि हमारी अंग्रेजी आध्यात्मिक आवश्यकता की तुष्टि है | (यंग, 14-4-1927, पृ. 120)

आस्था कोई कोमल पुष्प नहीं है जो जरा-जरा झटके से झड़ जाए | आस्था तो हिंदू माता के समान है जो संभवतः अपरिवर्तित है | कोई तूम्हारे स्वतंत्र हिंदू पर्वत को जड़ से नहीं उखाड़ सकता.... मैं चाहता हूँ कि तुम्हें से प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर और धर्म के ऐसी ही आस्था पैदा करे | (हरि, 26-1-1934, पृ. 8)

तर्क की सीमाएँ

अनुभव ने मुझे इतना झुका दिया है कि मैं तर्क की निष्ठित सीमाओं की पहचान सकूं | जिस प्रकार गलत जगह पर रखने से पदार्थ मिट्टी हो जाता है उसी प्रकार तर्क का दुरुपयोग उसे पागलपन में बदल देता है | बुद्धवादी प्रशंसनीय व्यक्ति होते हैं लेकिन बुद्धवाद जब सर्वशक्तिमान होने का दावा करने लगता है तो वह एक विकराल दैत्य का रूप प्राप्त कर लेता है | तर्क को सर्वशक्तिमान मान लेना बैसी ही पतिया मूर्तिपूजा है जैसी कि वृक्ष और पत्थर को ही ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना | (यंग, 14-10-1926, पृ. 359)

मैं तर्कबुद्धि को दबाने की बात नहीं कह रहा बल्कि अपने अंदर की उस चीज़ को मान्यता देने की बात कह रहा हूँ जो बैसी ही तर्क का पवित्र बनाती है | (वही)

मेरे मन में यह बात बिलकुल साफ है कि जहां शुद्ध और अदृश्य तर्क की अभ्यर्थना ढीक है, वहीं किसी सत्ताधीश की अभ्यर्थना अवश्य नहीं है, चाहे वह सत्ताधीश कितना ही महान हो | (यंग, 26-9-1929, पृ. 316)

कुछ विषय ऐसे हैं जिनमें तर्कबुद्धि हमारा दूर तक साथ नहीं दे पाती और हमें आस्था का सहारा लेकर चीज़ों को स्वीकार करना पड़ता है | ऐसी स्थितियों में आस्था तर्क का खंडन नहीं करती बल्कि उसे लांघ जाती है | आस्था
छठी इंद्रिय के समान है जो उन मामलों में काम आती है जो तर्क की परिधि से बाहर है। (हरि, 6-3-1937, पृ. 26)

धर्म का अर्थ
मैं समझा हूं कि धर्म से मेरा आशय क्या है | धर्म से मेरा आशय हिंदू धर्म नहीं है, यद्यपि मैं इसे सभी धर्मों से अधिक आदर देता हूं, लेकिन वह धर्म है जो हिंदूत्व से भी परे है, जो मनुष्य की प्रकृति को ही बदल देता है, जो हमें अपने भीतर के सत्य के साथ तदाकार कर देता है और निरंतर हमारा पवित्रीकरण करता रहता है | यह मानव प्रकृति का स्थायी तत्त्व है जो पूर्ण अभिव्यक्ति पाने के लिए कोई भी स्थान करने को तत्पर रहता है और जो आत्मसिद्धि की प्राप्ति तथा अपने सृष्टि के बोध और सृष्टि तथा अपने बीच सच्ची अनुरूपता की पहचान होने तक आत्मा की बेचैन रखता है | (यंग, 12-5-1920, पृ. 2)

धर्म से मेरा आशय औपचारिक धर्म या प्रथागत धर्म से नहीं है बल्कि उस धर्म से है जो सभी धर्मों का मूल है, और जो हमारे सृष्टि से हमारा साक्षात करता है | (एमके, पृ. 7)

मेरा धर्म
मेरे धर्म की कोई भौगोलिक सीमाएं नहीं हैं | यदि मेरी उसमें जीवित आशा है तो वह मेरे भारत-प्रेम से भी आगे बढ़ जाएगा | (यंग, 11-8-1920, पृ. 4)

मेरा धर्म काराग्रह का धर्म नहीं है | इसमें ईश्वर के दीन-से-दीन प्राणियों के लिए स्थान है | लेकिन यह उद्बन्धता, और जाल, धर्म तथा रंग के गर्व को सहन नहीं करता | (यंग, 1-6-1921, पृ. 171)

मेरा यह कथन निःसंदेह एक अर्थ में सही है कि मैं अपने धर्म को अपने देश से ज्यादा प्यार करता हूं और इसलिए मैं हिंदू पहले हूं और राष्ट्रभक्त बाद में। इससे में अच्छे-से-अच्छे राष्ट्रभक्त से कम राष्ट्रभक्त नहीं बन जाता | मेरा आशय केवल यह है कि मेरे देश के हित और मेरे धर्म के हित एक ही हैं।

इसी प्रकार, जब मैं कहता हूं कि मैं अपनी मुक्ति को सवाधिक, यहां तक कि भारत की मुक्ति से भी अधिक, महत्वदेह देता हूं तो इसका आशय यह नहीं होता कि मेरी निजी मुक्ति के लिए भारत की राजनीतिक अथवा किसी अन्य प्रकार की मुक्ति की बलि देनी होगी | इसका अनिवार्य आशय यह होता है कि दोनों सहगामी हैं। (यंग, 23-2-1922, पृ. 123)

जीवन का जब सिद्धांत-सूत्र मैंने स्वीकार किया है वह यह है कि किसी आदमी द्वारा, वह चाहे जितना बड़ा हो, किया गया कोई काम तब तक नहीं फलेगा-फूलेगा जब तक कि वह आदमी वृत्ति से धार्मिक न हो | (स्पीरा, पृ. 377-78)
मुझे अपने काम के और मानवता के प्रति भरपूर आस्था है | भारतीय मानवता किसी से हीन नहीं है, संभवत: श्रेष्ठ ही है | वसुधारा: मेरे काम के लिए मानव प्रकृति में आस्था होना अनिवार्य है | यद्यपि मार्ग अधिकार मया दिखाई देता है पर यदि मुझे अंधकार के मार्गदर्शन में आस्था है, और उसके अनुकूल मार्गदर्शन के बिना अपनी विश्वास का स्वीकार करने की विनम्रता है, तो वह मेरे मार्ग को आलोचित करेगा और मुझे रास्ता दिखाएगा | (यंग, 27-11-1924, पृ. 391)

कोई इसे मात्र कात्यायनिक कह सकता है, पर मेरा पक्का नीतिक तत्त्व है कि यदि मनुष्य कोई काम ईश्वर के नाम पर और उसमें भी आस्था रखते हुए करता है तो भले ही वह उसके जीवन के अंतिम दिनों में किया गया हो, वह कभी व्यर्थ नहीं जाता | मैं यह बात अनुभवपूर्वक कह सकता हूँ कि मैंने जो काम हाथ में लिया है, वह मेरे नहीं, ईश्वर का है | (हरर, 1-3-1935, पृ. 24)

यही धर्म है जिसका आदेश पवित्र उपदेश न होलियों में भी मिलता है, जिसका अनुगमन मनीषगण ने किया है, जिसकी ध्वनि विद्वानों के लिए है, और जो हृदय को रुचिकर है: तीन शातिर हैं जो पहले पूरी होनी चाहिए – चाहे उनके बाद अमल में आती है | व्यक्ति को अज्ञानी अथवा दुष्क्र द्वारा दुर्भाग्य की उपदेश का अनुसरण करने का अधिकार नहीं है, भले ही वे उपदेश उसे अच्छे लगते हों | जो ब्रजमोहन अनुपकार, अ-द्वेष और त्याग की तीन शातिर का कठोरता से पालन हो वही नियम अर्थात धर्म के निर्देशन का अधिकारी है | (हरर, 17-11-1946, पृ. 397)

भौतिक बल की व्यर्थता

मुझे पक्का विश्वास है कि पाशविक बल के सहारे कोई धर्म जीवित नहीं रखा जा सकता | बल्कि जो तलवार का सहारा लेते हैं, तलवार उन्हें ही मार देती है | (हरर, 9-3-1934, पृ. 29)

राष्ट्रों के तरह धर्म भी तुला पर रखे हैं | जो धर्म और जो राष्ट्र अन्याय, असत्य अथवा हिंसा का सहारा लेकर चलेगा, उसका नामोनिशान दुनिया से मिट जाएगा | (हरर, 12-9-1936, पृ. 247)

नैतिकता

मेरे लिए नैतिक में आध्यात्मिक समावेश हैं...सुधारक के रूप में, मैंने हर चीज़ को नैतिक दृष्टि से देखा है | चाहे मैं किसी राजनीतिक समस्या से जूझा रहा हूँ अथवा सामाजिक या आर्थिक समस्या से, उसका नैतिक पक्ष सदेव प्रबल होकर सामने आ जाता है और मेरे संपूर्ण दृष्टिकोण पर छा जाता है | (हरर, 29-3-1935, पृ. 51)

सभी युगों के लिए वैध, निरपेक्ष नैतिकता जैसी कोई चीज़ नहीं है | लेकिन एक सापेक्ष नैतिकता जरूर है जो हम जैसे अपूर्ण मानवों के लिए निरपेक्ष जैसी ही है | तदनुसार, दवा के तीर पर, दवा की खुराक के बराबर माना में, और डॉक्टर के निर्देशानुसार किए जाने वाले मद्यसेवन को छोड़कर मद्य का पान निरपेक्ष रूप से नैतिक है |
इसी प्रकार, अपनी पत्नी के अलावा किसी अन्य स्त्री को काम का दर्शा से देखना भी बिलकुल गलत है। ये दोनों ही बातें शुद्ध तर्क से सिद्ध की जा चुकी हैं। इनके जवाबी तर्क के में हमेशा दिये गए हैं। पर ये तो ईश्वर, जो ब्रह्मांड का स्वामी है, के विरुद्ध भी दिये गए हैं। तक्तीत आश्चर्य ही पुथों से हमारा अवलंब रहा है। ... मेरी आश्चर्य ने ही मुझे कठिन परिस्थितियों में फंसने से बचाया है और अब भी बच रहा है। उसने मुझे कभी घोटा नहीं दिया है। इसने कभी किसी को घोटा नहीं दिया है। ([हरी, 23-12-1939, पृ. 387])

धर्म का वैविध्य

सब पूर्ण जाते तो जितने स्वतंत्र हैं, उन्हें ही धर्म है। ([हिंस्र, पृ. 49])

धर्म एक ही बिंदु पर पहुंचने वाले भिन्न-भिन्न मार्ग हैं। यदि गत्वय्य एक ही है तो इससे क्या फर्क पड़ता है यदि हम वहाँ तक पहुंचने के लिए अलग-अलग मार्ग पकड़ें? ([हरी, पृ. 50])

मैं इस धारणा से सहमत नहीं हूं। किसी भी अन्य दृष्टि से देखना भी शब्दल लगत है। ये दोनों ही बातें जो से शक्त की चुकी हैं। इनके जवाबी तक हम शदए गए हैं। पर ये तो ईश्वर, जो ब्रह्मांड का स्वामी है, के शवरुद्ध भी शदए गए हैं। तक मेरी आस्था ही युगों से हमारा अवलंब रही। मेरी आस्था ने ही मुझे कब्ज नहीं दिया है। उसने कभी किसी को घोटा नहीं दिया। ([हरी, 23-12-1939, पृ. 387])

बुद्धियादी एकता

सभी धर्मों की आत्मा एक है, पर उनके रूप अलग हैं। ये रूप अनात तक तक रहेंगे। बुद्धिमान लोग बाहरी सतह की चिंता करते हुए (धर्मों के) विविध रूपों के भीतर एक ही आत्मा को पाएंगे। ([यंग, 31-7-1924, पृ. 254])

मैं समझता हूं कि बिविध के सभी महान धर्म लगभग सम्मच हैं। 'लगभग' इसलिए कहता हूं कि मेरा विश्वास है कि मानव चूँकि अपूर्ण है इसलिए वह जिस चीज़ को भी हाथ लगाएगा, वह अपूर्ण हो जाएगी। पूर्णता केवल ईश्वर का गुण है, और यह अवर्णनीय है, अनुपन्य है। मैं यह जरूर समझता हूं कि प्रत्येक मनुष्य के लिए ईश्वर के समान पूर्ण बनना संभव है। हम सबके लिए उस पूर्णता की कामना करना आवश्यक है, लेकिन जब उस स्थिति की प्राप्ति होती है तो वह अवर्णनीय और अपरविभाज्य हो जाती है। इसलिए मैं पूरी विनिमय के साथ यह स्वीकार करता हूं कि वेद, कुरान और बाइबिल भी ईश्वर की अपूर्ण वाणियां हैं, और अनेक मनोवेगों के शिकार हम अपूर्ण मानवों के लिए इन ईश्वरीय वाणियों को भी पूरी तरह समझना असंभव है। ([यंग, 22-9-1927, पृ. 319])

मैं चाहता हूं कि विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोग केवल भारत ही नहीं बल्कि दुनिया भर के – एक-दूसरे के संपर्क में आकर बेहतर मनुष्य बनें। यदि ऐसा हो सके तो दुनिया वर्तमान की अपेक्षा कभी बेहतर रहने की जगह हो जाएगी। मैं अधिकतम सहिष्णुता का हिमायती हूं और उसी के लिए प्रयासरत हूं। मैं लोगों से कहता हूं कि वे प्रत्येक धर्म को स्वयं धर्मगृहों की दृष्टि से परखें। मैं ऐसी आशा नहीं करता कि मेरे सपनों के भारत में एक ही धर्म
पूर्णत: हिंदू या ईसाई या इस्लाम – का विकास होगा | मैं तो चाहता हूं कि भारत पूर्णत: सहिष्णु बने जिसमें उसके सभी धर्म साथ-साथ चलें | (यंग, 22-12-1927, पृ. 425)

भक्तिमय अनुसंधान और अध्ययन तथा अधिकाधिक व्यक्तियों से चर्चा के उपरांत, मैं बहुत पहले ही इस निष्कर्ष पर पहुंच गया था कि सभी धर्म सब्जों हैं और सभी में कुछ-कुछ त्रुटियां भी हैं, और स्वधर्म पर आरूढ़ रहते हुए मुख्य अन्य धर्मों से भी हिंदू धर्म के समान ही प्रेम करना चाहिए | इसी से यह निष्कर्ष निकलता है कि हमें सबसे अपने बंधु-बांधवों के समान प्रेम करना चाहिए और उनके बीच कोई फर्क नहीं करना चाहिए | (यंग, 19-1-1928, पृ. 22)

एक ईश्वर में विश्वास सभी धर्मों की आधारशिला है | लेकिन मैं ऐसे समय की कल्पना नहीं कर पाता जब दुनिया में व्यवहार: एक ही धर्म रह जाएगा | सिद्धांत: चूंकि ईश्वर एक है, इसलिए धर्म भी एक ही होना चाहिए | लेकिन व्यवहार में, मुख्य आदमी ऐसे नहीं मिले जिनकी ईश्वर के विषय में धारणा बिलकुल एकसमान हो | इसलिए भिन्न-भिन्न स्वभावों और जलवायु संबंधी पररब्लस्थियों के अनुसार धर्म भी शायद हमेशा भिन्न-भिन्न ही रहेंगे | (हरर, 2-2-1934, पृ. 8)

मैं विश्व के सभी महान धर्मों के मौलिक सत्य में विश्वास करता हूं | मैं मानता हूं कि वे सभी ईश्वर-प्रदर्शन हैं और यह भी मानता हूं कि जिन लोगों के लिए उनका प्रकट हुआ, उनके लिए वह आवश्यक था | मैं यह भी विश्वास करता हूं कि यदि हम सभी लोग विभिन्न धर्मों की पवित्र पुस्तकों को उन धर्मों के अनुसार भाषित एकसमान हों | (हरर, 16-2-1934, पृ. 5-6)

धर्म लोगों को एक-दूसरे से पृथक करने के लिए नहीं हैं, वे एक-दूसरे को जोड़ने के लिए हैं | (हरर, 8-6-1940, पृ. 157)

धर्मग्रंथ

मेरे अनुसार वेद दिव्य और अप्रोहश्य हैं | “शब्द तो मारता है |” अर्थ-भावना प्रकाश देती है | और वेदों की भावना है पवित्रता, सत्य, निष्कपत्ता, शुचिता, विनम्रता, सरलता, क्षमा, दिव्यता और वे सभी गुण जिनसे स्त्री-पुरुष उदात्त और वीर बनते हैं | (यंग, 19-1-1921, पृ. 22)

मैं यह नहीं मानता कि केवल वेद ही दिव्य हैं | मेरी मान्यता है कि बाइबिल, कुरान और जेदअवेस्ता भी वेदों के समान ईश्वरीय प्रेरणा से प्रकट हुए हैं | हिंदू धर्मग्रंथों में मेरे विश्वास का तात्पर्य यह नहीं है कि मैं उनके एक-एक शब्द और श्लोक को देवी प्रेरणा से उद्भूत मानता हूं.... मैं ऐसी किसी भी व्याख्या को मानने से इंकार करता हूं जो तर्क या नैतिक दृष्टि के प्रतिकूल हो, भले ही यह व्याख्या कितनी ही विद्वत्पूर्ण क्यों न हो | (यंग, 6-10-1921, पृ. 317)
मे अक्षरचारी नहीं हूँ | इसलिए मैं दुनिया के विभिन्न धर्मग्रंथों की भावना को समझने का प्रयास करता हूँ | धर्मग्रंथों की व्याख्या करते समय मैं स्वयं उन्हीं के द्वारा निर्धारित सत्य और अहिंसा की कसोटी को लगू करता हूँ | इस कसोटी पर जो खरे नहीं उतरते, उन्हें अस्वीकार कर देता हूँ और जो खरे उतरते हैं, उनको अपना लेता हूँ | (यंग, 27-8-1925, पृ. 293)

मुझे 'सरमन ऑन द माउंट' तथा 'भगवदगीता' में कोई अंतर दिखाई नहीं दिया | 'सरमन' में जो बात चित्रोपम भाषा में कही गई है, 'भगवदगीता' में उसे वैज्ञानिक सूत्र का रूप दे दिया गया है | सामान्य अर्थ में उसे वैज्ञानिक पुस्तक न भी कह सके तो भी इसने प्रेम के नियम – जिसे मैं समर्पण का नियम कहना चाहूँगा – की प्रस्तापना बड़े वैज्ञानिक ढंग से की है | सरमन ऑन द माउंट' में यही नियम अद्वृत भाषा में दिया गया है | 'न्यू टेस्टामेंट' पढ़कर मुझे सुख और असीम आनंद का अनुभव हुआ, क्योंकि इसे मैंने 'ोल्ड टेस्टामेंट' के कुछ अंशों से उत्तर विकर्षण के बाद पढ़ा था | आज, मान लीजिए कि मुझसे कोई 'गीता' छीन ले और मैं उसके सभी श्लोक भूल जाऊँ लेकिन मेरे पास 'सरमन' की प्रति हो, तो मुझे उससे वही आनंद मिलेगा जो मैं 'गीता' से पाता हूँ | (यंग, 22-12-1927, पृ. 426)

मेरे अंदर एक बात है कि मैं चीज़ों के घिनी ने पक्ष की अपेक्षा उनके उच्चव दक्ष को देखना पसंद करता हूँ, इसलिए मैं किसी धर्म के किसी महान ग्रंथ से सुख एवं प्रेरणा प्राप्त कर सकता हूँ | मैं भले ही 'गीता' या 'न्यू टेस्टामेंट' का एक भी पद्य न सुना पाऊँ, कोई हिंदू बालक या ईसाई बालक संभवत: उन्हें ज्ञान अच्छी तरह सुना सके, लेकिन मैंने इन दोनों पुस्तकों की भावना को जिस प्रकार आलासक करते हैं, उससे मुझे वे चुतर बचे वैचित्र नहीं कर सकते | (वही)

इसलिए, व्यक्ति का अनुभव ही अंततः उसका मार्गदर्शन है | लिखित शब्द निसंदेह सहायक तो होता है, लेकिन उसकी भी व्याख्या करनी पड़ती है, और जब विभिन्न व्याख्याओं में विरोध हो तो अंतिम निर्णय शोधकर्ता को स्वयं करना चाहिए | (हरि, 22-12-1933, पृ. 3)

मैं मानता हूँ कि मेरे अंदर कोई अंधविश्वास नहीं है | स्त्रव केवल इसलिए सत्य नहीं है कि वह प्राप्तन है | न यह जरूरी है कि उसे केवल प्राप्तन होने के कारण ही संदेह की दृष्टि से देखा जाए | जीवन की कुछ बुनियाद बातें हैं जिन्हें सिर्फ इसलिए नहीं छोड़ा जा सकता कि उन्हें जीवन में लागू करना कठिन है | (हरि, 14-3-1936, पृ. 36)

**धार्मिक शिक्षा**

यदि भारत को अपना आध्यात्मिक दिवाला नहीं निकालता है तो उसकी युवा पीढ़ी को धार्मिक शिक्षा देना भी उत्तम ही आवश्यक माना जाना चाहिए जितना कि लौकिक शिक्षा देना | यह सही है कि धार्मिक पुस्तकों का ज्ञान और धर्म का ज्ञान एक-दूसरे के पयाम नहीं हैं | लेकिन यदि हम अपने लड़के-लड़कियों को धर्म न दे सकें तो
श्रेष्ठता में उसके बाद की वस्तु देकर संतोष मान लेना चाहिए | और, स्कूलों में यह शिक्षा मिले या न मिले, बड़े बच्चों को दूसरे कामों की तरह धर्म के मामले में भी स्वावलंबिता की कला विकसित करनी चाहिए | जिस तरह उनके बाद-विवाद तथा अब, कताई के क्लब हैं उसी तरह उन्हें धार्मिक शिक्षा की कक्षा भी स्वयं चलानी चाहिए |

(यंग, 25-8-1927, पृ. 272)

मैं नहीं मानता कि धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का काम है – वह इस दायित्व का निर्वाह कर भी नहीं पाएगा | मेरा मानना है कि धार्मिक शिक्षा देना केवल धार्मिक संगठनों का काम है | धर्म और नीतिशास्त्र को मिलाए मत | मैं समझता हूं कि आधारभूत नीतिशास्त्र की शिक्षा देने का दायित्व निस्संदेह राज्य का है | धर्म से यहां मेरा आशय आधारभूत नीतिशास्त्र भर से नहीं है बल्कि संप्रदायिगत धर्म से है | राज्य-सहायताप्राप्त धर्म और राजकीय चर्च हमें काफी नुकसान पहुंचा चुके हैं | जो समाज या वर्ग अपने धर्म की रक्षा के लिए राजकीय सहायता पर अखंड: या पूर्णता: आश्रित है, वह इस योग्य नहीं है कि उसके पास कोई उल्लेखनीय धर्म शोष रहे, बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि उसका अपना कोई उल्लेखनीय धर्म है कि नहीं | (हरर, 23-3-1947, पृ. 76)

धार्मिक शिक्षा की पाठ्यपत्रों में अपने धर्म के अलावा अन्य धर्मों के सिद्धांतों का अध्ययन समाविष्ट होना चाहिए | इसके लिए विद्यार्थियों को आदर और उदार सहिष्णुता की भावना के साथ विश्व के विभिन्न महान धर्म के सिद्धांतों को समझने और उन्हें सराहने का अभ्यास डालने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए | (यंग, 6-12-1928, पृ. 406)
14. परमात्मा का आशय

नियम-निर्माणा और नियम

ईश्वर को आप किसी अन्य नाम से भी पुकार सकते हैं, बशर्ते कि उस नाम का अर्थ हो, जीवन का जीवंत नियम –

दूसरे शब्दों में, नियम और नियम-निर्माणा एक साथ|(हरि, 14-4-1946, पृ. 80)

ईश्वर स्वयं नियम भी है और नियम-निर्माणा भी। इसलिए इस बात का प्रश्न ही नहीं उठता कि किसी ने ईश्वर की सृष्टि की हो, मनुष्य जैसे अकिंचन प्राणी की तो बिसात ही क्या है? मनुष्य बाधा का निर्माण कर सकता है, कितु नदी का नहीं। वह कुर्सी बना सकता है, पर लकड़ी नहीं बना सकता। हां, वह अपने मन में ईश्वर की कल्पना कई रूपों में कर सकता है। लेकिन मनुष्य यदि नदी या लकड़ी तक नहीं बना सकता तो ईश्वर की सृष्टि भला कैसे कर सकता है? इसलिए विश्वूद सत्य यह है कि ईश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की है।

इसका विपर्यय केवल भ्रम है| फिर भी, कोई चाहे तो कह सकता है कि ईश्वर न करता है, न कारण है। ये सब, इनमें से प्रत्येक, उसके अभिध्य है| (वही)

ईश्वर साकार नहीं मैं ईश्वर को साकार नहीं मानता। मेरी दृष्टि में सत्य ही ईश्वर है, और ईश्वरीय नियम तथा ईश्वर कोई वैसी अलग-अलग चीज़ें नहीं हैं। जैसे कि कोई लौकिक राजा और उसका कानून होते हैं। ईश्वर एक विचार है, स्वयं नियम है।

इसलिए इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती कि ईश्वर स्वयं नियम की तोड़ेगा। इसलिए ऐसा नहीं है कि वह हमारे कर्म का नियमन करने के लिए बिसात अलग हो जाता हो। जब हम यह कहते हैं कि वह हमारे कर्म का नियमन करता है, तो यह केवल मनुष्यों की भाषा का प्रयोग कर रहे होते हैं। और ईश्वर को मयाकशदत कर देते हैं।

अन्यथा ईश्वर और उसका नियम सर्वव्यापी हैं और सबके नियंत्रण हैं।

इसलिए मैं नहीं समझता कि वह हमारी हर प्रार्थना को ब्यरिवर रूप से करता है, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि वह हमारे कर्म का नियंत्रण है।...

हालांकि मैं जानता हूँ कि मेरी आजादी एक यात्री से भी थोड़ी है, पर मैं उसकी कल्पना करता हूँ, क्योंकि मैं गीता की इस मुख्य शिक्षा को अच्छी तरह आलोचना कर दिया है कि मनुष्य इस रूप में अपने भाषा का विधायक बन जाता है कि उसे विकल्पों में से चुनाव करने की आजादी है।

इस आजादी का वह जैसे चाहे, प्रयोग करे| लेकिन परिणाम पर उसका वश नहीं है।

मेरे उसके लक्ष्य में यह विचार आया कि परिणाम पर उसका अधिकार है, उसे निराशा का मुंह देखना पड़ता है।| (हरि, 23-3-1940, पृ. 55)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जानी चाहिए | ईश्वर हमारी तरह देखभाल नहीं है | वह विश्व का सबसे बड़ा जीवंत बल अथवा नियम है | इसलिए वह सन्नद्ध के साथ नहीं करता, न उस नियम में किसी संसोधन या सुधार की गुंजाई है | उसकी इच्छा निश्चित और अपरिवर्तनीय हैं, शेष सभी कुछ प्रतिक्षण परिवर्तनशील हैं | (हरि, 28-7-1946, पृ. 233)

उसका व्यक्तित्व

मैंने ईश्वर के साक्षात देख नहीं दिया है | अगर दिये तो आपसे बात करने की जरूरत न रहती | में आपसे बात कर जाता हूँ - वाणी और कर्म अनावश्यक हो जाते | लेकिन मुझे ईश्वर के अवस्थामें अभिमुख आता है | विश्व के करोड़ों लोग मेरी इस आस्था में भागीदार हैं | विधान-सेवा-विधान व्यक्ति भी इन करोड़ों अभिशिषित लोगों की आस्था की हिला नहीं सकते | (हरि, 3-8-1947, पृ. 262)

ईश्वर जीता है, पर हमारी तरह नहीं | उसके द्वारा पैदा किए गए प्राणी जीते हैं, पर मरने के लिए | लेकिन ईश्वर तो जीवन है | अत: शुभत्व या उसे व्यक्त करने वाले अन्य अर्थ, उसके गुण-विशेषण नहीं हैं |

शुभत्व ईश्वर है | ईश्वर से पृथक यदि कोई शुभत्व है तो वह एक निर्जीव वस्तु है, और वह भी तक रहता है जब तक उससे कोई स्वार्थ सिद्ध होता है | सभी आचारों के साथ भी यही बात है | यदि उन्हें हमारे भीतर रहना है तो उनका असिर्त और अर्जन ईश्वर के संबंध में भी अर्थवान होना चाहिए | हम अच्छा बनने का प्रयास किया है कि हम ईश्वर को प्राप्त करना चाहते हैं | विश्व का समस्त शुक्ल नीतिशास्त्र धूलि के समान है, क्योंकि ईश्वर से पृथक उसमें कोई जीवन नहीं है | वह ईश्वर से आता है तो उसमें प्राण होते हैं | तब वह हमारा अंग बनकर हमारा उदात्तिकरण करता है |

इसके विपरीत, शुभत्व-रहित ईश्वर की धारणा निर्जीव है | ऐसी धारणा को हम अपनी व्यर्थ की कल्पना से जीवन प्रदान करते हैं | (हरि, 24-8-1947, पृ. 285)

'ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करने' और 'सत्य के रूप में उसका दूर से दर्शन करने' में बड़ा अंतर है | मेरी राय में, उपर्युक्त दोनों कथनों के बीच असंगति नहीं है और एक कथन दूसरे कथन का स्पष्टीकरण करता है | हिमालय को हम बड़ी दूर से देखते हैं, और जब उसके शिखर पर होते हैं तो उसे प्रत्यक्ष देखते हैं | लाखों लोग सैकड़ों मील
मेरे माननीय भाई, तेरी बात मेरे समझ में अंधकार का अनुभव है। ईश्वर का अनुभव है, उसके साथ जीवन का संचालन है। ईश्वर अज्ञेय है, उसका ज्ञेय है। उसके साथ करना है।

ईश्वर की शक्ति
प्रत्येक वस्तु जो आरंभ हुई है, उसका अंत भी अनिवार्य है | ये सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी सभी एक-न-एक दिन नष्ट हो जाएंगे, लेकिन उनकी दृश्यता तब भी रहती है | ये सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी सभी एक-न-एक शुष्क हो जाएंगे, भले ही ऐसा होने में असंख्य वषों का काल लागें | केवल ईश्वर ही अमर और अनश्वर है | उसका अनुभव करने के लिए शब्द कहां से आएंगे ? (हरर, 16-6-1946, पृ. 183)

ईश्वर को बुद्धि के माध्यम से प्राप्त नहीं शकया जा सकता | बुद्धि हमें केवल एक निश्चित बिन्दु तक ले जा सकती है, उसके आगे नहीं | ईश्वर तो आध्यात्मिक और आध्यात्मिक से उत्पन्न ज्ञान का विषय है | मनुष्य अपने से बेहतर पुरुषों के अनुभव का आधार तक पहुंच सकते हैं या फिर अपने निजी अनुभव से तसल्ली कर सकते हैं | पूर्ण आध्यात्मिक सत्य हो तो फिर अनुभव की आवश्यकता नहीं रहती। (हरर, 4-8-1946, पृ. 249)

निरपेक्ष सत्य का ज्ञान करना है | इसीलिए मैंने प्राप्त कहा है कि सत्य ईश्वर है | अत: मनुष्य, जो सीमित क्षमता वाला जीव है, निरपेक्ष सत्य को नहीं जान सकता। (हरर, 7-4-1946, पृ. 70)

मैं उस महान शक्ति को अल्लाह या खुदा या ईश्वर के नाम से नहीं बल्कि सत्य के नाम से पुकारता हूं | मेरी दृष्टि में, सत्य ईश्वर है, और सत्य हमारी सभी योजनाओं का अध्यारोहण करता है | पूर्ण सत्य केवल उसी महान शक्ति अर्थात सत्य के हृदय में विश्वास करता है | मुझे बचपन से ही सीखा गया था कि सत्य अग्नि है – ऐसी चीज़ जिस तक तुम पहुंच नहीं सकते | एक महान अंग्रेज ने मुझे यह विश्वास करना सिखाया कि ईश्वर अज्ञेय है | वह ज्ञेय है, पर केवल उस बिन्दु तक जहां हम हमारी सीमित बुद्धि की पहाँच है। (हरर, 20-4-1947, पृ. 109)

ईश्वर सर्वशक्तिमान है | वह लोगों का हृदय-परिवर्तन कर सकता है और उनके बीच सच्ची शांति स्थापित कर सकता है। (हरर, 3-8-1947, पृ. 262)

उसका शासन
आज, पश्चिम में, लोग बात ईसा की करते है | इसी प्रकार, ऐसे लोग हैं जो बात इस्लाम की करते हैं, लेकिन वस्तुतः इसका झोचनीय स्थिति है | यह बड़ी शोचनीय स्थिति है.... यदि लोग ईश्वर का अनुभव करें तो दुनिया में आज जो भ्रष्टाचार और मुहाफजाधी दिखाई दे रहे हैं, वह समाप्त हो जाए | अभी, अमीर और भी अमीर हो रहे हैं तथा निर्धार और भी निर्धार हो रहे हैं | सब
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

tरफ भूख, नंगेपन और मौत का आलम है | ये ईश्वर के साम्राज्य के नहीं बल्कि शैतान, रावण या ईसा-विरोधी साम्राज्य के चिह्न हैं | हम केवल होतों से ईश्वर के नाम का जप करके पृथ्वी पर उसका शासन नहीं उतार सकते | हमारा आचरण शैतान के बजाय ईश्वर के अनुरूप होना चाहिए | (हरिः 23-6-1946, पृ. 186-87)

जब लोगों के हृदयों पर ईश्वर का आसन होगा तभी वे क्रोध से मुक्ति पा सकेंगे | (हरिः 20-4-1947, पृ. 118)

ईश्वरीय आदेश के रूप में ज्ञात आचरण के सभी सार्वभौमिक नियम सरल और समझने में आसान है तथा व्यक्ति चाहे, तो उन पर आचरण करना भी आसान है | वे कठिन इसलिए प्रतीत होते हैं कि मानवजाति जड़ता का शिकार है | मनुष्य एक प्रगतिशील प्राणी है | प्रकृति में कुछ भी निश्चल नहीं है | केवल ईश्वर स्थिर है क्योंकि वह जैसा कल था, वैसा ही आज है और वैसा ही आगामी कल रहेगा, फिर भी वह सदा गतिशील है | लेकिन हमें ईश्वर के गुणों की ध्यान करना आवश्यक है | हमें तो यह समझना है कि हम सदा गतिमान रहते हैं | इसलिए मेरा दृढ़ मत है कि यदि मानवजाति को जीवित रखना होगा तो उसे सत्य और अहिंसा के प्रभाव में अधिकारिक आना चाहिए | आचरण के इसी दो मूलभूत नियमों के अधीन समझना आना चाहिए | (हरिः 9-11-1947, पृ. 406)

जो मन ईश्वर के प्रति अनुरक्त नहीं है, वह भटकता है और उसमें आराधना का गुण नहीं रह जाता | (वही)

बुराई की उपत्यका

दुनिया में बुराई क्यों है, इसका उत्तर देना कठिन है | मैं जो दे सकता हूँ, उसे एक ग्रामीण का उत्तर कहा जा सकता है | जहां अच्छा है, वहां बुराई भी होती है, उसी तरह जैसे कि जहां प्रकाश है, वहां अंधकार भी होता है | लेकिन यह बात केवल मानवों के संबंध में ठीक है | ईश्वर के आगे न कुछ अच्छा है, न बुरा है | हम निर्धन ग्रामीण ईश्वरीय धर्म की चर्चा मानवों की दृष्टि से कर सकते हैं, किंतु हमारी भाषा ईश्वर की भाषा नहीं है | वेदांत का कथन है कि संसार माना है | यह समाधान भी अपूर्ण मानवता के तुलनाहृत है | इसलिए मैं कहता हूँ कि मैं इस प्रश्न पर अपना सिर नहीं खपाऊँगा | यदि मुझे ध्यान और धार्मिक आरोग्य के अंतर्गत प्रकृति में झांकने का अनुभव भी मिल जाय तो मैं वैसा करने का प्रयास नहीं करूँगा | मैं वहां झांककर करूँगा क्या? हमारी ईश्वरीय उपत्यका के लिए कही जानना पयाकप्त है कि ईश्वर भलाई करने वाले का साथ देता है | वैसा, यह भी एक ग्रामीण का समाधान ही है | (हरिः 7-9-1935, पृ. 233)

मैं किसी तार्किक विधि से इस बात का जवाब नहीं दे सकता कि बुराई क्यों है | ऐसा करने का प्रयास करना तो अपने को ईश्वर के समक्ष मानना होगा | इसलिए मैं विरोधाभासक बस यह माने लेता हूँ कि बुराई है | और मैं ईश्वर को दीर्घकाल से दूरी और धैर्यवान कहता हूँ | वे क्योंकि उनसे इस संसार में बुराई को चलने की अनुमति दे
रखी है। मैं जानता हूँ कि ईश्वर बुराई से मुक्त है। वह बुराई का सृष्टिकर्ता नहीं है, पर बुराई उसका स्वर्ण नहीं कर सकती।

मैं यह भी जानता हूँ कि यदि मैं अपने जीवन को दांव पर लगाकर भी बुराई से संघर्ष न करूँ तो कभी ईश्वर को नहीं जान पाऊँगा। मेरे साथ साथ सीमित अनुभव से मेरा यह विश्वास दृढ़ हो गया है। मैं जितना ही निर्मल बनने का प्रयास करता हूँ, उतना ही अपने को ईश्वर के निकट अनुभव करता हूँ। मैं कितना प्रयास और करूँ कि मेरी आध्या मात्र एक बिल्ड्यू न रहे, जैसे की वह आज है, वहीं हिमालय की तरह अविचल और उसके शिखरों पर मंदित हिम के समान श्वेत तथा दैवी मात्र हो जाए?

(यंग, 11-10-1928, पृ. 341)

विश्वुद्ध वैज्ञानिक अर्थ में, ईश्वर अच्छाई और बुराई, दोनों की तह में है। वह जिस प्रकार शायद उपक्रम के चार को निर्देशित करता है उसी प्रकार हमारे के खंजर की भी निर्देशित करता है। लेकिन मानव की होती में, अच्छाई और बुराई एक-दूसरे से अलग और असंगत हैं। बुरा ये प्रकाश और अंधकार, ईश्वर और शैतान की प्रतीक हैं।

(हरूर, 24-2-1937, पृ. 9)

यह कहना शकता है कि ईश्वर बुराई को चलने दे रहा है, कानों को अच्छा नहीं लगता। लेकिन यदि वह अच्छाई के लिए जिम्मेदार है तो फिर बुराई के लिए भी जिम्मेदार माना जाना चाहिए। क्या ईश्वर ने रावण को अतुश्चलत बल प्रदहित करने में नस्लाहा रहा है?

(हरूर, 24-2-1946, पृ. 24)

एक कहावत है कि बाहर जो दिखाई देता है, वह अंदर का प्रतिबिंब है। अगर आप भले हैं, तो सारी तुम्हारी देखभाल भली दिखाई देगी। इसके विपरीत, यदि आप किसी को बुरा मानने की ओर प्रवृत्त होते हैं तो संभावना इस बात की है कि बुराई आपके अंदर ही है।

हमें न दूसरों के बारे में बुरा सोचना चाहिए और न यह संदेह करना चाहिए कि दूसरे लोग हमारी बुराई की बात सोच रहे हैं। बुरी बातों को कान देना विश्वा के अभाव का सूचक है।

(हरूर, 28-4-1946, पृ. 111)

चमकार

मुझे चमकारों में विश्वा है और नहीं भी है। ईश्वर चमकारों के माध्यम से काम नहीं करता। लेकिन भगवद्विंधा कभी-कभी एक कौंद्र के रूप में प्रकट होती है, और तब मनुष्य को लगता है कि चमकार हो गया। हम ईश्वर को
अस्वीकार

प्रथम जीवाधारी कस्तुं: ईश्वर का अवतार है, लेकिन हम साधारणतया प्रथम प्राणी को अवतार नहीं मानते | अन्य बातों पर पीड़ा यह समाप्त उस व्यक्ति को देती है जिसका आचरण अपनी पीढ़ी में, असाधारण रूप से धर्मनिष्ठ रहा हो | मुझे इसमें कुछ अनुविष्ठ दिखाई नहीं देता, इससे ईश्वर की महानता कम नहीं होती और न सत्य को कोई क्षति पहुंचती है....

अवतार में विश्वास मनुष्य की उच्च आध्यात्मिक आकांक्षा का प्रमाण है | मनुष्य जब तक ईश्वर की बराबरी पर नहीं पहुंच जाता, उसे शातिः नहीं मिलती | इस अवस्था को प्राप्त करने का प्रयास ही एक मात्र साधन, सर्वोच्च आकांक्षा है | और यही आत्मसाक्षात्कार है | यह आत्मसाक्षात्कार ही गीता तथा अन्य सभी धर्मस्रंगमों का विषय है | (यंग 6-8-1931, पृ. 206)
हम न तो सभी ईश्वरीय नियमों को जानते हैं और न उनके प्रवर्तन की विधि को समझते हैं | इस मामले में बड़े-से-बड़े वैज्ञानिक और महान-से-महान अध्यात्मवादी का ज्ञान भी एक धूलिकण के बराबर है | यदि ईश्वर मेरी दृष्टि में मेरे सांसारिक पिता जैसे ही देखभाल नहीं हैं तो वह अन्त है | मेरे जीवन की छोटी-से-छोटी बात पर भी उसका अधिकार है | मेरे शब्दश: इस बात पर विश्वास करना हूँ कि ईश्वर की ईश्वर की बिना पता भी नहीं हिल सकता | मेरी प्रत्येक श्राय के साथ-साथ है | ईश्वर और उसका प्रमाण एक है | प्रत्येक ही ईश्वर है | उसका जो भी गुण बताया जाए, वह मात्र एक गुण नहीं है | ईश्वर मूर्तिमान गुण है | ईश्वर के सत्य, प्रेम, निमित्त तथा ऐसे लाखों अन्य नाम हैं जो मनुष्य अपनी विद्युत से उसे दे सकता है | (हर, 16-2-1934, पृ. 4)

प्राकृतिक विद्या

सभ्य तथा असभ्य, समुद्री दुनिया की तरह मेरा भी विश्वास है कि बिहार के भूकंप के प्रकार देवता या प्रकृति के उपर उसके पापों के दंड के रूप में आती है | यह विश्वास जब हृदय से उत्पन्न होता है तो लोग प्रार्थना करते हैं, पश्चाताप करते हैं और अपना शुद्धीकरण करते हैं...

मुझे ईश्वरीय हेतु की बड़ी ही सीमित जानकारी है | ऐसी विपत्तियां देवता या प्रकृति की केवल सनक का परिणाम नहीं होतीं | जिस प्रकार ग्रह अपनी गति का नियंत्रण करने वाले नियमों का शत-प्रत्यशत पालन करते हुए
गतिमान रहते हैं, उसी प्रकार विपदाएं भी निश्चित नियमों का पालन करती हैं | सिर्फ यह है कि हमें उन घटनाओं का नियंत्रण करने वाले नियमों का ज्ञान नहीं है और इसलिए हम उन्हें विपदाएं या उपद्रव कह देते हैं | (हरि, 2-2-1934, पृ. 1)

हमारा पार्थिव शरीर महिलाओं की कांच की चूड़ियों से भी अधिक भंग है | चूड़ियों को तो अगर तिजोरी में बंद कर दिया जाए और उनको कोई स्पर्श न करे तो वे हजारों साल सुरक्षित रहे जा सकती हैं | लेकिन यह पार्थिव शरीर तो इतना अस्थिर है कि पलक ढककते ही समाप्त हो जाता है | इसलिए इस श्वास के बलते, हमें बड़े और छोटे का भेद भुला देना हाई, अपने हृदयों को निर्मल बनाना हाई और किसी प्राकृतिक विपद के फलस्वरूप या सामान्य परिस्थितियों में नेरीन्त्र हो जाने पर अपने सिरजनहार के सामने उपस्थित होने के लिए तैयार रहना हाई | (हरि, पृ. 5)

हर भौतिक विपद के पीछे कई देवी हेतु अवश्य होता है | इस बात की पर्याप्त संभावना है कि विज्ञान आगे चलकर कभी इतनी पूर्णता प्राप्त कर लेगा कि जिस प्रकार आज ग्रहणों का पूर्वकथन कर सकता है, उसी प्रकार भूकंपों का भी कर सकेगा | मनुष्य की बुद्धि की यह एक और उपलब्धि होगी | लेकिन ऐसी असंख्य उपलब्धियां हमारा आत्मसुध्दीकरण नहीं कर सकती, जिसके बिना किसी वस्तु का कोई मूल्य नहीं है |

जो लोग अंतरिक्ष शुद्धीकरण की आवश्यकता को समझते हैं, उनसे मेरा कहना है कि वे मेरे साथ मिलकर यह प्रार्थना करें कि हम ऐसी विपदों के पीछे ईश्वर के हेतु को समझ सकें, ये हमें बिनम्र बनाएं और अंत समय आने पर हमें ईश्वर का सामना करने के लिए तैयार करें | साथ ही, हम अपने साथियों के – वे चाहे जो भी हों – दुःखों को बांटने के लिए सदा तत्पर रहें | (हरि, 8-6-1935, पृ. 132)

ईश्वर के नाम

ईश्वर के हजार नाम हैं, या कहिए कि वह अनाम है | हमें जो नाम अच्छा लगे, उससे उसकी आराधना अथवा प्रार्थना कर सकते हैं | कोई उसे राम कहता है, कोई कृष्ण, दूसरे लोग उसे रहीम या फिर गौड़ कहते हैं | सब एक ही ईश्वर की पूजा है, पर जिस प्रकार सारे आहार सभी लोगों को माफिक नहीं आते उसी प्रकार सारे नाम सभी को प्रय नहीं लगते | प्रत्येक व्यक्ति अपने साहचर्य के अनुसार नाम का चयन करता है और अंतर्खाम, सर्वशक्तिमान तथा सर्वभूत होने के नाते वह हमारी अंतरतम की भावनाओं को समझता है और हमारी पाररत के अनुसार हमें प्रार्थना करता है |

इसलिए आराधना या प्रार्थना होती है नहीं बल्कि दुःख से की जानी चाहिए | और इसलिए मूक या हकला, अज्ञानी या मूर्ख, सभी समान योग्यता के साथ आराधना या प्रार्थना कर सकते हैं | जिनकी जिह्वा पर अमृत किंतु
हृदय में विष है, उनकी प्रार्थना कभी स्वीकार नहीं होती | इसलिए ईश्वर की प्रार्थना करने वाले को अपना हृदय शुद्ध करना चाहिए |

राम हनुमान के केवल होठों पर ही नहीं थे, उनके हृदय में भी विराजमान थे | भगवान ने हनुमान को अपार शक्ति प्रदान की | इस शक्ति के बल पर उन्होंने पर्वत उठाया और समुद्र लांघ गए | (यंग, 24-9-1925, पृ. 331)

ईश्वर के संबंध में मेरा जैसा विश्वास है, ठीक वैसा ही मैं बोलता हूं...वह सृष्टिकर्ता भी है और अ-सृष्टिकर्ता भी | यह भी यथार्थ की अनेकता के सिद्धांत की मेरे द्वारा स्वीकृति का ही परिणाम है | मैं जेनियों के मंच से ईश्वर के अ-सृष्टिकर्ता होने की धारणा को सिद्ध करता हूं और रामानुज के मंच से उसके सृष्टिकर्ता होने की धारणा को | वस्तुतः हम सब अभियोग का चिंतन करने, अवरोधन का वर्णन करने, और अज्ञेय को जानने का प्रयास करते हैं | इसीलिए हमारी वाणी लड़खड़ा जाती है, कभी-कभी हमें वाणी की अपर्याप्तता का भी अहसास होता है और प्रायः हम परस्पर विरोधी बातें भी कह जाते हैं | यही कारण है कि वेदों ने ब्रह्म का वर्णन करते हुए ‘नेति’ ‘नेति’ कहा है | (यंग, 21-1-1926, पृ. 30)

मेरी समझ में, राम, रहमान, अहुरमज्द, गौड़ या कृष्ण मनुष्य द्वारा इस अदृश्य शक्ति – जो शक्तियों में सबसे बड़ी है – को कोई नाम देने के प्रयास ही हैं | अपूर्ण होते हुए भी पूर्णता की प्राप्ति के लिए निरंतर प्रयास करना मानव प्रकृति है | ऐसा करते हुए वह कभी दिवस्वप्न देखने लगता है और जिस प्रकार कोई बालक खड़े होने का प्रयास करता है, बार-बार गिरता है और अंततः चलना सीख जाता है उसी तरह आदमी भी, अपनी सारी बुद्धिमत्ता के बावजूद, उस असीम और अनंत ईश्वर के सामने निरा शिशु है | यह अतिशयोक्ति लग सकती है, पर है नहीं | मनुष्य ईश्वर का वर्णन अपनी तुच्च भाषा में ही तो कर सकता है | (हरि, 18-8-1946, पृ. 267)
15. रामनाम

मेरा परिचय

यद्यपि मेरे विवेक तथा हृदय ने बहुत पहले ही यह मान लिया था कि ईश्वर का सर्वोच्च गुण और नाम ‘सत्य’ है, मेरे सत्य को राम के नाम से पहचानता हूँ | मेरी परिक्षा की कठिन-से-कठिन घड़ी में, इसी नाम ने मेरी रक्षा की है और आज भी कर रहा है | इसका संबंध बचपन से हो सकता है या फिर तुलसीदास के प्रति मेरे आकर्षण से | लेकिन यह अकाद्य तथ्य है, और इन पंजियों को लिखते समय मेरी स्मृति मेरे बचपन के काफी अनेक घड़ी ने बहुत पहले ही यह मान लिया था शक ईश्वर का सर्वोच्च गुण और नाम ‘सत्य’ है, मैं सत्य को राम के नाम से पहचानता हं | मेरी परिक्षा की कठिन-से-कठिन घड़ी में, इसी नाम ने मेरी रक्षा की है और आज भी कर रहा है | इसका संबंध बचपन से हो सकता है या फिर तुलसीदास के प्रति मेरे आकर्षण से | जब मैं बच्चा था तो मेरी परिचारिका ने मुझे सिखाया था कि जब भी मुझे भय लगे या कष्ट हो रहा हो तो रामनाम का जप करूं | बढ़ते ज्ञान और ढलती उम्र के बावजूद, यह आज भी मेरी प्रकृति का अंग बना हुआ है | मैं यहां तक कह सकता हूँ कि अगर वस्तुतः होठों पर नहीं तो मेरे हृदय में तो चीजें जंगली घंटे रामनाम रहता है | यही मेरा परिचय है, मेरा अवलंब है | शवश्व के धार्मिक साहित्य में तुलसीदास के प्रमुख स्थान हैं | मुझे महाभारत और यहां तक कि वात्सल्य का रामायण ने भी इतना आकर्षित नहीं किया | (हर, 18-3-1933, पृ. 6)

स्वर्णत्म आराधना

मैं स्वयं बचपन से तुलसीदास के बावजूद भक्त रहा हूँ | अत: मैंने सदा ईश्वर को राम के नाम से पूजा है | लेकिन मैं जानता हूँ कि औकार के आरंभ अंतर में, सभी प्रदेशों, देशों और भाषाओं में विद्यमान ईश्वर की पूरी नामावली का पारायण कर जाने पर भी परिणाम अजीब निकलेगा | ईश्वर और उसका नियम एक ही हैं | इसलिए उसके नियम का पालन करना स्वर्णत्म आराधना है | (हर, 24-3-1946, पृ. 56)

ईश्वर एक है

जब कोई यह कहता है कि राम या रामनाम का गान केवल हिंदुओं के लिए है, मुसलमान उसमें कैसे समिलित हो सकते हैं तो मुझे मन-ही-मन हंसी आती है | क्या मुसलमानों का ईश्वर एक है और हिंदुओं, पारसियों या ईसाईयों का कोई दूसरा है ? नहीं, सर्वशक्तिमान एवं सर्वव्यापी ईश्वर केवल एक है | बस, उसके नाम अनेक हैं, और हम उसका स्मरण उस नाम से करते हैं जिससे हम सर्वाधिक परिचित हैं |
मेरे राम, मेरी प्रार्थनाओं के राम, वह ऐतिहासिक राम नहीं हैं जो अयोध्या-नरेश दशरथ के पुत्र थे | मेरा राम शाश्वत, अजन्मा और अद्वितीय राम है | मैं केवल उसी की आराधना करता हूं | मैं केवल उसका अवलंब चाहता हूं, और वही आपको भी करना चाहिए | वह सबके लिए बराबर है | इसलिए मैं नहीं समझ पाता कि मुसलमान या कोई और धर्मावतंबी उसका नाम लेने से आपत्ति कैसे कर सकता है ? हां, वह ईश्वर को रामनाम से ही पहचानने के लिए बाध्य नहीं है | वह उसे अललाह या, धर्म के सामजस्य को बनाए रखने के लिए, खुदा कह सकता है | (हरि, 28-4-1946, पृ. 111)

मेरे लिए....दशरथपुत्र, सीतापशत राम सवक ब्लक्तमान तत्व है जो शजसका हृदय में धारण करने से सभी मानसिक, नैतिक और भौतिक व्यधियां दूर हो जाती हैं | (हरि, 2-6-1946, पृ. 158)

अरोपायकर शक्ति

एक वाजिब सवाल यह है कि जो व्यक्ति नियमित रूप से राम का नाम लेता है और पवित्र जीवन व्यतीत करता है, वह कभी भी बीमार पड़े ? मनुष्य प्रकृति से अपूर्ण है | विवेकशील मनुष्य पूर्णता-प्राप्ति का प्रयास करता है, लेकिन उसमें सफल नहीं हो पाता | वह जाने-अनजाने, मार्ग में ही लड़खड़ा जाता है | ईश्वर का संपूर्ण नियम पवित्र जीवन में समाहित है |

पहली बात तो अपनी सीमाओं को पहचानने की है | यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि जो मी ही व्यक्ति इन सीमाओं का उल्लंघन करता है, वह बीमार हो जाता है | तदनुसार अपनी जरूरत के हिसाब से लिया गया संतुलित आहार मनुष्य को रोगमुक्त रखता है | आदमी यह कैसे पहचाने कि उसके लिए उचित आहार क्या है ? ऐसी अनेक पहलियों की कल्पना की जा सकती है | तत्व की बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना डाकर स्वयं बनना चाहिए और अपनी सीमाएं पहचानना चाहिए | जो व्यक्ति ऐसा करेगा, वह निश्चय ही 125 वर्ष तक जिएगा | (हरि, 19-5-1946, पृ. 148)

यदि तुम्हारा अंग-भंग हो गया है तो रामनाम नया अंग जोड़ देने का चमकार नहीं कर सकता | पर वह इससे भी बड़ा चमकार यह कर सकता है कि तुम्हें उस अंग के अभाव में भी जब तक तुम जीवन अनिवर्ती रहते हैं, अनिवर्तीनी शांति के साथ जीवन का आनंद लेने दे और शरीरत होते समय कार्य हो देने और क्रोध को विश्वास के उल्लास मनाने से रोक दे | चूंकि मृत्यु प्रत्येक मनुष्य को एक-न-एक दिन आनी ही है, इसलिए इसके विषय में निरंतर चिंतित रहने का लाभ ही क्या है ? (हरि, 7-4-1946, पृ. 69)

प्राकृतिक चिकित्सा के लिए किसी ऊँची अकादमिक योग्यता या विद्वत्ता की आवश्यकता नहीं है | सार्वजनिक का मूल तत्व सरलता है | जो बात करेगौं लोगों के लाभ के लिए हो, उसमें विद्वत्ता की जरूरत नहीं होती | विद्वत्ता का अर्जन तो इन-गिने लोग ही कर सकते हैं, इसलिए वह केवल धनवानों को लाभ पहुंचा सकती है |
लेकिन भारत अपने सात लाख गांवों में बसता है – इन दीन-हीन, छोटे-छोटे और दूर-दराज के गांवों की आबादी मुख्तल से सैकड़ों में और कभी-कभी तो सिर्फ सो-पचास में होती है।

मे ऐसे ही किसी गांव में जाकर बसना चाहुंगा। असली भारत, मेरा भारत, वही है। वहाँ के साधारण लोगों तक आप उच्च योग्यता-प्राप्त विकल्पक और अस्पताली साज-सामान नहीं पहुंच सकते। उनकी आशा का आधार तो सरल प्राकृतिक उपचार और रामनाम ही होता है।

विचारों की शुचिता

केवल मुख्तल से रामनाम कहने का उपचार से कोई संबंध नहीं है। अगर मे ठीक समझता हूं तो, जैसा कि इन मित्रों ने कहा है, विचार-चिकित्सा मात्र एक धोखे की चीज़ है और उससे जीवन ईश्वर के जीवन नाम का उपहास होता है। जीवन ईश्वर कोरी कल्पना नहीं होता है। उनकी आशा का आधार तो सरल प्राकृतिक उपचार और रामनाम ही होता है।

विचारों की शुचिता हो तो बीमारी आ ही नहीं सकती। इस स्थिति को प्राप्त करना कठिन तो है, पर इस नियम को समझना ही स्वास्थ्य की दिशा में पहला कदम उठाना है। दूसरा कदम तदनुसार प्रयास करना है। मनुष्य के जीवन में यह आमूल संशोधन होने के साथ-साथ स्वभावतया उन सभी प्राकृतिक नियमों का पालन भी शुरू हो जाता है। जिनकी खोज अभी तक मनुष्य ने की है। वह नहीं हो सकता कि मनुष्य उनके साथ खिलाड़ करे और साथ ही, शुद्ध हृदय होने का दावा भी करे।

यह निष्ठा ही कहा जा सकता है कि हृदय निर्मल हो जाए तो रामनाम की जरूरत नहीं है। बस, यह है कि मुख्तल रामनाम के अलावा हृदय को निर्मल करने का कोई और उपाय ज्ञात नहीं है। विश्व के सभी प्राचीन मनीषियों ने इसी उपाय का अवलंब लिया है। वे जीवन के प्रय भक्त थे, कोई अंधविश्वासी या धूरूत नहीं थे।

आध्यात्मिक बल मनुष्य की सेवा के लिए उपलब्ध अन्य बलों की तरह ही है। इस तथ्य के अलावा कि यह बल युगों से शारीरिक बीमारियों के लिए कमोबे भावना के साथ इस्तेमाल किया जाता रहा है, अगर यह शारीरिक बीमारियों के इलाज के लिए सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया जा सकता है, तो ऐसा न करना बुनियादी तौर पर गलत होगा। क्योंकि मनुष्य पदार्थ और आत्मा, दोनों है और ये दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।
अगर आप इस बात का विचार किए बिना कि कूनेल लाखों लोगों को नसीब नहीं है, उसका सेवन करके मलेरिया से छुटकारा पा लेते हैं तो फिर अपने अंदर मौजूद उपचार का इस्तेमाल करने से इस्तेमाल इंकार करते हैं कि लाखों लोग अज्ञानतावश उसका प्रयोग नहीं करते?

क्या आप अपने को सिर्फ इसलिए साफ-सुस्त नहीं रखते कि लाखों लोग अज्ञानता या सिर्फ हठ के कारण, अपनी सफाई नहीं करते? यदि आप मानवप्रेम की झूठी धारणा के क्षेत्र में हीरकर अपनी सफाई नहीं करेंगे तो गंदगी और बीमारी की वजह से आप उन्हीं लाखों भाईयों की सेवा से बंचित हो जाएंगे | यह जरूर है कि आध्यात्मिक स्वास्थ्य तथा शुचिता से इंकार करना शारीरिक स्वस्थता तथा शुचिता से इंकार करने से ज्यादा बुरा है| (हरि, 1-9-1946, पृ. 286)

रामनाम लेना और व्यवहार में रावण के रास्ते पर चलना निरस्तक से भी गया-बीता है | यह केवल पाखंड है | आदमी स्वयं को या दुनिया को धोखा दे सकता है, पर उस सर्वशक्तिमान को धोखा नहीं दे सकता | (हरि, 23-6-1946, पृ. 186)
16. मेरी आत्मा का आहार: प्रार्थना

मैं स्वयं को आत्मा और प्रार्थना का व्यक्ति मानता हूँ, और मेरे दूकड़े-दूकड़े भी कर दिए जाए तब भी मेरा विश्वास है कि मुझे ईश्वर इतनी शक्ति देगा कि मैं उसके अस्तित्व से इंकार न करूँ और जोर देकर कहूँ कि वह है | (यंग, 8-12-1927, पृ. 413)

मेरा कोई काम प्रार्थना के बगैर नहीं होता | मनुष्य की त्रुटियाँ प्रार्थना के फल हैं | वह कभी निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि उसके कदम सही उठ रहे हैं | वह जिसे अपनी प्रार्थना का प्रतुत्तर समझ रहा है, संभव है वह उसके गर्व की प्रतिध्वनि ही हो | अचूक मार्गदर्शन वह मनुष्य कर सकता है जिसका हृदय पूर्णतः निर्दोष हो, जो कभी बुराई कर ही न सकता हो | मेरा ऐसा कोई दावा नहीं है | मेरी आत्मा तो संघषक, प्रयासरत, त्रुटप्रवण संख्यात्मक है | (यंग, 25-9-1924, पृ. 313)

मुझे मार भी दिया जाए तब भी मैं राम और रहीम के नामों का जाप नहीं छोड़ेंगा, जो मेरे लिए एक ही ईश्वर के दो नाम हैं | होठों पर इन नामों को लेते हुए मैं प्रसन्नता पूर्वक मर सकता हूँ | (हरर, 10-4-1947, पृ. 118)

विपत्ति में रक्षा

विपत्ति की घड़ियों में ईश्वर ने सदा मुझे बचाया है | मैं जानता हूँ कि 'ईश्वर ने मुझे बचाया' वाक्यांश का आज मेरे लिए और भी गहरा अर्थ है; फिर भी, मैं समझता हूँ कि मैं इस वाक्यांश के पूरे अर्थ की अभी तक नहीं पकड़ पाया हूँ | अनुभव की गहराई ही मुझे इसे पूरा तरह समझने में सहायक होगी | लेकिन मेरी सभी विपत्तियों में - आध्यात्मिक प्रकार की, वकील के रूप में, संस्थाओं के संचालन में, और राजनीति में - मैं कह सकता हूँ कि ईश्वर ने मुझे बचाया | जब सभी आशाएं समाप्त हो जाती हैं, जब मददगार काम नहीं आते और सुख-चौंच हवा हो जाता है तो मैंने अनुभव किया है कि, किसी-न-किसी प्रकार, जाने कहां से, मदद आ पहुंचती है | प्रार्थना ने ही मेरे जीवन का उद्दार किया है | इसके बिना मैं बहुत पहले ही पागल हो गया होता | मेरी आत्मकथा में दिखाए मुझे अपने निजी तथा सार्वजनिक जीवन में प्रार्थना मात्रा में एक-से-एक कड़वे अनुभव हुए हैं | उन्होंने मुझे कुछ समय के लिए हताश भी कर दिया था, पर मैं यदि उनसे मुक्ति पा सका तो केवल प्रार्थना के बल पर | मैं कह सकता हूँ कि सत्य जिस प्रकार मेरे जीवन का अंग रहा है, उस प्रकार प्रार्थना नहीं रही | वह एक आवश्यकता के रूप में आई, क्योंकि मैंने अपने आपको ऐसी दशा में पाया जिसमें प्रार्थना के बिना मैं संभवत:
प्रसन्न नहीं रह सकता था | और ज्यों-ज्यों ईश्वर में मेरी आस्था बढ़ती गई, प्रार्थना की आकृति भी अद्भुत होती गई | इसके बिना जीवन नीरस और खाली-खाली लगने लगा |

मेरे दक्षिण अफ्रीका में ईसाई उपासना में शिरकत की, पर वह मुझे आकर्षित न कर सकी | में प्रार्थना में उनके साथ शामिल न हो सका | उन्होंने ईश्वर से याचना की, पर में उनका साथ न दे पाया, में बुरी तरह असफल रहा |

मेरे ईश्वर और प्रार्थना के प्रति अविश्वास से सुरुआत की थी और जीवन में काफी बाद तक भी मुझे कोई खालीपन महसूस नहीं होता था | लेकि फिर मुझे लगने लगा कि जिस प्रकार शरीर के लिए भोजन अनिवार्य है, उसी प्रकार आत्मा के लिए प्रार्थना भी अनिवार्य है | सच पूछा जाए तो शरीर के लिए भोजन इतना आवश्यक नहीं है जितना कि आत्मा के लिए प्रार्थना | कारण कि, शरीर को आरोप करने के लिए कभी-कभी (भोजन का) लंघन करना आवश्यक हो जाता है, पर प्रार्थना के लिए लंघन जैसी कोई चीज़ नहीं है....

राजनीतिक दिशित में मेरे सामने हता ा की ब्लस्थशत आने पर भी मेरे चित्त की शांति कभी नहीं गई है | वस्तुत: लोग मेरी शांति से ईर्ष्या करते हैं | में बताऊंगा कि यह शांति प्रार्थना से आती है, में कोई विद्वान व्यक्ति नहीं हैं, लेकिन में प्रार्थना करने वाला व्यक्ति हूं, ऐसा भी मेरा दावा है | मुझे प्रार्थना के स्वरूप से कुछ लेना-देना नहीं है | इस मामले में हर आदमी अपना निर्णयक स्वरूप है | लेकि कुछ निश्चित मार्ग हैं जिनका प्रार्थिन गुरुओं ने अनुसरण किया है, अतः उन पर चलना निरापद है |

....मेरे अपनी व्यक्तिगत बात कही है | हर व्यक्ति स्वयं प्रयास करे और देखे शक... ईश्वर का प्रत्युत्तर

पवित्र काम में कभी पराजय स्वीकार न करो और आगे के लिए मन पक्का कर लो कि तुम स्वयं को पवित्र रखोगे | यदि ऐसा करोगे हर ईश्वर से प्रत्युत्तर अवश्य मिलेगा | हां, जो अहंकारी है, उनकी प्रार्थना वह कभी नहीं सुनता; इसी प्रकार, जो उनके साथ सोई करते हैं, उनकी भी वह नहीं सुनता....

यदि तुम्हें उससे सहायता चाहिए तो प्रकृतिभाव से उसकी याचना में जाओ, मन में कोई हिचक न हो और न कोई भय या शंका हो कि वह तुम जैसे पतित की सहायता कैसे करेगा | जिसने तुम्हें करोड़ों की मदद की है, वह तुम्हें निराश करने करेगा? वह किसी की निराशा नहीं करता और तुम देखोगे कि वह तुम्हारी प्रत्येक प्रार्थना को सुन रहा है | वह अपवित्र-से-अपवित्र व्यक्ति की प्रार्थना भी सुनता है | में वह बात अपने निजी अनुभव से कह रहा हूं | में शुद्ध-प्रक्रिया से गुजरा हूं | पहले वर्ग के साम्राज्य की याचना करो, शेष सब कुछ अपने आप मिल जाएगा | (यंग, 4-4-1929, पृ. 111)
मैंने ऐसा कभी नहीं पाया कि वह मेरी सुन नहीं रहा है | जब क्षितिज पूरी तरह अंधकारमय था – जेलों में अपनी परीक्षाओं के दौरान, जब हालात मेरे लिए अछे नहीं थे – मैंने उसे अपने निकटस्थ पाया | मुझे अपने जीवन का एक क्षण भी ऐसा याद नहीं आता जब ईश्वर ने मेरा साथ छोड़ दिया हो | (हरिर, 24-12-1938, पृ. 395)

प्रार्थना का स्वरूप

स्तुति, उपासना, प्रार्थना – ये अंधकार नहीं है बल्कि उससे भी अधिक वास्तविक बातें हैं जितना कि हम खाते हैं, पीते हैं, बैठते हैं, चलते हैं, ये वास्तविक हैं | बल्कि यह कहने में भी अत्युक्त नहीं कि केवल वे ही वास्तविक हैं, शेष सब अवास्तविक हैं |

ऐसी उपासना या प्रार्थना केवल वाणी-विलास नहीं है | इसका मूल मुख नहीं अपितु है | इसलिए यदि हम हृदय की उपबोधना मिर्मी बना लें कि उसमें 'प्रेम के अतिरिक्त और कुछ शेष न रहे', यदि हम अपने निर्देशित अनुसार हमें पुरुष में मिला लें तो उसमें से जो सुर निकलेगा, वह पारस्परिक होगा |

प्रार्थना के लिए वाणी आवश्यक नहीं है | प्रार्थना किसी ऐडिक्ट्र स्वरूप की मोहताज नहीं | मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि प्रार्थना हृदय से विकारों को निकाल फेंकने का अचूक साधन है | लेकिन इस प्रसाद को पाने के लिए प्रार्थना के साथ विनिमय का योग आवश्यक है | (ए, पृ. 51-52)

प्रार्थना में हृदय साथ न हो केवल शब्द हो, इससे अच्छा यह है कि शब्द न हों पर हृदय का योग हो | (यंग, 23-1-1930, पृ. 25)

हम मंदिर में पत्थर या धातु की प्रश्नमा को पूजने नहीं जाते बल्कि उसमें जिस ईश्वर का वास है, उसे पूजन जाते हैं | प्रश्नमा तो आराधक की भावना के अनुरूप बन जाती है | आराधक द्वारा आरोपित विद्युत्र से स्वतंत्र उसकी अपनी कोई शक्ति नहीं होती | इसलिए प्रार्थना के समय बच्चों सहित सभी को पूरी तरह मौन धारण करना चाहिए | (हरिर, 28-4-1946, पृ. 112)

अपने अंदर ईश्वर की उपस्थिति में जीवन विश्वास न हो तो प्रार्थना हो ही नहीं सकती | (यंग, 20-12-1928, पृ. 420)

प्रार्थना के विभिन्न क्षेत्रों में, जिनमें सर्वोपरि अपने राष्ट्र की स्वाधीनता और उसके सम्मान की रक्षा है, आम्बलिदान की उदास और साहसिक कला को सीखने का पहला और अंतिम पाठ प्रार्थना है | निश्चय ही, प्रार्थना के लिए ईश्वर में जीवत आस्था होना अनिवार्य है | (हरिर, 14-4-1946, पृ. 80)

मनुष्य प्राय: तोते की तरह ईश्वर का नाम रटता है और चाहता है कि उसका फल मिले | सच्चे खोजों की आस्था ऐसी जीवंत होनी चाहिए कि वह न केवल अपने बल्कि हृदय के हृदयों से भी इस सहायता की दीक्षणकात को दूर कर दे | (हरिर, 5-5-1946, पृ. 113)
प्रार्थना की आवश्यकता

जिस प्रकार शरीर के लिए आहार आवश्यक है उसी प्रकार आत्मा के लिए प्रार्थना आवश्यक है | आदमी आहार के बिना कई दिनों तक काम चला सकता है – मैक स्वीनी ने 70 दिन तक आहार नहीं लिया था – पर ईश्वर में आस्था रखने वाला व्यक्ति एक क्षण भी प्रार्थना के बगैर नहीं रह सकता, नहीं रहना चाहिए | (यंग, 15-12-1927, पृ. 424)

बहुत-से लोग, मानसिक शैचित्य अथवा बुरी आदत का शक कार होने के कारण, यह समझते हैं कि ईश्वर बिना मांगे हमारी सहायता कर देगा | तो फिर उसके नाम को रटने की व्यज़ जरूरत है ? यह ठीक है कि ईश्वर यदि है, तो हमारे विश्वास करने न करने से कोई अंतर नहीं पड़ता | लेकिन ईश्वर की प्रार्थना को विश्वास की तुलना में बहुत बड़ी चीज़ है | वह निरंतर अभ्यास से ही आ सकती है | सब विज्ञानों के साथ यही बात है | तो फिर विज्ञानों के भी विज्ञान के मामले में यह बात सही क्यों न होगी ? (हरर, 28-4-1946, पृ. 109)

प्रार्थना सुबह की चाबी और शाम की चट्टनी है | (यंग, 23-1-1930, पृ. 25)

मैं जब यह कहता हं शक आदमी आहार के बिना लगातार कई दिन तक रह सकता है पर प्रार्थना के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता, तो मैं अपने और अपने उन साथियों के किंचित अनुभव के आधार पर कहता हूँ जिन्होंने प्रार्थना के जादू का प्रभाव देखा है | कारण यह है कि प्रार्थना के बगैर आंतरराशी अनुभव नहीं मिलती | (वही)

मैं इस बात से सहमत हं कि आदमी चीजों घटे ईश्वर की उपस्थिति को अनुभव करने का अभ्यास कर ले तो प्रार्थना के लिए अलग से समय निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं है | लेकिन ज्ञातात्त्यों के लिए ऐसा कर पाना असंभव है | उन्हें दुनिया के दैनिक झंझों से छुट्टी नहीं मिलती | उनके लिए प्रतिदिन कुछ मिनटों के लिए ही सही, अपने दिमाग को बाहरी चीजों से पूरी तरह समेट लेने का अभ्यास अत्यंत उपयोगी है | ईश्वर के साथ यह मौन संगति उन्हें दुनिया की आपातकालीन के बीच मन की निराकुल शांति का अनुभव करने, क्रोध को वश में रखने और धर्म का अभ्यास करने में सहायक होगी | (हरर, 28-4-1946, पृ. 109)

सामान्यतया प्रार्थना के समय में दुनिया के किसी भी व्यक्ति की खातिर विलंब नहीं किया जाना चाहिए | ईश्वर का समय कभी नहीं रुकता | सृष्टि के आरंभ से ही कालचक निरंतर गतिमान है | वस्तु: ईश्वर और उसका समय अनादि है....जिसकी घड़ी कभी स्कूटी ही नहीं, उसकी प्रार्थना के समय में विलंब कौन कर सकता है ? (हरर, 5-5-1946, पृ. 113)

मेरी प्रार्थना के आरंभ में प्रतिदिन ईश्वरपरिणद्र के प्रथम श्लोक का पाठ होता है जिसका भाव यह है कि प्रथेक वस्तु पहले ईश्वर को अर्पण करो और उसके उपरांत अपनी आवश्यकता के अनुसार उसमें से लेकर इस्तेमाल
करो | इसमें प्रमुख शर्त यह है कि जो वस्तु दूसरे की है, उसका लालच मत करो | ये दो सिद्धांत हिंदू धर्म का सारत्व हैं |

प्रार्थना का सार तत्व
एक अन्य श्लोक में, जिसका प्रत-काल की प्रार्थना के समय पाठ होता है, कहा गया है, 'मैं लौकिक शक्ति की कामना नहीं करता, मैं स्वभाव ही चाहता, न निर्वाण-प्राप्ति के लिए उत्सुक हूं' | मैं तो केवल यह कामना करता हूं कि दूसरों की पीड़ा को दूर करने का उद्देश्य कर सकूं | यह पीढ़ा शारीरिक, मानसिक या आध्यात्मिक, किसी भी प्रकार की हो सकती है | आदमी के अपने विकास के दासता से उपन्यास होने वाली आध्यात्मिक पीड़ा कभी-कभी शारीरिक पीड़ा से अधिक कष्टदायक होती है |

लेकिन पीढ़ा को दूर करने के लिए ईश्वर स्वयं नहीं आता | वह मानवों को माध्यम बनाकर यह काम करता है | ईश्वर स्वयं आता नहीं, वह मानवों को माध्यम बनाकर यह काम करता है | इसलिए परीढ़ा के हरण की कामना करने वाले व्यक्ति में उसके लिए श्रम करने की उत्कृष्ट और तपतता होनी चाहिए |

प्रार्थना....यात्रिक नहीं होती | यह किसी जाति या समुदाय तक सीमित नहीं होती | यह सर्वसमावेशी होती है |

इसमें समूची मानवता समावेश होती है | इसलिए प्रार्थना का ध्येय है पृथ्वी पर ईश्वर के साम्राज्य की स्थापना | (हरि, 28-4-1946, पृ. 111)

सच्चा ध्यान अपने मन के नेत्रों और कानों को अपने आराध्य के अलावा हर चीज़ की ओर से मूंट लेना है | इसीलिए प्रार्थना के दौरान आंखें को मूंटने से ध्यान को केंद्रित करने में सहायता मिलती है | ईश्वर को लेकर मनुष्य की धारणा स्वभावत या समुदाय है | इसलिए हर व्यक्ति को ईश्वर का जो रूप उसे मोहक लगा दे, उसका ध्यान करना चाहिए – शर्त यही है कि धारणा पवित्र और उत्सुक हो | (हरि, 18-8-1946, पृ. 265)

जिसे यह विश्वास है कि उसके भीतर ईश्वर का वास है, वह सच्ची प्रार्थना कर सकता है | जिसे यह विश्वास नहीं है, उसे प्रार्थना करने की जरूरत नहीं है | ईश्वर उसका बुरा नहीं मानेगा, लेकिन अनुभव से कह सकता हूं कि जो व्यक्ति प्रार्थना नहीं करता, वह निश्चित रूप से घाटे में रहता है |

इस बात से ज्ञान बदलता है कि एक व्यक्ति ईश्वर को साकार मानकर पूजता है और दूसरा, उसे एक शक्ति के रूप में मानकर ? दोनों अपने-अपने दृष्टिकोण के अनुसार ठीक ही करते हैं | यह कोई नहीं जानता और शायद कभी जान भी नहीं पाएगा कि प्रार्थना करने की पूर्णता, सही विधि कीन-सी है | आदर्श हमेशा आदर्श रहेगा | मनुष्य को केवल यह समर्पण रखने की आवश्यकता है कि ईश्वर सारी शक्तियों से भी बड़ी शक्ति है | शेष सभी शक्तियां भौतिक हैं | लेकिन ईश्वर वह परम शक्ति अथवा आत्मा है जो सर्वप्रथमी तथा सर्वसमावेशी है और इसलिए मनुष्य के लिए ज्ञानातीत है | (वही, पृ. 267)
मौन का सामर्थ्य
प्राय: मुझे ऐसा लगा है कि सत्यार्थक को मौनती होना ही चाहिए | मैं मौन के अद्भुत प्रभाव से परिचित हूँ | मैं एक बार दक्षिण अफ्रीका के एक ट्रेपी में गया | दक्षिण ही सुंदर स्थान था | वहां रहने वाले अधिकांश लोग मौन साधे रहे थे | मैं उनके फैदा से इसका प्रयोजन पूरा करने के लिए उन्होंने उत्तर दिया कि यह तो स्पष्ट है – ‘हम दुर्भावल मानव हैं | कई बार हमें यह लगा है कि हम क्या कह रहे हैं | यदि हम अपनी अंतराल की अस्फुट वाणी को सुनाना चाहते हैं, तो हमें अपनी वाणी पर अंकुश लगाना चाहिए | हम बराबर बोलते रहेंगे तो अंत: करण की वाणी सुनाई नहीं देगी' | मैं इस बहुमूल् पाठ के ममक को समझ गया | मैं मौन के रहस्य को जानता हूँ | (यंग, 6-8-1925, पृ. 274-75)

अनुभव ने मुझे सिखाया है कि मौन, सत्यती के आध्यात्मिक अनुशासन का एक अंग है | मनुष्य की यह एक स्वाभाविक दुर्भावलता है कि वह जाने-अनजाने अतिशय विकारत करता है | इस दुर्भावलता पर विजय पाने के लिए मौन आवश्यक है | अल्पभाषी व्यक्ति अपनी वाणी में भाव नहीं बोलते | (प्राथकना, 10-12-1938, पृ. 323-24)

मौन अब मेरे लिए भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों दृष्टियों से आवश्यक हो गया है | उसकी शुरुआत दबाव के अहसास को कम करने के लिए की गई थी | उसके बाद मुझे लेखन के लिए समय की जरूरत पड़ी | लेकिन कुछ समय तक मौन का अभ्यास करने के बाद, मैंने उसके आध्यात्मिक महत्त्व को पहचाना | मैंने मनुष्य का मनुष्य में एकदम से यह विचार की कि मनुष्य का कान ही मेरे लिए इंसान की संगति का सबसे उपयुक्त अवसर हो सकता है | और अब मुझे लगता है कि मैं स्वाभाविक मौन के लिए ही बना हूँ | (हरर, 24-6-1933, पृ. 5)

प्राथ्मनाप्रभु का स्मरण करने और हृदय को शनिमल करने के लिए है और यह मौन रखने हेतु भी की जा सकती है | (हरर, 20-4-1947, पृ. 118)

मैंने विश्वास किया कि मौन प्रार्थना में सबक प्रार्थना से अधिक शक्ति है | अतः मैं अपनी बेबसी में इस विश्वास के साथ निरंतर प्रार्थना करता रहता हूँ कि शुद्ध हृदय से की गई प्रार्थना अवश्य सुनी जाएगी | (यंग, 22-9-1927, पृ. 321)

प्रार्थना की शक्ति
मैं अपना निजी साक्ष्य देते हुए कह सकता हूँ कि हृदय से की गई प्रार्थना कार्यरत और सभी दूसरी बुरी आदतों पर विजय पाने के लिए मनुष्य के पास बराबर शक्तिशाली साधन है | (यंग, 20-12-1928, पृ. 420)
अपने अंतकार को पूरी तरह समाप्त किए बगैर हम अपनी बुराइयों पर विजय नहीं पा सकते | मनुष्य को सही अर्थों में स्वतंत्र करने के लिए, जो उसका सबसे बड़ा अभिभावक है, ईश्वर मूल्य के रूप में आदमी का पूर्ण आत्मसमर्पण मांगता है | एक बार अपनी हस्ती को मिटा देने के बाद, मनुष्य तुरंत अपने आप को प्रणी-मात्र की सेवा में लीन पाता है | यह सेवा उसके आनंद और मनोरंजन का विश्वास बन जाती है | वह एक नया चोला धारण कर लेता है जो ईश्वर की सृष्टि की सेवा में तन-मन लगा देने के लिए सदा तत्पर रहता है | (वही)

हमारे भीतर अच्छाई और बुराई की शक्तियों का संघर्ष निरंतर छिपा रहता है, और जिसे प्रार्थना का सहारा प्राप्त नहीं है, वह बुराई की शक्तियों का शिकार हो जाएगा। प्रार्थना करने वाला व्यक्ति स्वयं शांति का अनुभव करेगा; प्रार्थनामय हृदय के बिना दुनिया के कामकाज करने वाला व्यक्ति स्वयं भी दुखी होगा और सारी दुनिया को दुख देगा...

हमारे दैनिक कार्यकलाप में व्यक्ति, शांति और आत्मसंयम बनाए रखने के लिए प्रार्थना ही एकमात्र साधन है...जिस बात का बुनियादी महत्व है, उसका ध्यान रखिए और बाकी बातें अपने आप सही हो जाएंगी। वर्ग का एक कोण सही कर लीजिए, बाकी कोण अपने आप सही हो जाएंगी। (वंग, 23-1-1930, पृ. 26)

प्रार्थना किसी बुढ़िया का निर्देशक मनोविनोद नहीं है | इसे ठीक से समझा और प्रयूक्त किया जाए तो यह सबसे शक्तिशाली कार्यसाधन है। (हरर, 14-4-1946, पृ. 80)

जब मन प्रभु की भावना से पूरी तरह आप्लादित होता है तो आदमी में किसी के प्रति दुर्भावना या घृणा उत्पन्न नहीं हो सकती और इसके जवाब में शनी भी अपनी शनीत्व छोड़कर निर्मत बन जाता है | मैं इस बात का दावा नहीं करता कि मैं शनीत्वों को मिटने में बदते ने सफल हुआ हूं | पर अनेक मामलों में मेरा यह अनुभव रहा है कि मन में ईश्वरीय शांति का वास हो तो सारी घृणा समाप्त हो जाती है | अंततः प्राचीन काल से विश्व के अनेक उपदेशकों ने इसकी पहुंच की है | मैं इसका पुण्य नहीं लेता | मैं जानता हूं कि यह केवल ईश्वर की कुप्पा का परिणाम है। (हरर, 28-4-1946, पृ. 109)

दुष्ट हृदय को कभी ईश्वर की सर्वशुचिकारी उपस्थिति का अनुभव नहीं हो सकता | (हरर, 29-6-1946, पृ. 209)

ईश्वर हमारी प्रार्थना को हमारी तरह नहीं, अपनी तरह सुनता है | उसके तरीके हम मानवों के तरीकों से अलग हैं | इसलिए वे अलग हैं | प्रार्थना के लिए पहले श्रद्धा आवश्यक है | कोई प्रार्थना व्यर्थ नहीं जाती | वह अन्य दूसरे कृत्यों की भांति ही है | हम देख पाएं या न देख पाएं, उसका फल अवश्य मिलता है, और हृदय से की गई प्रार्थना तथाकथित कृत्यों से कहीं अधिक शक्तिशाली होती है। (वही, पृ. 215)
मेरा हिंदू धर्म व्यावर्तक नहीं है

सर्वसमावेशी

मेरी दृष्टि में, हिंदू धर्म सभी जनता को पूरा करता है। इसकी विशाल छाया में हर तरह के विश्वास को संरक्षण मिल जाता है। (स्वीरा, पृ. 329)

मेरे दृष्टिवानों के अपनी पत्नी के प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकता हूँ, उनके शब्दों में हिंदू धर्म के प्रति भी कर सकता हूँ। वह जिस प्रकार मुझे प्रेरित करती है, संसार की कोई दूसरी स्त्री वैसा नहीं कर सकती। ऐसा नहीं कि उसमें कोई दोष नहीं है, जिले में देख पाता हूँ। उससे भी ज्यादा है। लेकिन उसके साथ मेरा एक अक्षरीय बंधन है। हिंदू धर्म के सारे दोषों और सीमाओं के बावजूद ऐसा ही बंधन में उसके साथ भी महसूस करता हूँ। (यंग, 6-10-1921, पृ. 318)

....हिंदू धर्म व्यावर्तक नहीं है। इसमें दुनिया के सभी पैगंबरों की पूजा के लिए स्थान है। मिशनरी धर्म के सामान्य अर्थ में यह कोई मिशनरी धर्म नहीं है। इसने निस्सदेह अनेक जातियों को अपने में समेट लिया है। पर यह समेटना एक विकासात्मक और सूक्ष्म प्रक्रिया के द्वारा हुआ है। हिंदू धर्म प्रदेश व्यक्ति की अपनी आस्था अथवा धर्म के अनुसार ईश्वर की आराधना करने के लिए कहता है। इसीलिए उसका सभी धर्मों के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व है। (वही)

ज्यों ही मैं समझूंगा कि ईसाई या कोई और धर्म सच्चा है और मुझे उसका प्रचार करने की जरूरत है, दुनिया की कोई ताकत मुझे ऐसा करने से नहीं रोक पाएगी। जहां भय है। वहां हिंदू धर्म नहीं है। पर यह है। इसमें ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने ने।

मैं जानता हूँ कि जब मैं यह कहता हूँ कि मैं सनातनी हिंदू हूँ तो मेरे मित्र चक्कर में पड़ जाते हैं, क्योंकि सनातनों के साथ जो चीजें जुड़ी हुई हैं, वे उन्हें मुझमें नहीं देख पाते। यह इसलिए है कि पक्का हिंदू होने के बावजूद मेरे धर्म में ईसाई, मुस्लिम और जरदुश्ती उपदेशों के लिए भी जगह है। और इसी कारण लोगों को मेरा हिंदू एक संकलित वस्तु प्रतीत होता है। कुछ लोगों के ने मुझे संकलनवादी तक कह दिया है। किसी को
संकलनवादी कहने का अर्थ तो यह हुआ कि उसका अपना कोई धर्म ही नहीं है, जबकि मेरा धर्म एक व्यापक धर्म है जो ईसाइयों का – प्लाइमाउथ ब्रदर्स तक का – विरोधी नहीं है, यहां तक कि वह कट्टर-से-कट्टर मसूलमान का भी विरोध नहीं करता | मेरा धर्म व्यापकतम सहिष्णुता पर आधारित है | मैं किसी व्यक्ति को उसके कट्टर कारामों की वजह से बुरा-भला कहने को तैयार नहीं हूँ, क्योंकि मैं उसे उसके नजरिए से देखने की कोशिश करता हूं | मेरे यह व्यापक धर्म ही मुझे जीवित रखता है | मैं जानता हूँ कि कुछ लोगों के लिए यह बड़ी उलझन-भरी स्थिति है, पर उलझन उन्हें, मुझे नहीं | (यंग, 22-12-1927, पृ. 426)

हिंदू धर्म की सबसे बड़ी खुबी यह है कि वह सभी प्राणी-जगत (केवल मानव ही नहीं, अपितु सभी सचेतन प्राणियों) को एक मानता है अर्थात यह वंश को सभी प्राणी एक विश्वास्ता की सृप्ति है, उसे चाहे ईश्वर कहिए, गॉड कहिए या परमेश्वर कहिए | (हरर, 26-12-1936, पृ. 365)

मेरा हिंदुत्व फिरकावाराना नहीं है | इसमें इस्लाम, ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म, और जड़सन धर्म की उकृहत बातें शामिल हैं – सत्य मेरा धर्म है और अहिंसा उसकी प्राप्ति का एकमात्र रास्ता | तलवार के सिद्धांत को मैंने हमेशा के लिए ठुकरा दिया है | (हरर, 30-4-1938, पृ. 99)

हिंदू धर्म और अहिंसा

अहिंसा का संदेश देने वाला हिंदू धर्म मेरी दृष्टि में संसार का सबसे शानदार धर्म है – वैसे ही जैसे मेरी पत्नी मेरे लिए संसार की सबसे सुंदर स्त्री है – लेकिन दूसरे लोग अपने धर्म के बारे में भी यही बात सोच सकते हैं | (यंग, 19-1-1928, पृ. 22)

भारतीय संस्कृति के लिए हिंदू धर्म की सबसे विशिष्ट और महत्तम देन अहिंसा का सिद्धांत है | पिछले तीन हजार वर्षों से भी अधिक समय से इससे देश के इतिहास को एक निष्क्रिय झुकाव दिया है और आज भी यह भारत के करोड़ों लोगों के जीवन को अनुप्राणित कर रहा है | अहिंसा का सिद्धांत एक विकासशील सिद्धांत है, इसका संदेश आज भी क्रियाशील है | अहिंसा का उपयोग हमारे लोगों के मन में इस तरह बस गया है कि भारत में सशस्त्र क्रांति होना लगभग असंभव है | भले ही कुछ लोग ऐसा समझते हैं, पर यह इससे नहीं है कि एक प्रजाति के रूप में हम शारीरिक दृष्टि से दुर्भल हैं – किसी का गोली मारने के लिए शारीरिक शक्ति की उतनी जरूरत नहीं होती जितनी कि राक्षसी वृत्ति की – बल्कि इससे नहीं है कि यहां के लोगों में अहिंसा की परंपरा ने गहरी जड़ें जमा ली है | (हरर, 24-3-1929, पृ. 95)

गीता मेरी माता

मैं यह नहीं मानता कि गीता अच्छे उद्देश्य की पूर्ति के लिए हिंसा करने का उपादेश देती है | गीता मुख्तार यह हमारे हदों में चलने वाले दंड का वर्णन है | इसमें भगवान कृष्ण ने एक ऐतिहासिक प्रतीक का सहारा लेते हुए इस बात
की शिक्षा दी है कि मनुष्य को अपना कर्त्तव्य करने के लिए अपने जीवन की बलि देने में भी संकुच्च नहीं करना चाहिए। इसमें परिणाम की चिंता किए बिना कर्म करने पर व्यक्ति देश की मर्यादाओं में बंधे हम मानव अपने अलावा और किसी के क़्लों को नियंत्रित करने में असमर्थ हैं। गीता भलाई और बुद्ध की शक्तियों का अंतर स्पष्ट करती है और उनके असामंजस्य को उजागर करती है। (यंग, 25-8-1920, पृ. 2)

यद्यपि मैं ईसाई धर्म की बहुत-सी बातों का प्रश्न सक्ता हूँ, परंतु मैं बुद्धवादी ईसाई धर्म के साथ अपना तात्त्विक स्वभाव नहीं कर पाता। हिंदू धर्म से जैसा मैंने समझा है, मेरी आत्मा को पूरी तरह उत्तम करता है, मेरे प्राणों को आप्लावित कर देता है, और ‘भागवद्गीता’ तथा उपनिषदों से जो तसल्ली मुझे मिलती है, वह मैं ‘समर्पण ओन द माउट’ में भी नहीं पाता। ऐसी बात नहीं है कि मैं उसमें प्रस्तुत आदर्श की कद्र नहीं करता, ऐसी बात नहीं है कि ‘समर्पण ओन द माउट’ के कितिय प्रकृत्य उपदेशों ने मेरे उपर गहरी छाप नहीं छोड़ी है, लेकिन मुझे यह मानना होगा कि, जब मेरे मुझे घेरता है, जब निराशा मेरे सम्मुख आ खड़ी होती है, जब क्षितिज पर प्रकाश की एक किरण भी दिखाई नहीं देतीं, तब मैं ‘भागवद्गीता’ की शरण में जाता हूँ और उसका कोई-न-कोई शीघ्रक मुझे संतत्त्वना दे जाता है, और मेरे पास विवेचन के बीच भी तुरंत मुझे झटके आते हैं। मेरे जीवन में अनेक बार निर्दिष्ट घटाने और वह दो। मेरे उपर कोई प्रत्यक्ष या अमित प्रभाव नहीं छोड़ा है तो मैं इसका श्रेय ‘भागवद्गीता’ के उपदेशों की देता हूँ। (यंग, 6-8-1925, पृ. 274)

जहां तक मेरा संबंध है, जब मैं अपने आपको कठिनाइयों में घिरा पाता हूँ, मैं दोड़कर गीता माता की शरण में जा पहुँचता हूँ और आज तक ऐसी कभी नहीं हुआ कि वह मुझे सांत्त्वना न दे सकी हो। अपने दैनिक जीवन में गीता को जिस प्रकार मैंने समझा, उसे आघात लोग जान पाएं तो जिन्हें आज गीता से तसल्ली मिल रही है, उन्हें शायद और भी ज्ञाता सत्त्ली मिलने लगे। (यंग, 13-11-1930, पृ. 1)

आज गीता मेरी बाइबिल या कुरान ही नहीं बल्कि उनसे भी ज्यादा है — वह मेरी मां है। मुझे जन्म देने वाली अपनी लौकिक मां को मैं बहुत पहले ही खो चुका हूँ। लेकिन इस शाश्वत माता ने तभी से मेरे निकट रहकर मेरी मां के अभाव को पूरी तरह दूर किया है। यह कभी नहीं बदली है, उसमें मुझे कभी निराशा नहीं किया है। जब मैं कठिनाईया या कठ भी होता हूँ तो इसी की छाती से जा लगाता हूँ। (हारे, 24-8-1934, पृ. 222)

बुद्ध का मार्ग

मेरा सुबिधात्मक मत है कि बुद्ध के उपदेशों के महत्वपूर्ण अंश अब हिंदू धर्म के अनिवार्य अंग बन गए हैं। हिंदू भारत के लिए अब अपने कदम पीछे ले जाना और गीताम बुद्ध द्वारा हिंदू धर्म में किए गए महान सुधार को नकारना असंभव है। अपने भारी बलिदान, महान लागू और जीवन की निर्दोष शुक्ला से बुद्ध ने हिंदू धर्म पर अमित छाप छोड़ी है जिसके लिए हिंदू धर्म इस महान उपदेशक का सदा ऋषि रहेगा...बुद्ध धर्म का जो स्वरूप
आज है, उसके जिस अंश को हिंदू धर्म ने आत्मसात नहीं किया, वह बुद्ध के जीवन और उनके उपदेशों का मूलभूत अंश नहीं था।

मेरा निष्ठित मत है कि बौद्ध धर्म, या कहने भए कि बुद्ध के उपदेशों का भारत में पूरी तरह पत्ता लगाया हुआ | इसके अतिरिक्त और कुछ ही भी नहीं सकता था, क्योंकि बुद्ध सबसे एक श्रेष्ठ हिंदू थे | हिंदू धर्म के सर्वत्र तत्त्व तथा उनमें कूट-कूट कर भरे हुए थे और उन्होंने कतिपय ऐसे उपदेशों को नया जीवन दिया जो वेदों में, झाड़-झंडियों के नीचे दबे पड़े थे | उनकी महान हिंदू आत्मा ने वेदों के स्वर्णिम सत्य को आवृत्ति करते समय के जजाल को काटके | उन्होंने बुद्ध के कुछ शब्दों को ऐसा अर्थ दिया जो उनके समय के लोगों के लिए सर्वथा नया था | बुद्ध को अपने धर्म के प्रचार के लिए भारत की भूमि के अनुकूल अनुकूल लगी | बुद्ध जहां भी गए, उनके पास एकत्र होने वाले लोग अहिंसा नहीं, हिंदू थे जो स्वयं वैदिक ज्ञान से संपर्क थे | लेकिन बुद्ध के उपदेश, उनके बुद्ध के हृदय की भांति ही सर्वनाशी तथा सर्वसाधारण थे और इसी कारण उन्हें उनके देहावस्थान के बाद भी सारी दुनिया पर छाए रहे | और, बुद्ध का अनुयायी कहलाना का जोखिम उठाते हुए थे भी, मैं कहना चाहूँगा कि बुद्ध की यह सफलता हिंदू धर्म की विजय थी | बुद्ध ने हिंदू धर्म को कभी नहीं ठुकराया, उन्होंने उसके आधार को व्यापक बना दिया | उन्होंने उसे नवजीवन दिया और एक नयी व्याख्या दी | लेकिन.... मैं यह निवेदन करना चाहूँगा कि बुद्ध के उपदेशों को कहीं भी पूरी तरह आत्मसात नहीं किया जा सका, चाहे वह श्रीलंका हो, बमाक हो, या चीन हो अथवा तिब्बत हो....(यंग, 24-11-1927, पृ. 392-93)

विश्व का नैतिक शासन

मैने असंख्य बार लोगों को यह कहते सुना है, और बौद्ध धर्म की भावना को अभिव्यक्त करने का दावा करने वाली किताबों में भी पढ़ा है, कि बुद्ध को ईश्वर में विश्वास नहीं था | मेरी विन्दुक सम्पति में, यह धारणा बुद्ध के उपदेशों के मूल का ही खंडन करती है.... यह भाव इससे ह्रास हुआ है कि बुद्ध ने अपने समय में ईश्वर के नाम पर चलने वाली निरक्ष बातों को ठुकरा दिया था, जो कि सर्वथा उचित था | बुद्ध ने निष्क्रिय इस धारणा को नकारा था कि ईश्वर जैसी हस्तियों द्वारा से प्रेरित हो सकती है, अपने कृत्यों के लिए पश्चाताप कर सकती है, और लौकिक राजाओं की तरह, प्रलोभियों तथा उक्कों से प्रभावित हो सकती है, और उसके कोई प्रयोग पात्र भी हो सकते हैं | उनकी समूची आत्मा ने इस विश्वास के विरुद्ध अत्यंत रोषपूर्ण आवाज उठाई कि ईश्वर की प्रसन्नता करने के लिए पशुओं – जो उसकी ही सृष्टि हैं – की बलि देने की आवश्यकता है | इस प्रकार, बुद्ध ने ईश्वर को उसके समय पर पुन: प्रतिष्ठित किया और उस अनुधिकारी को उखाड़ केंद्रा जो कुछ समय के लिए ईश्वर के शुभ सिंहासन पर जा बैठा था | उन्होंने विश्व के नैतिक शासन के शासनात्मक तथा अपरिवर्तनीय अस्तित्व पर बल देते हुए उनकी पुन:स्थापना की | उन्होंने वेदिक धर्म कहा कि ईश्वर स्वयं नियम है |
ईश्वर के नियम शाश्वत तथा अपरिवर्तनीय हैं और उन्हें स्वयं ईश्वर से पृथक नहीं किया जा सकता | यह ईश्वर की परिपूर्णता की ही अनिवार्य शर्त है | और इसलिए यह भारी भ्रम उत्पन्न हुआ कि बुद्ध को ईश्वर में विश्वास नहीं था और वे केवल नैतिक नियम में विश्वास करते थे | ईश्वर के बारे में इस भावी के कारण ही ‘निर्वाण’ जैसे महान शब्द के विषय में भ्रम उत्पन्न हुआ | ‘निर्वाण’ निश्चय ही पूर्ण लोप नहीं है | जहां तक में बुद्ध के जीवन के तत्त्व को समझ पाया हूं, हमारे अंदर जो कुछ ही नहीं है, पापमय है, भ्रष्ट है, विवृत है और विकारीत है, उसका पूर्ण लोप ‘निर्वाण’ है | ‘निर्वाण’ कब्र की अंधेरी और निर्जीव निष्ठात्क नहीं है, बल्कि ऐसी आत्मा की जीती-जागती शांति और सुख है जो अपने प्रति सचेतन है और जानती है कि उसने ईश्वर के हृदय में स्थान पाया है |

ईश्वर की अपने शाश्वत स्थान पर पुनः प्रशतश्शधता ही, मेरी शवनय में यह एक बड़ी अजीब शट्प्पणी है शजस के अनुयायी अपनी उन्नति को अपनी भौतिक संपत्ति से माप रहे हैं | (वहीं, पृ. 393) 

पश्चम में ईसाई धर्म

मेरा यह दृढ़ मत है कि यूरोप आज गॉड या ईसाई धर्म की भावना का प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि शैतान की भावना का प्रतिनिधित्व करता है | और, जब शैतान अपने होठों पर ईश्वर का नाम लेकर आता है तो वह अत्यधिक सफल होता है | यूरोप आज नाम के लिए ही ईसाई है | वास्तव में, वह मैमन की पूजा कर रहा है | ‘धन्यवाद के लिए स्वतंत्र और स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक संग्राम में शुरुआत करता है‘ | ईसा मसीह ने यह दृढ़ अवधारणा किया था कि मैमन के संदेह के संस्कार के लिए वे वहां न ईसाई थे, वह अन्यथा वह ईसाई नहीं होता | मैं तो ईसा के संदेह का यही अर्थ लेता हुं | (हरर, 17-11-1946, पृ. 405) 

ईसाई धर्म जब पश्चम में गया तो उसका रूप ही विकृत हो गया | मुझे यह कहने का यही अर्थ लेते हुं | (हरर, 20-4-1947, पृ. 116) 

मैं अपने ईसाई भाइयों से कहता हूं... वे अपने ईसाई धर्म को पश्चम की व्याख्या के अनुसार न लें | वहां, जैसा कि हम मानते हैं, वे एक-दूसरे से इस तरह लड़ते हैं जिस तरह पहले कभी नहीं लड़ते थे | आखिर ईसा मसीह एशियावासी थे – उन्हें लंबे अरबी लिबास पहने दिखाया जाता है | वह विनो की नैतिकता | मैं आशा करता हूं कि भारत के ईसाई अपने जीवन में बाइबिल के उस ईसा को उतारेंगे जो सूली पर चढ़ गया था, उस ईसा को नहीं जिसकी व्याख्या अपनी रक्षकीय उंगलियों से पश्चम द्वारा की जा रही है | पश्चम की आलोचना करने की मेरी कोई कहना नहीं है | मैं पश्चम के अनेक गुणों से अवगत हूं और उनकी कद्र करता हूं | लेकिन मैं यह कहने के
लिए मजबूर हूँ कि, व्यक्तियों की बात छोड़ दें तो, पश्चिम में एशिया के ईसा को गलत ढंग से पेश किया जाता है।
(हरि, 7-9-1947, पृ. 315)

ईसाई धर्म का अप्रत्यक्ष प्रभाव जीवन में हिंदूत्व को प्रखर करने वाला सिद्ध हुआ... लेकिन ईसाई धर्म के भारत पर प्रभाव को अंकने के लिए हमें अपने बीच रहने वाले औसत ईसाई के जीवन और हम पर पड़ने वाले उसके प्रभाव को देखना होगा। मुझे अपनी यह राय जाहिर करने हुए दुख हो रहा है कि यह प्रभाव बड़ा ही खराब है।
(यंग, 31-7-1924, पृ. 254)

ईसा का व्यक्तित्व

मैं बताऊं कि मुझे ऐतिहासिक ईसा में कभी दिलचस्पी नहीं रही है। यदि कोई यह सिद्ध कर दे कि ईसा नाम का व्यक्तित्व कभी पैदा ही नहीं हुआ और झूठा उसके लेखन का कोरी कल्पना है, तो मैं ऐसा कभी ग्लास्पलों के आख्यान उसके लेखन की कोरी कल्पना है, तो मैं ऐसा कभी पैदा ही नहीं हुआ। शजतना शक कृष्ण, राम, मोहम्मद जरदुश्त में था। इसी प्रकार, मैं बाइशबल के प्रत्येक को ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता, वैसे जैसे वेदों और कुरान के प्रत्येक को ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता। इन ग्रंथों को समग्र रूप में लिया जाए तो ये नियम नि:प्रेरणा का परिणाम हैं, लेकिन अलग-अलग पढ़ने पर बहुत-सी बातों में मुझे प्रेरणा के दर्शन नहीं होते। बाइशबल मेरी दृष्टि में वैसा ही हरमनंध है जैसे कि गीता और कुरान।
(हरि, 6-3-1937, पृ. 25)

मैं सांप्रदायिक अर्थ में ईसाई होने का दावा नहीं कर सकता। ईसा में उतना ही देवत्व था जितना कि कृष्ण, राम, मोहम्मद या जरदुश्त में था। इसी प्रकार, मैं बाइशबल के प्रत्येक शब्द को ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता, वैसे ही जैसे वे देखने और कुरान के प्रत्येक शब्द को ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता। इन ग्रंथों को समग्र रूप में लिया जाए तो ये नियम नि:प्रेरणा का परिणाम हैं, लेकिन अलग-अलग पढ़ने पर बहुत-सी बातों में मुझे प्रेरणा के दर्शन नहीं होते। बाइशबल मेरी दृष्टि में वैसा ही हरमनंध है जैसे कि गीता और कुरान।
(हरि, 7-1-1939, पृ. 417)

मेरे लिए ईसा का अर्थ

मेरे लिए ईसा का... क्या अर्थ है? मेरा मानना है कि ईसा मानव जाति के महान उपदेशकों में से एक थे। उनके अनुयायी उन्हें परमात्मा से उत्पन्न एकमात्र (बिग्रॉन) पुत्र मानते हैं। मेरे इस विश्वास को स्वीकार करने और उनके अनुयायी उन्हें परमात्मा से उत्पन्न एकमात्र (बिग्रॉन) पुत्र मानते हैं। मेरे इस विश्वास को स्वीकार करने या न करने से क्या मेरे जीवन पर ईसा के प्रभाव में कोई फरक पड़ जाएगा? क्या मैं ईसा के उपदेश और सिद्धांत के वैभव से वंचित कर दिया जाऊंगा? मैं ऐसा नहीं मानता।
(मारे, अक्टू, 1941, पृ. 406-07)

मेरी धारणा है कि 'बिग्रॉन' शब्द से अभिव्यक्त आध्यात्मिक जन्म से है। दूसरे शब्दों में, मेरी धारणा है कि ईसा का अपना जीवन परमात्मा के साथ उसके नैकट्टे की कुंजी है। क्या मैं ईसा के प्रभाव और सिद्धांत के वैभव से वंचित कर दिया जाऊंगा? मैं ईसा के प्रभाव और सिद्धांत के वैभव से वंचित कर दिया जाऊंगा। मैं ऐसा नहीं मानता।
मेरा विश्वास है कि दुनिया के विभिन्न धर्मों के गुणों को आंकना असंभव है और इसका प्रयास करना अनावश्यक तथा हानिकारक भी है। लेकिन, मेरे विचार से, प्रत्येक धर्म की प्रेरक शक्ति एक ही है: मनुष्य के जीवन का उद्देश्य और उसे सोदेश्य बनाने की कामना। और चूकि इस के जीवन में वह श्रेणी और पारिपार्श्विकता है जिसका मैं संकेत कर चुका हूँ, अत: मेरा विश्वास है कि ईश्वर केवल ईसाई धर्म के लिए ही नहीं अपेक्षा सारी दुनिया, सभी जातियों और सभी लोगों के लिए है - चाहे वे अपने पूर्वजों से प्राप्त किसी भी धर्म, नाम या सिद्धांत का अनुगमन करते हुए अपना काम, धर्म का प्रचार या ईश्वर की आराधना करते हों। (वही)

भारत में बड़ी अजानता और अंधविश्वास है। लेकिन धर्म के प्रति प्रवृत्ति अर्थात ईश्वर में आस्था हमारी रंग-रंग में बसी है। (हरि, 17-11-1946, पृ. 405)

यदि मोहम्मद आज भारत आते तो वे अपने बहुत-से तथाकथित अनुयायियों को लाग देंगे और मुझे सच्चे मुसलमान मानकर अंगीकार करते | इसी प्रकार, ईश्वर मसीह भी मुझे सच्चे ईसाई मानकर अंगीकार करते | (वही)

“हम किस प्रकार मनुष्य को ईश्वर या ईसा अथवा मोहम्मद के उपदेशों की ओर पुनः अभिमुख कर सकते हैं?”

इसका उत्तर मैं ईसा द्वारा अपने एक अनुयायी को दिया गए उत्तर को दोहराते हुए देना चाहूँगा: “केवल ईश्वर, ईश्वर मत पुकारो, स्वर्ग में बैठे मेरे पिता की इच्छानुसार कार्य करो।” यह वाक्य तुम पर, मुझ पर और अन्य सभी पर लगू होता है। यदि हमें जीते-जागते भगवान में आस्था है तो सब कुछ ठीक हो जाएगा। मुझे आशा है कि मैं अपनी मृत्यु के दिन इस आस्था को नहीं ल्या गूँगा। अपनी असफलताओं और तुलना, जिनसे मैं भलीभली अवगत हूँ, के बावजूद ईश्वर में मेरी आस्था दिनों दिन गहरी होती जा रही है। (वही)

यदि ऐसा न होता तो मैं अपनी वही इलाज करता जो मैंने उन स्थियों को बताया था जिन्हें अपनी इज्जत जाने की आशंका थी और सहायता अथवा पतलान की कोई संभावना नहीं थी - इलाज था, आत्महत्या। (वही)

इस्लाम शांति का धर्म है

मैं इस्लाम को भी ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म और हिंदू धर्म की तरह शांति का धर्म मानता हूँ। इनमें शांति पर दिया गए बल की मात्रा में अंतर जरूर है, पर इन सभी धर्मों का ध्येय शांति ही है। (यह, 20-1-1927, पृ. 21)

भारत की राष्ट्रीय संस्कृति को इस्लाम की विशिष्ट देन ईश्वर के एकत्व में पक्का विश्वास और अपने धर्मावलियों के बीच बंधुत्व के सत्य की व्यवहारिक प्रयुक्ति है। मैं इस्लाम के दो विशिष्ट देन मानता हूँ। कारण यह है कि हिंदू धर्म में बंधुत्व की भावना का बहुत अधिक दार्शनिकीकरण हो गया है। इसी प्रकार, प्रत्यह दार्शनिक हिंदू धर्म में ईश्वर एक है, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि व्यवहारिक हिंदू धर्म में इस पर उत्तम दृष्टा से बल नहीं दिया जाता जितना कि इस्लाम में दिया जाता है। (यह, 21-3-1929, पृ. 95)
भौतिक बल-प्रयोग

कुरान में धर्म-परिवर्तन के लिए बल का प्रयोग करने की कोई बात कहीं नहीं की गई है | पवित्र किताब में तो स्पष्टतम भाषा में कहा गया है कि ‘धर्म में दबाव के लिए कोई स्थान नहीं है’ | पैगंबर का सारा जीवन ही धर्म में कोई दबाव डालने का खंडन है | मेरी जानकारी में किसी मुसलमान ने जबरन मुसलमान बनाये जाने को उचित नहीं ठहराया है | धर्म-प्रचार में भौतिक बल का आश्रय लिया गया हो तो इस्लाम विश्व धर्म नहीं रह जाएगा | (यंग, 29-9-1921, पृ. 307)

मैंने कहा है कि इस्लाम के मानने वाले तलवार का इस्तेमाल बहुत ज्यादा करते हैं | पर यह कुरान के उपदेश के कारण नहीं है | मेरी राय में इसका कारण वह पर्यावरण है जिसमें इस्लाम का जन्म हुआ | ईसाई धर्म का इतिहास इसलिए रक्तरंशजत नहीं है कि ईसा में कोई दोष था, बल्कि इसलिए कि जिस पर्यावरण में ईसाई धर्म फैला, वह ईसा के उदात्त उपदेशों को ग्रहण करने योग्य नहीं था | (यंग, 20-1-1927, पृ. 21)

कुरान

मैंने कुरान का एक से अधिक बार पारायण किया है | मेरा धर्म मुझे सिखाता है, बल्कि बाध्य करता है, कि मैं विश्व के सभी धर्मों की अच्छी बातों को आत्मसात करूं | (हरर, 28-10-1939, पृ. 317)

मैं निष्क्रिय ही इस्लाम को ईश्वर-प्रेरित धर्म मानता हूं और इसीलिए पवित्र कुरान को प्रेरित पुस्तक तथा हजरत मुहम्मद को पैगंबरों में से एक मानता हूं | (हरर, 13-7-1940, पृ. 207)

मैं इस निष्क्रिय पर पहुंचा हूं कि कुरान के उपदेश बुनियादी तौर पर अहिंसा के पक्ष में हैं | कुरान में कहा गया है कि हिंसा से अहिंसा बेहतर है | अहिंसा की कर्तव्य बताया गया है, हिंसा की इजाज़त जरूरत पड़ने पर ही दी गई है | (वही, पृ. 193)
18. धर्म और राजनीति

जीवन एक अखंड इकाई
मेरा मानना है कि मानव मन या मानव समाज सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक नाम के अलग-अलग और स्वतंत्र चौकटों में बंटा हुआ नहीं है | ये सभी एक-दूसरे के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं | (यंग, 2-3-1922, पृ. 131)

चूँकि मानव जीवन एक अविभाजित इकाई है, इसलिए इसके विभिन्न पक्षों के बीच विभाजक रेखा कभी नहीं खींची जा सकती – नीतिशास्त्र और राजनीति के बीच भी नहीं | जो व्यापारी धोखाधड़ी करके धन कमाता है वह अगर यह समझे कि इस काली कमाई के एक अंश का तथाकथित धार्मिक प्रयोजनों पर खर्च करके वह अपने पापों से मुक्त हो जाएगा तो वह खांद को ही धोखा देता है | मनुष्य का दैवीदन जीवन उसके आध्यात्मिक स्वरूप से कभी अलग नहीं किया जा सकता | दोनों एक-दूसरे के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं | (हरर, 30-3-1947, पृ. 85)

मेरे भीतर बैठे राजनीतिज्ञ ने मेरे एक भी निर्णय को मुख्य रूप से प्रभावित नहीं किया है, और यदि मैं राजनीति में भाग लेता हूँ तो वह केवल इस कारण जो अत्यधिकरण ने सर्व की तुलना की भांति हमें जकड़ लिया है और व्यक्ति कितनी भी कोशिश करे, इससे मुक्त नहीं हो सकता | इसलिए मैं इस सर्व के साथ संघर्ष करना चाहता हूँ, जैसा कि मैं कमोबे चालन तथा में साथ, जानकर 1894 से और अनजाने, जैसा कि मैं अब समझा है, होश संभालने की उम्मीद से चाहता हूँ | चूँकि मैं अपने चाहुं और व्यवस्था गरजते तूफान के बीच शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहता हूँ, इसलिए निर्वाचन स्वार्थवश, मैं राजनीति में धर्म का प्रविष्ट करके अपने और अपने मित्रों के साथ प्रयोग करना आ रहा हूँ | (यंग, 12-5-1920, पृ. 2)

सत्य की सार्वभौम एवं सर्वव्यापी भावना का साक्षात दर्शन पाने के लिए मनुष्य को उच्चतम प्राणी के प्रति भी अपने जैसा ही प्रेम करना आना चाहिए | और जो व्यक्ति इसमें सफल होना चाहता है, वह स्वयं को जीवन के किस क्षेत्र से बाहर नहीं देख सकता | यही कारण है कि सत्य के प्रति मेरी भक्ति ने मुझे राजनीति के क्षेत्र में ला खड़ा किया है, और मैं बिना किसी हिंचक के, कितु परम विविधता के साथ, यह कहना चाहता हूँ कि जो लोग यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई वास्ता नहीं है, वे धर्म का अर्थ नहीं जानते | (पृ. 370-71)

मैं जब तक संपूर्ण मानवता के साथ अपना तात्त्विक स्थापित न कर लूँ तब तक यह नहीं कह सकता कि मैं धार्मिक जीवन व्यतीत कर रहा हूँ, और यह मैं तब तक नहीं कर सकता जब तक कि राजनीति में भाग न लूँ | आज मनुष्य के कार्यक्रम का संपूर्ण विस्तार एक अखंड इकाई है | आप सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शुद्ध धार्मिक कायों को अलग-अलग चौकटों में नहीं बाँध सकते | मैं नान्द क्रिया के अतिरिक्त और कोई धर्म
मेरी दृष्टि में, धर्म से विचित्र राजनीति केवल गंदगी है, जो सर्वथा लाज्य है | राजनीति का सरोकार राष्ट्रों से है और जिस चीज़ का सरोकार राष्ट्रों के कल्याण से हो, वह धार्मिक प्रकृति वाले अर्थात ईश्वर और सत्य की खाब करने वाले व्यक्ति के सरोकार की चीज़ अवश्य होनी चाहिए | मेरी दृष्टि में, ईश्वर और सत्य एक-दूसरे के पर्याय हैं और यदि कोई मुझे समझा दे कि ईश्वर असत्य अथवा यंत्रणा का ईश्वर है तो मैं उसकी आराधना करने से इंकार कर दूंगा | इसलिए राजनीति में भी हमें स्वर्ग के सामग्री की स्थापना करनी है | (यंग, 18-6-1925, पृ. 214)

मैं राजनीति को अपने जीवन की गहनतम बातों से पृथक नहीं कर सकता जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि मेरी राजनीति भ्रष्ट नहीं है और वह अहिंसा तथा सत्य के साथ अटूट बंधन में बंधी है | (यंग, 1-10-1931, पृ. 281)

मैं धर्म के बिना एक पल नहीं रह सकता | मेरे बहुत-से राजनीतिक मित्र मुझसे निराश हैं, क्योंकि उनका कहना है कि मेरी राजनीति भी धर्म से ब्युत्पन्न है | और वे ठीक कहते हैं | मेरी राजनीति और मेरे अन्य सभी कार्यकलाप मेरे धर्म से ब्युत्पन्न हैं | (यंग, 10-2-1940, पृ. 445)

करोड़ों लोगों का जीवन मेरी राजनीति है जिससे मैं, अपने जीवन के ध्येय तथा ईश्वर को छोड़ दिना, मुक्त नहीं हो सकता | इस बात की पर्याप्त संभावना है कि (15 अगस्त 1947 के बाद, जबकि भारत स्वतंत्र हो जाएगा) मेरी राजनीति एक नया मोड़ ले ले | किंतु यह परिस्थितियों पर निर्भर करेगा | (यंग, 17-8-1947, पृ. 281)
मेरा यह कथन निस्सदेह एक अर्थ में सही है कि मैं अपने धर्म की अपने देश से ज्यादा प्यार करता हूँ और इसलिए मैं हिंदू पहले हूँ और राष्ट्रभक्त बाद में | इससे मैं अच्छे-से-अच्छे राष्ट्रभक्त से कम राष्ट्रभक्त नहीं बन जाता | मेरा आशय केवल यह है कि मेरे देश के हित और मेरे धर्म के हित एक ही हैं | इसी प्रकार, जब मैं कहता हूँ कि मैं अपनी मुक्ति को सर्वाधिक, यहां तक कि भारत की मुक्ति से भी अधिक महत्व देता हूँ तो उसका आशय यह नहीं होता कि मेरी निजी मुक्ति के लिए भारत की राजनीतिक अथवा किसी अन्य प्रकार की मुक्ति की बलि देनी होगी | इसका अनिवार्य आशय यह होता है कि ये दोनों सहगामी हैं | (यंग, 23-2-1922, पृ. 123)

धर्म राष्ट्रीयता की कसौटी नहीं है बल्कि व्यक्ति और उसके ईश्वर के बीच का निजी मामला है | राष्ट्रीयता के अर्थ में, हम सभी सर्वप्रथम भारतीय हैं और सबसे अंत में भी भारतीय ही हैं, भले हमारा मान्य धर्म कोई हो | (हरि, 29-6-1947, पृ. 215)
मूर्तिपूजा का स्वरूप

मैं मूर्तिपूजा में अविश्वास नहीं करता | मूर्ति मेरे अंदर अश्वभाव नहीं जगाती, पर मैं समझता हूं कि मूर्तिपूजा मानव प्रकृति का एक अंग है | हम प्रतीकों के पीछे भागते हैं | आदमी किसी अन्य धार्मिक भावों की अपेक्षा में ज्यादा शांत अनुभव नहीं करता | मूर्तियां आराधना में सहायक होती हैं | कोई हिंदू मूर्ति को भगवान नहीं समझता | मैं मूर्तिपूजा को पाप नहीं मानता। (यंग, 6-10-1921, पृ. 318)

मैं सच्चे अथों में मूर्तिपूजक भी हूं और मूर्तिभंजक भी | मैं मूर्तिपूजा में निहित भावना की बजारता हूं | यह मानवजाति के उत्थान में एक बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है | मैं इस अर्थ में मूर्तिभंजक हूं कि मैं कट्टर रूपी उस सूक्ष्म मूर्तिपूजा का खंडन करता हूं जो देवता की आराधना के अपने तरीके के अलावा अन्य किसी तरीके को निःसार मानती है | मूर्तिपूजा का यह सूक्ष्म रूप उस स्थूल रूप से ज्यादा तीखा और कुशल हैं जो पत्थर या सोने के छोटे-से खंड को देवता मानकर उसे पूजन करता है। (यंग, 28-8-1924, पृ. 284)

मैं मूर्तिपूजा का समाध्यक भी हूं और विरोधी भी | जब मूर्तिपूजा का हास होकर यह झूठे विश्वासों और सिद्धांतों से आच्छादित हो जाता है तो उसे एक जबरदस्त सामाजिक बुराई मानकर इसका विरोध करना आवश्यक हो जाता है | दूसरी ओर, अपने आदर्श को एक स्वतंत्र आकृति में निहित कर उसे पूजना मानव स्वभाव है और यह भक्ति का एक मूल्यवान साधन भी है | इस प्रकार हम इस किसी पुतलक को पवित्र मानकर उसे आदर देते हैं तो यह भी प्रतिमा-पूजा ही है | जब हम पवित्रता अथवा आदर की भावना से मंदिर या मस्जिद में जाते हैं तो हम एक प्रकार की प्रतिमा-पूजा ही करते हैं | मुझे इन सबमें कोई हाशन नहीं देती | बल्कि इसी सीमित समझ होने के कारण मनुष्य शायद ही कोई और तरीका अपना सके | इसीलिए वृक्षपूजा में कोई बुनियादी बुराई या हाशन भी नहीं है। (यंग, 26-9-1929, पृ. 320)

लेकिन यह आराधकों द्वारा वृक्षों के सामने किए गए वायदों और प्रार्थनाओं से बिलकुल अलग बात है | स्वाध्यूपूर्ति के लिए किए गए वायदों और प्रार्थनाओं को – वे गिरजों, मस्जिदों, मंदिरों, दरगाहों या दुर्गों के सम्पूर्ण आदि कहीं भी की गई हों – प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए | प्रतिमा-पूजा और स्वाध्यूपूर्ति किए गए निवेदनों या वायदों में कोई कारण-कार्य संबंध नहीं है | निजी स्वाध्यूपूर्ति की गई प्रार्थना बुरी चीज़ है, चाहे वह मूर्ति के सामने की जाए या निराकार परमेश्वर से।
लेकिन इससे कोई यह न समझे कि मैं व्यापक स्तर पर वृक्षपूजा की वकालत कर रहा हूँ | मैं वृक्षपूजा का पक्ष इसलिए नहीं ले रहा कि मैं इसे आराधना का आवश्यक साधन मानता हूँ, बल्कि इसलिए कि मैं यह मानता हूँ कि परमात्मा अपने आपको इस विश्व में असंख्य रूपों में प्रकट करता है और उसका प्रत्येक रूप मेरे लिए सहज प्राप्त है | (हरिद्वार, 1926, पृ. 386)

जहां तक मूर्तिपूजा का सवाल है, इसे किसी-न-किसी रूप में अपनाए बगैर आपका काम नहीं चल सकता | मुसलमान मस्जिद को खुदा का घर मानकर उनसे रक्षा के लिए जान की बाजी लगा देता है? ईसाई गिरजे में क्यों जाता है और बाइबिल का नाम लेकर शाप क्यों लेता है? ऐसा नहीं कि मुझे इसमें कोई आपत्ति है | पर मस्जिदों और मकबरों के निर्माण के लिए बेहिसाब पैसा देना मूर्तिपूजा नहीं तो और क्या है? और रोमन कैथोलिक जब बीबी महाराज के साथ मूर्तियों के सवाल उठाते हैं, तो क्या करते हैं? या पत्रों से बनी अथवा केनवस या शीशों पर चित्रित ईसाई संतों या अन्य काल्पनिक आकृतियों को नमन करते हैं? तो वह क्या है? हम जब ऐसा करते हैं तो हम उस पत्थर की पूजा नहीं करते बल्कि पत्थर या धातु से बनी प्रतिमाओं - वे कितनी भी अनगढ़ हों - के माध्यम से परमात्मा की पूजा करते हैं | (हरिद्वार, 13-3-1937, पृ. 39)

पूजास्थल

मे मंदिरों के अस्तित्व को पाप या अंधविश्वास नहीं मानता | सार्वजनिक पूजा का कोई प्रकार और सार्वजनिक पूजास्थल संभवत: मानवीय आवश्यकताएं हैं | मंदिरों में मूर्तियाँ हो या न हों, यह आराधकों के स्वभाव या रूढ़ि पर निर्भर करता है | मे मूर्तियों से पुक्त मंदिरों या रोमन कैथोलिक गिरजों को अनिवार्य: बुरा या अंधविश्वास और केवल मूर्तियाँ न होने के कारण मस्जिद या प्रोटेस्टेंट गिरजे को अच्छा या अंधविश्वासमुक्त नहीं मानता | क्रूस या ग्रेन्ड जैसे प्रतीक को भी सरलतापूर्वक मूर्तिपूजा जैसा और इसलिए, अंधविश्वासपुक्त माना जा सकता है | दूसरी ओर, बल-गोपाल कृष्ण अथवा कुमारी महाराज की प्रतिमाओं की पूजा उदात्त और अंधविश्वास से मुक्त मानी जा सकती है | यह सब आराधक के हृदय की प्रवृत्ति पर निर्भर करता है | (यंग, 5-11-1925, पृ. 378)

मेरी दृष्टि में, पूजास्थल केवल ईंट-गारा नहीं है | ये यथार्थ की छाया है | प्रत्येक नष्ट किए गए गिरजे, मस्जिद और मंदिर के स्थान पर सैकड़ों गिरजे, मस्जिद और मंदिर खड़े हो गए हैं | (यंग, 4-11-1926, पृ. 386)

मुझे ऐसे किसी धर्म की जानकारी नहीं है जिससे अपने ईश्वर का घर बनाता बिना काम चला लिया हो या चला रहा हो - इसे चाहे मंदिर कहें, मस्जिद कहें, गिरजा कहें, सिनेमाघर कहें, या आयारी कहें | न यह कहा जा सकता है कि ईसा सहित किसी बड़े सुधारक ने मंदिरों को नष्ट किया हो या उनका पूरी तरह लागा किया हो | इनमें से भी ने मंदिरों से और उनके साथ ही, समाज से भ्रष्टाचार दूर करने का प्रयास किया... मैंने वर्षों से मंदिरों में जाना बंद कर दिया है | लेकिन मैं नहीं समझता कि इसके कारण मैं पहले से बेहतर इसान बन गया हूँ | मेरी मां जब जाने
योग्य स्थिति में होती थी तो कभी मंदिर जाने में चूक नहीं करती थी | संभवतः उसकी आस्था मुझसे अधिक दट्टी थी. \(\text{यद्यपि मंदिर नहीं जाता} | (\text{हरर, 11-3-1933, पृ. 5})\)

मंदिर या मस्जिद या गिरजे....ईश्वर के इन विविध वास्तवात्मकों में में कोई भेद नहीं मानता | ये आस्था के अनुरूप बनाए गए हैं | ये ऊस अहस्त तक किसी-न-किसी प्रकार पहुंचने की मनुष्य की लालसा की अभिव्यक्ति हैं | (\text{हरर, 18-3-1933, पृ. 6})

अपने भीतर ईश्वर की सजीव उपस्थिति का बोध जगाने के लिए मंदिर जाने की जरूरत नहीं है | (\text{हरर, 29-6-1947, पृ. 209})

पत्थरों की इमारतों के बजाय हमारे शरीर ज्यादा वास्तविक मंदिर हैं | सामूहिक आराधना का सर्वोत्तम स्थान खुले आकाश का वितान और धरती मां का आसन है | (\text{हरर, 4-1-1948, पृ. 498})
20. छूआचूट का अभिशाप

में फिर से जन्म लेना नहीं चाहता | लेकिन मेरा पुनर्जन्म हो ही हो | तो मैं अचूंक झांको ना बाहर तकिए मैं उनके दुखों, अपराधों और अपमानों का भागीदार बनकर सिख और उन्हें इस दयनीय स्थिति से छुटकारा दिलाने का प्रयास कर सकूं | इसलिए मेरी प्रार्थना है कि यदि मेरा पुनर्जन्म हो तो ब्रह्माण, क्षत्रिय, डेस्ट्रय और शून्य के रूप में न हो बल्कि अतिशयुद्ध के रूप में हो | (यंग, 4-5-1921, पृ. 144)

अपनी पत्नी के साथ बंधन में बंधने से बहुत पहले ही मैं ‘छूआचूट’ उन्मूलन के कार्य के साथ बंध गया था | हमारे संयुक्त जीवन में दो ऐसे अवसर आए जब अचूंको द्रोह और पत्नी के साथ रहने के बीच एक चीज़ को चुनना था, और मैं अचूंको द्रोह को ही चुनना | लेकिन मैं अपनी पत्नी का आभारी हं जिसके संकट को टूल दिया | मेरे आश्रम में, जो मेरा परिवार है, कई अचूंक हैं और एक प्यारी नवीन लड़की तो मेरी अपनी बेटी की तरह ही रहती है | (यंग, 5-11-1931, पृ. 341)

लोगों के प्रति प्रेम ने 'छूआचूट की समस्या मेरे बाल्काल में ही उठा दी थी | मेरी मां ने कहा,'इस बच्चे को मत छूना, यह अचूंक है' | 'क्यों न छूना?' मैंने पलट्कर पूछा और उसी दिन से मेरा विद्रोह आरंभ हो गया | (हरर, 24-12-1938, पृ. 393)

यदि हम भारत की जनसंख्या के पांचवें शहस्से को सदा के लिए पराधीन रखना चाहें और उन्हें राष्ट्रीय संस्कृति की उपलब्धियों से जान-बूझकर बचित रखें, तो खराब्य बेकार है | हम इस महान शुद्धि आंदोलन में भाग लेना चाहें है, लेकिन उसकी सृष्टि के सवाल युद्ध संस्कृति का मानवता के अधिकार देना नहीं चाहते | यदि हम स्वयं अमानवीय हैं तो दूसरों की अमानवीयता से मुक्ति पाने के लिए ईश्वर से याचना कैसे कर सकते हैं? (यंग, 25-5-1921, पृ. 165)

धर्म के पवित्र नाम पर मनुष्य को उल्लेखित करते जनाना दघ्ध हदभध के अलावा और कुछ नहीं है | (यंग, 11-3-1926, पृ. 95)

हिंदू धर्म के सुधार और उसके वास्तविक संस्करण के लिए, छूआचूट को मिटाना सबसे आवश्यक बात है... छूआचूट को मिटाना...एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है | (यंग, 6-1-1927, पृ. 2)

अगर छूआचूट कायम रहती है तो हिंदू धर्म की सख्त हो जाना चाहिए | (हरर, 28-9-1947, पृ. 349)

मैं तो यहां तक कहूंगा कि छूआचूट कायम रहने से हिंदू धर्म का सख्त हो जाना अच्छा है | (यंग, 26-11-1931, पृ. 372)
वणाकश्रम धमक

वणाकश्रम धमक पृथ्वी पर मनुष्य के जीवन-ध्येय को परिभाषित करता है | मनुष्य धन-संपदा जुटाने और आजीविका के विभिन्न साधनों की खोज करते रहने के लिए बारंबर देश धारण नहीं करता, वह इसलिए देश धारण करता है कि अपनी ऊर्जा का एक-एक अनु अपने सशक्त को जानने में खर्च कर दे | अत: उसे, अपनी प्राणस्थल के निर्मल, अपने पूर्वजों के व्यवसाय तक ही अपने को सीमित रखना चाहिए | वणाकश्रम धमक यही है – न इससे ज्यादा, न कुछ कम | ( यंग, 27-10-1927, पृ. 357 )

पैठकः व्यवसायों पर आधारित वर्ण-व्यवस्था में मुझे विश्वास है | चार वर्ण चार सार्वभौम व्यवसायों से जुड़े हैं – ज्ञान देना, असह्यों की रक्षा करना, कृषि और वाणिज्य कर्म, तथा शारीरिक क्रम द्वारा सेवाएं प्रदान करना | ये चार व्यवसाय सारी मानवजाति में समान रूप से विद्यमान हैं | लेकिन हिंदू धर्म ने इन्हें हमारे अस्तित्व का नियम मानते हुए, सामाजिक संबंधों और व्यवहार के नियमों के लिए इन्हें इस्तेमाल किया है | गुरुत्वाकर्षण का नियम हम सभी को प्रभावित करता है, हम उसके अस्तित्व से परिवर्तित हो या न हों लेकिन जो वैज्ञानिक इस नियम से अवगत हैं, उन्होंने इसकी प्रयुक्ति से ऐसी-ऐसी चीजें निकाली है कि दुनिया हेरत में है | इसी प्रकार, हिंदू धर्म ने वर्ण के नियम की खोज और प्रयुक्ति से सारी दुनिया को आक्षेपचकित कर दिया | जब हिंदू जड़ता के शिकार थे
तब वर्ण-व्यवस्था के दूरस्थरूप के फलस्वरूप असंख्य जातियां पैदा हो गई और अंतर्जातीय विवाहों तथा अंतर्जातीय भोजों को लेकर अनावश्यक और हानिकारक प्रतिबंध लगा दिये गए। वर्ण-व्यवस्था का इन प्रतिबंधों से कोई लेना-देना नहीं है। विभिन्न वर्णों के लोग परस्पर विवाह कर सकते हैं और एक-दूसरे के साथ बेठकर भोजन कर सकते हैं। ये प्रतिबंध शुद्धता और सफाई के हित में आवश्यक हो सकते हैं, पर यदि कोई ब्राह्मण लड़का शुद्ध लड़की से विवाह करता है तब इससे वर्ण के नियम का कोई उल्लंघन नहीं होता। (यंग, 4-6-1931, पृ. 129)

आज ब्राह्मण और क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के वल नाम की शचब्लप्पयां हैं। जहां तक मैं समझता हूँ, वर्ण-व्यवस्था पूरी गड़बड़ हो गई है और अच्छा हो, यदि सभी हिंदू स्वाभाविक रुप से अपने को शुद्ध कहना आरंभ कर दें। ब्राह्मणवाद की सच्चाई को साबित करने और सच्चे वर्ण-धर्म को पुनःप्रतिष्ठित करने का यही एकमात्र उपाय है। (हरर, 25-3-1933, पृ. 3)

मैं मानता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति इस संसार में कुछ सहज प्रवृत्तियों लेकर पैदा होता है। प्रत्येक व्यक्ति कुछ निश्चित कमियां भी लेकर पैदा होता है जिन्हें वह दूर नहीं कर सकता। इन कमियों का सावधानी के साथ प्रेक्षण करने के फलस्वरूप ही वर्ण का नियम प्रतिपादित किया गया। इसने कार्य-क्षेत्र निश्चित कर दिया। लोगों की सहज कमियों को स्वीकार करते हुए भी, वर्ण के नियम में ऊंच-नीच का कोई भेद नहीं माना गया है, बल्कि इसने एक और तो प्रत्येक व्यक्ति को उसके परिश्रम का फल मिले, इसकी गारंटी है। उसे अपने पड़ोशियों पर दबाव डालने से रोका। इस महान नियम को विकृत कर दिया गया है और यह बदनाम हो चुका है। लेकिन मुझे पक्का विश्वास है कि जब इस नियम के निहितार्थों को पूरी तरह समझ कर इसे लागू किया जाएगा तभी आदर्श सामाजिक व्यवस्था विकसित हो सकेगी। (मारर, अक्टू. 1935, पृ. 413)

अंतर्जातीय विवाह और अंतर्जातीय भोज

पद्धति वर्णश्रम में अंतर्जातीय विवाह और अंतर्जातीय भोज पर कोई पाबंदी नहीं है, पर इसमें कोई बाध्यता नाही है और इसमें कोई वाध्यता लागू नहीं की जा सकती। आदमी कहां शादी करे और किसके साथ भोजन करे, इसका फैसला करने के लिए, उसे आजाद छोड़ देना चाहिए। (हरू, 16-11-1935, पृ. 316)

जाति

मैं चार विवाहजनों को ही मौलिक, स्वाभाविक और आवश्यक मानता हूँ। असंख्य उपजातियों कभी-कभी सुविधाजनक हैं; पर प्रायः ये अवरोधक सिद्ध होती हैं। इनका विवेक जितनी जल्दी हो जाए, उतना ही अच्छा है। (यंग, 8-12-1920, पृ. 3)
आर्थिक दृष्टि से, एक जमाने में जाति का बड़ा महत्व था | इससे पैतृक कोशल की रक्षा होती थी और प्रतियोगिता मयादित रहती थी | यह कंगाली को दूर रखने का सर्वोच्च उपाय था | इसमें व्यस्त श्रेणियों के सभी लाभ थे | यद्यपि इससे साहस अथवा आविष्कार को बढ़ावा नहीं मिलता था, पर यह भी नहीं कहा जा सकता कि यह उनके मार्ग में बाधक थी....

ऐतिहासिक दृष्टि से, जाति-व्यवस्था को भारतीय समाज की प्रयोगशाला में मनुष्य का प्रयोग या सामाजिक संरचना कहा जा सकता है | यदि हम इसे सकल सिद्ध कर सके तो इस संसार को उसकी काया पत्तने, निर्मम प्रतियोगिता को समाप्त करने और धनलोकपता तथा लालच से उत्पन्न होने वाले सामाजिक विघटन को रोकने के सर्वोच्च साधन के रूप में पेश कर सकते हैं |( यंग, 5-1-1921, पृ. 2)

जाति और वर्ण

...मैंने प्राय: कहा है कि मैं जाति का जो आधुनिक अर्थ है, उसमें विश्वास नहीं करता | यह अनावश्यक है और प्रगति के लिए बाधक है | न मैं मनुष्यों के बीच असमानताओं में विश्वास करता हूँ | हम सब बिलकुल बराबर हैं | लेकिन समानता आमाओं की है, शारीरिक की नहीं | अतः यह एक मानसिक स्थिति है | हमें समानता हासिल करनी है | एक व्यक्ति का स्वयं को दूसरे से श्रेष्ठ समझना ईश्वर और मानव के प्रति पाप है | अतः जाति, जहां तक वह ऊंच-नीच का भेद करती है, एक दुराई है |( यंग, 4-6-1931, पृ. 129)

जाति-भेद ने हमारे अंदर इतनी गहरी जड़ें जमा ली हैं कि उससे भारत के मुसलमान, ईसाई और अन्य धर्मावलंबी भी कुप्रभावित हो गए हैं | वैसे, जातिगत अवरोध कमोबेश मात्रा में दुनिया के अन्य भागों में भी पाए जाते हैं | इसका अर्थ यह है कि इस बीमारी से पूरी मानव जाति प्रस्त है | इस सब अर्थ में धर्म की स्थापना करने के दृष्टि से, जाति का जाति-भेद करना आवश्यक है |( यंग, 5-1-1921, पृ. 2)

धर्म की दृष्टि में सभी मनुष्य समान रूप से हैं | विश्व, बुद्धि या धन के कारण कोई व्यक्ति अपने को उनसे श्रेष्ठ होने का दावा नहीं कर सकता जिनके पास इनका अभाव है | यदि कोई व्यक्ति सब्जियों के शुचिकरी तत्त्व और अनुशासन से आपत्तिजैन और धनलोकपता का काम नहीं करते हैं तो उसे चाहिए कि अपने से कम भारतीय लोगों के साथ अपने लाभों को बांटने का दायित्व निभाए | इस दृष्टि से, अपनी वर्तमान पतित अवस्था में, सच्चे धर्म का तकाजा है कि हम सब स्वेच्छा से अशतूद्र बन जाएं |

हमें स्वशंस्त का अपने धन का स्वामी नहीं, बल्कि न्यासी मानना चाहिए और अपनी सेवा के उचित परिश्रम से अधिक को अपने पास न रखते हुए शेष को समाज-सेवा पर लगा देना चाहिए | इस व्यवस्था में, न कोई अमीर होगा, न कोई गरीब | सभी धर्म समकक्ष मानें जाएंगे | धर्म, जाति या आर्थिक शिकायतों को लेकर उठने वाले तमाम झगड़े विश्व-शांति को भंग करना बंद कर देंगे |( हिं, 19-9-1945)
5. अहिंसा

21. अहिंसा का दिव्य संदेश

मानव जाति के नियम

मैं स्वप्न नहीं हूँ | मैं स्वयं को एक व्यावहारिक आदर्शवादी मानता हूँ | अहिंसा का धर्म केवल ऋषियों और संतों के लिए नहीं है | यह सामान्य लोगों के लिए भी है | अहिंसा उसी प्रकार से मानवों का नियम है जिस प्रकार से हिंसा पशुओं का नियम है | पशु की आत्मा सुप्तस्तथा में होती है और वह केवल शारीरिक शक्ति के नियम को ही जानता है | मानव की गरीबा एक उच्चतर नियम – आत्मा के बल का नियम – के पालन की अपेक्षा करती है....

जिन ऋषियों ने हिंसा के बीच अहिंसा की खोज की, वे न्यूटन से अशधक प्रशतभाली थे | वे एक वेश्लंग्ट्न से भी बड़े योद्दा थे | शक्षों के प्रयोग का ज्ञान बहुत ही है | इसी आत्मा के कारण मैं यह आशा लगाए बैठा हूं कि एक-न-एक दिन वह युद्ध स्वयं की दया पर छोड़ देता है | इसी आत्मा के कारण मैं यह आशा लगाए बैठा हूं कि एक-न-एक दिन वह मुझे ऐसा मागक दिखाएगा जिस पर चलने का आग्रह मैं अपने देखावासियों से विश्वासपूर्वक कर सकूंगा | (यंग, 11-8-1920, पृ. 3)

मेरी अहिंसा

मैं केवल एक मार्ग जानता हूँ – अहिंसा का मार्ग | हिंसा का मार्ग मेरी प्रकृति के विरुद्ध है | मैं हिंसा का पाठ पढ़ने वाली शक्ति को बढ़ाना नहीं चाहता....मेरी आत्मा मुझे अश्वस्थता करती है कि ईश्वर बेशहारों का सहारा है, और वह संकट में सहायता टूट कर रहा है | इसी आत्मा के कारण मैं यह आशा लगाए बैठा हूं कि एक-न-एक दिन वह मुझे ऐसा मार्ग दिखाएगा जिस पर चलने का आग्रह मैं अपने देखावासियों से विश्वासपूर्वक कर सकूंगा | (यंग, 11-10-1928, पृ. 342)

मैं जीवन भर एक 'जुआरी' रहा हूँ | सत्य का शोध करने के अपने उद्देश में और अहिंसा में अपनी आत्मा के अन्वरत अनुगमन में, मैं बेशहारक बढ़े-से-बढ़े दांव लगाए हैं | इसमें मुझे कदाचित गलशतयां भी हुई हैं, लेकिन ये वैसी ही हैं जैसे कि किसी भी भुगाया या किसी भी देश के बढ़े-से-बढ़े वैज्ञानिकों से होती हैं | (यंग, 20-2-1930, पृ. 61)

मैंने अहिंसा के पाठ अपनी पत्नी से पढ़ा, जब मैंने उसे अपनी इच्छा के सामने झुकाने की कोशिश की | एक ओर, मेरी इच्छा के दूढ़ प्रतिरोध, और दूसरी ओर, मेरी मूर्खता को दुपचाप सहने की उसकी पीड़ा की देखकर अंत: मुझे अपने ऊपर बड़ी लज्जा आई, और मुझे अपनी इस मूर्खतापूर्ण धारणा से मुक्ति मिली कि मैं उस पर शासन करने के लिए ही पैदा हुआ हूँ | अंत में, वह मेरी अहिंसा की शक्षिका बन गई | (हरर, 24-12-1938, पृ. 394)

मेरे जीवन का मार्गदर्शक सिद्धांत निष्क्रियता नहीं, अपितु अधिकतम सक्रियता है | (हरर, 28-6-1942, पृ. 201)
मुझे यह सोचकर अपने आपको झूठी शाबाशी....नहीं देनी चाहिए और न मिठाई...वह विश्वास करने देना चाहिए कि मैंने अपने व्यवहार में किसी अशोकवत्त और उल्लेखनीय अहिंसा का प्रदर्शन किया है | मैं सिर्फ इतना दावा कर सकता हूँ कि मैं बिना रुके उस दिशा में अपनी नाव खेलता जा रहा हूँ | (हरिय 11-1-1948, पृ. 504)

अहिंसा का स्वरूप

1. अहिंसा मानव जाति का नियम है, और यह पशुबल से कहीं अधिक महान तथा श्रेष्ठ है |
2. यह अंतत: उनके लिए उपयोगी नहीं है जिन्हें प्रेम के ईश्वर में जीवी-जागती आस्था नहीं है |
3. अहिंसा मनुष्य के स्वभाविक और आत्मनिर्भर की पूरी तरह रक्षा करती है, लेकिन जानन-जायदाद या चल संपत्ति के स्वभावित को सदा संरक्षण प्रदान नहीं करती, हालांकि अहिंसा का आत्मनिर्भर पालन संपत्ति की रक्षा के लिए सशक्त आदमी रखने की अपेक्षा ज्यादा सुरक्षा प्रदान करता है | अहिंसा की प्रकृति ही ऐसी है कि वह गलत तरीके से कमाए गए लाभों और अनैश्वर्य कृत्यों की रक्षा करने में कोई मदद नहीं करती |
4. अहिंसा के मार्ग पर चलने वाले व्यक्तियों और राष्ट्रों को अपनी प्रतिष्ठा के अलावा बाकी सब कुछ बलिदान करने (राष्ट्रों को अपने अंतिम नागरिक की बलि तक) के लिए तैयार रहना चाहिए | अत: अहिंसा का अन्य देशों पर अधिकार कर बैठने अथवा बलिदान करने (राष्ट्रों के अंतिम नागरिक की बलि तक) के लिए शक्ति के प्रयोग पर आधारित होता है, के साथ कोई मेल नहीं है |
5. अहिंसा ऐसी शक्ति है जिसे सब साथ सकते हैं -- बच्चे, युवा स्त्री-पुरुष या प्रौढ़ व्यक्ति | शारीरिक यहीं है कि उन्हें प्रेम के ईश्वर में जीवित आस्था हो और वे समस्त मानव जाति को एकसमान प्रेम करते हों | अहिंसा को जीवन का नियम मानने पर यह केवल व्यक्ति के इक्का-दुक्का कृत्यों पर ही लागू न हो बल्कि उसके समूह व्यक्तित्व को अनुप्राप्त करने वाली ही चाहिए |
6. यह मानना बहुत गलत है कि अहिंसा का नियम व्यक्तियों के लिए ठोक है पर मानवसमूहों के लिए कारगर नहीं है | (हरिय, 5-9-1936, पृ. 236)

अहिंसा और सत्य का मार्ग तलवार की धार के समान तीक्ष्ण है | इसका अनुसरण हमारे दैनिक भोजन से भी अधिक महत्वपूर्ण है | सही ढंग से लिया जाए तो भोजन देह की रक्षा करता है, सही ढंग से अमल में लाई जाए तो अहिंसा आत्मा की रक्षा करती है | यदि वे भोजन नपी-तुली मात्रा में और निश्चित अंतरालों पर ही लिया जा सकता है; अहिंसा तो आत्मा का भोजन है, निरंतर लेना पड़ता है | इसमें उक्ति ऐसी कोई चीज नहीं है | मुझे हर पल इस बात के प्रति सचेत रहना पड़ता है कि मैं अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा हूँ और उस लक्ष्य के प्रति अनुप्रेषणत करने वाले हैं।
परिर्वतनरहित पंथ

अहिंसा के मार्ग का पहला कदम यह है कि हम अपने दैनिक जीवन में परस्पर सच्चाई, विनिमय, सहिष्णुता और प्रेरणमय दयालुता का व्यवहार करें | अंग्रेजी में कहावत है कि ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है | नीतियों तो बदल सकती हैं और बदलती हैं | किंतु अहिंसा का पंथ अपरिवर्तनीय है | अहिंसा का अनुमान उस समय करना आवश्यक है जब तुम्हारे चारों ओर हिंसा का नंगा नाच हो रहा हो | अहिंसक व्यक्ति के साथ अहिंसा का व्यवहार करना कोई बड़ी बात नहीं है | वस्तुतः यह कहना कठिन है कि इस व्यवहार को अहिंसा कहा भी जा सकता है या नहीं | लेकिन अहिंसा जब हिंसा के मुकाबले खड़ी होती है, तब दोनों का फर्क पता चलता है | ऐसा करना तब तक संभव नहीं है जब तक कि हम निरंतर सचेत, सत्कर्म और प्रयासरत न रहें | (हरि, 2-4-1938, पृ. 64)

केवल अहिंसा ही वैध है | हिंसा कभी वैध नहीं हो सकती – यहां विधि से हमारा आशय मानव-निर्मित विधि से नहीं अपितु प्रकृति द्वारा मानव के लिए निर्मित विधि से है | (हरि, 27-10-1946, पृ. 369)

ईश्वर में आस्था

ईश्वर में जीती-जागती आस्था न हो तो अहिंसा में जीती-जागती आस्था हो नहीं सकती | अहिंसक व्यक्ति ईश्वर की शक्ति एवं अनुभव के बिना कुछ भी नहीं कर सकता | इसके बिना वह क्रोधरहित, भयरहित और प्रतिकाररहित होकर मरने का साहस नहीं कर पाएगा | यह साहस इस विश्वास से उत्पत्ति होता है कि ईश्वर सबके हदयों में विराजमान है और यह कि ईश्वर की उपत्यका में भय करने की कोई जरूरत नहीं है | ईश्वर की सर्वव्यापकता के ज्ञान का अर्थ है, उन व्यक्तियों के जीवन के प्रति भी आदर भाव जिन्हें तुम्हारा विरोधी कहा जा सकता है.... (हरि, 18-6-1938, पृ. 152)

अहिंसा उच्चतम कौटि का सचिव बन है | यह आसमन अर्थतः हमारे अंदर बैठे ईश्वर की शक्ति है | अपूर्ण मनुष्य उस तब की पूरी तरह नहीं पकड़ सकता – वह उसके संपूर्ण तेज़ को सहन नहीं कर पाएगा, किंतु उसका अत्यल्य अंश भी हमारे अंदर सचिव हो जाए तो उसका अद्भुत परिणाम निकल सकते हैं | सूर्य सारे विश्व को अपनी जीवनदारी ऊष्मा से भर देता है, पर अगर कोई उसके बहुत निकट जाए तो वह उसे जला कर राख कर देगा | ईश्वर के साथ भी यही बात है | हम अहिंसा की जितनी सिद्धि करते जाते हैं, ईश्वर तुल्य होते जाते हैं, पर हम कभी पूरी तरह ईश्वर नहीं बन सकते | (हरि, 12-11-1938, पृ. 326)

तथा यह है कि अहिंसा उस तरह काम नहीं करती जिस तरह हिंसा करती है | यह उलटे तरीके से काम करती है | हथियारबंद आदमी स्वभावतया अपने हथियारों पर भरोसा करता है | जो व्यक्ति जान-बुझकर निहित है, वह अद्भुत बल पर भरोसा करता है, जिसे कवियों ने ईश्वर किंतु वैज्ञानिकों ने ‘अज्ञात’ कहा है | लेकिन जो ‘अज्ञात’ है,
वह अस्तित्व में ही न हो, यह जरूरी नहीं है | ईश्वर ज्ञात और अज्ञात, सभी बलों से श्रेष्ठ बल है | उस परम बल के सहारे के बिना अहिंसा का कोई मूल्य नहीं है, उसे कुड़े में फेंक देना चाहिए | (हरी, 28-6-1942, पृ. 201)

अपने भीतर ईश्वर की जीती-जागती उपस्थिति का बोध निस्संदेह पहली शारी है |(हरी, 29-6-1947, पृ. 209)

धार्मिक आधार

मेरे हिंदू होने के दावे को मानने से कुछ लोगों ने इसलिए इकार किया है कि मैं अहिंसा के आत्यंतिक स्वरूप में विश्वास करता हूं और उसका पक्ष लेता हूं | उनका कहना है कि मैं छवबेश में एक ईसाई हूं | मुझे पूरी संजीवनी के साथ यह भी बताया गया है कि मैं गीता को विश्वद अहिंसा का उपदेश देता, इसलिए उस महत्व का अंदर मेरी यात्रा से वे बात कर देना मुश्किल लगता है | अमी देवी हिंदू मित्र मुझे बताते हैं कि गीता के अनुसार, किन्हीं विशेष परिस्थितियों में लोगों का वध कर देना मुश्किल करता है | अभी उस दिन एक परम विद्वान उनके गीता की व्याख्या को तिरस्कारपूर्वक अस्वीकार कर दिया और कहा कि गीता के उन कठिन परिस्थितियों का सम्भावना का कोई आधार नहीं है जो मानते हैं कि गीता में अत्यंत और बुराई के शारीक दंड की चर्चा है और वह हमें बिना हिचक और बिना लिहाज, अपने भंडार की बुराई का उल्लेख करने का उपदेश देती है |

मैं अहिंसा के विरुद्ध इन सम्मानों का भौतिक उलेख इसलिए कर रहा हूं क्योंकि मेरे द्वारा प्रस्तुत समाधान को समझने के लिए यह पहले इन सम्मानों को समझना जरूरी है....

मुझे बिना किसी मुलाकात के खारिज कर दीजिए | मेरा धर्म पूर्णतया मेरे स्वामी और मेरे भीतर की बात है | अगर मैं हिंदू हूं तो समस्त हिंदू जनता द्वारा लागे जाने के बावजूद मैं हिंदू हूं हूँ रहूँगा | लेकिन मैं जोर देकर कहता हूं कि अहिंसा सभी धर्मों की तरह है |(यंग, 29-5-1924, पृ. 175)

अहिंसा का पात सभी धर्मों में मौजूद है, लेकिन मैं बड़े चाव से यह मानता हूं कि संभवतः भारत ही ऐसा देश है जिसमें अहिंसा के आचरण को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया गया है | अनगिनत संतों ने तपश्चयाक में अपने प्राणों का उत्साह कर दिया, यहां तक कि कवियों ने कल्पना की कि उनके बलदंड से हिमालय पवित्र होकर हिमशक्त हो गए | लेकिन आज अहिंसा का यह आचरण लूक ही है गया है | यह जरूरी है कि हम क्रोध का जवाब प्रेम से और हिंसा का जवाब अहिंसा से देने के शाश्त्र नियम को फिर से जीवित करें, और यह वीज राजा जनक और रामचंद्र की भूमिसे ज्यादा आसानी से और कहां की जा सकती है ? (हरी, 30-3-1947, पृ. 36)

हिंदू धर्म की अद्वितीय देन

अहिंसा की बात सभी धर्मों में है, लेकिन इसे सर्वोच्च अभिज्ञता और प्रयुक्ति हिंदू धर्म में मिली है (मे जैन और बौद्ध धर्मों को हिंदू धर्म से अलग नहीं मानता) |
हिंदू धर्म केवल समग्र मानवजाति के एकत्व में ही विश्वास नहीं करता, अपितु यह समस्त प्राणिजगत को एक मानता है | मेरी राय में, गोपूजा लोकपक्षी के विकास में हिंदू धर्म का अद्वितीय योगदान है | यह समस्त प्राणिजगत के एकत्व और उसकी पवित्रता में विश्वास का प्रत्यक्ष परिणाम है | वर्णश्रम के नियम की खोज भी सत्य की अथक सही को होना चाहिए है | (यंग, 20-10-1927, पृ. 352)

मुझसे यह भी पूछा गया है कि मैंने हिंदू धर्म में अहिंसा कहां से खोद शनकाली? अहिंसा हिंदू धर्म में है, ईसाई धर्म में है, और इस्लाम भी है | आप मुझसे सहमत हो या न हों, मेरा यह प्रस्ताव करता हूँ, उसका प्रचार करूँ | मुझे यह भी पक्का धमक में अशहंसा तो आज भी शहंसा का कायम नहीं करेंगे | उनका कहना है ये हैं अहिंसाके समस्त प्राप्तियों का प्रमाण उपलब्ध है | मैंने अनेक मुसलमानों से सुना है वे कुरान में अहिंसा के प्रयोग को समर्पित करते हैं | (हरी, 27-4-1947, पृ. 126)

कुरान और अहिंसा
[बारी साहब ने] मुझे भरोसा दिलाया है कि पवित्र कुरान में सत्याग्रह का पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है | इस कुरान की इस व्यक्ति से सहमत हूँ कि यदयके किसी विश्वस्थिति में हिंसा का सहारा लेने की इजाजत है, पर खुदा को संयम ज्ञाता प्रकार है, और यही प्रस्ताव का नियम है | यह सत्याग्रह है, हिंसा मानव दुर्भिक्षण का प्रति एक रियायत है, सत्याग्रह एक कर्तव्य है | व्यावहारिक दृष्टि से भी ही शकसी है तो हिंसा कोई भलाई नहीं पहुंचा सकती, बल्कि भरोसाब नुकसान ही पहुंचा सकती है | (यंग, 14-5-1919, 'कम्युनल यूशनटी' में उद्धृत, पृ. 985)

कुछ मुसलमानों के माथे में है कि मुसलमान विश्वास हिंदु अहिंसा का समर्थन करते हैं कि उनके कहने है कि मुसलमानों की त्रिशंका में जित्नी जरूरी अहिंसा है, उतनी ही जरूरी हिंसा भी है | इनमें यह उसका प्रयोग किया जाए, यह पर्याप्तियों पर निर्भर करता है | दोनों की वैधता का औपचारिक सिद्ध करने के लिए कुरान के प्रमाण की आवश्यकता नहीं है | संसार ने पूर्ण से इस मार्ग का अनुसरण किया है | संसार में विश्वास हिंसा जैसी कोई चीज नहीं है | इसमें प्रतिष्ठासे सहिष्नुता को श्रेष्ठ बताया गया है | इसलाम्स शब्द का अर्थ ही है 'शांति' जिसका मतलब है अहिंसा | बादशाह खान ने, जो पक्ष मुसलमान है और अपनी नमाज या रमजान के पूर्व तरह पाबंद है और अहिंसा को शत-प्रतिशत प्राप्त माना है | यह कहना बेकार है कि वे अपने धर्म के पक्ष की तरह हैं, मैं जल्दी-भोजन स्वीकार करता हूँ मैं भी नहीं हूँ | यदि हमारे कार्यकर्ताओं में सहमत है तो वह सिद्धांत का नहीं है, मात्रा का है | लेकिन, पवित्र कुरान में अहिंसा के प्रतिपादन का मेरा तर्क अहिंसा की मेरी 'थीसिस' का अनिवार्य अंग नहीं है, वह तो एक क्षेत्र पक्ष है | (हरी, 7-10-1939, पृ. 296)
मामला आहार का नहीं

अहिंसा केवल आहारविज्ञान का मामला नहीं है, यह उससे आगे की चीज है | आदमी क्या खाता-पीता है, इसका उत्तर मूल नहीं है; महत्व उसके पीछे जो आमतौर और आमसंध कहता है, उसका है | अपने भोजन की वस्तुओं के चुनाव में जितना अधिक संयम बरतना चाहें, शोक से बरतिए | संयम प्रशंसनीय है, जरूरी भी, लेकिन यह अहिंसा के केवल हालिये को ही छोड़ता है | यह संभव है कि आहार के मामले में डटकर आजादी बरतने वाला व्यक्ति भी अहिंसा की मूर्ति हो, और यदि उसका हृदय प्रेम से अपने भोजन की वस्तुओं के चुनाव में शांत सावधानी बरतने चाहें, इसका उतना महत्व नहीं है; महत्व उसके पीछे जो आत्म त्याग और आत्म संयम है, उसका है | अपने सज्जन के साथ एक-दूसरे को उसका साधन का दर्द दिया जाता है और उसके पास भी नहीं फटका है और वह एक घृणित कर्मना आदमी है | (यंग, 6-9-1928, पृ. 300-01)

सत्य का मार्ग

अहिंसा के प्रति मेरा प्रेम सभी लोगों के अथवा अलोगों के प्रति मेरे प्रेम के साथ की जा सकती है जो मेरी दृष्टि में अहिंसा का समानार्थक है; केवल अहिंसा के माध्यम से ही मैं सत्य को देख और उस तक पहुंच सकता हूँ | (यंग, 20-02-1930, पृ. 61)

....अहिंसा के बिना सत्य का शोध और उसकी प्राप्ति असंभव है | अहिंसा और सत्य एक-दूसरे से इस प्रकार गुंधे हुए हैं कि उन्हें पृथक करना प्राय: असंभव है | वे सिक्के, बल्कि कहीं कि धातु की चिकनी और बिना छाप वाली चक्रिका के दो पहलु हैं | कौन बता सकता है कि सीधा पहलू कौन-सा है और उल्टा कौन-सा? फिर भी, अहिंसा साधन है और सत्य साध्य है | साधन वहीं है जो हमारी पहुंच के भीतर हो और इस प्रकार अहिंसा हमारी सबैपरिवरित कर्तव्य है | यदि हम साधन को ठीक रखें तो देश-सवेर साध्य तक पहुंच ही जाएंगे | एक बार इस मुद्दे को समझ जाएंगे तो अंतिम विजय असंभिय है | (फ्रायम, पृ. 12-13)

अहिंसा साध्य नहीं है | लेकिन मानवीय संबंधों में सत्य की सिद्धि का सिवा इसके और कोई साधन नहीं है कि हम अहिंसा का व्यवहार करें | अहिंसा का दृढ़ता के साथ आचरण अपील करता है - जो हिंसा के व्यवहार से संबंध नहीं है | इसलिए अहिंसा पर मेरा दर्द विश्वास है | सत्य मेरे पास स्वभावत: आया | अहिंसा को मैंने संघर्ष करके अर्जित किया | लेकिन अहिंसा चूंकि साधन है, इसलिए स्वभावत: अपने दैनिक जीवन में हमारा उससे सरोकार ज्यादा है | इसलिए हमारी जनता को अहिंसा की शिक्षा देना आवश्यक है | तदुपरांत सत्य की शिक्षा उसके स्वभाविक परिणाम के रूप में आयेगी | (हरर, 23-6-1946, पृ. 199)
कायरता की आड़ नहीं
मेरी अशहंसा इस बात की इजाज़त नहीं देती कि खतरा सामने देखकर अपने प्रियजनों को असुरक्षित छोड़कर खुद भाग जाओं | हिंसा और कायरतापूर्ण पलायन में से मैं हिंसा को ही तरजीह दूंगा | जिस प्रकार मैं किसी अंधे आदमी को झुंदर दस्यों का आनंद लेने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता, उसी प्रकार कायर को अशहंसा का पाठ नहीं पढ़ सकता | अशहंसा तो वीरता की चरम सीमा है | मेरे अपने अनुभव में, मुझे हिंसा में विश्वस रखने वाले लोगों को अशहंसा की श्रेष्ठता सिद्ध करने में कोई कठिनाई नहीं हुई | मैं वर्षों तक कायर रहा और उन दिनों मुझे कई बार हिंसा पर उतारू होने की इच्छा हुई | जब मैंने कायरता को लगाना आरंभ किया, तब अशहंसा की क्रूरता करने सारे भाग जाता है | शहंसा और कायरतापूर्ण पलायन में से मैं शहंसा को ही तरजीह दूंगा | उसी प्रकार मैं शकसी अंधे आदमी को सुंदर दृश्यों का आनंद लेने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता, उसी प्रकार कायर को अशहंसा का पाठ नहीं पढ़ सकता | अशहंसा का माग कायरता के माग की तुलना में कहीं ज्यादा साहस की अपेक्षा रखता है | (हरर, 4-8-1946, पृ. 248-49)

(यंग, 12-8-1926, पृ. 285)
अशहंसा के वीर की अशहंसा को अपने आचरण में उतारने के इच्छुक व्यक्ति को कम-से-कम इतना तो करना ही होगा कि पहले अपनी कायरता से पिंड बुझाए और तब, निर्भय होकर अपने छोटे-बड़े कार्यकलाप का नियमन करे | तदनुसार अशहंसा के पुत्री को क्रूरता हुए बगैर अपने वरिष्ठ अधिकारी से भयभीत होने से इंकार कर देना
चाहिए | यह जरूर है कि उसे अपने पद की, वह कितनी ही ऊंची तनख्वाह का पद हो, बलि देने के लिए तैयार रहना चाहिए | अपने स्वर्ध्म की बलि देने के लिए तैयार रहते हुए भी, यदि उसमें अपने मालिक के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है, तो यह कहना सही होगा कि उसमें वीर व्यक्ति की अहिंसा है |

मान लीजिए कि कोई सहयोगी मेरे बेटे पर हमला करने की धमकी देता है और मेरे उससे बहस करने पर वह मेरे ऊपर झपटता है | तब यदि मैं भद्रता और गरजारा के साथ उसका घूंसा बदलता कर लेता हूँ और अपने मन में उसके विरुद्ध कोई दुर्भावना नहीं लाता, तो मैं वीर की अहिंसा का परिचय देता हूँ | ऐसी घटनाएं रोज़ होती हैं और उनमें सहलता से कितनी ही वृद्धि की जा सकती है | यदि मैं हर बार अपने आवेश पर अंदाज़ लगा खड़े और पूंछ का जवाब पूंछ से देने का सामर्थ्य होने के बावजूद वैसा न करूँ तो मैं अपने अंदर वीर की उस अहिंसा का विकास कर सकता हूँ | जो तभी मेरा साथ नहीं छोड़ेंगी और पक्के-पक्के विरोधी को भी भर एस ने के लिए बाध्य कर देगी | (हरर, 17-11-1946, पृ. 404)

कायरता पालना मेरी प्रकृति के विरुद्ध है | दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद से, जहां हजारों लोग जबर्दस्त बाधाओं के विरुद्ध उठ खड़े थे और नाकामयाब नहीं रहे थे, मैंने सच्ची वीरता, जो अहिंसा ही है, का प्रचार करना अपना जीवन ध्योन बनाया है | (हरर, 1-6-1947, पृ. 175)

विनम्रता आवश्यक

यदि मनुष्य में... गर्व और अहंकार हो तो उसमें अहिंसा नहीं ठिक सकती | विनम्रता के बिना अहिंसा असंभव है | मेरा अपना अनुभव है कि जब-जब मैंने अहिंसा का आश्रय लिया है, किसी अहंकारशक्ति ने मेरा मार्गदर्शन किया है और मुझे उस पर आक्रोश रखा है | यदि मैं अपनी ही इच्छा के बलबूते रहता हो, तो उसमें ऊर्जा होती है और मेरे ऊपर झपटता है | जब मैं पहली बार जेल गया तो काफी घबराया हुआ था | मैंने जेल-जीवन के बारे में बड़ी-बड़ी भयावह बातें सुनी थीं | लेकिन मुझे ईश्वर के संरक्षण में आस्था थी | हमारा अनुभव यह रहा कि जो लोग मन में प्रार्थना का भाव लेकर जेल गए थे, वे विजयी होकर लौटे, और जो अपनी ही शक्ति के बूते पर गए थे, वे नाकामयाब हो गए | जब आप यह कहते हैं कि ईश्वर आपको शक्ति दे रहा है, तो उसमें आत्मदाय का कोई भाव नहीं होता | आत्मदाय की बात तब पैदा होती है जब आपको दूसरों से मान्यता पाने की आकांक्षा हो | लेकिन यहां तो मान्यता का कोई प्रश्न ही नहीं है | (हरर, 28-1-1939, पृ. 442)

जब मैंने अपनी हस्ती को पूरी तरह मिटाना सीख लिया तभी मैं दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह की शक्ति का विकास कर पाया | (हरर, 6-5-1939, पृ. 113)
22. अहिस्सा की शक्ति

अपनी गत्यात्मक स्थिति में, अहिस्सा का अर्थ है सचेतन कष्टसहन | अहिस्सा का अर्थ बुराई करने वाले की इच्छा के समक्ष विनीत बनकर आत्मरोध कर देना नहीं है, बल्कि उसके विरुद्ध अपना पूरा आत्मबल लगा देना है | मानव जाति के इस नियम के अनुसार आचरण करते हुए, एक अकेला इंसान भी अपने समान, अपने धर्म या अपनी आत्मा की रक्षा के लिए किसी अन्यायी साम्राज्य की पूरी शक्ति का मुकाबला कर सकता है और उस साम्राज्य के पतन अथवा पुनरुद्धार की नींव रख सकता है | (यंग, 1-8-1920, पृ. 3)

सक्रिय बल

अहिस्सा की जो मेरी धारणा है, उसके अनुसार वह अपेक्षा दुर्गति के विरुद्ध संघर्ष करने का कहीं ज्यादा सक्रिय और सबसे साधारण है – प्रतिकार की तो प्रकृति ही दुःख में वृद्धि करने की है | इसलिए मैं अनेक बार अपने मानसिक और नैतिक विरोध से समाप्त करना चाहता हूं | मैं अन्य की तलवार की धारा को भी इस आत्मा को धूर्मिल करने करना चाहता हूं कि मैं उसका शारीरिक प्रतिरोध करूँगा | इसके बजाए मैं जो आत्मिक प्रतिरोध करूँगा उससे वह भ्रात नहीं होता | मेरा आत्मिक प्रतिरोध ही तो उसकी इच्छा कर्ता है | उसका लोहा तो उससे भी ज्यादा धारदार है, नींव रखने अथवा उसके पतन अथवा पुनरुद्धार की नींव रखने की इच्छा कर्ता है | (यंग, 8-10-1925, पृ. 346)

मैं मानता हूं कि जो शक्तिशाली है, वह दुर्गति को लूटेगा और यह भी कि दुर्गति होना पाप है | लेकिन यह बात मनुष्य की आत्मा के बारे में कही गई है, शरीर के बारे में नहीं | अगर यह शरीर के बारे में कही गई होती हो तो हम दुर्गति के पाप से कभी मुक्त न हो पाते | लेकिन आत्मा की शक्ति पूरी दुनिया के सामान्य विरोध का मुकाबला कर सकती है | और, आत्मा की यह शक्ति दुर्गति-दुर्गति के बारे में भी अर्जित की जा सकती है | (यंग, 6-5-1926, पृ. 164)

अहिस्सा मानवता को उपलब्ध सबसे बड़ा बल है | मनुष्य ने अपनी होशियारी से विनाश के जो शक्तिशाली-शक्तिशाली अस्त-शस्त्र बनाए हैं, अहिस्सा उससे भी अधिक शक्तिशाली है | विनाश मानवों का नियम नहीं है | मनुष्य कभी अपने भाई को मार कर नहीं बल्कि जरूरत पड़े तो उसके हाथों मरने के लिए तैयार रहकर आज्ञादी
से जीता है | प्रथम कल्त अथवा दूसरे को पहुंचाई गई चोट, वह चाहे जिस कारण से हो, मानवता के प्रति अपराध है | (हरि, 20-7-1935, पृ. 180-81)

अहिंसा रेडियम की तरह काम करती है | सांपादक अंगवृत्ति में स्थापित रेडियम की अतिसूक्ष्म मात्रा निरंतर, चुपचाप तब तक काम करती रहती है जब तक कि रोगप्रस्त ऊतक के समूहों पिंड को स्वस्थ ऊतक में नहीं बदल देती | इसी प्रकार, धौड़ी-सी भी सच्ची अहिंसा चुपचाप, सूक्ष्म और अदृश्य रूप से काम करती है और समूहों समाज का कायाकल्प कर देती है | (हरि, 12-11-1938, पृ. 327)

बेजोड़ बहादुरी

हथियारबंद सिपाही अपनी ताकत के लिए अपने हथियार पर निर्भर रहता है | उससे उसका हथियार - उसकी बंदूक या उसकी तलवार - छीन लो तो वह प्राय: बेवस हो जाता है | लेकिन जिस व्यक्ति ने अहिंसा के सिद्धांत को सही अर्थ में हड़प्पांग में लिया है, उसका हथियार ईश्वरप्रदत्त शक्ति होती है जिसके जोड़ का हथियार दुनिया के पास आज तक नहीं है | (हरि, 19-11-1938, पृ. 341-42)

अपने जीवन-थे यो में अदम्य आस्था से प्रेरित दठ संकल्प वाले मुहूं भर लोग इतिहास का रुख बदल सकते हैं | (अधि, पृ. 343)

बलशाली की अहिंसा पूरी तरह हथियारबंद परमवीर सिपाही (या सिपाहियो) के मुकाबले सदा इक्कीस बैठती है| (हरि, 12-5-1946, पृ. 128)

अस्था का प्रयोग

कठोरतम धातु भी अपेशक्षत ताप पिघल जाती है | इसी प्रकार, कठोरतम हड़प्प भी अहिंसा की अपेशक्षत ताप से पिघल जाना चाहिए | और, ताप पैदा करने की अहिंसा की क्षमता अपरिमित है | हर क्रिया अनेक बलों, जो विपरीत प्रकृति के भी हो सकते हैं, का परिणाम होती है | ऊज्ज्वला का नाश कभी नहीं होता | यात्रिकी की पुस्तके हमें यहीं बताती हैं | यदि सिद्धांत मानव क्रियाओं पर भी लागू होता है | अंतर यह है कि पूर्वोत्कर्ष उदाहरण में, सामान्यतया हमें क्रियाशील बलों की जानकारी होती है और हम गणित लगाकर परिणाम का पूर्वकल्पन कर सकते हैं, किंतु जहां तक मानव क्रियाओं का संबंध है, वे ऐसे बलों की सहायता का परिणाम होता है जिनमें से अधिकांश के बारे में हमें कोई जानकारी नहीं होती | लेकिन अपनी नाजानकारी के कारण इन बलों की शक्ति में हमें अविश्वास नहीं करना चाहिए | बल्कि हमारे अज्ञान के कारण हमारी आस्था में और अधिक वृद्धि होनी चाहिए | अहिंसा कूच परिणाम का सबसे शक्तिशाली बल है और उसके काम करने के
तरीके भी बड़े दुर्ग्राह हैं, अतः इसमें आस्था का महत्व सर्वाधिक है | जिस प्रकार हम आस्था के सहारे ईश्वर में विश्वास करते हैं, उसी प्रकार आस्था के सहारे ही अहिंसा में विश्वास करना होता है | (हरि, 7-1-1939, पृ. 417)

हिंसा पानी की तरह है – निकास का मार्ग मिलते ही पूर्ण जोर के साथ भयंकर वेग से आगे बढ़ती है | अहिंसा में उभार नहीं है | यह अनुशासन का सार है | लेकिन एक बार सक्रिय हो जाने पर विकट-से-विकट हिंसा भी उसका दमन नहीं कर सकती | यह जरूर है कि अपना पूरा प्रभाव दिखाने के लिए यह निष्कर्ष शुचिता और अदम्य आस्था की अपेक्षा रखती है... (हरि, 21-3-1939, पृ. 433)

एक विज्ञान

अहिंसा एक विज्ञान है | विज्ञान के शब्दकोश में 'असफलता' का कोई स्थान नहीं होता | अपेक्षित परिणाम को प्राप्त करने की असफलता प्राप्त नयी खोजों की जरूरत होती है | (हरि, 6-5-1939, पृ. 113)

अगर हिंसा का काम अपने सामने पड़ने वाली हर चीज़ का भक्षण है, तो अहिंसा का काम हिंसा के मुंह को भर देना है | अहिंसा के वातावरण में व्यक्ति अपनी अहिंसा की परख करने का अवसर नहीं पा सकता | इसकी परख तो केवल हिंसा के महामूल में ही की जा सकती है | (हरि, 13-5-1939, पृ. 121)

हिंसा का कारगर जवाब केवल अहिंसा है | यह एक प्राचीन, सुस्थापित सत्य है...कि हिंसा का हथियार, भले ही वह अणु बम हो, सबी अहिंसा के सामने नाकाम हो गया | यह सत्य है कि अहिंसा के शक्तिशाली हथियार को चलाना बहुत थोड़े लोगों को आता है | इसके लिए बड़ी सूझ-बुझ और सबल चिंता की आवश्यकता होती है | यह सैनिक स्कूलों और कालिजों की अपेक्षाओं से भिन्न है | हिंसा का जवाब अहिंसा से देने में महसूस की जाने वाली कठिनाई चिंता की दुर्बलता के कारण पैदा होती है | (हरि, 1-6-1947, पृ. 172)

कर्म, कर्ता नहीं

'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं' एक ऐसा नीतिवचन है जिसे समझना तो काफ़ी आसान है, पर जिस पर आचरण शायद ही कभी किया जाता है | इसीलिए दुनिया में घृणा का विष फैलता चला जा रहा है | अहिंसा सत्य की शौक का आधार है | मैं दिन-ब-दिन इस बात का कायल होता जा रहा हूँ कि सत्य की शौक तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि उसका आधार अहिंसा न हो | किसी प्रणाली का प्रतिरोध करना और उसके विरुद्ध आवाज़ उठाना उचित है, पर उसके कर्ता का प्रतिरोध करना और उस पर हमला करना तो मानो अपना ही प्रतिरोध करना और अपने ही ऊपर हमला करना है | बात यह है कि हम सब एक ही कूंटी से रो गए हैं, एक ही सृष्टिकर्ता की संतान हैं और इसलिए हम सबके भीतर असीम देवी शक्तियां हैं | एक भी मनुष्य को अपराधित
मनुष्य और उसका कर्म, दो अलग-अलग चीजें हैं | जहां सकर्म का अनुमोदन किया जाना चाहिए और कुकर्म की निदार की जानी चाहिए, वहाँ उनका कर्ता, चाहे वह व्यक्ति आदमी हो या दुष्ट, सदैव यथास्थिति, आदर अथवा दया का पात्र होता है | (वही)

जो लोग आचरण के बजाय आचरणकर्ता की नष्ट करना चाहते हैं, वे इस विश्वास में कि आचरणकर्ता के साथ उसका आचरण भी मर जाएगा, उन आचरणों को स्वयं अपना लेते हैं और जिस व्यक्ति को समाप्त करते हैं, स्वयं उससे भी बुरे सिद्ध होते हैं | दरअसल वे बुराई की जड़ को नहीं पहचानते | (यंग, 17-3-1927, पृ. 85)

अहिंसा की कसोटी यह है कि अहिंसक संघर्ष में कोई विद्वेष बाकी नहीं रहता और अंत में शान्ति भी मित्र बन जाते हैं | दक्षिण अफ्रीका में जनरल स्मार्टस के साथ मेरा यही अनुभव रहा | वह शुरू में मेरा कट्टर विरोधी और आलोचक था | आज वह मेरा परम स्नेही मित्र है | (हरर, 12-11-1938, पृ. 327)

अहिंसा का मुख्य निहितार्थ यह है कि हमारी अहिंसा हमारे प्रति विरोधी के रूप में बनाए, कठोर नहीं; वह उसे द्रवित कर दे, वह उसकी हदयतंत्री में संवेदी स्वर छेड़ दे | अहिंसावादी होने के नाते क्या तुम कह सकते हो कि तुम सच्ची अहिंसा का आचरण करते हो ? क्या तुम कह सकते हो कि तुम छाती खोलकर विरोधी के बाण सहते हो और बदले में अपने बाण नहीं चलाते ? क्या तुम कह सकते हो कि तुम उसकी आलोचना से कुछ नहीं होते, परेशान नहीं होते ? (हरर, 13-5-1939, पृ. 121)

जीवन भर अहिंसा का आचरण करते-करते मैं इसका विशेषज्ञ बन गया हं, हालांकि बड़ा अपूर्व विशेषज्ञ हं | निरपेक्ष रूप में कहूं तो मैं जितना ही इसका आचरण करता हं, उलटते ही मुझे यह अहसास होता है कि मैं अपने जीवन में अहिंसा की पूर्ण अभिव्यक्ति से अभी कितनी दूर हं | इसका, जो संसार में मनुष्य का सबसे बड़ा कर्तव्य है, स्पष्ट होनेके कारण ही वह कहता है कि इस युग में हिंसा का मुकाबला करने में अहिंसा की सफलता की कोई खास गुणजाऊं नहीं है, जबकि मैं इत्तिहास पूर्वक यह कहना चाहता हूं कि एट्म बम के इस युग में हिंसा की सभी दुष्ट चालों को नाकामयाब करने के लिए विशुद्ध अहिंसा ही एकमात्र बल है | (हरर, 16-11-1947, पृ. 412)
23. अहिंसा के लिए प्रशिक्षण

“हम व्यक्तियों और समुदायों को इस कठिन कला में प्रशिक्षित किस प्रकार करेंगे?”

इसका कोई आसान रास्ता नहीं है, सिवा इसके कि व्यक्ति अपने जीवन में अहिंसा के धर्म का अनुसरण करे और उसका जीवन एक जीता-जागता उपदेश बने | व्यक्ति के जीवन में अहिंसा की अभिव्यक्ति पर्यंत अध्ययन, भारी अध्यवसाय और सब तरह की अपविवृत्तियाँ को अपने जीवन से निकाल फेंकने पर ही आ सकती है | भौतिक विज्ञानों में महात्मा गांधी करने के लिए यदि पूरा जीवन चाहिए तो मानव जाति को ज्ञात महानतम आधारभूति बल में प्रवीणता प्राप्त करने के लिए तो कितने ही जम्मू तथा सकर है | लेकिन कई जिन्दगी में जाकर प्रवीणता आए तो उसमें चित्त की बहाव बात है | क्योंकि, यदि जीवन में यही वस्तु स्थायी है, यदि इसी का महत्व है, तो इसमें प्रवीणता प्राप्त करने के लिए जो भी प्रयास करना पड़े, वह व्यर्थ नहीं है | स्वर्ग के साम्राज्य की कामना करो, बाकी सब अपने आप मिल जाएंगा | स्वर्ग का वह साम्राज्य अहिंसा है | (हरी 14-3-1936, पृ. 39)

अहिंसा के प्रशिक्षण में शस्त्रों की निक्षेप ही कोई आवश्यकता नहीं है | वस्तुतः आपके पास शस्त्र हैं तो उन्हें फेंकना होगा, जैसा कि सीमांत प्रदेश में खान साहब ने किया | जो यह कहते हैं कि अहिंसा की शिक्षा से पहले हिंसा की शिक्षा देना आवश्यक है, वह तो यह भी कहेंगे कि संत होने के लिए पहले पापी होना जरूरी है | अभ्य, एक पूर्वस्थान

जिस प्रकार हिंसा के प्रशिक्षण में मारने की कता सीखना जरूरी है उसी प्रकार अहिंसा के प्रशिक्षण में मरने की कता सीखनी जरूरी है | हिंसा का अर्थ भय से मुक्त नहीं है, बल्कि भय के कारण भय का मुकाबला करने के लिए साधनों की खोज है | इसके विपरीत, अहिंसा में भय करने की जरूरत ही नहीं है | अहिंसा के पुजारी को भय से मुक्त होने के लिए उंचे-से-उंचे बलिदान के बासे तैयार रहने की क्षमता का विकास करना होता है | उसकी भूमि, धन, जीवन कुछ भी चला जाए, तो परवह नहीं करता | इससे सभी प्रकार के भयों से मुक्त नहीं पा ली है, वह पूरी तरह अहिंसा का आचरण नहीं कर सकता | अहिंसा के पुजारी को एक ही भय होता है – इश्वर का भय | जो इश्वर की शरण लेता है उसे जीवामा की झलक अवस्था मिलेगी, जो देहाती है, और जिस क्षण अविनाशी जीवामा की झलक मिल जाती है, नाशवान शरीर की आस्वति मिट जाती है | इस प्रकार अहिंसा का प्रशिक्षण, हिंसा के प्रशिक्षण से बिलकुल उलटा है | बाह्य वस्तुओं की रक्षा के लिए हिंसा की आवश्यकता होती है जबकी जीवामा की रक्षा के लिए, आत्मसम्मान की रक्षा के लिए अहिंसा की आवश्यकता होती है | यह अहिंसा घर बैठकर नहीं सीखी जा सकती | इसके लिए उदय करना पड़ता है | अपनी परीक्षा लेने के लिए हमें खतरे और मौत को लकारकर, देह का दमन करना, और सभी प्रकार की कठिनाइयों को सहन करने की क्षमता का विकास करना सीखना चाहिए | जो शख्स दो आदमियों को लड़ते देखकर कांपने लगता है, या भाग
खड़ा होता है, वह अशहंसक नहीं, कार्यर है | अशहंसक व्यक्ति तो इस तरह के झगड़ों को रोकने के लिए अपनी जान दे देगा | हिंसक की बहादुरी के मुकाबले अशहंसक की बहादुरी कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है | हिंसक का चिह्न उसका शस्त्र – भाला, तलवार अथवा राइफल – है | अशहंसक की दात भगवान है |

यह अहिंसा सीखने के इतिहास व्यक्ति के प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम नहीं है | लेकिन मैंने जो सिद्धांत बताए हैं, उनसे सरलतापूर्वक ऐसा पाठ्यक्रम विकसित किया जा सकता है | (हरि, 1-9-1940, पृ. 268)

वीर की अहिंसा

अहिंसा के लिए किसी बाहा प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है | इसके लिए केवल दो बातें चाहिए – बदला लेने के लिए भी मारने की इच्छा से विरोध और प्रतिशोध की भावना मन में लाए बगीर मीत का सामना करने का साहस | यह अहिंसा पर उपदेश नहीं है बल्कि शूद्र तर्क है, और एक सार्वभौम नियम का कथन है | नियम में अद्यावस्था होती है, उसके से-उसके परित्यक्त में भी व्यक्ति का धेर नहीं छोड़ना चाहिए | इसे मैंने वीर की अहिंसा कहा है | (हरि, 8-9-1946, पृ. 296)

जिस अहिंसा का पालन केवल व्यक्ति कर सके, वह समाज के लिए ज्यादा उपयोगी नहीं मानी जा सकती | मनुष्य सामाजिक प्राणी है | उसकी उपलब्धियाँ तभी उपयोगी मानी जा सकती हैं जबकि कोई भी अध्यवसायी मनुष्य उसे हस्तित कर सके | जिस चीज़ पर केवल मिट्रों के बीच आचरण किया जा सके, वह अहिंसा का सफलताग्राह नहीं है | यह अहिंसा कहे जाने के काबिल नहीं है | ‘अहिंसा के आगे शनिता लुप्त हो जाती है’ – यह एक महान सूक्ष्म है | इसका तार्किक यह है कि बड़ी-से-बड़ी शनिता का शमन करने के लिए उतनी ही बड़ी मानता में अहिंसा का प्रयोग अपेक्षित है |

इस गुण के विकास के लिए तंबे अभ्यास की आवश्यकता है | जिसमें कभी-कभी कई जन्म लग सकते हैं | पर इस कारण वह अनुपयोगी नहीं हो जाता | अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए, यात्री को प्रतिदिन एक-से-एक सुंदर अनुभव होते हैं ताकि वह उस सौंदर्य की झलक पा सके जो उसे शिखर तक पहुंचने पर दिखाई देगा | इससे उसका उसनह बढ़ता है | इससे कोई यह निष्कर्ष न निकाले कि मार्ग में कंटक नहीं, निरंतर पूर्व-ही-पूर्व मिलते | किसी कवि ने कहा है कि ईश्वर का साहस करने की इच्छा वह पहुंचने का मार्ग केवल वीरों के लिए है, दुर्भिक्ष हदों के लिए कदापि नहीं | आज वातावरण इतना विशाल हो गया है कि आदमी को प्राचीन मनीषों को बुद्धिमत्ता का समर्थन करने और सक्रिय अहिंसा के विविध लघु अनुभवों को महसूस करने में कोई रूचि नहीं रह गई है | व्यवहार में डेनिक अनुभव की एक बुद्धिमत्ताूँूर्ण कहावत है, ‘एक अच्छी बात एक बुरी बात के प्रभाव को नष्ट कर देती है’ | हम यह बतो नहीं समझ पाते कि दुनिया के कार्यकलाप का समग्र परिवर्तन यदि विनाशकारी होता तो वह बहुत पहले नष्ट हो गई होती ? प्रेम, जिसे अहिंसा भी कह सकते हैं, इस भूमंडल को बचाये हुए है | इतना तो स्वीकार किया ही जाना
चाहिए | जीवन की अमूल्य देन को परिश्रमपूर्वक विकसित करना चाहिए क्योंकि यह मानव का उत्सर्जन करती है | पतन आसान है, ऊपर उठना आसान नहीं है | चूंकि हममें से अधिकांश लोग अनुशासित नहीं हैं, इसलिए हमारा दैनिक अनुभव छोटी-छोटी बातों पर आपस में लड़ने या गाली-गलीज करने का है | अहिंसा की यह अनुपम देन कठोर अनुशासन में रहने वालों के लिए सहज ही प्राप्त है | (हरि, 14-12-1947, पृ. 468)
24. अहिंसा पर अमल

अगर कोई आदमी दूसरों के साथ अपने व्यक्तिगत संबंधों में अहिंसा का व्यर्थ न करे, और उसका इस्तेमाल बढ़े मसलों में करने की आशा करे तो यह उसकी भारी भूमि है | खैरात की तरह अहिंसा की शुरुआत भी अपने घर से की जानी चाहिए |

लेकिन यदि व्यक्तियों की अहिंसा का प्रशिक्षण देना आवश्यक है, तो राष्ट्र के लिए इसकी आवश्यकता और भी अधिक है | यदि कोई आदमी दूसरों के साथ अपने व्यक्तिगत संबंधों में अशहंसा का व्यवहार न करे, और उसका इस्तेमाल बड़े मसलों में करने की आशा करे तो यह उसकी भारी भूमि है | अशहंसा की शुरुआत भी अपने घर से की जानी चाहिए |

पारस्परिक सहिष्णुता अहिंसा है | इसलिए आदमी दूसरे ही इस बात की प्रतीति हो जाए कि अहिंसा जीवन का नियम है, उसे उन पर आजमाना चाहिए जो आपके प्रति हिंसक व्यवहार कर रहे हैं; और यह नियम जिस प्रकार व्यक्तियों पर लागू है, उसी प्रकार राष्ट्रों पर भी लागू होता है | विशेष, इसका प्रशिक्षण आवश्यक है | शुरुआत हमेशा छोटी-छोटी घटनाओं से ही होती है | लेकिन प्रतीति हो तो बाकी बातें अपने आप ठीक होने लगती हैं |

(हरर, 28-1-1939, पृ. 441-42)

अहिंसा की सार्वभौमिकता

अहिंसा धर्म का रूप तभी ले सकती है जब वह सर्वव्यापी हो | यह नहीं हो सकता कि मैं अपने एक काम में अहिंसक रूप से और दूसरे में हिंसक बन जाऊ | (हरर, 12-10-1935, पृ. 376)

यह कहना सरासर गलत है कि अहिंसा का आचरण केवल व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है, राष्ट्रों द्वारा कभी नहीं, जो कि व्यक्तियों के समूह ही हैं | (हरर, 12-11-1938, पृ. 328)

मेरी राय में, अहिंसा किसी भी तरह या किसी भी रूप में, निक्रियता नहीं है | अहिंसा जहाँ तक मैं इसे समझा है, दुनिया का सबसे सक्रिय बल है....अहिंसा सर्वोच्च नियम है | अपने आधी शताब्दी के अनुभव में, मेरे सामने अभी तक ऐसी स्थिति कभी नहीं आई जब मुझे कहना पड़ा हो कि मैं बेबस हं, कि मुझे कोई अहिंसक उपाय सूझ नहीं रहा है | (हरर, 24-12-1938, पृ. 393)

अहिंसा का प्रोषण

मैं अद्यावधी आशंकादी हूँ | मेरा आशावाद मेरे इस विश्वास पर टिका है कि व्यक्ति द्वारा अहिंसा के विकास की संभावनाएं असीम हैं | आप अपने जीवन में इसका जितना अधिक विकास करेंगे, उतना ही संक्रामक रूप लेकर
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

यह आपके परिवेश को व्याप्त कर लेगी और हो सकता है कि शनैः शनैः सारी दुनिया पर छा जाए | (हरि, 28-1-1939, पृ. 443)

मैंने अपने युवाजीवन के आरंभ से ही समझा है कि अहिंसा व्यक्ति द्वारा अपनी शाति और मोक्ष की प्राप्ति के लिए अपनाया जाने वाला कोई एकात्मिक गुण नहीं है बल्कि यह सामाजिक आचरण का एक नियम है, यदि समाज को निरंतर मानव गरिमा के साथ जीना है और उस शाति को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति करनी है जिसके लिए वह युगों से तरस रहा है | (गाँधी, पृ.42-44, पृ.170-71)

रोजमर्रा के मामलों में अहिंसा का आचरण करने से उसके सच्चे मूल्य का पता चलता है | इससे पृथ्वी स्वरूप बनती है | वस्तुतः परलोक यज्ञी कोई चीज़ नहीं है | सब लोक एक ही हैं | न कोई 'यहाँ' है, न 'वहाँ' | जैसा जीवन ने सिद्ध किया है, दुनिया की अधिकतम शक्तिशाली दुर्बली से भी न देखे जा सकने वाले सुन्दरतम नक्षत्रों समेत यह सारा ब्रह्मांड एक अणु में संपीत है | इससे मैं गुफावाशस्यों और परलोक में उच्च स्थान की प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों तक अशहंसा के प्रयोग को सीमित रखना गलत समझता हूँ | जो सदुर्ग जीवन के हर क्षेत्र में उपयोगी न हो, उसका कोई मूल्य नहीं रह जाता | (हरि, 26-7-1942, पृ. 248)

बड़े पैमाने पर इस्तेमाल

यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम बड़े पैमाने पर वीर की अहिंसा से परिचित नहीं हैं | लोगों को, बड़े जन-समूहों की तो बात छोड़िए, छोटे-छोटे वर्गों द्वारा अहिंसा के प्रयोग के विषय में भी संदेह है | वे अहिंसा के व्यवहार को असाधारण व्यक्तियों तक सीमित मानते हैं | यदि यह केवल व्यक्तियों के लिए ही सुरक्षित है तो फिर, मानव जाति के लिए इसका क्या उपयोग ? (हरि, 8-9-1946, पृ. 296)

प्रभाविता

मैं अहिंसा और उसकी संभावनाओं को लगातार पिछले पचास से भी अधिक वषों से वैज्ञानिक परिशुद्धता के साथ अमल में ला रहा हूँ | मैं इसे घरेलू, संस्थापक, आर्थिक और राजनीतिक, जीवन के हर क्षेत्र में लागू किया है और मुझे एक भी ऐसा उदार-मन्य याद नहीं आता जब यह असफल रहती हो | यदि यह कहीं असफल होती प्रतीत हुई है तो उसका कारण मैंने अपनी अपूर्णता को माना है | मैं अपनी पूर्णता का दावा नहीं करता | लेकिन यह दावा जसूर करता हूँ कि मैं सच, जो ईश्वर का ही दूसरा नाम है, का एक उस्ताही शोधक हूँ | इसी शोध के दौरान मेरा अहिंसा से परिचय हुआ | इसका प्रबिज्ज अब मेरा जीवन-थेय है | इस थेय के लिए काम करने के अलावा मुझे जीने में और कोई रुचि नहीं है | (हरि, 6-7-1940, पृ. 185-86)
पीड़ित संसार के लिए अहिंसा के संकरे और सीधे रास्ते के अलावा आशा की और कोई किरण नहीं है। हममें से लाखों लोग भले ही अपने जीवनकाल में इस सत्य को सिद्ध करने में असफल रहें, पर वह हमारी असफलता होगी, इस शाष्कत नियम की हरगिज नहीं। (हरि, 29-6-1947, पृ. 209)
25. अहिंसक समाज

में अहिंसा को केवल व्यक्तिगत सद्गुण नहीं मानता | यह एक सामाजिक सद्गुण भी है जिसका विकास अन्य सद्गुणों की तरह ही किया जाना चाहिए | इसमें कोई संदेह नहीं कि पारस्परिक व्यवहार में समाज प्रायः अहिंसा की अभिव्यक्ति से ही संचालित होता है | मेरा कहना सिर्फ यह है कि इसका आरोप बड़े पैमाने - राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय – पर विस्तार किया जाना चाहिए | (हरि, 7-1-1939, पृ. 417)

जिस प्रकार पृथ्वी गुरुत्वाकृतिका प्रभाव से बंधक है, उसी प्रकार सारा समाज अहिंसा के सूत्र में बंधा है | लेकिन जब गुरुत्वाकृतिका नियम की खोज हुई तो इस खोज के अनेक ऐसे परीक्षण सामने आए जिनका ज्ञान हमारे पूर्वजों को नहीं था | इसी प्रकार, जब समाज की रचना सोच-समझकर अहिंसा के नियमानुसार की जाएगी, तो उसकी संरचना की भौतिक विशेषताओं जैसी आज है, उनसे भिन्न होगी | लेकिन मैं इस बात का पूरक नहीं कर सकता अहिंसा पर आधारित सरकार किस तरह की होगी |

आज हमारे चारों ओर जो घटना है, वह अहिंसा के नियम की उपेक्षा और अंतराल भरता है, जैसे कि यह शास्त्रीय नियम हो | (हरि, 11-2-1939, पृ. 8)

अहिंसा पर आधारित समाज गांवों में बसे ऐसे व्यक्ति-समूहों के रूप में ही हो सकता है जिनमें वैश्विक सहयोग, गरीबामय और शांतिपूर्वक सह-स्वतंत्र शैक्षणिक प्रयास हो | (हरि, 13-1-1940, पृ. 410-11)

सरकार

कोई सरकार पूरी तरह अहिंसक बनकर धारण नहीं हो सकती, क्योंकि वह सभी लोगों का प्रतिनिधित्व करती है | मैं आज वैसे व्यक्तिगत पूर्वजों के क्षेत्र में नहीं करता | लेकिन मैं इस व्यक्ति के रूप में सामाजिक संभावना का आशा अवश्यक करता हूँ और उसके लिए प्रयासरत हूँ | (हरि, 9-3-1940, पृ. 31)

यह प्रश्न रहता है कि आदर्श समाज में सरकार नाम की चीज़ होनी चाहिए अथवा नहीं ? में समझता हूँ कि हमें इस समय इस बात की चिंता करने की आवश्यकता नहीं है | यदि हम आदर्श समाज की स्थापना के लिए कार्य करना जारी रखें तो यह धीरे-धीरे एक ऐसा रूप धारण करती हुई विकसित हो जाएगी जिससे सभी लोग लाभार्थित हो सकें | युक्तिद्वारा रेखा की कोई मोटाई नहीं है और अभी तक कोई व्यक्ति ऐसी रेखा खोचने में सफल नहीं हुआ है और न कभी होगा | फिर भी, उस आदर्श रेखा को ध्यान में रखते हुए ही ज्यामिति ने इतनी प्रगति की है | जो इस संदर्भ में सही है, वही प्रत्येक आदर्श के लिए सही है |

अराजकता

यह याद रखना चाहिए कि दुनिया में ऐसा कोई राज्य नहीं है जिसमें सरकार न हो | यदि ऐसा कभी हुआ तो वह भारत में ही होगा, क्योंकि मात्र हमारा देश ही ऐसा है जिसमें कम-से-कम प्रयास तो किया गया है | हम अभी तक
उस वीरता की वह मात्रा प्रदर्शित नहीं कर पाए हैं जो अपेक्षित है और जिसे प्राप्त करने का एक ही उपाय है | जिन्हें इस उपाय में विश्वास है, उन्हें उसका प्रदर्शन करना होगा | ऐसा करने के लिए, मृत्यु के भय पर पूरी तरह विजय या लेनी होगी, वैसे ही जैसे कि हमने जेलों के भय पर विजय या लेनी है | (हरी, 15-9-1946, पृ. 309)

लोकतंत्र और अहिंसा

युद्ध का विज्ञान हमें विश्व तानाशाही की ओर ले जाता है | अहिंसा का विज्ञान ही शुद्ध लोकतंत्र की ओर ले जा सकता है | (हरी, 15-10-1938, पृ. 290)

लोकतंत्र और हिंसा साथ-साथ नहीं चल सकते | जो राज्य आज कहने के लिए लोकतांत्रिक हैं, उन्हें या तो खुलकर सर्वसंतानक बन जाना होगा, या अगर वे सच्चे लोकतांत्रिक बनना चाहते हैं तो साहसपूर्वक अहिंसक रूप अपनाना होगा | (हरी, 12-11-1938, पृ. 328)

इस दृष्टिकोण पर विश्वास करते हुए कि राष्ट्रीय स्तर पर अहिंसा को मान्यता दिए बगैर साविधानिक या लोकतांत्रिक सरकार जैसी कोई चीज़ नहीं चलाई जा सकती, मैं अपनी शक्ति अहिंसा को जीवन – व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय – के नियम के रूप में प्रचारित करने के लिए लगा रहा हूँ | मुझे लगता है कि मैंने, घुले रूप में ही यहीं, उस आलोक के दर्शन कर लिए हैं | मैं बड़ी साविधानी से यह लिख रहा हूँ, क्योंकि मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मैं उस नियम को पूरी तरह जानता हूँ | अगर मैं अपने प्रयोगों की सफलता से अवगत हूँ तो उनकी असफलताओं से भी अनजान नहीं हूं | लेकिन मेरी सफलताएं मुझे अभिमान आशा से आप्लादित करने के लिए पर्याप्त हैं | मैंने प्रयोग कहा है कि मनुष्य यदि साधनों की ओर समुचित ध्यान दे तो साधन अपने आप दरुस्त रहेंगे | अहिंसा साधन है और प्रत्येक के लिए साधन है, पूर्ण स्वतंत्रता | एक अंतरराष्ट्रीय लीग भी स्थापित हो सकेगी जब उसके सभी छोटे-बड़े सदस्य राष्ट्र पूर्णतः स्वतंत्र हों | उस स्वतंत्रता का वस्तुस्पर्श संबंधित राष्ट्रों द्वारा अंगीकृत अहिंसा की सीमा के अनुरूप होगा | एक बात निश्चित है कि अहिंसा पर आधारित समाज में, छोटे-से-छोटे राष्ट्र भी स्वयं को बड़े-से-बड़े राष्ट्र जैसा बड़ा अनुभव करेगा | अमिता और हीनता के भाव पूरी तरह मिट जाएगा | अहिंसा को समर्पित मेरे जैसे व्यक्ति के सामने, नतीजा साफ है – जब तक अहिंसा को केवल एक नीति नहीं बल्कि एक जीत-जागता बल, एक अलंकार धर्म नहीं माना जाएगा तब तक साविधानिक अथवा लोकतांत्रिक सरकार एक स्वदूर स्थिर ही रहेगी | मैं सार्वभौम अहिंसा के बारे में बड़बड़ तो करता हूँ, पर मेरा प्रयोग भारत तक सीमित है | अगर यह सफल हो गया तो दुनिया इसे सहज ही स्वीकार कर लेगी | पर इसमें एक बहुत बड़ा लेकिन है | इसमें कितना समय लगेगा, इसकी मुझे चिंता नहीं है | घटाटप अंतर्दर्श के मेरी आस्था सबसे अधिक आलोकित रहती है | (हरी, 11-2-1939, पृ. 8)
शक्ति का प्रयोग

अहिंसा की प्रकृति ही ऐसी है कि वह शक्ति को 'छीन' नहीं सकती, न यह उसका लक्ष्य हो सकता है | लेकिन अहिंसा उससे भी बड़ा काम कर सकती है; वह सरकारी तंत्र को हस्तगत किए बिना शक्ति को प्रभावी ढंग से नियंत्रित और निर्देशित कर सकती है | यही उसकी खूबी है |

पर इसमें एक अपवाद है | यदि लोगों का अहिंसक असहयोग इतना पूर्ण हो कि प्रशासन बिलकुल ठुप्प न जाए अथवा बाहरी हमले के कारण प्रशासन चरमा जाए और एक शून्यता आ जाए, तो लोगों के प्रतिनिधि आगे आकर प्रशासन की बागडोर हाथ में ले लें | सैद्धांतिक रूप से यह संभव है |

लेकिन शक्ति के प्रयोग का हिस्सा होना अनिवार्य नहीं है | पिता बच्चे पर शासन करता है, वह कभी-कभी उसे दंड भी दे सकता है पर उसके प्रति हिंसक होकर नहीं | शक्ति का सबसे प्रभावी प्रयोग वह है जो सबसे कम कष्ट प्रद दो | यही उसके सही प्रयोग को फूल की तरह हलके से जन-जीवन का स्पर्श करे, किसी को उसका भार महसूस नहीं होना चाहिए |

लोगों ने कांग्रेस की सत्ता को स्वेच्छा से स्वीकार किया | मुझे एकाधिक बार तानाशाह की-सी निरंकुश शक्ति सौप दी गई | लेकिन सभी जानते थे कि मेरी शक्ति उनकी स्वेच्छा स्वीकृति पर अवलंबित है | वे मुझे कभी भी हटा सकते थे और मैं बिना किसी ही-हवाले के तुरंत हट जाता |

पैंगबर और अतिमानव तो युगों में कभी जन्म लेते हैं | लेकिन एक आदमी भी अगर अहिंसा के आदर्श को पूरी तरह प्राप्त कर लेता है तो वह सारे समाज पर छा जाता है और उसका उद्देश्य कर देता है | ईसा मसीह जो एक बार बिजली की तरह कोइ पर उसके बारह शिशु उसके न रहने पर भी उसके मिशन को आगे बढ़ाते रह सके |

बिजली के नियम की खोज के लिए वैज्ञानिकों की अनेक पीढ़ियों की मेहनत और प्रतिभा की दरकार हुई थी, लेकिन आज सभी आदर्श – बच्चे तक – अपने दैनिक जीवन में बिजली की इस्तेमाल कर रहे हैं | इसी प्रकार, आदर्श राज्य की एक बार स्थापना हो जाए तो फिर उसे चलाने के लिए हमेशा पूर्ण मानव की आवश्यकता नहीं रहेगी | पर, युद्ध जागरूकता करने के लिए संपूर्ण सामाजिक जागरण की जरूरत है | बाकी अपने आप हो जाएगा |

अपने देश का ही एक उदाहरण है | मैंने श्रमिक वर्ग के सामने यह सत्य प्रस्तुत किया है कि सच्ची पूंछ सोना-चांदी नहीं है बल्कि उनके हाथ-पैर और दिमाग की मेहनत है | श्रमिकों में एक बार यह जागरूकता आ जाए तो फिर उससे जो शक्ति फूटेगी, उसका उपयोग करने के लिए उन्हें मेरी उपस्थिति की आवश्यकता नहीं होगी |

(ट्रुस्ट ट्वी. 91-93)
26. अहिंसक राज्य

अनेक लोगों ने असहमति की मुद्रा में सिर हिलाते हुए कहा है, “लेकिन आप आम जनता को अहिंसा नहीं सिखा सकते। यह केवल व्यक्तियों को सिखाई जा सकती है और वह भी, इन्हें मामलों में।” मेरी राय में, ऐसा सोचना बड़ी आल्मचना है | यदि मानव जाति स्वभाव से अहिंसक न होती तो इसने बहुत पहले अपना विनाश कर लिया होता | सच्चाई यह है कि हिंसा और अहिंसा के द्वंद्व में, अंततः विजय सदा अहिंसा की ही हुई है |

वस्तुतः हमने लोगों के बीच राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के साधन के रूप में अहिंसा के इस्तेमाल का प्रयास करने के लिए कभी अपेक्षित धैर्य के साथ और पूरा जी लगाकर प्रयास नहीं किया है | (यंग, 2-1-1930, पृ. 4)

राजनीतिक शक्ति

मेरी दृष्टि में, राजनीतिक शक्ति अपने आप में लक्ष्य नहीं है, बल्कि यह जीवन के हर क्षेत्र में लोगों की दशा सुधारने का एक साधन है | राजनीतिक शक्ति का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों के जरिए राष्ट्रीय जीवन का नियंत्रण करने का सामर्थ्य | यदि राष्ट्रीय जीवन इतनी पूर्वताप्राप्त कर ले कि वह स्व-नियंत्रित हो जाए तो प्रतिनिधित्व की आवश्यकता ही नहीं रहेगी | यह प्रबुद्ध अराजकता की स्थिति है | ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति अपना आचरण स्वयं करता है | राजनीतिक शक्ति का अथाह है राष्ट्रीय प्रशासन के जरिए राष्ट्रीय जीवन का निभायता करने का सामर्थ्य | यह अपने को इस प्रकार आचरण करता है कि अपने प्रयासों के लिए कभी कोई बाधा खड़ी न हो |

इस प्रकार, आदर्श राज्य में कोई राजनीतिक शक्ति नहीं होती, क्योंकि उसमें कोई राज्य ही नहीं होता | लेकिन जीवन में आदर्श की उपलब्धि पूरी तरह कभी नहीं होती | तभी थेरू की बालाकों की उपलब्धि होती है कि सबसे अच्छी सरकार वह है जो अपने का सम्पूर्ण आचरण करे | (यंग, 2-7-1931, पृ. 162)

पूजीवाद अथवा न्यासिता

मुझे पक्का विश्वास है कि अगर राज्य ने हिंसा का प्रयोग करके पूजीवाद का दमन करना चाहा तो वह हिंसा के शिकंजे में खुद फंस जाएगा और कभी अहिंसा का विकास नहीं कर पाएगा | राज्य संकेतित और संस्करित रूप में हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है | व्यक्ति के पास आत्मा होती है, लेकिन चूंकि राज्य आत्मा से विहीन तंत्र होता है इसलिए उसे हिंसा से विरत कभी नहीं किया जा सकता - उसका अस्तित्व ही हिंसा में मिलता है | इसीलिए मैं न्यासिता के यथार्थता का हमेशा मानता हूँ |

इस बात का हमेशा दर है कि राज्य उन लोगों के विरुद्ध बहुत अधिक हिंसा का व्यवहार न करे जो उससे सहमत नहीं हैं | मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी अगर लोग न्यासी के रूप में आचरण करें, लेकिन यदि वह ऐसा नहीं कर पाते तो हमें राज्य के जरिए न्यूनतम हिंसा का प्रयोग करते हुए उन्हें उनकी संपत्ति से वंचित कर देना होगा |
इसीलिए मैंने गोलमेज समेलन में कहा था कि प्रत्येक न्यस्तहित की जांच-पड़ताल की जानी चाहिए और जहां आवश्यक हो, राज्यसाल्करण के आदेश दिए जाएं। जिनकी संपत्ति का राज्यसाल्करण करना हो, उन्हें मुआवजा दिया जाए या नहीं, इसका निर्णय हर मामले की तफसील पर गोर करके किया जाए।

मैं व्यक्तिगत रूप से इस बात की तरजीह दूर करता हूं कि राज्य के हाथों में शक्ति के केंद्रीकरण के बजाय न्यासिता की भावना का विस्तार किया जाए क्योंकि, मेरी सम्मति में, निजी स्वामित्व की हिंसा राज्य की हिंसा से कम हानिकारक है। लेकिन अपरिहार्य हो तो मैं न्यूनतम राज्य-स्वामित्व का समर्थन करूंगा।

यह स्वीकार करते हुए कि मनुष्य अपने स्वभाव के अनुसार अपना जीवन चलाता है, मैं समझता हूं कि उसके लिए अपनी इच्छा-शक्ति का प्रयोग करते हुए जीना स्वतन्त्र अच्छा है। मेरा यह भी विश्वास है कि मनुष्य इस प्रकार अपनी इच्छा-शक्ति का विकास करने में समर्थ हैं, जिससे शोषण घटकर न्यूनतम रह जाएगा।

मैं राज्य की शक्ति में वृद्धि से बड़ा भयभीत हूं। यद्यपि वह जाहिर तौर पर शोषण को न्यूनतम करके लोगों की भलाई करने का प्रयास करता है, पर वह वैपकतिकता को विनाश करके मानव जाति की सबसे बड़ी हानि करता है, क्योंकि वैपकतिकता ही तो सारी प्रगति की कुंजी है।

हमारे सामने अनेक ऐसे उदाहरण हैं जिनमें लोगों ने न्यासिता को अपनाया है, पर एक भी उदाहरण ऐसा नहीं है जिसमें राज्य वस्तुतः निर्धनों के हित में संचालित हुआ हो। (मारी, अक्टू. 1935, पृ. 412)

अहिंसक स्वराज

अहिंसा पर आधारित स्वराज में, लोगों को अपने अधिकारों की जानकारी रखने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि अपने दायित्वों का जानना आवश्यक है। प्रत्येक कर्तव्य से ही तदनुरूप अधिकार जन्म लेता है, और वे ही अधिकार सच्चे हैं जो मनुष्य के सम्मक कर्तव्यपालन से उत्पन्न होते हैं। इसलिए सच्ची नागरिकता के अधिकार उन्हें ही प्राप्त होने चाहिए जो अपने राज्य की सेवा करें। ऐसे व्यक्ति ही अपने अधिकारों का न्यायाधीश उपयोग कर सकते हैं।

हर आदमी को झुठे बोलने या गुंडाग्दी करने का अधिकार है। लेकिन इस अधिकार का प्रयोग करने से उसे शवशास होता है। तथा समाज, दोनों को हानि पहुँचती है। पर जो सत्य और अहिंसा का पालन करता है उसे प्रतिष्ठा मिलती है, और प्रतिष्ठा के साथ अधिकार प्राप्त होते हैं। साथ ही, जो लोग अपने कर्तव्य-पालन के अधिकार अर्जित करते हैं, वे उनका उपयोग सदैव समाज की सेवा के लिए करते हैं, अपने लिए कभी नहीं।

जनता के स्वराज का अर्थ है, सभी व्यक्तियों के स्वराज का पूर्ण योग। और यह स्वराज लोगों द्वारा नागरिकों के रूप में अपने कर्तव्य के पालन से ही उत्पन्न होता है। इसमें अपने अधिकारों के विषय में कोई नहीं सोचता। वे जब उत्साह कर्तव्यपालन के लिए आवश्यक होते हैं, तब मिल जाते हैं। (हारी, 25-3-1939, पृ. 64)
अहिस्सा पर आधारित स्वराज में कोई किसी का शान्त नहीं होता, प्रत्येक व्यक्ति सार्वजनिक लक्ष्य के लिए अपने हिस्से का योगदान करता है, सभी लिख-पढ़ सकते हैं और लोगों का ज्ञान निरंतर बढ़ता जाता है। बीमारी और रोग कम-से-कम रह जाते हैं। कोई कंगाल नहीं होता और श्रमिक के लिए हमेशा रोजगार उपलब्ध रहता है। ऐसी सरकार में जुआ, शराब, अनेकता और वर्ग-द्वेष के लिए कोई धारण नहीं होता।

स्वराज में अमीर अपने धन को बुब्बल माना करते हुए अपने धन का योगदान करेगा और उसे अपनी शान-शौकत तथा भोग-विलास में बढ़ाते हुए अपने धन का योगदान करेगा। ऐसा नहीं होना चाहिए कि अमीर तो जड़ रहे और करोड़ों लोग दूसरे फ्रेंड को दर्दनाक पहुँचते हो, न हवा....

अहिस्सक स्वराज में किसी के न्यायोपतित अधिकारों का अतिक्रमण नहीं हो सकता। तथापि, एक विधायक राज्य के साथ ही, अमीर की अनुचित अधिकार दिए भी नहीं जाएंगे। सुसंगठित राज्य में, अन्धिकार-प्रहर की संभावना नहीं रहनी चाहिए और किसी अन्धिकार-प्रहर को बेदखल करने के लिए बलप्रयोग की नहीं बात होना चाहिए।

(वही, पृ. 65)

विकेंद्रीकरण

यदि भारत को अहिस्सा के मार्ग पर अपना विकास करना है तो मेरा सुझाव है कि उसे बहुत-सी चीजों का विकेंद्रीकरण करना होगा। पर्याप्त बल के बगैर विकेंद्रीकरण को कायम रखना और उसकी रक्षा करना संभव नहीं है। सादे मकानों के लिए जिनमें चुराने के जरूर नहीं हों, पुलिस का बंदोबस्त करने की जरूरत नहीं पड़ती। अमीरों के महलों को दाकुओं से बचाने के लिए भारी पहरा की तैयारी करना होगा। यही बात विशाल फैक्टरियों पर भी लागू होती है। ग्रामीण आधार पर संगठित भारत को सैनिक, नौसैनिक और वायुसैनिक बलों में सुसंगठित शहरीकृत भारत की अपेक्षा बाहरी आक्रमण के खतरा बहुत कम होगा।

(हरर, 18-1-1942, पृ. 5)

आधुनिक राज्य

बल पर आधारित आधुनिक राज्य, बाहर या अंतरराष्ट्रीय अव्यवस्था की ताकतों का अहिस्सक तरीके से मुकाबला नहीं कर सकता। आदमी की ईश्वर और धनलिप्ता की पूजा साथ-साथ नहीं कर सकता। ये बात एक दृष्टि में संपन्न कर सकता है जो अभी तक ही समय में ‘संयत और क्रोध-प्रभाव’ हो सकता है। यह दावा किया जाता है कि राज्य का अहिस्सा पर आधारित होना संभव है अर्थात् वह सैन्य पर आधारित से अहिस्सक प्रतिरोध का आश्रय ले सकता है। अशोक का राज्य ऐसा ही था। ऐसे और उदाहरण भी दिए जा सकते हैं। लेकिन अगर यह भी सावधान कर दिया जाए कि
अशोक का राज्य अहिंसा पर आधारित नहीं था तो इससे अहिंसा के पक्ष का तर्क कमजोर नहीं हो जाता | उसकी परीक्षा गुणावधारण के आधार पर करनी होगी....

सैनिक दृष्टि से मजबूत राष्ट्र अहिंसा का प्रस्ताव नहीं कर सकता | तदनुसार यदि रूप अहिंसा की अभिव्यक्ति करना चाहे तो उसे अपनी समस्त हिंसक शक्ति का त्याग करना होगा | जो बात सही है वह यह है कि जो कभी सैनिक दृष्टि से प्रबल रहे हैं, वे यदि अपना मन बदल ले तो वे दुनिया और अपने बिरोधियों के समक्ष अहिंसा का प्रदर्शन ज्यादा बेहतर ढंग से कर सकते हैं | (हरि, 12-5-1946, पृ. 128 )
27. हिंसा और आतंकवाद

मेरा अनुभव मुझे बताता है कि हिंसा के रास्ते पर चलकर सत्य का प्रचार कभी नहीं किया जा सकता। जिन्हें अपने लक्ष्य की न्यायोचितता में विश्वास हैं, उन्में असीम धर्म होना आवश्यक है और सत्य अवज्ञा में भाग लेने के लिए योग्य व्यक्ति वही हैं जो आपराधिक अवज्ञा या हिंसा पर कभी उतारू नहीं होंगे। (यंग, 28-4-1920, पृ. 8)

लोक-हिंसा

अगर मेरे सरकारी की संगठित हिंसा से कोई वास्ता रखना नहीं चाहता तो जनता की असंगठित हिंसा से भी कम वास्ता रखना चाहेंगा। मैं इन दोनों के बीच में पिस जाना ज्ञापन पसंद करूंगा। (यंग, 24-11-1921, पृ. 382)

मेरी दृष्टि में हमारे मार्ग में जितनी बड़ी बाध भरनेवाली हिंसा है, उतनी ही बड़ी बाध लोक-हिंसा भी है। बल्कि सच पूछा जाए तो मेरे लोक-हिंसा की तुलना में सरकारी हिंसा का सामना ज्ञापन कामयाबी के साथ कर सकता हूँ। क्योंकि लोक-हिंसा का सामना करने वाले मुझे उतना सामर्थ्य नहीं दिया जाता जितना सरकारी हिंसा का सामना करने वाले होते। (यंग, 24-4-1930, पृ. 140)

मैं दृढ़तापूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि हिंसा का रास्ता किसी धर्म में विचित्र नहीं है। जहां आधिकारिक धर्मों में आधिसिकों का व्यवहार मनुष्य का आवश्यक कर्तव्य माना गया है, वहीं कुछ धर्मों में खास परिस्तितियों में इसकी इजाजत भर दी गई है। लेकिन मैं भारत के सामने आधिसिकों का अंतिम स्वरूप स्पष्ट नहीं किया है। (यंग, 2-31922, पृ. 130)

मुझे हिंसा से आपत्ति इस्तेमाल करना चाहिए कि जब यह प्रतीत होता है कि इससे भलाई हो रही है तो वह भलाई के केवल अस्थायी होती है, पर इससे जो बुराई फैलती है वह स्थायी होती है। (यंग, 21-5-1925, पृ. 178)

हिंसा में कोई आस्था नहीं

मेरा यह अहिंसा विश्वास है कि लक्ष्य की पूर्ति में जिस सीमा तक हिंसा का सहारा लिया जाएगा, उसी सीमा तक असफलता हाथ लगेगी। हालांकि जाहिर तौर पर इसका उलटा होता दिखाई देता है, पर उसके बावजूद मैं यह बात नहीं करूंगा। अगर मेरे रास्ते में बाधक बनने वाले व्यक्ति की हत्या कर दूं तो मुझे एक शुरुआती सुरक्षा का आभास हो सकता है। पर यह सुरक्षा अस्थायी होगी; बात यह है कि मैंने मूल कारण को तो दूर किया ही नहीं। कुछ समय में, और लोग मेरे रास्ते में बाधक बनकर खड़े हो जाएंगे। इसलिए मैं अपने बाधक की हत्या नहीं करता, बल्कि उस कारण का पता लगाने की कोशिश करता हूँ जिसके कारण वह ऐसा व्यवहार कर रहा है और फिर उस कारण का इलाज करता हूँ। (यंग, 26-2-1931, पृ. 1)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

मैं सशस्त्र विद्रोहों में विश्वास नहीं करता। वे जिस बुराई को दूर करने के लिए छेड़े जाते हैं, वह उससे भी बुरे साबित होते हैं। वे प्रतिशोध, अधिक्य और क्रोध के प्रतीक होते हैं। हिस्सक उपचार का कोई स्थायी लाभ नहीं होता।

(यंग, 9-6-1920, पृ. 3)

क्रांतिकारी

मैं क्रांतिकारी की वीरता और बलिदान की भावना से इंकार नहीं करता। लेकिन बुरे उद्देश्य के लिए प्रदर्शित वीरता और क्रिया गया बलिदान उत्तम उर्जा का अप्रयोग है। इसके अतिरिक्त, बुरे उद्देश्य के लिए प्रदर्शित वीरता तथा बलिदान के दुर्योग को गौरवपूर्ण करार देने से अच्छे उद्देश्य की ओर से लोगों का ध्यान हटता है।

मुझे वीर एवं आत्मबलिदानी क्रांतिकारी के सामने तनकर खड़े होने में कोई संकोच नहीं है, क्योंकि मैं उतनी ही मात्रा में अहिंसक की वीरता एवं बलिदान की भावना प्रदर्शित कर सकता हूँ, और उस पर किसी निर्दोष के रक्त का दाग भी नहीं होगा। एक निर्दोष व्यक्ति का आत्मबलिदान उन लाखों लोगों के बलिदान से ज्यादा असर पैदा करता है।

क्रांतिकारियों का ध्यान स्वराज की तीन मुख्य बाधाओं की ओर आकर्षण करना चाहता हूँ—चरखे का अपूर्ण प्रचार, हिंदुओं और मुसलमानों के बीच मनमुंद, और दलित वर्गों के ऊपर अमानवीय प्रतिबंध।

बबरता की रोकथाम

मुझे अपने देशवासियों की पीड़ाओं के निवारण से भी ज्यादा चिंता मानव प्रकृति के बबरीकरण को रोकने की है। मैं जानता हूँ कि जो लोग स्वेच्छा से पीड़ा का जीवन स्वीकार करते हैं, वे अपना और साथ ही, पूरी मानवता का उत्पन्न करते हैं, लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि जो लोग अपने विरोधी पर विजय पाने या दुर्बल राज्यों अथवा दुर्बल लोगों का शोषण करने के दु:साहसिक प्रयास में शुरुआतका के व्यवहार पर उतारू हो जाते हैं, वे न केवल स्वयं को बल्कि समूही मानवता को पतन के गर्भ में ले जाते हैं।

(यंग, 29-10-1931, पृ. 325)
फांसी के तख्ते पर झूलकर मरने में कोई अनिवार्य आकर्षण नहीं है; ऐसी मृत्यु मलौदियाप्रस्त क्षेत्रों के उबाऊ और कड़ी महनत की जिंदगी से प्रायः आसान होती है... मैं अपने क्रांतिकारी मित्रों से कहना चाहता हूँ कि फांसी की मृत्यु से देश का उपकार उसी स्थिति में हो सकता है जबकि उसका शिकार पूरी तरह बदाम हो। (यंग, 9-4-1925, पृ. 124)

...मैं यह दाशिन्दक कायरता ही या अन्य क्रांतिकारी की, मुझे बड़ी नफरत है और मैं यहीं यदि आश्वासन कि जिस क्रांतिकारी कार्यवाही ने कायरता को मिटा दिया है तो इससे मुझे उनकी पद्धति के प्रति अपने पृथ्वी भाव को कम करने में बड़ी मदद मिलेगी, हालांकि सिद्धांत: मैं उनका विरोध फिर भी करता रहूंगा....

मैं किसी भी परिस्थिति में मारने, हत्या करने या आतंकवादी कार्यवाही करने का अभ्यय नहीं मानता। मैं यह जरूर विश्वास करता हूँ कि शहीदों के खुद से सीधे जाने पर विचार बड़ा होता जब्ती परिपक्व होते हैं। लेकिन जो व्यक्ति सेवा करने, रक्षा ज्वर से पीड़ित होकर धीरे-धीरे मरता है, वह भी वैसी ही शहादत देता है। जैसे कि फांसी के फंदे पर झूलने वाला व्यक्ति और अगर फांसी पर लट्ठने वाले के ऊपर किसी निर्दोष की हत्या का दोष है, तो मैं मानूंगा कि उसके विचार ही ऐसे नहीं थे जो परिपक्व होने लायक हों।

इतिहास के नायक

....उनकी (क्रांतिकारियों की) गतिविधियों की तुलना मुरू गोविंदसिंह या वाशिंगटन अथवा रॉयल्स्टी या लेनिन से करना अत्यंत ज्ञातिक और खतरनाक होगा। लेकिन, अहिंसा के सिद्धांत की कसौटी पर कसते हुए मुझे यह कहने में हिचक नहीं है। कह यदि मैं उनके जमाने में और उनके संबंद्धित देशों में जीता होता तो कम संभावना इसी तरह की है कि मैं उन्हें सफल और वीर योद्धा होने के बावजूद विभूति राष्ट्रभक्त कहता....

जहाँ तक नायकों के कार्यक्रमों का तत्कालीन का तत्त्वक है, मैं इतिहास पर विश्वास नहीं करता। मैं इतिहास के मोटे तथ्यों को स्वीकार करता हूँ और उनसे अपने आचरण के लिए निष्कर्ष स्वयं निकालता हूँ। जहाँ-जहाँ ये मोटे तथ्य जीवन के नियम के विपरीत हैं, मैं उनकी पुनरावृत्ति करना नहीं चाहता। मैं इतिहास द्वारा प्रदत्त विरल सामग्री के बल पर लोगों के बारे में कोई निर्णय लेने से साफ इंकार करता हूँ।

मैं कमाल पाशा और दे बलेरा के बारे में भी निर्णय नहीं ले सकता। लेकिन अहिंसा में पूरा-पूरा विश्वास करने वाला व्यक्ति होने के कारण, जहाँ तक इसकी पृथ्वी के प्रति आश्वास का संबंध है, वे मेरे जीवन के पथप्रदर्शक नहीं
हो सकते | मुझे तो कृष्ण में विश्वास है, लेकिन मेरा कृष्ण ब्रह्मांड का स्वामी और हम सबका सुषिक्षक, पालनकर्ता और संहारकर्ता है | वह सुषिक्षक है, इसलिए संहार भी कर सकता है....

क्रांति आत्मघात

मुझमें अपने जीवन-दर्शन की शिक्षा देने की योग्यता नहीं है | मुझमें बमुक्तिल इतनी योग्यता है कि मैं जिस दर्शन में विश्वास करता हूँ, उस पर आचरण कर सकूँ | क्रांतिकारी मेरे समूह दर्शन को अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र हैं | लेकिन भारत की तुलना तुर्की, आयरलैंड या रूस जैसे देशों से नहीं की जा सकती और राष्ट्रीय जीवन के इस मोड़ पर क्रांतिकारी गतिविधियाँ हर तरह से आत्मघातक हैं | यदि दीर्घकालीन दौड़ से भी देखें तो इसने विशाल, बुरी तरह विभाजित और घोर कंगाली तथा आतंक से दर्शनात्मक के देश में क्रांतिकारी गतिविधियाँ कैसे सफल हो सकती हैं? (वही, पृ. 126)

क्रांतिकारी विरोधी के शरीर का हनन यह मानेंगा कि इससे विरोधी की आत्मा का कल्याण होगा....मैं एक भी ऐसे क्रांतिकारी को नहीं जाता जिसने विरोधी की आत्मा के विषय में सोचा तक हो | उसका एकमात्र उद्देश्य दे का कल्याण करना है, भले ही विरोधी का शरीर और आत्मा, दोनों नष्ट जाएं | (यंग, 30-4-1925, पृ. 153)

मैं अराजकतावादी को उसके देशप्रेम के लिए सम्मान देता हं | मैं देश के लिए मर मिटने की उसकी तत्परता में निहित वीरता के लिए उसका सम्मान करता हूँ, लेकिन मैं उससे एक बात पूछता हूँ : क्या हत्या करना सम्मानयोग्य है? क्या सम्मान नीति में हत्यारे की कट्टरी जरूरी है? मैं इसे नहीं मानता | (स्पीरा, पृ. 323)

मैं अपनी सुविचारित राय को दुहराना चाहूँगा कि, अन्य देशों के बारे में जो भी स्थिति हो, कम-से-कम भारत में राजनीतिक हत्या देश की सिर्फ नुकसान पहुंच सकती है | (यंग, 16-4-1931, पृ. 75)

इतिहास के पृष्ठ आजादी के लिए संघर्ष करने वालों के रक्त से रंजित है | मैं एक भी उदाहरण ऐसा नहीं जाता जिसमें घोर परश्रम किए बगैर कोई राष्ट्र अपना अभ्युदय कर पाया हो | हत्यारे की कटार, विष का प्याला, बंदूकधारी की गोली, भाला – आजादी के दीवानों द्वारा विनाश के इन सभी उपायों का आश्रय लिया जा चुका है | मैं आतंकवादी के पक्ष का समर्थन नहीं करता | (यंग, 24-12-1931, पृ. 408)

क्रांतिकारी कृपया मेरे साथ और मेरे लिए प्रार्थना करें कि मैं शीघ्र ही मनोविकारों से मुक्त और पाप करने के पूरी तरह नाकामिल हो जाऊँ | लेकिन इस बीच, मेरे साथ एक कदम उठाएं – यह कदम मुझे दिन के प्रकाश की तरह स्पष्ट दिखाई दे रहा है – और वह कदम है विश्वुद्ध अहिंसक उपायों से भारत की आजादी हासिल करना | (हरर, 25-1-1942, पृ. 15)
28. हिसा और कायरता के बीच चुनाव

समूही प्रजाति के नपुंसक हो जाने का खतरा उठाने के मुकाबले मैं हिसा को हज़ार गुना बेहतर समझता हूं।

(यंग, 4-8-1920, पृ. 5)

हिसा बेहतर

मेरा पक्का विश्वास है कि जहां केवल कायरता और हिसा में से एक का चुनाव करना है, वहाँ मैं हिसा को चुनूंगा...कायर की भांति, अपने अपमान का विवश साक्षी बनने की अपेक्षा भारत के लिए अपने सम्मान की रक्षार्थ शस्त्र उठा लेना मैं ज्यादा अच्छा समझता हूं।

लेकिन मेरा विश्वास है कि अहिंसा हिसा से अत्यधिक श्रेष्ठ है, दंड की अपेक्षा क्षमा अधिक मान्यतित है।

(यंग, 11-8-1920, पृ. 3)

हम मनुष्य के भीतर बैठे पशु को निकाल फेंकना जरूर चाहते हैं। लेकिन इस कारण से उसे नपुंसक मानना तो नहीं चाहते। और यह जानने के लिए कि मैं अभी मिटा नहीं हूं। आदमी के भीतर बैठा पशु समय-समय पर अपना कुश्ति रूप दिखाएगा जरूर।

(यंग, 15-12-1921, पृ. 419)

दुनिया केवल तर्क के सहारे नहीं चलती। जीवन में धोड़ी-बहुध हिसा तो है ही। अतः हमें न्यूनतम हिसा के रास्ते को अपनाना है।

(हरि, 28-9-1934, पृ. 259)

कायरता नहीं

मेरा चाहता हूं कि हिंदू और मुसलमान, दोनों मारे बिना मर जाने के धीर साहस का विकास करें। लेकिन यदि किसी में वैसा साहस न हो तो उसे, कायर की तरह, खतरा देखकर भाग खड़े होने के बजाय मार कर मरने की कला विकसित करनी चाहिए। क्योंकि भाग खड़ा होने वाला व्यक्ति तो मानसिक हिसा करता है। वह इसलिए भागता है कि उसमें मारते हुए मर जाने का साहस नहीं है।

(यंग, 20-10-1921, पृ. 335)

अहिंसा की मेरी विधि से शक्ति की हानि कभी नहीं होती, क्योंकि वही इस बात को सम्भव बनाती है कि, यदि राष्ट्र चाहे तो, संकट के समय अनुशासित और जोरदार हिसा का प्रदर्शन कर सकता है।

(यंग, 29-5-1924, पृ. 176)

मेरी अहिंसा में अलंकार दस्तक बता है। इसमें कायरता अथवा दुर्बलता के लिए कोई स्थान नहीं है। हिंसक व्यक्ति तो शायद कभी अहिंसक हो भी सकता है, लेकिन कायर से अहिंसक होने की आशा कभी नहीं की जा सकती।
इसीलिए मैंने बार-बार कहा है...कि अगर हमें यह न आता हो कि अपनी महिलाओं और पूजार्थों की रक्षा, पीड़ा सहने के बल अर्थत अहिंसा की मदद से किस प्रकार करें तो, अगर हमें पौरुष है तो, हमें उनकी रक्षा हथियारों के बल पर ही करनी चाहिए | (यंग, 16-6-1927, पृ. 196)

आदमी शरीर से कितना ही कमजोर हो, तो उसमें हमें बार-बार कहा है....इसीलिए मैंने बार-बार कहा है...कि अगर हमें यह न आता हो कि अपनी महिलाओं और पूजार्थों की रक्षा, पीड़ा सहने के बल अर्थत अहिंसा की मदद से किस प्रकार करें तो, अगर हमें पौरुष है तो, हमें उनकी रक्षा हथियारों के बल पर ही करनी चाहिए।

मेरी अहिंसा ऐसे लोगों के अस्तित्व की स्वीकारती है जो अहिंसा का बर्ताव नहीं कर सकते या नहीं करेंगे | अतः शहंसा की मदद से उनका कारगर इस्तेमाल करें | मैं हज़ारों बार यह दोहराना चाहता हूँ कि अहिंसा का बल अपने रक्षात्मक सहयोग को ज्यादा रूप से स्वीकार करने के लिए है।

हिंसक के मदद से आत्मरक्षा

मैं बार-बार कहता आया हूँ कि जो व्यक्ति मृत्यु का सामना करते हुए अहिंसक ढंग से अपने प्रतष्ठानों की और अपने समाज की रक्षा नहीं कर सकते, वे शहर के साथ हिंसक संघर्ष करें – उन्हें ऐसा करना ही चाहिए | जो इन दोनों में से कोई रास्ता नहीं अपना सकता, वह व्यर्थ का भाव है | वह परीवार का मुखिया होने लायक नहीं है | वह या तो कहीं छुपकर जा बैठे या तो दबंग के सामने लाचारी की जिंदगी जीने और दबंग के सामने की जिंदगी की तरह रहने के लिए तैयार रहे।

आत्मरक्षा के लिए मारने की ताकत जरूरी नहीं है, आदमी में मरने की ताकत होनी चाहिए | जब आदमी मरने के लिए पूरी तरह तैयार होता है, उसके लिए शहंसा का भाव भी व्यक्त कर सकता हूँ कि मारने की इच्छा और मरने की इच्छा के बीच प्रतिलोम अनुपात है | इतिहास ऐसे अनेक उदाहरणों से भरा पड़ा है जिसमें सहस्रों और हज़ारों पर करणा के शब्द लेकर मरने वालों ने अपने हिंसक विरोधियों का हहर-परिवर्तन कर दिया है।

(यंग, 21-1-1930, पृ. 27)
अहिसा ऐसे व्यक्ति को नहीं सिखाई जा सकती जो मरने से भय खाता है और जिसमें प्रतिरोध की शक्ति ही नहीं है | लाचार चूहे को, जो हमेशा बिल्ली का शिकार बनता है, अहिसक नहीं कहा जा सकता | उसका बस चलते तो जरूर बिल्ली को खा जाए, पर वह उसे देखते ही भाग खड़ा होता है | हम उसे कायर नहीं कहते, क्योंकि प्रकृति ने उसे जैसा बनाया है वह वैसा ही व्यवहार करता है |

लेकिन अगर कोई आदमी, खतरा सामने आने पर, चूहे की तरह भागता है तो वह सच्चे मायने में कायर है | उसके दिल में हिंसा और नफरत है और खुद को कोई शारीरिक चोट पहुंचायें बिना यदि वह अपने शत्रु को मार सके तो जरूर मार देगा | ऐसे व्यक्ति का अहिःसा से कोई वास्ता नहीं है | इसे जितना भी उपदेश दो, सब व्यर्थ जाएगा | उसकी प्रकृति में बहादुरी है ही नहीं | उसे अहिःसा का पाठ पढ़ाने से पहले, मुकाबले पर डटना और उसका सफाया करने की ताकत में खड़े शत्रु से अपनी रक्षा का प्रयास करते हुए यदि मर भी जाना पड़े तो उसके लिए तैयार रहना, सिखाना होगा | कोई और उपाय करना उसकी कायरता को ही पूछ करना होगा जिससे वह अहिःसा से और भी दूर चला जाएगा |

अगर मैं किसी को बदला लेने में सचमुच सहायता नहीं करता तो मुझे किसी कायर को तथाकथित अहिःसा की आड़ भी नहीं देने देनी चाहिए | यह ज्ञान न होने के कारण कि अहिःसा किस ताकत का नाम है, बहुत-से-लोगों ने बड़ी ईमानदारी से यह विश्वास पाल लिया है कि, खास तौर से अगर अपनी जान जाने का खतरा हो तो, प्रतिरोध करने के बजाय सदैव भाग खड़े होने में ही बुझिमानी है | अहिःसा का शिक्षक होने के नाते मुझे लोगों को ऐसे नामदेव विश्वास के खिलाफ चेतावनी देना चाहिए | (हरी, 20-7-1935, पृ. 180-81)

यदि व्यक्ति बिल्लियाँ के लिए तैयार न हो तो आत्मरक्षा ही...एकमात्र सम्मानजनक रास्ता है | (हरी, पृ. 181)

यद्यपि हिंसा वैध नहीं है, पर आत्मरक्षा अथवा अरक्षितों की रक्षा करने के लिए की गई हिंसा, कायरतापूर्ण आत्मसमर्पण की तुलना में कहीं बेहतर वीरतापूर्ण कार्य है | कायरतापूर्ण आत्मसमर्पण न पुरुष को शोभा देता है, न ती को | हिंसा के अधीन, वीरता के अनेक चरण और प्रकार हैं | इनका निर्णय मनुष्य को स्वयं करना चाहिए | इसका अधिकार किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं है और न हो सकता है | (हरी, 27-10-1946, पृ.369-70)
29. आक्रमण का प्रतिरोध

मुझे जीना है | मुझे किसी राष्ट्र या व्यक्ति का दास बनकर नहीं रहना | मैं या तो पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करूंगा या मर भूंगा | सशस्त्र संघर्ष में जीतने की आशा करना खालिस बड़बोलापन होगा | लेकिन जो मेरी आजादी से मुझे वंचित करे, उसकी शक्ति को चुनौती देना, उसकी इच्छा का पालन करने से इंकार करना और इस प्रयास में निहले जाने दे देना बड़बोलापन नहीं है | इसमें मेरी जान तो जाएगी, पर मेरी आत्मा अर्थतः मेरे सम्मान की रक्षा हो सकेगी | (हरि, 15-10-1938, पृ. 290)

प्रतिरोध का कार्य

सच्चा लोकतांत्रिक वह है जो अपनी और अपने देश की तथा अंतः समृद्ध मानव जाति की आजादी की रक्षा विश्वु अहिंसक तरीके से करता है....लेकिन प्रतिरोध का कार्य केवल वे ही उपार्जित कर सकते हैं जो अहिंसा को धर्म मानते हैं - वे नहीं जो गणित लगाए और प्रत्येक मामले के गुणावगुण पर विचार करने के बाद निर्णय ले कि अमूक युद्ध का समर्थन करना है अथवा विरोध | इसका मतलब यह हुआ कि इस प्रकार के प्रतिरोध का निर्णय व्यक्ति को ख्यात करना है और अपनी अंतर्विष्ण का आदेश मानते हुए करना है, यदि वह अंतर्विष्ण के अस्तित्व को स्वीकार करता है तो | (हरि, 15-4-1939, पृ. 90)

अ-प्रतिरोध के ठीक-ठीक अर्थ को प्राप्त समझा नहीं गया है और उसे विकृत भी किया गया है | इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि अहिंसक व्यक्ति को आक्रांता की हिंसा के सामने घुटने टेक देने चाहिए | आक्रांता की हिंसा का जवाब हिंसा से न दे लें हुए, उसे उसकी नाजायज मांग को मानने से इंकार कर देना चाहिए चाहे इसमें उसे अपनी जान से भी हाथ दो देना पड़े | अ-प्रतिरोध का सही अर्थ यह है....

उसे हिंसा का जवाब हिंसा से नहीं देना है बल्कि अपने हाथ को उठाने से रोकते हुए, आक्रांता की मांग को मानने से इंकार करके उसके आक्रमण को निष्पटावी बनाना है | दुनिया में मानव आचरण का यही एकमात्र सहयोगी है | कोई और तरीके शख्स की होड़ को बढ़ावा देगा - वीच-बीच में शांति के दौर भी आएगे, पर उनके पीछे वास्तविक कारण होगा उच्चतर कोटि की हिंसा के लिए तैयारी करते-करते पैदा होने वाली धर्म | उच्चतर हिंसा के बल पर स्थापित शांति अपुर्वम और उससे जुड़ी तमाम चीजों को जन्म देती है | यह अहिंसा और लोकतंत्र का पूर्णतम नकार है, वस्तुतः लोकतंत्र अहिंसा के बगैर चल नहीं सकता | (हरि,30-3-1947, पृ. 85-86)

कृतां का जवाब कृतां से देना अपने नैतिक और बौद्धिक दिवालियापन को स्वीकार करना है और यह केवल एक दुष्क्र को न हो जन्म दे सकता है.... (हरि, 1-6-1947, पृ. 174)

प्रतिरोध के दोनों ही प्रकार हैं – निष्क्रिय प्रतिरोध तथा अहिंसक प्रतिरोध....लेकिन प्रतिरोध की बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ती है | यूरोप ने जनरल के यीशू के बुद्धिमत्ता से युक्त दृढ़ एवं वीरतापूर्ण प्रतिरोध को, दुर्भल का
प्रतिरोध मानकर, उसका गलत अर्थ लगाया | जब मैंने पहली बार 'न्यू टेस्टामेंट' पढ़ा तो मुझे इसके चार अध्यायों में यीशु को जैसा चित्रित किया गया है, उनसे यीशु में किसी निष्क्रियता अथवा दुर्विविद्या के चित्र दिखाई नहीं दिए | जब मैंने टैस्तरों का 'हार्मनी ऑफ द गॉसप्लस' तथा उसी विषय पर उनकी अन्य रचनाएं पढ़ीं तो अर्थ और भी स्पष्ट हो गया | या यीशु को निष्क्रिय प्रतिरोध मानने की भारी कीमत पश्चात्को नहीं चुकानी पड़ी है? ईसाई जगत जिन युद्धों के लिए जिमेदार है, उनके सामने 'ओल्ड टेस्टामेंट' और अन्य ऐशतहासिक या अर्थ-ऐशतहासिक अभिलेखों में वर्णित युद्ध भी फीके पड़ जाते हैं | मैं जानता हूँ कि मुझे अपने बात में संशोधन करना पड़ा, क्यों-कि मुझे इतिहास - आधुनिक अथवा प्राचीन - का केवल सतही ज्ञान है । (हरें, 7-12-1947, पृ. 453 )

मारते हुए मरने की अपेक्षा मरने का वरण करने ज्ञाता वीरता पूणक है | मारना या मारते हुए मर जाने कोई बहुत ज्ञाता प्रांनीय बात नहीं है | लेकिन जो व्यक्ति शतु की इच्छा के लिए गुटने टेकने के बजाए उसके आगे अपनी गर्दन कर देता है, वह कहीं ज्ञाता उच्च कोटि के साहस का पररचय देता है । (हरें, 21-4-1946, पृ. 95)

अहिंसा का रास्ता

अहिंसा संसार के उन महान सिद्धांतों में से है जिसे दुनिया की कोई ताकत मिटा नहीं सकती । इसकी सवारी आदर्श है | यह बीरों के लिए है, कार्यरों के लिए कदापि नहीं । और, अहिंसा का सिद्धांत उस पर आधा रखकर उसके लिए बल हो जाने वाले व्यक्तियों द्वारा ही प्रचारित हो सकता है । (हरें, 17-5-1946, पृ. 140)

अहिंसा उच्चतम आदर्श है । यह वीरों के लिए है, कार्यरों के लिए कदापि नहीं । और, अहिंसा का बल से लाभ उठाना और इस भ्रम में रहना कि हम बड़े धार्मिक और अहिंसक हैं, केवल अपने की धोखा देना है । (हरें, 9-6-1946, पृ. 172)

आपके पास अहिंसा की तत्तत्वात्र हो तो दुनिया की कोई शक्ति आपको अपनी अर्थातन में नहीं ले सकती । यह धृढ़ता और धिर्मित, दोनों का उदारतीकरण करती है । (वहीं, पृ. 174)

इस समय सारी दुनिया में हिंसा की जो लहर आई हुई है, उसका सही कारण यह है कि अभी तक वीर पुरुष की अपराजेय अहिंसा की तकनीक को पूरी तरह खोजा नहीं गया है । अहिंसक उर्जा का एक औंस भी कभी बेकार नहीं जाता । (हरें, 11-1-1948, पृ. 504)

मैं यह नहीं कहता कि 'भारत पर आक्रमण करने वाले लुटेंजे, चोरों या राष्ट्रों से निपटने के लिए हिंसा का सहारा मत लो' | लेकिन इसमें अच्छी तरह कामयाब होने के लिए हमें अपने ऊपर संयम रखना सीखना चाहिए । जरा-
जरा-सी बात पर पिस्तौल उठा लेना मजबूती नहीं, बल्कि कमजोरी की निशानी है | आपसी घूसेबाजी हिंसा का नहीं, बल्कि नामदेखी का अथाह है | (यंग, 29-5-1924, पृ. 176)

यद्यपि हर प्रकार की हिंसा बुरी है और सिद्धांत: उसकी निंदा की जानी चाहिए पर हिंसा में विश्वास करने वाले व्यक्ति की आक्रामक और रक्षक के बीच भेद करने की अनुमति है, बल्कि यह उसका कर्तव्य भी है | ऐसा करने के उपरांत उसे अहिंसक तरीके से रक्षा का पक्ष लेना चाहिए अर्थात उसकी रक्षा करने में अपनी जान दे देनी चाहिए | उसके बीच में पड़ने से संबंधत: द्वंद्व की स्थिति जल्दी समाप्त हो जाएगी और यह भी हो सकता है कि लड़ाकू पक्षों के बीच शांति स्थापित हो जाए | (हरि, 21-10-1939, पृ. 309)

मेरी अहिंसा तरह-तरह की हिंसाओं – रक्षक हिंसा और आक्रामक हिंसा – के बीच भेद मानती है | यह सही है कि दृष्टि काल में यह भेद मिट जाता है, पर आरंभिक अध्यात्म फिर भी कायम रहती है | अहिंसक व्यक्ति, समय आने पर, यह जरूर कहेगा कि किसका पक्ष न्यायोचित है और किसका नहीं | इसीलिए मैंने अभी नियोजित, स्पेशेंस्यों, चैयॉं, चीनियों और पोलिड्डन्सियों की सफलता की कामना की थी, हालांकि मेरी अभिलाषा थी कि इनमें से प्रत्येक को अहिंसक प्रतिरोध का आश्रय लेना चाहिए था | (हरि, 9-12-1939, पृ. 371)

यदि युद्ध स्वयं एक अनैतिक कृत्य है तो यह नैतिक समर्थन या आशीर्वाद के योग्य के साना जा सकता है ? मैं सभी प्रकार के युद्धों को पूरी तरह गलत मानता हूं | लेकिन हम दो युद्धसंघ संघर्षों के इरादों की छानबीन करने तो संभवत: यह पाएंगे कि उनमें से एक सही है और दूसरा गलत | उदाहरण के लिए, यदि ‘अ’ देश ‘ब’ देश पर कब्जा करना चाहता है तो स्पष्टतः यह ‘ब’ देश पर अन्यथा है | दोनों देश संघर्ष संघर्ष करेंगे | मैं अहिंसक संघर्ष में विश्वास नहीं करता, फिर भी ‘ब’ देश, जिसका पक्ष न्यायोचित है, मेरी नैतिक सहायता और आशीर्वाद का पात्र होगा | (हरि, 18-8-1940, पृ. 250)

यदि आपमें अहिंसा के मार्ग पर चलने की बहादुरी नहीं है तो आप घूसे का जवाब घूसे से दे सकते हैं | लेकिन हिंसा के प्रयोग की भी एक नैतिक सहिता है | अन्यथा, हिंसा की लपरों उन्हों को जलाकर राख कर देंगी जो उन्हें सुलगाएंगे | मुझे परवाह नहीं अगर वे सभी नष्ट हो जाएं | पर मैं भारत की आजादी को विनष्ट होते नहीं देख सकता | (हरि, 17-11-1946, पृ. 402)

भारत का रास्ता
मैं इस बात को स्वीकार किया है कि राष्ट्र को, यदि वह चाहे तो, वास्तविक हिंसा के जरिए भी अपनी आजादी हासिल करने का अधिकार है | बस, यही होगा कि उस सूरत में भारत मेरे प्रेम की भूमि नहीं रह जाएगा, हालांकि वह मेरे जन्म का देश तो फिर भी रहेगा | यह स्थिति वैसे ही होगी जैसी कि यदि मेरी मां पत्थर शो हो जाए तो फिर वह मेरे गीताय की पात्र नहीं रह जाएगी | (यंग, 20-11-1924, पृ. 382)
जब भारत स्वाधीन, आत्मनिर्भर, और प्रलोभितों तथा शोषण से सर्वथा मुक्त हो जाएगा तो पश्चिम या पूर्व की कोई शक्ति लालच की नजरों से उसे नहीं देख सकेगी और वह महंगे हथियारों के बिना ही सुरक्षित अनुभव करने लगेगा | उसकी आंतरिक अर्थव्यवस्था किसी आक्रमण के खिलाफ मजबूत-से-मजबूत दीवार का काम देगी | (यंग, 2-7-1931, पृ. 161)

अहिसक प्रतिरोध

इतिहास में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता कि किसी राष्ट्र ने अहिसक प्रतिरोध को अपनाया हो | यदि हिटलर मेरी पीढ़ा से आप्रवाहित रहता है तो इससे कोई फर्क नहीं पडता | क्योंकि इससे मेरा कुछ नहीं जाता | मेरी दृष्टि में, रक्षणीय वस्तु केवल मनुष्य का आत्मसमान है | और उसके लिए हिटलर की क्या, किसी की कोई आवश्यकता नहीं है | पर अहिसक का पुजारी होने के नाते मेरे लिए उसकी संभावनाओं को सीमित करना उचित नहीं होगा | अब तक हिटलर और उस जैसी मनोकूट में आत्मशक्ति के लोगों ने अपने एक-जैसे अनुभव के बल पर यह विश्वास फूल किया है कि मनुष्यता का आगे चढ़ना ही उसकी संभावनाओं को सीमित करना उचित नहीं होगा | यह कोन कह सकता है कि उच्चतर और सूक्ष्मतर शक्तियों के प्रति अनुक्रिया करना हिटलर और उन जैसे लोगों की प्रकृति में नहीं है ?

उनमें भी वही आत्मा है जो मेरे अंदर है....

मुझे इस आहान का उत्तर देना ही होगा | मुझे अपने देशवासियों को अपना संदेश सुनाना ही होगा | अपनी बात लोगों तक न पहुँचा सकने की लज्जा ने मेरे अंदर बड़ी गहरी गज़ब जमा ली है | जो प्रकाश मुझे मिला है, मुझे कम-से-कम उसके अनुसार कार्यवाही करनी ही चाहिए |

...जब मैंने सत्याग्रह की शुरुआत की तो मेरा कोई सहचर नहीं था | हम तेहर हजार स्त्री, पुरुष और बच्चे एक समूह राष्ट्र के विरोध में खड़े हो गए थे जो हम सबको नष्ट कर देने में समर्थ था | मुझे नहीं मानता कि मेरी बात कौन सुनेगा | मेरे सामने तो जैसे एक ब्रिटिश कोई गई थी | सभी तेहर हजार व्यक्तियों ने संघर्ष नहीं किया | बहुत-से पीछे रह गए | किंतु राष्ट्र के सम्मान की रक्षा हो गई | दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह ने नये इतिहास की रचना की....

मेरा उद्देश्य पूरा हो जाएगा, यदि मैं इन लोगों के हदयों तक पहुँचकर उन्हें यह दिखा सकूँ कि अगर उनकी अहिसक उन्हें हथियारों को धारण करने और उनका इस्तेमाल करने की क्षमता के मुकाबले ज्यादा बहादुर नहीं बना सकती तो वे ऐसी अहिसक – जो कायरता का ही दूसरा नाम होगी – का त्याग कर दें और अपने हथियार फिर उठा लें जिसके लिए उन्हें कोई और नहीं बल्कि उनकी अपनी इच्छा-शक्ति ही रोक रही होगी |
मैं कमजोर का नहीं बल्कि बीर इंसान का हथियार...पेश कर रहा हूँ। इससे बढ़कर बीरता कोई और नहीं है कि आदमी बड़ी-से-बड़ी दुनियावानी ताकत के सामने घुटने टेकने से दृढ़तापूर्वक इंकार कर दे और ऐसा करते समय उसके मन में कोई कटूता न हो और इस बात का पक्का भरोसा हो कि केवल आत्मा ही अमर है, बाकी कुछ नहीं। (हरी, 15-10-1938, पृ. 290-91)

बुवनर्दी पूिय धारणाएं

हम अपने परिवार या कुल में जिस तरह बरताव करते हैं, उसी की उपमा देकर मैंने अपना तक काबू आगे बढ़ाया है। मानव जाति एक बड़ा परिवार ही तो है। यदि प्रेम की भावना पर्वतीत गहन हो, तो यह सारी मानव जाति पर लागू होनी चाहिए। यदि व्यक्तियों ने बर्बर लोगों के साथ व्यवहार में सफलता पाई है तो व्यक्तियों के समूह बर्बरों के समूह पर कामयाब क्यों नहीं हो सकते? यदि हम अंग्रेजों के साथ कामयाब हो सकते हैं तो यह विश्वास करना आस्था का विस्तार भर है कि हम उनसे कम सभ्य और कम उदारीपूर्वक राष्ट्रों के साथ भी कामयाब हो सकेंगे। मैं दृढ़तापूर्वक कहता हूँ कि यदि हम विश्वुद्ध अहिंसक प्रयास से अंग्रेजों पर कामयाबी हासिल कर सकते हैं तो हम अन्य लोगों पर भी जरूर हासिल कर सकते हैं। यह उसी तरह की बात है कि अगर हम अहिंसा से आजादी हासिल कर सकते हैं तो अहिंसा से उसकी रक्षा भी कर सकेंगे। यदि हमारे अंदर यह आस्था पैदा नहीं होती तो हमारी अहिंसा केवल ताकालिक है, वह मिलावट है, खरा सोना नहीं।

अव्वल तो हमें संदिग्ध अहिंसा से आजादी कभी हासिल होगी नहीं; और दूसरे, अगर मिल भी गई तो हम आक्रांताओं से उसकी रक्षा करने में हम अपने को कतई तैयार नहीं पाएँगे। अगर हमें इसमें संदेह है कि अहिंसा अंततः सफल होगी तो यह कहीं बेहतर होगा कि क्रांति अपनी नीति बदल दे और राष्ट्र को हथियारों का प्रशिक्षण देना शुरू कर दे। यह बात क्रांति जैसी जनाधारक संस्था की गरिमा के अनुकूल नहीं होगी कि अपना मन पक्का किए बगैर वह लोगों को एक बड़े विश्वास की दिशा में प्रवृत्त कर दे। यह कार्य का काम होगा।

कोई राष्ट्र या व्यक्ति-समूह कितना ही छोटा हो, वह समूही दुनिया की शक्ति-शक्ति से अपने सम्मान और स्वाभिमान की रक्षा करने में समर्थ हो सकता है बस्तूर कि उसका चित्र स्पर्श हो और संकल्प दृढ़ हों। निह्यों की अनुल शक्ति और उखड़ी इसी में है। यही अहिंसक रक्षा है जो किसी भी स्थिति में पराजय को न जानती है, न उसे स्वीकार करती है। इसलिए जिस राष्ट्र अथवा व्यक्ति-समूह ने अहिंसा को अपनी अंतिम नीति मान लिया है, उसे आनू बम भी अपनी दासता के लिए मजबूर नहीं कर सकता। (हरी, 18-8-1946, पृ. 265)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

अभी यह निर्धारण नहीं दिया है कि वह भारत की आज़ादी के संघर्ष को अहिंसक तरीके से चलाएगी। लेकिन उसने अभी यह निर्धारण नहीं दिया है कि वह किसी विदेशी आक्रांता से उस आज़ादी की रक्षा के लिए भी इसी तरीके को अपनाएगी।

मेरी दृष्टि में तो यह स्वतः स्पष्ट है कि यदि सभी को – शारीरिक रूप से दुर्बलतम, अपेक्षा और पंगु को भी – आज़ादी में बराबर की भागीदारी दी जानी है तो उसकी रक्षा में भी उन सभी को योगदान करना चाहिए। मेरे होशियार बुद्धि के मनुष्य के लिए यह समझ पाना असंभव है कि आग के इलाके को सहरार लिया गया तो यह कैसे संभव होगा? इसलिए मैं अहिंसा यादी संग्राम का आवाज के बल का कदर हिमायत है और रहूंगा। इसमें शारीरिक असमर्थता बाधक नहीं बनती और कमजोर सी स्थिति में बच्चा तक बराबर राजनीति का भागीदार बनते हुए शक्तिशाली-से शक्तिशाली हिंदीत्वों को लेकर प्रतिबंध लाया कर सकता है। (हरी, 21-4-1946, पृ. 94)

जिसे श्रेय दिया जाना चाहिए, उसे उससे बंधन करने से मेरी अहिंसा मुझे रोकती है, भले ही श्रेय का पात्र शहंसा में शवश्वास करने वाला शब्द हो। इसलिए यद्यपि मैं सुभाषचंद्र बोस के हिस्से में विश्वास और उनके परिवारी कायम के स्वीकार में नहीं किया, पर मैंने उनकी देशभक्ति, उपाय-कार्य और वीरता के लिए उनकी खुलकर प्रशंसा करने में संकोच नहीं किया। इसी प्रकार, यद्यपि मैं कश्मीरियों की सहायता के लिए संघ सरकार द्वारा हिंदीत्वों के इत्तेमाल का अनुमोदन नहीं किया और यद्यपि मैं शीश अबुल्ला द्वारा हिंदीत्व उठाए जाने से सहमत नहीं था, पर मैं उनके उपाय-कार्य और प्रशंसनीय आचरण के लिए उनकी तारीफ करने में संकोच नहीं किया। मैंने उनके इतिहास- सोहचक अशहंसक होती तो मैं आश्वासन देता, यद्यपि मैं आश्वासन होता कि इससे न केवल भारत की तस्वीर बदल जाएगी बल्कि संघ सरकार का मंत्रिमंडल, बल्कि शायद पाक मंत्रिमंडल भी, कश्मीर की रक्षा करने वालों का पक्षदायक बन जाएगा।

मैं जिस अहिंसक विधि का सुझाव देना चाहता हूँ, वह यह है कि रक्षकों को हिंदीत्वों की कोई सहायता न दी जाए। संघ सरकार उन्हें बेहतर अहिंसक सहायता दे। लेकिन कश्मीरी रक्षक, उन्हें भारत से अहिंसक मदद मिले या न मिले, विश्वास संख्या में जुटकर हमलावरों या अनुशासित सेना तक की शक्ति का प्रतिरोध करें। यदि कश्मीरी रक्षक अपने मन में हमलावरों के प्रति कोई दुःखित ना क्रोध लाए बगैर और किसी प्रकार के हिंदीत्व, यहाँ तक कि अपनी मुद्रा का भी इत्तेमाल किए बगैर अपने मोचन पर डटे रहकर प्राणोपनाम कर देते हैं तो यह ऐसे बहादुरी होगी जिसकी मिसाल इतिहास में नहीं मिलेगी। तब, कश्मीर एक ऐसी पत्तियाँ भूमि बन जाएगी जिसकी सुगंध केवल भारत ही नहीं अपितु सारी दुनिया में फैल जाएगी। (हरी, 16-11-1947, पृ. 413)
30. भारत के सामने चुनने के लिए मार्ग

मैं भारत से अहिंसा को अपनाने का आग्रह इस्लाम नहीं कर रहा कि वह दुर्बल है | मैं उसे अहिंसा का आचरण करने के लिए इस कारण कह रहा हूँ कि मुझे उसकी मजबूती और ताकत का अहसास है | भारत को अपनी मजबूती को पहचानने के लिए हथियारों की प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है | हमें इसकी आवश्यकता इसलिए प्रतीत होती है कि हम अपने को निरा मांस का लोध्डा मान बैठे हैं | (यंग, 11-8-1920, पृ. 3)

भारत को अपना मार्ग चुनना है | वह चाहे तो लड़ाई का रास्ता चुन सकता है और आज जहां है, उससे भी गहरे पतन के गर्म में दूब सकता है...यदि भारत युद्ध के द्वारा अपनी आजादी हासिल कर सके तो उसकी हालत फ्रांस या ब्रिटेन से बेहतर नहीं रहेगी बल्कि बदतर ही होगी....

शांति का मार्ग

लेकिन शांति का मार्ग उसके लिए खुला है | यदि उससे ध्यान हो तो उसका आज्ञां होना सुनिश्चित है | यद्यपि अपनी अधिक प्रकृति के कारण हमें शांति का मार्ग लंबा प्रतीत हो सकता है, पर यह होगा वस्तुतः सबसे छोटा ही | शांति के मार्ग से आंतरिक संवृद्धि और स्थिरता भी सुनिश्चित होती है | हम इस रास्ते को अपनाने से इसलिए इंकार कर देते हैं क्योंकि हम इस वहम के शिकार होते हैं कि इससे हमें शासक द्वारा हमारे ऊपर आरोपित हिंसा के वशयता होना पड़ेगा. | लेकिन जैसे ही हमें यह बात समझ में आ जाती है कि आरोपण केवल तथाकथित है, और हम अपने जीवन अथवा संपत्ति के नाम के लिए अपसूत्र होने के कारण, सबसे उस आरोपण के लिए अशांत: उत्तरदायी हैं, हमें सिर्फ यह करना जरूरी रह जाता है कि निष्क्रिय समर्थन की अपनी नकारात्मक प्रवृति में परिवर्तन ले आए | इस परिवर्तन से जो कष्ट होगा, वह युद्ध का मार्ग अपनाने के परिणामस्वरूप निष्क्रिय रूप से होने वाली शांतिक रीढ़ करने का प्रयास होता है कि इससे हमें जानियत हो जाएगा कि हम यह मार्ग अपने परिवर्तन के लिए अनुशंसा नहीं होने वाली पीढ़ियों को हानि पहुँचाती है | प्रश्न है कि अंतर सन्तिक के मार्ग का अनुसरण करने वाले मार्ग के लिये लाभप्रद होती है | यह प्रश्न पीड़ा की तरह सुकृत होती है....

शांति का मार्ग सत्य का मार्ग है | सत्यता शांतिमयता से भी अधिक महत्वपूर्ण है | वस्तुतः इंद्र हिंसा जो जनक है | सत्यिन्दु मनुष्य अधिक समय तक हिंसक नहीं रह सकता | उसे सत्य की शोध के द्वारा यह आभास हो जाएगा कि उसे हिंसा का आश्रय लेने की आवश्यकता नहीं है और उसे यह भी जान सके जब तक उसके अंदर हिंसा का तेश भी रहेगा, वह सत्य की शोध में सफल नहीं हो सकेगा | (यंग, 20-5-1926, पृ. 154)

अहिंसा को समझना इतना आसान नहीं है और उसे व्यक्ति में लाना और भी कठिन है, क्योंकि हम दुर्बल हैं | हमें भक्ति भाव से और विनाशार्थी कार्य करना चाहिए तथा निरंतर ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिए कि वह हमारे ज्ञानविद्या को खोलें | साथ ही, हमें प्रतिदिन ईश्वर से मिले आलोक के अनुसार कार्य करना चाहिए |
इसलिए आज तक शांति प्रेमी और शांति संवृत्तक के रूप में निर्माण करने के लिए छड़े गए अभियान में अहिंसा के प्रति अटल आश्वासन बनाए रखें। यदि भारत इस मार्ग पर चलकर स्वतंत्रता प्राप्त कर सका तो यह उसका विश्व-शांति के लिए सबसे बड़ा योगदान होगा। (यथा, 7-2-1929, पृ. 46)

पश्चिम की नकल नहीं

अज्ञात क्षण वाले चलने का फैशन है कि जो कुछ अमरीका और इंग्लैंड कर रहे हैं, वह हमारे लिए भी अच्छा है—युद्ध केवल पैसे का और विनाश के हथियारों के आविष्कार के लिए साधन-संपत्ति का मामला बन गया है।

अपना प्रयास व्यक्तिगत वीरता और सहनशक्ति से नहीं रहा। पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों को विनाश के घेरे में लेने के लिए अब मुझे एक बटन दबाकर क्षण भर में उनके ऊपर विष की वर्षा कर देना पर्याप्त है।

या हम अपनी रक्षा करने की इस विधि की नकल करना चाहते हैं? अगर हम चाहें भी, तो या हमारी विदेशी क्षमता इतनी है? हम निरंतर बढ़ते सैनिक व्यपार में स्वभावित करते हैं। लेकिन अगर हमने अमरीका या इंग्लैंड की नकल की तो हमें अपने रक्षा-व्यय-भार में यह गुनी वृद्धि करनी होगी।

राष्ट्र की हिंसा की सहायता से अहिंसा के मार्ग पर नहीं चलाया जा सकता। यह उसके भीतर से पैदा होने चाहिए।

इसलिए हमारे वात्सल्यात्मक प्रश्न यह है कि 'हमारी ताकाकलिक आकांक्षाएं क्या हैं?' क्या हम पहले पश्चिमी राष्ट्रों की नकल करके, कष्ट पाने के उपरांत, अस्पताल और भूक-भर्ती में, अपने औद्योगिक शक्तिपूर्ण मार्ग पर चलने रहकर उसके माध्यम से अपने आजादी जीतना और उसे कायम रखना चाहते हैं?

इसमें कार्यरता के साथ समझौता करने का कोई प्रश्न नहीं है। या तो हम विनाश का प्रशिक्षण लेकर शांतसज्जित हो जाएं—भले ही यह विनाश आस्तिकार्य हो। और इस प्रक्रिया में पीढ़ा भोगने का प्रशिक्षण भी ले लें या राष्ट्र की रक्षा अथवा उसे पराधीनता से मुक्ति दिलाने के लिए केवल पीढ़ा भोगने के लिए स्वयं को तैयार कर लें। दोनों ही मामलों में, वीरता के बिना काम नहीं चलेगा। हिंसक उपाय में व्यक्तिगत वीरता का उत्तना महत्व नहीं है जितना कि अहिंसक उपाय में। अहिंसक उपाय को अपनाने पर भी हम शायद पूरी तरह हिंसा का त्याग नहीं कर पाएंगे।

लेकिन तब हिंसा अहिंसा की वश्वार्ती होगी और राष्ट्र के जीवन में उसका महत्व निरंतर घटता जाएगा।

इस समय कम-से-कम विचार और वाणी में, राष्ट्रीय धर्म अहिंसा है, लेकिन ऐसा लगता है कि हम शाने-शाने: हिंसा की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं। सारे वातावरण में अधीरता व्याप्त है। हमारी कमजोरी हमें हिंसा पर उतारू से रोक देती है। आवश्यकता इस बात की है कि हम शक्तिशाली बनें और फिर जान-बूझकर हिंसा का त्याग करें।

इसके लिए कल्पनाशक्ति की तथा दुनिया के बेहाल के गहन अध्ययन की जरूरत है। आज पश्चिम की ऊपरी तड़क-बड़क हमें चकाचौड़ कर रही है और हम उस घुमेरी नृत्य को ही प्रगति मान बैठे हैं जो हमें रात-दिन
अपने मोहपात्र में बांधे हुए है | हम यह देखना ही नहीं चाहते कि यह हमें निष्क्रिय रूप से सर्वनाश की ओर ले जा रहा है | सबसे बड़ी कठिनाई है कि पश्चिमी राष्ट्रों से उनकी शर्तों पर प्रतियोगिता करना आत्महत्या के अलावा और कुछ नहीं है | अगर हम यह समझ लें कि हिंदु को आंध्री प्रबंधन के बावजूद, विश्व का नियमण नैतिक बल से होता है, तो हमें अहिंसा की असीम संभावनाओं पर पूरा भरोसा रखते हुए अपने आपको उसका प्रशिक्षण देना चाहिए | प्रलेख व्यक्ति यह स्वीकार करता है कि 1922 में यदि वातावरण का अहिंसक बनाए रखा गया होता तो हमें अपना लक्ष्य पूरी तरह प्राप्त हो गया होता | फिर भी, हम अहिंसा का सामयर्थ का जो आश्चर्यजनक प्रदर्शन – भले ही वह अपरिश्रुत था – कर सके, उससे स्वराज की मांग को ऐसा बल मिला जो आज तक काम है | सत्याग्रह के शुरू होने से पहले राष्ट्र जिस पक्षाधिक भय से त्रस्त था, वह सदा के लिए दूर हो गया है | इसलिए, मेरी राय में, अहिंसा एक धीर प्रशिक्षण है | यदि हमें जीवित रहना है और विश्व-शांति में महत्वपूर्ण योगदान करना है तो हमें दृढ़ता के साथ प्रशान्तता शांति का मार्ग चुन लेना चाहिए | (यंग, 22-8-1929, पृ. 276-77)

**युद्ध का विकल्प**

मैं लगभग पैतीस साल के अंतर्गत राजनीतिक अनुभव के बाद, अपने अंतरात्म में यह अनुभव करता हूँ कि दुनिया रक्तपात से बुरी तरह लंग आ चुकी है | वह मुक्ति का कोई मार्ग हमारी है और मैं यह सोच-सोचकर खुश हो लेता हूँ कि इस क्षुद्रता संसार को मुक्ति का मार्ग दिखाने का श्रेय शायद भारत की प्राचीन भूमि को ही मिले | इसलिए मुझे भारत के महान संग्रह में उसका हार्दिक सहयोग करने के लिए विश्व के महान राष्ट्रों को आमंत्रित करते हुए किसी प्रकार का कोई संकृत अनुभव नहीं होता | (इक्ले, पृ. 209)

मैं पूरी विश्वविद्या के साथ यह कहना चाहता हूँ कि यदि भारत सत्य और अहिंसा के जरिए अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेता है तो विश्व आज जिस शांति का भूखा है, उसमें उसके योगदान काफी महत्वपूर्ण होगा और, इस रूप में, वह उन राष्ट्रों को बदले में कुछ दे भी सकेगा जो आज खुलकर उसकी सहायता कर रहे हैं | (यंग, 12-3-1931, पृ. 31)

यदि स्वतंत्रता से उद्दीपन होकर भारत उस धर्म-पंथ का (अहिंसा का तथा भौतिक बल पर अनिश्चितता का) निवार्त कर सके तो दुनिया की कोई ताकत उस पर कभी अपनी कुदंडिति नहीं डाल सकेगी | यह भारत की सर्वोच्च महिमा और विश्व की प्रगति के लिए उसकी अमूल्य देन होगी | (हरि, 14-4-1946, पृ. 90)

**वीर की अहिंसा**

हमारी अहिंसा ने हमें स्वतंत्रता के द्वार पर ला खड़ा किया है | क्या हम इस द्वार में प्रवेश करने के उपरांत अहिंसा का ल्याग कर देंगे ? मुझे तो इस बात का दृढ़ विश्वास है कि जिस प्रकार अहिंसा ने हमें आजादी दिलाने में
प्रभावपूर्ण भूमिका निभाई है, उसी प्रकार यह विदेशी आक्रमण और अंतररिक अव्यवस्था का मुकाबला करने में भी एकदम पक्का और कारागर उपाय सिद्ध होगी।

भारत यदि वस्तुतः अहिंसक रहे तो उसे किसी विदेशी ताकत से दरने की ज़रूरत नहीं होगी, न उसे अपनी रक्षा के लिए ब्रिटेन की नौसेना या वायुसेना का मुंह ताकना होगा। मैं यह जानता हूँ कि अभी तक हम दीय की अहिंसा को हासिल नहीं कर पाए हैं। (हरिद, 21-4-1946, पृ. 95)

मैं यह स्पष्ट रूप से देख रहा हूँ कि यदि भारत अहिंसक न रहा तो यह उसके तथा विश्व के लिए बुरी बात होगी। इससे आज्ञादी हमारे हाथ से निकल जाएगी। हो सकता है कि हम सैनिक तानाशाही के शिकंजे में फंस जाएंगे। मैं दिन-रात यह विचार करता रहता हूँ कि दीय की अहिंसा का विकास किस तरह किया जाए।

मैंने एशियाई सम्मेलन में कहा था कि मुझे आशा है कि भारत के अहिंसक के सुरंग सारे विश्व को सुरक्षित कर देगी। मैं यह जानने को उत्सुक हूँ कि क्या मेरी यह आशा पूरी होगी? (हरिद, 27-7-1947, पृ. 253)

भारत का गरीब

भारत अब स्वतंत्र है और वासविकता मेरे सामने स्पष्ट होकर आ गई है। अब जब कि पराधीनता का बोझ हमारे ऊपर से उतर गया है, अब जब कि तमाम वातावरण एक ऐसे देश के निर्माण में लगा देनी चाहिए जिसने मानव संघर्ष को बड़े की कठोरता का विचार किया है। मुझे अभी यह विश्वास है कि भारत समयोग करेगा और दुनिया को दिखा देगा कि इसके लिए अहिंसा नहीं अपने वरदान है। स्वतंत्र भारत का यह कर्तव्य है कि यदि वह अपनी स्वतंत्रता को मूल्यवान समझता है तो सामूहिक संघर्ष को सुलझाने के लिए अहिंसा का शस्त्र को पूर्णता प्रदान करें। (हरिद, 31-8-1947, पृ. 302)

अहिंसा ने यातिरिक लोगों के शक्तिशाली राष्ट्र की बिना रक्षपात के आज्ञादी दिलाई है। भारत की आज्ञादी के परिणामस्वरूप ही बर्मा और लंका की भी आज्ञादी हासिल हो सकी है। जिस राष्ट्र ने हथियारों की सहायता के बिना आज्ञादी हासिल की है, वह बिना हथियारों के उसकी रक्षा करने में भी समर्थ सिद्ध होना चाहिए। यह इस तथ्य के बावजूद है कि भारत के पास एक दृष्ट सनां, निर्माणसही नौ सेना और एक वायु सेना है, और इनका आगे विकास किया जा रहा है। मैं समझता हूँ कि यदि भारत अपनी अहिंसक शक्ति का विकास नहीं करता तो उसने जो कुछ हासिल किया है, उसका उसके और दुनिया के लिए कोई महत्व नहीं है। भारत का सैन्यकरण फिर उसका और सारी दुनिया का विनाश कर देगा। (हरिद, 14-12-1947, पृ. 471)
31. भारत और अहिंसक मार्ग

मैं यह मानता हूँ कि कमजोर से भिन्न, वीर और बलशाली की अहिंसा का प्रचार करने में मैं अक्षम सिद्ध हुआ हूँ, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं यह नहीं जानता कि इस अमूल्य गुण का विकास किस प्रकार किया जाएगा। यह कहने के लिए बलशाली की अहिंसा की सीख देने के लिए कोई कार्यक्रम लागू ही नहीं किया गया, यह कहना ज्यादा सही होगा (पद्धति जब तक है तो) कि भारत अभी यह पाठ पढ़ने के लिए तैयार नहीं है। यह कहना पूर्णतः उचित होगा कि बलशाली व्यक्ति की अहिंसा का कार्यक्रम उतना आकर्षक नहीं है जितना आकर्षक कमजोर की अहिंसा का कार्यक्रम सिद्ध हुआ है। (हरि, 29-6-1947, पृ. 209-10)

मात्र वनक्तिर् प्रवतरोध अशहंसा से शभन्न, शनब्लिय प्रशतरोध में लोगों के हृदय पररवतकन के ब्लक्त नहीं है। यह कहना पूणकत: उशचत होगा। व्यब्लक्त की अशहंसा का कार्यक्रम उतना आक्राषक नहीं है जहां भारतीय गुण शनब्लिय प्रशतरोध की कोशिश करने के लिए तैयार है, वहीं वह अशहंसा का पाठ हृदयं गम करने के लिए तैयार नहीं है, और शायद यह चीज़ है कि इस स्वयं आक्राषक कमजोर की अशहंसा का कार्यक्रम सिद्ध हुआ है। (हरि, 29-6-1947, पृ. 209-10)

भहुत से लोग यह स्वीकार करते हैं कि रास्ता तो यह है, पर उनमें इस स्वर्णिम पथ पर चलने का साहस नहीं है। मैं पूरा जोर देकर यह घोषणा करना चाहता हूँ कि अशहंसा असफल नहीं हुई है, वह कभी असफल नहीं होती। लोग ही उसके अनुरूप सिद्ध होने में असफल हुए हैं। (हरि, 20-7-1947, पृ. 243)

मैं एक बात स्पष्ट कर दूं। मैंने साफ-साफ और पूरी तरह यह स्वीकार किया है कि पिछले तीस सालों से हम जो आचरण करते रहे हैं, वह अहिंसक प्रतिरोध नहीं था बल्कि निष्क्रिय प्रतिरोध था, जो कमजोर लोगों का साधन है, क्योंकि उनमें सशस्त्र प्रतिरोध करने की क्षमता अथवा इच्छा नहीं होती। (हरि, 27-7-1947, पृ. 251)

अगर हम अहिंसक प्रतिरोध का इस्तेमाल करना जानते होते जो सिर्फ मजबूत लोगों के ही बस की बात है, तो हम दो टुकड़ों में बंटे भारत के बजाए दुनिया के सामने आजाद भारत की बिलकुल दूसरी ही तस्वीर पेश कर सकते थे। आज ये दो टुकड़े आपसी संघर्ष में इस कदर व्यस्त हैं कि इन्हें उन लाखों भूखे-नंगे के भोजन और वस्त्र की व्यवस्था पर शांत मन से विचार करने का समय ही नहीं है जो किसी धर्म के नहीं जानते और जिनका भगवान जीवन-रक्षा के लिए आवश्यक वस्तुओं के रूप में ही उनके सामने प्रकट होता है। (हरि, 27-7-1947, पृ. 251)
यह कहना का अधिकार किसी को नहीं है कि जो बात आजादी की लड़ाई में हासिल नहीं की जा सकी, वह कभी हासिल करना मुमकिन नहीं होगा। सच पूरा जाने तो अहिंसा की श्रेष्ठता के प्रदर्शन का वास्तविक अवसर तो आज उपलब्ध हुआ है। माना कि हमारे नेता साधारण सैनिकों की भंवर में फंस गए हैं, पर यदि कुछ लोग भी अपने को इससे बाहर रख सकें तो उन्हें वीर की अहिंसा का उदाहरण प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त होगा और उनकी गिनती भारत के प्रथम सेवकों में की जाए।| (हरर, 31-8-1947, पृ. 302)

पुलिस बल

मेरी पूरी ज़िंदगी का रूप यह रहा है कि पुलिस से बचने की कोशिश न करूं और उसे अपने काम की ताक-झांक करने दू; बात यह है कि मुझे गोपनीयता से हमेशा नफरत रही है और पुलिस की निगरानी के प्रति तट्स्थ रहने के कारण मेरा जीवन और काम आसानी से चलता रहा है।| (हरर, 1-2-1948, पृ. 6)

अहिंसक राज्य में भी पुलिस बल रखना जरूरी हो सकता है। | (यंग, 16-5-1929, पृ. 159)
मेरी कल्पना की पुलिस आज के पुलिस बल से बिलकुल भिन्न होगी | इसमें अहिंसा में विश्वास करने वाले लोग भरती किए जाएंगे | वे जनता के स्वामी नहीं बल्कि सेवक होंगे | लोग सहज रूप से उनकी सब प्रकार की सहायता करेंगे और परस्पर सहयोग से वे बढ़ते उपद्रवों पर आसानी से काबू पा सकेंगे |

पुलिस के पास किसी-न-किसी तरह के हादियार तो होंगे लेकिन उनके इस्तेमाल की कभी-कभार ही आवश्यकता पड़ेगी, अगर पड़ी तो | सच पूछा जाए तो पुलिसकर्मी सुधारक के रूप में काम करेंगे | पुलिस का काम मुख्यतः लूटने और डाकुओं तक सीमित होगा |

अहिंसक राज्य में श्रमिकों और पूंजीपतियों के बीच झगड़े और हड़तालें कभी-कभार ही होंगी, व्यावहारिक राज्य की इसका प्रभाव इतना अधिक होगा कि समाज के सभी प्रमुख वर्ग उसकी तारीख आदर के साथ मानेंगे | इसी प्रकार, आंदोलनिक दंगों की भी कोई गुंजाई नहीं रहेगी | (हरर, 1-9-1940, पृ. 265)

स्वराज में मुझे और आपको ऐसा पुलिस बल प्राप्त होगा जो अनुशसत और पुराना होगा | वह आंतरराष्ट्रीय ध्यान सुनिश्चित करेगा और बाहरी हमलावरों से निपटेरा बशर्ट कि तब तक मैं या और कोई व्यक्ति इन दोनों के साथ लीटने का कोई बेहतर तरीका न खोजेंगे | (हरर, 25-1-1942, पृ. 15)

अपराध और दंड

अहिंसक तरीके के स्वाधीन भारत में अपराध होंगे, पर अपराध की नहीं होंगे | उन्हें दंड नहीं दिया जाएगा | अपराध भी किसी अन्य विकार की भांति एक रोग है जो वर्तमान सामाजिक प्रणाली से उत्पन्न होता है | इसलिए हल्ला सहित सभी अपराधों को रोगों की श्रेणी में गिना जाएगा | ऐसा समाज कभी अस्तित्व में आएगा या नहीं, यह अलग बात है | (हरर, 5-5-1946, पृ. 124)

आजाद भारत में जेल कैसे होने चाहिए ? सभी अपराधियों को रोगी माना जाना चाहिए और जेलों को अस्तित्व, जो इस प्रकार के रोगों को इलाज और आरोपित प्रदान करने के लिए भरती करें | कोई व्यक्ति केवल मजा लेने के लिए अपराध नहीं करता | अपराध रोगी दिमाग की निशानी है | रोग-विशेष के कारणों का पता लगाकर उन्हें दूर किया जाना चाहिए |

जेल जब अस्तित्व बनें तो उनके लिए आतीश इमारतों की जरूरत नहीं पड़ी चाहिए | इतना खर्च किया देश नहीं उठा सकता, और भारत जैसा गरीब देश तो और भी नहीं | लेकिन जेल के कर्मचारी वर्ग का दशकों अस्तित्व के डाक्टरों और नर्सों जेल होना चाहिए | केवल कैदियों को ऐसा लगे कि कर्मचारी उनके भित्र है | वे उनके उनका मानसिक स्वास्थ्य पुनः प्राप्त करते में मदद देने के लिए हैं, उन्हें किसी तरह सताने के लिए नहीं | लोकप्रिय सरकारों को इसके लिए आवश्यक आदेश जारी करते होंगे, लेकिन इस बीच जेल का कर्मचारी वर्ग अपने प्रशासन का मानवीकरण करने की दिशा में कुछ-न-कुछ प्रगति कर ही सकता है |
कैदियों का कर्तव्य क्या है? ....उन्हें आदर्श कैदियों की तरह व्यवहार करना चाहिए | उन्हें जेल का अनुशासन तोड़ने से बचना चाहिए | उन्हें वहां जो भी काम करने को दिया जाए, उसे दिल लगाकर करना चाहिए | मिसाल के तौर पर, जेल का खाना कैदी खुद बनाते हैं | उन्हें चावल, दाल और जो भी अनाज हों, उन्हें ठीक से साफ करना चाहिए ताकि उनमें पत्थर, कंकड़ और सुड़हां न रह जाएं | कैदियों को जो भी शिकायतें हों, उन्हें भद्रता के साथ जेल के अधिकारियों की जानकारी में लाए | उन्हें अपने छोटे-से समुदाय में इस तरह व्यवहार करना चाहिए कि जब वे जेल से छूटें तो जैसे आए थे, उससे बेहतर आदमी बनकर निकलें | (हरि, 2-11-1947, प. 395)
32. भारत और हिंसक मार्ग

यदि भारत तत्काल के सिद्धांत को अपनाता है तो संभवतः उसे क्षणिक विजय मिल जाए | लेकिन उस सूरत में भारत मेरे गौरव की वस्तु नहीं रह जाएगा | मैं भारत से इसलिए बंधा हूँ कि मेरे पास जो कुछ है, मैने भारत से पाया है | मूझे ऐसे बात में पूर्ण विष्कास है कि विश्व को देने के लिए भारत के पास एक संदेश है | उसे यूरोप का अंधानुकरण नहीं करना चाहिए |

भारत द्वारा तत्काल के सिद्धांत की स्वीकृति मेरी परीक्षा की घड़ी होगी | मूझे आशा है कि मैं उसमें खरा उतरूंगा | मेरे धर्म की कोई भौगोलिक सीमाएं नहीं हैं | यदि मूझे उसमें जीत-जागती आशा है तो वह भारत के प्रति मेरे प्रेम का भी अतिक्रमण कर सकेगी | मेरा जीवन अहिंसा के धर्म के माध्यम से भारत की सेवा के प्रति समर्पित है.... (यंग, 11-8-1920, पृ. 4)

यदि भारत हिंसा को अपना धर्म मान लेता है, और मैं जीतिव रहता हूँ, तो मैं भारत में रहने की परवाह नहीं करूंगा | तब वह मेरे अंदर गौरव की भवना जगाना बंद कर देगा | मेरी देशभक्ति मेरे धर्म के अर्थन है | मैं भारत के साथ इस प्रकार आबद्ध हूँ जैसे कि कोई शिशु अपनी माता की छाती से चिपका रहता है, क्योंकि मूझे लगता है कि मूझे जिस आध्यात्मिक पोषण की आवश्यकता है, वह मूझे भारत से प्राप्त होता है | इसका प्रयत्न मेरी उच्चतम आकांक्षाओं के अनुरूप है | यह आशा जिस दिन चली जाएगी, उस दिन में एक ऐसे अनाथ की तरह हो जाऊंगा जिसे अपने अभिभावक से मिल पाने की कोई आशा ही न रही हो | (यंग, 6-4-1921, पृ. 108)

निरस्त विजय

यह मैं जानता हूँ कि यदि भारत प्रस्ताव: अहिंसक उपायों से अपनी प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त करने में सफल हो जाता है तो उसे लंबी-चौड़ी ध्वं लेना, उतनी ही बड़ी नी लेना और उससे भी बड़ी वायु लेना की कभी जरूरत नहीं पड़ेगी | यदि उसकी आमचेतना इसी उठाई को छू लेती है कि वह उसे अपनी आज़ादी के संग्राम में अहिंसक विजय दिला सके, तो विश्व के मूल्यों में परिवर्तन आ जाएगा और युद्ध का अधिकांश साज-सामान बेकार दिखाई देगा। ऐसा भारत केवल एक दिवसाप्रा, बच्चे की मूर्खता भी हो सकती है | लेकिन अगर भारत अहिंसा के जरिए आज़ादी हासिल कर लेता है तो, मेरी राय में, उसका निहितार्थ यही होगा....उसकी आवाज़ एक शक्तिशाली राष्ट्र की आवाज़ होगी जो विश्व की समस्त हिंसक शक्तियों पर अंकुश रखने का प्रयास करेगी | (यंग, 9-5-1929, पृ. 148)

मैं नहीं कह सकता कि राष्ट्रीय सरकार क्या नीति अपनाएगी | शायद मैं बत तक जीतिव ही न रहूँ, हालांकि मेरी इच्छा तो बहुत है | यदि मैं जीतवा रहा तो मैं अधिकतम सीमा तक अहिंसा को अपनाने की सलाह दूंगा और वह विश्व शांति तथा एक नयी विश्व-व्यवस्था की स्थापना के लिए भारत का महान योगदान होगा | मूझे लगता है कि
भारत में अनेक युयुत्सु जातियां होने के कारण, उनकी बात तत्कालीन सरकार में जरूर सुनी जाएगी और राष्ट्रीय नीति सैन्यवाद के किसी संशोधित-परिकृत स्वरूप में पक्ष में ढुकेगी। मैं निर्दिष्ट रूप से आशा करनगा कि एक राजनीतिक बल के रूप में अहिंसा की सामर्थ्य को सिद्ध करना...व्यर्थ नहीं जाएगा और सच्ची अहिंसा का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई मजबूत पार्टी देश में विद्वान रहेगी। (हरी, 21-6-1942, पृ. 197)

राष्ट्रों के मंडल में भारत का स्थान क्या होगा? क्या वह पांचवें दर्जे की शक्ति के रूप में सिद्ध होगा? भारत को इसके लिए उसे किसी पाश्चात्य शक्ति का संरक्षण करना होगा। (हरी, 21-4-1946, पृ. 95)

...भारत को यह निर्णय करना होगा कि सैन्य शक्ति बनने के प्रयास में क्या हो, कम-से-कम कुछ वर्षों के लिए, विश्व में संदेश-रहित पांचवें दर्जे की शक्ति होकर संतुष्ट रह जाएगा....अथवा अपनी अहिंसक नीति का और परिशोध करके, उसे जारी रखना है...स्वयं के प्रथम राष्ट्र बन देगा, जो घोर संघटन के उपरांत प्राप्त अपनी स्वतंत्रता का इस्तेमाल शवश्व को इस शहंसा के अशभाप से मुक्त कराने के लिए करेगा। (हरी, 5-5-1946, पृ. 116)

सत्य और अहिंसा से प्रतिबद्ध स्वतंत्र भारत शक्ति अफ्रीका के निवासियों को शांति का पाठ पढ़ाएगा। लेकिन यह हमें और कांग्रेस को तय करना होगा कि स्वतंत्र भारत शांति के रास्ते पर चलेगा या तलवार के। यह सचमुच बुरी बात होगी अगर दुष्कर्म के छोटे राष्ट्र मानवता को उसकी बहुमूल्य विरासत से बचाव कर दें, यह बुरी बात होगी अगर वालीसौर की जनसंख्या बढ़कर उस प्रकार से छुप गयी और खतरनाक रूप में रह जाएगी। (हरी, 30-6-1946, पृ. 206-07)

यदि सम्हाला भारत शांति के शेष नियम को विचार कर ले तो वह सारे विश्व का निर्विवाद नेता बन जाएगा। (हरी, पृ. 181)

मैं तो बस प्रारंभ कर रहा हूं और आशा लगाए हूं कि एक नये और मजबूत भारत का उदय होगा – यह भारत पक्ष की तमाम वीभत्स चीजों का घटिया अनुकरण करने वाला युद्धप्रयाण राष्ट्र नहीं होगा। बल्कि एक ऐसा नूतन भारत होगा जो पक्ष की अच्छी बातों को सीखने के लिए तत्काल रहेगा और केवल एशिया तथा अफ्रीका ही नहीं बल्कि समस्त दक्षिण भारत की उपस्थिति को अपने चक्कर में ले आएगा।
लेकिन, पश्चिम की तड़क-भड़क की झूठी नकल और पागलपन के बावजूद, मेरे और मेरे जैसे बहुत-से-लोगों के मन में यह आशा बंधी हुई है कि भारत इस सांघातिक नृत्य से उबर जाएगा, और 1915 से लेकर बस्तीस साल तक उसने निरंतर अहिंसा का जो प्रशिक्षण लिया है, चाहे वह कितना ही अपरिपक्व हो, उसके बाद वह जिस नैतिक ऊंचाई पर बैठने का अधिकार है, उस स्थान पर आसीन होगा। (हरी, 7-12-1947, पृ. 453)

आकार में घटा हुआ किंतु आत्मा से शुद्ध भारत अब भी वीरों की अहिंसा की पाठशाला बन सकता है, और विश्व का नैतिक नेतृत्व ग्रहण कर सकता है तथा दलित एवं शोषित जातियों के लिए आशा और मुक्ति का संदेशार्थक बन सकता है। लेकिन एक दुर्वह और निष्पाण भारत पश्चिम के सैनिक राज्यों की तीसरे दर्जे की नकल बनकर रह जाएगा जो उनके आक्रमण का मुकाबला करने में सर्वथा असमर्थ होगा। मुझे अपने सपनों के भारत के समाप्त हो जाने पर जीवित रहने की कोई कामना नहीं है। (हरी, 18-1-1948, पृ. 513)
6. सत्याग्रह

33. सत्याग्रह का दिव्य संदेश

निक्षिप्र प्रतिरोध

निक्षिप्र प्रतिरोध एक चौमुंडा खड़ग है, इसे किसी भी तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है; यह उसका भी भला करता है जो इसका इस्तेमाल करता है और उसका भी जिसके विरुद्ध इसका इस्तेमाल किया जाता है | एक बूंद भी रक्त बहाए बिना, यह दूरगामी परिणाम देता है | न इसे जंग लगती है, न इसे कोई चुरा सकता है | (हिंदी, पृ. 82)

मेरा निश्चित मत है कि निक्षिप्र प्रतिरोध कठोर-से-कठोर हड़प को भी पिघला सकता है.... | यह एक उत्तम और बड़ा ही कारगर उपचार है...यह परम शुद्ध शस्त्र है | यह दुर्बल मनुष्य का शस्त्र नहीं है | शारीरिक प्रतिरोध करने वाले की अपेक्षा निक्षिप्र प्रतिरोध करने वाले में कहीं ज्यादा साहस होना चाहिए |

ऐसा साहस यीशु, डेनियल, क्रेमर, लेटिमर और रिडली में था जिन्होंने चुपचाप पीड़ा और मृत्यु का वरण किया; ऐसा ही साहस टाल्सटॉय में था जिसने रूस के जारों का साहस किया, जो इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है |

वस्तुतः एक ही पूर्ण प्रतिरोधकर्ता बुराई के विरुद्ध अच्छाई की विजय के लिए काफ़ी है | (यंग, 10-11-1921, पृ. 362)

मेरा दावा है कि....निक्षिप्र प्रतिरोध की विधि...सबसे सर्वोत्तम और सबसे सुरक्षित है, क्योंकि अगर प्रतिरोध का उद्देश्य सच्चा नहीं है तो हानि केवल प्रतिरोधकर्ताओं को ही पहुंचती है |

ईसा मसीह, डेनियल और सुकरात ने निक्षिप्र प्रतिरोध अथवा आत्मा के बल का सर्वोत्तम प्रतिनिधित्व किया | इन सभी महापुरुषों ने अपनी आत्मा की तुलना में अपने शरीर को कोई महत्व नहीं दिया |

टाल्सटॉय इस सिद्धांत के सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ (आधुनिक) प्रतिपादक थे | उन्होंने न केवल इसका प्रतिपादन किया बल्कि इसे अपने जीवन में उतारा भी | भारत में, इस सिद्धांत को, पश्चिम में इसका चलन होने से बहुत पहले ही, समझा और सामान्यतया व्यवहार में लाया जाता था |

यह समझना आसान है कि आत्मा का बल शरीर के बल से अत्यधिक श्रेष्ठ है | बुराई के प्रतिकार के लिए लोग यदि आत्मा के बल का सहारा लेना शुरू कर दें तो बहुत-सी मौजूदा परेशानियां दूर की जा सकती हैं |
किसी भी स्थिति में, आत्मा के बल का आश्रय किसी अन्य व्यक्ति को पीड़ा नहीं पहुंचाता | इसलिए जब भी इसका दुरुपयोग किया जाता है, यह केवल इसके प्रयोगकर्ता को हानि पहुंचाता है, उसको कभी नहीं जिसके विरुद्ध इसका प्रयोग किया गया है | सदुपयोग की भांति, यह अपना पुरस्कार स्वयं है | आत्मा के बल के इस्तेमाल में असफलता की कोई गुंजाई ही नहीं है | (स्पीरा, पृ. 165)

बुद्ध ने भयरशम्ति के बीच जा-जाकर संग्राम किया और एक उद्धार पुरोहितवाद को घुटने पकड़कर दिखाने के लिए लगाया जिसके द्वारा इसका उद्देश्य अन्य व्यक्तियों को पीड़ा पहुंचाने के लिए किया जा सकता था | इसे प्रयोग करने वाले बुद्ध हैं जिन्होंने अपने बल के इस्तेमाल को हाशिया पहुंचाने के लिए उद्देश्य किया | उसके निकाय को स्वयं का पुरस्कार स्वयं है | आत्मा के बल के इस्तेमाल में असफलता की कोई गुंजाई ही नहीं है | (स्पीरा, पृ. 165)

सविनय अवज्ञा

अवज्ञा सविनय तभी मानी जा सकती है जब वह सच्चे हृदय से की जाए, आदरभाव में किया जाए, उसकी संयमितता हो, अन्य देशवासियों के साथ ही वह उद्देश्य के लिए समर्पित सिद्धांतों पर आधारित हो, ब्रह्मचारियों के दोष से मुक्त हो और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसके पीछे कोई द्वेष या धृष्टिकोण की भावना न हो | (यंग, 24-3-1920, पृ. 4)

मेरी निश्चित राय है कि सविनय अवज्ञा वैश्विक आंदोलन का विशेषत्व है | हां, यदि उनका ‘सविनय’ अर्थात अंतरराष्ट्रीय केवल भावनावर्धन है तो वह घटित नहीं होगा तथा तत्कालीन रूप से विविध संस्करण है | यदि अंतरराष्ट्रीय प्रकरण पूरी तरह से डूब जाए तो मौलिकता अवज्ञा भी हिस्सा को नहीं भड़काएगी, अत: उसकी निंदा करने का अवसर ही नहीं आएगा |

कोई बड़ा या तेज आंदोलन भरपूर जोखिम लिए बिना नहीं चलाया जा सकता, और बड़े-बड़े जोखिमों से भरी न हो तो जिंदगी जीने योग्य नहीं मानी जा सकती | क्या संसार का इतिहास यह नहीं बताता कि अगर जोखिम न रखता है तो जिंदगी में कोई समांच ही न होता?
विवेकचार का स्वरूप
सत्याग्रह की पहली अपरिहार्य पूर्व-शर्त यह है कि उसमें भाग लेने वालों या सामान्य जनता की ओर से हिंसा श्रृंखला न किए जाने की पक्की गारंटी हो। हिंसा भड़क उठने पर यह कहना बेमानी होगा कि उसे सत्याग्रह प्रति सटीक कार्यान्वयन के विरुद्ध अन्य तत्वों द्वारा प्रेरित किया।
भेदभाव से वापस न जाने की पक्की गारंटी हो, अगर वह भेदभाव से वापस न जाने की पक्की गारंटी नहीं मिलती है।
(एप्रोकु, पृ. 347)

पूर्व-शर्त
सत्याग्रह की खूबी यही है कि आदमी को इसकी कहीं बाहर जाकर खोज नहीं करनी पड़ती; वह उसके सामने खुद आ खड़ा होता है। स्वयं सत्याग्रह के सिद्धांत में ही यह गुण अंतर्निहित है।
धर्मपूर्व, जिसमें न कोई बातें गोपनीय रखने की होती हैं और न जिसमें धूतकता तथा असत्य के लिए कोई स्थान होता है, बिना खोजे प्रकट हो जाता है, और धर्मपूर्व व्यक्ति उसके लिए सदा तत्पर रहता है।
जिस संघर्ष की पहले से बाकायदा योजना तैयार करनी पड़े, वह धर्मसम्मत संघर्ष नहीं माना जा सकता।
धर्मसम्मत संघर्ष में तो ईश्वर स्वयं अभियानों की योजना बनाता है और लड़ाइयों का संचालन करता है।
धर्मपूर्व केवल ईश्वर के नाम में लड़ा जा सकता है; सत्याग्रही जब स्वयं को बिलकुल लार्ड अनुभव करता है, टूटने की स्थिति में होता है और उसे चार और पूर्ण अंधकार दिखाई देता है, तब ईश्वर उसकी मदद के लिए आ पहुंचता है।
(ससा, पृ. xiv)
सत्याग्रह पर अमल करते हुए मुझे शुरु के चरणों में ही यह लग गया था कि सत्य के अनुकरण में विरोध पर हिस्सक वार करने की अनुमति नहीं है, बल्कि उस सैत्य तथा सहानुभूति से अपनी गलती को दूर करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए | बात यह है कि कोई चीज़ जो एक आदमी को सही होने की नजर नहीं है, वही दूसरे को गलत लग सकती है | और, धर्म का अर्थ है आत्मीय | इस प्रकार, सत्याग्रह के सिद्धांत का अर्थ हुआ विरोधी के बजाए स्वयं को पीड़ित करके सत्य को प्रमाणित करना | (रिक्य)
सत्याग्रह और उसकी प्रायोगिक असहयोग तथा सविनय प्रतिरोध, और कुछ नहीं बल्कि पीड़ा के नियम के ही नये नाम है | (यंग, 11-8-1920, पृ. 3)
सत्य और अहिंसा के बीच, तुम सारी दुनिया को अपने कठोर में गिरा सकते हो | सार रूप में, सत्याग्रह और कुछ नहीं बल्कि राजनीतिक यानी राष्ट्रीय जीवन में सत्य और शालीनता की प्रतिष्ठा है | (यंग, 10-3-1920, पृ. 3)
सत्याग्रह पूर्ण अनालसंशांसा, अधिकतम विनम्रता, असीम धर्म तथा प्रदीप्त आस्था है | यह अपना पुरस्कार स्वयं है | (यंग, 26-2-1925, पृ. 73)
सत्याग्रह सत्य की अथक खोज और उसको पहुंचने का रद्द संकल्प है | (यंग, 19-3-1925, पृ. 95)
यह ऐसा बता जा सकता है जो चुपचाप, और, जाहिर तार पर, धीरे-धीरे काम करता है | परंतु वास्तविकता यह है कि संसार में इससे ज्यादा प्रत्यक्ष और दूरत गति से काम करने बाला कोई दूसरा बल नहीं है | (यंग, 4-6-1925, पृ. 189)
सत्याग्रह शब्द का प्रयोग प्रायः बड़े शिथिल रूप में किया जाता है और उसमें प्रभुत्र हिंसा का भाव भी शामिल भाव भी होता है | लेकिन इस शब्द का जनक होने के नाते में यह स्पष्ट करने की अनुमति चाहिए हूँ कि इसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नहीं है, यथार्थता का विषय है | इसमें मनुष्य, बाध्यता, अपवाद, सकारात्मक हिंसा का कोई स्थान नहीं है | विरोधी को हानि पहुंचने के विचार से उसके प्रति भ्रष्ट भाव रखना या उससे अथवा उसके बारे में कठोर वचन बोलना सत्याग्रह को दोहराना है... 
सत्याग्रह में शालीनता है, यह कभी चोट नहीं पहुंचाता | यह क्रोध या दुर्भावना का परिणाम नहीं होता | इसमें बर्तगड़पन, अदृशों और चोर-शराबों के लिए कोई स्थान नहीं है | यह बाध्यता का प्रत्यक्ष विलोम है | इसकी अवतारण हिंसा के पूर्ण स्थानांतर के तौर पर की गई थी | (हरि, 15-4-1933, पृ. 8)
सत्याग्रह का संघर्ष उसके लिए है जो भावना का दूर हो, जिसके मन में न संशय हो और न भीरूता | सत्याग्रह हमें जीने और मरने, दोनों की क्ला सिखाता है | देहधारियों का जन्म और मरण तो अवश्यभावी है | मनुष्य को पशु से भिन्न सिद्ध करने वाली चीज़ सिफर यह है कि मनुष्य अपनी आत्मसिद्धि के लिए बराबर सचेतन प्रयास करता रहता है | (हरि, 7-4-1946, पृ. 74)
विकासशील विज्ञान
सत्याग्रह के विषय में मेरा ज्ञान दिनोंदिन बढ़ रहा है | मेरे पास जल्द के वक्त मार्गदर्शन के लिए कोई पाठ्यपुस्तक नहीं होती, गीता तक नहीं होती जिसे मैं अपना कोश मानता हूं | मेरी धारणा का सत्याग्रह एक विज्ञान है जो अभी विकास की प्रक्रिया में है | हो सकता है कि जिसे मैं विज्ञान मान रहा हूं, वह विज्ञान सिद्ध ही न नहीं पाए और अगर पागल नहीं तो मानते किसी मुख्य का सोच और कारागुजरारी ही साबित होकर रह जाए | संभव है कि सत्याग्रह की सच्चाई जानिए | लेखक यह अभी तक विश्व समस्याओं, और खासकर युद्ध की भीषण समस्या, के समाधान में किसी काम का स्वीकार नहीं किया गया है | हो सकता है कि इसमें जो नयी बात मानी जा रही है, उसका युद्ध की समस्या के समाधान में कोई वास्तविक महत्व ही सिद्ध न हो पाए | यह भी हो सकता है कि जिन्हें सत्याग्रह अर्थात अहिंसा की सफलता की मानना माना जा रहा है, वे वस्तु: सत्य और अहिंसा की सफलता न होकर हिंसा के भय से उत्पन्न सफलता ही हो | मैं लाचार हूं | मुझे अपनी प्रार्थना का जो उत्तर भगवान से मिलता है, मैं अनुसरण के लिए वही राष्ट्र को प्रस्तुत करना चाहता हूं | (हरे, 24-9-1938, पृ. 266)

सत्याग्रह की तकनीक
विजेता के हाथ अपनी आत्मा को बेचने से इंकार करने का अर्थ है कि तुम वह काम नहीं करोगे जिसे करने के लिए तुम्हारी अंतः क्षेत्र तुम्हें रोकती है | मान लो कि 'शाथ' तुम्हें जमीन पर नाक रगड़ने या अपना कान पकड़ने या इसी तरह के कोई लज्जाजनक काम करने के लिए कहते हो तुम इन्हें करने से इंकार कर दोगे | लेकिन यह तुम्हें तो अपनी संपदा छीन ले तो तुम्हें उसे अपने पास रखना तभी तक रखोगे जब तक दुःख रहने देगी | अपने मन के बाद में न होने का अर्थ यह है कि तुम किसी प्रलोभन के शिकार नहीं होगे | आदमी पाय: इतना दुर्लभ मजबूत होता है कि वह लालच और मीठे शब्दों के जाल में फंस जाता है | हम अपने सामाजिक जीवन में यह रोज देखते हैं दुर्लभ मजबूत होता है | दुर्लभ मजबूत व्यक्ति सत्याग्रही नहीं हो सकता | सत्याग्रही का 'न' अट्ल 'न' और उसका 'हां' शाश्वत 'हां' होता है | केवल ऐसे ही व्यक्ति में सत्य और अहिंसा का पुजारी होने की ताकत होती है | लेकिन यह जरूर है कि आदमी को दृढ़ निश्चय और जिद्द का फर्क समझना चाहिए | यदि 'हां' अथवा 'न' कह देने के बाद आदमी को लगे कि उसका फैसला गलत था और इस जानकारी के बाद भी वह अपनी बात पर अट्टा रहे तो
यह जिद या मूर्खता होगी | कैसला लेने से पहले सभी बातों पर सावधानी से और गहराई के साथ विचार कर लेना जरूरी है।

किसी को स्वामी मानकर उसके प्रति निश्चित रूप से इंकार करने का अर्थ स्पष्ट है | इसका अर्थ है कि तुम विजेता के प्रभुत्व के आगे छुड़कोगे नहीं, तुम उसे उसका उद्देश्य पूरा करने में सहायता नहीं करोगे | हर हिटलर ने कभी ब्रिटेन पर कब्जा करने का सपना नहीं देखा | वह यह चाहता है कि ब्रिटेन पराजय विजेता करे | तब विजेता पराजित से जो चाहे मांग सकता है और पराजित को विवश होकर उसकी बात माननी पड़ेगी | लेकिन अगर वह पराजय विजेता न करे तो शात्रु तब तब लड़ेगा जब तक वह अपने विरोधी को मार नहीं डालता | पर सत्याग्रही तो विरोधी द्वारा मारे जाने का प्रयास करने से पहले ही शरीर से मृत है, अर्थात उससे अपने शरीर का भी राज लाए है और केवल आत्मा की विजय में जीता है | जब वह पहले ही मर चुका है तो वह किसी और को मारने के लिए आतुर नहीं होगा | मारते हुए मरने का वास्तविक अर्थ है पराजित होकर मरना | क्योंकि शात्रु जो चाहता है, वह यदि तुमसे जीते ही प्राप्त नहीं कर सकता तो वह तुम्हें मार कर प्राप्त करना चाहेगा | दूसरी ओर, अगर उसे यह लगे कि अपनी जीवन-रक्षा के लिए भी उसके खिलाफ हाथ उठाना का तांत्रिक संकाय भी इरादा नहीं है, तो तुम्हें मारने का उसका उद्देश्य पूरा करेगा | हर शक्तिकार के अनुभव यही है | किसी ने किसी को आज तक गाय का शिकार करने नहीं सुना | (हर्द, 18-8-1940, पृ. 253-54)

**पीड़ा-भोग की शक्ति**

क्रोध अथवा दुर्भाग्य के भीतर भी अज्ञात पथ पर सुधारने की शक्ति है | जब इसकी शीघ्र दृष्टि ही अज्ञात भी होने का कारण है | | (यंग, 19-2-1925, पृ. 61)

पीड़ा-भोग की भी चुनिंदा सीमाएं हैं | यह बुद्धिमत्तापूर्ण और अ-बुद्धिमत्तापूर्ण, दोनों ही प्रकार का हो सकता है, और जब इसकी सीमा पार हो जाए तो इसे जारी रखना अ-बुद्धिमत्तापूर्ण ही नहीं बल्कि मूर्खता के चरम सीमा है | (यंग, 12-3-1931, पृ. 30)

सबसे पीड़ा-भोग को खुद अपना अभास नहीं होता और वह कभी गणित नहीं लगाया | उसका अपना एक आंनद है जो सभी प्रकार के अनेकों से बढ़कर है | (यंग, 19-3-1931, पृ. 41)

मुझे दिनोंदिन यह विश्वास होता जा रहा है कि लोगों के लिए बुनियादी महत्व की चीज़ें तक करने वाले ही सहारे प्राप्त नहीं की जा सकती, बल्कि पीड़ा-भोग के रूप में मूल्य चुकाकर खरीदनी पड़ती है | पीड़ा-भोग मानव जाति का नियम है, युद्ध जंगल का नियम है | विरोधी का हद्द-परिवर्तन करने और विवेकसम्मत बात के लिए बंद उसके कानों को खोलने के लिए जंगल के नियम से कहीं ज्यादा शक्तिशाली नियम पीड़ा-भोग का है | (यंग, 5-11-1931, पृ. 341)
सत्याग्रही की संहिता

सत्याग्रही भय को सदा के लिए छोड़ देता है। इसलिए वह विरोधी पर विश्वास करने से कभी डरता नहीं है। विरोधी बीस बार भी उसको धोखा देते जाए, वह इक्कीसवीं बार उस पर विश्वास करने के लिए तैयार रहेगा। बात यह है कि मानव प्रकृति में अड़ा विश्वास ही सत्याग्रही के धर्म का सार है। (ससा, पृ. 159)

जिसमें कानून का पालन करने की सहज वृत्ति न हो, वह सत्याग्रही नहीं। कानून का पालन करने की अपनी प्रकृति के कारण ही वह सम्बंधित विधि, अर्थात् अपनी अंतर्विष्टि की आवाज, का निर्देश होकर पालन करता है। (स्वीरा, पृ. 465)

चूँकि सत्याग्रही सौगात की कारर्वाई का सबसे शक्तिशाली रूप है, इसलिए सत्याग्रही सत्याग्रह शुरू करने से पहले बाकी सब तरीकों पर अमल करके देख लेता है। तदनुसार वह पहले संबंधित प्राधिकारी से संपर्क करेगा और उसे जारी रखेगा, फिर जनमत का ध्यान आकर्षित करेगा, लोगों को संबंधित समस्या से अवगत कराएगा, जो उसकी बात सुनना चाहते हैं। उनके समक्ष शांतिपूर्वक अपना पक्ष प्रस्तुत करेगा, और जब सभी उपाय छूक जाएंगे तब सत्याग्रह की शारणा लेगा। लेकिन एक बार अंतर्विष्टि का आदेश सुन लेने के बाद यदि वह सत्याग्रह शुरू कर देता है तो फिर किसी भी हालत में उससे पीछे नहीं हटेगा। (यंग, 20-10-1927, पृ. 353)

सत्याग्रही यद्यपि हर समय संघर्ष के लिए तैयार रहता है, पर उसे शांति के लिए भी उत्सुक रहना चाहिए। उसे शांति के किसी भी सम्मानजनक अवसर का स्वागत करना चाहिए। (यंग, 19-3-1931, पृ. 40)

मेरा परम्परा एक मात्र सत्याग्रह पर ही अवलंबित रहना का है। आज़ादी प्राप्त करने का कोई अन्य अथवा बेहतर उपाय नहीं है। (हरी, 15-9-1946, पृ. 312)

सत्याग्रही की संहिता में पशुस्वार के समक्ष आमसमर्पण करने जैसी कोई चीज़ नहीं है। समर्पण करना ही है तो पीड़ा के प्रति, संयमीत्व के प्रति कभी नहीं। (यंग, 30-4-1931, पृ. 93)

सत्याग्रही के नाते मुझे अपने पक्ष की अन्य व्यक्तियों द्वारा समीक्षा एवं पुन:समीक्षा के लिए सदा प्रस्तुत रहना चाहिए और अगर कहीं कोई क्रूटि पाई जाए तो तुरंत उसका सुधार करना चाहिए। (हरी, 11-3-1939, पृ. 44)

सत्याग्रही की योग्यताएं

मेरा विचार है कि भारत के प्रत्येक सत्याग्रही में....निम्नलिखित योग्यताएं होनी चाहिए:

(1) उसे ईश्वर में जीती-जागती आस्था होनी चाहिए, यथाकौशल वही तो उसका एक मात्र अवलंब है।

(2) उसे सत्य और अहिंसा को अपना धर्म मानते हुए उनमें विश्वास रखना चाहिए और इसी कारण, उसे मानव-प्रकृति की अंतर्निहित अच्छाई में भी आस्था होनी चाहिए। उसे आशा रखनी चाहिए कि वह इसी अच्छाई को अपने जीवन-भोग के जरिए सत्य तथा प्रेम की अभिव्यक्ति करके जगाने में कामयाब होगा।
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

(3) उसे पवित्र जीवन व्यतीत करना चाहिए और अपने ध्येय की पूर्ति के लिए अपने जीवन और अपनी संपत्ति को न्यौताबर करने के लिए तैयार तथा इच्छुक रहना चाहिए।

(4) वह आदतन खादी धारण करने वाला तथा चरखा कातने वाला होना चाहिए। भारत के संदर्भ में यह आवश्यक है।

(5) वह महात्मा गांधी और अन्य नशीले पदार्थों के सेवन से मुक्त होना चाहिए ताकि उसका व्यवेश सदा जागृत रहे और चिंतित रहे।

(6) वह समय-समय पर निर्धारित अनुशासन के नियमों का स्वीकार से पालन करे।

(7) उसे जेल के नियमों का पालन करना चाहिए, सिवा उन नियमों के जो उसके आत्मसम्मान को चोट पहुंचाने के लिए विशेष रूप से बनाए गए हों।

उपयुक्त नियमवाली सर्वसमावेशी नहीं है जो वह केवल दृष्टिकृत है। (हरर, 25-3-1939, पृ. 64)

सत्याग्रही शैतान की पीठ पर सवार होकर तो स्वगक भी नहीं जाएगा। (हरर, 15-4-1939, पृ. 86)

सत्याग्रह में कपट, मिथ्यात्व या किसी प्रकार के असत्य के लिए कोई स्थान नहीं है। (बांक्रा, 9-8-1942)

सत्याग्रही सम्मानजनक शातिरों पर समझौता करने का कोई असंवेदनशीलता क्षण नहीं है। उसकी कार्यवाही में किसी तरह की गोपनीयता नहीं होनी चाहिए। (यंग, 16-4-1931, पृ. 77)

लोग प्रायः यह भूल जाते हैं कि सत्याग्रही का उद्देश्य अन्यायी को लक्षित करना कभी नहीं हो सकता। उसकी अभ्यंतरीय अन्यायी के बयान से नहीं, किन्तु उसके इदार के स्वरुप से होती है और उस पर हमेशा छावा रहता है। उसकी उपरोक्त अन्यायी पर जोर-जबरदस्ती करना नहीं, बल्कि उसका हृदय-परिवर्तन करना है। उसे अपने समस्त व्यवहार में बनावटीपन से बचना चाहिए। (बांक्रा, 9-8-1942, पृ. 64)

सत्याग्रह मूलतः स्वयंशिष्ठ व्यक्ति का हथियार है। सत्याग्रही अहिंसा से प्रतिबद्ध होता है और जब तक लोग मनसा, वाचा, कर्मण इसका पालन न करें, उसके सत्याग्रह नहीं कर सकता। (ए, पृ. 345)

मेरी सदा से यह घरेणा रही है कि अपनी गलतियों को उत्तम तंत्र से और दूसरों की गलतियों को अवतल तंत्र से देखने पर ही दोनों की न्यायिक तुलना की जा सकती है। मेरा विश्वास है कि जो सत्याग्रही बनना चाहता है, उसके लिए ध्यानपूर्वक और इमानदारी के साथ इस नियम का पालन करना आवश्यक है। (वही, पृ. 346)
सत्याग्रही पशुबल की यंत्रणा से बचाव के लिए भगवान पर भरोसा रखता है.... (हरर, 7-4-1946, पृ. 73)
कोई पक्का सत्याग्रही अपने विरोधी की ओर से आने वाले अपेक्षित या अनपेक्षित खतरों से घबराता नहीं है | हां, हर सेना की तरह, उसे भी अपने भीतर के खतरे से भय खाना चाहिए | (हरर, 14-7-1946, पृ. 220)

सत्याग्रह और दमन

जिस प्रकार अनचाहे युद्ध से सिपाही को प्रशिक्षण मिल जाता है उसी प्रकार दमन से सत्याग्रही प्रशिक्षित होता है | सत्याग्रहियों को दमन के कारणों का प्लान लगाना चाहिए | वे पाएंगे कि दमित व्यक्ति किंचित शक्ति-प्रदर्शन से ही सरलतापूर्वक डर जाते हैं और पीड़ा-भोग तथा आत्मबलिदान के लिए तैयार नहीं होते | यही सत्याग्रह के प्रथम पाठ पढने का समय होता है |

जिन्हें सत्याग्रह के अनुल बल का थोड़ा-सा भी ज्ञान है, उन्हें अपने पड़ोसियों को कमजोरी तथा लाचारी के साथ नहीं बल्कि बहाऊरी के साथ और जान-बूझकर दमन को बदामित करना सिखाना चाहिए....

तब भी, तैयारी के अनुतेजक नियम सत्याग्रह के प्रशिक्षण का सबसे महत्वपूर्ण अंग है |

जब तक सत्याग्रह का इच्छुक व्यक्ति प्रशिक्षण के आवश्यक चरणों से नहीं गुजरेगा, जो बड़ा जानमारू काम है, तब तक वह प्रबल एवं सक्रिय अहिस्ता का विकास नहीं कर सकता | (हरर, 8-4-1939, पृ. 80)
34. सत्याग्रह की शक्ति

सत्याग्रह की विजय

जब तक दुर्भाव्य है तब तक सत्याग्रह की स्पष्ट विजय असंभव है | लेकिन जो अपने को दुर्भाव्य समझते हैं, वे प्रेम करने में असमर्थ होते हैं | इसलिए हमारा पहला काम यह होना चाहिए कि प्रतिदिन प्रताकाल यह संकल्प करें : 'मैं दुनिया में किसी से नहीं डरूँगा | मैं केवल ईश्वर से डरूँगा; मैं किसी के प्रति दुर्भाव्य नहीं रखूँगा | मैं किसी का अन्याय सहन नहीं करूँगा | मैं असत्य पर सत्य का प्रशर करूँगा और असत्य का प्रतिकार करते हुए हर प्रकार की पीड़ा को भोगने के लिए तैयार रहूँगा' | (सं, स. 14, 4-5-1919)

सत्याग्रही के लिए, समय की कोई सीमा नहीं होती, न उसकी पीड़ा-भोग की क्षमता की कोई सीमा होती है | इसलिए सत्याग्रह में पराजय नाम की कोई ज़रूर नहीं है | (यंग, 19-2-1925, पृ. 61)

ऐसा नहीं है कि देह को कम महत्व देने के कारण मैं सत्याग्रह में हजारों लोगों को स्वेच्छा से प्राप्त करने का उत्सर्ग करते हुए देखकर प्रसन्न होता हूँ | बात यह है कि मैं यह जानता हूँ कि, दीर्घकाल में, सत्याग्रह में प्राप्त होने की हानि न्यूतम होती है और यह बलदानियों का उदात्तकरण तो करती है, उनके बलदान से पृथ्वी का भी उदात्तकरण होता है | (यंग, 8-10-1925, पृ. 345)

एक बार यह चीज़ शुरू हो जाए और यदि यह काफ़ी गहन होता है तो इसका प्रभाव संपूर्ण विश्व में व्याप्त हो सकता है | (यंग, 23-9-1926, पृ. 332)

मेरा अनुमान है कि हर व्यायोत्त संघर्ष पर गुणोत्तर वृद्धि का नियम लागू होता है | लेकिन सत्याग्रह के मामले में तो यह नियम स्वयंसिद्ध है | जैसे-जैसे सत्याग्रह-संघर्ष प्रगति करता है, अन्य अनेक तव उसके बल प्रदान करने लगते हैं और उससे प्राप्त परिणामों में निरंतर वृद्धि होती जाती है | यह वस्तु: अपररहायक है, और सत्याग्रह के प्रमुख सिद्धांत के साथ ही जुड़ी है | जब तक यह दुष्कर्षण नहीं होता, हम काफ़ी गहन होते हैं तो इसलिए सत्याग्रह में पीछे हटने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता; उसकी एक ही गति संभव है और वह है प्रगति | अन्य प्रकार के संघर्षों में मांग को थोड़ा ऊंचा करके रखा जाता है ताकि भविष्य में उसमें कुछ कमी करने की गुणजायता रहे, इसलिए उन सब में गुणोत्तर वृद्धि का नियम निरपेक्ष रूप से लागू नहीं होता | (सा, पृ. 319)

मेरी दृष्टि में सत्याग्रह दुनिया के सर्वाधिक सक्रिय बलों में से एक है | यह जीवन और प्रकाश तथा शांति एवं सुख का प्रसार करता है | (यंग, 18-4-1929, पृ. 126)
एक सच्चा सत्याग्रही
अगर एक सत्याग्रही भी अंत तक डटा रहे तो विजय निदेशित है | (ससा, पृ. xiv)

मरते हुए मरने वाले लाखों आदमियों के बलिदान के मुकाबले एक निर्दोष व्यक्ति का आत्मबलिदान लाखों गुना ज्यादा असर फैला करता है | निर्दोष का सच्चा बलिदान उद्दंत कृत्ता का ईश्वर अथवा मनुष्य द्वारा अभी तक सोचा गया सबसे शक्तिशाली प्रतिकृति है | (यंग, 12-2-1925, पृ. 60)

मेरी यह धारणा रही है कि फकर एक आदमी भी पूरी तरह अहिंसक रहे तो वह बड़ी-से-बड़ी अग्रि का शमन कर सकता है...लेकिन लोकतंत्र के इस युग में यह आवश्यक है कि अभीष्ट परिभाषा में लोगों के सामूहिक प्रयास से प्राप्त किये जाएं | किसी एक अत्यंत शक्तिशाली व्यक्ति के प्रयास से ध्येय की प्राप्ति के बजाय ज्यादा असर पैदा करता है, लेकिन उससे समुदाय को अपनी सामूहिक शक्ति का बौध कभी नहीं हो सकता | (हरर, 8-9-1940, पृ. 277)

मैं अकेला चलने में विश्वास करता हूँ | मैं अकेला ही इस दुनिया में आया, अकेला ही मौत के साथ की घाटी में चला हूँ, और समय आने पर अकेला ही यह दुनिया छोड़ जाऊँगा | मैं जानता हूँ कि मैं निपट अकेला होऊँ तो भी सत्याग्रह छेड़ने का मुद्दा परफॉर्म समाध्य है | मैंने पहले भी ऐसा किया है | (हरर, 21-7-1946, पृ. 227)

सत्याग्रह पर अभिकलन

सत्याग्रह ऐसा बल है जिसका प्रयोग व्यक्ति भी कर सकते हैं और समुदाय भी | इसका प्रयोग जितना अच्छी तरह राजनीतिक मामलों में किया जा सकता है, उतनी ही अच्छी तरह धरेरू मामलों में भी किया जा सकता है | इसकी सार्वभौम प्रयोजनता इसके स्थापित और अपराजेयता का प्रमाण है | इसका प्रयोग पुरुष, महिला, बच्चे सभी समान रूप से कर सकते हैं |

यह कहना बिलकुल गलत है कि यह एक ऐसा बल है जिसका प्रयोग दुर्बल लोग उस समय तक कर सकते हैं जब तक कि वे हिंसा का जवाब हिंसा से देने में सम्मत न हो जाएं....

सत्याग्रह का बल तो हिंसा, सभी प्रकार की कृत्ता और सभी प्रकार के अन्याय को इस तरह मिटा देता है जैसे अंथाकार को प्रकाश | राजनीति में इसका प्रयोग इस अटल सिद्धांत पर आधारित है कि किसी लोगों पर शासन करना तभी तक संभव है जब तक कि वे जाने अथवा अनजाने अपने ऊपर शासन किए जाने के लिए सहमत हैं | (यंग, 3-11-1927, पृ. 369)

मैंने कभी मौलिक सत्याग्रही होने का दावा नहीं किया है | मेरा दावा तो सिर्फ यह है कि सत्याग्रह के सिद्धांत का प्रयोग प्राय: सार्वभौम पैमाने पर किया जा सकता है, किंतु अभी यह देखना और प्रदर्शित करना बाकी है कि क्या यह ऐसा सिद्धांत है जिसे सभी युगों और प्रदेशों के हजारों-लाखों लोग आत्मसात कर सकते हैं | (यंग, 22-9-1927, पृ. 317)
अहिंसक शास्ति

सत्याग्रह सार्वभौम प्रयुक्ति का नियम है | परिवार से आरंभ करके इसका विस्तार प्रत्येक क्षेत्र तक किया जा सकता है |

मान लीजिए कि कोई जमींदार अपने काश्तकारों का शोषण करता है और उनकी मेहनत के फल से उनको पंचित करके उसे अपने इस्तेमाल में ताता है | काश्तकारों के सभी विरोध करने पर भी वह उनकी बात नहीं सुनता और आपत्ति करते हुए कहता है कि उसे इतना पैसा अपनी पत्नी के लिए चाहिए, इतना अपने बच्चों के लिए चाहिए, आदि-आदि | काश्तकार अथवा उनकी ओर से पैरवी करने वाले ऐसे लोग जिनका कुछ प्रभाव है, उसकी पत्नी से प्रार्थना करते हैं कि वह अपने पत्ती से बात करे | पत्नी संभवतः कहेगी कि उसे पत्ती द्वारा शोषित धन की अपने लिए आवश्यकता नहीं है | बच्चे भी शायद ऐसा ही कहें कि उन्हें जस्तूत होगी तो उन्हें खुद अपनी कमाई कर लेंगे |

यह भी मान लीजिए कि वह किसी की बात सुनने के लिए तैयार नहीं है या उसकी पत्नी और बच्चे भी काश्तकारों की खिलाफ़त करने के लिए एकजुट हो जाते हैं, तो काश्तकार उनके सामने एक अंधेरी नहीं हैं | आगर जमींदार उन्हें निकालना चाहेगा तो वे निकल जाएं, लेकिन वे साफ तौर पर यह बात कह देंगे कि जमीन उसी की है जो उसे जोतता है | जमींदार चूंकि सारी जमीन खुद नहीं जोत सकता, इसलिए उसे काश्तकारों की जायज मांगेंगे माननी ही होंगी |

लेकिन हो सकता है कि जमींदार उन काश्तकारों को निकालकर दूसरे काश्तकार रख ले | ऐसी सूरत में, अहिंसक आंदोलन छेड़ जाएगा जो तब तक जारी रहेगा जब तक नये काश्तकार अपनी गलती न मान लें और पहले वाले काश्तकारों के साथ आंदोलन में सम्मिलित न हो जाएं |

इस प्रकार, सत्याग्रह जनमत को शिखित करने की एक प्रक्रिया है जो समाज के सभी तत्वों को अपने में समाहित करती है और अंततः अम्बज़ बन जाती है | हिंसा इस प्रक्रिया में विश्व उपस्थित करती है और समूचे सामाजिक ढांचे की सच्ची क्रांति को लंबा कर देती है |

सत्याग्रह की सफलता के लिए आवश्यक शर्तें हैं : (1) सत्याग्रही के मन में विरोध के लिए धूम की भावना नहीं होनी चाहिए; (2) सत्याग्रह का मुद्दा सच्चा और महत्वपूर्ण होना चाहिए; (3) सत्याग्रही को अपने ध्येय की पूर्ति होने तक पीड़ा भोगने के लिए तैयार रहना चाहिए | (हरियाणा, 31-3-1946, पृ. 64 )

आत्मरक्षा का प्रशिक्षण

मैं समझता हूँ कि इस युग में प्रत्येक स्त्री-पुरुष को आत्मरक्षा की कला सीखनी चाहिए | पश्चिम में इसके लिए हथियारों का प्रशिक्षण दिया जाता है | प्रत्येक वयस्क पुरुष को एक निश्चित अवधि के लिए अनिवार्य: सैन्य सेवा
करनी पड़ती है | सत्याग्रह का प्रशिक्षण सबके लिए है, इसमें आयु अथवा स्त्री-पुरुष की कोई बंदिश नहीं है | इस प्रशिक्षण का अधिक महत्वपूर्ण पक्ष मानसिक है, शारीरिक नहीं | मानसिक प्रशिक्षण में कोई बाध्यता नहीं हो सकती | यह जरूर है कि आसपास का वातावरण मन पर असर डालता है, लेकिन इससे बाध्यता का औचित्य सिद्ध नहीं हो सकता |

सशस्त्र प्रतिरोध की अपेक्षा सत्याग्रह सदैव श्रेष्ठ है | इसे तर्क से नहीं बल्कि प्रदर्शन द्वारा ही ज्ञान अच्छी तरह सिद्ध किया जा सकता है | सत्याग्रह का शस्त्र बलशाली का आभूषण है | यह दुर्बल का आभूषण कभी नहीं हो सकता | दुर्बल से यहां आशय मन और प्राण की दुर्बलता से है, शरीर की दुर्बलता से नहीं | यह सीमा एक गुण है जिसकी कद्र की जानी चाहिए, कोई अवगुण नहीं जिसकी निन्दा की जाए |

एक और भी सीमा है जिसे समझना जरूरी है और वह यह कि सत्याग्रह का प्रयोग गलत उद्देश्य के लिए कभी नहीं किया जा सकता |

सत्याग्रहियों के जरूर प्रत्येक गांव में और शहरों में इमारतों के प्रत्येक ब्लॉक के लिए संगठित किए जा सकते हैं | हर जरूरी सदस्य ऐसे लोग हों जिन्हें संगठनकर्ता अच्छी तरह जानते हों | इस मायने में सत्याग्रह और सशस्त्र सेना में फर्क है | सेना में भरती के लिए राज्य प्रत्येक व्यक्ति से आप्रवाह करती है, लेकिन सत्याग्रह के जरूरी से सिर्फ वे ही लोग भरती किए जा सकते हैं जिनका अहिंसा और सत्य में विश्वास हो | इसलिए जरूरी में शामिल किए जाने वाले व्यक्तियों के बारे में संगठनकर्ताओं की गहरी जानकारी होनी जरूरी है | (हरिर, 17-3-1946, पृ. 45-46)

दुराग्रह 

मेरी राय में, हिंसा अपनाने से भारत घोर विपत्तियों का शिकार हो जाएगा | श्रमिक आमहत्या करने लगेंगे और अगर अपना गुस्सा निकालने के लिए श्रमिकों ने देश के कानूनों की आपराधिक अवज्ञा शुरू कर दी तो भारत को अकथनीय कष्ट्ह उठाने होंगे....

जब मैंने सत्याग्रह और सत्याग्रह अवज्ञा की शुरुआत की थी तो इसमें आपराधिक अवज्ञा के लिए कोई स्थान नहीं था | मेरे अनुभव ने मुझे सिखाया है कि सत्य का प्रचार हिंसा के द्वारा कभी नहीं किया जा सकता |

जिन्हें अपने उद्देश्य की न्यायोद्धा में विश्वास है, उन्हें असीम धैर्य होना चाहिए और सशस्त्र अवज्ञा करने के अधिकारी वही है जिनके हाथों आपराधिक अवज्ञा या हिंसा कभी हो गई नहीं सकती |

जिस प्रकार कोई व्यक्ति एक ही समय में संयम और क्रोधीपन नहीं हो सकता, उसी प्रकार कोई व्यक्ति सत्याग्रह अवज्ञा और आपराधिक अवज्ञा एक साथ नहीं कर सकता | और जिस प्रकार अपने मनोकलों पर विजय पाने के उपरांत ही व्यक्ति आत्मसंयम के गुण का विकास कर सकता है, उसी प्रकार देश के नियमों के फूर्नी और सैलिंग पालन का अभ्यस्त हो जाने के बाद ही व्यक्ति में सत्याग्रह अवज्ञा की क्षमता उत्पन्न होती है |
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

ऐसे ही, जिस प्रकार प्रलोभनों के उपस्थित होने पर उनका शिकार होने से बचने में कामयाब होने पर ही मनुष्य को प्रलोभनों से मुक्त माना जा सकता है, उसी प्रकार हमने क्रोध को जीत लिया है, यह तभी कहा जा सकता है जब क्रोध के पर्याप्त कारणों के उपस्थित होने पर भी हम संयमित रहने में कामयाब हो जाएं। (यंग्र, 28-4-1920, पृ. 7-8)

कुछ विद्वानों ने ‘धरने’ पर बैठने के रूप में बर्बरता के पुराने स्वरूप को पुनर्जीवित किया है... मैं इसे ‘बर्बरता’ इसलिए कहता हूँ कि यह जोर-जबर्दस्ती करने का एक भ्रष्ट तरीका है | यह कायरतापूर्ण भी है, क्योंकि धरने पर बैठने वाला व्यक्ति जानता है कि उसे कुचला नहीं जाएगा | ‘धरने’ को हिस्सक कहना तो कठिन है, पर यह निष्ठुल रूप से उससे भी बुरी चीज़ है |

अगर हम अपने विरोधी से लड़ते हैं तो कम-से-कम उसे यह असर तो देते हैं कि वह हमारे घुसे से जावा घुसे से दे | लेकिन जब हम यह जानते हुए भी कि वह ऐसा नहीं करेगा, उसे अपनी छाती पर पांव रखकर निकल जाने के लिए ललकारते हैं तो हम उसे एक कष्टकर और लज्जापूर्ण स्थिति में डाल देते हैं | मैं जानता हूँ कि जो विद्वानों धरने पर बैठे थे, उन्होंने इस कृत्य के बराबर में कभी व्यक्ति नहीं किया था | लेकिन जिस व्यक्ति से अपनी अंतर्वाणी का अनुगमन करने और कठिनाइयों का अंकेल ही सामना करने की आशा की जाती है, उसे विवेकहीन कभी नहीं होना चाहिए | हमें अधैयक, बर्बरता, धृष्ट्ता या अनुचित दबाव का प्रदर्शन कभी नहीं करना चाहिए | यदि हम लोकतंत्र की सच्ची भावना का विकास करना चाहते हैं तो हमें अधैयक का अभ्यास न रखने का परिचायक है | (यंग्र, 2-2-1921, पृ. 33)

मेरे हिरासत में लिए जाने पर इतनी उत्तेजना और उपद्रव का जो प्रदर्शन हुआ, उसका कारण मेरी समझ में नहीं आया | यह सत्याग्रह नहीं है | यह तो दुराग्रह से भी गया-बीती है | सत्याग्रह में भाग लेने वाले लोग इस अनुशासन से बंधे थे कि वे कितना ही सकते आए पर हिंसा पर उतारू नहीं होगे, पथराव नहीं करेंगे और किसी को किसी तरह की क्षति नहीं पहुंचाएंगे | लेकिन सत्याग्रह में हमने पथराव किया है | हमने बाधाएं खड़ी करके ट्रामों को चलने से रोका है | यह सत्याग्रह नहीं है | हमने हिस्सा के जरूर में पकड़े गए 50 आदमियों को छोड़े जाने की मांग की है | हमारा कर्तव्य तो मुक्ति तथा गिरफ्तारी देना है | जिन्होंने हिस्सक कार्यरत कार्यवाही में हिस्सा लिया है, उन्हें छुड़ाने का प्रयास करना अपने धार्मिक कर्तव्य से चुनौता होता है | (स्पीरा, पृ. 474)

मैंने अनगिनत बार कहा है कि सत्याग्रह में हिंसा, लूटपाट और आगजनी के लिए कोई स्थान नहीं है; फिर भी, सत्याग्रह के नाम पर हमने इमारतें जलाई हैं, जबरन हथियार छीने हैं, रुपए ऐंठे हैं, रेलें रोकी हैं, टेलीफोन के तार
काट दिए हैं, निरोध लोगों की जानें ली है और दूकानों तथा निजी घरों को लूटा है | यदि ऐसे कृत्यों से मुझे जेल या फांसी से बचाया जा सके तो मैं इस तरह बचना पसंद नहीं करूंगा | (वही, पृ. 476)

...बुरे उद्देश्यों के लिए वीरता प्रदर्शित करना तथा बलिदान देना उतम ऊर्जा का अपव्यय है, और बुरे उद्देश्य के लिए वीरता तथा बलिदान के दुरुपयोग को गौरवान्वित करने से लोगों का ध्यान अच्छे उद्देश्यों की ओर से हटता है | (यंग, 12-12-1925, पृ. 60)

...सत्ता के अंधाधुंध प्रतिरोध से अव्यवस्था, बे-लगाम उच्चूखलता और उसके फलस्वरूप विनाश की स्थिति ही उत्पन्न होती है | (यंग, 2-4-1931, पृ. 58)
35. असहयोग

असहयोग जनसाधारण में अपनी गरमियों और शक्ति की भावना जागृत करने का एक प्रयास है | यह तभी संभव है जब उन्हें यह ज्ञान कराया जाए कि यदि वे अपनी अंतराल को पहचान सकें तो उन्हें पथशुबल से डरने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी | (यंग, 1-12-1920, पृ. 3)

असहयोग बुराई में अपने और अनिच्छापूर्वक भागीदारी करने के विरुद्ध किया गया प्रतिवाद है...बुराई के साथ असहयोग करना उसी प्रकार मनुष्य का कर्तव्य है जिस प्रकार अच्छाई के साथ सहयोग करना | (यंग, 1-6-1921, पृ. 172)

असहयोग कोई निष्क्रिय स्थिति नहीं है, यह अत्यंत सक्रिय स्थिति है – हिंसक प्रतिरोध या हिंसा से अधिक सक्रिय | निष्क्रिय प्रतिरोध एक गलत संज्ञा है | असहयोग शव्द का प्रयोग मैं जिस अर्थ में किया है, उसमें इसका अहिंसक होना आवश्यक है और इसीलिए यह न तो दंडायक है और न द्वेष, दुभागता और दुधवना अथवा घृणा पर आधारित है | (यंग, 25-8-1920, पृ. 322)

धार्मिक आधार

मैं साहसपूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि भगवद्गुरु आंदोलन और प्रकाश की शक्तियों के बीच असहयोग का सिद्धांत है | यदि इसकी शाब्दिक व्याख्या की जाए तो सदृढ़श्च का प्रतिनिधित्व करने वाले अर्धुनि को अन्यायी कौरवों के साथ पुढ़ करने के लिए आदेश दिया गया था |

तुलसीदास ने संतों को परामर्श दिया कि वे असंतों की संगति से बचें | जेंदा-विष्णु-अहूरमान्द और आरियेम, जिनके बीच कोई मेल नहीं था, के शाश्त्र दंड का प्रस्तुतीकरण है | बाइबिल के बारे में यह कहना कि यह असहयोग का निषेध करती है, ईसा को न समझ ना है | ईसा तो निष्क्रिय प्रतिरोधकर्ताओं के कंठाहार थे, जिन्होंने संदूरसियों और दुस्संस्कियों की शक्ति को दृढ़पूर्वक लकीरार था और सत्य की खातिर बच्चों को उनके माता-पिताओं से अलग करने में भी संकोच नहीं किया था | और ईस्लाम के पैगंबर ने क्या किया? जब तक उनका जीवन संकट में नहीं पड़ गया तब तक उन्होंने मक्का में रहते हुए डटकर असहयोग किया और जब यह देखा कि उन्हें और उनके अनुयायियों को बेवजह जान गवानी पड़ेगी तो मक्का की धूल पैरों से झाड़कर मदीना जा पहुँचे और मक्का तभी लौटे जब उन्होंने अपने बिरोधियों का सामना करने योग्य शक्ति अर्जित कर ली | सभी धर्मों में जिस प्रकार न्यायप्रिय व्यक्तियों और राजाओं के साथ सहयोग करना मनुष्य का कर्तव्य बताया गया है, उसी प्रकार अन्यायी व्यक्तियों और राजाओं के साथ असहयोग करने का कठोर आदेश दिया गया है | वस्तुतः
विश्व के अधिकांश धर्मग्रंथ असहयोग से भी आगे बढ़कर, यह कहते हैं कि बुराई के सामने नपुंसकों की तरह घुटने टेक देने से हथियार उठाना बेहतर है | हिंदू धार्मिक परंपरा में...असहयोग के करत्व को स्पष्ट रूप से सिद्ध किया गया है | प्रह्लाद ने अपने पिता से, मीराबाई ने अपने पति से और विभीषण ने अपने अत्याचारी भाई से असहयोग ही तो किया था | (यंग, 4-8-1920, पृ. 4)

बुनियादी सिद्धांत

अहिंसा का पालन इस बुनियादी सिद्धांत पर टिका है कि जो अपने विषय में सही है, वही समस्त विश्व के विषय में भी सही है | सभी मनुष्य मूलतः एक जैसे हैं | इसलिए जो मैं कर सकता हूं, उसे हर कोई कर सकता है....

सार रूप में, यह अहिंसक असहयोग का सिद्धांत है | इसलिए इसका अर्थ यह है कि इसके मूल में प्रेम होना आवश्यक है | इसका उद्देश्य विरोधी को दंड देना या उसे क्षति पहुंचाना नहीं होना चाहिए | उसके साथ असहयोग करते हुए भी हमें उसे यह अनुभव करने देना चाहिए कि हम उसके मित्र हैं और जहां भी संभव हो, हमें उसकी मानवीय सेवा करके उसके हृदय को जीतने का प्रयास करना चाहिए |

वस्तू: अहिंसा की कस्तौदी ही है यह है कि अहिंसक संघषक में, उसके उपरांत कोई विद्वेष बाकी न रहे और शत्रु मित्र बन जाएं | दक्षिण अफ्रीका में जनरल स्मिथ के साथ मेरा यही अनुभव रहा | यहाँ में, वह अक्षुण्ण विरोधी और आलोचक थे | आज वह मेरे अन्यतम मित्र हैं....

स्थायी गुण

समय बदलता है और प्रणतियों का हास हो जाता है, लेकिन मेरा विश्वास है कि अंततः केवल अहिंसा और अहिंसा पर आधारित चीजें ही बची रहेंगी | ईसाई धर्म का जन्म एक हजार नौ सी वर्ष पहले हुआ था | ईसा का पौरोहित्य केवल तीन वर्ष चला | उनके उपदेशों का उनके जीवन-काल में ही गलत अर्थ लगाया गया और आज ईसाई जगत उनके उपदेशों के उपरांत कोई अवधारणा नहीं हो सकती | उनके उपदेशों के कारण इस्लाम धन्य हुआ | बहुत-से मुसलमान तो मुझे यह कहने तक की इजाजत नहीं देंगे कि इस्लाम का अर्थ ही है इस्लाम शांति | कुरान के अध्ययन ने मेरी यह धारणा पुष्टि कर दी है कि कुरान का आधार हिंसा नहीं है |

उसके छह सी वर्ष बाद इस्लाम धर्म आया | बहुत-से मुसलमान तो मुझे यह कहने तक की इजाजत नहीं देंगे कि इस्लाम शांति का अर्थ ही है विश्वास शांति | कुरान के अध्ययन ने मेरी यह धारणा पुष्टि कर दी है कि कुरान का आधार हिंसा नहीं है |

लेकिन इसमें भी वही बात है – तेरह सी वर्ष काल के चक्र में मात्र एक एक मनका है | मेरा विश्वास है कि ये मुसलमानों महान धर्म उसी हद तक जीवित रहेंगे जिस हद तक उनके अनुयायी अहिंसा के मुख्य उपदेश को आकर्षित करेंगे | लेकिन यह बात केवल बुद्धि की सहायता से ग्रहण नहीं की जा सकती, यह हमारे हृदयों में पैठनी चाहिए | (हरिट, 12-11-1938, पृ. 327)
असहयोग यद्यपि सत्याग्रह के शास्त्रागर का मुख्य शस्त्र है, पर यह नहीं भूलता चाहिए कि यह सत्य और न्याय पर दृढ़ रहते हुए विरोधी का सहयोग प्राप्त करने का एक साधन भाव है | अहिंसक विधि का सार यह है कि यह विरोध को समाप्त करने का प्रयास करता है, स्वयं विरोधियों को नहीं | अहिंसक संघर्ष में तुम्हें, कुछ हद तक, जिस व्यवस्था का तुल्य विरोध कर रहे हो, उसकी परंपरा और रूढ़ियों को मानना पड़ता है | इसलिए विरोधी शक्ति के साथ किसी तरह का संबंध न रखना सत्याग्रही का ध्येय कभी नहीं हो सकता, उसका ध्येय तो उस संबंध का रूपांतरण अथवा शुद्धीकरण है | (हरि, 29-4-1939, पृ. 101)

असहयोग का नीतिशास्त्र

में असहयोग को इतना शक्तिशाली और शुद्ध साधन मानता हूँ कि अगर इसका इस्तेमाल सच्ची भावना से किया जाए तो यह पहले ईश्वर के साम्राज्य की कामना करने के समान होगा जिसके बाद सब कुछ स्वयं प्राप्त होता जाता है | तब लोग अपनी सच्ची शक्ति को पहचान पाएंगे | वे अनुशासन, आत्मशासन, संयुक्त कार्यवाही, अहिंसा, संगठन आदि उन सभी बातों का मूल्य पहचान पाएंगे जिससे कोई राष्ट्र महान और अच्छा, दोनों बनता है, केवल महान ही नहीं | (यंग, 2-6-1920, पृ. 3)

असहयोग जैसा शुद्ध, हानिचित्र और फिर भी, कारगर साधन दूसरा नहीं है | विवेकपूर्वक इस्तेमाल करने पर इसके कोई दुष्परेक्षण सामने नहीं आने चाहिए | और इसकी गहनता पूर्णतः लोगों की बलिदान करने की क्षमता पर निर्भर करेगी | (यंग, 30-6-1920, पृ. 3)

हमने ’न’ कहने की शक्ति खो दी थी | सरकार से ’न’ कहना निश्चितीन और प्रायः दूहपूर्ण माना जाने लगा था | सहयोग करने से जान-बूझकर इंकार करने की यह तकनीक उसी प्रकार की है जैसे कि किसान बुआई से पहले जमीन की निराइक्ष करना जरूरी समझता है | कृषि के लिए जितनी जरूरी बुआई है, उतनी ही जरूरी निराई भी है | फसल जब बढ़ रही होती है तब भी निराई की खुरपी किसान के देनदिन प्रयोग की चीज़ होती है | राष्ट्र का असहयोग राष्ट्र की शर्तों पर सरकार से सहयोग करने का निमंत्रण है जो कि प्रत्येक राष्ट्र का अधिकार और प्रत्येक अच्छी सरकार का कर्तव्य है | असहयोग राष्ट्र की ओर से चेतावनी है कि वह सरकार की प्रतिपालन से संतुष्ट् नहीं है | (यंग, 1-6-1921, पृ. 173)

अहिंसक असहयोग आंदोलन और पश्चिम के ऐतिहासिक स्वाधीनता-संघर्ष के बीच कोई सामय नहीं है | यह पश्चिम या चुनौता पर आधारित नहीं है | इसका ध्येय अल्पाधारी का सफाया करना नहीं है | यह आत्मशुद्धीकरण का आंदोलन है | अत: इसका उद्देश्य अल्पाधारी का उदय-परिवर्तन है | यह नाकामयाब इसलिए हो सकता है कि भारत अभी जन-आंदोलन के लिए तैयार नहीं है | लेकिन आंदोलन को बूझे पैमानों से परखना गलत होगा | मेरी
अग्रहायण विचार
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

निजी राय है कि आंदोलन किसी भी रूप में असफल नहीं हुआ है | इसने भारत के स्वाधीनता संग्राम में एक स्थायी स्थान बना दिया है | (यंग, 11-2-1926, पृ. 59)

एक कर्त्तव्य
कभी-कभी असहयोग भी उसी प्रकार एक कर्त्तव्य बन जाता है जिस प्रकार कि सहयोग है | कोई व्यक्ति अपने ही सर्वनाश अथवा दासता में सहयोग देने के लिए बाध्य नहीं है | दूसरों के प्रयास से हासिल की गई आजादी, वे प्रयास चाहे जिन्हें हितकारी हों, उन्हें वापस लेते ही संकट में पड़ जाते हैं | दूसरे शब्दों में, ऐसी आजादी सच्ची आजादी नहीं है | लेकिन अहिंसक असहयोग की मदद से आजादी हासिल करने की कला सीखते ही निष्ठा-से-निष्ठा व्यक्ति भी उसकी दीपि का अनुभव कर सकते हैं...

मेरी निश्चित धारणा है कि जो बात अहिंसक असहयोग से अनाचारी का अंततः हंदाय-परिवर्तन करके हासिल की जा सकती है, वहीं हिंसा से कभी नहीं की जा सकती | भारत में, हमने अभी तक अहिंसा के हंदियो को उसकी पात्रता के अनुरूप में अभाव करने वाले ग्रामों नहीं देखा है | चमकाया तो यह है कि अपनी आधी-अधूरी अहिंसा से भी हमने इतना कुछ हासिल कर दिया है | (यंग, 20-4-1920, पृ. 97)

मैंने असहयोग को धार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है, चूंकि मैं राजनीति में उसी सीमा तक प्रविष्ट होता हूं जहां तक वह मेरी धार्मिक शक्ति का विकास करती है | (यंग, 19-1-1921, पृ. 19)

मेरे असहयोग के पीछे मेरी यह उत्तरदाता सदा रहती है कि अपने घोर-से-घोर विरोधी के साथ भी किसी भी बहाने से सहयोग करने | मैं स्वयं एक बड़ा ही अधूरा मानव हूं जिसे निरंतर ईश्वर के अनुशक्तियों को अवश्यकता रहती है और मेरी दृष्टि में, कोई व्यक्ति ऐसे नहीं है जिसका उद्देश्य संभव ही न हो | (यंग, 4-6-1925, पृ. 193)

...धूतकता का समर्थन में कभी नहीं करूंगा | मेरी दृष्टि में, सत्याग्रह का नियम, प्रेम का नियम, एक शाश्वत सिद्धांत है | मैं एक अभिक बात के साथ सहयोग करता हूं | मैं हर बुरी बात के साथ असहयोग करना चाहता हूं.... (यंग, 18-6-1925, पृ. 213)

घृणा नहीं
प्रारंभात्मक अनुभाग में रहते-रहते, रिखते चालीस से भी अधिक वर्षों से मैंने किसी भी व्यक्ति को घृणा की दृष्टि से देखना बंद कर दिया है | मैं यह जानता हूं कि यह एक बड़ा दावा है | फिर भी, पूरी विविधता के साथ, मैं यह दावा कर रहा हूं | लेकिन बुराई जहाँ भी है, मैं उससे घृणा कर सकता हूं और जरूर करता हूं | मेरे असहयोग के मूल में घृणा नहीं, प्रेम होता है | मेरा व्यक्तिगत धर्म मुझे किसी से भी घृणा करने की इजाजत नहीं देता | मैंने यह सरल किंतु महान सिद्धांत बारह वर्ष की आयु में स्कूल की एक किताब से सीखा जो आज भी
दृढ़ता के साथ मेरे मानस-पट्ट पर अंकित है | यह दिन-प्रतिदिन और दृढ़ होता जाता है | यह मेरे जीवन का एक तीव्र मनोवेग है | (यंग, 6-8-1925, पृ. 272)

ऐसा नहीं है कि मैं हर चीज़ के प्रति अनिश्चित की भावना पालने लगता हूँ, लेकिन जो अस्ति है, अन्यायपूर्ण है और बुरा है, उसके प्रति मेरी कोई निश्चित नहीं होती....मैं किसी संस्था के प्रति तभी तक नैष्ठिक रहता हूँ जब तक वह मेरे और मेरे राष्ट्र के विकास में सहायक होती है | जैसे ही मुझे लगता है कि वह विकास में साधक होने के बजाय बाधक सिद्ध हो रही है, मैं उसके प्रति निश्चितता होना अपना कर्तव्य समझने लगता हूँ | (यंग, 13-8-1925, पृ. 277)

मेरा असहयोग यद्यपि मेरे धर्म का एक अंग है, पर यह सहयोग की शुरुआत होती है | मेरा असहयोग प्रतिकूलिताओं और प्रणालियों के प्रति होता है, व्यक्तियों के प्रति कभी नहीं | मैं तो डायर के प्रति भी दुर्भावना नहीं पालूंगा | मैं दुर्भावना की मानव गरिमा के अनुरूप नहीं मानता | (यंग, 12-9-1929, पृ. 300)

कुछ लोगों ने मुझे अपने समय का सबसे बड़ा क्रांतिकारी बताया है | यह चाहे गलत हो, पर मैं स्वयं को एक क्रांतिकारी – एक अहिंसक क्रांतिकारी – अवश्य मानता हूँ | असहयोग मेरा शस्त्र है | कोई व्यक्ति विचारित लोगों के स्वेच्छा अथवा बलात्मक सहयोग के बिना विपुल धनराशि का संचय नहीं कर सकता | (यंग, 26-11-1931, पृ. 369)

मैं स्वभावतः सहयोगी हूँ; मेरे असहयोग का उद्देश्य वस्तुतः सहयोग से सारी नीचता और झूठ को निकाल केंद्रना होता है, क्योंकि मेरे विचार में ऐसा सहयोग किसी काम का नहीं है | (एफा, पृ. 84)
36. उपवास और सत्याग्रह

सत्याग्रह का शस्त्र

सत्याग्रह के शस्त्रगार में उपवास एक बड़ा शक्तिशाली शस्त्र है | इसका प्रयोग हर कोई नहीं कर सकता | उपवास करने की शारीरिक क्षमता से ही उसकी पात्रता निर्धारित नहीं की जा सकती | ईश्वर में जागृत आस्था के बिना इसका कोई उपयोग नहीं है | यह एक यांत्रिक प्रयास अथवा मात्र अनुकरण के रूप में कभी नहीं किया जाना चाहिए | उपवास की प्रेरणा व्यक्ति की आत्मा की गहराई से आनी चाहिए | इसलिए उपवास सदा एक विरल घटना होती है | (हरिर, 18-3-1939, पृ. 56)

विशुद्ध उपवास में स्वार्थ, क्रोध, आस्थाहीनता अथवा अर्थियाँ का कोई स्थान नहीं हो सकता....उसमें असीम धैय, दृढ़ संकल्प, उद्देश्य के प्रति अभिलक्षण निश्चित, पूर्ण शांति तथा क्रोध का अभाव होना परम आवश्यक है | लेकिन चौंकने के लिए इन सभी गुणों का तत्काल विकास कर पाना संभव नहीं है, इसलिए जिसने अहिस्त के नियमों के पालन का प्रति न लिया हो, उसे सत्याग्रही उपवास पर नहीं बैठना चाहिए | (हरिर, 13-10-1940, पृ. 322)

उपवास....एक प्रबल वींड है और यह खतरे से पूरी तरह मुक्त नहीं होता | मुझे जब भी उपवास गलत या निराशा का अनुचित मुझे तब मैंने स्वयं उपवास का प्रति लिया है, इसलिए जिसने अहिस्त के नियमों के पालन का प्रति न लिया हो, उसे सत्याग्रही उपवास पर नहीं बैठना चाहिए | (हरिर, 28-7-1946, पृ. 235)

उपवास तथा मृत्यु

आमरण उपवास सत्याग्रह के शस्त्रगार का अंतिम एवं सबसे शक्तिशाली शस्त्र है | यह एक पवित्र शस्त्र है | इसे इसके संपूर्ण निहितार्थ के साथ स्वीकार करना चाहिए | महत्वपूर्ण स्वयं उपवास नहीं है, बल्कि उसका निहितार्थ है | (हरिर, 18-8-1946, पृ. 262)

उपवास और ईसा का मार्ग

उपवास यांत्रिक तरीके से नहीं किया जा सकता | यह एक शक्तिशाली चीज़ है, पर अनाहीन पर साथ करने पर यह खतरनाक साबित हो सकता है | इसके लिए पूर्ण आत्म-शुद्धीकरण की आवश्यकता होती है - उससे भी कहीं ज्यादा आत्म-शुद्धीकरण की जो केवल मन में ही प्रतिकार की भावना लेकर मौत का सामना करने के लिए चाहिए | पूर्ण बलिदान का एक ही ऐसा कृत्य निष्कास दुनिया के लिए काफ़ी होगा | ईसा का उदाहरण इसी कोट में आता है | (हरिर, 27-10-1946, पृ. 272)

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि उपवास वस्तुत: जोर-जबरदस्ती करने का साधन बनाए जा सकते हैं | किसी स्वार्थ-सिद्धि के लिए किये गए उपवास ऐसे नहीं होते हैं | किसी आदर्श से रुपया ऐंठने या किसी निजी
उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया उपवास जोर-जबर्दस्ती या अनुचित प्रभाव के प्रयोग की सीमा में आ जाता है | मैं निस्कंकोच ऐसे अनुचित प्रभाव का प्रतिकार करने का समर्थन करना | मैं स्वयं अपने विरोध में किए गए ऐसे उपवासों अथवा उनकी धमकियों का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया है |

अगर यह तर्क दिया जाए कि स्वार्थपूर्ण और निस्कृति उद्देश्यों से बीच की विभाजक रेखा बड़ी महीन होती है तो मेरा उत्तर है कि यदि कोई व्यक्ति किसी के उपवास को स्वार्थपूर्ण या अन्य किसी रूप में निकृत मानता है तो उसे दृढ़तापूर्वक उसके सामने छुकने से इंकार कर देना चाहिए, भले ही इसके सफलतापूर्ण उपवास पर बैठे व्यक्ति की मृत्यु हो जाए |

अगर लोग ऐसे उपवासों की अपेक्षा करने की आदत लें जो, उनकी राय में, निकृति उद्देश्यों को लेकर किए गए हैं, तो ऐसे उपवासों से जोर-जबर्दस्ती और अनुचित प्रभाव का कलंक दूर हो जाएगा | अन्य सभी मानव संस्थाओं की तरह, उपवास जायज और नाजायज, दोनों प्रकार का हो सकता है | (हरि, 9-9-1933, पृ. 5) यदि कोई व्यक्ति, चाहे वह कितना ही जनतापूर्वक तथा महान हो, किसी अनुचित मुद्दे का उठाता है और उस अनौचित्य की रक्षा के लिए उपवास करता है तो यह उसके मित्रों, सहयोगियों और संबंधियों (जिनमें मैं अपनी गिनती भी करता हूँ) का कर्तव्य है कि उसकी प्राणपालक के लिए अनुचित मुद्दे की मनावने की अपेक्षा उसे मर जाने दें | उद्देश्य अनुचित हो तो शुद्ध-से-शुद्ध साधन भी अशुद्ध बन जाते हैं | (हरि, 17-3-1946, पृ. 43) अंतिम उपाय

यहां मैं एक सामान्य सिद्धांत का निरूपण करना चाहूँगा | सत्याग्रही को उपवास का आश्रय अंतिम उपाय के रूप में तभी लेना चाहिए जब अन्याय के निवारण के सभी उपाय आजमाए गये हो और वे असफल हो गए हों | उपवासों में अनुकरण के लिए कोई स्थान नहीं होता | जिसमें अंतरिक शक्ति नहीं है, उसे उपवास करने की बात स्वप्न में भी नहीं सोचनी चाहिए | एक बात और है कि उपवास को सफलता के प्रति आसक्ति के साथ कभी नहीं करना चाहिए |

लेकिन सत्याग्रही अपनी दृढ़ धारणा से एक बार उपवास आरंभ कर दे तो फिर उसे उस पर कामयाब रहना चाहिए चाहे उसकी सफलता की वांछना हो या न हो | मैं यह नहीं कह रहा कि उपवास का फल मिलता है या कि मिल नहीं सकता | जो व्यक्ति उपवास के अनुकूल परिणाम की आशा लेकर उपवास करता है, वह प्रायः असफल हो जाता है | यदि वह असफल होता दिखाई नहीं भी देता तो भी वह उस अंतरिक्त आनंद से वंचित रहता है जो सच्चे उपवास से प्राप्त होता है.... बेतुके उपवास प्लग की तरह फैलते हैं और वे हानिकारक होते हैं | लेकिन जब उपवास कर्त्त्व के रूप में सामने आए तो उसका व्याख्य कि जा सकता | इसलिए मैं उपवास तभी करता हूँ जब मुझे लगता है कि वह जरूरी
है और मैं किसी भी प्रकार से उसे टाल नहीं सकता | जो मैं करता हूँ, उसे वैसी ही परिस्थितियों में करने से अन्य लोगों को रोक नहीं सकता | यह सभी जानते हैं कि अच्छी चीजों का भी प्रायः दुरुपयोग होता है | हम अपने चारों ओर रोज इसे घटाते देखते हैं | (हरिजन, 21-4-1946, पृ. 93)

...जब मनुष्य की चतुराई जवाब देती है, तो अहिंसा का पुजारी उपवास करता है | उपवास प्रार्थना के भाव में नीमत लाता है | यह एक आध्यात्मिक कृत्य है और इसलिए इसे ईश्वर को निवेदित करना चाहिए | लोगों के जीवन पर इसका यह प्रभाव होता है कि, यदि वे उपवास करने वाले व्यक्ति से छोड़े भी परिचित हैं तो, उनकी सुप्त चेतना जाग जाती है |

हां, इस बात का खतरा जरूर है कि भ्रातिपूर्ण सहानुभूति के वशीभूत होकर लोग अपने प्रिय व्यक्ति की प्राणरक्षा के लिए उसकी इच्छा के विरुद्ध काम कर सकते हैं | इस खतरे का मुकाबला करना जरूरी है | आदमी अपने दृष्टिकोण की सच्चाई के प्रति आश्वस्त हो तो उसे सही कार्रवाई करने से पीछे नहीं हटना चाहिए | इससे अधिकाधिक सावधानी सुनिश्चित हो जाती है | इस प्रकार का उपवास अंतर्वती के आदेश का पालन करते हुए किया जाता है और इससे इसमें जल्दबाजी का तल नहीं होता | (हरिजन, 21-12-1947, पृ. 476)
7. अपरिग्रह

37. अपरिग्रह का दिव्य संदेश

सेवा की कुंजी

जब मैंने स्वयं को राजनीति की कुंडली में फंसा पाया तो मैंने अपने आपसे यह प्रश्न किया कि मुझे अनैतिकता, असत्य और तथाकथित राजनीतिक लाभ से पूर्णतया मुक्त रहने के लिए क्या करना चाहिए....शुरु में, यह एक कठिन संघर्ष था और मुझे अपनी पत्नी तथा मुझे ख़ुब याद है कि - अपने बच्चों तक के साथ भिड़ना पड़ा | लेकिन जो भी हुआ, मैं इस निष्ठुर निष्कर्ष पर पहुंच गया कि यदि मुझे उन लोगों की सेवा करनी है जिनके लिए मेरा जीवन समर्पित है और जिनके कल्याण को मैं देना चाहिए हूँ, तो मुझे अपने पास, अपनी सारी संपत्ति का व्यय कर देना चाहिए....

मैं सच्चाई के साथ यह नहीं कह सकता कि जब मेरी यह धारणा बनी तो मैंने तकाल सभी चीजों का व्यय कर दिया | मुझे मानना होगा कि शुरु में प्रगति धीमी रही | और आज जब मैं संघर्ष के उन दिनों की याद करता हूँ तो पाता हूँ कि शुरु में मुझे इसमें कठ भी हुआ था | लेकिन ज्यों-ज्यों दिन गुजरते गए, मैंने देखा कि मुझे और भी बहुत-सी ऐसी चीजों का व्यय कर देना चाहिए जिन्हें मैं अपनी समझता था | आखिरकार एक समय ऐसा आया जब उनका व्यय करके मुझे निष्कर्ष रूप से बड़ी प्रसन्नता का अनुभव हुआ | और एक के बाद एक, मानो गुणोत्तर क्रम में, चीज़ें मेरे हाथ से फिसलती गई | और, आज जब मैं अपने अनुभवों का वर्णन कर रहा हूँ, मैं कह सकता हूँ कि मेरे कंधों से एक भारी बोझ उतर गया और मुझे लगने लगा कि मैं अब ज्यादा आसानी से घूम-फिर सकता हूँ और अपने साथियों की सेवा ज्यादा आराम के साथ तथा और भी अधिक आनंद का अनुभव करने हेतु कर सकता हूँ | इसके बाद तो कोई चीज़ अपने कब्जे में रखना कष्टप्रद और भार लगने लगा | उस आनंद के कारण की खोज करते हुए मैंने पाया कि अगर मैं कोई चीज़ अपनी मानक अपने पास रखता हूँ तो सारी दुनिया से उसकी रक्षा करनी पड़ती है | मैंने यह भी पाया कि दुनिया में ऐसे बहुत-से लोग हैं जिनके पास वह चीज़ नहीं है, हालांकि वे उसे चाहते हैं, और अगर भूखे तथा अकालग्रस्त लोगों को मैं अकेले में कहीं निकल जाऊँ तो वे न केवल मेरी चीज़ को मेरे साथ बांट लेना चाहेंगे बल्कि उसे मुझसे ही लेना चाहेंगे और तब उसकी रक्षा के लिए मुझे पुलिस से संरक्षण मांगना होगा | तब मैंने स्वयं से कहा कि वे लोग अगर उस कसू को चाहते हैं और मुझसे चीन लेने पर उतारू है तो इसलिए नहीं कि उनके मन में मेरे प्रति कोई द्वेष है बल्कि इसलिए कि उनकी जरूरत मेरी जरूरत से बड़ी है | (स्पीरा, पृ. 166-67)
अपनी सारी संपत्ति का ल्याग कर देने पर दुनिया....मेरे ऊपर हंस सकती है | पर मेरे लिए यह ल्याग निष्ठित रूप से लाभदायक सिद्ध हुआ है | मैं चाहूंगा कि लोग मेरे इस संतोष से प्रतियोगिता करें | यह मेरा सबसे कीमती खजाना है | इसलिए यह कहना शायद ठीक ही है कि यद्यपि मैं गरीबी का प्रचार करता हूं, पर मैं सबसे धनवान व्यक्ति हूं। 
(यंग, 30-4-1925, पृ. 149)

स्वच्छिष्ठ आत्मत्याग

हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति और हमारा स्वराज आवश्यकताओं को बढ़ाने - विषयासंकट - पर नहीं, अपितु आत्मत्याग पर निर्भर है | (यंग, 23-2-1921, पृ. 59)

अपरिग्रह अस्तों के साथ जुड़ा है | यदि हमारे पास कोई ऐसी वस्तु है जिसकी हमें आवश्यकता नहीं है तो भले ही वह मूलतः चुराई गई वस्तु न हो, पर चोरी की संपत्ति की श्रेणी में ही गिनी जाएगी | परिग्रह का अर्थ है भविष्य के लिए व्यवस्था करना | सत्यार्थर अर्थ प्रेम के नियम का अनुयायी, कल के लिए बचाकर कुछ नहीं रख सकता | ईश्वर कल के लिए किसी वस्तु का संग्रह नहीं करता | वह वर्तमान के लिए जिन्ता जरूरी है, उससे तनिक भी अधिक की सृष्टि कभी नहीं करता | इसलिए यदि हमें ईश्वर के विधान में आत्मा है तो हमें यह भरोसा रखना चाहिए कि वह हमारे प्रतिदिन के भोजन, अर्थात हमारी आवश्यकता की सभी वस्तुओं की व्यवस्था करेगा....

दैवी नियम - जो मनुष्य को उसका दैनिक भोजन और भोजन इतना ही, प्रदान करता है – के अन्याय और उसकी उपेक्षा के कारण ही आज दुनिया में इतनी असमानताएं और उससे उत्पन्न होने वाले कष्ट पैदा हुए हैं | धनवानों के पास फालू चीजों का अंबार लगा है जिनकी उन्हें आवश्यकता नहीं है, अतः वे उपेक्षित रहती हैं और उनकी बर्बादी होती है जबकी लाखों-करोड़ों लोग भोजन के अभाव में भूख मर जाते हैं।

यदि प्रत्येक व्यक्ति सिर्फ उतना रखे जितने की उसे जरूरत है तो कोई अभावग्रस्त नहीं रहेगा और सब संतोष का जीवन जिमंजे | आज जो स्थिति है, उसमें जितने असंतुष्ट निर्धन हैं, उतने ही असंतुष्ट धनवान भी हैं | निर्धन व्यक्ति लक्ष्यकारी बनने को उत्तराला है और लक्ष्यत करोड़पति बनने को।

संतोष की भावना का सार्वभौम प्रसार करने की दृष्टि से धनवानों को संपत्ति का ल्याग करने पर पहल करनी चाहिए | यदि वे अपनी संपत्ति को संयत सीमाओं में ही रखें तो भूखों का पेट आसानी से भरा जा सकेगा और वे भी धनवानों के साथ-साथ संतोष का पाठ पढ़ सकेंगे।

अपरिग्रह के आदर्श की पूर्ण प्राप्ति के लिए तो यह जरूरी है कि चिंताओं की तरह मनुष्य के सिर पर भी छत न हो, न उसके पास वस्तु हों और न कल के लिए भोजन का भंडार हो | उसे भोजनादि दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं की जरूरत होगी, लेकिन उनकी व्यवस्था करना उसका नहीं अपितु भगवान का दायित्व होगा | इस आदर्श तक तो शायद विरले लोग ही पहुंच सकते हैं, लेकिन उनकी प्रतियोगिता असंभवता से हम जैसे साधारण
सत्यशोधकों को उससे दूर भागना उचित नहीं है | हमें इस आदर्श को निरंतर अपने सामने रखना चाहिए और उसके प्रकाश में अपनी धन-संपत्ति का जायजा लेकर उसमें कभी करना नहीं चाहिए | सभ्यता, सही अर्थों में, आवश्यकताओं के बहुलीकरण में निहित नहीं है, बल्कि उनमें सोच-समझकर स्वीकृति रूप से कभी करने में है | केवल इसी से सच्चे सुख और संतोष में वृद्धि होती है और मनुष्य की सेवा करने की क्षमता बढ़ती है | विशेष सत्य की दृष्टि से, यह देह भी एक संपत्ति है | यह ठीक ही कहा गया है कि भोग की कामना आत्मा के लिए देह की सृष्टि करती है | इस कामना के लुप्त हो जाने पर, देह की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती और मनुष्य जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पा जाता है | आत्मा तो सर्वभृत्ति है, वह पिंजरे जैसे शरीर में बंदी है और अथवा उस पिंजरे के लिए बुरे काम करना और प्राणियों की जान तक लेना क्यों चाहें? त्याग का आदर्श इस तरह हम संपूर्ण त्याग के आदर्श तक पहुंचते हैं और देह को, जब तक यह है, सेवा के लिए काम में लाना सीखते हैं; यहां तक कि हमारे जीवन का आधार रोटी नहीं अपितु सेवा बन जाती है | हम सेवा के लिए ही खाते-पीते और सोते-जागते हैं | मन की ऐसी वृत्ति जीवन में सच्चे सुख और संतोष में वृद्धि होती है और समय आने पर भलवदर्शन करती है | हम सभी को इस दृष्टिकोण से अपना जायजा लेना चाहिए | यह स्मरणीय है कि अपरिग्रह का सिद्धांत वस्तुओं और विचारों पर समान रूप से लागू होता है | जो व्यक्ति अपने दिमाग में निरंरक ज्ञान भरता है वह भी इस अमूल्य सिद्धांत का उल्लंघन करता है | जो विचार हमें ईश्वर से शून्य करता है, या उसकी ओर अभिमुख नहीं करते, वे हमारे मार्ग में बाधक हैं | इस संदर्भ में हमको गीता के तेहरवें अध्याय में दी गई ज्ञान की परिभाषा पर विचार करना चाहिए | उसमें हमें बताया गया है कि नम्रता (अमाशनत्व) आदि ज्ञान है और शोष सब अज्ञान है | अगर यह सही है – और इसमें संदेह नहीं कि यह सही है – तो जिसे हम आज ज्ञान रखने गले से लगाए हुए हैं, अधिकांशतः वह निपट अज्ञान है और हमें किसी भी प्रकार से लाभान्वित करने के स्थान पर हानि ही पहुंचाता है | यह दिमाग को भट्काता ही नहीं है बल्कि उसमें शून्यता पैदा कर देता है और उससे बुराई के नाना रूपों में असंतोष की वृद्धि होती है | कहने का तात्पर्य यह कदापि नही है कि हम जड़ हो जाएं | हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण मानसिक अथवा शारीरिक सक्रियता से युक्त होना चाहिए, लेकिन यह सक्रियता साविक हो, जो हमें सत्य की ओर यथार्थता करे | जिसे सेवा के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया है, वह एक क्षण के लिए भी निकला होकर नहीं बैठ सकता | लेकिन हमें अच्छे काम और बुरे काम के बीच अंतर लगाना चाहिए | सेवा के प्रति अनन्य समर्पण से मनुष्य में अच्छे और बुरे कामों के बीच अंतर करना सहज रूप से आ जाता है | (फ्रायम, पृ. 23-26)
नैतिक प्रयोजन

हम सबके पास संपत्ति क्यों होनी चाहिए? हम, एक निश्चित समय के बाद, अपनी समस्त संपत्ति का ल्याग क्यों न कर दें? बेईमान व्यापारी कपटपूर्ण प्रयोजनों के लिए ऐसा करते हैं। तो हम एक नैतिक तथा महान प्रयोजन के लिए ऐसा क्यों नहीं कर सकते?

एक समय था जब हिंदू सामान्यतः ऐसा ही करता था। हर हिंदू से आशा की जाती है कि एक निश्चित अवधि तक गृहस्त जीवन जीने के उपरांत वह अपरिग्रह के जीवन में प्रवेश करे। इस उत्तम परंपरा को हम फिर से शुरू करने के कारण हम अपने भरण-पोषण के लिए उन लोगों की दया पर निर्भर हो जाएँगे। इसका अर्थ केवल यह है कि हम पूरी तरह प्रबंधित संस्कारों के लिए अपने भरण-पोषण का त्याग कर दें। इसका अर्थ उसे भी है कि हम अपनी संपत्ति का गृहस्त जीवन में वैवश्चिक तौर पर उतारना चाहिए।

इस उच्चतम प्रारंभिक स्तर पर अपना हाल अपने संस्कृति के अनुसार निपटा दिया जाएँगा। इससे आने वाले अन्य संघर्षों के लिए आपकी दया से सबसे बुरे अंत में और अन्य विवश्चिक उपायों के लिए प्रया कर दिया जाएँगा।

स्वर्णिम नियम

स्वर्णिम नियम यह है: कि जो चीज़ लाखों लोगों को उपलब्ध नहीं है, उसका भोग करने से हम हड़ताल पूर्वक इंकार कर दें। इंकार करने की यह क्षमता हमारे अंदर अचानक ही नहीं है जितना ही आ जाएगी। पहले तो इस मानसिक वृत्ति का विकास करना होगा कि जो वस्तु अथवा सुविधाएँ लाखों लोगों को उपलब्ध नहीं है, उसका भोग हम नहीं कर सकते।

इसके बाद अगला कदम होगा तब तक कि संपत्ति के अनुरूप अपने जीवन-क्रम में यथाशीर्ष परिवर्तन लाना।

प्रेम और अनन्य स्वामित्व साधन से अंतर्गत कभी नहीं तय सकते। उसका भोग करने से हम हड़ताल पूर्वक इंकार कर दें। इंकार करने की यह क्षमता हमारे अंदर अचानक ही नहीं है जितना ही आ जाएगी। पहले तो इस मानसिक वृत्ति का विकास करना होगा कि जो वस्तु अथवा सुविधाएँ लाखों लोगों को उपलब्ध नहीं है, उसका भोग हम नहीं कर सकते।

इसके बाद अगला कदम होगा तब तक कि संपत्ति के अनुरूप अपने जीवन-क्रम में यथाशीर्ष परिवर्तन लाना।
लेकिन यह सिद्धांत रूप से ही ठीक है | वास्तविक जीवन में हम पूर्ण प्रेम की अवस्था को शायद ही प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि एक संपूर्णता के रूप में शरीर सदा अपूर्ण होगा और मनुष्य सदा पूर्णता का प्रयास करता रहेगा | कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक हम जीवित हैं तब तक प्रेम तथा अपरिमित की पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती; फिर भी, हमें निरंतर इसके लिए प्रयासरत रहना चाहिए | ( मारी, अक्तू, 1935, पृ. 412)

इसा, मोहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चैतन्य, घंटर, दयानंद, रामकृष्ण, ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने हजारों लोगों को अनुभविक भावनात्मक आन्दोलन का वरण किया था और उनके अभिव्यक्ति को संवारा था | उनके जीवन से यह धारणा समृद्ध हुई है | इन सभी महापुरुषों ने जान-ज्ञान के रूप में रीर सदा अपूर्णक रहेगा और मनुष्य सदा पूर्णता का प्रयास करता रहेगा।
(त्यों-त्यों, (स्पीरा, पृ. 353)

धन, सत्य और प्रतिशत मनुष्य से न जाने कितने पाप और अनाचार कराते हैं | (ए, पृ. 168)

किसी की अनुमति के बिना उसकी कोई वस्तु लेना तो चोरी है ही, पर यदि हम उसे देने वाले ने जिस काम के लिए दिया था, उससे भिन्न काम में इस्तेमाल करने या उसने जितने समय के लिए दिया था, उससे अधिक समय के लिए काम में लाए तो यह भी चोरी ही है | यह बात इस धीर सत्य पर आधारित है कि ईश्वर वर्तमान के लिए जितना आवश्यक है, उससे अधिक की सृष्टि कभी नहीं करता | इसलिए जो व्यक्ति किसी वस्तु की सृष्टि का उपयोग करता है तो वह चोरी का दोषी है।
(आआए, पृ. 58)

जीवन का रहस्य

सर्वस्व का त्याग करके उसे ईश्वर को समर्पित कर दो और तब जियो | इससे जीने का अधिकार त्याग से युक्त होगा | उद्देश्य यह नहीं है कि ‘जब सब अपने हिस्से का काम करेंगे तो मैं भी करूंगा |’ उद्देश्य यह है कि ‘दूसरों की चिंता मत करो, पहले अपना कर्तव्य करो और बाकी ईश्वर के ऊपर छोड़ दो।’
(हरर, 6-3-1937, पृ. 27)

तुम्हें भौतिक वस्तुओं के स्वामित्व और भोग का अवसर मिल सकता है, पर जीवन का रहस्य इसमें है कि तुम्हें उनका अभाव कभी खतरा नहीं | (हरर, 10-12-1938, पृ. 371)

सुखी जीवन का रहस्य त्याग में निहित है | त्याग ही जीवन है | भोग का परिणाम मृत्यु है | इसलिए हर व्यक्ति को परिणाम की चिंता किए बिना, सेवा करते हुए 125 वर्ष तक जीने का अधिकार है | ऐसा जीवन पूर्णताय सेवा को ही समर्पित होना चाहिए | इस प्रकार की सेवा के लिए धन-संपत्ति का त्याग ऐसा अनिवार्य आनंद देता है जिससे तुम्हें कोई चिंता नहीं कर सकता | क्योंकि हम आनंदमूलक तुम्हारे भीतर से फूटता है और तुम्हें दीर्घचक्र देता है | इसमें चिंता या अध्ययन के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता | इस आनंद के बिना, दीर्घचक्र संभव नहीं है और यदि मिल भी जाए तो उसका कोई मूल्य नहीं होगा. | (हरर, 24-2-1946, पृ. 19)
मेरे कहने का आशय यह नहीं है कि अगर तुम्हारे पास धन है तो उसे बाहर फेंक दो और बीबी-बच्चों को घर से निकाल दो। इसका आशय यही है कि धन-संपत्ति के प्रति आसक्ति का त्याग कर दो और सर्वस्व ईश्वर को समर्पित करके उसकी दी हुई वस्तुओं को उसी की सेवा में लगा दो। (हरि, 28-4-1946, पृ. 111)
38. गरीबी और अमीरी

संघर्ष से बचाव

मैं ऐसे युग की कल्पना करने में असमर्थ हूँ जब कोई भी व्यक्ति किसी अन्य की तुलना में अधिक धनवान नहीं होगा | लेकिन ऐसे युग की कल्पना अवश्य करता हूँ जब अमीर लोग गरीबों की कीमत पर धनवान बनने का विचार लाग देंगे और गरीब लोग अमीरों से ईष्याक करना छोड़ देंगे | पूर्ण-से-पूर्ण संसार में भी, असमानताओं से नहीं बचा जा सकता, पर हम संघर्ष और कड़ता से बच सकते हैं और अवश्य बचना चाहिए | (यंग, 7-10-1926, पृ. 348)

मैं अपने अनेक देशवासियों को यह कहते सुना है कि हम अमरीका की तरह धनवान तो बनेंगे, पर (धनसंग्रह के) अमीरीकी तरीकों को नहीं अपनाएंगे | मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि यदि कभी ऐसा प्रयास किया गया तो इसकी असफलता अवश्यभावी है | हम एक ही साथ ‘बुद्धिमान, संयत और क्रोधोन्मित’ नहीं हो सकते | (स्पीरा, पृ. 353-54)

भारत में जितने महल दिखाई देते हैं, वे उसकी अमीरी के नहीं बल्कि अमीरी के कारण थोड़े-से लोगों को मिली शक्ति की ध्वस्तता के प्रतीक हैं; इन महलों को अमीरों ने भारत के लाखों कंगालों की मेहनत का नाममात्र का मुआवजा देकर खड़ा किया है | (यंग, 28-4-1927, पृ. 137)

अमीरों का कर्तव्य

अमीरों को अच्छी तरह विचार करना चाहिए कि आज उनका कर्तव्य क्या है | आज अपनी संपत्ति की रखवाली के लिए वे जिन्हें तनख्वाह देकर नियुक्त करता हैं, वे रखवाले ही शायद कल उनके शत्रु बन जाएंगे | अमीरों को हथियारों से अथवा अहिंसा का सहारा लेकर संघर्ष करना सीखना पड़ेगा |

जो अहिंसा का सहारा लेना चाहते हैं, उनके लिए सबसे उत्तम और कारगर मंत्र है: तेन त्यक्तेन भुंजीथा: | इसकी व्याख्या इस प्रकार है: करोड़ों की संपत्ति जरूर कमाइए, पर यह समझ लीजिए कि यह आपकी नहीं, जनता की है | अपनी कमाई में से अपनी जायज जरूरतों के लिए अपने पास रखकर शेष को समाज के हित में खर्च कर दीजिए |

इस सच्चाई पर अभी तक अमल नहीं किया गया है, लेकिन तनाव के इस युग में भी अमीरों ने इस पर अमल नहीं किया तो वे अपनी धन-दौलत और वासनाओं के दास बने रहेंगे और अंतत: अपने ऊपर हावी होने वालों के दास बन जाएंगे |

....मैं वह दिन आता देख रहा हूँ जब गरीबों का राज होगा, चाहे वह सशस्त्र संघर्ष के फलस्वरूप हो या अहिंसा के द्वारा | यह स्मरणीय है कि जिस प्रकार शरीर अस्थायी है, उसी प्रकार शारीरिक बल भी अस्थायी है | लेकिन आत्मा की शक्ति उसी प्रकार स्थायी है जिस प्रकार कि आत्मा अमर है | (हरर, 1-2-1942, पृ. 20)
मुझे इस मत का समर्थन करने में कोई संकोच नहीं है कि सामान्यतया अमीर लोग... या यह भी कह सकते हैं कि अधिकांश लोग – इस बात का विचार नहीं करते कि वह रुपया किस तरह कमा रहे हैं | अहिंसा की विधि का प्रयोग करने पर, इस बात की पूरी संभावना है कि प्राप्त व्यक्ति का, चाहे वह कितना ही घटिया हो, मानवीय तथा कुशल व्यवहार के द्वारा सुधार किया जाएगा | हमें मनुष्यों के भलेरो को उभारना चाहिए और उनसे अनुकूल प्रतिक्रिया की आशा करनी चाहिए |

सबकी भलाई

क्या यह बात समाज के हित में नहीं है कि उसका प्रत्येक सदस्य अपनी संपूर्ण व्यक्तिवीर्य का उपयोग केवल अपनी तरक्की के लिए न करके सबकी भलाई के लिए करे ? हम एक निष्पादन समानता पैदा करना नहीं चाहते जिसमें प्राप्त व्यक्ति अपनी योग्यता का अधिकतम सीमा तक उपयोग करने में असमर्थ होता है अथवा कर दिया जाता है | ऐसा समाज तो अंततः नष्ठ ही हो जाएगा |

इसलिए मेरा कहना है कि मेरी यह राय बिलकुल ठीक है जबकि धनवान व्यक्ति को जरूर कमाए जा सकते हैं (हां, केवल ईमानदारी से), पर अपनी कमाई को सबकी सेवा के लिए संयमित कर दें | ते क्रूर भुआ ज्ञान पर आधारित मंत्र है | आज की दुनिया में जहां बिना इस बात की फिक्र किए कि उसके पढ़ोसी पर क्या गुजर रही है, हर आदमी केवल चार्ट की बिन्दुगी जितनी जरूर है, यह मंत्र सावधानता के एक नयी जीवन-व्यवस्था के विकास का सबसे निश्चित उपाय सुझाता है | (हरि, 22-2-1942, पृ. 49)

भिक्षावृत्ति

हमारा देश जिस घोर दारिद्र्य और भूखमरी का शिकार है, उसके कारण प्रतिवर्ष भिक्षारियों की संख्या में वृद्धि होती चली जा रही है : प्राणरक्षा के निमित्त दो रोटी के लिए कहीं संरक्षण करते-करते ये लोग शालीनता और आकस्मिक की सभी भावनाओं के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं | और हमारे दानवीर इन्हें काम देने और काम करने पर जोर देने के बजाए उन्हें भिक्षा देते हैं | (ए, पृ. 320)

मेरी अहिंसा ऐसे किसी भी स्वस्थ व्यक्ति को मुफ्त का भोजन दिया जाना सहन नहीं करेगी जिसने ईमानदारी के साथ उसके एवज में कोई-न-कोई काम न किया हो | अगर मेरी शक्ति में होता तो मैं ऐसे सभी सदाबहार बंद कर देता जिनमें मुफ्त भोजन कराया जाता है | यह प्रणाली राष्ट्र को गिरावट की ओर ले गई है और उसने आलस्य, अकर्मण्यता, ढोंग और यहां तक कि अपराधवृत्ति को भी बढ़ावा दिया है | अपनों पर दयालुता दिखाने की इस वृत्ति से राष्ट्र की संपत्ति में कोई वृद्धि नहीं होती – न भौतिक और न आध्यात्मिक – बल्कि इससे दानदाता में पुण्यशाली होने की झूठी भावना पैदा होती है |
दान नहीं, काम
यदि ये दानदाता ऐसी संस्थाएं खोल सकें जिनमें साफ-सुरे वातावरण में उन स्त्री-पुरुषों को खाना दिया जाए जो उसके एवज में वहाँ कोई काम-धूप करे तो यह कितना अच्छा और बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य होगा। मैं व्यक्तिगत रूप से सोचता हूँ कि चरखा कताई या कपड़ा की कोई और प्रक्रिया ऐसी संस्थाओं द्वारा अपनाए जाने योग्य एक आदर्श काम होगा। लेकिन वे यह न चाहें तो कोई और काम चुन सकती है, बस, निम्न यह कि ‘काम नहीं तो खाना भी नहीं’ ....

मैं जानता हूँ कि सदावरत बांटना आसान है और ऐसी संस्थाएं बनाना कठिन है जिनमें खाना मिलाने से पहले ईमानदारी के साथ कुछ काम करना जरूरी हो। आर्थिक हंगरी से, मुफ्त भोजनशाला बनाने की तुलना में लोगों से काम लेकर खाना खिलाना महंगा पड़ सकता है, लेकिन मुझे विश्वास है कि यदि हम अपने देश में आवारागों की संख्या में गुणोत्तर वृद्धि करना नहीं चाहते तो, दीर्घकाल में, ऐसी संस्थाएं खोलना सस्ता पड़ेगा। (यंग, 13-8-1925, पृ. 282)

भूखों मरने वाले और निष्क्रिय लोगों के सामने इश्वर सिर्फ एक रूप में प्रकट होने का साहस कर सकता है और वह है, काम और उसकी मजदूरी के रूप में रोटी का वायदा। (यंग, 13-10-1921, पृ. 325)

मैं नंगे लोगों को कपड़ा देकर उनका अपमान नहीं करूँगा। उन्हें कपड़े की नहीं, काम की जरूरत है, जो मुझे उन्हें देना चाहिए। मैं उनका संरक्षक बनने में मेरा काम है, मैं उन्हें रोटी के बदले चंद ट्यूकड़े या उतारे हुए कपड़े नहीं दूंगा, बल्कि अपने अच्छे-से-अच्छे कपड़े और खाना दूंगा और उनके साथ काम में भागीदार बन जाऊँगा। (वही)

मैं यह महसूस करता हूँ कि यदिपि भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहित करना बुरा है, पर मैं किसी भिक्षारी को काम और खाना दिए बगैर जाने नहीं दूंगा। अगर वह काम करने से इंकार करेगा तो मैं उसे खाना नहीं दूंगा। (हरर, 11-5-1935, पृ. 99)

नौकरों पर निर्भरता
मेरी धारणा है कि जो व्यक्ति औरों का सहयोग लेना अथवा उनके साथ सहयोग करना चाहता है, उसे नौकरों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। नौकरों की तंगी के बक्त में भी अगर किसी को नौकर चाहिए तो उसे नौकर को जितना
वेतन वह मांगे, उतना देना होगा और उसकी बाकी सभी शर्तें भी माननी होंगी, जिसका परिणाम यह होगा कि मालिक होने के बजाय वह स्वयं अपने कर्मचारी का नौकर हो जाएगा। यह न तो मालिक के लिए अच्छी बात है और न नौकर के लिए।

पर यदि कोई व्यक्ति किसी की दासता नहीं बल्कि उसका सहयोग चाहता है तो वह न केवल अपनी सेवा करेगा बल्कि उसकी भी करेगा जिसके सहयोग की उसे जरूरत है। इस सिद्धांत का विस्तार करने पर, मनुष्य को सारी दुनिया अपने परिवार का ही बृहत्तर रूप लगेगी और अपने साथियों के प्रति उसके हस्तिकोण में भी तदनुसार परिवर्तन आ जाएगा। अभीष्ट पूर्णता तक पहुंचने का कोई और रास्ता नहीं है। (हरिर, 10-3-1946, पृ. 40)
39. दररद्रनारायण

दररद्रों का भगवान

भगवान जो मनुष्य के लिए अनाम और अगाध है, उसके लाखों नामों में से एक नाम है दररद्रनारायण, जिसका अर्थ है दररद्रों का भगवान यानी दररद्रों के हृदय में वास करने वाला भगवान। (यंग, 4-4-1929, पृ. 110)

दररद्रों के लिए आर्थिक ही आध्यात्मिक है | इन लाखों-करोड़ों भूखे लोगों पर कोई बात असर नहीं कर सकती | तुम उन्हें रोटी दो तो वे तुम्हें ही भगवान समझ लगेंगे | कुछ और सोचने का उनका सामर्थ्य ही नहीं है। (यंग, 5-5-1927, पृ. 142)

अपने इसीं हाथों से मैंने उनके चिथड़ों में बंधी मैली-कुचैली पाइयां इकट्ठी की हैं। उनसे आधुनिक प्रगति की बात मत कीजिए | उनके सामने व्यायाम में भगवान का नाम लेकर भगवान का अपमान मत कीजिए | अगर हम उनसे ईश्वर के बारे में बात करें तो वे मुझे और आपके शैलांग बनाएंगे | अगर वे किसी ईश्वर को जानते हैं तो वह है आत्में और प्रतिशोध का ईश्वर, एक निर्दय अत्याचारी। (यंग, 15-9-1927, पृ. 313)

मैं स्वराज हाशसल करने के लिए प्रयासरत हूं। उन लाखों-करोड़ों लोगों के लिए, जिन्हें दिन में एक बार भी भरपूर खाना नसीब नहीं होता और बासी रोटी के एक टुकड़े और चुटकी भर नमक के सहारे जींदगी घसीटती है। (यंग, 26-3-1931, पृ. 53)

ईश्वर का संदेश

मैं उन तक ईश्वर का संदेश ले जाने का साहस नहीं कर सकता | उन लाखों-करोड़ों भूखे-नंगे के सामने, जिनकी आंखों में कोई चमक शेष नहीं है और जिनका भाग्य केवल उनकी रोटी है, मेरे लिए ईश्वर का संदेश सुनाना वैसा ही है जैसा कुछों के आगे सुनाना | मैं उनके लिए पवित्र काम के संदेश के रूप में ही ईश्वर का संदेश लेकर जा सकता हूं।

अच्छा नाश्ता करके और बढ़िया खाने का इंतजार करते हुए यहा बैठकर ईश्वर के बारे में चर्चा की जा सकती है, पर मैं उन लाखों लोगों से ईश्वर के बारे में चर्चा कैसे करूँ जिन्हें दिन में दो बार भी रोटी नहीं मिलती ? उनके लिए तो ईश्वर रोटी और मक्खन के रूप में ही प्रकट हो सकता है | भारत के किसानों को अपनी जमीन से रोटी मिल रही ही | मैंने उन्हें चरखा दिया ताकि उन्हें मक्खन भी मिल सके, और अगर आज मैं...लंगोटी बांधता हूं तो वह इसलिए कि मैं इन लाखों अंध-भूखे और अंध-नंगे मुक्त लोगों का एकमात्र प्रतिदिन हूं। (यंग, 15-10-1931, पृ. 310)

---

महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org
मैं अपने इन लाखों-करोड़ों दरिद्र भारतवासियों को जानने का दावा करता हूं। मैं दिन के चौबीसों घंटे उनके साथ हूं। उनकी देखभाल मेरा प्रथम और अंतिम कर्त्य है। क्योंकि मैं उन मूक लाखों-करोड़ों के ह्रदय में वास करने वाले भगवान के अलावा और किसी भगवान को नहीं पहचानता। वे उस ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव नहीं करते, मैं करता हूं। और मैं इन्हीं लाखों-करोड़ों दरिद्र लोगों की सेवा के जरिए ईश्वर जो सत्य है अथवा सत्य जो ईश्वर है, उसकी पूजा करता हूं। (हरि, 11-3-1939, पृ. 44)
8. श्रम

40. रोटी के लिए शारीरिक श्रम का सिद्धांत

दैवी नियम

ईश्वर ने मनुष्य की सृष्टि इसलिए की वह अपनी रोटी के लिए श्रम करे, और कहा कि जो बिना श्रम किए खाते हैं, वे चोर हैं। (यंग, 13-10-1921, पृ. 325)

महान प्रकृति चाहती है कि मनुष्य अपनी रोटी के लिए पसीना बहाए। इसलिए जो व्यक्ति एक मिनट भी बर्बर करता है वह अपने पद्धोसियों पर भार है, और ऐसा करना अहिंसा के प्रथम पाठ का उल्लंघन है। अहिंसा अगर अपने पद्धोसी का सुसंश्लित और पूरा-पूरा ध्यान रखना नहीं है तो और क्या है? निष्क्रिय व्यक्ति में इसी बुनियादी बात की कमी होती है। (यंग, 11-4-1929, पृ. 114-15)

यह नियम कि मनुष्य को जीने के लिए श्रम करना चाहिए, मेरे मन में पहले-पहल तब बैठा जब मैंने टालस्टॉय का रोटी के लिए शारीरिक श्रम से संबंधित लेखन पढ़ा। वैसे, उससे भी पहले रस्किन का ‘अनूद दिस लास्ट’ पढ़ने के बाद से ही मैं इस नियम का आदर करने लगा था। इस नियम पर कि मनुष्य को अपनी रोटी कमाने के लिए अपने हाथों से श्रम करना चाहिए, सबसे पहले रूसी लेखक ट. ए. बोल्डार्फ ने बत दिया था। टालस्टॉय ने इसका विज्ञापन करके उसे व्यापक रूप से प्रचारित किया। मेरे विचार में, गीता के तीसरे अध्याय में जहां यह कहा गया है कि जो व्यक्ति यज्ञ किए बिना भोजन करता है, वह चोरी का अन्न खाता है, वह इसी नियम का प्रतिपादन है। यज्ञ से तात्पर्य यहां रोटी के लिए शारीरिक श्रम से ही हो सकता है। (प्रायम, पृ. 35)

तर्कसिद्ध भी

तर्क के द्वारा भी हम इसी नतीजे पर पहुंचते हैं। जो आदमी शारीरिक श्रम नहीं करता, उसे खाना खाने का क्या अधिकार है? बाइबिल का कहना है, ‘तुझे पसीना बहाने पर ही रोटी मिलेगी।’ यदि कोई लक्षात्मक दिन भर बिस्तर में रहा करवटे लेता रहे और खाना भी और यह खाना भी तो वह ज्यादा दिन तक इस तरह नहीं चला सकता और जल्दी ही अपनी जिंदगी से उकता जाएगा। इसलिए वह व्यायाम करने भूख जगाता है और अपना खाना अपने हाथ से खाता है।

इसलिए अगर गरीब-अमीर, सभी को किसी-न-किसी रूप में व्यायाम करना जरूरी है तो फिर यह उत्पादक श्रम के रूप में, अर्थात रोटी के लिए मेहनत के रूप में, क्यों न किया जाए? किसान से कोई प्राणायाम या मांसपेशियों का व्यायाम करने के लिए नहीं कहता और मानव जाति की नव्वे प्रतिशत से भी अधिक संख्या किसानों की ही पेशा करती है। इसलिए अगर बाकी के दस प्रतिशत लोग भी बहुसंख्यकों के उदाहरण का अनुगमन करने लगें
यानी कम-से-कम अपने खाने के लायक श्रम करने लगें तो यह दुनिया आज की तुलना में कितनी सुस्त, स्वस्थ और शांतिपूर्ण बन सकती है।

सामाजिक क्रांति

...पूजी और श्रम के बीच विश्वव्यापी संघर्ष है, और गरीब लोग अमीरों से ईर्ष्या करते हैं। यदि सभी लोग रोटी के लिए श्रम करने लगें तो बड़े-छोटे के भेद मिट जाएंगे। अमीर लोग फिर भी रहेंगे लेकिन वे स्वयं को अपनी संपत्ति के मानेंगे और उसे प्रमुखता लोकहित के लिए इस्तेमाल में लाएंगे।

(वहीं, पृ. 35-36)

ईश्वर तात्काशलक आवश्यकता से अशधक मात्रा में कभी सृजन नहीं करता। इसलिए, यदि कोई व्यक्ति अपनी आवश्यकता से अधिक वस्तु का उपयोग करता है तो वह अपने पड़ोसी को दरिद्र बनाता है। विश्व के अनेक भागों में लोग इसी कारण भूखे हैं कि हममें से अनेक लोग अपनी आवश्यकता से कहीं अधिक मात्रा पर कब्जा कर लेते हैं। अतः आरंभिक मौलिक समाजता को सुनिश्चित करने के लिए हमें केवल यह मालूम करने की जरूरत है कि उसके पीछे एक शनशश्चत प्रयोजन हो।

(आआए, पृ. 62-63)

चिल्डों और पशुओं की तरह, प्रत्येक मनुष्य को जीने के लिए अनिवार्य वस्तुओं का पाना का अधिकार है। और चूंकि प्रत्येक अधिकार के साथ एक अनुरूपी कर्तव्य भी जुड़ा होता है तथा अधिकार पर हमले से बचाव के लिए अनुरूपी उपचार भी जरूरी होता है, अतः आरंभिक मौलिक समाजता को सुनिश्चित करने के लिए हमें केवल यह मालूम करने की जरूरत है कि उसके पीछे एक शनशश्चत प्रयोजन हो।

(यंग, 26-3-1931, पृ. 49)

सच्ची सेवा

रोटी के लिए प्रबुद्ध श्रम निश्चय ही समाज-सेवा का सर्वोत्तम रूप है। इससे अच्छा और क्या हो सकता है कि मनुष्य अपने व्यक्तिगत श्रम से देश के उपयोगी धन में वृद्धि करें? ‘होना’ ही ‘करना’ है।

यहां श्रम के साथ भूलते हैं ‘प्रबुद्ध’ विश्वास, यह बताने के लिए लगाया गया है कि श्रम को समाज-सेवा तभी माना जा सकता है जब उसके पीछे एक निश्चित प्रयोजन हो। अन्यथा हर मज़दूर को समाज-सेवा करने वाला माना जा सकता है। वह भी एक तरह से समाज-सेवा करता है, पर यहां हमारा आश्चर्य उससे कहीं बड़कर हो। जो व्यक्ति सबकी आम भलाई के लिए श्रम करता है, वह समाज का सेवक है और उसका श्रम धन्य है।

इसलिए, रोटी के वास्ते किया गया इस प्रकार का श्रम समाज-सेवा से भिन्न नहीं है।

(हरि, 1-6-1935, पृ. 125)
रोटी के लिए श्रम करने के नियम का पालन करने से समाज की संरचना में एक मौन क्रांति होगी। तब, जीवन के लिए संघर्ष करने के स्थान पर परस्पर सेवा के लिए संघर्ष करने में मानव की विजय मानी जाएगी। और पशु के नियम के स्थान पर मानव के नियम की प्रतिष्ठा होगी। (हरि, 29-6-1935, पृ. 156)

यदि प्रत्येक व्यक्ति जीने के लिए शारीरिक श्रम करे तो यह दुनिया स्वर्ग बन जाए। यहाँ, विशेष योग्यताओं के उपयोग के प्रश्न पर खास तौर से विचार करने की आवश्यकता नहीं है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी रोटी के लिए शारीरिक श्रम करे तो इसका अर्थ यह होगा कि कवि, डाक्टर, वकील आदि अपनी विशेष योग्यताओं का उपयोग मानव सेवा के लिए निःशुल्क करना अपना कर्तव्य दर्शाएं। निस्वार्थ भाव से कर्तव्य करने के कारण उनके काम की गुणवत्ता भी कहीं अधिक बढ़ जाएगी। (हरि, 2-3-1947, पृ. 47)

अमल का क्षेत्र

अहिंसा का पालन करने वाले, सत्य की आराधना करने वाले और ब्रह्मचर्य को सहज कृत्य मानकर अपनाने वाले के लिए तो रोटी के वास्ते श्रम एक वरदान ही है। रोटी के लिए श्रम का संबंध केवल कृत्य के साथ ही सकता है। लेकिन वर्तमान में, सबके लिए कृत्य करना संभव नहीं है। इसलिए आदर्शी कृत्य के स्थान पर कताई, बुनाई कर सकता है या बढ़ईगीरी अथवा तुलारी कर सकता है, यद्यपि आदर्श सदैव शरीर कृत्य ही है।

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सफाई का काम खुद ही करना चाहिए। भोजन जितना आवश्यक है, उतना ही मलोत्सग है। और सर्वोच्च यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी सफाई खुद करे। यदि यह असंभव हो तो प्रत्येक परिवार को तो अपनी सफाई का जिम्मा खुद लेना ही चाहिए।

मैंने बरसों से यह महसूस किया है कि समाज के एक खास वर्ग को सफाई का जिम्मा देकर कहीं भारी गलती की गई है। इतिहास में उस आदर्शी का कोई उल्लेख नहीं मिलता जिसने सबसे पहले इस अभ्यास सफाई-सेवा को निम्नमान दर्जा दिया। वह जो भी रहा हो, उसने हमारे साथ किसी अर्थ में भलाई नहीं की।

बचपन से ही हमारे मन में यह बात बेठा दी जानी चाहिए कि हम सभी सफाईपेशा हैं, और इसका सबसे आसान उपाय यह है कि हम सब रोटी कमाने के लिए सफाई का काम खाम हाथ में लें। इस प्रकार आग सफाई का काम बुद्धिमानी से हाथ में लिया जाए तो इंसान-इंसान की बाराबिँस को सच्चे रूप में समझ सकते में बड़ी मदद मिलेगी। (फ़ायम, पृ. 36-37)

स्वेच्छक मान्यता

गांवों की ओर लौटने का अर्थ है रोटी के लिए श्रम करने के कर्तव्य तथा उससे जुड़ी सभी बातों को मान्यता प्रदान करना। उद्धर, आलोचक कहता है, “भारत की लाखों संतानें आज गांवों में रह रही हैं, पर उन्हें मुखिल से आधा
पेट खाना मिल पाता है |” अफसोस कि, यह बात सही है | सौभाग्य से, हमें यह पता है कि गांधी के जीवन को ये लोग स्वच्छ ना रखें जो रहेंगे हैं | उनका बास बदले तो शायद वे शारीरिक श्रम करना झूठ दे और यह भी संभव है कि अगर उन्हें रहने की जगह मिलने का आश्चर्य हो तो वे भाग कर पाएंगे दो स्तरों में जा बसें | 

मालिक का जबरन आज्ञापालन दासता है, जबकि अपने पिता का स्वच्छ ना रखें जो रहेंगे हैं | इसी प्रकार, रोटी के लिए श्रम के नियम का जबरन पालन गरीबी, बीमारी और असंतोष को जन्म देता है | यह दासता की ही स्थिति है | इस नियम का स्वच्छ ना रखें पर अंतराल और स्वास्थ्य में वृद्धि होनी चाहिए | और, स्वास्थ्य ही सच्छा धन है, सो और छाँदे के ऊपर रहें | (हारी, 29-6-1935, पृ. 156)

श्रम का विभाजन

मैं श्रम अथवा काम के विभाजन में विभाजन करता हूं | लेकिन मैं मजदूरी की बराबरी पर जोर देता हूं | वकील, डक्टर या अध्यापक को भंगी की अपेक्षा ज्यादा पैसा लेने का हक नहीं है | जब यह होगा तब श्रम के विभाजन से राष्ट्र अथवा विश्व का उत्थान होगा | सच्ची सहभाग्यता अथवा सुख की प्राप्ति का कारों को अपनी आसान रास्ता नहीं है | (हारी, 23-3-1947, पृ. 78)

रोटी के लिए श्रम का अर्थशास्त्री जीवन अपेक्षा ज्यादा पैसा लेने का हक नहीं है | इसका मतलब यह है कि हर आदमी को अपनी रोटी-कपड़े के लिए शारीरिक श्रम करना होगा | अगर मैं लोगों को रोटी के लिए श्रम का महत्व और उसकी आवश्यकता समझ सकें तो रोटी-कपड़े की कमी कभी नहीं पड़ेगी | तब मैं आत्मविश्वास के साथ लोगों से यह कह सकता कि अगर हम खेती, कताई अथवा बुनाई करने के लिए तैयार नहीं हैं तो उन्हें भूखे-नांगे रहना होगा | (हारी, 7-9-1947, पृ. 316)

मैंने 1925 में जो बात कही थी, उस पर आज भी काम हूं | अर्थतः एक निखिल आत्मा से ऊपर के भागीय पुरुषों को वोट देने का अधिकार प्राप्त करेंगे | (हारी, 2-3-1947, पृ. 46)

पूजा जैसा काम

मैं इससे अधिक उदात्त और राष्ट्र-प्रेम की कोई और बात नहीं सोच सकता क्योंकि हम सभी प्रतिदिन, मान लीजिए, एक घंटे के लिए यह काम करें जो गरीब लोग करते हैं और इस प्रकार उनके तथा उनके माध्यम से समस्त मानवता के साथ तादात्म्य स्थापित करें | मैं भाग्यवान के इससे बेहतर किसी पूजा की कल्पना नहीं कर सकता कि मैं उसके नाम पर गरीबों के लिए वैसा ही श्रम करूँ जैसा कि वे करते हैं | (यंग, 20-10-1921, पृ. 329)
भगवान के नाम पर किया गया और उसे समर्पित कोई काम छोटा नहीं होता | इस भावना से किए गए सभी काम समान रूप से प्रारंभिक हैं | एक सफाई करने वाला जो अपने काम को ईश्वर की सेवा मानकर करता है, वह भी उसी बड़ाई का हकदार है जितना कि ईश्वर के नाम पर अपने गुणों का उपयोग करते हुए तथा अपने को मात्र न्यासी मानते हुए शासनकार्य करने वाला एक राजा | (यंग, 25-11-1926, पृ. 414)

...सेवा करना तब तक संभव नहीं है जब तक कि उसके मूल में प्रेम अथवा अहिंसा न हो....सच्चा प्रेम समुद्र के समान असीम होता है और इस भावना से शकए गए सभी काम समान रूप से प्रःनीय हैं | एक सफाई करने वाला जो अपने काम को ईश्वर की सेवा मानकर करता है, वह भी उसी बड़ाई का हकदार है जिसे गीता में यज्ञ कहा गया है | सेवा के प्रयोजन से शारीरिक श्रम करने पर ही स्त्री अथवा पुरुष को जीने का अधिकार प्राप्त होता है | (यंग, 20-9-1928, पृ. 320)

त्याग का कर्तव्य

"ब्रह्मा ने अपनी प्रजा की सृष्टि करके उन पर यह कतकव्य िाला शक वे यज्ञ करें और कहा : 'तुम यज्ञ द्वारा समृब्लद् को प्राप्त हो | यह तुम्हारी सभी कामनाओं की पूशतक करे | जो व्यब्लक्त यज्ञ शकए शबना भोजन करता है, वह चोरी का अन्न खाता है,"] – ऐसा गीता का वचन है | बाइशबल का भी कहना है : "तू पसीना बहाकर अपनी रोट्ी कमाए |" त्याग अनेक प्रकार से हो सकते हैं | उनमें से एक, रोटी के लिए श्रम है | यदि सबको मात्र कुल प्राप्त होता है ही श्रम करें तो भी दुशंगे में सभी को पूरा शकए शबना अगर के वल अपनी रोटी भर के लिए ही करेंगे, पर वे सारे काम प्रेमवश अर्थतः लोक-हित के लिए किए जाएंगे | तब न कोई अमीर होगा, न कोई गरीब; न ऊँचा होगा, न नीचा; न स्पृश्य होगा, न अस्पृश्य | यह अप्राप्य आदर्श हो सकता है | लेकिन इस कारण से, हमें इसके लिए प्रयास करना छोड़ नहीं देना चाहिए | हम त्याग के संपूर्ण निम्य, अर्थतः अपने जीवन के निम्य, को पूरा किए बिना आगे केवल अपनी रोटी भर के लिए ही शारीरिक श्रम करें तो भी हम इस आदर्श की प्राप्ति की दिशा में काफ़ी आगे बढ़ सकेंगे | यदि हम ऐसा कर पाए तो हमारी आवश्यकताएं नूनतम रह जाएंगे और हमारा भोजन सादा हो जाएगा | तब हम जीने के लिए खाएंगे, खाने के लिए नहीं जिएंगे | जिस व्यक्ति को इस प्रस्थापना की सच्चाई पर संदेह है, वह अपनी रोटी कमाने के लिए पसीना बहाने की कोशिश करके देख ले; उसे अपने श्रम के फल से अधिकतम आनंद की प्राप्ति होगी, उसके स्वास्थ्य में सुधार आएगा और वह यह पाएगा कि वह जिस चीज़ों का भोग कर रहा था, उनमें से बहुत-सी चीज़ें फालतू थीं | (हरि, 29-6-1935, पृ. 156)
कर्म का सिद्धांत

कर्म पर जितना बल दिया जाए, थोड़ा है | मैं केवल गीता द्वारा दिए गए सिद्धांत को दुहरा रहा हूँ जिसमें भगवान कहते हैं: ‘यदि में अहंनिष्ठ कर्मरत न रहूँ तो में मानव-जाति के समक्ष एक गलत उदाहरण प्रस्तुत करूँगा।’

...यदि मुझे भगवान बुद्ध जैसे महापुरुष के साक्षात्कार की सोभाय प्राप्त होता तो मैं निस्संकोच उनसे यह पूछता कि उन्होंने ध्यान के सिद्धांत की अपेक्षा कर्म के सिद्धांत का उपदेश क्यों नहीं दिया ? मैं यदि तुकाराम और ज्ञानदेव आदि संतों का साक्षात्कार कर पाता तो उनसे भी यही प्रश्न करता। (हरि, 2-11-1935, पृ. 298)

ईश्वर ने मनुष्य को अपनी रोटे के वास्ते श्रािंत्यारीक श्रम करने के लिए पैदा किया है | मैं इस बात की संभावना से ही डर जाता हूँ जब मनुष्य किसी जादू की छड़ी से खाद्यपदार्थों सहित अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुओं का उत्पादन कर सके। (हरि, 16-5-1936, पृ. 111)

जब तक दुनिया में एक भी समयाबंधी -पुरुष बिना काम अथवा भोजन के है तब तक हमें विश्वास करने अथवा भयापट भोजन करने में लज्जा का अनुभव करना चाशहए। (यंग, 6-10-1921, पृ. 314)

मैं अपने देश में व्याप्त घोर दररद्रता और बेरोजगारी को देखकर यह सोचता हूँ, पर मुझे यह स्वीकार करना होगा कि इसके लिए अधिकांशत: हमारी उपेक्षा और अज्ञानता ही जिम्मेदार है | हम श्रम की गरीमा से ही अपरिचित हैं। (यंग, 6-10-1921, पृ. 314)

भारत में उन सभी के लिए काम मौजूद है जो ईमानदारी से अपने हाथ-पैरों से काम करना चाहते हैं | ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति को काम करने और अपनी रोटी से ज्यादा कमाई करने का सामर्थ्य प्रदान किया है, और जो व्यक्ति इस सामर्थ्य का उपयोग करने के लिए तैयार है, उसे काम की कोई कमी नहीं हो सकती। (हरि, 19-12-1936, पृ. 356)

...यह निश्चित रूप से सरकार का दायित्व है कि वह सभी बेरोजगार स्त्री-पुरुषों को उनकी संख्या अधिक होने जितनी ही काम करने के लिए शारीरिक श्रम के अवसर उपलब्ध कराए। (हरि, 11-1-1948, पृ. 507)

बौद्धिक श्रम

मुझे गलत न समझिए | मैं बौद्धिक श्रम के महत्व को नकार नहीं रहा, लेकिन आप कितना ही बौद्धिक श्रम करें, वह उस शारीरिक श्रम का स्थान नहीं ले सकता जिसे सबकी भलाई के लिए करने के वास्ते हमने जन्म लिया है | जब हम शारीरिक श्रम के अत्यधिक क्षेत्र माना जा सकता है, प्राय: होता भी है, पर वह शारीरिक श्रम का स्थानापन्न
कदापि नहीं है, और न हो सकता है | यह इसी प्रकार से है जैसे कि बौद्धिक आहार अन्न के दानों से कितना ही श्रेष्ठ हो; पर वह हमारा पेट नहीं भर सकता | सच्चाई तो यह है कि धरती की पैदावार के अभाव में कोई बौद्धिक कार्य संभव ही नहीं है | (यंग, 15-10-1925, पृ. 355-56)

क्या लोगों के लिए बौद्धिक श्रम के द्वारा अपनी रोटी कमाना उचित नहीं है? नहीं | शरीर की आवश्यकता शरीर द्वारा ही पूरी की जानी चाहिए | “जो सीजर का है, वह सीजर को करने दो”, उक्ति यहां भी लागू होती है | मात्र मानसिक अर्थात बौद्धिक श्रम आत्मा के लिए होता है और वह अपने आप में तुष्टि का विषय है | इसके लिए पारिश्रमिक की मांग कभी नहीं की जानी चाहिए | आदर्श राज्य में डॉक्टर, वकील आदि अपने लिए नहीं अपितु केवल समाज की भलाई के लिए काम करेंगे | (हरि, 29-6-1935, पृ. 156)

बौद्धिक कार्य महत्वपूर्ण है और जीवन-क्रम में निरस्त्र इसका स्थान है | लेकिन में जिस बात पर बल दें रहा हूँ वह शारीरिक श्रम है | मेरा कहना है कि इस दायित्व से किसी को बरी नहीं किया जाना चाहिए | शारीरिक श्रम से मनुष्य के बौद्धिक कार्य की गुणवत्ता में भी सुधार आएगा | (हरि, 23-2-1947, पृ. 36)

मजदूर कुर्सी पर बैठकर लिख नहीं सकता, लेकिन जिस व्यक्ति ने जीवन भर कुर्सी पर बैठकर काम किया है, वह निष्ठुर रूप से शारीरिक श्रम करना आरंभ कर सकता है | (हरि, 18-1-1948, पृ. 520)
41. श्रम और पूंजी

श्रम और पूंजी का साझेदार

मैं देश को समान रूप से साझा करने के प्रति अपने साथ काम करने वाले श्रमिकों के कल्याण के यात्री हूँ, इसलिए उन्हें श्रमिकों के केवल भौतिक कल्याण पर ही ध्यान नहीं देना चाहिए बल्कि उनके नैतिक कल्याण को भी सुनिश्चित करना चाहिए। (यंग, 20-8-1925, पृ. 285)

मैं पूंजी से नहीं घबराता। मेरा संघ का पूंजीवाद से है, वे पापकार्य को कोई और, तथा अपेक्षाकृत अधिक सांगनीक स्वरूप न ले ले, इसलिए पक्षिमी देश पूंजी के संकल्पना से बचने पर बल देते हैं। (यंग, 7-10-1926, पृ. 348)

पूंजीपतियों के हृदरोध

यदि मुझे पूंजीपतियों और श्रमिकों की मौलिक समानता में विश्वास है, तो मुझे अपने आप में कोई बुरी चीज़ नहीं है, उनका गलत उपयोग बुरा है। (हरी, 28-7-1940, पृ. 219)

श्रमिकों के कार्य और अधिकार

यह मेरा सावधान अनुभव है कि सामान्यतया श्रमिकों के अपने साथ आने वाले मालिकों की तुलना में कहीं ज्यादा कार्ययात्रा करते हैं। इसलिए श्रमिकों के प्रति इसी प्रकार अपना दार्शनिक निभाना चाहिए। इसलिए श्रमिकों के लिए इस बात का पता लगाना जरूरी है कि वे अपने मालिकों के ऊपर अपनी इच्छा किस प्रकार आरोपित करें।
यदि श्रमिक पाएं कि उन्हें उचित पगार नहीं मिल रही है या कि उन्हें रहने के लिए मकानों की पर्याप्त व्यवस्था नहीं है तो इन्हें सुनिश्चित करने का उपाय क्या है? श्रमिकों की सुख-सुबिधा के स्तर को निर्धारित करने? निस्संदेह सर्वोच्चतम तरीका तो यही है कि श्रमिक अपने अधिकार स्वयं समझें और उन्हें लागू करने के उपाय भी निकालें। पर इसके लिए पहले कुछ प्रश्नक्रम की आवश्यकता होगी....कुछ शिक्षा की आवश्यकता होगी।

(स्पीरा, पृ. 1046)

लेकिन संसार में ऐसा कोई अधिकार नहीं है जिसे पाने के लिए पहले कोई कर्तव्य करना जरूरी न हो। कोई मालिक अपनी संपत्ति को नहीं भिगाड़ता। जब आपको यह लगेगा कि यह मिल जितनी मालिक की है, उसती ही आपकी भी है। तो अप उसे कभी नुकसान नहीं पहुंचाएंगे। अप मिल-मालिकों से अपने झगड़ों का निपटान करने के लिए कोई में आकर कभी कपड़ा या मशीन को नष्ट करे। संघर्ष अगर करना ही पड़े तो सच्चाई के रास्ते पर चलते हुए करें। तब ईश्वर आपका साथ देगा। इसके लिए कतोक्त करना जरूरी न हो। कोई माशलक अपनी संपत्ति को नहीं भगाड़ता। जब आपको यह लगेगा, यह ऐसा है कि हमें हाथ लगा है यह है कि आम श्रमिकों के लिए पीड़ा-भोग के अलावा कोई आसान रास्ता अपने अशधकारों को लापता करने वाले पस्त नहीं है।

(यंग, 4.8-1927, पृ. 248)

श्रमिक की शक्ति

मेरी विनम्र सम्मति में, यदि श्रमिकों के बीच पर्याप्त एकता हो और उनमें आत्मसम्धार की भावना हो तो वे सदा अपनी न्यायोपचार सिद्ध कर सकते हैं। पूंजीपति कितने ही दमनकारी हों, पर मेरा विश्वास है कि जो लोग श्रमिकों से जुड़े हैं और उनके आंदोलनों का मार्गदर्शन करते हैं उन्हे स्वयं इस बात का पता नहीं है कि श्रमिक जितने साथन जुटा सकते हैं उतने पूंजीपति कभी जुटा ही नहीं सकते। यदि श्रमिक एकत्र में उसके दासों का पता नहीं करते तो वे तत्काल अपनी शक्ति को छोड़ते हैं। उसके पंजी के बिना पूंजी कुछ भी नहीं कर सकती तो वे तत्काल अपनी शक्ति को पहचान जाएँगे।

दुर्भाग्यवश हम पूंजी के सम्पूर्ण प्रभाव के वशीभूत होकर यह मान बेढ़े हैं कि इस संसार में पूंजी ही सब कुछ है। लेकिन एक क्षण के लिए भी विचार करें तो हम पाएंगे कि श्रमिक के पास जो पूंजी है, वह पूंजीपति के पास कभी नहीं हो सकती। अपने जमाने में रक्षित ने बताया था कि श्रमिक के पास अत्यधिक अवसर हैं। लेकिन उसकी बात हमारे सिर के ऊपर से निकल गई।

एक बड़ा जानदार शब्द है, यह अंग्रेजी में भी है, फ़्रेंच में भी है, और विश्व की सभी भाषाओं में है - यह शब्द है 'नहीं'। जो रहस्य हमें बाधा लगा है कि यह यह शब्द है कि जब पूंजीपति यह चाहे कि श्रमिक 'हां' कहें तो श्रमिक को, यदि उसका मंतव्य 'न' है तो, पूरे जोर के साथ 'नहीं' कह देना चाहिए। इसके साथ ही, श्रमिकों को यह बात समझ में आ जाएगी कि उनके सामने दो विकल्प हैं - जब 'हां' कहना चाहें तो 'हां' कहने का, और जब 'न' कहना चाहें तो
‘न’ कहने का | जब ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाएगी तो श्रम पूंजी से स्वतंत्र हो जा जाएगा और पूंजी को श्रम की मनुहार करनी होगी।

तब इस बात से कतई फरक नहीं पड़ेगा कि पूंजी के पास बंदूकें और जहरीली गैसें हैं | इनके बावजूद अगर श्रम अपनी गरिमा को बनाए रखते हुए ‘न’ कह देगा तो पूंजी पूरी तरह लाभारिक का अनुभव करेगी | तब श्रम को प्रतिकार करने की जरूरत नहीं होगी, वह बंदूकों और जहरीली गैस का डटकर सामना करेगा और फिर भी अपनी ‘न’ पर अटिक रहेगा।

श्रम के प्रायः असफल हो जाने का एकमात्र कारण यह है कि जो तरीका मैंने ऊपर सुझाया है, उसके अनुसार पूंजी को नाकाम करने के बजाए श्रम (मैं स्वयं को ऐसा नहीं बताता) नाकाम करने के बजाए श्रम की मनुहार करनी होगी।

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रयोगों के द्वारा इस स्थिति तक पहुंचे हुए जब जहरीली गैसों के दमन के लिए यह प्रयोग किया जाता है | यह योजना रखी तो यह कोई अशतमानवीय नहीं बल्कि प्रत्येक श्रमिक – स्त्री और पुरुष – के सामर्थ्य के भीतर की चीज़ मानकर रखी थी।

आप यह भी पाएंगे कि इस अहिंसक योजना में श्रमिक से जो अपेक्षा की गई है...वह बैशी ही है जैसी कि हथियारों से पूरी तरह लौटाने से की जाती है | सिपाही जब अपने शत्रु पर प्रहार करता है तो अपनी जान को भी हथेली पर रखता है | मैं यहीं चाहता हूँ कि सिपाही की फशिया अर्थात जान लेने के सामर्थ्य का अनुकरण किये बिना श्रमिक उसके साहस का अनुकरण करे और मैं आपसे कहता हूँ कि जो श्रमिक आत्मरक्षा के लिए भी हथियार मानकर धारण किये बिना मौत को आत्महत्या करता है, वह यथा दर्शन तक हथियारों से लौट सिपाही की तुलना में कहीं अधिक साहस का परिचय देता है। (यंग, 14-1-1932, पृ. 17-18)

बुद्धि का गुण

जैसे ही श्रमिक अपनी गरिमा को पहचान लेंगे, रूपया अपनी सही जगह पर आ जाएगा अर्थात वह श्रमिक वर्ग के लिए न्यास के रूप में रखा जाएगा | बात यह है कि श्रमिक का महत्व रूपए से अधिक है | (हरिर, 19-10-1935, पृ. 285)
मेरी धारणा के अनुसार श्रमिक वर्ग के लिए विभिन्न व्यवसायों की जानकारी प्राप्त करने का वही महत्व है जो पूंजीपति के लिए धातु का है | श्रमिक का कौशल ही उसकी पूंजी है | जिस प्रकार पूंजीपति श्रमिक के सहयोग के बिना अपनी पूंजी का फल प्राप्त नहीं कर सकता उसी प्रकार श्रमिक भी पूंजीपति के सहयोग के बिना अपने श्रम का फल प्राप्त नहीं कर सकता |

और, यदि श्रम तथा पूंजी, दोनों ने अपनी बुद्धि के गुण का समान रूप से विकास कर लिया है और उनमें यह विश्वास जागृत हो गया है कि वे एक-दूसरे से उचित व्यवहार का पालन करते हैं, तो उनमें एक-दूसरे का आदर करने और एक साथ उदार में बराबर का भागीदार बनने की समझहै | तब उनमें एक-दूसरे को स्वाभाविक रूप से पक्का स्वाभाविक स्वभाव लड़ जाएगा और उसे अपने अधीन नहीं कर पाएगा | (हरी, 3-7-1937, पृ. 161)

श्रमिक को यह समझना होगा कि उसकी मजदूरी का निर्धारण पूंजीपति करेंगे और वह इस संबंध में उनसे अपनी शर्तें मनवाने की स्थिति में नहीं है | वह सही ढंग से संगठित हो जाए, उसकी बुद्धि प्रकार हो जाए, वह कई प्रकार के काम-श्रम से सीख ले तो फिर वह सिर उठा करके चल सकेगा और उसे कभी अपने जीवन-निर्वां से भाग नहीं लेना होगा | (यंग, 17-3-1927, पृ. 86)

दक्षिण अफ्रीका, चंपारण या अहमदाबाद में मैंने जिस तरह श्रम को संगठित किया उसमें पूंजीपतियों के प्रति बेरी की भावना बिलकुल नहीं थी | उनमें हमें भरोसा हो, अपनी शर्तें भी मात्रा उसे आवश्यक समझा गया उसमें पूरी कामयाबी मिली | (यंग, 17-3-1927, पृ. 86)

श्रमिक को यह समझना होगा कि श्रम भी पूंजी है | ज्यों भी हम श्रम को ठीक से शिक्षित तथा संगठित कर दिया जाएगा और वह अपनी शक्ति को पहचान लेगा, पूंजी की कितनी भी मात्रा उसे अपने अधीन नहीं कर पाएगी | संगठित और प्रबुद्ध श्रम अपनी शर्तें पूंजीपतियों से खुद मनवा सकता है | अगर हम खुद कमजोर हों तो दूसरे से
प्रतिशोध लेने का प्रण करना व्यर्थ है | हमें पहले अपनी ताकत बढ़ानी चाहिए | सबल हृदय, प्रबुद्ध मन और श्रम के लिए इच्छुक हाथ सभी कठिनाइयों और बाधाओं का मुकाबला कर सकते हैं | (हरि, 1-3-1935, पृ. 23)

संघर्ष अपरिहार्य नहीं

में नहीं समझता कि पूंजी और श्रम के बीच टकराव जरूरी है | दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं | आज जरूरत इस बात की है कि पूंजीपति श्रमिकों पर शासन करना बंद कर दे | मेरी राय में मिल-मजदूर भी उसी तरह मिल के मालिक हैं जिस तरह शेयरधारक हैं, जिस दिन मिल-मालिक यह समझ जाएगे कि मिल के स्वामी जितने वे हैं, उतने ही मिल-मजदूर भी है, उसी दिन दोनों के बीच झगड़े की स्थिति समाप्त हो जाएगी | (यंग, 4-8-1927, पृ. 248)

जनता जमींदारों और मुनाफाखोरों को अपना दुश्मन नहीं मानती | लेकिन उसमें यह चेतना जगानी है कि इन वर्गों ने उसके साथ ज्यादती की है | मैं जनता को यह सीख नहीं देता कि वे पूंजीपतियों को अपना शत्रु मानें, मैं तो उनसे कहता हूँ कि वे स्वयं अपने शत्रु हैं | (यंग, 26-11-1931, पृ. 369)

पूंजी और श्रम के बीच हितों का टकराव है, लेकिन हमें अपने कर्त्तव्य को पूरा करके उसे दूर करना है | जिस प्रकार शुद्ध रक्त में कोई विषाणु जन्म नहीं ले सकते उसी प्रकार श्रमिक वर्ग यदि शुद्ध हो जाए तो कोई उसका शोषण नहीं कर पाएगा |

मैंने यह कभी नहीं कहा शक श्रमिकों और श्रम की कामना के साथ हुए भी शोषणकर्ता और शोषित के बीच सहयोग होना चाहिए | मैं तो बस इस बात में विश्वास नहीं करता कि पूंजीपति और जमींदारों का स्वभावत्य शोषणकर्ता होना आवश्यक है या कि उनके और जनता के बीच आधारभूत अथवा अचानक विरोध है |

वर्ग-संघर्ष का विचार मुझे नहीं जमता | भारत में यह न केवल अपरिहार्य नहीं है, अपरिहार्य अहिंसा का संदेश समझ लेने पर हम इससे बच भी सकते हैं | जो लोग वर्ग-संघर्ष को अपरिहार्य मानते हैं वे या तो अहिंसा के निहितार्थ को समझ नहीं पाए हैं या उन्हें उसका केवल सतती ज्ञान है | (अभाय, 3-8-1934)

रचनात्मक उपयोग

क्या मैंने यह नहीं कहा कि यदि श्रमिक अपनी शक्ति को पहचान लें और उसका बुद्धिमत्ता के साथ तथा रचनात्मक ढंग से इस्तेमाल करें तो वे सभी मालिक बन सकते हैं और नियोजक उनके न्यासी तथा जरूरत के वक्त काम आने वाले मित्र बन जाएंगे ? यह सुखद स्थिति तभी आ सकती है जब वे यह समझ जाएंगे कि श्रम उस पूंजी से ज्यादा सार्थक पूंजी है जो श्रमिक भूमि के गर्भ में से सोने-चांदी के रूप में निकालते हैं | (हरि, 28-9-1947, पृ. 350)
यदि प्रत्येक अधिकार भली प्रकार किए गए कर्तव्य से उद्भूत हो तो उसे कोई नहीं छीन सकता। तदनुसार मुझे मजदूरी पाने का अधिकार तभी है जब मैं उसे कमाने के लिए अपने कर्तव्य का भली प्रकार निर्वाह करूं। अगर मैं काम किए बगैर मजदूरी लूंगा तो वह चोरी का धन होगा। मैं अपना कर्तव्य पूरा किए बगैर अधिकारों को हासिल करने पर बराबर जोर देते रहने के अभियान के साथ अपने को संबद्ध करने के लिए तैयार नहीं हूं, क्योंकि अधिकार कर्तव्यों के पालन पर निर्भर करते हैं और उन्हीं से उद्भूत होते हैं। (हरि, 30-11-1947, पृ. 448)
42. हड़तालें – वैध और अवैध

मध्यस्थता पहले

मैं जानता हूं कि न्याय पाने के लिए हड़ताल करना कामगारों का सहज अधिकार है, लेकिन पूरीति द्वारा मध्यस्थता के सिद्धांत को स्वीकार करते ही हड़ताल अपराध करार दें दी जानी चाहिए। (यंग, 5-5-1920, पृ. 6)

हड़तालें और राजनीति

हड़तालें आज आम हो गई हैं। ये वर्तमान अशांति का लक्षण हैं। आज वातावरण सभी प्रकार के अस्पष्ट विचारों से राख है। सभी लोग एक धुंधली आशा से प्रेरित हैं। और यदि इस आशा ने स्पष्ट स्वरूप आकाश न किया तो समाज में बड़ी निराशा फैल जाएगी। अन्य देशों की तरह भारत का श्रमिक संसार भी उन लोगों की दया पर निर्भर है जो उनके सलाहकार और मार्गदर्शक बनकर बैठे हुए हैं। ये लोग सदा ईमानदार और पूंजीपशत द्वारा मध्यस्थता के स्वीकार करते ही हड़ताल अपराध करार दें दी जानी चाहिए।

आज आम हो गई है। ये वतकमान अ ांशत का लक्षण हैं। आज वातावरण सभी प्रकार के अस्पष्ट शवचारों से व्याप्त है। सभी लोग एक धुंधली आशा से प्रेरित हैं। और यदि इस आशा ने स्पष्ट स्वरूप आकाश न किया तो समाज में बड़ी निराशा फैल जाएगी। अन्य देशों की तरह भारत का श्रमिक संसार भी उन लोगों की दया पर निर्भर है जो उनके सलाहकार और मार्गदर्शक बनकर बैठे हुए हैं। ये लोग सदा ईमानदार और पूंजीपशत द्वारा मध्यस्थता के स्वीकार करते ही हड़ताल अपराध करार दें दी जानी चाहिए।

मेरी राय में, ऐसे उद्देश्य के लिए श्रमिक हड़तालों का इस्तेमाल करना बड़ी भारी गलती होगी। मैं ऐसे बात से इंकार नहीं करता कि ऐसे हड़तालों से राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति करना संभव है। लेकिन ये अहिंसक असहयोग की परिधि में नहीं आतीं। इस बात को समझने के लिए विशेष बुद्धिमानी की दरकार नहीं है कि जब तक श्रमिक देश की राजनीतिक परिस्थिति को समझने की स्थिति में नहीं आते और सार्वजनिक हित के लिए काम करने के वास्ते तैयार नहीं होते तब तक उनका राजनीतिक इस्तेमाल करना बहुत ही खतरनाक चीज़ है। इस बात की उम्मीद नहीं करनी चाहिए कि श्रमिकों में यह बात अचानक पैदा हो जाएगी। यह वे अपनी उन्नयन करके सह-स्वामी की हैसियत हासिल करें। फिलहाल हड़तालें केवल मजूरों की दशा में सुधार लाने के लिए ही की जानी
वाहए और जब मजदूरों में राष्ट्र-प्रेम की भावना आ जाए तो हड़तालें अपने उत्पादनों की कीमतों के नियमन के लिए भी की जा सकती हैं।

कामयाबी की शतें
कामयाब हड़ताल की शतें बड़ी सरल हैं और यदि उन्हें पूरा किया जाए तो हड़ताल कभी नाकामयाब नहीं हो सकती। ये शतें हैं:

1. हड़ताल का कारण न्यायोचित होना चाहिए।
2. हड़तालीय हथियारों के बीच व्यवहार एकता होनी चाहिए।
3. जो हथियार हड़ताल में भाग लेता है, उसके विरुद्ध किसी नीति की हिंसा न की जाए।
4. हड़ताल के दौरान वे इस नीति में होने चाहिए कि मजदूर यूनियन की आर्थिक सहायता के लिए किसी भी हस्तिया न की जाए।
5. अगर हड़तालीय कर्मचारी के स्थान पर दूसरे हथियारों को रख लेने की सुविधा हो तो हड़ताल करना व्यर्थ है।
6. ऐसी बहुत-सी हड़तालें कामयाब हुई हैं जिनमें उपर्युक्त सभी शतें पूरी नहीं होती थीं, पर ये सिफर इसलिए कामयाब हुई कि मालिक लोग कमजोर थे और वे अपराध-बोध से ग्रस्त थे। अन्यायपूर्ण हड़ताल कभी सफल नहीं होती है। जनता को ऐसी हड़तालें के सभी शतें पूरी नहीं होती है। बुरे उदाहरणों की नकल करके हम ऐसे हड़ताल के लिए झलकर बारे में हमें पूरी जानकारी नहीं, बल्कि जिन शतें से हम परिचित हैं और जिन्हें हम कामयाबी के लिए जरूरी मानते हैं, उन्हें का अनुकरण करें।

राजनीतिक हड़तालें
ऐसी कोई हड़ताल नहीं की जानी चाहिए जो गुण-दोष के आधार पर न्यायोचित न ठहराई जा सके। अन्यायपूर्ण हड़ताल कभी सफल नहीं होनी चाहिए। जनता को ऐसी हड़तालें के प्रति ऐसे सहानुभूति नहीं दिखानी चाहिए। जब तक जनता के विभिन्न पक्षों का संबंध निषेध करता रहता है, तब तक हड़ताल के गुण-दोष के बारे में निर्णय नहीं लेकर अपने प्राण जाहिर न करें। जिन लोगों के हित अस्तित्व के साथ बंधे हैं, वे अपने मामले पर निर्णय देने वाले ही बन सकते। इसलिए संबंधित पक्षों को या तो मध्यप्रस्ताव के लिए सहमत हो जाना चाहिए या न्यायिक निर्णय की प्रक्रिया को अमल में लाया जाना चाहिए।
पंचाटों को ठुकरा दिया है अथवा अपनी शक्ति के प्रति सचेत विश्रांत श्रमिकों ने उसी प्रकार पंचाटों को ठुकराकर जोर-जबरदस्ती से अपनी मांगें मनवाने की कोशिश की है।

आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए की जाने वाली हड़तालों का कोई राजनीतिक उद्देश्य कभी नहीं होना चाहिए। उद्देश्यों का यह धार्मिक रूप से राजनीतिक ध्येय की पूर्ति में सहायक नहीं होता और डाक विभाग जैसी लोकोपयोगी सेवाओं की हड़ताल की तरह सार्वजनिक जीवन को अस्तव्यस्त न भी करें तो भी ऐसी हड़तालें श्रमिकों को प्राय: मुसीबत में डाल देती हैं।

सरकार को हड़तालों से कुछ असुविधा तो हो सकती है, पर उसका काम एकदम ठप्प नहीं होता। अमीर लोग तो महंगी डाक सेवाओं की अपनी कोई-न-कोई व्यवस्था कर लेते हैं, लेकिन इस प्रकार की हड़ताल के कारण विशाल जनता को एक ऐसी सुविधा से विचित्र हो जाएगी जिसके लिए पोलिस ने अस्तव्यस्त हो गए हैं। ऐसी हड़तालें तभी की जाती हैं जब अन्य सभी वैध उपाय अपनाकर देख लिए गए हों और वे असफल हो गए हों।

सहानुभूति में हड़ताल तब तक यथार्थता की जा सकती हैं जब उसका उद्देश्य नहीं होना चाहिए और यह शक्ति के आधार पर जाना चाहिए। अमीर लोगों को अपनी व्यवस्था कर लेते हैं, लेकिन इस प्रकार की हड़ताल की रूप में उनका भी जनता को कहीं सुधार नहीं देना चाहिए। (हरि, 11-8-1946, पृ. 256)

अर्थिक हड़तालें

शातिपूर्ण हड़ताल उन लोगों तक सीमित रहनी चाहिए जो उस शिकायत को पीड़ित है। तदनुसार यदि मान लीजिए, टिकटू के दियासलाई निर्माता, जो अपनी स्थिति से पर्याप्त संतुष्ट हैं, उन मिलकरमियों की सहानुभूति में हड़ताल करते हैं जिन्हें अत्यन्त वित्तीय मिल रहा है। तो दियासलाई मिलकरमियों की यह हड़ताल हिसा की कोट में आएगी। इसके बजाय यदि वे टिकटू के मिलमियों के साथ अपना व्यूहार बंद कर दें तो उन पर हिसा का आरोप भी नहीं लगेगा। और हड़ताली मिलकरमियों की वे बड़े कारगर ढंग से मदद भी कर सकेंगे।

लेकिन ऐसे अवसरों की कल्पना की जा सकती है जब कष्ट से प्रस्ताव-प्रभावित न होने वाले लोगों पर भी अपना काम बंद कर देना का दायित्व आ जाता है। ऊपर हमने जिस उदाहरण की कल्पना की है, उसमें यदि दियासलाई की फैक्ट्री के मालिक टिकटू के मिलमियों के साथ गठबंधन कर लेते हैं तो दियासलाई की फैक्ट्री के श्रमिकों
का यह स्पष्ट कर्तव्य हो जाएगा कि वे भी मिलकरमियों का साथ दें | लेकिन वह यह बात केवल दृष्टः तौर पर जोड़ता है | हर मामले का निर्णय अंतः उसके गुण-दोषों के आधार पर करना होगा | हिंसा एक सूक्ष्म बल है | कई बार ऐसा होता है कि आप हिंसा को महसूस तो कर रहे हैं, पर उस पर अधिक समय नहीं रख पा रहे हैं | (यंग, 18-11-1926, पृ. 400)

हड़ताल स्वतःप्रवजन्न होनी चाहिए, उसके लिए पहले से कोई जोड़-तोड़ न की जाए | अगर वह बिना किसी बाध्यता के संचालित की जाए तो उसमें गुंडागर्दी और लूटपाट की आशंका नहीं रहती | ऐसी हड़ताल में हड़तालियों के बीच पूर्ण सहयोग का बतावरण बना रहता है | हड़ताल शांतिपूर्ण होनी चाहिए और उसमें किसी तरह का बल-प्रदर्शन नहीं किया जाना चाहिए |

हड़ताल के दौरान, अपना खेत भरने के लिए हड़तालियों को व्यक्तिगत रूप से अथवा परस्पर सहयोग के द्वारा कोई काम-धंधा हाथ में ले लेना चाहिए | यह काम किस प्रकार का होगा, इस पर पहले से विचार कर लिया जाए | यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रकार की शांतिपूर्ण, कार्यक्रम और सजीव हड़ताल में उपयोग या लूटपाट की कोई गुंजाइश नहीं होगी | ऐसी हड़तालों की जानकारी मुझे है | मैं कोई यूटोपियाई चित्र प्रस्तुत नहीं कर रहा हं | (हरी, 2-6-1946, पृ. 158)

मैं किसी भी सूरत में, आम हड़ताल और सत्ता हथियारे के जुगाड़ में सहयोग नहीं दे सकता, भले ही वह अहिंसक तरीके से किया जा रहा हो | (हरी, 28-7-1946, पृ. 237)

पूंजीवाद और हड़तालें

श्रमिक हड़ताल के दौरान पूंजीपति कैसा व्यवहार करें? यह प्रश्न अभी अभिन्नत है और वर्तमान में इसका बड़ा महत्व है | उक तरीका तो दमन का है जिसे ‘अमेरिकन’ का नाम अथवा उपनाम दिया गया है | इसमें गुंडों की सहायता लेकर हड़तालियों का दमन किया जाता है | इस तरीके को कोई भी आदमी गलत और विनाशकारी करार देगा | दूसरा तरीका, जो सही और सम्मानजनक है, हर हड़ताल पर उसके गुण-दोषों को देखकर विचार करने और श्रमिकों की न्यायिकता मांग को मान लेने का है – न्यायिक से तात्पर्य उससे नहीं है जो पूंजीपति उचित समझे वस्त्र उससे है जो श्रमिक द्विते उचित समझते हों और प्रबुद्ध जनमत उचित मानता हो....

समय के साथ-साथ श्रमिक संसार नित्य नये मांगों पर जोर दे रहा है और उन्हें मनवाने के लिए हिंसा का सहारा लेने में भी उसे कोई हिचक नहीं है | जोर-जबरदस्ती के नये-नये तरीके निकाले जा रहे हैं | श्रमिकों को मालिकों की संपत्ति नष्ट करने, मशीनों को खराब करने, हड़ताल में भाग लेने के अनिवार्य वृद्धिकों को परेशान करने और भेदियों को जबरदस्त इस्तीफा से निकाल बाहर करने में कोई संकोच नहीं होता | ऐसी परिस्थितियों में, मालिकों का व्यवहार कैसा हो?
माशलकों को मेरी सलाह है कि जिस संपत्ति को वे भ्रमवास यह समझ बैठे हैं कि यह उन्होंने खड़ी की है, उसे स्वेच्छा से श्रमिकों की संपत्ति मान लें। उन्हें श्रमिकों को अच्छी शिक्षा देना भी अपने कर्तव्यों में शामिल कर लेना चाहिए जिससे कि श्रमिकों की सुपत्र बुद्धि जागृत हो। तात्त्विक रूप से उन्हें प्रशस्ति का स्वागत एवं उसका सहर्ष संरक्षण करना चाहिए।

माशलक इस शुभ कार्य को एक दिन में नहीं कर सकते। इस बीच, हड़तालियों द्वारा अपने खाना खाने में किए गए विनाश का मुकाबला वे कैसे करेंगे? इन माशलकों को मेरी बेहिचक सलाह है कि वे तुरंत अपने खाने का पूरा नियंत्रण हड़तालियों के हाथ में दे हैं। श्रमिकों का श्रय करने का अच्छा काम भी अपने कार्यों में आता है। उन्हें अपनी सद्भावना का प्रमाण देने के लिए श्रमिकों को अपने इंजीनियरों और अन्य कर्मचारियों की सेवाएं भी उपलब्ध कराए जाना चाहिए।

नियोक्ता पाएंगे कि अंततः उन्हें कोई हानि नहीं हुई है। वस्तुतः उनकी सही विचारवादी विशेषताओं को निरस्त कर देना और उनके अपने स्थान पर सही प्रणाली की दृष्टि से देखें। ऐसा ब्यवहार करके माशलक पूजी का उचित उपयोग करें। मैं इसे उनका कोई परापकारी काम नहीं मानता। मैं इसे पूजीपतियों द्वारा अपने संबंधों के बुझिमतपूर्ण उपयोग मानता हूँ। यह उनका अपने कर्मचारियों के प्रति उदारतापूर्ण का व्यवहार होगा जिससे वे उन्हें अपना सम्माननीय साझीदार बना सकें।

सहानुभूति में की जाने वाली हड़ताल

जससे से पहले सहानुभूति में हड़ताल शुरू कर बैठने से हमारे ध्येय को अपार क्षति पहुंचता है। अहिंसक कार्यक्रम के तहत हमें सरकार को परासेनी में डालकर उससे कोई लाभ उठाने के विकार का दुःखभारत त्याग देना चाहिए। अगर हमारी कार्यवाही शूद्ध है और सरकार अशुद्ध है तो यदि वह स्वयं को शूद्ध नहीं बनाती तो हमारी कार्यवाही की शूद्धता ही सरकार को परासेनी में हाल देगी। इस प्रकार, शूद्ध-पवित्र आंदोलन दोनों पक्षों को लाभ पहुंचाता है, जबकि केवल विध्वंसक आंदोलन का अपवित्र-अशुद्ध रख छोड़ता है और उसे उसी निचले स्तर तक खींच लाता है जिस स्तर पर कि वह होता है, जिसे नष्ट करना इस विध्वंसक का लक्ष्य होता है।

सहानुभूति में की जाने वाली हमारी हड़तालों को भी आत्मशुद्धीकरण अर्थात असहयोग की हड़तालों का स्वरूप प्रहर करना चाहिए। तदनुसार जब हम किसी बुराई को दूर करने के लिए हड़ताल करते हैं तो हम वस्तुतः उस बुराई के भागीदार नहीं रह जाते और बुराई करने वाले को उसके हाल पर छोड़ देते हैं। दूसरे शब्दों में, हम उसे अपनी बुराई को जारी रखने की मूर्तिका समझने का अवसर देते हैं। ऐसी हड़ताल तभी कामयाब हो सकती है जब उसके ची हाम पर न लीटने का दृष्ट संकल्प हो।....
यदि हड़ताली श्रमिकों के स्थान पर दूसरे श्रमिक रखने की सुविधा हो तो न्यायोपित कारणों से की गई हड़ताल भी असफल हो सकती है। भले ही हड़ताली कर्मचारियों में उसे अनिश्चित काल तक चलाते रहने का सामर्थ्य हो | इसलिए यदि कोई बुद्धिमान आदमी यह अनुभव करता है कि उसके स्थान पर दूसरे आदमी की निर्युक्ति सरलतापूर्वक की जा सकती है तो वह अपनी मजबूती अथवा अन्य सुख-सुविधाओं को बढ़वाने के लिए हड़ताल का सहारा नहीं लेगा। लेकिन कोई दार्शनिक अथवा देशप्रेमी यदि अपने पड़ोसी की व्यथा को महसूस करके स्वयं को उसके साथ जोड़ना चाहता है तो वह वह जानते हुए भी कि श्रमिकों की मांग के मुकाबले उनकी पूर्ति अधिक है, हड़ताल पर चला जाएगा | यह वहां की आवश्यकता है कि जिस प्रकार की नागरिक हड़ताल का मैने वर्णन किया है, उसमें दरार-थमकाने, आगजनी आदि हिसाम्पत्त कार्यों के लिए कोई स्थान नहीं है | (भंग, 22-9-1921, पृ. 298)

...आप पूछ सकते हैं कि भेदियों का क्या किया जाए ? दुर्भाग्यवश भेदिये तो हमेशा रहेंगे ही। लेकिन मेरा आग्रह है कि आप अपने लड़े नाही, बल्कि उसने अनुष्ठान करे और उन्हें बताएं कि उनकी नीति संकीण है और आपकी नीति संपूर्ण श्रमिक द्वारा ही की जा सकती है। यह हो सकता है कि वे आपकी बातें सुनें। इसी तरह आपको उनके बेदाश्त करना चाहिए, उनसे संध्याकाल करना शुरू करें और उन्हें बताएं कि उनकी पूर्ति संकीण है। (हरर, 7-11-1936, पृ. 311)

हड़ताल की बढ़ती हुई बीमारी का मूल कारण यह है कि अन्य देशों की तरह हमारे यहां भी आज जीवन धमक के आधार से च्युत हो गया है और, एक अंग्रेज लेखक के शब्दों में, उसका स्थान एक अर्थ-संबंध ने ले लिया है। यह बड़ा खतरनाक संबंध है। लेकिन धमक का आधार होने पर भी हड़तालें होंगी, क्योंकि वैसी स्थिति की कल्पना करना कठिन है जिसमें सभी आंदोलन का जीवन धमक पर आधारित हो। इसलिए एक और जहां शोषण के प्रयास जारी रहेंगे वहीं हड़तालें भी होती रहेंगी। लेकिन तब ये हड़तालें पूर्णतः अहिंसक होंगी।

अहिंसक हड़तालें कभी किसी को हानि नहीं पहुँचातीं। संभवतः ऐसी ही हड़ताल से जनरल स्मट्स को घुटने देकर अपने कर्मचारियों को पार पाऊँ लेते थे। स्मट्स ने कहा था, “अगर तुमने किसी अंग्रेज को चोट पहुँचाई होती तो मैं तुम्हें गोली मार देता और तुम्हारे लोगों को देश से बाहर भी निकाल देता।” जो स्थिति है, उसमें मैंने तुम्हें जेल में दाल दिया है। और तुम्हें तथा तुम्हारे साथियों को ढुकाने का हर संभव प्रयास किया है। लेकिन अगर तुम उसका प्रतिकार ही नहीं करते तो मैं इसे कब तक जारी रख सकता हूँ।” इसलिए उसे ‘कुलियों’ का प्रतिनिधित्व करने वाले एक ‘कुली’ के साथ समझौता करना पड़ा। तथा यह रहे कि उस समय दक्षिण अफ्रीका में सभी भारतीय ‘कुली’ कहलाते थे। (हरर, 22-9-1946, पृ. 321)
43. खेतिहर किसान

रैयत को मान्यता

यदि भारत को शांतिपूर्ण तरीके से सच्ची प्रगति करनी है तो धनिक वर्ग को यह बात निश्चित रूप से मान लेनी होगी कि रैयत की आपात भी वैसी ही है जैसी कि उसकी अपनी; और अपनी धन-दौलत के कारण वे निर्धन लोगों से किसी भी रूप में श्रेष्ठ नहीं हैं। जापानी अमीरों की तरह उन्हें भी यह मान लेना चाहिए कि वे अपनी संपत्ति के न्यासी हैं और यह संपत्ति रैयत की भलाई के लिए है। ऐसी धारणा बन जाने पर वे उसका उत्तर ही अंश अपने इस्तेमाल में लाए गिजता कि उनके श्रम का उच्चत पारिश्रमिक माना जा सकता है।

इस समय पैसे वालों की निहारत बेजरूरी शान-शीलत और फिजूलखवा तथा रैयत की गंदी बस्तियों और घोर निर्धंसता के वातावरण के बीच कोई अनुपात नहीं है....

यदि पूंजीपति केवल वक्त के रूप को पहचानने और अपनी धन-दौलत को इंसक्र-प्रदत अधिकार मानने की धारणा में बदलाव ले आए तो देखते-ही-देखते देश के सात लाख गोबर के ढेर के चिन्हों हम गांव कहते हैं, शांति, स्वास्थ्य और सुख-सुविधा से युक्त बस्तियों में बदले जा सकते हैं।

यह विश्वास है कि हमारे पूंजीपति जापान के समुदायों का अनुकरण करने तो उनकी कोई हानि नहीं होगी, बल्कि हर तरह से फायदा ही होगा। हमारे सामने केवल दो विकल्प हैं – पूंजीपति अपने फिजूल के तामज्ञान को छोड़ दें और उस धन से सबके क्षतिकुत्र जस्ते सुख को सुनिश्चित करें या, अगर पूंजीपति समय से न चेते तो, जागृत किंतु अज्ञानी लाखों-करोड़ों भूखमरों द्वारा समूचे देश में उत्पन्न की जाने वाली अव्यवस्था की खात्मा, जिसका सामना शकिशारी सरकार का समस्त बल भी नहीं कर पाएगा। मेरी आशा है कि भारत ऐसी घोर अव्यवस्था की स्थिति को नहीं आने देगा। (ग्यां, 5-12-1929, पृ. 396)

मेरा स्वप्न यह नहीं है कि निजी स्वामियों की संपत्ति को छीन लिया जाए, बल्कि वह नहीं है कि उसके भोग पर इतना अंकुश लगा दिया जाए कि कंगाली और उसके परिवारस्वरूप उपजा अस्तित्व तथा अमीर और गरीब की जिंदगियों और उनके वातावरण के बीच आज जो अव्यंत कुरूप असमानता है, वह दूर हो जाए। गरीबों को यह अहसास दिलाया जाए कि वे अपने जमींदारों के सहभागीदार हैं, उनके इशारे पर मेहनत करने वाले और हर ऐसे-वैसे मौके पर उन्हें तरह-तरह की भेंट-पूजा देने वाले गुलाम नहीं। (ग्यां, 21-11-1929, पृ. 384)

मेरे साक्ष्य यह नहीं है कि जमींदारों और पूंजीपतियों का जनता की सेवा के लिए इस्तेमाल करना चाहता है। हमें जमींदारों और पूंजीपतियों का खातिर जनता के हितों की बलि नहीं देनी है। हमें यह भ्रोसा रखना चाहिए कि वे जनता की सेवा के लिए अपने लाभों का व्यय करने में समर्थ हो सकेंगे। ऐसा नहीं है कि उच्चतर विचारों के प्रति वे संवेदनशील हैं। मेरा साक्ष्य यह अनुभव है कि प्रेम से कही गई बात उन पर सीधा असर करती है। अगर हम उनके विश्वास को जीत सकें और
उन्हें सहज मनःस्थिति में ले आए तो हम पाएँगे कि जनता के साथ अपनी धन-संपत्ति की अधिकाधिक भागीदारी के प्रति उनका रुख प्रतिकूल नहीं है | (अबाप, 3-8-1934) 

जमींदारों का हृदय-परिवर्तन

मैं जमींदार को नष्ट करना नहीं चाहता, पर मैं जमींदार को अपरिहार्य भी नहीं मानता....मैं आशा करता हूँ कि अहिंसक तरीके से जमींदारी और पूंजीपतियों का हृदय-परिवर्तन किया जा सकता है | इसलिए, मैं वर्ग-संघर्ष की अपरिहार्यता का कायल नहीं हूँ | न्यूनतम प्रतिरोध के द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति अहिंसा का आवश्यक तत्व है |

जिस दिन कृषक अपनी शक्ति को पहचान जाएँगे, जमींदारी की बुराइयों के दूर हो जाएँगे | अगर जमीन जोतने वाला यह कह दे कि जब तक उसे स्वार्थ को तथा अपने परिवार को अच्छे ढंग से खाने-पहनने और शिक्षा देने लायक पैसे नहीं मिलेंगे तब तक वह खेत पर काम नहीं करेगा तो बिचारा जमींदार क्या कर पाएगा ? वास्तव में, जमीन को जोतने वाला ही फसल का स्वामी है | यदि वे अदम्य शक्ति के माध्यम से जमीन का नहीं करते हैं | इस प्रकार वर्ग-संघर्ष को मैं आवश्यक नहीं मानता | यदि मैं उसे अपरिहार्य मानता तो उसका प्रचार करने और उसकी शिक्षा देने में संकोच न करता | (हरर, 5-12-1936, पृ. 338, 339)

मैं हिटलर की शक्ति का नहीं, एक स्वतंत्र कृषक की शक्ति का अभिलाषी हूँ | मैं इतने वर्षों से कृषक के साथ तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास करता आ रहा हूँ, पर अभी तक इसमें सफल नहीं हो सका हूँ | आज मेरे और किसान के बीच में फर्क यह है कि वह स्वेच्छा से नहीं बल्कि हालातों की मजबूती की वजह से किसान और मजदूर बना हुआ है, जबकि मैं स्वेच्छा से किसान और मजदूर बनने पर आशा करता हूँ | आज मैं उसे भी स्वेच्छा से किसान और मजदूर बना सकता हूँ तो उसे उन जंजीरों को भी तोड़ फंकने में सहायता दे पाऊंगा जिनमें आज वह बंधा है और जिनके कारण वह अपने मालिक का हुक्म बजा लाने के लिए मजदूर है | (हरर, 7-6-1942, पृ. 184)

किसान

किसान या खेतिहर, वह जाहिर भूमिहीन श्रमिक हो या काश्तकार हो, पहले नब्बर पर आता है | वह सही अर्थों में धरतीपुत्र है – धरती सम्बंधित उसकी है अथवा उसकी होनी चाहिए, अन्यत्रवासी भूस्वामी या जमींदार की नहीं | लेकिन अहिंसा के नियम के अनुसार श्रमिक जबदिस्ती अन्यत्रवासी जमींदार को बेदखल नहीं कर सकता | उसे इस प्रकार काम करना होगा कि जमींदार के लिए उसका शोषण करना असंभव हो जाए |

किसानों के बीच घनिष्ठ सहयोग का होना परम आवश्यक है | इसके लिए जहां इस समय विद्रोह महत्त्व नहीं है वहां विशेष संगठन या समितियां बनाई जानी चाहिए और जहां यह पहले से मौजूद है वहां उनमें व्यवस्थापक सुधार किया जाना चाहिए |
किसान प्रायः अशिक्षित हैं | वयस्कों और विद्यालय जाने की आयु के युवाओं, सभी को शिक्षित किया जाना चाहिए | यह बात स्त्री और पुरुष दोनों पर पाया होता है | भूमिहिंस श्रमिकों को इतनी मजदूरी दी जानी चाहिए कि वे सतीकी की जिंदगी जी सकें, जिसका आशय यह है कि उन्हें संतुलित भोजन, रहने के लिए मकान और पहनने के लिए कपड़ा उपलब्ध हो जो उनकी स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। (बांकर, 28-10-1944)

कानून नहीं, अहिंसा

यदि स्वराज सभी लोगों के प्रयास से प्राप्त किया जाना है, जैसा कि अहिंसा के अनुसार होना भी चाहिए, तो किसानों को अपने अनुकूल प्रतिशत मिलनी चाहिए और उनकी आवाज सरकार से होनी चाहिए | लेकिन अगर स्वराज इस तरह हासिल नहीं होता है और इसके लिए सीमित मताधिकार के आधार पर जनता और सरकार के बीच कोई कारगर समझौता किया जाता है तो किसानों के हितों की सावधानी के साथ निगरानी करनी होगी। यदि विधानसभाएं किसानों के हितों की रक्षा करने में असमर्थ सिद्ध होती हैं तो किसानों के पास सविनय अवज्ञा और असहयोग का अवृद्धिकाल उपाय तो सदा है होगा।

लेकिन....अंततः कागजी कानून या साहसपूर्ण शब्दों अथवा तुकानी भाषणों से कुछ होने वाला नहीं है, बल्कि अहिंसक संगठन, अनुशासन और त्याग की शक्ति ही लोगों को अन्याय अथवा दमन से बचा सकेगी।

मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि हम लोकतात्रिक स्वराज स्थापित कर पाते हैं --आजादी अहिंसा के जरिए हासिल की गई होगी तो यही होना भी चाहिए – तो किसानों को राजनीतिक शक्ति सहित सभी प्रकार की शक्तियां प्राप्त होंगी। (बांकर, 12-1-1945)

वर्षों पहले मैंने एक कविता पढ़ी थी जिसमें किसान को संसार का जनक बताया गया था | यदि ईश्वर सृष्टि का पालन करता है तो किसान ईश्वर का हाथ है | किसान से उद्भारण होने के लिए हमारा क्या करने का विचार है उसके पसीने की कमाई पर ही जीते आए हैं। (हरिशंकर, 25-8-1946, प. 281)
44. श्रमिक वर्ग के सामने मौजूद रास्ते

आज भारत के सामने दो रास्ते खुले हैं | पहला रास्ता पश्चिम के 'शजसकी लाठी उसकी भैंस' के सिद्धांत का है और दूसरा रास्ता पूर्व के 'सत्यमेव जयते' का है जिसके अनुसार सत्य कभी अनिश्चित नहीं होता और जिसमें सबल तथा दुर्बल दोनों को समान रूप से न्याय पाने का अधिकार है |

श्रमिकों के अपनी मजदूरियों में बुद्धि के लिए हिसा का सहारा लेना चाहिए, यदि वैसा करना किसी तरह संभव हो | उनकी मांगें ही जायज हों | पर उन्हें मनवाने के लिए वे हिसा जैसी किसी चीज का सहारा नहीं ले सकते |

अधिकारों की प्राप्ति के लिए हिसा का प्रयोग आसान दिखाई दे सकता है | पर कालांतर में यह बड़ा कंटकारीण सिद्ध होता है | जो तलवार के सहारे जीत है, वे तलवार के बार से ही मरते हैं | तैराकों की मृत्यु प्रायः पूंजीपशत की होती है | सभी गति प्राप्ति नहीं होती | ऐसा विश्वास करने का कोई कारण हमारे पास नहीं है कि यूरों के लोग प्राप्ति कर रहे हैं | उनकी दौलत उनके नैतिक अथवा आध्यात्मिक गुणों को सुनिश्चित नहीं करती | दुर्योधन अकूत धन का स्वामी था, पर उनके होते हुए भी वह विदुर और सुदामा की तुलना में दरिद्र था | आज दुनिया विदुर और सुदामा की पूजा करती है जबकि दुर्योधन का नाम सर्वथा त्याज्य दुर्गुणों का पयाक्य बन गया है....

श्रम की शक्ति

पूंजी और श्रम के संघर्ष में, आम तौर पर यह कहा जा सकता है कि गलती प्राप्त: पूंजीपतियों की होती है | लेकिन जब श्रमिक वर्ग अपनी शक्ति को पूरी तरह पहचान जाता है तो वह पूंजीपतियों से भी ज्यादा कुराता पर उतर आता है | यदि श्रमिकों में मिलमालिकों जैसी बुद्धि का विकास हो जाए तो मिलमालिकों को श्रमिकों की शर्तें पर ही काम करना पड़ेगा | लेकिन यह स्पष्ट है कि श्रमिकों का उत्तरा बौद्धिक विकास कभी नहीं हो पाएगा | अगर हो सके तो फिर वे श्रमिक न होकर खुद स्वामी बन जाएंगे | पूंजीपति केवल पैसे के बल पर ही नहीं लड़ते | उनके पास बुद्धि और चुनौती का बल भी होता है....

इन दोनों पक्षों के बीच एक तीसरा पक्ष और पैदा हो गया है | वह श्रमिकों का मित्र बन गया है | ऐसे पक्ष की श्रमिकों को आवश्यकता भी है | लेकिन श्रमिक उससे उसी सीमा तक मित्रता स्थापित कर सकते हैं जिस सीमा तक वह पक्ष अनासक्त भाव से उनके साथ मित्रता का निर्वाह करे |
अब समय आ गया है जब श्रमिकों को अनेक प्रकार से मोहरा बनाकर इस्तेमाल किया जाएगा। समय की मांग है कि राजनीति में भाग लेने वाले इस पर विचार करें। वह क्या चुनेगा? अपना हित अथवा श्रमिकों तथा राष्ट्र की सेवा? श्रमिक वर्ग को मित्रों की बड़ी जरूरत है। वह नेतृत्व के बिना आगे नहीं बढ़ सकता। श्रमिकों की दशा इसी पर निर्भर करेगी कि उन्हें कैसे लोगों का नेतृत्व प्राप्त होता है।

हड़ताल, कामबंदी आदि निस्संदेह बड़े कारगर हथियार हैं, पर इनका दुरुपयोग करना कठिन नहीं है। श्रमिकों को अपने मजबूत संघ बना लेने चाहिए। और उनकी सहमति के बगैर किसी भी सूरत में हड़ताल नहीं करनी चाहिए।

मिलमालकों से बातचीत किए बिना हड़ताल करने का खतरा कभी मौल नहीं लेना चाहिए। यदि मिलमालिक मध्यस्थता के लिए कहें तो पंचायत का सिद्धांत स्वीकार कर लेना चाहिए। और, एक बार पंचायत की नियुक्ति हो जाए तो उनका फैसला दोनों पक्षों को अनिवार्यतः मान लेना चाहिए, चाहे वह उन्हें पसंद आए या न आए। (यंग, 11-2-1920, पृ. 7-8)
9. सर्वोदय

45. सर्वोदय का दिव्य संदेश

मानव की एकता

मैं इसमें विश्वास नहीं करता...कि एक आदमी का आध्यात्मिक लाभ हो जाए और उसके आसपास के लोग दुख भोगें | मैं अद्वैत में विश्वास करता हूँ, मुझे मानव की ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र की अनिवार्य एकता में विश्वास है | इसलिए मेरा विश्वास है कि अगर एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ मिलता है तो उसके साथ सारी दुनिया का लाभ होता है, और अगर एक आदमी का पतन होता है तो उस सीमा तक सारी दुनिया का पतन होता है | (यंग, 4-12-1924, पृ. 398)

मैं यह नहीं मानता कि आध्यात्मिक नियम के प्रवर्तन का अपना कोई विशिष्ट क्षेत्र है | इसके विपरीत, वह जीवन के दैनिक कार्यकलाप के माध्यम से ही स्वयं को अभिव्यक्त करता है | इस प्रकार, यह आध्यात्मिक भावनाओं के साथ साथ राजनीतिक, सामाजिक और राजनीतिक विषयों को प्रभावित करता है | (यंग, 3-9-1925, पृ. 304)

अगर हम ईश्वर की सेवा में लग जाएं या उसके साथ एकाकार हो जाएं तो हमारे कार्यकलाप भी उसी की तरह अक्षांत हो जाएंगे | समुद्र से बिछड़ी बूंद को तो क्षणिक विश्वास भी मिल सकता है, पर जो बूंद समुद्र का ही एक अंश है, उसे विश्वास कहां ? यही बात हमारे साथ भी है |

ज्यों ही हम ईश्वर रूपी समुद्र के साथ एकाकार होते हैं, हम विश्वास की स्थिति से ऊपर उठ जाते हैं – हमें वस्तुत: विश्वास की आवश्यकता ही नहीं रह जाती | हम नींद में भी कार्यरत रहने लगते हैं | जब हम सोते हैं तब भी हमारे हृदय में ईश्वर का ध्यान बना रहता है | यह विकल्प तो सच्चा विश्वास है | यह अन्तर्नक्षेत्र वही आनन्दीय विश्वास की कुंजी है | पूर्ण समस्याओं की इस सर्वोच्च अवस्था का वर्णन करना कठिन है, कितु यह मानव अनुभूति से परे की वस्तु नहीं है | इसकी प्राप्ति अनेक निश्चित विधि कर चुके हैं और स्वयं हम भी कर सकते हैं | (फ्रायम, पृ. 47)

गरीबों के साथ तादात्म्य

मैं इससे अधिक उदात्त और राष्ट्रप्रेम की किसी अन्य बात की कल्पना नहीं कर सकता कि हम सभी प्रतिदिन, मान लीजिए, एक घंटे के लिए वह काम करें जो गरीबों को करना पड़ता है और इस प्रकार उनके तथा उनके माध्यम से सारी मानव जाति के साथ तादात्म्य स्थापित करें | मैं ईश्वर की इससे बेहतर और किसी आराधना की कल्पना नहीं कर सकता कि मैं, उसके नाम पर, गरीबों के लिए वही काम करूँ जो वे स्वयं करते हैं | (यंग, 20-10-1921, पृ. 329)
सच्ची स्वतंत्रता, जो जीवन का एकमात्र प्राप्तव्य है, प्रदान करने के एवज में ईश्वर हमसे आक्षेपपूर्व हमें कम और कोई कीमत स्वीकार नहीं करता | और, एक बार अपना सर्वस्व समर्पण करते ही मनुष्य स्वयं को ईश्वर की सृष्टि की सेवा में खड़ा पाता है | (यंग, 20-12-1928, पृ. 420)

सत्य हमारे समस्त कार्यकलाप का केंद्र होना चाहिए | सत्य ही हमारे जीवन की श्रास्त्र हो | जीवन-यात्रा में एक बार यह स्थिति आ जाए तो सच्चे जीवन के अन्य सभी नियम बिना प्रयास उपस्थित हो जाते हैं और मनुष्य सहज रूप से उनका पालन करने लग जाता है | लेकिन सत्य के बिना जीवन में किन्हीं सिद्धांतों अथवा नियमों का पालन करना असंभव है | (फ्रायम, पृ. 2)

विधाता के विधान पर आस्था

सत्य हमारे समस्त कायकलाप का केंद्र होना चाहिए | सत्य ही हमारे जीवन की श्रास्त्र हो | जीवन-यात्रा में एक बार यह स्थिति आ जाए तो सच्चे जीवन के अन्य सभी नियम बिना प्रयास उपस्थित हो जाते हैं और मनुष्य सहज रूप से उनका पालन करने लग जाता है | लेकिन सत्य के बिना जीवन में किन्हीं सिद्धांतों अथवा नियमों का पालन करना असंभव है | (यंग, 20-12-1928, पृ. 420)

मानव सेवा

मनुष्य का चरम ध्येय ईश्वर की प्राप्ति है, और उसके सभी सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक कार्यकलाप ईश्वर-साक्षात्कार के इस चरम ध्येय के लिए कुछ भी बचा कर नहीं रखता | ईश्वर कल के लिए कोई व्यवस्था नहीं करता, वह दिन-प्रतिदिन की आवश्यकता के लिए जितना चाहिए, सिर्फ उसने लिया सृष्टि करता है | इसलिए यदि हमें उसके विधान में आस्था है तो हम इस बात के प्रति आश्वस्त रहना चाहिए कि वह हमें निव यहा आवश्यकतानुसार रोटी अवश्य देगा | (यंग, 4-9-1930, पृ. 1)

मेरे दे वासी मेरे निकटस्थ पड़ोसी हैं | वे इतने लाचार, साधनहीन और जड़ हो गए हैं कि मुझे अपना सारा ध्यान उनकी सेवा पर ही केंद्रित कर देना चाहिए | यदि मैं अपने आपको यह विश्वास दिला सकता कि ईश्वर-प्राप्ति हिमालय की गुफा में होगी तो मैं तक्षात बहां के लिए प्रस्थान कर देता | लेकिन मैं जानता हूं कि मानवता से पृथक कहीं नहीं पा सकता | (हरर, 29-8-1936, पृ. 226)

मेरे ईश्वर के असंख्य रूप हैं | कभी वह मुझे चरखे में दिखाई देता है, कभी सांप्रदायिक एकता में और कभी छुआ इन के निवारण में | इस प्रकार, जिधर-जिधर मेरी अंतराला मुझे संचालित करती है, वही-वहीं मैं ईश्वर के साथ संपर्क स्थापित करता हूं | (हरर, 8-5-1937, पृ. 99)
चरखा: एक साधन

जो व्यक्ति गरीबों के सामने चरखा काटता है और उन्हें भी ऐसा करने के लिए आमंत्रित करता है, वह ईश्वर की अनन्य सेवा करता है। ईश्वर का पादपीठ दीन-हीनों और गुमनाम लोगों के बीच स्थापित है। उन्हें ऐसा करने के लिए चरखा काटना सबसे बड़ी प्रथम, सबसे बड़ी आराधना और सबसे बड़ा लाग है।

ईश्वर का पादपीठ दीन-हीनों और गुमनाम लोगों के बीच स्थापित है। अतः ऐसे लोगों के लिए चरखा काटना सबसे बड़ी प्राथम, सबसे बड़ी प्राथम, सबसे बड़ी आराधना और सबसे बड़ा लाग है।

(यंग, 24-9-1925, पृ. 331-32)

दुनिया युद्ध के पर्वतीय प्रभावों से ब्रह्मान्द है। जिस प्रकार चरखा आज भारत को सुख-शांति दे रहा है, शायद कह सकता है कि यह अधिकतम लोगों की ही अधिकतम भलाई नहीं करता, बल्कि सभी लोगों की अधिकतम भलाई करता है।

(यंग, 10-2-1927, पृ. 43-44)

दुनिया युद्ध के पर्वतीय प्रभावों से ब्रह्मान्द है। जिस प्रकार चरखा आज भारत को सुख-शांति दे रहा है, शायद कह सकता है कि यह अधिकतम लोगों की ही अधिकतम भलाई नहीं करता, बल्कि सभी लोगों की अधिकतम भलाई करता है।

(यंग, 10-2-1927, पृ. 43-44)

मैं 'अनंत दिस्त लास्ट' वाक्यांश के निहिताधर का समर्थ हूँ। इस पुस्तक के ने मेरे जीवन की दिशा ही बदल दी। हमें दुनिया से जो कुछ चाहिए, वह पहले हम खुद दुनिया के दीनतम व्यक्ति को उपलब्ध कराएं। सभी व्यक्तियों को समान अवसर मिलना चाहिए। अवसर मिले तो प्रत्येक व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास का एक जैसी संभावना है।

चरखा इसी भावना का प्रतीक है।

(यंग, 17-11-1946, पृ. 404)

आत्मशुद्धि

आत्मशुद्धि के बिना प्राणिमात्र के साथ तादात्म्य स्थापित करना असंभव है। आत्मशुद्धि करने के बिना अहिंसा के नियम का पालन कोरा स्पष्ट ही है। जिसका हद शुद्ध नहीं है वह ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर सकता। अतः आत्मशुद्धि करने के अर्थ जीवन के सभी क्षेत्रों में शुद्धि करने से लिए जाना चाहिए। और चूंकि शुद्धि करने बड़ी संक्रामक चीज़ है, इसलिए एक व्यक्ति के शुद्धि करने से अनिवार्यतः उसके आसपास का वातावरण भी शुद्ध हो जाता है।

किंतु शुद्धि करने का मार्ग कठिन और बड़ा ढाल है। पूर्ण शुद्धि करने के लिए मनुष्य को मनसा, वाचा, कर्मणा विकारमुक्त होना पड़ता है। उसे प्रेम और धृष्ट, आसक्ति और विरक्ति की विरोधी धाराओं से ऊपर उठना पड़ता है। मैं जानता हूँ कि अथवा प्रायावरण के बावजूद में अभी तक इस विश्व शुद्धि को प्राप्त नहीं कर पाया हूँ।

इसीलिए दुनिया की प्रशंसा मुझे युद्धगुदामती नहीं है, बल्कि प्रायः दंगा ही देती है।

मुझे लगता है कि हथियारों की मदद से विश्वविजय करने की तलना में सूक्ष्म मनोवेग पर विजय पाना ज्यादा कठिन है।
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

...मुझे अपने अंदर सुप्त पड़े विकारों का अनुभव है | उनके विषय में जानकर मुझे लज्जा का अनुभव हुआ है, हालांकि मुझे पराजय का भाव कभी पैदा नहीं हुआ | इन अनुभवों तथा प्रयोगों ने ही मुझे जीवन में बढ़ा आनंद दिया है | लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझे अभी बढ़ा कठिन रास्ता तय करना है | मुझे अपनी हस्ती को पूरी तरह मिटा देना होगा | जब तक मनुष्य अपने सहचरों में स्वयं को सबसे पीछे खड़ा नहीं कर देता तब तक उसकी मुक्ति संभव नहीं है | अहिंसा विनिमय की चरम सीमा है | (ए, पृ. 371)

साधन और साध्य

मेरे जीवन-दर्शन में साधन और साध्य परिवर्तनीय शब्द हैं | (यंग, 26-12-1924, पृ. 424)

साधन की उपयोगी अर्थ ही है और साध्य की वृक्ष से; जो अविचित संबंध बीज और वृक्ष के बीच है, वही साधन और साध्य के बीच है | (हिंदी, पृ. 71)

पार्थक्य नहीं

उनका कहना है कि 'साधन तो आक्षर साधन ही है' | मैं कहता हूँ कि 'साधन ही सब कुछ है' | जैसे साधन, वैसा साध्य...साधन और साध्य के बीच उन्हें अलग करने वाली कोई दीवार नहीं है | वस्तु: सृश्वस्त का अनुप्यात में ही लक्ष्य की सीद्धि होती है | इस प्रस्थापन का कोई अपवाद नहीं है | (यंग, 17-7-1924, पृ. 236-37)

हर चीज़ के लिए विधान ने एक निश्चित समय का विधान कर रखा है | परिणामों पर हमारा वश नहीं है, हम केवल प्रयास कर सकते हैं | जहां तक मेरा संबंध है, मेरे संतोष के लिए इतना प्रयास है कि मैंने अपने कर्तव्य-पालन के लिए भरसक प्रयास किया है | (हरिर, 6-5-1939, पृ. 112)

अधिकार और कर्तव्य

अधिकार का सब्जा स्रोत कर्तव्य है | यदि हम सभी अपने कर्तव्यों का पालन करें तो अधिकारों की प्राप्ति कठिन नहीं रहेगी | किंतु यदि हम अपने कर्तव्यों को भूलकर अधिकारों के पीछे भागने तो वे हमसे छिलावे यदैव क्षण है | छलावे के पीछे आप जितना भागित, वह आपसे उतनी ही दूर होता जाता है | भगवान कृष्ण ने अपनी अमावा वाणी में यही संदेह दिया है : 'केवल कर्म ही ही तेरे वश में है | फल की चिता बिलकुल छोड़ दे' | यहां कर्म कर्तव्य है और फल अधिकार है | (यंग, 8-1-1925, पृ. 15-16)

जो यथावत अपने कर्तव्यों का भली प्रकार निर्वाह करता है, उसे अधिकारों की प्राप्ति स्वत: ही जाती है | सच मूँछा जाए तो अपने कर्तव्य-पालन का अधिकार ही एक ऐसा अधिकार है जिसके लिए जीना और मर जाना उचित है |
यह सभी वैध अधिकारों को स्वयं में समाहित करता है | शेष सभी किसी-न-किसी रूप में छीना-झपटी है और उसमें हिंसा के बीच विद्यमान हैं |

पूंजीपति और जमींदार अपने अधिकारों की बात करते हैं और श्रमिक अपने अधिकारों की, राजा शासन करने के अपने देही अधिकार की और रैयत उनका प्रतिरोध करने के अधिकार की | यदि सभी लोग केवल अधिकारों पर जोर देंगे और कर्तव्य को भूल जाएंगे तो संसार में घोर अव्यवस्था और अराजकता फैल जाएगी | (हरी, 27-5-1939, पृ. 143)

यदि अधिकारों पर बल देने के बजाय प्रत्येक व्यक्ति अपना कर्तव्य करने लगे तो मानव जाति में तत्काल व्यवस्था का राज्य स्थापित हो जाएगा | मैं तो कहूँगा कि जो अधिकार सुनिश्चित करने के प्रयत्न करते हैं, उद्भूत न होते हों, वे हासिल करते हैं | वे जबरदस्ती छीने गए अधिकार हैं जिन्हें जितनी जल्दी ही लौट दिया जाए तो उन्हें अच्छा है | जो अधम पिता अपने बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य को पूरा किए बिना उनसे आज्ञाकारिता की अपेक्षा रखता है, उसके पल्ले केवल अवमानना ही पड़ती है |

किसी दुराचारी पति का अपनी कर्तव्यपरायण पत्नी से हर मामले में आज्ञापालन की अपेक्षा करना धार्मिक उपदेशों को विकृत करना है | लेकिन जो पिता अपने बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए तत्पर है, यदि उसके बच्चे उसकी अवज्ञा करते हैं तो वे कृत्रिम माने जाएंगे और वे अपने पिता की अपेक्षा अपनी ही हानि अधिक करेंगे | यही बात पति-पत्नी पर भी लागू होती है |

यदि आप इस सरल और सार्वभौम नियम को मालिकों और मजदूरों, जमींदारों और काश्तकारों, राजाओं और उनकी प्रजाओं या हिंदुओं और मुसलमानों पर लागू करें तो आप देखेंगे कि जन-जीवन और व्यवसाय में उपद्रव और अव्यवस्था उत्पन्न किए बिना जीवन के सभी क्षेत्रों में मधुरतम संबंधों की स्थापना की जा सकती है | मैं जिसे सत्याग्रह का नियम कहता हूँ, उसका निम्नलिखित कर्तव्य की समझ और अधिकारों के उनसे प्रवाहित होने में ही निहित है | (हरी, 6-7-1947, पृ. 217)
46. यज्ञ का दर्शन

यज्ञ का अर्थ

यज्ञ का अर्थ है कोई ऐसा कृत्य जो फल की कामना किए बगैर दूसरों के कल्याण के लिए किया गया हो; यह कृत्य लोपिक अथवा आध्यात्मिक, किसी भी प्रकार का हो सकता है। 'कृत्य' का यहां व्यापकतम अर्थ लिया जाना चाहिए, जिसमें मन, वाणी और कर्म तीनों सम्मिलित हैं। 'दूसरों' में केवल मनुष्य ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण जीवन-जगत सम्मिलित हैं।

इसके अलावा, मौलिक याग कोई ऐसा कृत्य होना चाहिए जो अधिकतम व्यापक क्षेत्र के अधिकतम जीवों का अधिकतम कल्याण करने वाला हो और जिसे अधिकतम स्ती-पूर्ण कम-से-कम कष्ट उठाकर कर सकते हों। तदनुसार किसी तथाकथित ऊँचे उद्देश्य के लिए किया गया कृत्य दरेक एक जीव को भी हानि पहुंचाने के उद्देश्य से किया गया हो तो वह यज्ञ नहीं माना जा सकता।

इस अर्थ में यज्ञ किए बिना यह संसार एक क्षण के लिए भी नहीं टिक सकता और इससे गीता तथा दूसरी अध्याय में सदस्य त्याग का चर्चा करने के उपरांत तीसरे अध्याय में उसे प्राप्त करने के उपायों पर चर्चा की गई है।

यज्ञ हमारे जन्म के साथ ही आता है, हम आजीवन आस्था होने वाले व्यक्ति का हर काम यज्ञस्वरूप होना चाहिए। यह शीघ्रता से उपलब्ध होता है और इसलिए गीता में कहा गया है कि जो यज्ञ किए बिना खाता है, वह चोरी का भोजन खाता है। हमारा यह अर्थ है कि जो यज्ञ किए बिना खाता है, उसी का है – वह अपनी इच्छा से इसका जब तक चाहे पोषण करे और जब चाहे, फेंक दे।

यह शिकायत अथवा खेद का विषय नहीं है बल्कि अगर हम ईश्वरीय व्यवस्था में अपने उच्चत स्थान को समझ सके तो पाएंगे कि यह न केवल एक व्यक्तिविश्व बल्कि संसार और वांछनीय स्थिति है। ईश्वर की इस परम कृत्य का अनुभव करने के लिए सचमुच बड़ी हद आस्था की आवश्यकता है। सभी धर्मों में प्राप्त: यही आदेश दिया गया है, ‘अपनी चिंता बिलकुल न करो, सारी चिंता भगवान पर छोड़ दो।'
इससे किसी को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है | जो व्यक्ति शुद्ध हदय से अपने आपको सेवा के लिए समर्पित कर देता है, उसे दिन-पर-दिन उसकी अधिकाधिक आवश्यकता अनुभव होने लगती है और आस्था निरंतर दृढ़ होती जाती है | सेवा का मार्ग उसके लिए नहीं है जो स्वार्थ के ल्याग और अपने जन्म की शर्तों को मानने के लिए तैयार नहीं है | हममें से प्रत्येक व्यक्ति जाने-अनजाने कुछ सेवा करता ही है | यदि हम इस सेवा को जान-बुझकर करने का अभ्यास डाल लेंगे तो सेवा करने की हमारी इच्छा निरंतर बढ़ती जाएगी, जिससे न केवल हमें सुख प्राप्त होगा अपितु समूचे संसार के सुख में वृद्धि होगी | (फ्रायम, पृ. 53-56)

**व्यवहार में यज्ञ**

यज्ञ दिन के चौथे होते किया जाने वाला कर्त्तव्य अथवा की जाने वाली सेवा है...निष्काम सेवा करके हम दृशयों का नहीं अपितु अपना ही उपकार करते हैं, जो तीक वैसा ही है जैसे कि ऋण को उतारकर हम अपना ही उपकार करते हैं, अपना ही भार हलका करते हैं और अपने ही कर्त्तव्य को पूरा करते हैं | एक बाल और है कि मानवता की सेवा के लिए अपने साधनों को लगा देने के दायित्व के सत्यज्ञों का ही नहीं है, बल्कि हम सबका है | और यदि यह नियम सही है, जो कि निश्चित रूप से है, तो जीवन में आस्वादित का कोई स्थान नहीं रहा जाता और उसका स्थान त्याग ते लेता है | त्याग की भावना ही मनुष्य...जाति को पशु-जागत से अलग करती है....

लेकिन त्याग से आशय यह नहीं है कि आप संसार छोड़कर जंगल में जा बसें | त्याग की भावना हमारे जीवन के समस्त कार्यकलाप को संचालित करे | यदि कोई व्यक्ति गृहस्थ जीवन को आस्वादित का मानक कर्त्तव्य मान ले तो तहसील का गृहस्थ नहीं रह जाता | त्याग की भावना से अपने व्यवसाय को संचालित करने वाला व्यापारी अपने हाथों से कारोबार रूप पूरे जीवन के बावजूद अगर इस नियम का पालन करता है तो वह अपनी योग्यताओं का इस्तेमाल सेवा के लिए करता है | वह न धोखा देगा, न सट्टा करेगा बल्कि सादा जीवन जिएगा और एक भी व्यक्ति को चोट नहीं पहुंचाएगा तथा एक भी व्यक्ति को हानि पहुंचाने की अपेक्षा खुद लाखों का घाटा उठा लें और तादेश अपेक्षा खुद बेहतर समझेगा |

कोई यह न समझे शक कि इस प्रकार का व्यापारी केवल कल्पना में निवास करता है | त्याग का सोबाभाव है कि ऐसे व्यापारी पक्षियों में भी है और पूर्व में भी | यह सही है कि ऐसे व्यापारियों को उंगलियों पर गिना जा सकता है, लेकिन अगर एक भी व्यक्ति इस कष्टी पर खराब होता है तो इस अक्षम्कन का कई सकता है और अगर आप गहराई में जाकर देखें तो आपकी जीवन के हर क्षेत्र में ऐसे लोग मिल जाएंगे जो समर्पित जीवन जी रहे हैं | ऐसे त्यागी गुरुष निस्कृति अपने जीवन-निर्वाह के लिए कोई आजीविका भी करते हैं लेकिन वह उनका ध्येय नहीं है, वह उनकी काम का उपोष्य बन जाता है....
त्याग का जीवन कला का चरमोकर्ष है और सच्चे आनंद को देने वाला है । जो यह मनुष्य को भारस्वरूप लगे या उसमें झुंझलाहट पैदा करे, वह यज्ञ नहीं है । आत्मास्क्ति विनाश की ओर ले जाती है जबकि त्याग अमरता की ओर । आनंद की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है । यह जीवन के हमारे दृष्टिकोण पर निर्भर करता है । एक व्यक्ति को मंच के दृश्य आनंदित करते हैं तो दूसरे को आकाश में निरंतर परिवर्तित होते हुए नये-नये प्राकृतिक दृश्य । इस प्रकार आनंद का संबंध व्यक्ति एवं राष्ट्रीय शिक्षा से है । हमें बचपन से जिन चीजों में आनंद का अनुभव करने की सीख दी जाती है, हम उसी से आनंदित होने लगते हैं । भिन्न-भिन्न राष्ट्रीय रचनाओं के उदाहरण देकर यह बात आसानी से समझाई जा सकती है ।

स्वैक्षिक सेवा

जो व्यक्ति सेवा के लिए समर्पित है, वह एक क्षण के लिए भी अपनी सुख-सुविधाओं की चिंता नहीं करता; यह चिंता वह भगवान के ऊपर छोड़ देता है । वह दे या न दे । इसलिए वह अपने सामने पड़ने वाली हर चीज़ को लाने पर नहीं दे ता, वह सिर्फ उतनी चीज़ ले लेता है जितनी उसके लिए अनिवार्य है और बाकी छोड़ देता है । वह शांत, क्रोधमुक्त और अनुविधा की स्थिति में भी मन से अविचल रहता है । सदुगुण की तरह उसकी सेवा भी स्वयं अपना ही पुरस्कार है और वह इसी में संतोष का अनुभव करता है ।

एक बात और है कि सेवा में प्रमाण अथवा शैक्षित्य कभी नहीं होना चाहिए । जो यह समझता है कि उसे अपना निजी व्यवसाय तो परिश्रमपूर्वक करना है और बिना कोई पैसा लिए किया जाने वाला सार्वजनिक कार्य वह जैसे चाहे और जब चाहे, कर सकता है तो यह मान लेना चाहिए कि उसे अभी त्याग के विज्ञान के बुनियादी नियमों का भी ज्ञान नहीं है । मनुष्य को स्वैक्षिक सेवा करने समय अपनी अधिकतम योग्यता का इस्तेमाल करना चाहिए और उसे अपने निजी काम से पहले करना चाहिए । वस्तुतः सच्चा भक्त बिना किसी शर्त के स्वयं को मानवता की सेवा के लिए समर्पित कर देता है । (कथा, पृ. 57-60)
मेरा पक्का विश्वास है कि यूरोप आज ईश्वर या ईसाइयत का प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि शैतान की भावना का प्रतिनिधित्व करता है | और, शैतान सबसे ज्यादा कामयाब तब होता है जब वह अपने होटीं पर ईश्वर का नाम लेकर प्रकट होता है | यूरोप आज केवल नाम के लिए ही ईसाई है | वास्तव में वह कुबेर की ही पूजा कर रहा है |

47. यह शैतानी सभ्यता

मेरा ध्येय रेलों या अस्पतालों को नष्ट करना नहीं है, हालांकि अगर वे अपनी मौत मर जाएं तो मुझे निशिद्ध रूप से खुशी ही होगी | रेल अथवा अस्पताल किसी उच्च और विशुद्ध सभ्यता की कसौटी नहीं है | अधिक-से-अधिक वे अनिवार्य बुराइयां हैं | इनसे राष्ट्र के नैशतक स्तर में एक ईंट की भी बढ़ोतरी नहीं होती |

इसी प्रकार अदालतों का स्थायी विनाश भी मेरा ध्येय नहीं है, हालांकि मैं दिल से ऐसा ही चाहता हूं | सारी मशीनों और मिलों को नष्ट करने का तो मैं और भी बहुत अनिवार्य कर रहा हूं | इसके लिए जितनी सादगी और त्याग की अपेक्षा है | उसके लिए लोग अभी तैयार नहीं हैं | (यंग, 8-9-1920, पृ. 2-3)

आत्मा की प्रतिष्ठा

मैं समृद्धि चाहता हूं, मैं आत्मनिर्भर चाहता हूं, मैं आज़ादी चाहता हूं | लेकिन ये सभी चीजें में आत्मा के लिए चाहता हूं | मुझे संदेह है कि चकमक युग से इस्पात के युग तक पहुंचना कोई उन्नयन है | मैं इसके प्रति उदासीन हूं | आत्मा का नैशतक ही एक ऐसी चीज़ है जिसके लिए हमारी बुद्धि और समस्त क्षमताओं का संतुलन किया जाना चाहिए | (यंग, 26-1-1921, पृ. 27)

भारत का मार्ग

मैं चाहंगा कि हमारे नेता हमें विश्व में सर्वोच्च नैतिक स्थान पाने की सीख दें | हम सुनते हैं कि हमारी इस भूमि में कभी देवताओं का वास था | आप ऐसे जगह पर देवताओं के वास की कल्पना नहीं कर सकते जो धुएं और मिलों की चिमनियों और पेड़ों के शोरुगुल से दूर नहीं हैं और जिसमें सड़कों पर अब चलने वाले कारों को खींचते हुए इंजन बेताहाश दौड़ रहे हैं जिनमें बैठे लोगों को प्रायः यह भी पता नहीं होता कि वे किस चीज़ के पीछे भाग रहे हैं, जो आम तौर पर बेसुध होते हैं, जो बसों में भेड़-बकरयों की तरह दूसरे होने के कारण चिड़चिड़ा जाते हैं और स्वयं को निराकर अजनबियों के बीच बैठा पाते हैं जिन्हें अगर उनका वश चले तो वे बाहर फेंक दें या अगर अजनबियों का वश चले तो वे उन्हें बाहर फेंक दें | मैं इन चीजों की चर्चा इसलिए कर रहा हूं कि ये भौतिक प्रगति की प्रतीक मानी जाती हैं | सच्चाई यह है कि ये हमारे सुख में रंचमात्र की भी वृद्धि नहीं करतीं | (स्पीरा, पृ.354-55)
आधुनिक सभ्यता
पहले लोग जब एक-दूसरे से मुद्द करना चाहते थे तो अपने प्रतिद्वंद्वी की शारीरिक शक्ति का अनुमान लगाते थे, लेकिन आज एक पहाड़ की चोटी पर बैठा बन्दूक-धारी अंकेला ही हजारों लोगों की जान ले सकता है | यह सभ्यता है ! पहले आदमी जितनी देश चाहे, खुली हवा में काम करता था | अब हजारों लोग एक साथ फैले खानों में काम करते हैं | उनकी दारियों से भी गई-बीती है | उन्हें करोड़ों की खातिर अल्पकी खतरनाक किस्म के काम अपनी जान को जोखिम में डालकर करने के लिए बाध्य होना पड़ता है...यह सभ्यता ऐसी है कि आप केवल दम साथी देखते रहिए, यह अपने आप नष्ट हो जाएगी | (हिन्दी, पृ. 36-37)
क्या तेज़ गति से दौड़ने वाले वाहनों की कजह से संसार कोई बेहतर बन गई है ? क्या इनसे मनुष्य की भौतिक उन्नति हुई है ? क्या अंततः ये उस उन्नति में बाधक नहीं हैं ? और, क्या मनुष्य की महत्वाकांक्षा की कोई सीमा है ? एक समय था जब हम कुछ घंटे प्रति मील की रफ्तार से सफर करके संतोष का अनुभव करते थे; अब हम एक घंटे में सैकड़ों मील तय करना चाहते हैं; एक दिन शायद अंतरराष्ट्र में भी उड़ना चाहेंगे | परिणाम क्या होगा ? केवल अन्वयस्ता | (यंग, 21-1-1926, पृ. 31)
मैं दूरी और समय को नष्ट करने की, पाश्विक भूख को बढ़ानी की और उसकी संतुष्टि के लिए आकाश-पाताल के कुलाबे मिलाने की इस पागल दौड़ की हड़ताल से निन्दा करता हूं | अगर आधुनिक सभ्यता यही है – मैं तो यही समझा हूं – तो मैं इसे शैतानी ही कहूंगा.... (यंग, 17-3-1927, पृ. 85)
औद्योगिकरण की नियति
यह औद्योगिक सभ्यता एक बीमारी है, क्योंकि यह हर दृष्टि से बुरी है | आकर्षक शब्दों और नारों के घोषों में न आए | मुझे जलपोतों या टेलीग्राफ से कोई शिकायत नहीं है | उद्योगवाद और उससे जुड़ी तमाम बातों के समर्थन के बिना वे यदि बने रह सकते हों तो बने रहें | वे साथ नहीं हैं | जलपोतों और टेलीग्राफ की खातिर हमें शोषण का शिकार नहीं बनाना | मानव जाति के स्थायी कल्याण के लिए ये किसी भी रूप में अपरिहार्य नहीं हैं | अब जबकि हमें भाप और बिजली के उपयोग की जानकारी हो चुकी है तो हमें उद्योगवाद से बचने के उपाय सीखने के पक्षत इनका अवसर आने का उपयोग करना चाहिए | हमें किसी भी कीमत पर उद्योगवाद को विनष्ट करना है| (यंग, 7-10-1926, पृ. 348)
समय आ रहा है जब वे लोग जो आज अपनी अवश्यकताओं को अंधाधुंध बढ़ा रहे हैं और समझ रहे हैं कि इसी में जीवन का सच्चा सार है और विश्व का सच्चा ज्ञान है, वे अपने कदमों को लोटाएंगे और पूछेंगे: 'हमारी उपलब्धि क्या है ?'
सभ्यताएं आई हैं और गई हैं, और हमारी समस्त तथाकथित प्रगति के बावजूद मुझे बार-बार यह पूछने की इच्छा होती है कि ‘इस सबका प्रयोजन क्या है?’ डार्विन के एक समसामयिक विचारक ने भी कुछ ऐसा ही कहा है | उसका कहना है कि पचास साल के अद्वैत आविष्कारों और खोजों ने मानव जाति की नैतिक ऊंचाई में एक इंच की भी वृद्धि नहीं की है | टाल्स्टॉय, जिसे चाहे तो आप स्वपनात्मक भी कह सकते हैं, का भी यही कहना था | ईसा मसीह और बुद्ध तथा हजरत मुहम्मद जिनके धर्म को आज मेरे अपने ही देश में बंचित और विकृत किया जा रहा है, के भी ऐसे ही विचार थे |

ईश्वर और धन-लिप्सा (मैमन)

‘सरमन ऑन द माउंट’ में बेशक कितने ही गहरे गोते लगाए, पर तब आपको टाट और भम्म को ही धारण करना पड़ेगा | सरमन के उपदेश हमें से प्रयोजन अथवा शक्ति के लिए थे | आप ईश्वर और धन-लिप्सा की सेवा एक साथ नहीं कर सकते | करूणा और दया की मूर्ति ईश्वर, जो समस्तता का अवतार है, मैमन (यूरोप में, धन-लिप्सा का प्रतीक प्राकृतिक वायु-पुक्ष) को नौ दिन तक अपना जारूफ फैलाने की छूट देता है | लेकिन मैं आपसे कहता हूं...कि धन-लिप्सा (मैमन) के आसपास कितु विनाशक प्रवाह से दूर भागिता | (यंग, 8-12-1927, पृ. 414)

यदि मेरे पास शक्ति होती तो मैं इस तंत्र को आज ही विनुष्ट कर देता | मैं इसके लिए घातक-से-घातक शक्तों का प्रयोग करता बशर्त कि मुझे इस बात का हरीहरोता होता कि उनसे इस तंत्र की नष्ट किया जा सकता है | मैं सिर्फ इसलिए चुप रह जाता हूं कि ऐसे हथियारों के इस्तेमाल से मैं इस तंत्र के वर्तमान संचालकों को तो शायद नष्ट कर दूं, पर यह तंत्र चिरस्थायी हो जाएगा | (यंग, 17-3-1927, पृ. 85)

पश्चिम

मैं इस बात को विनम्रतापूर्वक स्वीकार करने के लिए तैयार हूं कि पश्चिम में ऐसा बहुत कुछ है जिसे आत्मसात करके हमारा लाभ हो सकता है | बुद्धिमत्ता किसी एक देश अथवा एक जाति की बपौती नहीं है | पाश्चात्य सभ्यता का प्रतिरोध मैं केवल इसलिए करता हूं कि मैं इसके अथाध्युंध और विवेकहीन अनुक्रमन के विरुद्ध हूं जो इस धारणा पर आधारित है कि एशिया के लोगों में पश्चिम से आने वाली हर चीज की नकल करने भर की योग्यता है | मुझे विश्वास है कि यदि भारत के पास पीड़ा की अन्त-परीक्षा से गुजरने और अपनी सभ्यता के अवैध अतिक्रमण का प्रतिरोध करने लायक ध्याय हो तो वह अपनी सभ्यता के द्वारा, जो निस्संदेह अपूर्ण होने के बावजूद समय की मार को सहने में आज तक कामयाब हुई है, विश्व-शांति और विश्व की ठोस प्रगति में स्थायी योगदान कर सकता है | (यंग, 11-8-1927, पृ. 253)
48. मनुष्य बनाम मशीन

अगर मशीनों का लोप हो जाए तो मैं दुख नहीं मनाऊंगा, न इसे कोई घोर संकट की बात मांगूंगा | लेकिन मशीनों का नाश मेरा ध्येय नहीं है | (यंग, 19-1-1921, पृ. 21)

मानव की पुन:प्रतिष्ठा

मानव सर्वोपरि है | ऐसा नहीं होने देना चाहिए कि मशीनों मनुष्य के हाथ-पैरों को ही बेजान बना दें | (यंग, 13-11-1924, पृ. 378)

मेरा अंत:करण बोलता है कि जब मशीन युग की समस्त उपलब्धियों का लोप हो जाएगा तब भी हमारे हस्तशिल्प जीवित रहेंगे; जब शोषण का अंत हो जाएगा तब भी सेवा और ईमानदारी से किया गया श्रम जीवित रहेगा | यही आश्चर्य मुझे जीवित रखे हुए है और इसी के बल पर मैं अपना काम किया जा रहा हूँ...अपने कार्य के प्रति अंधग आश्चर्य ने ही स्टीफेंसन और कोलंबस जैसे लोगों को जीवित रखा था | अपने काम के प्रति आश्चर्य ही मुझे भी जीवित रखे हुए हैं | (गिरि, 30-11-1935, पृ. 329)

अपने काम के प्रति आश्चर्य मुझे जीवित रखे हैं, पर एक अतिरिक्त विश्वास यह भी है कि मेरी आश्चर्य को जो चीज़ें चुनौती देती प्रतीत होती हैं, उन सबका भविष्य अंधकारसम्य है...मुझे इसमें कोई संकेत नहीं है कि जहां मशीन युग का ध्येय मशीन को मशीन में परिवर्तित कर देना है, वहीं मेरा ध्येय मशीन बने हुए मनुष्य को अपनी मूल स्थिति में पुन:प्रतिष्ठित कर देना है | (गिरि, 29-8-1936, पृ. 228)

आदर्श की बात करने तो...मैं सारी मशीनों का उसी प्रकार ल्याकर कर देना चाहूंगा जिस प्रकार कि अपने इस शरीर का, जो मोक्ष की प्राप्ति में सहायक नहीं है; इस त्याकर्म में आत्मा की संपूर्ण मुक्ति के लिए प्रयास करना चाहूंगा | इस दृष्टि से, मैं सभी मशीनों का ल्याकर करना चाहूंगा पर मशीनों के रहेंगे क्योंकि, शरीर की तरह, ये अपरिमथय हैं | शरीर स्वयं...एक परिपूर्ण यंत्र है लेकिन चौंक यह आत्मा के चरमोपक्ष में बाधक है, अत: यह त्याज्य है | (यंग, 20-11-1924, पृ. 386)

मशीन एक बुराई

मशीन सांप की बांबी की तरह है जिसमें एक सांप भी हो सकता है और सांप भी | जहां मशीनों हैं, वहां बड़े शहर हैं; जहां बड़े शहर हैं, वहां ट्राम्स और रेलगाड़ियां हैं | और वहां विकिस्य है | ईमानदार विकिस्य आपको बताएगी कि जहां परिवहन के यांत्रिक साधन हैं वहां लोगों के स्वास्थ्य अच्छे नहीं हैं | मुझे याद है कि सूर्योदय के एक शहर में जब पैसे की कमी हुई तो ट्राम कंपनी, वकीलों और डाक्टरों की आमदनी घट गई और लोगों का स्वास्थ्य बेहतर हो गया | मुझे मशीनों में एक भी गुण दिखाई नहीं देता | (हिंस्क, पृ. 96)
भय के बचत
भय के बचत
मुझे आपत्ति मशीनों से नहीं, बल्कि मशीनों के पीछे दीवाना हो जाने से है | यह दीवानगी तथाकथित भयमयल मशीनों के लिए है | लोग तब तक ‘भय बचाते जाते हैं’ जब तक कि हजारों लोग बेरोजगार होकर भूखें मरने की स्थिति में झड़कों पर नहीं आ जाते | मैं मानव जाति के एक छोटे-से अंश के लिए नहीं बल्कि सबके लिए समय और भय की बचत करना चाहता हूँ | हमारा उद्देश्य लोभ नहीं, अपितु व्यक्ति के भय की बचत करना होना चाहिए | उदाहरण के लिए, मैं तकुँ को सीधा करने की मशीन का सदैव स्वागत करूंगा | इससे तुषारों का तकुँ आ बनाने का काम बंद नहीं होगा, वे फिर भी तकुँ बनाते रहेंगे, लेकिन जब तकुँ खराब हो जाएगा तो हर कतार नहीं आएगा तो हर वर्ष लोगों के पास उसे सीधा करने की मशीन होगी | इसलिए लोभ-तालच के स्थान पर भ्रम की स्थापना करो तो बाकी सब कुछ ठीक हो जाएगा | (यंग, 13-11-1924, पृ. 378)
मैं ऐसी मशीनों का कतार हिमायती नहीं हूँ जो या तो बहुत-से लोगों को गरीब बनाकर मुटी भर लोगों को अमीर बनाती है या अनेक लोगों के उपयोगी भय को अकारण विस्थापित कर देती है | (हरि, 22-6-1935, पृ. 146)
मशीनीकरण वहाँ ठीक है जहाँ काम की तुलना में काम करने वालों की कमी हो | उस स्थिति में जबकि काम की अपेक्षा उपलब्ध श्रमिकों की संख्या स्थायी हो, जैसे कि भारत में है, मशीन बुराई ही पैदा करती है | हमारे सामने समस्या यह नहीं है कि हम अपने गांवों में रहने वाले लाखों-करोड़ों लोगों को आराम किस प्रकार पहुँचाएं | हमारी समस्या यह है कि हम उनके खाली समय के उपयोग के लिए टंग बूढ़े जो साल में छह महीने के कार्यदिवसों के बराबर बैठता है | (हरि, 16-11-1934, पृ. 316)
लोग कहते हैं कि लाखों लोगों के भ्रम में बचत करके उन्हें बौद्धिक कारों के लिए अधिक समय उपलब्ध कराने में क्या बुराई है ? आराम केवल एक सीमा तक ही अच्छा और जरूरी है | इश्वर ने हम सबकी पसीना बहाकर अपनी रोटी कमाने के लिए पैदा किया है और मैं उस स्थिति की कल्पना मात्र से भयभीत हो जाता हूँ जब मनुष्य खाद्यत्र सहित अपनी आवश्यकता की सभी चीज़ें जादू की छड़ी धमाकर पैदा करने में समर्थ हो जाएगा | फैक्ट्री सैकड़ों मज़दूरों को काम देती है और हजारों को बेकार कर देती है | मैं एक तेल-मिल से टनों तेल का उत्पादन कर सकता हूँ, लेकिन उससे हजारों तेल बेकार हो जाएगे। मैं इसे विनाशकारी ऊर्जा कहता हूँ, जबकि लाखों लोगों का अपने हाथ से किया भ्रम रचनात्मक होता है और उससे सबका कल्पना होता है | विज्ञानी से चलने वाली मशीनों द्वारा विशाल पैमाने पर किया गया उत्पादन बेकार है, भले ही उसका स्वामित्व राज्य के हाथ में हो | (हरि, 16-5-1936, पृ. 111)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

मशीनों के प्रति मेरे विरोध के बारे में लोगों को बहुत ज्यादा गलतफहमी है | मैं हर मशीन का विरोधी नहीं हूँ | मैं केवल उन्हीं मशीनों का विरोधी हूँ जो श्रमिकों को विस्थापित करके उन्हें बेरोजगार बना देते हैं | (हरर, 15-9-1946, पृ. 310)

मशीनों की प्रतीयमान विजय मुझे चकाचौंध नहीं कर सकती | मैं सभी विनाशकारी मशीनों का पूर्णतया विरोधी हूँ | मैं ऐसे सीधे सादे उपकरणों और कीड़ों का उपयोग करके उन्हें बेरोजगार बना देता हूँ | मैं ऐसे सीधे उपकरणों, उपकरणों और कीड़ों का उपयोग करके उन्हें बेरोजगार बना देता हूँ | उन्हें हर दृष्टि से बेहतर और अधिक सुरक्षित होगा | (यंग, 17-6-1926, पृ. 218)

मेरा मत है कि जब किसी काम का आसानी से वे लाखों लोग कर सकते हैं जिनके पास करने को कोई और काम नहीं है तो ऐसा काम के लिए मशीनों का उपयोग करना हानिकारक है | उन्हीं सीधे मौल लम्बे और पंद्रह सी मील चौड़े भारत के सात लाख गांवों में फैले लाखों-कीड़ों-फूसों लोग जिस प्रकार अपना भोजन स्वयं बनाते हैं, उसी प्रकार यदि अपने वस्त्र भी खुद ही तैयार करने लगे तो यह हर दृष्टि से बेहतर और अधिक सुरक्षित होगा | यदि हमारे गांवों का अपने जीवन की प्रमुख आवश्यकताओं के उत्पादन पर नियंत्रण न रहा तो वे उस आज़ादी की काम नहीं रखणे जिसका सुख वे अनंत वृद्धि जाते जाने की क्षमता होनी चाहिए | (यंग, 2-7-1931, पृ. 161)

विशाल पैमाने का उत्पादन

विशाल पैमाने का उत्पादन उपभोक्ता की वास्तविक आवश्यकताओं का ध्यान नहीं रखता | यदि विशाल पैमाने का उत्पादन स्वयं में कोई अच्छी चीज़ होती ही है तो उसमें अनंत वृद्धि किए जाने की क्षमता होनी चाहिए थी | लेकिन यह निषिद्ध रूप से सिद्ध किया जा सकता है कि विशाल पैमाने का स्वयं अपनी सीमाएं हैं | यदि सभी देश विशाल पैमाने का उत्पादन की प्रणाली को अपना लें तो उनके उत्पादों को खपाने लायक विशाल बाजार उपलब्ध नहीं होगा | तब उस पर अंकुश लगा देना होगा | (हरर, 2-11-1934, पृ. 301)

मैं पक्के तौर पर अपनी राय जाहिर करना चाहूँगा कि विशाल पैमाने के उत्पादन का उन्माद विश्व-संकट के लिए उत्तरदायी है | एक क्षण के लिए अगर मान भी ले कि मशीनें मानव जाति की सभी आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है तो भी इनका कार्य उत्पादन के विश्व क्षेत्रों पर ही केंद्रित होगा और आपको वितरण का नियमन करने के लिए एक जंगल व्यवस्था अलग से करनी होगी | इसके विपरीत, जिस क्षेत्र में जिस वस्तु की आवश्यकता है, अगर वहीं उसका उत्पादन और वितरण, दोनों किये जाएं तो इनका नियमन स्वयंमेव हो जाता है और उसमें धोखेधड़ी की गुंजाइश कम हो जाती है तथा सट्टेबाजी की तो बिलकुल ही नहीं | (यंग, 2-7-1931, पृ. 161)

मैं विशाल पैमाने के उत्पादन की कल्पना तो जरूर करता हूँ, लेकिन वह बल पर आधारित नहीं होना चाहिए | उन पर अंकुश लगा देना होगा | (यंग, 2-11-1934, पृ. 301)

मैं विशाल पैमाने के उत्पादन की कल्पना तो जरूर करता हूँ, लेकिन वह बल पर आधारित नहीं होना चाहिए | चरखे का संदेश इसका एक उदाहरण है | यह विशाल पैमाने का उत्पादन है, लेकिन इसका स्थान लोगों के
अपने-अपने घर हैं | यदि आप एक व्यक्ति के उत्पादन को लाखों से गुणा करें तो क्या वह एक जबर्दस्त पैमाने पर विशाल उत्पादन नहीं कहा जा सकता? (वही, पृ. 301,302)

धन का केंद्रीकरण
मैं धन का केंद्रीकरण चाहता हूँ, पर वह कुछ हाथों में न होकर सभी के हाथों में हो | आज मशीन मुद्दी भर लोगों को लाखों लोगों की पीठ पर सवार होने में सहायक बन रही है | इसके पीछे जो प्रेरणा काम कर रही है वह श्रम बचाने की लोकोपकारिता नहीं है, बल्कि लोह है | मैं अपनी पूरी शक्ति के साथ इसके खिलाफ लड़ाई लड़ रहा हूँ.... (यंग, 13-11-1924, पृ. 378)

मुद्दी भर हाथों में धन और सता के केंद्रीकरण तथा लाखों लोगों के शोषण के लिए मशीन तंत्र के संचालन को मैं पूरी तरह गलत मानता हूँ | आज का मशीन तंत्र प्राय: इसी प्रकार का है | चरखे का अभियान मशीन को अन्यता और शोषण की स्थिति से हटाकर अपने हृदयाकुंज स्थान पर बिठाने का ही एक संघटित प्रयास है | इसलिए मेरी योजना के तहत मशीनों के मालिक केवल अपने या अपने राष्ट्र का ही हित चिंतन नहीं करेंगे अपितु सम्पूर्ण मानव जाति का करेंगे | (यंग, 17-9-1925, पृ. 321)

निर्जीव मशीनों को भारत के सात लाख गांवों में फैली ग्रामवासी रूपी सजीव मशीनों के मुकाबले पर खड़ा नहीं किया जाना चाहिए | मशीन का सदुपयोग इसमें है कि वह मानव श्रम में सहायता दे और उसे सरल बनाए | मशीनों का वर्तमान उपयोग लाखों-करोड़ों स्तरी-पुरुषों के मुंह से रोटी का कौर छिनकर उनकी नित्य उपेक्षा करते हुए मुद्दी भर लोगों के हाथों में धन का केंद्रीकरण करने के लिए किया जा रहा है | (हरि, 14-9-1935, पृ. 244)

विक्षेपीकरण
जब उत्पादन और उपभोग दोनों स्थानीय होते हैं तो उत्पादन में अंधाधुंध और किसी भी क्रिया वरुड़ी करने का लालच समाप्त हो जाता है | तब तभी वर्तमान अर्थतंत्र की सभी अन्त एवं कठिनाइयां और समस्याएं समाप्त हो जाएंगी....तब मुद्दी भर लोगों के पास वस्तुओं के बैंक स्थान बनाए और शोष लोगों को उनके बावजूद वस्तुओं के अभाव की स्थिति पैदा नहीं होगी....

मेरी योजना में मुख्य महत्व श्रम का है, धातु का नहीं | कोई व्यक्ति जो अपने श्रम का इस्तेमाल करेगा, उसके पास धन होगा | वह अपने श्रम को कपड़े में बदल सकता है या चाहे तो अन्न में बदल सकता है | अगर उसे पैरापिन तेल चाहिए, जिसे वह खुद पैदा नहीं कर सकता, तो वह अपने फालतू अन्न को देखकर तेल ले सकता है | यह स्वाधीन, उचित और बराबरी की शार्तें पर श्रम की अदलाबदली है | इसलिए यह डैकैती नहीं है | आप आपति
कर सकते हैं कि यह तो वस्तुओं की अदलाबदली की आदिम पद्धति की ओर लौट जाना होगा | लेकिन क्या समस्त अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का आधार वस्तुविनिमय की प्रणाली नहीं है? (हरि, 2-11-1934, पृ. 302)

मैं, व्यक्तिगत रूप से, लंबी-चौड़ी मशीनों की सहायता से उद्योगों के केंद्रीकरण और बड़े-बड़े ट्रस्ट बनाने के खिलाफ हूँ...यदि भारत खाद्य और उससे जुड़ी तमाम बातों को अंगीकार कर ले तो मुझे आशा है कि वह आधुनिक मशीनों में से सिर्फ़ उन्हीं को अपनाएगा जो जीवन को सुविधाजनक बनाने और श्रम को बचाने के लिए आवश्यक हैं। (यंग, 24-7-1924, पृ. 246)

शोषण नहीं

इस प्रकार, लंकाईयों के लोग अपनी मशीनों का उपयोग भारत और अन्य देशों के शोषण के लिए नहीं करेंगे, बल्कि वे ऐसे तरीके निकालेंगे जिनसे भारत अपने ही गांवों में कपास से कपड़े तैयार कर सके | इसी प्रकार, अमरीकी लोग भी आवश्यकतार्थक करने की अपनी योग्यता का इस्तेमाल दुनिया की अन्य जातियों का शोषण करके स्वयं को अमीर बनाने के लिए नहीं करेंगे। (यंग, 27-9-1925, पृ. 321)

वर्तमान अव्यवस्था का कारण क्या है? मेरी राय में, यह शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा दुर्बल राष्ट्रों का शोषण नहीं है, बल्कि समकक्ष राष्ट्रों द्वारा एक-दूसरे का शोषण है | मशीनों के प्रति मेरा मौलिक विरोध इसी कारण से है कि इसने इन राष्ट्रों की अन्य राष्ट्रों का शोषण करने में सहायता पहुँचाई है | मशीन अपने आप में एक जड़ वस्तु है और उसका अच्छा या बुरा, दोनों प्रकार से इस्तेमाल किया जा सकता है | लेकिन, जैसा कि हम जानते हैं, किसी भी चीज़ का बुरा इस्तेमाल करना ज्यादा आसान होता है। (यंग, 22-10-1931, पृ. 318)

मशीनों का स्थान

मशीनों का अपना स्थान है, इनका लोप होने की संभावना नहीं है | पर इस बात की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए कि मशीनों अनिवार्य मानव श्रम का स्थान लें।....

कोई भी हत्या अनादर का हल विकसित हो सके तो यह अच्छी बात है | परंतु यदि किसी मशीनी आवश्यकता की सहायता से कोई एक ही आदमी भारत की समस्त भूमि को जोत सके और समस्त फसल पर नियंत्रण स्थापित कर ले और यदि लाखों-करोड़ों लोगों के पास करने के लिए कोई और काम न हो तो वे भूखे मर जाएंगे, और बेकार होने के कारण बुढ़िया से जड़ हो जाएंगे, जैसे कि बहुत-से लोग पहले ही हो चुके हैं | अनेक लोगों की इसी दयनीय स्थिति में पहुँचने का लगातार खतरा है।

मैं कुटीर उद्योग की मशीनों में हर सुधार का स्वगत करता हूँ, लेकिन जब तक हम अपने लाखों-करोड़ों किसानों को उन्हीं के घर में किए जा सकने लायक कोई और काम-धंधे न दे सकें तब तक बिजली से चलने वाले तकुएल लगाकर हाथ की मेहनत को विस्थापित करना एक अपराध है। (यंग, 5-1-1925, पृ. 377)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

मैं सबकी भलाई के लिए किए जाने वाले प्रत्येक आविष्कार का स्वागत करूँगा | लेकिन एक आविष्कार और दूसरे आविष्कार में फर्क है | मुझे एक ही बार में हज़ारों आदमियों को मार देने की क्षमता रखने वाली जहरीली गैसों को महत्व नहीं देना चाहिए | लोकप्रिीय सेवाओं के लिए इस्तेमाल की जाने वाली भारी मशीनों जिनका मानव श्रम के रूप में कोई विकल्प सम्भव नहीं है, निक्खित रूप से अनिवार्य हैं, लेकिन उन पर राज्य का स्वागत होना चाहिए और उनका प्रयोग लोगों के हित के लिए ही किया जाना चाहिए | (हरि, 22-6-1935, पृ. 146)

मशीन युग की चुनौती

हमारे युग को मशीन युग कहा गया है, क्योंकि हमारी अर्थव्यवस्था पर मशीन का प्रभाव है | यह पूछा जा सकता है कि ‘मशीन क्या है’? एक अर्थ में मनुष्य आज तक बनी सभी मशीनों में सबसे अदभुत मशीन है | न इस जैसी कोई और मशीन बनाई जा सकती है, न इसकी नकल की जा सकती है | लेकिन इस शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग नहीं कर रहा हूँ जो मानव अथवा पशु के श्रम के पूरक होने या उसकी कार्यकुशलता को बढ़ाने के बजाए उसको विस्थापित करने का कार्य करता है | मशीन का यह पहला भेदभावक लक्षण है | इसका दूसरा लक्षण है कि इसकी वृद्धि या विकास की कोई सीमा नहीं है | यह बात मानव श्रम के रूप में मानव श्रम की क्षमता अथवा उसकी यांत्रिक कुशलता को एक हद से ज्यादा नहीं बढ़ा सकते | इसी लक्षण में से आधुनिक मशीन का लक्षण उत्पन्न होता है | उसके ऊपर अपनी ही इच्छा अथवा अप्रतिभा सवार मातृभूमि होती है | वह मानव श्रम की विरोधी है | एक मशीन एक हज़ार नहीं तो कम-से-कम एक सी आदमियों को बेकार कर देती है जिससे बेरोजगारों और अत्यन्त-रोजगारों की सेना बढ़ती ही जाती है | मशीन ऐसा इसलिए नहीं करती कि यह वांछनीय है, बल्कि इसलिए कि यही उसका नियम है | अमेरिका में यह स्थिति सम्भवतः चरम सीमा तक पहुंच चुकी है |

मैंने इसका विरोध अब शुरु नहीं किया है, बल्कि 1908 से भी पहले से करता आया हूँ जब मैं दक्षिण अफ़्रीका में था जहां मेरे चारों ओर मशीनों-ही-मशीनों थीं | वहां की मशीनों ने मुझे प्रभावित नहीं किया था, बल्कि मेरे अंदर तरसकर का भाव पैदा किया था | उसी समय मेरे मन में इस विचार का उदय हुआ था कि लाखों-करोड़ों लोगों का दमन और शोषण करने के लिए मशीन एक ऐसा देश है जिसका कोई जवाब नहीं है | यदि समाज में सभी लोगों को बराबरी का दर्जा दिया जाना है तो मानव अर्थव्यवस्था में मशीन का कोई स्थान नहीं हो सकता | मेरा विश्वास है कि मशीन ने आदमी की हैसियत में कोई इज़ाफा नहीं किया है और जब तक हम इसे इसके उचित स्थान पर नहीं बिठाएंगे तब तक यह दुनिया की सेवा नहीं करेगी बल्कि उसे विघटित कर देगी | दक्षिण अफ़्रीका में ही मैंने डरबन जाते समय रेलयात्रा के दौरान रक्षित की ‘अनदू दिस लास्ट’ पढ़ी और मैं तकनीक उससे अभिभूत हो गया | मेरे मन में यह बात स्पष्ट हो गई कि अगर मानव जाति को प्रगति करनी है और
समानता तथा भाईचारे के आदर्श को प्राप्त करना है, तो उसे ‘अनटू दिस लास्ट’ को अपनाकर उसके सिद्धांत पर चलना होगा। उसे गूंगों, लंगड़ों और अपंगो को भी अपने साथ लेकर चलना होगा। क्या धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने स्वामिभक्त कुरे के बिना स्वर्ग में प्रवेश करने से इंकार नहीं कर दिया था? (हरि, 25-8-1946, पृ. 281)

आज भारत पर पश्चिम की महीने इस कदर हावी हो रही है कि यदि भारत उनका सफलतापूर्वक प्रतिरोध कर सका तो यह किसी चमकार से कम नहीं होगा। (यंग, 17-11-1946, पृ. 405)
49. औद्योगीकरण का अभियोग

मानव प्रकृति में आस्था होना अच्छी बात है। अपनी उसी आस्था के कारण मैं जीवित हूँ। लेकिन इस आस्था के होने पर भी मैं इस ऐतिहासिक तथ्य को नहीं छूटता सकता कि यद्यपि अंततः सब ठीक ही होता है, पर आज से पहले भी व्यक्ति और राष्ट्र कहलाने वाले व्यक्ति-समूह नष्ट हो चुके हैं। रोम, प्रीस, बैबिलियन, मिस्स और बहुत-से अन्य देश इस बात के उदाहरण हैं कि अपने कुक्रोय के कारण अनेक राष्ट्र नष्ट हुए हैं।

हमें आशा करनी चाहिए कि अपनी तीक्ष्ण और वैज्ञानिक बुद्धि के कारण दुरुपयोग वस्तुस्थिति को समझेगा और अपने कदम पीछे हटाकर नैतिक पतन की ओर नहीं जाने सके। लेकिन यद्यपि अंततः सब ठीक होता है, पर आज से पहले भी व्यक्ति और राष्ट्र कहलाने वाले औद्योगिक रूप से बचने का कोई रास्ता नहीं होता है। आपके लिए भावना का पुनर्गठन करना होगा।

उद्योगवाद का भविष्य अंधकारमय है। अमेरिका, जापान, फ्रांस और जर्मनी आज इंग्लैंड के सफल प्रशतयोगी बनकर सामने आए हैं। भारत के मुट्ठी भर शमल भी इंग्लैंड के बाजारों के प्रतियोगिता कर रहे हैं और जिस तरह भारत में जागृति आई है, उसी तरह अत्यधिक संपन्न प्राकृतिक, खनिज और मानव साधनों वाले दशक्षण अफ्रीका में भी जागृत होगा।

अफ्रीका की शक्तिशाली जातियों के सामने शक्तिशाली अंग्रेज बने दिखाई देते हैं। आप कहेंगे कि आखिर ये हैं तो कुरान बरबर है। कुराओ को अवश्य हैं पर बरबर नहीं हैं। और कुछ ही वर्षों में पश्चिमी राष्ट्र यह पाएँगे कि अब वे अपने उत्पादों को अफ्रीका के बाजारों में खपाने में असमथक हैं। अगर उद्योगवाद का भविष्य पश्चिम में अंधकारमय है तो क्या भारत के लिए और भी अधिक अंधकारमय सिद्ध नहीं होगा?

मुझे भय है कि उद्योगवाद मानव जाति के लिए अभियोग सिद्ध होगा। एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र को शोषण सदा के लिए नहीं चल सकता। उद्योगवाद पूर्णतया आपके शोषण करने का सामर्थ, उपलब्ध विदेशी बाजारों और प्रतियोगियों के अभाव पर निर्भर करता है।

जब मैं रूस की तरफ़ देखता हूँ जहाँ औद्योगीकरण का चरमोत्कर्ष हो चुका है तो मुझे वहाँ का जीवन स्पष्ट रूप से अनुभूत नहीं होता। बाइबिल की भाषा का प्रयोग करूँ तो ‘अगर आदमी को पूरी तरह मिल जाए और बदले में उसकी आत्मा नष्ट हो जाए तो उसे मिला बक्सा?’ आधुनिक शब्दों में, अपनी व्यक्तित्वता को खोकर मशीन का सिर्फ़ एक दांता बन जाना मानव गरिमा के अनुकूल नहीं है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति समाज का औजस्की और पूर्णतः विकसित सदस्य बने।
ईश्वर न करे कि भारत कभी पश्चमी धर्म के उद्योगवाद को अपनाए | अगर तीस करोड़ की आबादी वाला समूह राष्ट्र पश्चमी धर्म के आर्थिक शोषण पर उतर आए तो वह टिकटी दल की तरह सभी दुनिया को चट कर जाएगा | यदि भारत के पूर्णिमति जनता के कल्याण के न्यासी बनकर और अपनी प्रतिभा को उपयोग संपत्ति जोड़ने के बजाए परमर्शक की भावना से जनता की सेवा के लिए करके इस त्रासदी से हमें नहीं बचाएंगे तो अंत में, या तो उनके हाथों जनता नष्ट हो जाएगी या जनता उन्हें नष्ट कर देगी | (यंग, 20-12-1928, पृ. 422)

भारत जब अन्य राष्ट्रों का शोषण करना शुरू कर देगा – यदि वह औद्योगीकृत हो गया तो यही करेगा – तो वह अन्य राष्ट्रों के लिए अभिप्राचे बन जाएगा, सारी दुनिया के लिए संकट पैदा करने वाला बन जाएगा | मैं अन्य राष्ट्रों के लिए भारत की शोषण करने की बात क्यों सोचूं? क्या आप इस स्थिति को त्रासदी से हमें नहीं बचाएंगे, तो अंत में, या तो उनके हाथों जनता नष्ट हो जाएगी या जनता उन्हें नष्ट कर देगी | (यंग, 12-11-1931, पृ. 355)

औद्योगीकरण का विकल्प

मैं नहीं समझता कि औद्योगीकरण किसी देश के लिए किसी भी सुरू में जरूरी है | भारत के लिए तो यह और भी जरूरी नहीं है | सच पूछ जाए तो मुझे विश्वास है कि अपनी हजारों कुटियों का विकास करके एक साथ कितु उदात्त जीवन को अपनाकर और दुनिया के साथ शांतिपूर्ण तरीके से रहकर ही भारत आर्थिक करती दुनिया के विद अपने दायित्व का निर्धारण कर सकता है | कुबेर द्वारा हम पर आरोपित तेज रफ्तार पर आधारित जिलिया वैज्ञानिक जीवन का उच्च विवाहों वाली जीवन-शैली से कोई मेल नहीं है | उदात्त जीवन जीने की कला सीखने पर ही जिंदगी की सच्ची खुशियां हासिल की जा सकती हैं....

संशयवादी पूछ सकते हैं कि हंसियारों से सिर से पांव तक लेस और तड़क-भड़क तथा आंदोलन में जी रही इस दुनिया में क्या कोई राष्ट्र, फिर चाहे वह कितना ही बड़ा तथा अधिक आबादी वाला क्यों न हो, सबसे अलग-परदा रहकर सादा जीवन को अपना आदर्श भगवीन सादा में सकता है? जबाब सीधा सादा है | यदि सादा जीवन जीने योग्य है तो चाहे एक ही व्यक्ति अथवा समूह इसके लिए प्रयास करे, हमें उसका स्वागत करना चाहिए | राजकीय नियंत्रण

इसके साथ ही, मैं यह मानता हूं कि कुछ प्रमुख उद्योगों का अस्तित्व आवश्यक है | मैं अनुपायवाहक अथवा सशस्त्र समाजवाद में विश्वास नहीं करता | मैं संपूर्ण परिवर्तन की प्रतीक्षा के बिना अपने विश्वास के अनुसार काम करने में विश्वास करता हूं | अतः प्रमुख उद्योगों के नाम गिनाए बगैर मे कहना चाहूँगा कि जिन उद्योगों में बड़ी संख्या में लोग एक साथ काम करते हैं, वे राजकीय व्यवस्था में होने चाहिए | इनमें कुशल और अकुशल,
दोनों ही प्रकार के श्रमिक राज्य के माध्यम से अपने उपयोगों के स्वामी होंगे। लेकिन मेरी कपन्दना का ऐसा राज्य चूंकि केवल अहिंसा पर आधारित होगा, इसलिए इसमें धनिक वर्ग से जबरन उनकी धन-संपत्ति नहीं छिनी जाएगी, बल्कि उन्हें राजकीय स्वामित्व स्वामीत्र करने की प्रक्रिया में सहयोग करने के लिए आमंत्रित किया जाएगा।

समाज में अस्पृश्य कोई नहीं है, चाहे वह लखपात हो अथवा कंगाल। ये दोनों एक ही बीमारी के नाते हैं।

(हरी, 1-9-1946, पृ. 285)

**ग्राम उद्योगों का पुनरुज्जीवन**

जिन ग्राम उद्योगों का पुनरुज्जीवन संभव है, उनके पुनरुज्जीवन का प्रयास करते हुए... मैं वही कर रहा हूँ जो ग्राम जीवन का प्रत्येक प्रेमी, ग्रामों के विचार का अर्थ समझने वाला प्रत्येक व्यक्ति कर रहा है अथवा करने का प्रयास कर रहा है। मैं ग्रामवासी से अपना आत्म-प्रदर्शनी के माध्यम से स्वामी होंगे। लेकिन मेरी कल्पना का ऐसा राज्य चूंकि केवल अहिंसा पर आधारित होगा, इसलिए इसमें धनन्त्र वगैरे से जबरन उन्हें स्वामी करने का प्रयास करने के लिए आमंत्रित किया जाएगा।

समाज में अस्पृश्य कोई नहीं है, चाहे वह लखपात हो अथवा कंगाल। ये दोनों एक ही बीमारी के नाते हैं।

(हरी, 4-1-1935, पृ. 372)

गांवों का पुनरुज्जीवन तभी संभव है जब उसका शोषण बंद हो। विशाल पैमाने के आयोजकरण से अनिवार्यः गांवों का निक्षिप अथवा सक्रिय शोषण होगा, क्योंकि उसके साथ वित्तीय संघर्ष और विपणन की समस्याएं चुड़ी है।

इसलिए हमें गांवों की आत्मनिर्भरता पर बल देना होगा जो अपने इस्तेमाल की चीज़ स्वयं तैयार करने वाले। ग्राम उद्योगों के यह स्वरूप अक्षुण्ण रहेगा जब तक ग्रामवासीयों द्वारा ऐसी आधुनिक मशीनों और औजारों का प्रयोग किया जाने पर कोई आपत्ति नहीं है जिन्हें हम खरीदकर इस्तेमाल कर सकते हैं।

(हरी, 28-9-1946, पृ. 226)

**वास्तविक आयोजन**

मैं इस प्रस्थापना का हार्दिक समर्थन करता हूँ कि जो योजना देश के कच्छे माल के दोहन पर बल देती है और अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली सिद्ध होने की संभावना से युक्त मानव-शक्ति के उपेक्षा करती है, यह असंतुभित है और उससे मनुष्यों के बीच समानता कभी स्थापित नहीं की जा सकती।

वास्तविक आयोजन से मतलब है भारत की संपूर्ण मानव-शक्ति का इष्टम उपयोग और भारत के कच्छे माल का निर्यात करके वहां से ऊंची वीमतों पर तैयार माल के पुन: क्रय के स्थान पर उसका भारत के असंख्य गांवों में वितरण।

(हरी, 23-3-1947, पृ. 79)
50. समाजवाद

सच्चा समाजवाद हमें अपने पूर्वजों से मिला है जिन्होने सिखाया कि ‘सबे भूमि गोपाल की’ | तो फिर सीमा-रेखा कहां है? मनुष्य ही उस रेखा की बनाने वाला है और वही उसे मिटा भी सकता है | गोपाल का शाब्दिक अर्थ है चरवाहा; इसका अर्थ ईश्वर भी है | आधुनिक भाषा में इसका अर्थ है राज्य अर्थात जनता | यह सही है कि आज भूमि जनता के स्वामित्व में नहीं है पर इसमें हमारे पूर्वजों की सीख का दोष नहीं है | दोष हमारा है कि हम उसे अपने जीवन में उतार नहीं पाए |

मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि रूस सहित किसी भी राष्ट्र के लिए इसे हासिल करना जितना मुमकिन है, उतना ही हमारे लिए भी है और इसके लिए हिंसा के इस्तेमाल की जरूरत नहीं है | (हरी, 2-1-1937, प. 375)

गरमामय जीवन के लिए जितनी भूमि की आवश्यकता है, उससे अधिक किसी के पास नहीं होनी चाहिए | इस तथ्य से कौन असहमत हो सकता है कि आम लोगों की घोर दररोध का कारण यह है कि उनके पास अपनी कहने के लिए कोई जमीन ही नहीं | (हरी, 20-4-1940, प. 97)

पाश्चात्य समाजवाद

मैं पाश्चात्य समाज-व्यवस्था का एक सहानुभूतिपूर्ण विद्वान कहा हूँ और मैंने पाया है कि पक्षिम की आत्मा के उत्तर की तरह में सत्य की अपक खोज विद्वान है | मैं इस भावना का आदर करता हं | हमें वैज्ञानिक अवेषण की इसी भावना के साथ अपनी प्राणी संस्थाओं का अध्ययन करना चाहिए; इससे हम एक ऐसे सच्चे समाजवाद और सच्चे साम्यवाद का विकास कर सकते हैं जिसकी दुनिया ने अब तक कल्पना ही नहीं की है | यह मान लेना निश्चित रूप से गलत है कि आम जनता की गरीबी के मसले का पाश्चात्य समाजवाद अथवा साम्यवाद सवोत्कृष्ट तथा अंतिम समाधान है | (अबाप, 3-8-1934)

समाजवाद के जन्म पूंजीपतियों द्वारा पूंजी के दुरुपयोग की खोज के साथ नहीं हुआ | जैसा कि मेरा कहना है, ईशोपनिषद् के प्रथम श्लोक में समाजवाद ही नहीं बल्कि साम्यवाद की भी स्पष्ट झलक है | सच्चाई यह है कि जब कुछ समाज-सुधारकों की आख्त हृदय-परिवर्तन की विधि से उठ गई तो वैज्ञानिक समाजवाद की तकनीक का जन्म हुआ | मैं उसी समस्या को सुलझाने में लगा हं जिसका सामना वैज्ञानिक समाजवादी कर रहे हैं |

यह सही है कि मेरा तरीका हमेशा विश्वास अहिंसा पर आधारित होता है | संभव है कि मैं असफल हो जाऊं | अगर ऐसा होता है तो यह अहिंसा की तकनीक के संबंध में मेरी अज्ञानता के कारण ही होगा | जिस सिद्धांत में मेरी आस्था दिनोंदिन बढ़ रही है, मैं उसका बुरा प्रतिपादक भी तो सिख हो सकता हूँ | (हरी, 20-2-1937, प. 12)
मेरा समाजवाद

मेरा दावा रहा है कि मैं समाजवाद को अपनाने वाले अपने परिचित देशवासियों की तुलना में बहुत पहले से ही समाजवादी था | लेकिन मेरे समाजवाद मेरे लिए सहज था और इसकी धारणा किसी पुस्तकों पर आधारित नहीं थी | यह अहिंसा में मेरे अंदिरा विश्वास से उत्पन्न हुआ था | यह नहीं हो सकता कि कोई आदमी सक्रिय अहिंसक हो किंतु वह सामाजिक अन्याय के विरुद्ध उठा ख़ड़ा न हो, फिर चाहे यह अन्याय कहीं भी हो रहा हो | दुर्भाग्य से, जहां तक मैं समझता हूँ, पक्ष के समाजवादियों ने समाजवादी सिद्धांतों को लागू करने के लिए हिंसा का सहारा लेना जरूरी माना है |

मेरी सदा से यह धारणा रही है कि समाज के सबसे छोटे और निम्नतम वर्ग को भी सामाजिक न्याय जोर-जबरदस्ती करके नहीं दिलाया जा सकता | मुझे इस बात में भी विश्वास है कि समाज के निम्नतम ब्रजकों को यदि अहिंसक उपायों से उत्पन्न प्रश्नशास्त्र दिया जाए, तो नसकने वाले अन्यायों को दूर करा सकते हैं | अहिंसक असहयोग इसका तरीका है | (हरिर, 20-4-1940, पृ. 97)

यद्यपि मैं अपने समाजवादी मित्रों की आमम्यां और बलिदान की भावना का अत्यंत प्रश्नशास्त्र हूँ, पर मैं उनकी और अपनी पद्धतियों के सुसंग भेद को कभी छुपाया नहीं है | वे साफ तरीक से हिंसा और उससे जुड़ी सबूत तौर पर विश्वास करते हैं | मैं पूरी तरह अहिंसा में विश्वास करता हूँ....

मेरा समाजवाद अतिम व्यक्ति तक का हित करने के लिए है | मैं अंधों, बहरों और गूंगों की बलि देकर अपना उत्क्रम करना नहीं चाहता | उनके समाजवाद में, इनके लिए संभवतः कोई ऐसा स्थान नहीं है | उनका एकमात्र उद्देश्य भौतिक उत्तर है |

उदाहरण के लिए, अमरीका का ध्येय है कि प्रत्येक नागरिक के पास कार हो | मेरा ध्येय यह नहीं है | मैं अपने व्यक्तित्व की पूर्ण अभिव्यक्ति की व्यक्ति चाहता हूँ | मुझे इस बात की व्यक्ति होनी चाहिए कि मैं चाहूँ तो लुभक तारे (सिरिक) तक जाने के लिए सीढ़ी बना सकूँ | इसका मतलब यह नहीं है कि मैं ऐसा कुछ करना चाहता हूँ | उससे उसका असिद्धांत वस्तु पर स्वाशमत नहीं है, वस्तु अपने शरीर पर भी नहीं है | (हरिर, 4-8-1946, पृ. 246)

समाजवाद में समानता

समाजवाद एक सुंदर शब्द है और जहां तक मैं समझता हूँ, समाजवाद में समाज के सभी सदस्य बराबर हैं – न कोई नीचा है, न कोई ऊपर | आदमी के शरीर में, सिर इस कारण ऊपर नहीं है कि वह शरीर में सबसे ऊपर स्थित है और पैर इसलिए नीचे नहीं है कि वृत्ती को स्पर्श करते हैं | जिस प्रकार शरीर के सभी अंग बराबर हैं, उसी प्रकार समाज के सभी सदस्य भी बराबर है | यह समाजवाद है |
इसमें, राजा और किसान, अमीर और गरीब, मालिक और कर्मचारी सभी का स्तर समान है | धार्मिक शब्दों में, समाजवाद में कोई द्वैत नहीं है | केवल एकत्व है |

आज सारी दुनिया की सामाजिक व्यवस्था में द्वैत अथवा अनेकत्व के अलावा और कुछ नहीं है | एकत्व के तो कहीं दर्शन ही नहीं होते | यह आदमी ऊँचा है, यह नीचा, यह हिंदू है, वह मुसलमान है, तीसरा ईसाई है, चौथा पारसी है, पांचवा सिख है, छठा यहूदी है | इनमें भी फिर उप-विभाग हैं | एकत्व की जो मेरी धारणा है, उसके अंतर्गत बाह्य अनेकत्व में पूर्ण एकत्व, विद्मान है |

इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए हमें दार्शनिक दृष्टिकोण अपनाते हुए यह नहीं कहना है कि जब तक सब लोग समाजवाद को नहीं अपना लेंगे तब तक हम आधार पर निर्भर रहेंगे | अपने सीवन में परिवर्तन लाए बगैर हम भाषण देते रहें, पाठिया बनाते रहें और शिकार सामने आते ही बाज की तरह झपट्टा मार दें | पर यह समाजवाद नहीं है | जितना ही हम इस झपट्टा मारने अपने शिकार समझते रहेंगे, उतना ही यह हमसे दूर होता जाएगा |

**साधन**

समाजवाद अपने प्रथम आचरणकता के साथ शुरू हो जाता है | यदि ऐसा एक भी व्यक्ति है तो आप उसके बाद शून्य लगाते जाइए, पहला शून्य उसे दस गुना बना देगा | और बाद शून्य पिछली संख्या को दस गुना करते जाएंगे | लेकिन अगर शून्य में ही शून्य है अर्थात कोई शून्य अन्य वाला ही नहीं है तो बाद के शून्य शून्य-मूल्य का ही बोध कराएंगे | शून्य लगाने में जो समय और कागज खर्च होगा, वह भी अंतर्गत जाएगा |

मेरा यह समाजवाद स्फटिक की तरह स्वच्छ है | अतः इसे पाने के साधन भी स्फटिक की तरह स्वच्छ होने चाहिए | मलिन साधनों से मलिन धेय सिद्ध होता है | तदनुसार, राजा का सिर काट देने से राजा और किसान बराबर नहीं हो जाएंगे और न मालिक का सिर काट देने से उसके कर्मचारी उसके बराबर हो जाएंगे |

असत्य के द्वारा सत्य की प्राप्ति नहीं की जा सकती | सत्यपरक आचरण से ही सत्य की प्राप्ति संभव है | क्या अहिंसा और सत्य में है? इसका स्पष्ट उत्तर तो कि 'नहीं' | अहिंसा सत्य में समाहित है और उसका विलोम भी नहीं है | इसीलिए यह कहा गया है कि ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं | इन्हें एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता | सिक्के के किसी पहलू को पढ़ लीजिए | शब्द भिन्न होंगे, पर सिक्के का मूल्य वही रहेगा |

यह सौभाग्यपूर्ण स्थिति पूर्ण शून्यता के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती | मन में अथवा शरीर में अशुद्धता को पलन-बढ़ने का अवसर देते ही तक्कर आपके भीतर असत्य और हिंसा उभर आएगी |

इसीलिए केवल सत्यनिष्ठा, अहिंसक और शून्य इत्यादि वाले समाजवादी ही भारत में और विश्व में समाजवादी समाज की स्थापना कर पाएंगे | जहाँ तक मेरी जानकारी है, विश्व का एक भी देश ऐसा नहीं है जो विशुद्ध रूप से
समाजवादी हों | मैंने ऊपर जिन साधनों का वर्णन किया है, उन्हें अपनाए बिना इस प्रकार के समाज का असिद्ध असंभव है | (हरिर, 13-7-1947, पृ. 232)

समाजवादी और साम्यवादी कहते हैं कि वे आर्थिक समानता लाने के लिए आज कुछ भी नहीं कर सकते | वे केवल उसके पक्ष में प्रचार करेंगे और इस निमित्त घृणा पैदा करने और उसे बढ़ाने में उनका विश्वास है | उनका कहना है कि 'जब हमें राज्य पर नियंत्रण प्राप्त हो जाएगा तो हम बलपूर्वक समाजता लागू कर देंगे |'

...यद्यपि मैं अमीरों द्वारा उपलि की गई कारों और अन्य सुशवधाओं का इस्तेमाल करता हूँ, पर मेरा दावा है कि मैं चोटी का समाजवादी हूँ | इन अमीरों का मेरे ऊपर जरा भी प्रभाव नहीं है और ज्यों ही मुझे लगेगा कि आम जनता के हितों के लिए इसे त्यागने की जरूरत है त्यों ही एक क्षण में मैं उन्हें अपने से दूर कर दूंगा | (हरिर, 31-3-1946, पृ. 64)

शिक्षा के द्वारा

लेकिन यह समझ लेना चाहिए कि सुधार जल्दवाली में नहीं किए जा सकते | अगर उन्हें अहिंसक उपायों से लागू करना है तो इसका तरीका यही हो सकता है कि हम 'धनी' और 'निधन', दोनों को शिक्षित करें | 'धनिकों' को यह आश्वासन देना है कि उनके विरुद्ध बल का प्रयोग कभी नहीं किया जाएगा | 'निधनों' को यह शिक्षा देनी है कि तुम्हारी इच्छा के बिना कोई व्यक्ति तुम्हें कुछ भी करने के लिए वस्तुतः बाध्य नहीं कर सकता और तुम अहिंसा अर्थात कष्ट सहन की कला को सीखकर अपनी आज्ञादी स्वयं हासिल कर सकते हो |

यदि हमें अपने ध्येय को प्राप्त करना है तो मैंने ऊपर जिस शिक्षा की रूपरेखा प्रस्तुत की है, उसे अभी शुरू कर देना चाहिए | पहला कदम तो यह है कि हम परस्पर आदर और विश्वास का वातावरण तैयार करें | विशिष्ट वर्गों और आम जनता के बीच हिंसक संघर्ष नहीं हो सकता | (हरिर, 20-4-1940, पृ. 97)

ईश्वर में आस्था

समाजवाद में सत्य और अहिंसा का अवतरण होना आवश्यक है | इसके लिए जरूरी है कि समाजवाद के हिमायती को ईश्वर में जीवंत आस्था हो | अगर उसमें सत्य और अहिंसा के प्रति केवल औपचारिक आग्रह होगा तो वह ऐसा बक्का कर जाएगा | इसीलिए मैं कहता हूँ कि सत्य ही ईश्वर है |

यह ईश्वर एक जीवंत बल है | हमारा जीवन इसी बल के अधिकार में है | यही बल हमें निवास करता है, पर यह हमारा शारीर नहीं है | जो व्यक्ति इस महान बल के असिद्ध को नकारता है, वह इस अपर शक्ति के इस्तेमाल से अपने को वंचित रखता है और पौरुषशील बना रहता है | वह एक पालरहित नींव का तरह से है जो कभी इधर और कभी उधर हिंदुस्तान खाती रहती है और अपने रास्ते पर आगे बढ़े बिना नष्ट हो जाती है | ऐसे लोगों का
समाजवाद स्वयं उनकी कोई भलाई नहीं कर सकता, उस समाज की भलाई की तो बात ही छोड़िए जिसमें वे रहते हैं।

अगर ऐसी बात है तो क्या इसका अर्थ यह है कि एक भी समाजवादी ईश्वर में विश्वास नहीं करता? अगर ऐसे कुछ समाजवादी हैं तो वे कोई स्पष्ट प्रगति क्यों नहीं कर पाए? इसके अलावा, अनेक धर्मपरायण लोग हमसे पहले इस दुनिया में रह चुके हैं, वे समाजवादी राज्य की नींव रखने में सफल क्यों नहीं हुए?

इन दो प्रश्नों का पूरा समाधान देना कठिन है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि समाजवाद में विश्वास रखने वाले किसी व्यक्ति को संभवतः यह सूझा ही नहीं है कि उसके समाजवाद और ईश्वर में विश्वास के बीच कोई संबंध है | यह भी भेदभाव कहा जा सकता है कि धर्मपरायण लोगों ने आम जनता के सामने समाजवाद का आदर्श कभी रखा ही नहीं।

धर्मपरायण स्त्री-पुरुषों के होते हुए भी दुनिया में अंधविश्वास फलते-फूलते रहे हैं | स्वयं हिंदुओं में छुआ-छूट का अभी हाल तक बड़ा जोर रहा है |

तथा यह है कि इस महान बल और उसकी गूढ़ संभावनाओं का ज्ञान प्राप्त करना सदा से ही अथक अनुसंधान का विषय रहा है।

**सत्याग्रह एक अचूक विधि**

मेरा दावा है कि सत्याग्रह की खोज उसी अनुसंधान का परिणाम है | लेकिन मैं यह दावा नहीं करता कि सत्याग्रह के सभी नियम निर्धारित हो चुके हैं या कि उनका पता लगा लिया गया है | हाँ, एक बात भी निर्धारित होकर और पक्ष के तौर से कह सकता हूँ कि सत्याग्रह के प्रयोग से किसी भी अच्छे उद्देश्य को प्राप्त कर सकती है | यह सर्वस्वे और अन्य साधन है, यह महानतम बल है | समाजवाद किसी अन्य उपाय से हासिल नहीं किया जा सकेगा | सत्याग्रह समाज का उसकी राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक सभी बुराइयों से मुक्त कर सकता है।

*हरर, 20-7-1947, पृ. 240)

**राष्ट्रीयकरण**

जैसा कि कराची कॉन्ग्रेस के प्रस्ताव में कहा गया है, मैं प्रमुख और प्रधान उद्योगों की राष्ट्रीयकरण में विश्वास करता हूँ | इससे अधिक और किसी बात की कल्पना में इस समय नहीं कर सकता | न मैं उत्पादन के सभी साधनों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हूँ | क्या रवींद्रनाथ ठाकुर का भी राष्ट्रीयकरण कर देना चाहिए? ये सब दिवालिक हैं।

*मासी, पृ. 10*
मेरा विश्वास निजी उद्यम में है और आयोजनबंद्र उत्पादन में भी है। अगर समस्त उत्पादन केवल राजकीय क्षेत्र में हुआ तो लोग नैतिक और बौद्धिक दृष्टि से कंगाल हो जाएंगे। वे अपनी जिम्मेदारियां भूल जाएंगे। इसलिए मैं पूंजीपतियों के पास उनकी फैक्टरियां और जमींदारों के पास उनकी जमीनें रहने दूंगा, लेकिन उनसे यह कहूंगा कि वे स्वयं को अपनी संपत्ति का न्यासी ही समझें। (वहीं, पृ. 12)

राजकीय नियंत्रण के बिना भी राष्ट्रीयकरण संभव है। मैं श्रमिकों के हितार्थ मिलें खोल सकता हूं। (वहीं, पृ. 13)
51. समाज का समाजवादी ढंग

समाजवादी व्यवस्था

अगर मैं देश को अपने दशकों से सहमत कर सकूं तो भावी सामाजिक व्यवस्था मुख्य रुप से चरखा और उससे जुड़ी बातों पर आधारित होगी। इसमें वे सभी चीजें शामिल होंगी जिनसे ग्रामवासियों के कल्याण में वृद्धि होती हो। इसमें उद्योग लाभ नहीं होगे...जब तक कि वे गांवों और ग्रामवासियों का गला घोंटने वाले न हों।

मेरी कल्पना के अनुसार गांव की दस्तकारियों के साथ-साथ बिजली, पोट-निर्माण, लोहे के कारखाने बनाने के कारखाने, मशीन बनाने के कारखाने आदि भी बनेंगे। कितु निर्भरता का क्रम उलट जाएगा। अभी तक बाहरी ग्रामवासियों को नष्ट कर दें। भारत के भावी राज्य में देश के उद्योग गांवों और उनकी दस्तकारियों के सहायक की भूमिका निभाएं।

अहिंसक आधार

मैं इस समाजवादी विश्वास को सही नहीं मानता कि यदि केंद्रीकृत उद्योगों की आयोजना और स्वामित्व राज्य के हाथ में होते ही तो जीवन के लिए अनिवार्य वस्तुओं का केंद्रीकरण सार्वजनिक कल्याण में सहायक होगा। पश्चिम की समाजवादी धारणा का जन्म हिंसा के वातावरण में हुआ था। पश्चिम के दंग के और पूर्व के दंग के समाजवाद के पीछे मंदिर एक ही है – समूह समाज का अधिकतम कल्याण और उन भयंकर असमानताओं का अभाव के सिद्धांत के प्राप्त होने के आधार मान लें। मेरी पक्षी की धारणा है कि सर्वहारा की हिंसा के द्वारा सत्य-प्राप्ति अंत: असफल हो जाएगी।

हर गांव को आत्मशक्ति बनना होगा और अपने मामलों की देखभाल स्वयं करनी होगी। उसे बाहरी आक्रमण से अपनी रक्षा करने के प्रयास में नष्ट हो जाने का प्रशंसक प्राप्त हो जाएगा। इस प्रकार अंतत: व्यवस्था में पारस्परिक माना जाएगा। इसका मतलब यह नहीं है कि वह पट्टों या बाहरी दुनिया पर कहीं निर्भर नहीं होगा या उनके द्वारा स्वतंत्रता की गई सहायता भी दी जाएगी। लेकिन यह पारस्परिक व्यवहार उभय पक्षों की स्वतंत्रता और स्वतंत्र संचालित होगा।

(हरिवर्धन, 27-1-1940, पृ. 428)

स्वाधीनता की शुरुआत नीचे से होनी चाहिए। तदनुसार प्रत्येक गांव एक गणतंत्र अथवा पंचायत का रूप लेगा जिसे पूरी शक्तियां प्राप्त होंगी। इसका तात्पर्य है कि हर गांव को आत्मनिर्भर बनना होगा और अपने मामलों की देखभाल स्वयं रखनी होगी। यहां तक कि समूची दुनिया से अपनी रक्षा करने का भार भी स्वयं उसी के ऊपर होगा। उसे बाहरी आक्रमण से अपनी रक्षा करने के प्रयास में नष्ट हो जाने का प्रशिक्षण प्राप्त हो जाएगा। उसे बाहरी आक्रमण से अपनी रक्षा करने के प्रयास में नष्ट हो जाने का प्रशिक्षण प्राप्त हो जाएगा।

इस प्रकार, अंतत: व्यवस्था ही इकाई माना जाएगा। इसका मतलब यह नहीं है कि वह पट्टों या बाहरी दुनिया पर कहीं निर्भर नहीं होगा या उनके द्वारा स्वतंत्र से की गई सहायता भी दी जाएगी। लेकिन यह पारस्परिक व्यवहार उभय पक्षों की स्वतंत्रता और स्वतंत्र संचालित होगा।
अत्यंत सुसंस्कृत होगा जिसमें प्रत्येक स्त्री-पुरुष को यह पता होगा कि उसे क्या चाहिए और इससे भी बड़ी बात यह है कि उसे यह मालूम होगा कि उसे ऐसी किसी चीज़ की इच्छा नहीं करनी चाहिए जिसे दूसरे लोग भी उतने ही श्रम से न पा सकते हों।

असंख्य गांवों से बने इस ढांचे में एक के बाद एक विस्तारशील किंतु कभी ऊर्ध्वगामी न होने वाले वलय होंगे। जीवन एक पिरामिड की तरह नहीं होगा जिसमें आधार को शीर्ष का भार वहन करना पड़ता है, बल्कि वह एक समुद्री वलय की तरह होगा जिसके केंद्र में व्यक्ति होगा जो अपने गांव के लिए मर मिटने के वास्ते सदा तैयार रहेगा, गांव गांव-समूहों के लिए नष्ट हो जाने को तैयार रहेगा, और यह प्रक्रिया यहां तक चलती रहेगी जहां संपूर्ण विश्व एक जीवन का रूप धारण कर लेगा। सभी व्यक्ति इस एक जीवन के अंग होंगे, वे कभी अंतिमवश आक्रामक रूप नहीं अपनाएंगे, बल्कि सदा विनिमय रहेंगे और उस समुद्री वलय के ऐश्वर्य में भागीदार होंगे जिसकी वे अंगभूत इकाइयाँ हैं।

इस समुद्री वलय का बाह्यस्त परिधि के पास अंतिमरक वलय को कूचलने की शक्ति नहीं होगी, बल्कि वह अपने अंदर के सभी वलयों को शक्ति प्रदान करेगी और स्वयं उनसे शक्ति प्राप्त करेगी। लोग मुझे प्लटकर उलाहना दे सकते हैं कि ये सब यूट्यूबियू होंगे और जरा भी विवाहितीय नहीं हैं। यदि वृक्षारोप के बिना का, भले ही कोई मनुष्य उसे कागज पर उतारने में सक्षम न हो, अक्षय मूल है तो मेरी उपर्युक्त तस्वीर का भी मानव जाति के लिए मूल्य है। भारत को इस सच्ची तस्वीर के लिए जीवन चाहिए, भले ही हम उसे कभी पूर्णतया प्राप्त न कर सकें। हम जो चाहते हैं, हमारे सामने पहले उसकी सच्ची तस्वीर होनी चाहिए, तभी हम उसे प्राप्त करने की दिशा में प्रयास कर सकते हैं। अगर भारत का प्रत्येक गांव कभी गणतंत्र बना तो मेरा दावा है कि मेरी तस्वीर ही सच्ची साबित होगी जिसमें शाक्ति के अनुप्रस्तृत वलय के समक्ष होगा अर्थात न कोई उच्चतम होगा और न कोई निम्नतम।

(हरी, 28-7-1946, पृ. 236)

देवता में विश्वास

यह समाज सवभावतत्य सत्य और आहिष्ठा पर आधारित होना चाहिए जो, मेरी राय में, इंसान में जीवित विश्वास के बिना संभव नहीं है। इंसान जो एक स्वयंभू और सर्वज्ञ जीवित बल है, जो विश्व के प्रत्येक शात बल में अंतर्निहित है, जो किसी पर निभर नहीं है और जो सभी बलों के विनष्ट हो जाने अथवा निश्चित रूप से जाने के बाद भी विद्यमान रहेगा। इस सर्वसमावेशी जीवित उद्योग में विश्वास के बिना में अपने जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता।

इस तस्वीर में प्रत्येक धर्म को पूरा और बराबर का स्थान प्राप्त है। हम सभी एक महान ऐश्वर्यशाली वृक्ष की पत्तियाँ हैं जिसकी जड़ें गृहीत के गर्भ में हम तरह जमी हुई हैं कि हमारे नाटे के जड़ों से अलग नहीं किया जा सकता। भयंकर झंझावात भी हम वृक्ष की हिला नहीं सकता।
इस तस्वीर में ऐसी मशीनों के लिए कोई स्थान नहीं है जो मानव श्रम को विस्थापित करती हैं और मुम्बी भर लोगों में शक्ति का केन्द्रीकरण करती हैं | सुसंस्कृत मानव परिवार में श्रम का स्थान अद्वितीय है | ऐसी हर मशीन का स्वागत है जो प्रत्येक व्यक्ति की सहायता करती है | लेकिन मैं यह बात मानने को तैयार हूँ कि मैं अभी तक इस प्रश्न पर विचार नहीं कर पाया हूँ कि ऐसी मशीन कौन-सी हो सकती है | सिंगर की सिलाई मशीन मेरे ध्यान में आई है | लेकिन वह भी सरसरी तौर पर ही है | अपनी तस्वीर को भरने के लिए मुझे उसकी जरूरत नहीं है | (वही)
52. साम्यवादी पंथ – बीज

बुनियादी प्रश्न

मूल्य कामयाबी हासिल करने के सुगम हिस्सक तरीकों में विश्वास नहीं है...में अच्छे मतभेदों के साथ कितनी ही सहानुभूति रखूं और उनकी कितनी ही प्रशंसा करूं, पर में अच्छे-से-अच्छे उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी हिस्सक तरीकों को अपनाने का सख्त विरोधी हूं। इसलिए मेरे और हिंसा के समर्थकों के बीच सहमति की वस्तु: कोई गुंजाइश नहीं है।

लेकिन अपने में मेरी आत्मा मुझे अज्ञात कार्यवादियों और हिंसा में विश्वास रखने वालों के साथ भी साहचयक स्थापित करने की केवल अनुमति ही नहीं देती बल्कि उसके लिए बाध्य भी करती है | यह जरूर है कि उस साहचयक का एकमात्र उद्देश्य उन्हें उस मार्ग से विरत करना है जो मुझे गलत लगता है | बात यह है कि मेरा अनुभव है कि अस्तित्व और हिंसा का परिणाम स्वायत्त कल्याण कभी नहीं हो सकता | अगर मेरी आत्मा केवल एक श्रद्धिश्रद्धता है तो भी यह तो मानना ही होगा कि यह एक मोहक भूमिका है | (यंग, 11-12-1924, पृ. 406)

मैं यह मानता हूं कि मेरी अभी तक बॉलशेविकवाद का अर्थ पूरी तरह नहीं समझ सका हूं | मैं बस यही जानता हूं कि इसका उद्देश्य निजी संपत्ति को संस्था का उपयोग करना है | यह अर्थजगत में अपनियाल के नीतिपरक आदर्श की प्रमुखता है और इस आदर्श को यदि लोग स्वेच्छा से अपने लें अथवा उन्हें शांतिपूर्ण तरीके से इसे अपनाने के लिए प्रेरित किया जा सके तो इससे बेहतर बात कोई नहीं हो सकती | लेकिन जहां तक मैं बॉलशेविकवाद को जानता हूं, यह न केवल बलप्रयोग को प्रतिबाधित नहीं करता अपनी निजी संपत्ति के खलाफ उनके अनुभवहरू और उनके संबंधित राजकीय स्वामित्व को केवल रखने के लिए खलुसकालु बलप्रयोग की इजाजत भी देता है | यदि ऐसा ही है तो मूल्य यह चहने में कोई संकोच नहीं है कि बॉलशेविक व्यवस्था का यह रूप बहुत दिनों तक नहीं चल सकता | कारण कि, मेरी यह पक्की धारणा है कि हिंसा के बल पर खड़ी की गई कोई बीज ज्यादा नहीं टिक सकती | जो भी हो, पर इसमें कोई संदेह नहीं है कि बॉलशेविक आदर्श के पीछे असंख्य स्त्री-पुरुषों का विश्वदूत त्याग है जिन्होंने उसके लिए अपने सर्वस्व का बलिदान किया है; ऐसा आदर्श कभी व्यय नहीं जा सकता जिसे लेनसे जैसी महान आकाशों ने अपने बलिदानों से पत्ता किया है; उनके त्याग के उद्देश्य उत्तम उद्देश्य का सदैव गुणगान किया जाएगा और वह कालांतर में इस आदर्श को विश्वदूत रूप प्रदान करेगा | (यंग, 15-11-1928, पृ. 381)

पश्चिम के समाजवाद और साम्यवाद जिन धाराओं पर आधारित हैं, हमारी धाराओं से मूल्य: भिन्न हैं | इनमें से एक धारणा यह है कि वे मानव प्रकृति की अनिवार्य स्वाभाविकता में विश्वास करते हैं | मैं इससे सहमत नहीं हूं, क्योंकि मैं जानता हूं कि मनुष्य और पशु के बीच एक मौलिक भेद यह है कि मनुष्य अपनी आत्मा की आवाज को
सून सकता है, उन मनोवेरों पर काबू पा सकता है जो उसके और पशुओं के बीच समान रूप से विद्यमान हैं और इसलिए वह स्वार्थपरता और हिंसा से ऊपर उठ सकता है जो पशु की प्रकृति के अंग हैं, पर मानव की अमर आत्मा के गुण नहीं हैं।

यह हिंदूत्व की मौलिक धारणा है और इस सत्य की खोज के पीछे हजारों वर्ष का तप और सादगी है। इसलिए हमारे यहां ऐसे संत तो हुए हैं जिन्होंने आत्मा के रहस्यों को जानने के लिए अपने शरीर को गला दिया और अपने प्राणों का उस्तर्क कर दिया पर पश्चिम की तरह, ऐसे कोई नहीं हुए जिन्होंने पृथ्वी के द्वारन्त और उच्चतम प्रदेशों की खोज करने हुए अपने प्राण दिए हों। इसलिए हमारा समाजवाद अथवा साम्यवाद अहिंसा पर तथा भ्र्म और पूजी एवं जमींदार और काश्तकार के बीच सामंजस्यपूर्ण सहयोग पर आधारित होना चाहिए। (अभाव, 2-8-1934)

समाजवाद का अर्थ

रूसी धंग का समाजवाद, यानी लोगों पर आरोपित समाजवाद, भारत के अनुकूल नहीं होगा। अगर समाजवाद हिंसा के बिना आए तो उसका स्वागत होगा। क्योंकि यदि संपत्ति का जो भी दिखाई होगा, वह उसे जनता के लिए और उनकी ओर से धारण करेगा। लक्ष्यता के पास लाखों रुपए होंगे, पर उसे जनता के लिए होंगे। जनता को सार्वजनिक उद्देश्य के लिए जब भी आवश्यकता होगी।

सामाजिक आयुक्त अंत: क्या है? इसका आयुक्त है वर्तमान समाज - एक ऐसा आदर्श जो निश्चित रूप से अभीप्त है। किंतु इसे प्राप्त करने के लिए जब बलप्रयोग की बात आती है, तो मैं इससे किनारा कर लेता हूँ। हम सभी समकक्ष पैदा हुए हैं, पर सदियों से हमने इस के इस विधान का प्रतिरोध किया है। असमानता का विवाद, 'ऊंच और नीच' की भावना एक बुराई है, लेकिन मैं बंदूक के दम पर इसके उभ्यत्व में विश्वास नहीं करता। भारत की छाती बंदूक के लिए नहीं बनी है। (हरर, 13-2-1937, पृ. 6)

मैं परोपकारी (या उपकारक) या अन्य किसी प्रकार की तानाशाही को स्वीकार नहीं कर सकता। उसमें न तो अमीर मिटेंगे और न गरीबों को संरक्षण प्राप्त होगा। हां, कुछ अमीर मार जरूर दिए जाएंगे और कुछ गरीबों को घर बैठे रोटी दे दी जाएंगी। जरूर इसका लक्ष्य बन्दूक के दम पर अमीरों को उनकी जीवन बनाने के लिए जब भी आवश्यक होगा। हां, कुछ अमीर मार जरूर दिए जाएंगे और कुछ गरीबों को घर बैठे रोटी दे दी जाएंगी। तथाकथित परोपकारी तानाशाही के बावजूद, एक वर्ग के रूप में, अमीर भी रहेंगे और गरीब भी। अंततः इलाज अहिंसक लोकतंत्र है, जिसे सबके लिए सच्ची शिक्षा भी कहा जा सकता है। अमीरों को कार्य के रूप में काम करने के सिद्धांत की सीख दी जानी चाहिए और गरीबों को स्वामंत्रण की। (हरर, 8-6-1940, पृ. 159)

वर्तमान समाज एक आदर्श है जो एकता समाज ध्येय ही नहीं होना चाहिए बल्कि हमें उसके लिए प्रयास भी करना चाहिए और ऐसे समाज में, वर्गों अथवा समुदायों का कोई स्थान नहीं होता। (हरर, 17-2-1946, पृ. 10)
मैं स्वयं को साम्यवादी भी कहता हूँ... मेरा साम्यवाद समाजवाद से बहुत अधिक भिन्न नहीं है | वह दोनों का सामजस्पूण मेल है | जहां तक मैंने समझा है, साम्यवाद समाजवाद की स्वाभाविक परिणति है | (हरि, 4-8-1946, पृ. 246)
10. न्यासिता

53. न्यासिता का दिव्य संदेश

ऊँच-नीच का समतलीकरण

आर्थिक समानता अहिंसक स्वाधीनता की सर्वकुंजी (‘मास्टर की’) है | आर्थिक समानता के लिए कार्य करने का मतलब है पूंजी और श्रम के अंतिम संग्रह का उन्मूलन | इसका अर्थ है, एक ओर तो उन मुट्ठी भर धनवानों के स्तर को नीचा करना जिनके हाथ में राष्ट्र की अधिकांश संपदा केंद्रित है और दूसरी ओर, आधा-पैट भोजन पर जीवन-निवाह करने वाले लाखों-करोड़ों लोगों के स्तर को ऊपर उठाना |

जब तक धनवानों और लाखों-करोड़ों भूखे लोगों के बीच की खाई नहीं पट्टी तब तक अहिंसक किस्म की सरकार की स्थापना करना नितांत असंभव है | नयी दिल्ली के आलीशान भवनों और उनके पास ही मजबूतौं की टूटी-फूटी झोपड़ियों का अंतर स्वतंत्र भारत में एक दिन भी नहीं चल सकता, जिसमें देश के गरीब लोगों के हाथों में भी उत्तम ही शक्ति होगी जितनी कि साधारण धनी लोगों के हाथों में |

अगर धनवानों ने अपनी धन-दौलत और उससे प्राप्त शक्ति का स्वेच्छा से त्याग न शकया और आम जनता को उसके हित के लिए उसमें साझीदार न बनाया तो निष्किंद रूप से एक दिन धिंसक और रक्तरंशज क्रांशत हो जाएगी | (काप्रो, पृ. 20-21)

मैं अपने न्यासिता के सिद्धांत पर दृढ़ हूँ, भले ही लोगों ने इसकी जमकर भड़हाई हो | यह सही है कि इसे प्राप्त करना कठिन है | अहिंसा की प्राप्ति भी उसी प्रकार कठिन है | पर 1920 में हमने फैसला किया कि हम इस कठिन चढ़ाई पर चढ़ेंगे | आज हमें अपनी मेहनत सफल होती दिखाई दे रही है | (वही, पृ. 21)

अहिंसक तरीका

अहिंसक पद्धति में हम पूंजीपति को नष्ट करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि पूंजीवाद को समाप्त करने का प्रयास करते हैं | हम पूंजीपति से आग्रह करते हैं कि वह स्वयं को उन लोगों का न्यासी समझे जिनके ऊपर वह अपनी पूंजी के निर्माण, उसकी रक्षा और उसके संवर्धन के लिए निर्भर है | श्रमिक को भी उसके हद्द-परिवर्तन के लिए प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है | यदि पूंजी में शक्ति है तो श्रम में भी है | शक्ति का प्रयोग विनाश के लिए भी किया जा सकता है और सूझन के लिए भी | दोनों एक-दूसरे पर निर्भर है | अपनी शक्ति का अहसास होते ही श्रमिक पूंजीपति का गुलाम होने के स्थान पर उसका सह-भागीदार होने की स्थिति में आ जाता है |

अगर वह एकमात्र खामी बनने की कोशिश करेगा तो अधिक संभावना इसी बात की है कि वह सुनहरी अंडा देने वाली मृगी को ही मार देगा |
मुझे इस बात का भय नहीं है कि मेरे द्वारा असहयोग किए जाने की स्थिति में कोई अन्य व्यक्ति मेरा स्थान ले ले, क्योंकि मुझे आशा है कि मेरे अपने सहकर्मियों पर यह प्रभाव डाल सकता है कि वे अपने मालिक के दूराचार में सहायक न बनें। श्रमिकों की विशाल संख्या को इस तरह की शिक्षा देना निस्संदेह एक धीमी प्रक्रिया है, पर चूंकि यह अपूर्व भी है इसलिए यह अनिवार्य: सबसे कम समय लेने वाली है | इसे आसानी से सिद्ध किया जा सकता है कि पूर्वीपति को नष्ट करने से अंतत: श्रमिक का भी शक्त हो जाएगा और जिस प्रकार कोई व्यक्ति इतना बुरा होता है कि उसका सुधार ही न हो, उसे उसी प्रकार कोई व्यक्ति इतना पूर्ण नहीं है कि उसे किसी व्यक्ति को जिसे वह गलती से पूरी तरह बुरा समझ तो, नष्ट करने की अनुमति दी जाए | (यंग, 26-3-1931, पृ. 49)

सामुदायिक कल्याण

मैं उन व्यक्तियों को जो आज अपने आपको मालिक समझ रहे हैं, न्यासी के रूप में काम करने के लिए आमंत्रित कर रहा हूँ अर्थात यह आग्रह कर रहा हूँ कि वे व्यक्ति को अपने अधिकार की दृष्टि से मालिक न समझें, बल्कि उनके अधिकार की दृष्टि से मालिक समझें जिनका उन्होंने शोषण किया है | (यंग, 26-11-1931, पृ. 369)

आजकल यह कहने का फैसला हो गया है कि समाज को अहिंसक दंग से संगठित अथवा संचालित नहीं किया जा सकता | मैं इस मुद्दे पर बहस के लिए तैयार हूँ | परिवार में जब पिता अपने दोषी बच्चे को थप्पड़ लगाता है, तो बच्चा उसका बदला लेने की नहीं सोचता | वह अपने पिता की आज्ञा का पालन थप्पड़ के असर की वजह से नहीं करता, बल्कि इसलिए करता है कि वह थप्पड़ के पीछे छुपे आहत प्रेम को पहचानता है | मेरी राय में यही उस विधि का सार है जिसके अनुसार समाज चलता है अथवा चलाया जाना चार्हए | जो बात एक परिवार के बारे में सही है वही समाज के बारे में भी सही होनी चाहिए, क्योंकि समाज एक बृहत परिवार ही है | (हरिर, 3-12-1938, पृ. 358)

मान लीजिए कि मेरे पास विरासत में या उद्योग-व्यापार करके काफी धन इकट्ठा हो गया है तो मैं यह समझना चाहिए कि यह सारा धन मेरा नहीं है, मेरा अधिकार तो बस सम्माननीय दंग से रह सकने का है और इसका स्तर भी उससे ऊपर नहीं होना चाहिए जो लोगों को प्राप्त है | मेरी शेष धन समुदाय का है और वह उसी के कल्याण में खर्च किया जाना चाहिए |

मैं इस सिद्धांत का प्रतिपादन उस समय किया था जब देश के सामने जरूरी चीजें और राजा-महाराजाओं की धन-संपत्ति के विषय में समाजवादी सिद्धांत प्रस्तुत किया था | समाजवादियों का कहना था कि वे इनके विशेषाधिकार समाप्त कर देंगे | इसके विपरीत मैं चाहता हूँ कि वे लोग अपने लालच और राजा महाराजाओं की भावना से ऊपर उठें और अपनी दौलत के बावजूद उस स्तर पर उतरकर आ आए जिस पर पसीने की कमाई से पेट भरने
वाला श्रमिक जीवन-निर्वाह करता है | श्रमिक को यह समझना होगा कि धनवान व्यक्ति अपनी संपत्ति का स्वामी उससे भी कम है जितना कि वह अपनी संपत्ति अर्थात काम करने की शक्ति का स्वामी है |

व्यवहार में

इस प्रश्न का कोई महत्व नहीं है कि इस परिभाषा के अनुसार कितने लोग सच्चे न्यासी के रूप में आचरण कर सकते हैं | अगर यह सिद्धांत सही है तो इससे कोई फरक नहीं पड़ता कि इस पर अनेक लोग चल रहे हैं या केवल एक ही आदमी चल रहा है | प्रश्न केवल दृढ़ आश्चर्य का है | अगर आप अहिंसा के सिद्धांत को स्वीकार करते हैं तो आपको उस पर चलने का प्रयास करना होगा, भले ही आप सफल हों या असफल | इस सिद्धांत में ऐसी कोई बात नहीं है जो बुद्धि की पकड़ के बाहर हो, हालाँकि आप यह कह सकते हैं कि इसे व्यवहार में लाते हैं काठिन है | (हरिरे, 3-6-1939, पृ. 145)

मुझे यह स्वीकार करने में कोई लज्जा नहीं है कि अनेक पूंजीपतियों का मेरे प्रति मैत्रीभाव है और वे मुझसे भय नहीं खाते | वे जानते हैं कि मैं पूंजीवाद को समाप्त करने का लगभग उतना ही इच्छुक हूँ जितने कि सर्वाधिक उन्नत समाजवादी अथवा साम्यवादी हैं | लेकिन हमारे तरीके अलग-अलग हैं, हमारी भाषा अलग-अलग हैं | कामचलाऊ नहीं

'न्याशिता' का मेरा सिद्धांत कोई कामचलाऊ सिद्धांत नहीं है - निश्चित रूप से, यह कोई छद्मवाचन नहीं है | मुझे पक्का विश्वास है कि अन्य सभी सिद्धांतों का लोप हो जाने के बाद भी यह सिद्धांत जीवित रहेगा | यह दर्शन और धर्म द्वारा अनुप्रेरित है | धनवान लोगों ने इस सिद्धांत के अनुसार आचरण नहीं किया है, इससे सिद्धांत झूठा सिद्ध नहीं हो जाता, इससे निरूपण है, सिद्धांत नहीं हो जाता | अन्य किसी सिद्धांत का अहिंसा के साथ मेल नहीं है | अहिंसक पद्धति में दुराचारी यदि अपने दोष को दूर नहीं करता तो वह स्वयं अपने अंत का कारण बनता है | चूंकि अहिंसक असहयोग के परिणामस्वरूप या तो उसे अपना दोष दिखाई देता है और वह उसका मार्जन कर लेता है या फिर वह विलकुल अकेला पड़ जाता है | (हरिरे, 16-12-1939, पृ. 376)

धन-संपत्ति का अर्जन

आज जिनके पास दौलत है, उनके नाम है कि वे इस तरह आचरण करें मानो उनके पास यह दौलत गरीबों की ओर से एक न्यास के रूप में रखी गई हो | आप कह सकते हैं कि न्याशिता कानून की दृष्टि से एक कल्पना मात्र है | लेकिन अगर लोग इस पर बराबर विचार करें और इसके अनुसार आचरण करने का प्रयास करें तो दुनिया आज जिन्हें प्रेम से चलाई जा रही है, उससे कहीं अधिक प्रेम का संचार हो सकता है | पूर्वक जीवन में इसे प्राप्त करना भी उतना ही असंभव है | लेकिन
अगर हम उसके लिए प्रयास करते रहें तो हम धरती पर समानता स्थापित करने की दिशा में अन्य किसी उपाय की अपेक्षा (न्यासिता के सिद्धांत पर आधारण करके) अधिक प्रगति कर सकते हैं।

मुझे पक्वा पंक्वा विश्वास है कि जान-बूझकर गलत काम किए बिना भी दौँकर कमाई जा सकती है | उदाहरण के लिए, मेरी एक एकड़ भूमि में अचानक सोने की ख़ान निकल सकती है | लेकिन मैं इस प्रस्थापना को स्वीकार करता हूं कि संपत्ति को अर्जित करने और उसका न्यासी बनने की अपेक्षा संपत्ति की कामना न करना बेहतर है | मैं अपनी संपत्ति बहुत पहले ही त्याग कर सकता हूं, जो इस बात का प्रयंत प्रमाण होना चाहिए कि मैं औरों से क्या करने की अपेक्षा संपत्ति रखता हूं। लेकिन मैं उन लोगों को क्या सलाह दूं जो पहले से ही धनवान हैं या जो धन की कामना को छोड़ना नहीं चाहते? ऐसे लोगों को मेरा परामर्श यही हो सकता है कि वे अपने धन का इस्तेमाल सेवा के लिए करें।

यह सही है कि आम तौर से धनी लोग अपने ऊपर जरूरत से ज्यादा खर्च करते हैं | लेकिन इससे बचा जा सकता है | जजनालाल जी अपने समकक्ष के लोगों को अपना लोग भूल होना चाहते हैं। मैं यह अनुभव नहीं करता कि वे अपने ऊपर कम पैसा खर्च करते थे | मैं ऐसे असंख्य धनवानों से मिला हूं, जो अपने ऊपर खर्च करते थे।

हममें से जो लोग गरीबी को अपनाना अपना कर्तव्य समझते हैं और जिन्हें आधिक समानता में विश्वास है और चाहते हैं कि इसकी स्थापना हो, उन्हें धनवानों से ईश्वरों नहीं करनी चाहिए बल्कि अपनी गरीबी में सच्ची खुशी का प्रदर्शन करना चाहिए जिसका अन्य लोग अनुकरण कर सकें। यह दुःख की बात है कि इस प्रकार खुश रहने वालों की संख्या बहुत ही कम है। (हरिर, 8-3-1942, पृ. 67)

न्यासी को कोई वारिस नहीं होता, जनता ही उसकी वारिस होती है | अधिस्वले अपने जीवन के अध्यात्मिक राज्य में न्यासिता का नियम लगा जाएगा। राजा और जमींदार अन्य धनवानों के समकक्ष ही माने जाएंगे। (हरिर, 12-4-1942, पृ. 116)
विकल्प
जहां तक धन-संपत्ति के वर्तमान स्थायियों का प्रश्न है, उन्हें वर्त-युग और अपनी धन-संपत्ति के न्यासी के रूप में स्वेच्छा से अपने आपको परिवर्तित कर देने के बीच किसी एक का चुनाव करना होगा | उन्हें अपनी धन-दौलत के स्वामिल को बनाए रखने, अपनी प्रतिभा का इस्तेमाल करने और अपनी दौलत में वृद्धि करने की अनुमति गोंगी, लेकिन अपनी खातिर नहीं बल्कि राष्ट्र की खातिर | इसलिए इसमें शोषण के लिए भी कोई स्थान नहीं होगा|
इन्हें अपनी सेवा और समाज के लिए उसके मूल्य को देखते हुए कमीशन मिलेगा जिसकी दर का नियमन राज्य द्वारा किया जाएगा | उनके बच्चे को उनके स्थान पर न्यासी बनाने की आज्ञा तभी मिलेगी जबकि वे स्वयं को इसके धौप सिद्ध कर सकेंगे |
मान लेंगे, भारत का स्वतंत्र होने के लिए उसके सभी पूंजीपतियों को कानूनी न्यासी बनाने का अवसर मिलेगा | लेकिन इसका कानून उपर से नहीं थोपा जाएगा | यह नीचे से आएगा |
जब लोग न्यासिता के अर्थ को समझने लगेंगे और वातावरण उसके अनुकूल हो जाएगा तो लोग स्वयं ही ऐसे कानून बनाना शुरू कर देंगे और यह शुरूआत ग्राम पंचायतों से होगी | ऐसी चीज नीचे से शुरू हो तो उसे लोग आसानी से स्वीकार कर लेंगे हैं | ऊपर से शुरू होने पर यह एक बोझ महसूस होती है | (हरी, 31-3-1946, पृ. 63-64)

जमींदार, किसान
बहस की खातिर मैं यह मानने के लिए तैयार हूं कि जमींदार अनेक अपराधों और भूलचुकों के लिए दोषी हैं | लेकिन इस कारण से किसानों और मज़दूरों का, जो धरती को जीवन देते हैं, अपराधों की नकल करना उचित नहीं ठहराया जा सकता | अगर नमक में से जायका जाता रहा तो नमक में जायका कहां से आएगा ?....
जमींदारों से मेरा कहना है कि आपके स्वीकार को बातें कही जा रही हैं, अगर वे सही हैं तो समझाईए कि आपके दिन पूरे होने वाले हैं | आप और ज्यादा दिन तक स्वामी और मालिक नहीं बने रह सकते | हां, अगर आप गरीब किसानों के न्यासी बनने को तैयार हों तो आपका भविष्य उज्ज्वल है | लेकिन न्यासी नाम को ही नहीं, असलियत में बनना होगा | ऐसा न्यासी सिर्फ उतना ही पारिश्रमिक लेगा जितना उसकी मेहनत और देखभाल का उचित मुआवजा ठहराया जा सकता है | यदि ऐसा हो सके तो वे पाएंगे कि कोई कानून उन्हें अपदस्थ नहीं कर सकता | और, किसान उनके मित्र बन जाएंगे | (हरी, 4-5-1947, पृ. 134)
अगर जमींदार अपनी रैयत की खातिर सचमुच अपनी जमींदारी के न्यासी बन जाए तो दोनों के बीच कभी सांठ-गांठ नहीं हो सकती | जमींदारी का कठिन प्रश्न अभी सुलझाना बाकी है....इससे अच्छा और क्या हो सकता है कि छोटे-बड़े सभी जमींदारों, रैयत और सरकारों के बीच कोई उचित, निष्पक्ष और संतोषजनक समझौता हो जाए
ताकि जब कानून पास हो तो उस पर अमल हो सके और जमींदारों तथा रेयत के विरुद्ध बल-प्रयोग की आवश्यकता न पड़े | क्या ऐसे सभी परिवर्तन, जिनमें से कुछ आमूल प्रकृति के भी होंगे, पूरे भारत में बिना स्वतंत्र और बल-प्रयोग के लागू किए जा सकेंगे | (हरि, 21-9-1947, पृ. 332)

व्यावहारिक न्यासिता सूत्र*

(1) न्यासिता समाज की वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था को समतावादी व्यवस्था में रूपांतरित करने का एक साधन है| न्यासिता पूंजीवाद को बचावती नहीं है, पर वह वर्तमान मालिक वर्ग को सुधार का एक अवसर प्रदान करती है | यह इस विश्लेषण पर आधारित है कि मानव प्रकृति कभी सुधार से परे नहीं होती |

(2) यह निजी स्वामित्व के किसी अधिकार को नहीं मानती, सिवा उसके जिसकी अनुमति समाज अपने कल्याण के लिए दे |

(3) यह धन-संपत्ति के स्वामित्व और उपयोग के कानूनी विनियमन की वर्जना नहीं करती |

(4) तदनुसार राज्य द्वारा विनियमित न्यासिता के तहत, कोई व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए अथवा समाज के हितों की अनदेखी करते हुए अपनी संपत्ति को धारण करने अथवा उसका इस्तेमाल करने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा |

(5) जिस प्रकार एक समुचित न्यूनतम निर्वाह मज़दूरी नियत करने का प्रस्ताव है, उसी तरह समाज में व्यक्ति की अधिकतम आय भी नियत कर देनी चाहिए | न्यूनतम और अधिकतम आयों के बीच जो अंतर हो वह युक्तिसंगत और न्यायोचित हो और उसमें समय-समय पर इस दृष्टि से परिवर्तन किया जाए कि अंततः वह अंतर मिट जाए |

(6) गांधीवादी अर्थव्यवस्था में, उत्पादन का स्वरूप सामाजिक आवश्यकता द्वारा निर्धारित होगा, व्यक्तिगत सनक या लोभ द्वारा नहीं | (हरि, 25-10-1952, पृ. 301); समझा जाता है कि यह दस्तावेज प्रो. एम. एल. दांतवाला ने तैयार किया था |

*यह 'सरल और व्यावहारिक न्यासिता सूत्र' किशोरलाल मश्कूलाल और नरहर राहर द्वारा तैयार किया गया था और गांधीजी ने इसे कुछ संशोधनों के साथ, अनुमोदित कर दिया था |
54. अहिंसक अर्थव्यवस्था

अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र

मैं मानता हूं कि मैं अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र के बीच कोई सुस्पष्ट या किसी अन्य प्रकार का भेद नहीं करता। वह अर्थशास्त्र अनैतिक और इसीलिए पापयुक्त है जो किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के नैतिक कल्याण को क्षति पहुंचाता हो। तदनुसार वह अर्थशास्त्र पापयुक्त है जो यह अनुमति देता है कि एक देश दूसरे देश को लूट ले। शोषित श्रम द्वारा तैयार की गई वस्तुओं को खरीदना और उनका इस्तेमाल करना पापयुक्त है।

(यंग, 13-10-1921, पृ. 325)

वह अर्थशास्त्र जो नैतिक और भावनात्मक दृष्टिकोणों की अनदेखी करता है, मोम से बनी मूर्तियों के समान है जिनमें आकृति-साम्य तो होता है पर जीवित प्राणी की जीवितता नहीं होती। हर संकट के समय ये नवंदलित आर्थिक नियम अव्यावहारिक सिद्ध हुए हैं। जो राष्ट्र अथवा व्यक्ति इस्लिए अपने मार्गदर्शक सूत्रों के रूप में विवाह करेगा, उसका नाश अवश्यभावी है।

(यंग, 27-10-1921, पृ. 344)

जो अर्थशास्त्र नैतिक मूल्यों की अनदेखी अथवा उपेक्षा करता है, वह झूठा है। अर्थशास्त्र के क्षेत्र में अहिंसा के नियम की प्रयुक्ति का अर्थ कम-से-कम इतना होता है कि अंतरराष्ट्रीय वाणिज्य में नैतिक मूल्यों को एक विचारणीय तत्व माना जाए।

(यंग, 26-10-1924, पृ. 421)

आदर्श अर्थशास्त्र

मेरे विचार में भारत, और भारत ही क्यों सारी दुनिया, का आर्थिक गठन ऐसा होना चाहिए कि उसमें किसी को रोटी-कपड़े की तंगी न रहे। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त काम उपलब्ध होना चाहिए।

यह आदर्श सर्वत्र तभी प्राप्त किया जा सकता है जब जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन आम जनता के नियंत्रण में हों। ये उसी प्रकार सबको मुक्त रूप से उपलब्ध होना चाहिए जिस प्रकार ईश्वर की दी गई वायु और जल है अथवा होने चाहिए। इन्हें दूसरों के शोषण का अवैध साधन नहीं बनाया जाना चाहिए। किसी भी देश, राष्ट्र अथवा व्यक्ति-समूह द्वारा इन पर एकाधिकार करना अनुचित है। इस सीधे-सादे सिद्धांत की अवहेलना आज केवल इसी दुसरी देश की नहीं बल्कि दुनिया के अन्य भागों की दरिद्रता का भी कारण है।

(यंग, 15-11-1928, पृ. 381)

सच्चा अर्थशास्त्र कभी उच्चतम नैतिक मानकों का विरोधी नहीं होता, ठीक उसी प्रकार जैसे कि सच्चा नैतिशास्त्र वही माना जा सकता है जो नैतिशास्त्र होने के साथ-ही-साथ अच्छा अर्थशास्त्र भी हो। वह अर्थशास्त्र झूठा और
निराशाजनक है जो कुबेर की पूजा का प्रश्न देता है और शक्तिशाली लोगों को दुर्बल लोगों की कीमत पर धन का संयोग करने में मदद करता है | वह तो मीत का पैगाम है | इसके विपरीत, सबचा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय सुनिश्चित करता है, दुर्बलतम व्यक्तियों सहित सबकी भालाई को बढ़ावा देता है और ढंग की जिंदगी जीने के लिए अपरिहार्य होता है | (हरि, 9-10-1937, पृ. 292)

अगर हम अपने घरों, महत्त्वपूर्ण और मददी से धन-दीलत के शत्रुओं को हटाकर उनकी जगह नैशातकता के प्रतीकों की प्रतीकता करें तो भारतवर्ष के ख़ास उठाए बिना दुनिया की किसी भी आक्रामक शक्तियों का मुकाबला कर सकते हैं | पहले हम ईश्वर के साम्राज्य और उसकी नेश्तक की कामना करें तो यह भावना वायदा है कि हमें सब कुछ प्राप्त हो जाएगा | यही वास्तविक अर्थशास्त्र है | आइए, हम इसकी कद्र करें और अपने जीवन में इसे स्वीकार करें | (स्पीरा, पृ. 355)

न्यूनतम हिंसा

ठीक-ठीक कहा जाए तो थोड़ी-बहुत हिंसा, उसकी मात्रा कितनी ही कम हो, के बिना कोई कार्यकलाप या कोई उद्देश्य संभव नहीं है | जीने मात्र में भी थोड़ी-बहुत हिंसा होती है | करना यह है उसकी मात्रा जितनी कम हो सके, रखें | सच्चे आदमी अहिंसा शब्द, जो कि एक नकारात्मक शब्द है, का अर्थ ही यह है कि यह जीवन में अपरिहार्य हिंसा के लिए काम का प्रयास है | इसलिए जो व्यक्ति अहिंसा में विश्वास करता है, वह ऐसे काम-धंधे को अपनाएगा जिनमें न्यूनतम हिंसा होती हो |

तदनुसार, इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती कि अहिंसा में विश्वास करने वाला व्यक्ति कसाई का काम करेगा | ऐसा नहीं है कि मांसभक्षी अहिंसक नहीं हो सकता....लेकिन अहिंसा में विश्वास रखने वाला मांसभक्षी शिकार के लिए नहीं जाएगा और वह युद्ध तथा युद्ध के तैयारियों में भाग नहीं लेगा | इस प्रकार, ऐसे बहुत-से कार्यकलाप और धंधे हैं जिनमें अविवाहित: हिंसा होती है और अहिंसक व्यक्ति को इससे दूर रहना चाहिए | लेकिन कृषि के बगैर तो जीवन नहीं चल सकता और कृषि में थोड़ी-बहुत हिंसा होती ही है | इसलिए निर्धारित बात यह है कि क्या वह ध्यान देंगे हिंसा पर आधारित है ? लेकिन चूंकि सभी कार्यकलाप में कुछ-न-कुछ हिंसा होती ही है, इसलिए हमें करना यह है कि हिंसा की मात्रा को जितना हो सके, कम रखने का प्रयास करें | इसके लिए अहिंसा में धर्म से विश्वास रखना आवश्यक है |

मान लीजिए, कोई व्यक्ति वास्तविक हिंसा नहीं करता, अपनी रोटी कमाने के लिए मेहनत भी करता है लेकिन उसके मन में सदा दूसरों की धन-संपत्ति के प्रति ईर्षा की भावना रहती है | ऐसा व्यक्ति अहिंसक नहीं कहला सकता | अत: अहिंसक व्यवसाय वह है जो मूलतः: हिंसा से मुक्त हो और जिसमें दूसरों को शोषण अथवा उनके प्रति ईर्षा का कोई स्थान न हो |
ग्रामीण अर्थशास्त्र

मेरे पास इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है, पर मेरा विश्वास है कि एक समय ऐसा था जब भारत की ग्राम अर्थव्यवस्था इसी तरह के अहिंसक काम-धंधों के आधार पर संगठित थी; वह मनुष्य के अधिकारों नहीं अपितु उसके कर्तव्यों के आधार पर टिकी थी। ऐसे काम-धंधों में लगे लोग अपनी रोटी-रोजी जरूर कमाते थे, पर उनका श्रम समुदाय की भलाई में योगदान करता था।

शारीरिक श्रम इन काम-धंधों और उद्योगों का मुख्य तत्व था और बड़े पैमाने की मशीनें तब नहीं थीं। बात यह है कि जब आदमी के पास उतनी ही जमीन होती है जितनी कि वह अपनी मेहनत से जीत सकता है तो वह दूसरे लोगों का शोषण नहीं कर सकता। हस्तशालियों में शोषण और दासता की गुंजाइश ही नहीं है।

बड़े पैमाने की मशीनें एक आदमी के हाथ में धन का केंद्रीकरण कर देती हैं जो बाकी लोगों पर हुकुम चलाता है और वे उसकी गुलामी करते हैं। हो सकता है कि वह अपने कारीगरों के लिए आदर्श परिस्थितियाँ पैदा करने का प्रयास करे, पर तब भी शोषण तो वह करता ही है जो हिस्सा का ही एक रूप है।

जब मैं कहता हूँ कि एक समय ऐसा था जब समाज शोषण पर नहीं बल्कि न्याय पर आधारित था, तो मेरे कहने का अर्थ यह होता है कि तब सत्य और अहिंसा व्यक्तियों के ही गुण नहीं थे बल्कि पूरा समुदाय उन पर आचरण करता था। मेरी दृष्टि में, उस गुण का कोई मूल्य नहीं रह जाता जो केवल व्यक्तियों तक ही सीमित हो या उस पर आचरण करना केवल व्यक्तियों के लिए ही संभव हो। (हरि, 1-9-1940, पृ. 271-72)
55. आर्थिक समानता

बुद्धि और अवसर की भी असमानता हमेशा बनी रहेगी | नदी के किनारे पर रहने वाले व्यक्ति को शुक्ल मरुस्थल में रहने वाले व्यक्ति की तुलना में फसल उगाने की निश्चित रूप से अधिक सुविधा है | लेकिन अगर इस तरह की असमानताएँ स्पष्ट रूप से स्वीकार हैं तो बुनियादी समानताएं भी उसी प्रकार स्पष्ट परिलक्षित हैं | (यंग, 26-3-1931, पृ. 49)

समाज की मेरी संकल्पना

समाज की मेरी संकल्पना यह है कि यदि हम समक्ष पैदा हुए हैं अर्थात हमें बराबर अवसर पाने का अधिकार है, पर हम सबकी क्षमता एक जैसी नहीं होती | यह स्वभावतया असंभव है | उदाहरण के लिए, सबका एक जैसा कद, रंग या बुद्धि की मात्रा और अवसर की भी असमानता हमें बनी रहेगी | नदी के किनारे पर रहने वाले व्यक्तियों की सांस्कृतिक वैश्विकता में रहने वाले व्यक्तियों की तुलना में फसल उगाने की शक्ति से अशक्त है | लेकिन अगर इस तरह की असमानताएं स्पष्ट रूप से स्वीकार हैं तो बुनियादी समानताएं भी उसी प्रकार स्पष्ट परिलक्षित हैं | (यंग, 26-3-1931, पृ. 49)

प्रतिभाशाली व्यक्ति ज्यादा योग्य होंगे और वे अपनी योग्यता का इतिहास ज्यादा पैसा कमानेवाला को मजबूत और अन्य रूप से अपनी योग्यता का उपयोग करेंगे | यदि वे अपनी प्रतिभा का इतिहास ज्यादा पैसा कमानेवाला को समझ ले तो वे राज्य के हित में कार्य करेंगे | ऐसे लोग न्यासी बनकर ही रह सकते हैं, अन्यथा नहीं | मैं बुद्धिमान व्यक्ति को अधिक कमाई करने का अवसर देना चाहता हूँ, मैं उसकी प्रतिभा का गला नहीं घोटेंगा | लेकिन उसकी अतिरिक्त कमाई का ज्यादा हिस्सा राज्य की भलाई के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जैसे कि एक पिता के सभी कमाऊ लड़कों को आमदनी पररवार के साझे कोश में जाती है | ऐसे लोग केवल न्यासी के रूप में अपनी कमाई करेंगे | (यंग, 26-11-1931, पृ. 368)

बात यह है कि मैं सबकी हैसियत बराबर कर देना चाहता हूँ | विगत शाताब्दियों में श्रमिक वर्ग को अलग-थलग करके निवास दर्जा दें दिया गया है | वे शूद्र हो गए हैं, ‘शूद्र’ शब्द को पूरी तरह हैसियत का प्रमाण मान लिया गया है | मैं बुनकर, कृषक और शूद्र अध्यापक के बच्चों में कोई भेद नहीं रहने देना चाहता | (हरर, 15-1-1938, पृ. 416)

असमता का निवारण

आर्थिक समानता से मेरा आशय यह नहीं है कि सब आदमियों के पास बिल्कुल एक बराबर पैसा होगा | इसका आशय केवल यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के पास अपनी जरूरतें के लायक पैसा होना चाहिए....आर्थिक समानता का वास्तविक अर्थ है ‘प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार’ | यही मानस की परिभाषा है | अगर अकेला
आदमी भी उतने पैसे की मांग करे जितना कि चार बच्चों वाला विवाहित व्यक्ति करे तो आर्थिक समानता का उल्लंघन होगा।

उच्च वर्गों और आम जनता तथा राजा और क्षत्रिय वाले के बीच पाए जाने वाले विशाल अंतर को कोई यह कहकर उचित न ठहराए कि उच्च वर्गों और राजाओं की जरूरतें ज्यादा हैं | यह व्यर्थ का कुर्सी और मेरे तर्क की विरोधन होगी।

आज आमी और गरीब के बीच जो विभाजन है, उसे देखकर बेहद दुख होता है | गरीब ग्रामवासियों का...उनके ही देशवासियों – शहरों के निवासियों द्वारा शोषण किया जा रहा है | ग्रामवासी अन्तर उगाता है, पर खुद भूखा है | यह व्यस्त का व्यस्त का नहीं है।

प्रथम व्यक्ति को संतुश्तता भोजन, रहने की ठीक मग्न, अपने बच्चों की शिक्षा के लिए सुविधाएं और पर्यावरण विकस्त व्यवस्था उपलब्ध होनी चाहिए।

मेरी योजना के तहत राज्य ने कर्तव्य होगा कि वह जनता की इच्छा को कायाकल्प करें, यह नहीं कि जनता पर हरकंठ कलाए या उससे बलपूर्वक अपनी इच्छा का पालन कराए। | मैं प्रथम के स्थान पर प्रेम की शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए लोगों को अपने देशकियों से सहमत करता और संकल्प आर्थिक समानता लाऊँगा। | मैं तब तक प्रत्यीक्षा नहीं करूँगा जब तक कि सारा समाज मेरे देशकियों से सहमत न हो जाए, बल्कि मैं तकाल अपने से शुरुआत कर दूंगा। | यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अगर खुद मेरे ही पास पचास मोटरकारें या दस बीघा जमीन हो तो मैं देश में आर्थिक समानता लाने की आशा नहीं कर सकता। | इसके लिए मुझे अपने आपको देश के निर्धारण व्यक्ति के स्तर तक उतारना होगा। (हरि, 31-3-1946, पृ. 63)

सबको समान अवसर मिलाने चाहिए। | अवसर दिया जाए तो हर व्यक्ति की आध्यात्मिक उपलब्धता की एक जैसी संभावना होती है। (हरि, 17-11-1946, पृ. 404)

निजी व्यक्तियों द्वारा पूंजी का संचय हिस्सक तरीकों को अपनाने दिना संभव नहीं है, लेकिन किसी अहिंसक समाज में राज्य द्वारा पूंजी का संचय न केवल संभव अपि वांछनीय तथा अपरिहार्य भी है। | किसी व्यक्ति को समाज के अन्य सदस्यों की सहायता या सहयोग से भूतिक अथवा आध्यात्मिक पूंजी का संचय करके उसे अपने निजी लाभ के लिए इस्तेमाल करने का नैतिक अधिकार नहीं है। (हरि, 16-2-1947, पृ. 25)

आज घोर आर्थिक असमानता बिखरना है | समाजवाद का आधार आर्थिक समानता है। | अन्यायपूर्ण असमानताओं की इस वर्तमान स्थिति में जिसमें मुझे भर लोग ऐश्वर्य भोग रहे हैं और आम आदमी के पास पेट भरने तक का पैसा नहीं है, रामराज्य की शापना नहीं की जा सकती। (हरि, 1-6-1947, पृ. 172)
समान वितरण का सिद्धांत
हम अपनी राष्ट्रीय शक्ति को संगठित करना चाहते हैं | यह उपायदन की सर्वोत्तम विधि की ही नहीं, बल्कि उपायदन और वितरण दोनों की सर्वोत्तम विधि को अपनाकर ही किया जा सकता है | (यंग, 28-7-1920, पृ. 5)
भारत को मुद्रित भर लोगों के हाथों में पूंजी के केंद्रीकरण की जरूरत नहीं है, बल्कि उसके इस प्रकार वितरण की जरूरत है कि वह 1900 मील लंबे और 1500 मील चौड़े इस देश के सादे सात लाख गांवों को सहज प्राप्त हो सकें | (यंग, 23-3-1921, पृ. 93)
मेरा आदर्श समान वितरण है पर जहां तक मैं देख पाता हूँ, इसे हासिल करना संभव नहीं है | इसीलिए मैं न्यायोंत्रित वितरण का प्रयास कर रहा हूँ | (यंग, 17-3-1927, पृ. 86)
समान वितरण का वास्तविक निहितार्थ यह है कि प्रत्येक के पास अपनी सभी स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन हों और बस, इससे अधिक कुछ न हो | उदाहरण के लिए, अगर किसी आदमी का हाजमा कमजोर है और उसे अपना पेट भरने के लिए सिर्फ आठ पाक आटा चाहिए और दूसरे आदमी को आधा सेर चाहिए, तो दोनों को अपनी-अपनी जरूरतों के मुद्दाबंद आटा उपलब्ध होना चाहिए |

नयी सामाजिक व्यवस्था
इस आदर्श स्थिति को प्राप्त करने के लिए समूही सामाजिक व्यवस्था का पुनर्निर्माण करना होगा | अहिंसा पर आधारित समाज किसी अन्य आदर्श का परिप्रेक्षण नहीं कर सकता | हम भले ही इस लक्ष्य को प्राप्त न कर पाएं, पर हमें इसे ध्यान में रखना चाहिए और इसके बजाय निकट पहुंच सकें, उसके लिए निरंतर प्रयास करने रहना चाहिए |
हम जितना ही इस लक्ष्य को और बढ़ाएं, हमें उतने ही अधिक संतोष और सुख की प्राप्ति होगी और उसी सीमा तक हम अहिंसक समाज की स्थापना में योगदान कर सकेंगे |
कोई भी व्यक्ति दूसरों की प्रतीक्षा किए सिवा इस जीवन-पद्धति को अपना सकता है | और यदि एक व्यक्ति आचरण के किसी नियम का पालन कर सकता है तो ऐसा करना व्यक्ति-समूह के लिए भी संभव होना चाहिए | मैं इस बात पर जोर देना जरूरी समझता हूँ कि सही रास्ता अपनाने के लिए मनुष्य को दूसरे लोगों की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है | लोगों को अगर यह लगता है कि किसी ध्येय को पूरी तरह प्राप्त नहीं कर सकते तो वे प्रायः उसकी ओर बढ़ने की शुरुआत करने से हिचकते हैं | मन की यह वृत्त वस्तु: प्रगति के मार्ग में बाधक है |

अहिंसा के जरिए
अब यह विचार करें कि अहिंसा के जरिए समान वितरण कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है ? जिस व्यक्ति ने इस आदर्श को अपने जीवन का अंग बना लिया हो, उसे पहला कदम तो यह उठाना चाहिए कि अपने व्यक्तिगत
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

जीवन में आवश्यक परिवर्तन लाए | वह भारत की गरीबी को ध्यान में रखते हुए, अपनी जरूरतों में ज्यादा-से-ज्यादा कमी कर देगा | उसकी कमाई में बेरीमानी का कोई योग नहीं होगा | वह सट्टे की इच्छा का परिवर्तन कर देगा | उसका निवास उसकी नयी जीवन-पद्धति को प्रतिबिंबित करेगा | वह जीवन के हर क्षेत्र में आत्मसंयम से काम लेगा | जब वह अपने जीवन में ये सभी परिवर्तन ले आएगा तब वह इस योग्य बनेगा कि अपने साथियों और पड़ोसियों के बीच अपने आदर्श का प्रचार कर सके |

सच पूछा जाए तो समाज वितरण के सिद्धांत की जड़ में धनवानों की अपनी अनावश्यक धन-संपत्ति की न्याशता का सिद्धांत हो जाएगा अतृप्त, क्योंकि इस सिद्धांत के अनुसार उनके पास अपने पड़ोसियों की तुलना में एक रुपया भी ज्यादा नहीं होना चाहिए |

इसे किस तरह किया जाए ? अहिंसक उपायों से या धनी लोगों से उनकी दीक्षा छीनकर ? ऐसा करने के लिए तो स्वभावतः इसे हिस्सा का सहारा लेना होगा | और, हिंसक कार्रवाई से तो समाज का हित नहीं होगा | इससे तो समाज की हानि ही होगी, क्योंकि वह ऐसे आदमी की योग्यता से बंचत हो जाएगा जिसे धन का संचय करना आता है | इसलिए अहिंसक उपाय निष्ठुर रूप से बेहतर है | धनवान को अपनी संपत्ति अपने अधिकार में रखने की छूट होगी, पर वह उसमें से उतनी की ही इस्तेमाल करेगा जितनी उसकी निजी आवश्यकताओं के लिए जरूरी है और शेष के लिए वह न्यासी के रूप में काम करेगा और उसका इस्तेमाल समाज के हित के लिए करेगा | इसमें हम यह मान कर चलें हैं कि न्यासी इमानदारी से काम करेगा | मानव प्रकृति में परिवर्तन

ज्यों ही मनुष्य स्वयं को समाज का सेवक मानने लगता है, समाज के लिए ही कमाता है और उसी के हितार्थ व्यय करता है, उसकी कमाई में शुद्धता का प्रवेश होने लगता है और उसका उपक्रम अहिंसा से युक्त हो जाता है | इसके अलावा, अगर लोगों के दिमाग इस जीवन-पद्धति की ओर मुड़ने लगें तो समाज में कट्टरता उत्पन्न हुए बगैर एक शांतिपूर्ण क्रांति हो जाएगी |

यह पूछा जा सकता है कि क्या इतिहास में इसका उल्लेख है कि मानव प्रकृति में भी इस तरह का परिवर्तन आया हो ? व्यक्तियों के जीवन में तो ऐसे परिवर्तन निष्ठुर रूप से हुए हैं | लेकिन समूहों के जीवन में ऐसा हुआ है, इसके उदाहरण शायद न मिलें | लेकिन इसका कारण यही है कि अहिंसा को लेकर बड़े पैमाने पर अभी तक कभी प्रयोग नहीं किया गया है |

अहिंसा पर अमल

पता नहीं कैसे हमारे मन में यह गलत बात बैठ गई है कि अहिंसा मुख्यतः व्यक्ति का हथियार है और इसलिए उसका प्रयोग व्यक्ति तक ही सीमित रखा जाना चाहिए | पर वास्तव में ऐसा है नहीं | अहिंसा निष्ठुर रूप से समाज का गुण है | लोगों को इसी सत्य की प्रतीति कराने के लिए मैं प्रयास और प्रयोग कर रहा हूँ |
आक्षणों के इस युग में यह कोई नहीं कह सकता कि कोई वस्तु या विचार इसलिए बेकार है कि वह नया है | यह कहना भी आज के युग की भावना के अनुकूल नहीं है कि यह इसलिए असंभव है क्योंकि इसे प्राप्त करना कठिन है | जिन चीजों की स्वरूप में भी कल्पना नहीं की जा सकती थी, वे रोज सामने आ रही हैं; असंभव बातें बराबर संभव होती जा रही हैं | हंसा के क्षेत्र में आजकल ऐसी-ऐसी विस्मयकारी खोजें हो रही हैं जिनके बारे में जानकर हमें चकित होना पड़ता है | मेरा कहना है कि अहिस्ता के क्षेत्र में भी अकल्पनीय और असंभव लगने वाली खोजें होंगी | धर्म का इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है....

लेकिन अधिकतम प्रयास के बावजूद अगर धनवान सही अर्थों में गरीबों के अभिभावक बनने को तैयार नहीं होते और गरीबों को अधिकाधिक कुचला जाता है और वे भुखमरी के शिकार बनते हैं तो क्या करना होगा ? इस पहली को सुलझाने की कोशिश करते-करते मुझे दो सही और अनूठे उपाय सूझे हैं और ये हैं आहिस्ता असहयोग तथा सहनयोग अवज्ञा | धनी लोग समाज के गरीबों के सहयोग के बिना धन-संपत्ति का संचय नहीं कर सकते |

आदमी शुरू से ही हिंसा से परिवर्तित है, क्योंकि उसने यह शक्ति अपने भीतर बैठे पशु से विरासत में पाई है | अहिस्ता का ज्ञान उसकी आत्मा में तभी जगा जब वह चीपाए (पशु) से दुरंपया (मनुष्य) बना | उसके भीतर इस ज्ञान का विकास थीर-थीरे पर निश्चित रूप से हुआ है | अगर यह ज्ञान गरीबों के जीवन में प्रवेश करके उनके भीतर प्रसार या जाए तो वे मजबूत बन जाएंगे और अहिस्ता के जरिए स्वयं को उन भयंकर असमानताओं से मुक्त करा सकेंगे जिन्होंने उनको भूखमरी के कगार पर ला खड़ा किया है | (हरर, 25-8-1940, प. 260-61)
11. ब्रह्मचर्य

56. ब्रह्मचर्य का दिव्य संदेश

आत्मसंयम

मानव समाज एक अविरत संबंधि है; आध्यात्मिक दृष्टि से कहें तो क्रमश: विकसित होने की प्रक्रिया है | अगर ऐसा है तो यह निष्ठि रूप से देख की आवश्यकताओं को अधिकारक संयमित करने पर आधारित होना चाहिए | तदनुसार विवाह को एक ऐसा संस्कार मानना चाहिए जो पति-पत्नी की अनुमति करना है, उन्हें केवल आपस में ही शरीर-संबंधित रखने के लिए प्रतिबिधित करता है और वह भी केवल संतानोपति के लिए और तब जबकि पति-पत्नी दोनों उसके लिए इच्छुक और रायहों | (यंग, 16-9-1926, पृ. 324)

पशु और मनुष्य के बीच मुख्य अंतर यह है कि मनुष्य होश संभालते ही सतत आत्मसंयम का जीवन जीना शुरू कर देता है | ईश्वर ने मनुष्य को यह बुद्धि दी है कि वह अपनी मां, अपनी बेटी और अपनी पत्नी के बीच भेद कर सके | (विगारसी, छ. 84)

ब्रह्मचर्य की आवश्यकता

अगर हम स्त्री-पुरुषों के परस्पर संबंधों को स्वस्थ और सुदृढ़ दृष्टि से देखने लगें और स्वयं को भावी पीढ़ियों के नैतिक कल्याण का न्यासी समझने लगें तो आज के अनेक दुखों को दूर किया जा सकता है | (यंग, 27-9-1928, पृ. 324)

ब्रह्मचर्य के बिना मुझे जीवन फीका और पशुवत प्रतीत होता है | पशु स्वभाव से ही आत्मसंयम नहीं जानता | मनुष्य इसीलिए मनुष्य है कि वह जितना चाहे उतना आत्मसंयम बरतने में समर्थ है | जो पहले मुझे अपनी धार्मिक पुस्तकों में ब्रह्मचर्य की अतिरिक्त प्रारंभ प्रतीत होती थी, वही आज अधिकारिक पद्धता के साथ, पूर्णता: उचित और अनुभवबहित लगती है | (ए, पृ. 234)

मेरी पक्की धारणा है कि आध्यात्मिक पूर्णता की प्राप्ति के लिए जीवन में मनसा, वाचा, कर्मणा पूर्ण आत्मनिरूप शा होना आवश्यक है | और जिस राष्ट्र में ऐसे लोग नहीं हैं, वह इस अभाव की वजह से दरिद्रतर राष्ट्र है | (यंग, 13-10-1920, पृ. 3)

ईश्वर में आस्था

मैं यह मानता हूँ कि निन्द्र के नियम का पालन तब तक अंशभव है जब तक कि मनुष्य को ईश्वर में, जो जीवंत सत्य है, जीवंत आस्था न हो | आजकल ईश्वर के अस्तित्व को पूरी तरह नकारने और इस बात पर बल देने का फैशन है कि जीवन के उच्चतम स्तर की उपलब्धि के लिए जीवंत ईश्वर में जीवन आस्था का होना जरुरी नहीं है | मैं इस बात को स्वीकार करता हूँ कि जिन लोगों को अपने से अत्यंत उच्च किसी शक्ति में आस्था नहीं है और
जिन्हें उसकी आकृतियों का महसूस नहीं होता, उन्हें इस नियम की सत्यता को मनाने का सामर्थ्य मुख्यमें नहीं है।

मेरे निजी अनुभव ने मुझे यह ज्ञान दिया है कि संपूर्ण ब्रह्मांड को संचालित करने वाले जीवत नियम में अंडिग आत्मा रखे बौद्ध जीवन की पूर्णता को प्राप्त नहीं किया जा सकता। (हरर, 25-4-1936, पृ. 84)

उस जीवन का जिसे हम ईश्वर कहते हैं... जानने का उपाय यह है कि हम उस नियम को जानने और उसका अनुगमन करने जिससे हमें अपने अंदर ईश्वर की उपस्थिति का बोध होता है। लेकिन यह स्वतंत्रता है कि ईश्वरीय नियम को जानने के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ता है। इस नियम के, एक शब्द में, 'ब्रह्माचर्य' कहा जा सकता है।

ब्रह्माचर्य के पालन का सबसे सीधा रास्ता रामनाम है। (यंग, 5-6-1924, पृ. 186)

ब्रह्माचर्य क्या है? यह ऐसी जीवन-पद्धति है जो हमें ईश्वर (ईश्वर) से मिलाती है। इसमें प्रजनन-क्रिया पर पूरा नियंत्रण सम्मिलित है। यह नियंत्रण मनसे, वाचा, कर्मणा होना चाहिए। यदि मन पर नियंत्रण न हो तो वाणी और कर्म पर नियंत्रण पाने का कोई मूल्य नहीं है। हिंदुस्तानी में एक कहावत है: जिसका हृदय शुद्ध है, उसके पास गंगा का सर्वप्रियज्ञारी जल निवास करता है। यह बात है कि जिसका मन पर नियंत्रण है उसके लिए वाणी सब कुछ मात्र बच्चों का खेल है।

इसका अर्थ यह है कि अतिरिक्त रक्षा की पूर्णता रखने के उद्देश्य से उसे थकान नहीं होगी। मानसिक और शारीरिक श्रम से उसे थकान नहीं होगी। वह सदा तेजस्वी दिखाई देगा। अतृप्त उसके पास भी नहीं फटकेगा। उसकी बाह्य स्वच्छता उसकी आंतरिक स्वच्छता की पूर्णता प्रतिष्ठित करेगी।

गीता में स्थितिप्रज्ञ के जो गुण बताए गए हैं, उसमें वे सबी दिखाई देंगे। उसे चिंता नहीं अगर एक भी व्यक्ति ऐसा दिखाई देगा। जो इस प्रकार के गुणों से युक्त हो।

क्या यह आकृति का विषय है कि जो व्यक्ति मानव के सृजन में समर्थ वीर्य की पूर्णता रखकर उद्देश्यों का बनाना नहीं होगा, उसमें उपर बताए गए भी गुण दिखाई देंगे? उस उद्देश्यों की जीवन की सृजनात्मक शक्ति का कौन माप सकता है? (हरर, 8-6-1947, पृ. 180)
भाषाया

महात्मा गांधी के विचार

जब तक मन पूर्णतया इच्छाशक्ति के वश में नहीं हो जाता तब तक पूर्ण ब्रह्मचर्य की प्राप्ति संभव नहीं है | अनैस्थ्यक विचार मन की एक प्रवृत्ति है, इसलिए विचार पर नियंत्रण पाने का मतलब है मन को नियंत्रित करना जो वायु को नियंत्रित करने से भी अधिक कठिन है | फिर भी, अंतःकरण में इंतज़ार का अस्तित्व मन को नियंत्रित करना भी संभव बना देता है | कोई यह न समझे कि चूंकि यह कठिन है इसलिए यह असंभव है | यह उच्चतम लक्ष्य है, अतः इसमें आक्ष्य की कोई बात नहीं है कि उसकी प्राप्ति के लिए प्रयास भी अधिकतम करना पड़ता है |  
(ए, पृ. 153)

मन

अन्य नियमों की भांति ब्रह्मचर्य का पालन भी मनसा, वाचा, कर्मणा किया जाना चाहिए | गीता में बताया गया है, और अनुभव इस कथन की पुष्टि करता है, कि जिसने प्रकट रूप में अपनी देह पर नियंत्रण पा लिया है पर मन में कुवियारों को पालता रहता है, उसकी साधना व्यर्थ है | अगर मन इंद्र-उद्धर भटक रहा है तो देह का दमन करना हानिकारक सिद्ध हो सकता है | जिधर मन जा रहा है, उधर देह भी देर-सवेर जाएगी ही....

मन को कलुभित विचार पालने देना और बात है और हमारे प्रयासों के बावजूद मन का उनमें भटकना बिलकुल दूरस्थ बात है | अगर हम मन की कलुभित भटकनों के साथ असहयोग करने लगे तो अंत में हम विजयी होंगे |  (फ्यूम, पृ. 12-13)

आंतरिक दशा

ब्रह्मचर्य एक मानसिक दशा है | नमुना का बाह्य आचरण उसकी आंतरिक दशा का तक्ताल पता और प्रमाण देता है | जिसने अपनी कामवासना को मार दिया है, वह कितनी भी रूप में कभी उसका दोषी नहीं पाया जा सकता | कितनी भी सुंदर स्त्री हो, पर वह इस व्यक्ति को आक्षेपित नहीं कर पाएगी जिसमें कामवासना है ही नहीं | यह बात स्त्री पर भी लागू होती है....

ब्रह्मचर्य ऐसा गुण नहीं है जिसका विकास बाह्य निग्रहों से किया जा सके | जो व्यक्ति स्त्री के अपरिहार्य संपर्क से भी दूर भागता है, वह ब्रह्मचर्य के संपूर्ण अर्थ को नहीं समझता....

सच्चा ब्रह्मचारी झूठे निग्रहों से दूर रहेगा | उसे अपनी सीमाओं को ध्यान में रखते हुए अपने बचाव की विधियां स्वयं ही निर्धारित करनी होंगी और जैसे-जैसे वे अनावश्यक लगती जाएं, उन्हें छोड़ देंगे जाना होगा | पहली चीज़ तो यह है कि आदमी यह जाने कि सच्चा ब्रह्मचारी क्या है, फिर उसका मूल्य पहचानने और अंत में, इस अमूल्य गुण को विकसित करने का प्रयास करे | मेरी धारणा है कि इस देश की सच्ची सेवा करने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है |  (हरि, 15-6-1947, पृ. 192)
इंद्रियों का नियंत्रण

...लोग यह समझते रहे हैं कि कामवासना पर नियंत्रण पाना ही ब्रह्मचर्य का पालन है। मैं समझता हूँ कि यह धारणा अधूरी ओर गलत है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है सभी इंद्रियों का नियंत्रण। जो केवल एक इंद्रिय को नियंत्रित करने का प्रयास करता है और शेष को मनमानी करने देता है, वह नियंत्रित ही अपने प्रयास में असफल हो जाएगा।

कानों से अश्लील कहाश्चन्द्रा सुनना, आंखों से अश्लील दृश्य देखना, उत्तेजक भोजन करना, हाथ से उत्तेजक चीज़े खा और फिर भी, बाकी बची एक इंद्रिय का नियंत्रण करने में सफल होने की आशा करना तब तक ही है जैसा आग में हाथ डालकर जलने से बचने की कोशिश करना। इसलिए जो उस एक इंद्रिय पर नियंत्रण पाने का संकल्प करता है, उसे शेष सभी को नियंत्रित करने का भी हड़ संकट लेना होगा।

मैंने सदा यह अनुभव किया है कि ब्रह्मचर्य की संकुचित परिभाषा से बड़ी हानि हुई है। यदि हम सभी दिशाओं में एक साथ नियंत्रण करने का प्रयास करें तो वह उपाय वैज्ञानिक तरीका होगा और उसकी सफलता की संभावना ज्यादा होगी। रसनें इंद्रिय का नियंत्रण कदाचार है। यदि हम सभी इंशद्रयों में एक साथ नियंत्रण करने का प्रयास करें तो वह ज्यादा वैज्ञानिक तरीका होगा और उसकी सफलता की संभावना ज्यादा होगी।

स्थितप्रश्न

स्थितप्रश्न के लक्षण....क्या हैं? स्थितप्रश्न वह है जो अपनी इंद्रियों के विषयों से समेटकर उन्हें उसी प्रकार अपनी आत्मा की ढाल के पीछे करता है जिस प्रकार कहा अपने अंगों को अपने अंदर समेटता है। जिसकी बुद्धि स्थिर नहीं है, वह क्रोध, कूदियाँ अथवा अपशब्दों का शिकार हो सकता है। इसके विपरीत, स्थिर बुद्धि का व्यक्ति प्रथम से अपशब्दों से समान रूप से अपभ्रंशित रहता है। वह जानता है कि अपशब्द उस जिह्वा को ही कलुप्त करते हैं जो उन्हें निकालती है, उसे कभी नहीं जिसके विरुद्ध वे कहे जाते हैं। इसलिए स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति कभी किसी की बुराई नहीं चाहेगा और अपनी अंतिम श्वास तक अपने शत्रु के लिए भी प्रार्थना करेगा।

मेरा ब्रह्मचर्य

मेरे लिए तो काफी कल्पित ब्रह्मचर्य का पालन भी बड़ा कठिन सिद्ध हुआ है। आज मैं कह सकता हूँ कि मैं स्वयं को काफी सुरक्षित अनुभव करता हूँ, लेकिन मुझे अभी अपने विचारों पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करना है, जो बड़ा आवश्यक है। ऐसा नहीं है कि मेरे अंदर इच्छा अथवा प्रयास की क्रिया है, पर मैं अब तक यह नहीं जान सका हूँ कि अवांछनीय विचार कहाँ से आकर हम पर चढ़ाई कर देते हैं।

मुझे इसमें संदेह नहीं है कि अवांछनीय विचारों को नियंत्रित करने का भी कोई उपाय अवश्य है, पर यह प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं दूर रखना पड़ता है। संतों और औषधियों ने हमारे लिए अपने अनुभव तो छोड़े हैं, पर उन्होंने कोई
अचूक और सार्वभौम उपचार नहीं बताया है | बात यह है कि पूर्णता अर्थात व्यूर्वरित होने की स्थिति केवल प्रभुक्षण से प्राप्त होती है और इसलिए भागवताप्रिय का प्रयास करने वाले ऋषि अपनी तपश्चय के लिए सच्च्च प्राप्त करके रामनाम जैसे मंत्र हमारे लिए छोड़ गए हैं।

अपने को पूरी तरह ईश्वराप्रिय किए बिना विचारों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करना असंभव है | प्रत्येक महान धर्मग्रंथ का यही उपदेश है और पूर्ण ब्रह्मचर्य के लिए प्रयास करते हुए मैं प्रतिक्षण इसकी सत्यता का अनुभव कर रहा हूं।

(पृ. 234)

सक्रिय जीवन के बीच रहते हुए मैंने पिछले तीस से अधिक वर्षों से पर्याप्त सफलता के साथ ब्रह्मचर्य का पालन किया है | ब्रह्मचारी का जीवन जीने का निर्णय लेने के उपरांत अपनी पत्नी के प्रति मेरे आचरण को छोड़कर, मेरे बाह्य आचरण में शायद ही कोई अंतर आया हो।

मेरा ब्रह्मचर्य किंतु से लिया गया नहीं है | मैंने अपने और, मेरे आयार पर, इस प्रयोग में समिलित होने वाले अपने साधियों के लिए मार्गदर्शक नियम स्वयं बनाए | न सिर्फ यह कि मैंने पूर्वनिशीरित नियमों को नहीं माना है, बल्कि मैंने इस कथन को भी नकार दिया है कि स्वभाव में मुझे खान या प्रलोभनों की जड़ है, हालांकि इसका उल्लेख धार्मिक पुस्तकों तक हमें मिलता है। बात यह है कि मेरे पास जो भी अच्छा था, उसका आचरण मेरे मां के समान ही पूर्ण माना है | पूर्ण ही प्रलोभन देता है, पूर्ण ही आक्रामक है | स्त्री का स्पर्श पूर्व को भ्रष्ट नहीं करता, पूर्ण प्राय: स्वयं ही इतना आपविष्ट होता है कि स्त्री का स्पर्श करने योग्य नहीं रह जाता।

मैं प्रयोगरत हुं | मैंने यह दावा कभी नहीं किया कि मैं अपनी रचनाओं के अनुसार अनुसार वे भ्रष्ट कर चुका हुं | मुझे अपने विचारों पर उत्तर नियंत्रण प्राप्त नहीं हो सकता है कि उसके प्रति मेरे आचरण का साधन वह था, यदि मेरी अहिंसा को संसार के सभी साधनों का आपदम नहीं मानाना है।

जिस दिन मैंने ब्रह्मचर्य की शुरुआत की, हम स्वतंत्र होने लगे | मेरी पत्नी एक स्वतंत्र स्त्री बन गई, उसके स्वामी के रूप में मैं उस पर जो अधिकार चलाता था उससे वह मुक्त हो गई और मेरी उस भूख की गुलामी से छुटकारा पा गई जिसकी धृति का साधन वह थी | किसी अन्य स्त्री के प्रति मेरे मान में उस तरह का आकर्षण नहीं था जैसा कि अपनी पत्नी के प्रति था | मैं अपनी पत्नी के प्रति इतना नेरित था और अपनी मां के सामने जितने भी कहा, मेरा ब्रह्मचर्य जिस रूप में उसने मिला, उससे में स्त्री को मनुष्य की मां समझते हुए उसकी ओर अपनी रीत बदलकर खिचता चला गया | वह मेरे
लिए इतनी पवित्र हो गई कि भोग की वस्तु कदापि नहीं बन सकती थी | और इस प्रकार, हर स्त्री तकाल मेरे लिए मेरी बहिन अथवा बेटी बन गई | ( हरि, 4-11-1939, पृ. 326 )

अगर मैं स्त्रियों के प्रति योगार्पण का अनुभव करता तो मुझमें इतना साहस था कि, इस उम्र में भी, बहुविवाह करने से न चूकता | मुझे स्वच्छंद प्रेम – वह प्रकट हो अथवा गुप्त – में विश्वास नहीं है | स्वच्छंद और प्रकट प्रेम को मैं कुश्ती की वासना का दर्जा देता हूँ | और गुप्त भोग तो, उसके अलावा, कायरतापूर्ण भी है | (वही)
57. विवाह का आदर्श

विवाह का आदर्श है शारीरिक समिलन के माध्यम से आध्यात्मिक समिलन की प्राप्ति | विवाह के फलस्वरूप जिस मानव प्रेम की अवतारणा होती है, वह दिव्य अथवा सार्वभौम प्रेम तक पहुंचने की एक सीढ़ी है | (यंग, 21-5-1931, पृ. 115)

पूर्ण स्वाभाविक ब्रह्मचर्य एक आदर्श स्थिति है | यदि आपमें उसे हासिल कर सकने का साहस नहीं है तो विवाह अवश्य कीजिए, पर कम-से-कम आस्मानियांत्र से तो रहिए | (हरर, 7-9-1935, पृ. 234)

पूर्ण ब्रह्मचर्य अथवा विवाह विवाह उनके लिए है जो आध्यात्मिक अर्थात उच्चतर जीवन जीने के आकांक्षी हों; इस तरह के जीवन के लिए ब्रह्मचर्य का पालन अवश्यक है | (हरर, 5-6-1937, पृ. 134)

विवाह जीवन की एक स्वाभाविक चीज़ है और इसे किसी भी अर्थ में अपकर्षकारी समझना बिलकुल गलत है...आदर्श स्थिति यह है कि विवाह को एक पवित्र संबंध माना जाए और विवाहित अवस्था में आत्मसंयम के साथ जीवन व्यतीत किया जाए | (हरर, 22-3-1942, पृ. 38)

कामवासना की तुल्य के लिए किया गया विवाह, विवाह नहीं है | वह व्यक्तिकर है | 23 (हरर, 24-4-1937, पृ. 82)

मनु ने पहली संतान को धर्मज कहा है – धर्मज अर्थात कर्तव्य के निवाह के लिए उपन्यास की गई संतान; और उसके बाद की संतानों को कामज – अर्थात वासना से उपन्यास | संक्षेप में, यही मौन संबंधों का नियम है | और ईश्वर यदि नियम नहीं तो और क्या है ? ईश्वर के आत्मा का पालन नियम का पालन ही है | (हरर, पृ. 83)

कामवासना की तुल्य के लिए किया गया संभोग पशु की ओर प्रयावर्तन है, अतः मनुष्य को इससे उपर उठने का प्रयास करना चाहिए | लेकिन पति-पत्नी यदि ऐसा करने में असफल हो जाएं तो इस पार अथवा कर्म का विषय नहीं माना जा सकता | दुनिया में करोड़ों लोग अपनी रसना की तुल्य के लिए खाते हैं; इसी प्रकार, करोड़ों पति-पत्नी अपनी वासना की तुल्य के लिए संभोग करते हैं और करते रहते जिसके लिए वे असंख्य विपिनों के रूप में कठोर दंड के भागी होते रहते जो प्रकृति अपनी व्यवस्था का किसी भी प्रकार से उल्लंघन करने वालों को देती है | (हरर, 5-6-1937, पृ. 134)

पति-पत्नी के बीच का निष्कलक प्रेम मनुष्य को जिस प्रकार ईश्वर के निकट ले जाता है, उस प्रकार कोई और प्रेम नहीं ले जा सकता | जब इस निष्कलक प्रेम में कामासक्ति आ मिलती है तो यह हमें अपने ईश्वर से दूर ले जाती है | इसीलिए यह प्रश्न विचारणीय है कि अगर कोई काम-चेतना और काम-संबंध न हो तो क्या तब भी विवाह की आवश्यकता है ? (हरर, 19-10-1947, पृ. 374)
विवाह का ध्येय
जो विवाह संयुक्त रूप से सेवा करने के लिए किए जाते हैं, उनकी अपनी अच्छाइयां हैं | जो विवाह आत्मसृष्टि के लिए किए जाते हैं, वे बिलकुल व्यर्थ हैं | (हरि, 19-5-1946, पृ. 133)

विवाह का सच्चा उद्देश्य पुरुष और स्त्री के बीच घनिष्ट मित्रता और सहचरीता स्थापित करना है | इसमें कामवासना की तुष्टि के लिए कोई स्थान नहीं है | वह विवाह विवाह नहीं है जो कामेच्छा की तुष्टि के लिए किया गया हो | कामेच्छा की तुष्टि सच्छी मित्रता का खंडन है | (हरि, 7-7-1946, पृ. 214)

मैं अंग्रेजों के बीच संपन्न ऐसे विवाहों के विषय में जानता हूँ | जो सहचरीता और परस्पर सेवा की खातिर किए गए थे | यदि मेरे विवाहित जीवन की चर्चा को अप्रासंगिक न माना जाए तो मैं यह बताया चाहूंगा कि मैंने और मेरी पत्नी ने विवाहित जीवन की सच्ची बुद्धि का स्वाभाविक जब हमने योग किया बनाने के लिए किया | और वह भी भी भारतीय में | तभी जाकर हमारी सहचरीता का फूल खिला और हम दोनों भारत तथा व्यापक मानवता की सच्ची सेवा करने योग्य बन सके ....

यह सही है कि असंख्य विवाह सामान्य रूप से होते हैं और होते रहेंगे | इनमें विवाह के भौतिक पक्ष को अधिक प्रधानता दी जाती है |

असंख्य व्यक्ति अपनी रसना की तुष्टि के लिए खाते हैं, पर इस कारण यह मनुष्य का कर्त्तव्य नहीं हो जाता | बहुत थोड़े लोग जीवित रहने के लिए खाते हैं, पर वे ही हैं | जो सबमुख भोजन के नियम को जानते हैं | इसी प्रकार, उन्हीं होंगे जो विवाहित जीवन की शुद्धता और पवित्त्रता का अनुभव करने और उसमें निहित देवत ने दिया के लिए विवाह करते हैं | (वही)

वैवाहिक संबंध

पत्नी पति की क्रीदासी नहीं हैं | अपितु उसकी सहचरी और सहायिका है और उसकी खुशियों और गमों में बराबर की उपयोगी है | वह अपना रास्ता चुनने के लिए उनकी खूबसूरती के लिए विवाह करते हैं | (ए, पृ. 18)

मेरी दृष्टि में, विवाहित अवस्था उसका उपरांत अनुशासन की एक अवस्था है | जो कोई अन्य अवस्था हो सकती है | जीवन एक कर्त्तव्य है, एक परविवेकात्मक है | विवाहित जीवन का उद्देश्य इस जन्म में और उसके बाद भी, परस्पर हित को बढ़ावा देना है | इसकी उद्देश्य मानवता की सेवा भी है |

यदि एक साथी अनुशासन को ठोड़े तो दूसरे को विवाह-बंधन को ठोड़े का हक पहुँचता है | यहां 'तोड़ना' नैतिक अर्थ में है, भौतिक अर्थ में नहीं | इसमें तलाक का स्थान नहीं है | पति या पत्नी उस ध्येय की पूर्ति के लिए अलग होंगे जिसके लिए वे विवाह-बंधन में बंधे थे |
हिंदू धर्म सबको बिलकुल एक बराबर मानता है। इसमें संदेह नहीं कि व्यवहार में जाने कब से कुछ और बात पैदा हो गई है। और भी बहुत-सी बुराइयां चुपचाप घुस आई हैं। पर मैं एक बात जानता हूँ – हिंदू धर्म प्रत्येक व्यक्ति को आस्थितिक के लिए, जो उसके जीवन का एकमात्र प्रयोजन है, जो वह चाहे, उसे करने की पूरी-पूरी छुट देता है। (यंग, 21-10-1926, पृ. 365)

मैं सीता को आदर्श पत्नी मानता हूँ। और राम को आदर्श पति। लेकिन सीता राम की दासी नहीं थी। या यह भी कहा जा सकता है कि दोनों एक-दूसरे के दास थे। राम सदा सीता का शलहाज करते थे। (वही, पृ. 364)

तुम्हें अपनी पत्नी के सम्मान की रक्षा करनी चाहिए और स्वयं को उसका स्वामी न मानकर मित्र मानना चाहिए। तुम्हें उसके शरीर और उसकी आत्मा को उसी प्रकार पतित मानना चाहिए किस प्रकार मेरा विश्वास है कि वह तुम्हारे शरीर और तुम्हारी आत्मा को मानती है। इसके लिए तुम्हें भक्तिमय श्रम, सादगी और आत्मसंयम का जीवन जीना होगा। तुम्हें से कोई भी दूसरे को अपनी वासना का पात्र न समझे। (यंग, 2-2-1928, पृ. 35)

मैं मानता हूँ कि पति-पत्नी के बीच कोई बात गुप्त नहीं रहनी चाहिए। ये मेरी धारणा है कि पति-पत्नी को एक-दूसरे में विलीन हो जाना चाहिए। वे एक आत्मा और दो शरीर होकर रहें। (हरर, 9-3-1940, पृ. 30)

जबरन विवाह

माता-पिताओं का अपनी बेटियों का जबरन विवाह करना सरासर गलत है। उनका अपनी बेटियों को जीविकोपार्जन के योग्य न बनाना भी गलत है। किसी पिता को इस बात का अधिकार नहीं है कि बेटी द्वारा विवाह के लिए इंकार कर देने पर उसे घर से निकाल दे। (हरर, 15-9-1946, पृ. 311-12)

सिविल विवाह

मूंझे सिविल विवाहों में विश्वास नहीं है। लेकिन सुधार की खातिर, सिविल विवाह की संस्था को एक जरूरी सुधार मानकर मैं इसका स्वागत करता हूँ। (हरर, 16-3-1947, पृ. 68)
58. बच्चे

यदि मैं भारत के, और भारत ही क्यों बल्कि मेरी शक्ति हो तो समूहे संसार के, निम्नतम व्यक्ति की व्यथा के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहूँ तो मुझे उन बच्चों के दोषों के साथ तादात्म्य करना चाहिए जो मेरी देखरेख में हैं। परम विनिमय के साथ ऐसा करने हुए मुझे आशा है कि मैं किसी दिन ईश्वर – अर्थात सत्य – का साक्षकार कर सकूँगा। (यंग, 3-12-1925, पृ. 422)

चरित्र

बच्चों को विरासत में अपने माता-पिता का रंग-रूप ही नहीं मिलता, उनके गुण भी मिलते हैं। वातावरण की भूमिका भी महत्वपूर्ण है किंतु बच्चा अपना जीवन जिस मूल पूंजी को लेकर आरंभ करता है, वह उसे अपने पूर्वों से विरासत में मिली होती है। मैंने बहुत से बच्चों को अपनी दोषयुक्त विरासत के प्रभाव पर सक्रियता पूर्वक पाते हुए देखा है। लेकिन इसका श्रेय उस शुद्धता को है जो आत्मा का सहज गुण है। (ए, पृ. 230)

ऐसा नहीं है कि रूई में लिपटे बच्चे सदा ही रूढ़िवाला अथवा संक्रमण से मुक्त रहते हों। (वही, पृ. 252)

कोई पिता अपने सभी बच्चों को यदि कोई वास्तविक संपत्ति बराबर-बराबर हस्तांतरीत कर सकता है तो वह है उसका चरित्र और शैक्षिक सुविधाएं। माता-पिता को चाहिए कि अपने बच्चों को आत्मनिर्भर बनाए। ताकि वे शारीरिक श्रम के द्वारा ईमानदारी से जीविकोपार्जन के योग्य बन सकें। (यंग, 17-10-1929, पृ. 340)

बच्चों के लिए सबक

मुझे पूरी विनिमय के साथ इस सच्चाई को मानना होगा कि मैं अपने अस्तित्व के प्रत्येक तंतु में प्रेम की इलाक पैदा करने का प्रयास करता हूँ, भले ही मैं इसे कितने ही तटस्थ भाव से करूँ। मैं अपने सिरजनहार की, जो सत्य स्वरूप है, उपस्थिति का अनुभव करने के लिए अर्थी हूँ, और मैं अपने जीवन के आरंभिक वर्षों में ही जान लिया था कि अगर मुझे सत्य की पाना है तो मुझे अपनी जान की परवाह न करते हुए प्रेम के नियम का पालन करना चाहिए। प्रभुकृपा से जब मुझे संतान की प्राप्ति हुई तो मैंने पाया कि प्रेम के नियम को छोटे बच्चों के द्वारा ही सबसे अच्छी तरह समझा और सीखा जा सकता है।

मैं निर्विवाद रूप से इसमें विश्वास करता हूँ कि कोई बच्चा बदमाशी की वृत्ति लेकर पैदा नहीं होता। यदि बच्चे के जन्म से पहले और उसके उपरांत, जब वह बढ़ रहा हो, उसके माता-पिता उसके साथ ठीक से व्यवहार करें तो यह सुविदित तथ्य है कि बच्चा सहज रूप से सत्य के नियम और प्रेम के नियम का पालन करने लगेगा। अपने जीवन के आरंभिक वर्षों में जब मैंने यह सबक सीखा तो जीवन में धीरे-धीरे किंतु एक निश्चित परिवर्तन आने लगा....
विश्वास कीजिए, मैं सैकड़ों नहीं हजरों बच्चों के निजी अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ कि हमारी अपेक्षा बच्चों में आत्मसम्मान की बड़ी सूक्ष्म अनुभूति होती है | अगर हममें विनिमय हो तो हम जीवन के महानतम पाठ तथाकथित अभोध बच्चों से सीख सकते हैं, उनके लिए बड़ी उमर के विद्वानों के पास जाने की आवश्यकता नहीं है ।

ईसा ने इससे ऊंचे और महान सत्य की बात कोई नहीं कही कि ज्ञान की बातें भोले-भाले बच्चों के मुंह से फूटती हैं | मैं इससे पूरी तरह सहमत हूँ | मैंने अपने अनुभव में यह बात पाई है कि अगर हम विनिमय और भोलेपन के साथ बच्चों से बात करे तो उनसे ज्ञान का पाठ पढ़ सकते हैं....

यदि हमें इस संसार में सच्ची शांति प्राप्त करनी है और युद्ध के खिलाफ सच्ची लड़ाई लड़नी है तो हमें बच्चों से शुरुआत करनी होगी, और अगर बच्चे अपने सहज भोले-भाले रूप में बढ़े हो सके तो न हमें संघर्ष करना पड़ेगा और न व्यर्थ के प्रस्ताव पास करने पड़ेगा | तब हम एक प्रेम से दूसरे प्रेम और एक शांति से दूसरी शांति तक बढ़ते चले जाएंगे, यहां तक कि विश्व में सर्वत्र शांति और प्रेम का साम्राज्य छा जाएगा जिसके लिए आज सारी दुनिया तरस रही है | (यंग, 19-11-1931, पृ. 361)
59. संतति-निग्रह

प्रजनन का कार्य

मेरे विचार में यह समझना मूर्खता की चरम सीमा है कि सोने या खाने की तरह ही मैथुन भी जरूरी है और यह एक स्वतंत्र कार्य है | दुनिया का अंतिम प्रजनन-कार्य पर निर्भर है, और चूंकि दुनिया ईश्वर की लीलाभूमि है है और उसकी महिमा का प्रतिबिंब है इसलिए प्रजनन-कार्य को दुनिया की संवृद्धि के हित में नियंत्रित किया जाना चाहिए | जो इस बात को समझता है, वह किसी भी कीमत पर अपनी कामुकता पर निर्भर रहे, अपनी संतति के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिए स्वयं को तैयार करेगा और इस प्रकार अर्जित ज्ञान से संतति को लाभान्वित करेगा | (ए, पृ. 148)

सहवास का उद्देश्य भोग-विलास नहीं है, अथवा संतानोत्पादन है | संतानोत्पादन की कामना न हो तो सहवास एक अपराध है | (यंग, 12-3-1925, पृ. 88)

स्त्री और पुरुष के मन में एक बार यह बात बैठ जाए कि जननेत्रय का एकमात्र और अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य संतानोत्पादन है तो वे किसी अन्य प्रयोजन से सहवास करना वीर्य का आपराधिक अपवृत्त और उससे पुरुष और स्त्री की मिलने वाली उत्सेजना की ऊजाक का उद्देश्य भोग-विलास है | इस बात को समझता है वह अपने कामुकता पर नियंत्रण रखेगा, अपनी संतति के लाभ के लिए उसे तैयार करेगा और इस प्रकार अर्जित ज्ञान से संतति को लाभान्वित करेगा | (हरौ, 21-3-1936, पृ. 48)

हमारे कानों में यह भर दिया गया है कि कामोत्सव की दुष्ट्रिक करना वैसा ही पवित्र दायित्व है जैसा कि विधिपूर्ण ऋण लेकर उसे चुकाना, और ऐसा न करने पर मनुष्य को बौद्धिक क्षय का दंड भुगतना पड़ेगा | इस कामोत्सव को संतानोत्पादन की कामना से अलग कर दिया गया है और संतति-निग्रह के साधनों का इस्तेमाल करने के हिमायती यह कहते हैं कि गर्भ-धरण एक ऐसा संयोग है जिसे यदि स्त्री-पुरुष संतान न चाहते हों तो घटने से रोक देना चाहिए | मेरा कहना है कि यह बड़ा ही खतरनाक सिद्धांत है और इसका प्रचार नहीं किया जाना चाहिए | कामोत्सव का प्रयोग एक सुंदर और उदात्त चीज़ है | इसमें लज्जा की कोई बात नहीं है | किंतु इसका प्रयोग केवल संतानोत्पादन की क्रिया है | इसका और कोई उपयोग ईश्वर तथा मानवता के विरुद्ध अपराध है | (हरौ, 28-3-1936, पृ. 53)

कलात्मक हटिकोण

मनुष्य निस्संदेह एक कलाकार तथा सर्जक है | उसे सौंदर्य और रंग उपलब्ध होने ही चाहिए | उसकी उच्चतम कलात्मक एवं सृजनात्मक व्रत्कृति ने उसे भेद करने की दृष्टि दी और उसने जाना कि रंगों का कैसा भी मिश्रण
संदर्भ उपयोग नहीं कर सकता, न आनंदोपभोग का हर तरीका अपने आप में अच्छा है | मनुष्य की कलात्मक दृष्टि ने उसे उपयोगिता में आनंद की खोज करना सिखाया |

तदनुसार उसने विकास के आरंभिक चरण में ही यह जान लिया था कि उसे खाने की खातिर नहीं खाना चाहिए, बल्कि जीवित रहने के लिए खाना चाहिए | आगे चलकर उसने यह जाना कि सिर्फ अपने ही लिए जीने में कोई ख़ुशी या मजा नहीं है, बल्कि उसे अपने साथियों और उनके जरिए ईश्वर की सेवा के लिए जीना चाहिए |

इसी प्रकार, जब उसने मैथुन से प्राप्त होने वाली आनंदानुभूति पर विचार किया तो उसने पाया कि अन्य इंद्रियों की भांति जननेत्र का भी उपयोग और दुरुपयोग है | और उसने पाया कि इसका सच्चा कार्य अर्थतः सही उपयोग इसे प्रजनन-क्रिया तक सीमित करने में है | उसे लगा कि इसका कोई अन्य उपयोग बीमार है जिसके व्यक्ति तथा प्रजनन-क्रिया, दोनों के लिए बढ़े गंभीर परिणाम हो सकते हैं (हरर, 4-4-1936, पृ. 61) 

संतति-निग्रह की आवश्यकता

संतति-निग्रह की जरूरत के बारे में दो राय नहीं हो सकती लेकिन युगों से इसकी एक ही विधि बताई गई है और वह है, आत्मनिर्वाण अर्थतः ब्रह्मचर्य | यह एक अचूक और सर्वश्रेष्ठ विधि है और उस पर आचरण करने वालों के लिए कल्याणकारी है | यदि चिकित्सा जगत के लोग संतति-निग्रह के कृत्रिम साधनों का आविष्कार करने के बजाए आत्मनिर्वाण के उपायों का पता लगाने सकें तो वे मानवता का बड़ा उपकार करेंगे....

इसी प्रकार, जब उसने संकल्पना का ही उपयोग कर उसे अपना संयम के उपाय का पता लगाने से राहत मिलती है और उसे पहले तो उसने अपने युगों में बुद्धि की आवश्यकता के लिए उपयोग किया जाता है | इनके रूप में इतिहास का महत्व का विषय नहीं है और उस पर आवश्यकता का उपयोग करने वालों के लिए कल्याणकारी है | हालांकि इनके लिए जगत के सभी संयम के कृत्रिम साधनों को अपनाने से निक्षेप हो जाएगा और उसने अपने संयम के कृत्रिम साधनों के अन्य साधनों का प्रयोग करने से बचने का प्रयास करे | इससे भी बुरा यह है कि आदमी पहले तो कामवासना में लिपट हो जाए और फिर अपनी कारगुजारी के नतीजे से बचने की कोशिश कर | इससे भी बुरा यह है कि आदमी पहले तो कामवासना में लिपट हो जाए और फिर अपनी कारगुजारी के नतीजे से बचने की कोशिश कर | प्रकृति की बद्री कठोर है, वह अपने संयम के अन्य साधनों के पूरा-पूरा बदल लेगी | नैतिक परिणाम केवल नैतिक निग्रहों से ही प्राप्त किए जा सकते हैं | अन्य सभी प्रकार के निग्रह उस प्रयोजन को ही नष्ट कर देगा जिसके लिए वे अपनाए जा रहे हैं | (यंग, 12-3-1925, पृ. 88-89)
आबादी की अधिकता

अगर कोई यह कहे कि देश में आबादी ज्यादा होने के कारण संतति-निग्रह के उपाय अपनाया आवश्यक है तो मैं इससे सहमत नहीं हूँ| ज्यादा आबादी की बात को आज तक सिद्ध नहीं किया जा सका है| मेरी राय में, उचित भूमि-व्यवस्था, बेहतर कृषि और पूरक उद्योगों के बल पर यह देश आज से दूनी जनसंख्या का भरण-पोषण कर सकता है| (यंग, 2-4-1925, पृ. 118)

बढ़ती जन्म-दर का ही आ यह कोई नयी चीज़ नहीं है| यह अक्सर खड़ा किया जाता रहा है| जनसंख्या की बुद्धि कोई महासंकट नहीं है और न समझा जाना चाहिए| असली महासंकट तो कृत्रिम उपायों से उसका नियमन अथवा नियंत्रण है, हम इसे समझें या न समझें| अगर यह सर्वत्र लागू हो गया तो इससे निष्ठित रूप से प्रजाति की गुणवत्ता पहटानी| लेकिन इश्क्र की कृपा से, यह कभी सर्वत्र लागू नहीं हो पाएगा| अन्यायी संतानों के लिए उत्तरदायी चूर्णित कामलिप्ता का दंड हमें महामारियों, युद्ध और दुर्भिक्षा के रूप में भूमिता पड़ता है| यदि हम इन तीनों अभियानों से भर भर जाएं तो हमें आत्मनियंत्रण की सर्वश्रेष्ठ विधि को अपनाकर स्वयं को अन्यायी संतानों के अभियान से भी बचाना चाहिए| (विवेकशील मनुष्य अभी से ही कृत्रिम उपायों के उपरियोजनाओं को समझ रहे हैं| नैतिक-अनौपचारिक की चर्चा उठाए बगैर में यही कहना चाहता हूँ कि चूहों की तरह अपनी प्रजाशत की अंधाधुंध वृक्षारोपण को अवश्य ही रोका जाना चाहिए, लेकिन इस तरह नहीं हो पाएगा| अन्यायी संतानों के कारण हमें स्वागत करना चाहिए| (हरि, 31-3-1946, पृ. 66)

आदमी को दो में से एक रास्ता चुनना होगा, ऊपर की ओर जाने वाला या नीचे की ओर ले जाने वाला| लेकिन चूंकि उसके अंदर पथ बेठा हुआ है, इसलिए उसे ऊपर की ओर नीचे की ओर ले जाने वाले रास्ते को चुनना ही सहज प्रतीत होगा, विशेषकर यदि नीचे वाले रास्ते को उसके सामने आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया जाए| पाप को पुण्य का जामा पहना दिया जाए तो मनुष्य उसकी ओर बड़ी सरलता से झुक जाता है; मेरी हितों और बाकी लोग आज यही कर रहे हैं| (हरि, 1-2-1935, पृ. 410)

मुझे भय है कि संतति-निग्रह के सम्मेलन यह मानकर चल रहे हैं कि कामवासना में लिप्त होना जीवन के लिए आवश्यक है और यह स्वयं में एक वांछनीय चीज़ है| स्त्री जाति के क्रम जो सरोकार दिखाया जा रहा है, वह असली दयनीय है| मेरी राय में, कृत्रिम उपायों से संतति-निग्रह के सम्मेलन में स्त्री जाति के पक्ष को उभारना उसका अपमान करना है| (हरि, 3-4-1925, पृ. 118)

आबादी की अधिकता के लिए स्त्री को पहले ही काफी
नीचे गिरा दिया है, कृत्रिम उपाय उसका दर्जा और भी घटा देंगे, भले ही इन उपायों के समर्थकों की नीति कितनी ही साफ हो।

कृत्रिम उपायों के समर्थकों से मेरा अनुरोध है कि वे इन परिणामों पर विचार करें | इन उपायों का प्रयोग व्यापक पैमाने पर हुआ तो विवाह-बंधन का विचन हो जाएगा और उसका स्थान स्वच्छद प्रेम ले लेगा | अगर पुरुष कामवासना की हो लक्ष्य मानकर उसमें लिपि रहने लगा तो वह उस समय क्या करेगा जब, मिसाल के तौर पर, उसे काफ़ी दिनों के लिए घर से बाहर रहना हो अथवा तब लड़ाई में सिपाही के तौर पर भाग लेने के लिए जाना पड़े अथवा वह विद्वंद्व हो जाए अथवा उसकी पत्नी इतनी बीमार हो कि कृत्रिम उपाय का इस्तेमाल करने पर भी वह अपने स्वास्थ्य की हानि किए बगैर पति के साथ सहयोग करने की स्थिति में न हों?

(यंग, 2-4-1925, पृ. 118)

मुझे तो संतति-निग्रह एक मनहसूस अंधता दिखाई देता है | यह अज्ञात शक्तियों के साथ खिलवाड़ करना है | यह मान भी लिया जाए कि किन्हीं परिस्थितियों में कृत्रिम उपायों से संतति-निग्रह करना उचित है तो भी लाखों-करोड़ों लोगों के बीच इसका प्रचार करना निरंतर असंभव है | मुझे लगता है कि आम लोगों को गर्भ-निरोधकों के बजाए आत्मनिर्माण के द्वारा सांतानसंपादन का नियमन करने के लिए ज्ञान आसानी से राजी जा सकता है | इसके लिए संतति पररणामों के स्थान स्वच्छ प्रेम ले लेगा | अगर पुरुष कामवासना को ही लक्ष्य मानकर उसमें शलप्त रहने लगा तो वह अपने स्वास्थ्य की हानि किए बगैर पति के साथ सहयोग करने की स्थिति में न होइ?

(हरि, 21-5-1935, पृ. 224)

ज्ञाता बड़ा पाप

अनवाही संतान पैदा करना पाप है, लेकिन मैं समझता हूँ कि उससे भी बड़ा पाप अपने किए के परिणामों से दूर भागना है | यह तो मर्द को नामाध्यक्त बनाने वाली बात है | (हरि, 7-9-1935, पृ. 234)

ईश्वर ने कृपा करके पुरुष को सवाधिक शक्तिशाली बीज दिया है और स्त्री को ऐसा उवर्त क्षेत्र दिया है जिसकी तुलना दुनिया के किसी क्षेत्र से नहीं की जा सकती | निश्चित रूप से यह पुरुष की घोर मूर्खता है यदि वह अपनी इस अमूल्य संपत्ति को व्य्ख्या बनाये दे | उसे अपने महंगे-से-महंगे मोतियों से भी ज्ञाता सावधानी के साथ इसकी रक्षा करनी चाहिए |

वह स्त्री भी घोर मूर्ख है जो अपने उवर्त क्षेत्र में पुरुष के बीज को वह जानते हुए भी ग्रहण करती है कि वह उसे व्यापक बढ़ा जाने देगी | पुरुष और स्त्री, दोनों ही प्रकृति से मिली अपनी क्षमताओं के दुरुपयोग के दोषी माने जाएंगे और प्रकृति उन्हें उनकी अमूल्य संपत्ति से वंचित कर देगी | (हरि, 28-3-1936, पृ. 53)

...
मेरी समझ में, अपने कृत्यों के परिणामों को भुगतने से इंकार करना कार्यरत है | जो गर्भ-निरोधकों का प्रयोग करते हैं, वे शायद आसमनिग्रह की अचानक को कभी नहीं समझ पाएंगे | उन्हें इसकी जरूरत ही नहीं है | गर्भ-निरोधकों के इस्तेमाल से बच्चों की पैदावत रुक सकती है, पर ये स्त्री-पुरुष दोनों की जीवनी शक्ति को चाह जाएंगे – पुरुषों को स्त्रियों की अपेक्षा शायद ज्यादा नुकसान होगा | राक्षस के साथ युद्ध करने से इंकार करना नामदी की निशानी है | (हरे, 17-4-1937, पृ. 84)

सामाजिक दुराचार

मुझे पता है कि गुप्त दुराचार ने स्कूली छात्र-छात्राओं के बीच कितनी तबाही मचाई है | जिसने क्रिया-रोधकों के प्रयोग व्रद्धि की, वे आर आत्मशानत की अच्छाई को कभी नहीं समझ पाएंगे | उन्हें इसकी जरूरत ही नहीं है | गर्भ-रोधकों के इस्तेमाल से बच्चों की पैदावत रुक सकती है, पर इसके बायां-बाएं पुरुष दोनों की जीवनी ब्लिक्स्टा को चाह जाएंगे – पुरुषों को स्त्रियों की अपेक्षा ज्यादा नुकसान होगा | राक्षस के साथ युद्ध करने से इंकार करना नामदी की निशानी है | (हरे, 28-3-1936, पृ. 53)

नारीत्व का अपमान

मैं जानता हूँ कि कुछ आधुनिक महिलाएं कृत्रिम उपायों का समर्थन करती हैं | लेकिन मुझे इसमें संदेह नहीं है कि अधिकांश महिलाएं इन्हें अपनी गरिमा के प्रतिकूल होने के कारण अस्वीकार कर देंगी | यदि पुरुष स्त्री की भलाई चाहते हैं तो उन्हें अपने ऊपर नियंत्रण करना चाहिए | स्त्री पुरुष को नहीं दुःभागी | सामाजिक जीवन की स्वच्छता के लिए काम करने वाले सुधारकों को काम को लगभग असंभव बना दिया है | .... (हरे, 2-5-1936, पृ. 92)

भारत की स्त्रियों में गर्भ-निरोधकों का इस्तेमाल करने का आक्रोश और धौड़े के दुम में लगाम लगाने के समान है | सबसे पहले तो उन्हें मानसिक दासता से मुक्ति दिलानी है, उन्हें अपने शरीर की पवित्रता का बोध कराना है तथा राष्ट्र और मानवता की सेवा के लिए यथार्थवादी कार्य करना है | (हरे, 5-5-1946, पृ. 118)
इसमें संदेह नहीं है कि गर्भ-निरोधकों के पक्ष में धुंधाधार प्रचार करने वाले अनेक संतति-निग्रह-सुधारक उपकार की भावना से ही इस कार्य में लगे हैं | मेरा अनुरोध है कि वे अपनी अनुज्जित उपकार-भावना के अनार्कारी परिणामों पर विचार करें | अपने लक्ष-वर्ग के बीच हमें इसका व्यापक व्यय सूचित नहीं कर पाएंगे | जिन्हें इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए, वे अवश्य इनका प्रयोग करेंगे जिससे उनका और उनके वैवाहिक साथी का घोर अनर्थ होगा | यदि गर्भ-निरोधकों का प्रयोग आसानीकर और नैतिक दृष्टि से पूर्णतया सही सिद्ध हो जाए तो भी यह अनर्थ तो होगा ही | (हरी, 12-9-1936, पृ. 244)

संयम

प्रत्येक पति-पत्नी इस बात का दृढ़ निश्चय कर सकते हैं कि वे रात में एक ही कमरे या एक ही बिस्तर का इस्तेमाल नहीं करेंगे और सिवा उस एक प्रयोजन के जो मनुष्य और पशु, दोनों के मामले में लगू है, और किसी भावना से प्रेरित होकर यीन संरक्षण नहीं करेंगे | पशु तो निर्विवाद रूप से इस नियम का पालन करते हैं | आदमी का चूँकि चुनने का अधिकार है, इसलिए उसने गलत चुनाव करके एक भयंकर भूल कर दी है....रात्रि और पुरुष, दोनों का जानना चाहिए कि कामशक्ति की दृष्टि को संपन्न करने से कोई बीमारी नहीं लगती, बल्कि वस्त्रों और ओज में वृद्धि होती है बशर्ति कि मन भी शरीर के साथ सहयोग करे | (यंग, 27-9-1925, पृ. 324)

‘न’ कहने का साहस

सियां को अपने पति का प्रतिरोध करना होगा | यदि गर्भ-निरोधकों का इस्तेमाल हुआ तो इसके भयंकर परिणाम होंगे | स्त्री-पुरुष केवल कामोपभोग के लिए ही जिंदे | वे दुर्लभ मस्तिष्क वाले और विश्वसनीय हो जाएंगे | सच पूछा जाए तो वे मानसिक और नैतिक दृष्टि से दूर जाएगी | (अबाप, 12-1-1935)

मैंने अनुभव किया है कि यदि मैं अपने जीवन के शेष वर्ष सियां के मन में यह सचाई बैठाने में लगा दूं कि वे स्वतंत्र हैं तो भारत में संतति-निग्रह नाम की कोई समस्या नहीं रह जाएगी | यदि वे अपने पति के कामसूत्र होकर पास आने पर ‘न’ कहना सीख लें...तो में कुछ ठीक हो जाएगी....असली समस्या यह है कि वे उनका प्रतिरोध करना नहीं चाहते | इसके लिए उनका शिक्षित होना आवश्यक है | मैं चाहता हूँ कि सियां प्रतिरोध के मूल अधिकार के बारे में जानें | अभी तो वे यह समझते हैं कि उन्हें ऐसा कोई अधिकार नहीं है | (ए.ए नवंबर 1935)

मैं नहीं मानता कि स्त्री भी कामेच्छा की उत्तम ही शिक्षारी होती है जिनका कि पुरुष | पुरुष की अपेक्षा उसके लिए आत्मसंयम का पालन करना ज़्यादा आसान है | (हरी, 2-5-1936, पृ. 93)
आत्मनिष्ठान

अगर हम यह मानने लगे कि कामवासना में लिप्त होना आवश्यक, हानिरहित और निष्पाध है तो हम उसे खुली छूट देंगे और हमारे अंदर उसका प्रतिरोध करने की शक्ति नहीं रह जाएगी। इसके विपरीत, अगर हम अपने आपको यह विश्वास करना सिखाएं कि यह हानिकारक, पापमय, अनावश्यक और निरंत्रणी है तो हम पाएंगे कि आत्मसंयम पूर्णतया संभव है। (योंग, 19-8-1926, पृ. 289)

गर्भ-निरोधकों का समर्थन करने वाले लोगों से मेरा झगड़ा यह है कि वे यह मानकर चल रहे हैं कि साधारण मनुष्य आत्मसंयम नहीं बरत सकता। कुछ तो यहां तक कहते हैं कि अगर यह साधारण मनुष्यों के लिए संभव भी हो तो भी उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। वे चाहे अपने क्षेत्र के कितने ही जाने-माने व्यक्ति हों, मेरा उनसे पूरी विनम्रता किंतु अधिकतम आत्मविश्वास के साथ यह कहना है कि वे आत्मसंयम की संभावनाओं का अनुभव प्राप्त किए बिना बात कर रहे हैं। उन्हें मानव आत्मा की क्षमता को सीमित करने का कोई अधिकार नहीं है।

मेरी दशक, जो निश्चित अनुभव पर आधारित है, यह है कि जिस प्रकार सत्य और आहिसा भी केवल गिने-चुने लोगों के लिए नहीं है बल्कि समूही मानवता के दैनंदिन आचरण के लिए है, ठीक उसी प्रकार आत्मनिष्ठान यह कुछ ‘महात्माओं’ के लिए ही नहीं है बल्कि समूही मानवता के लिए है। जिस प्रकार मानवता को अपने आदर्शों को इस कारण नीचा करने की जरूरत नहीं है कि बहुत-से लोग असत्यवादी और हिंसक हैं, उसी प्रकार चाहे अधिकांश लोग आत्मसंयम के संदेश को मानने के लिए तैयार न हों पर हमें अपने आदर्श को नीचा करने की आवश्यकता नहीं है। (हरी, 30-5-1936, पृ. 126)

वंधकरण

मैं वंधकरण कानून को लोगों पर धोपना अमाननीय समझता हूँ। लेकिन जीवन रोगों से प्रस्त व्यक्तियों का वंधकरण वांछनीय है बशर्ते कि वे उसके लिए राजी हों। वंधकरण एक गर्भ-निरोधक है और यद्यपि मैं स्त्रियों के द्वारा गर्भ-निरोधकों के इस्तेमाल के विरुद्ध हूँ, मैं पुरुषों के वंधकरण का विरोध नहीं करूंगा क्योंकि आक्रामक पुरुष ही है। (अबाव, 12-1-1935)
60. समाज में स्त्रियों की स्थिति और भूमिका

आदमी जितनी बुराईयों के लिए जिम्मेदार है उनमें सबसे ज्यादा घटिया, बीमार और पाशविक बुराई उसके द्वारा मानवता के अर्थ अर्थात नारी जाति का दुर्गम करता है। वह अबला नहीं है, नारी है। नारी जाति निश्चित रूप से पुरुष जाति की अपेक्षा अधिक उदाय है; आज भी नारी लागू, मूक दुख-सहन, विनियोग, आस्था और मान की प्रतिमृत्ति है।

(यंग, 15-9-1921, पृ. 292)

स्त्री को चाहिए कि वह स्वयं को पुरुष के भोग की वस्तु मानें और भूमिका आदमी शजनी बुराईयों के लिए शलए शजम्मेदार है उनमें सबसे ज़्या दा घशट्या, बीभत्स और पा शवक बुराई उसके द्वारा मानवता के अधािंग अथाकत नारी जाति का दुर्गम करता है।

(यंग, 21-7-1921, पृ. 229)

यदि मैं ने स्त्री के रूप में जन्म लिया होता तो मैं पुरुष के इस दावे के विरुद्ध विद्रोह कर देता कि स्त्री उसके मनबलाव के लिए ही पैदा हुई है। स्त्री के हृदय में ज्यादा है।

(यंग, 8-12-1927, पृ. 406)

अबला नहीं

नारी को अबला कहना उसकी निंदा करना है; यह पुरुष का नारी के प्रति अन्याय है। यदि शक्ति का अर्थ पाशविक शक्ति है तो सचमुच पुरुष की तुलना में स्त्री में पाशविकता कम है। और यदि शक्ति का अर्थ नैतिक शक्ति है तो स्त्री निश्चित रूप से पुरुष की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति है। क्या उसमें पुरुष की अपेक्षा अधिक अंतःध्यान, अधिक आत्मसत्य, अधिक सहिष्णुता और अधिक साहस नहीं है? उसके बिना पुरुष का कोई अस्तित्व नहीं है। यदि अहिंसा मानव जाति का नियम है तो भविष्य नारी जाति के हाथ में है, हृदय को आकर्षित करने का गुण स्त्री से ज्यादा और किसमें हो सकता है?

(यंग, 10-4-1930, पृ. 121)
यदि पुरुष ने अपने अविकेपपूर्ण स्वार्थ के वशीभूत होकर स्त्री की आत्मा को इस तरह कुचला न होता और स्त्री ‘आनंदोपभोग’ की शिकार न बन गई होती तो उसने अंतर्गत को अपनी अन्तिमत्वात्मक शक्ति का उपयोग न करता होता। जब स्त्री को पुरुष के बराबर अवसर प्राप्त हो जाएगी और वह परस्पर सहयोग और संबंध की शक्तियों का पूरा-पूरा विकास कर लेगी तो संसार स्त्री-शक्ति का उसकी संपूर्ण विलक्षणता और गौरव के साथ भरित परिचय पा सकेगा। (यंग, 7-5-1931, पृ. 96)

मेरा मानना है कि स्त्री आत्मयात्मा की सूती है, लेकिन दुर्भाग्य से आज यह नहीं समझ पा रही कि वह पुरुष से कितनी श्रेष्ठ है | जैसा कि टाल्स्टॉय ने कहा है, वे पुरुष के सम्बन्धी प्रभाव से आक्रांत हैं | यदि वे अहिंसा की शक्ति पहचान ले तो वे अपने को अबला कहे जाने के लिए हरिगिर राजी नहीं होंगी। (यंग, 14-1-1932, पृ. 19)

स्थान-व्यतिक्रम

स्त्री पुरुष की सहस्वरी है, उसकी मानसिक शक्तिएं पुरुष के बराबर हैं | पुरुष के छोटे-से-छोटे कार्यकलाप में भाग लेने का उसे अधिकार है और जितनी स्वाधीनता और आजादी का हकदार पुरुष है, उतनी ही हकदार स्त्री भी हैं।

स्त्री को कार्यकलाप के अपने क्षेत्र में स्वच्छ स्थान पाने का वैसा ही हक है जैसा कि पुरुष को अपने क्षेत्र में है | स्वभावतया यही स्थिति होनी चाहिए, ऐसा नहीं है कि स्त्री के पढ़-लिख जाने पर ही वह इसकी हकदार बनेगी।

गलत परंपरा के जोर पर ही भाव और नकमे लाग भी स्त्री के ऊपर श्रेष्ठ बनकर मजे दुट रहे हैं, जब कि वे इस योग्य हैं ही नहीं और उन्हें यह बेहतरी हासिल नहीं होनी चाहिए | स्त्रियों की इस दशा के कारण ही हमारे बहुत-से अंदोलन अधर में लटके रह जाते हैं। (स्पीरा, पृ. 425)

तथापि किंतु अबला वर्ग के ऊपर यह जो हीनवस्था विधि का नियमकार होने के नाते पुरुष द्वारा आपूर्ति कर दी गई है, उसका उसे बहुत ही भयावह दंड भुगतना होगा | पुरुष के फंदे से आजाद होकर स्त्री जब अपने पूर्ण उत्कृष्ट को प्राप्त होगी और मनुष्कृत विधान तथा उसके द्वारा गठित संस्थाओं के विरुद्ध विद्रोह करेगी तो उसका विद्रोह यद्यपि अहिंसक होगा, पर फिर भी बड़ा प्रभावकारी होगा। (यंग, 16-4-1925, पृ. 133)

स्त्री को पुरुष ने अनजाने में अनेक विचारण उपायों से पुरुष को विविध प्रकार से फंसाया हुआ है और इसी प्रकार, पुरुष ने स्त्री को अपने ऊपर वर्चक प्राप्त न करने देने के लिए अनजाने में उतना ही किंतु व्यर्थ संघर्ष किया है | परिणामतः: एक गतिरोध की स्थिति उपत्यका हो गई है | इस हद से देखें तो यह एक गंभीर समस्या है जिसका समाधान भारत माता की प्रबुद्ध बैटियों का करना है | उन्हें पंचक्षेत्र के तरीकों का अनुकूलन नहीं करना है, जो शायद वहां के वातावरण के अनुकूल है | उन्हें भारत की प्रकृति और यहां के वातावरण को देखकर अपने तरीके लागू करने होगे | उनके हाथ मजबूत, नियंत्रणशील, शुचिकारी और संवृत न्याय होने चाहिए जो हमारी संस्कृति के
उत्तम तत्वों को तो बचा रखें और जो कुछ निकृष्ट तथा अपकर्षकारी है, उसे बेहिचक निकाल फेंकें | यह काम सीताओं, द्रौपदियों, सावित्रियों और दरम्यानियों का है, मुस्लिमों और नखरेबाज सियाओं का नहीं। | (यंग, 17-10-1929, पृ. 340)

पुरुष ने स्त्री को अपनी कठपुतली समझ लिया है | स्त्री को भी इसका अभ्यास हो गया है और अंततः उसे यह भूमिका सरल और मजेदार लगने लगी है, क्योंकि जब पतन के गर्दन में गिरने वाला व्यक्ति किसी दूसरे को भी अपने उद्देश्य की तैयारी करता है तो गिरने की क्रिया सरल लगने लगती है। | (हरर, 25-1-1936, पृ. 396)

मेरा ढळ मत है कि इस देश की सही शिक्षा यह होनी कि स्त्री को अपने पति से भी ‘न’ कहने की कला सिखाई जाए और उसे यह बताया जाए कि अपने पति की कठपुतली या उसके हाथों में गुड़िया बनकर रहना उसके कर्त्तव्य का अंग नहीं है | उसके अपने अधिकार हैं और उसके कर्त्तव्य हैं। | (हरर, 2-5-1936, पृ. 93)

सही शिक्षा

मैं स्त्री की उचित शिक्षा में विश्वास करता हूँ | लेकिन मेरा पक्का विश्वास है कि पुरुष की नकल करके या उसके साथ होड़ लगाकर वह दुनिया में अपना योगदान नहीं कर सकेगी | वह होड़ लग सकती है, पर पुरुष की नकल करके वह उन ऊंचाइयों को नहीं छू सकती जिनका सामर्थ्य उसके उंदर है | उसे पुरुष का पूरक बनना है। | (हरर, 27-2-1937, पृ. 19)

आत्मसंरक्षण

जो लोग सीता को राम की स्वेच्छा दासी के रूप में देखते हैं, वे सीता की व्यक्तित्वता की ऊंचाई या हर बात में राम द्वारा सीता के लिए इंतजार करने की ऊंचाई या हर बात में राम की उखदान की ऊंचाई। सीता अपनी और अपने स्वाभाव की रक्षा का अंश किले बनकर उसके अंदर है | उसे पुरुष का बूफ़ बनाना है | (हरर, 2-5-1936, पृ. 93)

मुझे भय है कि आधुनिक लड़कियों को अधेर दर्जन छैलाओं की प्रेरित बनना अच्छा लगता है | उसे जोखिम पहंचा है...वह जिस तरह के वल्ल धारण करती है वह उसे हवा, पानी और धूप से बचाने के लिए नहीं बल्कि लोगों का ध्यान अपनी और आकर्षित करने के लिए होते हैं | वह रंग-रोगन लगाकर और असाधारण दिखाई देने का प्रयास करके प्रकृतिद्रुत सुंदरता को बढाने का उपक्रम करती है | अहिंसा का मार्ग ऐसी लड़कियों के लिए नहीं है। | (हरर, 31-12-1938, पृ. 409)

सियारों को अपनी सुरक्षा के लिए पुरुषों पर निर्भर नहीं रहना है | उसे द्रौपदी की भांति अपने चरित्र की शक्ति और निर्मलता पर तथा ईश्वर पर भरोसा करना चाहिए। | (हरर, 15-9-1946, पृ. 312)
सही स्थान
जीवन में जो कुछ पवित्र और धार्मिक है, लिया उसकी विशिष्ट अभिरक्षण हैं | प्रकृति से रुढ़िवादी होने के कारण वे पादि अंधविश्वास को त्यागने में शिषित हैं तो जीवन में जो कुछ पवित्र और उदार है, उसका त्याग करने में भी शिषित हैं | (हरिर, 25-3-1933, पृ. 2)

मैं इस बात की कल्पना नहीं कर पाता कि पत्नी सामान्यतया अपने पति से स्वतंत्र कोई जीविका करें | बच्चों का पालन-पोषण और घर की देखभाल ही उसकी सारी शक्ति का इस्तेमाल करने के लिए काफ़ी हैं |

सुव्यवस्थित समाज में, परिवार के भरण-पोषण का अतिरिक्त भार महिला पर नहीं पड़ना चाहिए | पुरुष परिवार के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व ले और महिला घर-गृह के प्रबंध को देखे, इस प्रकार दोनों एक-दूसरे के पूरक और अनुपूरक बनें |

मुझे इसमें स्त्री के अधिकारों अथवा उसकी आज़ादी के दमन की कोई बात दिखाई नहीं देती...हमारे साहित्य में पत्नी को अधृतगिनी और सहधर्मिणी कहकर सम्मानित किया गया है | पति द्वारा पत्नी को देवी कहकर शभोधित किया जनना उसे तुच्छ समझने का बोध तो नहीं कराता |

...जो स्त्री अपने कर्तव्य को समझती है और उसे पूरा करती है, उसे अपनी गर्भवत्व में शवश्वास कर शलया है शक पुरुष से कमतर है | लेकिन पुरुष ने किसी-न-किसी तरह से पुरुष से स्त्री पर अपना प्रभुत्व जमा रखा है जिसके परिणामस्वरूप स्त्री में हीनभावना घर कर गई है | उसने पुरुष की इस स्वातंत्र्य सीख में विश्वास कर लिया है कि वह पुरुष से कमतर है लेकिन मनीषषयों ने स्त्री को बराबरी का दाजु अथवा उपयुक्त है |

तब भी, इसमें संदेह नहीं कि एक बिंदु ऐसा है जहां से दिशाखान होता है | यद्यपि मूल रूप से स्त्री और पुरुष समान हैं, पर यह भी सही है कि दोनों के स्वरूप में महत्वपूण्य अंतर है | इसलिए दोनों के कार्यक्षेत्र भिन्न-भिन्न होने चाहिए | (हरिर, 24-2-1940, पृ. 13)

स्त्री और अहिंसा
मेरा विश्वास है कि अहिंसा के उच्चतम और सर्वोच्च स्वरूप का प्रदर्शन करना स्त्री का जीवन-लक्ष्य है....कारण यह है कि अहिंसा के क्षेत्र में सहेज करने और साहसिक कदम उठाने के लिए स्त्री अधिक उपयुक्त है....आत्मयाग का साहस पुरुष की अपेक्षा स्त्री में निश्चित रूप से कहीं ज्यादा है, ठीक उसी प्रकार जैसे कि पशुता का साहस पुरुष में स्त्री की अपेक्षा ज्यादा है | (हरिर, 5-11-1938, पृ. 317)
मेरी अपनी राय में चूंकि पुरुष और स्त्री मूलतः एक हैं, अतः उनकी समस्या भी तब्द: एक होनी चाहिए \| दोनों में एक ही आत्मा का वास है \| दोनों एक-सा जीवन जीते हैं, दोनों की भावनाएं एक जैसी होती हैं \| दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं \| दूसरे की संक्रिय सहायता के बिना इनमें से कोई भी जी नहीं सकता। (हरि, 24-2-1940, पृ. 13)

मैंने कहा है कि...स्त्री अहिंसा का अवतार है \| अहिंसा का अर्थ है असीम प्रेम, जिसका अर्थ है पीड़ा भोगने का असीम सामाध्य | यह सामाध्य स्त्री, जो पुरुष की मां है, से अधिक और किसी है? अपने गर्भ में नौ मास तक शिशु का प्रोषण करके और उस क्लेश को प्रसन्नतापूर्वक झेलकर वह इस सामाध्य का प्रत्युत्तम प्रमाण देती है | प्रसव-पीड़ा से बड़ी पीड़ा और है? लेकिन सृजन के सुख में वह उसे भी भुला देती है।

बच्चे के दैनिक विकास के लिए और कौन है जो रोज खट्टा है? स्त्री को चाहिए कि वह इस प्रेम का प्रवश्य करके समूह मानवता को इसमें समावेश कर ले और यह भूत्ताजाय कि वह पुरुष की वासना का विषय है | यदि ऐसा हो सके तो वह पुरुष के साथ उसकी मां, उसकी सृजनशीलता और उसकी मूक प्रत्यदशिका के रूप में अपने गृहस्वामियों पद की प्रतिशत कर सकेंगी | शांति के लिए व्याकुल युद्धसंसार को शांति का पाठ स्त्री को ही पढ़ाना है। (वहीं, पृ. 13-14)

**विशेष जीवन-लक्ष्य**

मातृत्व का कर्तव्य, जो अधिकांश खिलाड़ी सदा निम्नांग्री, वहन करने के लिए जिन गुणों की अपेक्षा होती है, उनका पुरुष में होना आवश्यक नहीं है | स्त्री निक्षिप्त है, पुरुष संक्रिय है | मुख्यतः, वह गृहस्वामिनी है | पुरुष रोजी कमाता है, स्त्री भोजन की व्यवस्था और वितरण करती है | वह हर दृष्टि से रक्षक की भूमिका निभाती है | प्रजापति के शिशुओं को पाल-पोसकर बढ़ा करना उसका विशिष्ट तथा एकल अधिकार है | वह देखभाल न करे तो संपूर्ण प्रजापति लुप्त हो जाए।

मेरी राय में, स्त्री से गृहस्थ के संचालन की जिमेदारी छोड़कर उसकी रक्षा के लिए बंदगृह उठाने को कहना पुरुष और स्त्री, दोनों के लिए गिरावट की बात है | यह बर्बरता की ओर लौटना है और अंत की शुरुआत है | पुरुष जिस घोड़े पर सवार है उसी पर सवारी करने की कोशिश में स्त्री स्वयं भी मिलती और अपने साथ पुरुष को भी गिराएगी।

यदि पुरुष ने स्त्री को अपनी विशिष्ट भूमिका ल्याने के लिए प्लांटिफ्रिग अथवा बाध्य किया तो इसका पाप मनुष्य के फिर पर ही होगा | अपने घर को सुव्यवस्थित रखने में भी उतनी ही वीरता है जितनी कि उसकी बाह्य आक्रमण से रक्षा करने में....

इस गहन समस्या के समाधान में मेरा योगदान यह है कि मैं जीवन के हर क्षेत्र में, व्यक्तियों और राष्ट्रों, दोनों के समक्ष सत्य और अहिंसा को अपनाने का प्रस्ताव रखता हूँ | मैंने यह आशा बांध रखी है कि इसमें स्त्री निर्विवाद
नेता बनकर सामने आएगी और इस प्रकार मानव के विकास में अपना स्थान सुनिश्चित करने के फलस्वरूप वह अपनी हीन भावना का भी लागू कर सकेगी।

यदि वह सफलतापूर्वक ऐसा कर सकी तो वह इस आधुनिक सीख में विश्वास करने से भी दृढ़तापूर्वक इंकार कर देगी कि इस दुनिया में हर चीज़ योग आवेग द्वारा निर्धारित और विनिमयम होती है। (वहीं पृ. 13)

स्वयं पीड़ा भोगना स्त्री के स्वभाव में है। इसलिए अहिंसा उसके लिए अधिक सहज है। (हरि, 5-5-1946, पृ. 118)

मैं पुरुषों की अपेक्षा ब्लियों से अशधक प्रेम और सशहष्णुता की आवश्यकता में अपना स्थान सुशनशश्चत करने के फलस्वरूप वह अपनी हीन भावना का भी त्याग कर सकेगी।

यदि वह सफलतापूर्वक ऐसा कर सकी तो वह इस आधुनिक सीख में शवश्वास करने से भी दृढ़तापूर्वक इंकार करेगी। शलया में हर चीज़ योग आवेग द्वारा निर्धारित और विनिमयम होती है। (हरि, 18-5-1947, पृ. 155)

स्त्री-पुरुष समानता

जहां तक स्त्रियों के अधिकारों का सवाल है, मैं कोई समझौता नहीं करूंगा। अर्थात, मैं इस विषय में अपनी विचारधारा के अनुसार चर्चा करता हूं। (प्रकृति ने स्त्री और पुरुष को एक-दूसरे का पूरक बनाया है।) जिस प्रकार उनके शरीर के आकार परिभाषित है, उसी प्रकार उनके काम भी परिभाषित है। (हरि, 17-10-1929, पृ. 340)

स्त्री-पुरुष समानता का यह अर्थ नहीं है कि काम-धंधे भी समान हों। यह सही है कि स्त्री के आंखों के अनुसार काम करना अथवा भाषा लेकर चलने पर कोई कानूनी बंदियों नहीं होनी चाहिए। लेकिन जो काम पुरुष का है, उसे करने से वह स्वच्छता झिझकती है। प्रकृति ने स्त्री और पुरुष को एक-दूसरे का पूरक बनाया है। जिस प्रकार उनके शरीर के आकार परिभाषित है, उसी प्रकार उनके काम भी परिभाषित है। (हरि, 2-12-1939, पृ. 359)

कानून बनाने का काम ज्यादातर पुरुषों के हाथ में रहा है, और इस स्वनिर्धिरता काम को करते समय पुरुष ने सदा औपचारिक और विबेक से काम नहीं किया है। स्त्रियों के पुनरुद्धार का सबसे बड़ा काम यह है कि हम उन कलंकों को मिटा दें जिन्हें हमारे शास्त्रों ने स्त्रियों के अनिवार्य और स्वभावगत लक्षण बताया है। इसे कौन करेंगे और कैसे करेंगे?

मेरी विनिमय समस्तता में, इसके लिए हमें सीता, दरम्यानी और द्रौपदी जैसी निर्मल, दृढ़ और आत्मनिर्भर महिलाएं पैदा करनी होंगी। यदि हम यह कर सकें तो हिंदू समाज इन आधुनिक बहनों को भी बहीं आदर देगा जो वह बीते युग की महान देवियों को देता आया है। उनके शाब्दिक भी शास्त्र के समान प्रामाणिक माने जाएंगे। हम अपनी स्मृतियों में उन पर कहीं-कहीं किए गए आवेगों के लिए शर्म महसूस करेंगे और जल्दी ही उन्हें भुला देंगे। हिंदू समाज में ऐसी क्रांतियों पहले हुई है और भविष्य में भी होंगी; वस्तुतः इससे धर्म को स्थिरता प्राप्त होगी। (स्पीरा, पृ. 424)
मैं स्त्री और पुरुष में कोई भेद नहीं करता | स्त्रियों को भी पुरुषों के समान स्वार्थ को स्वाधिन अनुभव करना चाहिए | वीरता केवल पुरुषों की बूढ़ी नहीं है | (हरि, 5-1-1947, पृ. 478)

आज भुगत कम महिलाएं राजनीति में भाग लेती हैं और इनमें से अधिकांश स्वतंत्र विचार नहीं करतीं | वे अपने माता-पिता अथवा अपने पति के आदेशों का पालन करके ही संतोष का अनुभव कर लेती हैं | अपनी निर्भरता का अहसास होने पर वे स्त्री-अधिकार की आवाज़ बुलंद करने लगती हैं | महिला कार्यकर्ताओं को चाहिए कि ऐसा करने के बजाए स्त्रियों के नाम मतदाता सूचियों में सिखाएं, उन्हें व्यावहारिक शिक्षा दें या दिलाने की व्यवस्था करें, उन्हें स्वतंत्र रूप से सोचने की सीख दे और जात-पात के बंधनों से मुक्त कराएं ताकि बदला आए | इससे पुरुष उनकी शक्ति और त्याग की क्षमता को पहचानने और उन्हें प्रतिष्ठित स्थानों पर बिठाने के लिए बाध्य होंगे | (हरि, 21-4-1946, पृ. 96)

स्त्रियों का स्वार्थ को पुरुषों के अधीन या उनसे ही समझने का कोई कारण नहीं है | विभिन्न भाषाओं में स्त्री को पुरुष का अधारण कहा गया है और इसी तरह से, पुरुष स्त्री का अधारण हुआ | ये अलग सात नहीं हैं, बल्कि एक ही के दो भाग हैं | अंग्रेजी भाषा और भी अनावश्यक | (यंग, 23-3-1947, पृ. 80)

पुरुष के चरित्र की निर्मलता को लेकर इतनी विरक्त चिंता करने की क्या जरूरत है ? क्या पुरुष के चरित्र की निर्मलता के मामले में स्त्री को बोलने दिया जाता है ? पुरुष की पापकिराजी के बारे में स्त्री की चिंता की बात कभी सुनाई नहीं देती | स्त्री के चरित्र की निर्मलता को विनियमित करने का अधिकार पुरुष के हाथों में क्यों रहे ? यह चीज़ ऊपर से नहीं थोपी जा सकती | यह अंदर से राजनीति नहीं होती, उसे सुसंस्कृत नहीं कहा जा सकता | (हरि, 11-1-1948, पृ. 508)

पदरा
स्त्री के चरित्र की निर्मलता को लेकर इतनी विरक्त चिंता करने की क्या जरूरत है ? क्या पुरुष के चरित्र की निर्मलता के मामले में स्त्री को बोलने दिया जाता है ? पुरुष की पापकिराजी के बारे में स्त्री की चिंता की बात कभी सुनाई नहीं देती | स्त्री के चरित्र की निर्मलता को विनियमित करने का अधिकार पुरुष के हाथों में क्यों रहे ? यह चीज़ ऊपर से नहीं थोपी जा सकती | यह अंदर से पैदा होनेवाली चीज़ है, इसलिए यह व्यक्ति के अपने प्रयास पर छोड़ दिया गया होगा | (यंग, 25-11-1926, पृ. 415)

सतीत्व किसी तापमूख में विकसित नहीं होता | पदरा की दीवार खड़ी करके उसकी रक्षा नहीं की जा सकती | यह अंदर से पैदा होनेवाली चीज़ है और इसका महत्व तभी है जब यह प्रत्येक अपहरण का मुकाबला कर सके | (यंग, 3-2-1927, पृ. 37)
दहेज पाठ
यह प्रथा समाप्त होनी ही चाहिए | विवाह माता-पिता द्वारा पैसे के जुगाड़ का साधन नहीं रहना चाहिए | इस प्रथा का जाति प्रथा से घनिष्ठ संबंध है | जब तक चयन का क्षेत्र किसी जाति-विशेष के कुछ सो युवा लड़के अथवा लड़कियों तक सीमित रहेगा, दहेज प्रथा कायम रहेगी, भले ही उसके विरोध में कितनी ही आवाज़ उठाई जाए | अगर इस बुराई का उलटकर करना है तो लड़के-लड़कियों या उनके माता-पिताओं को जाति के बंधन के बाहर जा बैठना होगा | इसके लिए हमारी शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो राष्ट्रीय युवा पीढ़ी की मानसिकता में क्रांति ला दे | (अध्याय 23-5-1936, पृ. 117)

जो युवक दहेज को अपनी शादी की शर्त बनाता है, वह अपनी शिक्षा और देश को बदला करता है और स्वीकार का अनादर करता है |

...दहेज की कृस्तित प्रथा के विरुद्ध जबरदस्त जनमत देश ने आया जाना चाहिए और जो युवक इस पाप के पैसे में अपने हाथ काले करे, उसे समाज से बहसतृत कर दिया जाना चाहिए | तब तक युवक शिक्षा की स्वरूप ऐसा होना चाहिए जे राष्ट्रीय युवा पीढ़ी की मानसिकता में क्रांति ला दे | (यंग, 21-6-1929, पृ. 207)

विधवा पुनर्विवाह
अपने जीवन-साध्य के प्रेमवाह यदि कोई विवाह जान-बुझकर स्वेच्छा से वैधव्य स्वीकार करता है तो वह अपने घर का पति ना करता है और स्वयं धर्म का उत्तरक नहीं करता है | वे तब आरोप होते हर देश द्वारा आरोपित वैधव्य एक असहनीय भार है और यह घर को मुस्लिम पाप से अप्तन करता है तथा धर्म का पतन करता है |

यदि हमें शुद्ध रहना है और हिंदुत्व की रक्षा करना है तो हमें इस बलात्वैधव्य के विश्राम से अपने आपको युवक करना चाहिए | इस सुधार के लिए हम अपने वैधव्य के विश्व से अपने आपको युवक करना चाहिए | यह सुधार की शुरुआत उन घरों से की जानी चाहिए जिनमें बाल विवाह है | अभिभावकल के लिए हमें उनके द्वारा जब यह चयन जाना जाए तब होगा | लेखक का प्रयोग इसलिए नहीं कर रहा कि उनका देश को तो बनाता: विवाह कभी हुआ ही नहीं था | (यंग, 5-8-1926, पृ. 276)

तलाक
विवाह दो व्यक्तियों के बीच शरीर-संबंध के अधिकार की पुष्टि करता है; इसमें यह बात निहित है कि वे किसी अन्य व्यक्ति से शरीर-संबंध स्वीकार नहीं रखेंगे | पति-पत्नी के बीच शरीर-संबंध, उनकी संयुक्त सम्पत्ति से, उनके द्वारा जब वांछनीय समझा जाए तब होगा | लेखक विवाह पति अथवा पत्नी को यह अधिकार नहीं देता कि वह जब...
चाहे, शरीर-संबंध के लिए अपने साथी को विवश करे | यदि एक साथी नैतिक अथवा अन्य कारणों से दूसरे साथी की इच्छा का पालन न करे तो उस स्थिति में क्या किया जाना चाहिए, यह एक अलग प्रश्न है | व्यक्तिगत रूप से, अगर तलाक ही एकमात्र विकल्प हो तो मैं अपनी नैतिक प्रगति में बाधा डालने के बजाए तलाक के विकल्प को चुनने में हिचकहिचाऊता नहीं, बशर्ते कि मेरा इरादा विश्वास नैतिक आधार पर स्वयं को संयमित करने का हो।

(यंग, 8-10-1925, पृ. 346)
61. यौन शिक्षा

हमारी शिक्षा पद्धति में यौन विज्ञान की शिक्षा का...क्या स्थान है, या उसका कोई स्थान होना भी चाहिए अथवा नहीं? यौन विज्ञान दो प्रकार का है – एक वह जो काम के आवेग को नियंत्रित अथवा उस पर विजय पाने से संबंधित है और दूसरा, जो उसे उद्देश्य करने और तृप्त करने से संबंधित है। पहले प्रकार के यौन विज्ञान की शिक्षा बच्चे के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी कि दूसरे प्रकार के यौन शिक्षा हानिकारक और खतरनाक है और इसलिए सर्वथा त्याज्य है। सभी महान धर्मों ने काम को मनुष्य का सबसे कट्टर शटु माना है, जो ठीक भी है; क्रोध अथवा घृणा का नंबर उसके बाद ही आता है। गीता के अनुसार, क्रोध काम से ही उत्पन्न होता है। वैसे, गीता में, 'काम' को व्यापक अर्थ में लिया गया है। लेकिन यह उस संकृतित अर्थ पर भी उसी प्रकार लागू होता है जिसमें हम यहां उसका प्रयोग कर रहे हैं।

हमारा प्रश्न अभी भी अनुसरित है – क्या किशोर वय के बच्चों को प्रजनन अंगों के प्रयोग और उनके कार्य का ज्ञान कराना वांछनीय है? मुझे लगता है कि एक सीमा तक ऐसा ज्ञान कराना आवश्यक है। वर्तमान में, वे यह ज्ञान यहाँ-वहाँ से चुराते हैं जिसके विरोध में परिणामस्वरूप अनेक उपचार्य जन्मते हैं। हम काम के आवेग की ओर से अंख मुंडकर उसे नियंत्रित अथवा जीत नहीं सकते। इसलिए मैं सबके तीर्थों पर इस बात का समर्थन करता हूँ कि किशोर वय के लड़के-लड़कियों को अपने प्रजनन अंगों के महत्व और प्रयोग की शिक्षा दी जानी चाहिए।

लेकिन जिस यौन शिक्षा का समर्थन में कर रहा हूँ, उसका ध्येय काम के आवेग को जीतना और उसका उदात्तकरण होना चाहिए। इस शिक्षा से बच्चों के मन में अपने आय यह बात पर कर जानी चाहिए कि मनुष्य और पशु के बीच में एक मौलिक भेद है और वह यह कि प्रकृति ने मनुष्य को सोचने और महसूस करने, दोनों की योग्यताएं देकर विशेष रूप से उपक्रमित किया है। मनुष्य शब्द का अर्थ ही यह है कि वह ऐसा जीव है जो केवल महसूस ही नहीं कर सकता बल्कि सोच भी सकता है। इसलिए विवेकशून्य वृत्तियों के ऊपर विवेक के प्रभुत्व की लागर्ना मनुष्यता को ही लागर्ने के समान है। मनुष्य तेजी से सोच सकता है और यह सोच उसकी वृत्तियों को निर्देशित कर सकती है। इसके विपरीत, पशु की आत्मा सुप्तावस्था में रहती है। हृदय को जगाना आत्मा को जगाना है जिससे विवेक जाग्रत होता है और भले-भरे के बीच भेद नहीं करने की क्षमता विकसित होती है।

इस सच्चे यौन विज्ञान की शिक्षा कौन दे? जाहिर है कि यह शिक्षा वही दे सकता है जिसने अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली हो। खगोलशास्त्र और विज्ञान की अन्य शाखाओं को पढ़ाने के लिए ऐसे अध्यापक नियुक्त किए जाते हैं जिन्हें उनका प्रशिक्षण लिया है और जिन्हें अपने विषय का प्रामाणिक ज्ञान है। इसी प्रकार यौन
विज्ञान अर्थात यौन नियंत्रण की शिक्षा देने वाले अध्यापक ऐसे होने चाहिए जिन्होंने इस विषय का अध्ययन किया है और जो स्वयं पर नियंत्रण पा चुके हैं | आप कितनी ही ऊंची-ऊंची बातें कीजिए, पर जब तक उनके पीछे ईमानदारी और अनुभव नहीं होगा तब तक वे जड़ और निष्प्राण रहेंगी और लोगों के हृदय में पैठने और उन्हें प्रेरित करने में नितांत असफल सिद्ध होंगी | इसके विपरीत, जो वाणी आत्मप्रबल और सच्चे अनुभव से उद्भूत होती है, वह सदा अपने उद्देश्य में सफल होती है |

आज हमारा संपूर्ण पर्यावरण – हमारी पढ़ाई, हमारा विचार और हमारा सामाजिक व्यवहार – प्राय: कामेच्छा को सहारा देने और उसकी पूर्ति के उपाय करने की ओर प्रवृत्त है | इसके चंगुल से निकलना आसान नहीं है | लेकिन हमें इसके लिए पूरा जोर लगा देना चाहिए | अगर धोंड़े-से भी अध्यापक ऐसे हों जिन्हें व्यावहारिक अनुभव हो, जो आत्मनियंत्रण को मनुष्य का सर्वोच्च कर्तव्य मानते हों और जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के प्रति सच्चे तथा अमित विश्वास से अनुप्राणित हों तो उनका श्रम बच्चों के जीवन-पथ को आत्मोहित कर सकता है….असावधानों को कामुकता के दलदल में फंसने से बचा सकता है और जो पहले ही उसके शिकार हो चुके हैं, उनका उद्दार कर सकता है | (हरि, 21-11-1936, पृ. 322)
62. स्त्रियाँ के विरुद्ध अपराध

औरत की आबरू

मेरी सदा से यह धारणा रही है कि स्त्री की इच्छा के विरुद्ध उसके साथ कुक्कुल्त करना असंभव है | ऐसा तभी होता है जब वह भयग्रस्त हो जाती है या अपनी नैतिक शक्ति को नहीं पहचान पाती | यदि वह आक्रांता की शारीरिक शक्ति का मुकाबला न कर पाए तो उसके चरित्र की निर्मलता उसे पुरुष की पाशविकता का शिकार होने से पहले ही अपने प्राण दे देने की शक्ति प्रदान करेगी |

सीता का उदाहरण लीजिए | शारीरिक दृष्टि से वह रावण के आगे कमजोर थी, लेकिन उसकी चारित्रिक निर्मलता रावण के अकूत बल पर भी भारी थी | उसने सीता को अनेक प्रकार के प्रतिकूल दिए, पर वह सीता की सहमति के बिना उसके शरीर का चंपा नहीं कर सका | इसके विपरीत, यदि स्त्री अपनी शारीरिक शक्ति या हथियार पर भरोसा करे तो उस शक्ति के चूकते ही वह पररत हो जाएगी | (हरि, 1-9-1940, पृ. 266)

मेरी निश्चित धारणा है कि जो स्त्री निर्भय है और यह जानती है कि उसकी चारित्रिक निर्मलता उसकी सबसे बड़ी ढाल है, उसकी आबरु कभी नहीं लट सकती | पुरुष कितना ही पाशविक हो, वह उसकी निर्मलता के अप्रिस्तंभ के सामने शर्म से झुक जाएगा....

इसीलिए मैं महिलाओं से कहता हूँ....यह साहस पैदा करने की कोशिश करो | अगर वे ऐसा कर सकें तो वे निर्भय हो जाएंगी और आक्रमण का बिचार मन में आते ही आज की तरह कांपना बंद कर देंगी....अभिवाक्रों और पतियों को चाहिए कि महिलाओं को निर्भर बनने की शिक्षा दे | इसका सबसे अच्छा तरीका ईश्वर में प्राप्त आस्था पैदा करना है | यद्यपि ईश्वर दिखाई नहीं देता, पर वह मनुष्य का अचूक संरक्षक है | जिसे ईश्वर में आस्था है, वह व्यक्ति सर्वाधिक निर्भर होता है....

जब स्त्री पर आक्रमण हो तो उसे हिंसा, अहिंसा की बात नहीं सीखनी चाहिए | उसका प्रमुख कर्तव्य अपनी रक्षा करना है | अपनी आबरू को बचाने के लिए जो भी उपाय उसको सूत्त, वह उसे अपनाए | ईश्वर ने उसे नाखून और दांत दिए हैं | उसे अपनी पूरी ताकत के साथ उनका इस्तेमाल करना चाहिए और जरूरी हो तो इस प्रयास में जान देने चाहिए | जिस पुरुष या स्त्री ने मृत्यु के भय को जीत लिया है, वह अपनी जान देकर स्वयं अपनी ही रक्षा नहीं कर सकता बल्कि दूसरों की भी कर सकता है | (हरि, 1-3-1942, पृ. 60)

जिस समाज में हम रह रहे हैं उसमें स्त्री की आबरू पर इस तरह के हमले होते रहते हैं....अहिंसक स्त्री अथवा पुरुष को अपनी आत्मसंरक्षा के लिए अथवा अपने घर की सिंहों की आबरू बचाने के लिए उपलब्ध न मन में लाए बगैर अपने जीवन की बलि दे देनी चाहिए | यह परस पीरता है | (हरि, 15-9-1946, पृ. 312)
वीरता और इज्जत के साथ मरने की कला सीखने के लिए किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती; इसके लिए केवल ईश्वर में जाग्रत विश्वास चाहिए। | (हरि, 5-10-1947, पृ. 354)

वेश्यावृत्ति

वेश्यावृत्ति उतनी ही पुरानी है जितनी यह दुनिया, लेकिन आज यह जिस प्रकार नगर-जीवन का एक नियमित लक्षण बन गई है, वैसी शायद पहले कभी नहीं थी | जो भी हो, एक वक्त ऐसा जरूर आएगा जब मानवता इस अभिशाप के विरुद्ध विद्रोह कर देगी और वेश्यावृत्ति बीते जमाने की चीज हो जाएगी | मानवता ने अनेक कु मीतियों से, भले ही वे बहुत असें से चली आ रही हों, इसी तरह छुटकारा पाया है | (यंग, 28-5-1925, पृ. 187)

वेश्यावृत्ति के साथ निपटने का सही तरीका यह है कि महिलाएं दोहरा प्रचार करें : (अ) उन स्त्रियों के बीच जो आजीविका के लिए अपना शरीर बेचती हैं, और (आ) पुरुषों के बीच, जिन्हें वे अपनी उन बहनों के प्रति बेहतर व्यवहार करने के लिए मजबूर करें जिन्हें वे अज्ञातता या धृष्टावश अबला कह कर पुकारते हैं |

मुझे याद है कि वर्षों पहले, उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में, वीर साल्वेस आर्मी के सदस्य, अपने प्राणों को दांव पर लगाकर, बंबई की बदनाम गलियों में जहां वेश्यागृह थे, धरना करते थे | कोई कारण नहीं कि ऐसे ही अभियान और बड़े पैमाने पर न चलाए जा सके | (हरि, 4-9-1937, पृ. 233)

'वेश्या' शब्द व्यभिचारिणी स्त्री के लिए प्रयुक्त होता है | लेकिन वेश्यागामी पुरुष भी उन स्त्रियों से कम पाप के भागी नहीं हैं जो, अनेक मामलों में, अपने पेट भरने के लिए ही अपने शरीर को बेचती हैं | इस कुप्रथा को अवध घोषित कर देना चाहिए | लेकिन कानून भी एक सीमा तक ही मदद कर सकता है | कानून के बावजूद प्रत्येक देश में चोरी-खिल शरीर का व्यापार चलता है | इसमें जाग्रत लोकमत कानून की उसी प्रकार सहायता कर सकता है जिस प्रकार वह अनेक कानूनों को व्यर्थ कर देता है | (हरि, 15-9-1946, पृ. 310)
63. आश्रम के व्रत

मैंने जीवन का एक सूत्र माना है और वह यह कि आदमी चाहे जितना बड़ा हो, उसके द्वारा किया गया कोई काम तब तक नहीं फल-फूलेगा जब तक कि वह व्यक्ति धर्मनिष्ठ न हो। लेकिन धर्म है क्या ? ....मेरा उत्तर है : धर्म वह नहीं है जो दुनिया भर के धर्मग्रंथों को पढ़ने पर मिलेगा; धर्म वस्तुतः बुद्धिग्राहियाँ नहीं हैं, यह हदयग्राहिया है। यह हमारे लिए कोई बाहर की चीज़ नहीं है, बल्कि इसका विकास हमारे भीतर से ही होता है। यह हमेशा हमारे भीतर रहता है: कुछ को इसका बोध होता है, कुछ इससे बेखबर रहते हैं। लेकिन यह रहता हमेशा है; हम अपने अंदर विवादान में इस धार्मिक वृत्ति को बाहरी सहायता से जगाएं या आंतरिक विकास करके, हम जो भी तरीका अपनाएं: पर अगर हम कोई काम ठीक ढंग से करना चाहते हैं या ऐसा कुछ करना चाहते हैं जो टिकने वाला हो तो हमें अपनी व्यक्तित्व की जगाना अवश्य होगा।

हमारे धर्मग्रंथों ने कुछ नियम निर्धारित किए हैं जिन्हें उन्होंने जीवन के सूत्र और स्वयंसिद्ध बातें कहा है। यह हैः हमें स्वतः स्पष्ट सत्य मानकर चलना है। हमारे धर्मग्रंथों ने कुछ शनयम शनधारियों ने जीवन के सूत्र और स्वयं स्फुटने वाले बातें कहा है। यह हैः हमें स्वतः स्पष्ट सत्य मानकर चलना है। हमारे धर्मग्रंथों ने कुछ शनयम शनधारियों ने जीवन के सूत्र और स्वयं स्फुटने वाले बातें कहा है।

सत्य का व्रत?

यहाँ सत्य से आशाय वह नहीं है जो हम सामान्यतया समझते हैं; सत्य से आशाय वह भी नहीं है जो ‘सत्यवादिता सबसे अच्छी नीति है’ में प्रतिध्वनित होता है जिसका निहितार्थ यह है कि आगर यह सबसे अच्छी नीति न हो तो हम इसका लागू कर सकते हैं। आश्रम में सत्य से आशाय यह है कि हमें अपने जीवन को हर कीमत पर सत्य के नियम के अनुसार चलाना है, और इसे परिभाषित करने के लिए मैंने प्रह्लाद के दृष्टिकोण को आदर्श माना है। सत्य की रक्षा के लिए प्रह्लाद ने स्वयं अपने पिता का विरोध करने का साहस किया, उन्होंने प्रतिकार द्वारा अथवा पिता के विरुद्ध जवाबी कार्रवाई करके अपनी रक्षा नहीं की। लेकिन सत्य को जैसा प्रह्लाद जानते थे, उसकी रक्षा के लिए वे अपने पिता और उनके अनुचरों द्वारा दी गई यातनाओं का प्रतिकार किया बिना अपने प्राण देने के लिए प्रस्तुत हो गए। यही नहीं, उन्होंने उन यातनाओं से स्वयं को बचाने का भी प्रयास नहीं किया, उन्होंने अपने होठों पर मुस्कान लिए हुए वे सभी असंख्य यातनाओं इसलिए जिनके परिणामस्वरूप अंत में सत्य की विजय हुई। प्रह्लाद ने यातनाएं इसलिए नहीं झेलीं कि उन्हें पता था कि अपने जीवनकाल में ही एक-न-एक दिन वे सत्य के नियम की अदृश्यता की अवश्य सिद्ध कर सकेंगे। होना तो यही था, लेकिन अगर यातनाएं झेलकर झेलते उनके प्राण भी चले।
जाते तो भी वे सत्य पर दृढ़ रहते | यही वह सत्य है जिसका मैं पालन करना चाहूंगा....आश्रम का नियम है कि जब हम 'न' कहना चाहें तो हमें 'न' ही कहना चाहिए, भले ही उसका परिणाम कुछ भी हो।

अहिंसा का सिद्धांत

अहिंसा का शाब्दिक अर्थ है 'न मारना' | लेकिन मेरी दृष्टि में इसके हजारों अर्थ हैं जो मुझे बढ़ी ऊंचाई, बल्कि कहूं कि अनंत ऊंचाई के दर्शन करते हैं....अहिंसा का वास्तविक आशय है कि तुम किसी को कष्ट नहीं पहुंचाओगे; जो व्यक्ति तुम्हें अपना शत्रु समझता है, उसके लिए भी अपने मन में द्वेष की भावना नहीं लाओगे | जो व्यक्ति इस सिद्धांत में विश्वास करता है, वह किसी को अपना शत्रु नहीं मानता....फिर भी कुछ लोग ऐसे जरूर होते हैं जो स्वयं को उसका शत्रु मानते हैं....इसलिए हमने यह धारणा बनाई है कि ऐसे लोगों के बारे में भी अपने मन में दुर्भवन न लाए | अगर हम चूंकि का जवाब घूंसे से दे देंगे तो हम अहिंसा के सिद्धांत से यथोत्तर हो जाएंगे | मैं इससे भी एक कदम आगे जाता हूँ | अगर हम अपने किसी मित्र या तथाकथित शत्रु की कार्यवाही का बुरा मान जाएं तो भी भी अहिंसा के सिद्धांत से विचारित होना है | जब मैं कहता हूँ कि 'बुरा न मानने' तो मेरा आशय यह नहीं है कि उसके प्रति मौन साथ ले, बल्कि 'बुरा न मानने' से मेरा तात्पर्य है कि हम यह मानती न मानते कि शत्रु का किसी तरह अपकार हो जाए, या कि वह समाप्त हो जाए – हमारी या किसी अन्य व्यक्ति की कार्यवाही के कारण ही नहीं, बल्कि दैवी घटना के फलस्वरूप भी नहीं | यदि हम ऐसी मनोवैज्ञानिक भावना मानते हैं तो वह भी अहिंसा के सिद्धांत से विचारित होना है | जो व्यक्ति आश्रम के सदस्य बनना चाहते हैं, उनके लिए अहिंसा के इस अर्थ का शब्दशा: भविष्य अभ्यास अनिवार्य है |

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम इस सिद्धांत पर शत-प्रतिशत आचरण करते हैं | ऐसा कहां कर पाते हैं ? यह तो एक आदर्श है जो हमें प्राप्त करना है और यदि हम इसे प्राप्त करने में समर्थ हों तो यह इसी क्षण प्राप्त करने योग्य है | लेकिन यह कोई ज्यामितिक साध्य नहीं है और न ही उच्चतर गणित का कोई कठिन प्रश्न है – यह इन सबसे कहीं ज्यादा कठिन चीज़ है | तुम्हें से बहुतों ने उन समस्याओं को सुलझाने के लिए कठिन परिश्रम किया है | अगर तुम इस सिद्धांत का पालन करना चाहते हो तो तुम्हें कठिन परिश्रम से भी कहीं ज्यादा उद्योग करना होगा | तुम्हें जाने कितनी रातें आख़ो-ही-आख़ों में काट देनी होगी और अनेक मानसिक यातनाओं तथा घोर पीड़ाओं से गुजरना होगा, तब कहीं जाकर तुम्हें यह लक्ष्य दिखाई देगा | अगर हम यह जानना चाहते हैं कि धार्मिक जीवन क्या होता है तो तुम्हें और मुझे इस लक्ष्य की प्राप्त करना ही होगा; इससे कम किसी चीज़ से काम नहीं चलेगा |

....जो व्यक्ति इस सिद्धांत की प्राकृतिकता में विश्वास करता है, वह जब इस लक्ष्य के निकट पहुँचने लगेगा तो पाएगा कि सारा संसार उसके चरणों में है....अगर तुम अपने प्रेम – अर्थात अहिंसा – को इस रूप में प्रकट कर पाते हो तो
कि वह तुम्हारे तथाकथित श्रद्धा पर अभिक है तथा ओरमेट प्रभाव छोड़ जाता है, तो वह निश्चय ही उस प्रेम का प्रतिदान देगा....इस नियम के अंतर्गत पूर्व-नियोजित हत्याओं या खुलमुखिता कल्पना अथवा...अपने देश के लिए या तुम्हारे देखरेख में जो प्रियजन है। उनके समान की रक्षा के लिए भी किसी तरह की हिंसा का कोई स्थान नहीं है। क्योंकि वह उनके समान की निकृष्ट रक्षा ही होगी। अहिंसा का सिद्धांत कहता है कि जो तुम्हारे देखरेख में है, उनके समान की रक्षा करने के लिए तुम्हें सवंय को अल्पाचारी के हाथों में दे देना चाहिए। और इसके लिए हिंसा पर उतारू होने की अपेक्षा कहीं अधिक शारीरिक और मानसिक सहायता की जरूरत है....अगर तुम अपने प्रियजन और विरोधी के बीच डटे रहते हो और बिना प्रतिकार किए विरोधी की मार खाते रहते हो, तो परिणाम क्या होता है? मैं तुम्हें चचन देता हूँ कि अल्पाचारी अपने सरी हिंसा तुम्हारे उपर निवालेगा, और तुम्हारा प्रियजन सही-सलामत रहेगा।

इस जीवन-पद्धति में, राष्ट्रप्रेम की ऐसी कोई धारणा नहीं है जिसके कारण उस प्रकार के युद्धों को उत्पन्न ठहराया जा सके जैसे आज यूरोप में लड़े जा रहे हैं।

**ब्रह्मचर्य का प्रत**

जो राष्ट्रीय कर्ता चाहते हैं और वह सच्चे धार्मिक जीवन की ज़िलक पाना चाहते हैं, उन्हें वे विभविहित हों या अविभविहित, ब्रह्मचर्य का राजन करना चाहिए। विवाह केवल स्त्री को पुरुष के निकट लाता है और वे एक वैशेषिक अर्थ में मित्र बन जाते हैं। मित्रता का यह बंधन न इस जन्म में दिल्ली है और न अगले जन्मों में। लेकिन मैं नहीं समझता कि विवाह की हमारी जो धारणा है, उसमें कामवासना का प्रवेश होना चाहिए। जो भी हो, हम आश्रम में आकर रहने वालों के सामने यह प्रति स्थान करते हैं। मैं यहाँ इसकी और चर्चा नहीं करूँगा।

**रसनेउनियार के नियंत्रण का प्रत**

जो आदर्श सरलता के साथ अपनी वासनाओं पर नियंत्रण स्थापित करना चाहता है, उसे अपनी रसनेउनियार की वश में करना चाहिए। मुझे मालूम है कि यह व्रत सबसे कठिन है - जब तक हम उद्दीपक, गरम और उत्तेजक मसालों से छुटकारा पाने के लिए कमर नहीं करेंगे। हम वासनाओं के अतिरिक्त, अनावश्यक और उत्तेजक उद्दीपन को नियंत्रित नहीं कर पाएंगे। पर्दे हमने ऐसा न किया, तो हम ईश्वर द्वारा प्रदाता इस शरीर रूपी पवित्र धाति का दुर्रोग करेंगे और पशुओं से भी बदतर जीवन जीते हुए खान, पान, मैथुन आदि उन्हीं वासनाओं में लिप्स रहे आएंगे जो समान रूप से मनुष्य और पशु, दोनों के लक्षण हैं। लेकिन क्या तुमने कभी गाय या गो जीवन तरह जीभ की गुलामी करते हुए देखा है? तुम्हारे विचार में क्या यह संस्कृति की पहचान है, सच्चे जीवन की पहचान है, कि हम अपने व्यंजनों की संख्या में इतनी वृद्धि करते जाएं कि यह भी पता न रहे कि हम कहां हैं, और नये-नये व्यंजनों की तलाश में तब तक लगे रहें जब तक कि पूरी तरह पापार बनकर अल्पाचारी और अप्पज्जापन दिए रहते हैं?
अस्तेय का ब्रत

मेरा मानना है कि हम सब एक तरह से चोर ही हैं | अगर मैं कोई ऐसी चीज लेकर अपने पास रख लेता हूं जिसकी मुझे तकाल आवश्यकता नहीं है तो मैं किसी अन्य व्यक्ति से वह चीज़ चुरा रहा हूं | प्रकृति का यह मौलिक नियम है, जिसका कोई अपवाद नहीं है, कि वह हमारी देन-दिन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जितना जरूरी है, ठीक उत्तर ही उत्त्यादन करती है; और यदि प्रत्येक व्यक्ति उसमें से सिर्फ़ उत्तर हिस्सा ही हो ते जितने की उसे जरूरत है और फालतू बिलकुल न ले तो दुनिया में से कंगाली उठ जाएगी और कोई आदमी भूख से नहीं मरेगा | मैं समाजवादी नहीं हूं और मैं जिनके पास संपत्ति है, उनसे उसका हरण करना भी नहीं चाहता, लेकिन मैं यह जरूर कहता हूं कि जो व्यक्ति अध्यक्ष में से आते हुए आतोक के दर्शन करना चाहते हैं, उन्हें इस नियम का पालन करना होगा | मैं किसी से उसकी संपत्ति छीनना नहीं चाहता, व्यक्ति यह अहिंसा के नियम का लागहोगा | अगर किसी के पास मुझसे ज्यादा संपत्ति हो तो हो | लेकिन जब तक मेरे जीवन के नियम का प्रश्न है, मुझे जिस चीज़ की जरूरत नहीं है, उसे मैं अपने पास रखने का साहस नहीं करना चाहता | भारत में लाखों लोग ऐसे हैं जो सिर्फ़ एक जून रोटी खाना रहते हैं और वह भी रुखी, सिर्फ़ चुटकी भर नमक के साथ | जब तक इन गरीबों को भोजन और वस्त्र उपलब्ध नहीं होते तब तक हमारे पাস आज जो संपत्ति है, उसे रखने का हमें कोई अधिकार नहीं है | आपको और हमको, जो ज्यादा समझदार हैं, अपनी आवश्यकताओं का समन्वय करना चाहिए, और स्वेच्छापूर्वक अभाव की जिद्दी भी जीनी चाहिए ताकि इन गरीबों की देखभाल हो सके और उन्हें भोजन-वस्त्र मिल सके |

अपरिग्रह का ब्रत

यह तो फिर अपने आप आ आता है |

स्वदेशी का ब्रत

स्वदेशी का ब्रत अनिवार्य ब्रत है | जब हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने पड़ोसी को छोड़कर किसी और के पास जाते हैं तो मानव जाति के एक पत्थर नियम को तोड़ते हैं | अगर कोई आदमी बंदी से आकर तुम्हें कुछ सामान बेचना चाहता है और यदि तुम्हारे मद्दत में जनमें और पले-बढ़े किसी व्यापारी के पास भी बेचने के लिए वही सामान है तो तुम्हारा बंदी के व्यापार से सामान खरीदना उचित नहीं है | स्वदेशी की मेरी धारणा यहीं है | अपने गांव में तुम्हें मद्दत से बाल काटने का प्रशिक्षण लेकर आए नाई के बजाए गांव के नाई को ही प्रश्रय देना है | अगर तुम समझते हो कि तुम्हारे गांव का नाई भी मद्दत के नाई जैसा कुशल हो जाए तो उसे इसका प्रशिक्षण दिला सकते हो | चाहो तो उसे जरूर मद्दत भेजो और उसे वहां से प्रशिक्षण दिला दो | जब तक तुम यह नहीं करते तब तक उस नाई को छोड़ तुम्हारे लिए उचित नहीं है | यह स्वदेशी की भावना है | तदनुसार अगर हमें लगे कि बहुत-सी चीज़ें भारत में उपलब्ध नहीं है तो हमें उनके बजाए भी काम
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

चलाना चाहिए | हमें बहुत-सी चीजों के बगैर काम चलाना पड़ सकता है, लेकिन मेरा विश्वास करो कि वैसी मनस्थिति विकसित कर लेने पर तुम्हें लगेगा कि तुम्हारे कंधों से एक बड़ा बोझ उतर गया है | यह अनुभव ठीक वैसा ही होगा जैसा कि 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' नामक अंग्रेजी पुस्तक में पिलग्रिम को हुआ था | एक समय ऐसा आया जब पिलग्रिम के ऊपर से हम भारी बोझ उतर गया जिसे हम अनजाने ही ढो रहा था और तब उसे अनुभव हुआ कि वह जब यात्रा पर रवाना हुआ था तब के मुकाबले अब कितना ज्यादा आजाद था | उसी प्रकार की अनुभूति स्वदेशी की भावना को स्वीकार करते ही हमें भी होगी |

अभ्यास का व्रत

मैंने भारत-भ्रमण करते हुए पाया कि मेरे देशवासी एक जड़ताकारी भाव से ग्रस्त हैं | हम सार्वजनिक रूप से अपनी बात कहने का साहस नहीं कर पाते, हम छुपे तौर पर ही अपनी राय जाहिर करते हैं | हम अपने घर की चहारदीवारी में कुछ भी करें, लेकिन उन चीजों का पता जनता को नहीं लगता |

अगर हमने मौनव्रत रखा होता तो मुझे कोई आपत्ति न होती | मेरे कहना है कि हमें केवल एक शक्ति से डरना चाहिए, और वह शक्ति है ईश्वर | जब हम ईश्वर से इरादा लगाते हैं तो भारत की प्रथा हमारे साथ लगा है | यह अनुभव ठीक वैसा ही होगा जैसा कि 'शपल शग्र' के ऊपर से वह भारी बोझ उतर गया जिसे वह अनजाने ही ढो रहा था और तब उसे अनुभव हुआ कि वह जब यात्रा पर रवाना हुआ था तब के मुकाबले अब कितना ज्यादा आजाद था | उसी प्रकार की अनुभूति स्वदेशी की भावना को स्वीकार करते ही हमें भी होगी |

‘अछूतों’ के संबंध में व्रत

आज हिंदुत्व के ऊपर एक अमित लांचन लगा हुआ है | मुझे इस बात पर विश्वास करने से इंकार है कि यह प्रथा अन्त काल से चली आ रही है और हमें विरासत में मिली है | मेरे ख्याल में हमारा समाज जब घोड़ा पतन की अवस्था में होगा तब यह 'छूआछूत' की दुखदायी, घूणित और गुलामी की प्रतीक भावना धार उठी होगी | इस कुप्रभाव न हमारे समाज में जदूं जमा रही है और अगर भी हम इसके शिकार हैं | मेरी समझ में, यह एक अभिशाप है; और जब तक यह अभिशाप हमारे साथ लगा है तब तक यह समझना चाहिए कि इस पवित्र भूमि पर जो-जो विपदाएँ आ रही हैं, ये सब हमारे इस घोड़ा पाप का ही दंड है | मेरी समझ में नहीं आता कि किसी व्यक्ति को उसके काम की बजह से अछूत को समझाना जाना चाहिए; और आप छात्राओं जो आधुनिक शिक्षा पा रहे हैं, यदि इस अपराध के भागीदार बने रहे तो अच्छा यही होता कि आप अशिक्षित ही रह जाते |

मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा

यूरोप में, प्रत्येक सुसंस्कृत व्यक्ति केवल अपनी ही भाषा नहीं सीखता, बल्कि अन्य भाषाएं भी सीखता है | भारत की भाषा समस्या को हल करने के लिए हम आश्रमवासियों को अधिक-से-अधिक भारतीय भाषाएं सीखने पर बल देना चाहिए | इन भाषाओं को सीखने का कष्ट अंग्रेजी में निपुणता प्राप्त करने की तुलना में कुछ भी नहीं
प्रभावव  हम छ ू आछ ू त
बन के प्रभावव  हम छ ू आछ ू त

यदि छात्रजगत इस देश के राजनीतिक मंच पर एकत्र हो जाए तो यह राष्ट्रीय संवृद्धि का कोई स्वस्थ चिंता नहीं है; लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अपने बिद्वारी-जीवन में तुम्हें राजनीति का अध्ययन नहीं करना चाहिए | राजनीति हमारे जीवन का एक हिस्सा है, हमें अपनी राष्ट्रीय संस्थाओं को समझना चाहिए | हमें अपने बचपन से ही यह समझ पैदा करनी चाहिए | इसीलिए हमारे आश्रम में प्रत्येक बच्चे को देश की राजनीतिक संस्थाओं को समझने की शिक्षा दी जाती है और बताया जाता है कि देश में कौन-कौन सी नयी भावनाएं, नयी-नयी आकांक्षाएं और नया जीवन पनप रहा है | लेकिन हम धार्मिक आस्था के स्थिर और अम्बार प्रकाश का प्रसार भी चाहते हैं - उस आस्था का नहीं जो केवल बुद्धिजीवियों को आकर्षित करती है, बल्कि वह आस्था जो हृदय पर स्थायी रूप से अंकित हो जाती है | सबसे पहले हम अपनी धार्मिक बेंतना को प्राप्त करना चाहते हैं, इसके साथ ही जीवन का संपूर्ण क्षेत्र हमारे सामने खुल जाता है: यह पवित्र विशेषाधिकार सभी का है ताकि आज के किशोर जब पुरुषत्व को प्राप्त हों तो वे जीवन-संध्याक के लिए पूर्ण तरह तैयार हों | आज स्थिति यह है कि अधिकांश राजनीतिक गतिविधियों छात्रों तक सीमित है और जब उनका छात्रजीवन समाप्त हो जाता है तो छोटे-मोटे रोजगारों में लगकर वे गुमनामी के शिकार हो जाते हैं | न उन्हें ईश्वर के बारे में कोई ज्ञान होता है, न वे जानते हों कि छात्रों के मार्ग में की जाती है जो उन नियमों का पालन करने से आती हैं जिन्हें अपने आपके समक्ष प्रस्तुत किया है.... YMCA सांभाग, मद्रास में स्मारक, फरवरी 16, 1916; (स्पीरा, पृ. 377-90)
12. स्वतंत्रता और लोकतंत्र

64. स्वतंत्रता का दिव्य संदेश

धीमी स्वतंत्रता स्वतंत्रता जैसी कोई चीज़ नहीं है | स्वतंत्रता तो जन्म के समान है | जब तक हम पूर्ण स्वतंत्र नहीं, हम गुलाम हैं | सभी प्रकार के जन्म एक क्षण में ही घटित होते हैं | (यंग, 9-3-1922, पृ. 148)

मुलम्मेदार गुलामी

स्वाभिमानी व्यक्ति के लिए सोने की जंजीरें भी उतनी ही क्लेंसकारी होती हैं जितनी कि लोहे की जंजीरें | दंश जंजीर में निहित है, उस धातु में नहीं जिससे जंजीर बनाई जाती है | (यंग, 6-6-1929, पृ. 188)

mersi दृष्टि में सोने की जंजीरें लोहे की जंजीरों की तुलना में कहीं ज्यादा बुरी हैं, क्योंकि लोहे की जंजीर की क्लेंसकारी प्रकृति मनुष्य आसानी से समझ पाता है जबकि सोने की जंजीर का दुख प्रायः भूल जाता है | इसलिए अगर भारत को जंजीरों में बंधे रहना है तो मैं चाहूंगा कि ये सोने या किसी अन्य बहुमूल्य धातु की अपेक्षा लोहे की ही हों | (यंग, 16-1-1930, पृ. 17)

स्वतंत्रता का अधिकार

वह स्वतंत्रता बेमानी है जिसमें गलती करने और यहां तक कि पाप करने की स्वतंत्रता भी शामिल न हो | यदि सर्वशक्ति सम्मन ने अपने दीनतम प्राणियों को भी गलती करने की स्वतंत्रता दी है तो मैं यह नहीं समझ पाता कि कुछ लोग, वे चाहे जिन्हें अनुभवी और योग्य हों, दूसरे मनुष्यों को उस बहुमूल्य अधिकार से वंचित करके किस प्रकार आनंदित हो सकते हैं | (यंग, 12-3-1931, पृ. 31)

जिस प्रकार प्रत्येक देश में खाने, पीने और शास्त्र लेने का सामर्थ्य होता है उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र में अपने मामलों की देखभाल करने का सामर्थ्य होता है, चाहे वह इसे कितने ही भुदे में करे | (यंग, 15-10-1931, पृ. 305)

उपर से योग्य गतिविधि सदैव बुरा होता है....जब यह नियंत्रण हट जाएगा तो राष्ट्र आज़ादी से सांस लेकर जाएगा और उसे गलतियां करने का अधिकार होगा | गलती करने हुए और उसे सुधारने हुए प्रगति करने की प्रारंभि विधि दिन सही विधि है | (हरि, 21-12-1947, पृ. 477)

व्यक्तिगत स्वतंत्रता

मेरी निषिद्ध धारणा है कि व्यक्ति केवल अपनी दुर्बलता के कारण ही अपनी स्वतंत्रता को खोता है | (इंके, पृ. 209)
मैं व्यक्तिगत स्वतंत्रता को मूल्यवान समझता हूं, पर आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य बुनियादी तौर पर एक सामाजिक प्राणी हैं। अपने व्यक्तिवाद को सामाजिक प्रगति की अपेक्षाओं के साथ समायोजित करके ही वह इतनी उत्तिकट कर सकता है। अप्रत्यावधित व्यक्तिवाद तो जंगल के पशु का नियम है। हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयम के बीच एक मध्यम की खोज करनी होगी। समूचे समाज की भलाई के लिए स्वच्छापूर्वक सामाजिक संयम को स्वीकार करने से व्यक्ति और समाज, जिसका वह सदस्य है, दोनों की संवृद्धि होती है।

(हरिर, 27-5-1939, पृ. 144)

अगर व्यक्तिगत स्वतंत्रता जाती रहे तो निश्चित समझिए कि सब कुछ चला गया, क्योंकि अगर व्यक्ति का ही महत्व न रहा तो समाज में बचा ही नहीं क्या? व्यक्तिगत स्वतंत्रता ही मनुष्य को समाज-सेवा के लिए स्वच्छापूर्वक पूर्णतया समायोजित करा सकती है। अगर यह समर्पण उससे बलपूर्वक कराया जाएगा तो वह यंत्रवादित मनुष्य के समान काम करेगा और उसके फलस्वरूप समाज बरबाद हो जाएगा। मनुष्य को व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करके संभवतः किसी समाज की रचना नहीं की जा सकती। यह मनुष्य की प्रवृत्ति के सर्वथा प्रतिकूल है। जिस प्रकार मनुष्य सींग और पूंछ नहीं उगा सकता, उसी प्रकार यदि उसकी हुद्दी उससे छीन ली जाए तो वह फिर मनुष्य नहीं रह जाएगा। वस्तुतः वे लोग भी जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता में विश्वास नहीं करते, स्वयं की स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं। चंगेज खाँ के आधुनिक संस्करण अपनी स्वतंत्रता की अक्षुण्ण रखते हैं। (हरिर, 1-2-1942, पृ. 27)

स्वतंत्रता की संकल्पना

स्वतंत्रता की मेरी संकल्पना कोई संकुचित संकल्पना नहीं है। उसमें मनुष्य की अपने संपूर्ण ऐश्वर्य के साथ पूर्ण स्वतंत्रता समाविश्न है। (हरिर, 7-6-1942, पृ. 183)

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रतिभा का उपयोग करने की पूरी-पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए और इसके साथ ही, उसके पड़ोसियों को भी अपने-अपनी प्रतिभाओं का उपयोग करने की वैसी ही स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, किंतु किसी व्यक्ति को अपनी प्रतिभा से होने वाले लाभों के मनमाने उपयोग का अधिकार नहीं होना चाहिए। व्यक्ति राष्ट्र अथवा, कहिए कि, अपने चहुं और विद्यमान सामाजिक संरचना का अंग है।

इसलिए वह अपनी प्रतिभा का उपयोग केवल अपने हित में नहीं कर सकता, बल्कि उसे उसका उपयोग उस सामाजिक संरचना के हित में करना चाहिए जिसका वह अंग है और जिसकी मौन अनुमति से वह अपना जीवन जीता है। (हरिर, 2-8-1942, पृ. 249)
स्वतंत्र होने का संकल्प

कोई अत्याचारी आज तक अपने शिकार के सहयोग के बिना अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सका है | यह अवस्था है कि उसने यह सहयोग प्राप्त किया है | अधिकांश व्यक्ति प्रतिरोध के रूप में संदेह करते हैं | वह यह जानता है कि अत्याचारी का प्रमुख शत्रु होता है | लेकिन इतिहास में ऐसे उदाहरण मौजूद हैं जब अत्याचारी आतंक का सहारा लेने के बावजूद अपने स्वतंत्रता पर अपनी इच्छा लादने में कामयाब नहीं हुए हैं | (यंग, 9-6-1920, पृ. 3)

निरंकुश-से-निरंकुश सरकार भी अपने आत्मदारों की सहमति के बगैर चल नहीं सकती; यह जरूर है कि निरंकुश सरकार यह सहमति प्राप्त करेगी | निरंकुश की शक्ति है, निरंकुश की शक्ति तिरोहित हो जाती है | (यंग, 10-6-1920, पृ. 3)

जब गुलाम यह संकल्प कर लेता है कि वह अब गुलामी नहीं करेगा तो उसी समय उसकी जंजीरें टूट जाती हैं | वह आज़ाद हो जाता है और दूसरों को भी आज़ादी का रास्ता दिखाया देता है | आज़ादी और गुलामी मान्यताओं को अपना भविष्य आज़ादी की लागू करने के लिए ताकत है | (यंग, 15-6-1920, पृ. 3)

तुम्हारा तथाकथित स्वामी तुम्हारे ऊपर कोई अवचकता सकता है और तुमसे अपनी चाकरी करने के लिए जोर-जबरदस्ती करने की कोशिश कर सकता है | तुम्हें खुशी होगा: ‘नहीं, मैं पैसे की खातिर या तुम्हारी धमकी में आकर तुम्हारी चाकरी नहीं करूंगा’ | इसके लिए तुम्हें पीड़ा भोगनी पड़ सकती है | पर पीड़ा भोगने की तुम्हारी तत्परता के फलस्वरूप आज़ादी की मशाल जल उठती जो फिर कभी नहीं बुझाई जा सकती | (हरर, 18-2-1946, पृ. 18)

स्वतंत्रता की कीमत

हम एक ही अथवा अनेक, हमें अपने आत्मसम्मान या अपनी परम प्रिय मान्यताओं की कीमत देकर बदले में स्वतंत्रता लेने से इंकार कर देना चाहिए | मैंने देखा है कि छोटे-छोटे बच्चे तक अपने मां-बाप के द्वारा उनके पक्ष के इरादों को, जिन्हें मां-बाप बिलकुल तुच्छ समझते हैं, ध्वस्त करने का प्रयास किये जाने पर तनकर खड़े हो जाते हैं | (यंग, 15-12-1921, पृ. 418)

यदि हम स्वतंत्र स्वामी-पुरुष के रूप में नहीं जी सकते तो इसी की अपेक्षा हमें मीत को गले लगा देने में अधिक संतोष मानना चाहिए | (यंग, 5-1-1922, पृ. 5)
मनुष्य को अपनी पराधीनता के लिए स्वयं को ही दोषी मानना चाहिए | वह जिस क्षण संकल्प कर ले, उसी क्षण स्वाधीन हो सकता है | (हरिया, 11-1-1936, पृ. 380)

स्वतंत्रता किसी भी कीमत पर महंगी नहीं होती | स्वतंत्रता जीवन का श्रास है | आदमी जीने के लिए क्या नहीं दे देगा? (हरिया, 10-12-1938, पृ. 368)

दीनतम व्यक्ति के लिए भी स्वतंत्रता
जब मैं देखता हूँ कि कुछ लोग स्वतंत्र भारत में अपने भविष्य को लेकर चिंतित हैं तो मुझे पीड़ा और आश्चर्य, दोनों का अनुभव होता है | जहां तक मेरी मान्यता है, यदि भारत अपनी सीमाओं....केवल कृत्रिम ही नहीं अपितु प्राकृतिक सीमाओं – के भीतर चेंडा होने वाले दीनतम प्राणियों तक को स्वतंत्रता की गारंटी नहीं देता तो उसे स्वतंत्र भारत नहीं कहा जाएगा।

हमारा भय हमारी सोचने की ब्लक्ट्यों को कुंद कर देता है, अन्यथा हमें बात तकाल समझ में आ जानी चाहिए कि आजादी एक ऐसी स्थिति है जो हर ईमानदार स्वै-पुरुष के लिए वैरमान से तो हर सूरत में बेहतर है | स्वतंत्रता के उद्देश्य से केवल उन्हें न कोई उच्च वर्ग होगा और न निम्न वर्ग; एक ऐसा भारत जिसमें लोगों का न कोई उच्च वर्ग होगा और न निम्न वर्ग; एक ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय पूण्य मैत्रीवाद के साथ रहेंगे | ऐसे भारत में हमें दूसरों का पैसा हड़प जाने वाले हैं, डूबैल हैं या इसी तरह के अपराधी लोग हैं। (यंग, 26-12-1929, पृ. 421)

मैं ऐसे संविधान के लिए प्रयास करूंगा जो भारत को हर प्रकार की दासता और संरक्षण से मुक्त कर दे और जरूरी हो तो, उसे पाप करने का अधिकार भी दे | मैं ऐसे भारत के लिए प्रयास करूंगा जिसमें गरीब-से-गरीब आदमियों को यह अनुभव हो कि यह देश उनका है और इसके निर्माण में उनकी कारगर भूमिका है; एक ऐसा भारत जिसमें लोगों का न कोई उच्च वर्ग होगा और न निम्न वर्ग; एक ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय पूण्य मैत्रीवाद के साथ रहेंगे – ऐसे भारत में हमें क्या निर्धार करेंगे अथवा निर्धार देंगे? (यंग, 10-9-1931, पृ. 255)

कोई शोषण नहीं
अगर मैं अपने देश के लिए आजादी चाहता हूँ तो, मेरा विश्वास कीजिए, मैं यह आजादी इसलिए नहीं चाहता कि मैं समस्त मानव जाति के पांचवें हिस्से की आबादी वाले राष्ट्र के रूप में, संसार की किसी अन्य प्रजाति अथवा किसी
एक भी व्यक्ति का शोषण करने | अगर मैं अपने देश की आज़ादी चाहता हूं तो मुझे इसे हासिल करने का तब तक कोई अधिकार नहीं है जब तक कि मैं दुनिया के हरेक प्रजाति को, वह दुर्बल हो अथवा सबल, आज़ादी के इसी अधिकार का उपयोग करने का सहर्ष अवसर नहीं देता और उनके उस अधिकार की कद्र नहीं करता।

(योग, 1-10-1931, पृ. 278)

जो लोग खुद आज़ाद होना चाहते हैं, वे दूसरों को गुलाम बनाने की बात सोच भी नहीं सकते | अगर वे ऐसे सोचते हैं तो वे अपनी गुलामी की जंजीरों में ही और ज्यादा जुड़ जाएंगे।

(हरी, 13-4-1947, पृ. 106)

मेरी धारणा की तरह तक कोई अशक्तात्मकता नहीं है, जब मैं अपने देश की आज़ादी में राजनीतिक उपकरण का उपयोग करने का सहर्ष अवसर नहीं है| अगर मैं अपने देश की आज़ादी के लिए अपने देश के हरेक प्रजाति की हरेक प्रजाति को, वह दुर्बल हो अथवा सबल, आज़ादी के इसी अधिकार का उपयोग करने का सहर्ष अवसर नहीं है| मैं इसी स्वप्न को साकार करने के लिए प्रयास करना और उसी के लिए मर जाना पसंद करूं गा, भले ही वह स्वप्न कभी साकार न हो पाए| उसके लिए असीम धैया और अध्यवसाय की आवश्यकता है| यदि भारत के स्वतंत्रता विकास करने के संदर्भ में दूसरों को गुलाम बनाने की बात सोच भी नहीं सकते, तो वे अपनी गुलामी की जंजीरों में ही और ज्यादा जुड़ जाएँगे।

(योग, 4-7-1929, पृ. 218)

शांति के उपाय

भारत ने कभी किसी राष्ट्र के विरुद्ध लड़ाई नहीं लड़ी है | उसने तो बस कभी-कभी आत्मरक्षा के लिए कुप्रथक प्रतिरोध का प्रतिरोध किया है | इसलिए उसे शांति की इच्छा का विकास करने की स्वतंत्रता नहीं है | वह जाने या न जाने, उसे यह पहले से ही प्राप्त होता है | वह शांतिपूर्ण उपायों से अपने शोषण का प्रतिरोध करने की इच्छा का विकास करने की आवश्यकता नहीं है | वह जाने या न जाने, उसे यह पहले से ही प्राप्त होता है | दूसरे शांति-पूर्ण उपायों से अपने शोषण का प्रतिरोध करने का आवश्यकता नहीं है | अगर वह ऐसा कर सकते हैं तो वह किसी एक राष्ट्र द्वारा विश्व शांति के लिए किया गया सबसे बड़ा योगदान होगा।
मैंने आज़ादी के लिए अपना जीवन हमेशा से निर्णय किया है। मेरी आपातकालीन कार्यक्रम भी उन्हें ही देखते हैं। मेरी आवश्यकता स्वतंत्रता से कहीं बढ़कर है।

भारत की स्वतंत्रता का अर्थ

...भारत की स्वतंत्रता शारीरिक और मूल्य के प्रति विश्वास के दृष्टिकोण में निश्चय ही कार्य करेगा। भारत की उपस्थिति समस्त मानव जाति को प्रभावित करती है।

भारत के व्यवस्थापन और सल्यान के प्राचीन देशों को ही प्राप्त होगा।

भारतीय स्वतंत्रता कायमिक वस्तु नहीं है। यह उत्तम हो आवश्यक है जितना कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता। से अवधारणा पर आधारित हो। कभी-कभी एक-दूसरे के लिए भयोत्पादक सिद्धांत। और, जो बात व्यक्तिगत तथा भारतीय स्वतंत्रता पर लागू होती है। विद्वान का यह सूत्र कम अपनी संपत्ति का उपयोग इस प्रकार करने कि वह किसी अन्य के अधिकारों को क्षति न पहुँचाए। समान रूप से एक नैतिक सूत्र भी है। यह बहुत ही ठीक कहा गया है कि ब्रह्मांड अणु में समाया हुआ है। ऐसा नहीं है कि अणु के नियम एक हैं और ब्रह्मांड के कोई दूसरे।
अंतरराष्ट्रीय सहयोग
मैं सम्बन्ध के निस्तारण के लिए राष्ट्रों के बीच सहयोग चाहता हूँ, लेकिन सहयोग की पूर्वशर्त यह है कि वह स्वतंत्र राष्ट्रों के बीच होना चाहिए जो सहयोग देने में समर्थ हों| (यंग, 12-11-1931, पृ. 353)

शोषित प्रजातियों की स्वतंत्रता
मेरे जाने के बाद भारत स्वतंत्र होगा और न केवल भारत अपितु सारी दुनिया स्वतंत्र होगी | मैं नहीं मानता कि ब्रिटेन और अमेरिका स्वतंत्र हैं | जब तक उनके पास अश्वेत राष्ट्रों को अपनी अधीनता में रखने की शक्ति है तब तक वे स्वतंत्र नहीं होंगे | मैं अपने ध्येय को पहचानना हूँ और स्वतंत्रता क्या है, यह भी जानता हूँ | स्वतंत्रता की व्याख्या जो मैं देखता तथा अनुभव करता हूँ, उसी के अनुसार करूंगा | (बंक्रा, 9-8-1942)
भारत की स्वतंत्रता दुनिया की शोषित प्रजातियों के सामने यह स्पष्ट कर देगी कि स्वतंत्रता बहुत निकट है और किसी भी सूरत में अब उनका शोषण नहीं किया जा सकेगा | (वहीं, 18-4-1945)
65. स्वराज का मेरे लिए क्या अर्थ है

मेरे लिए स्वराज का अर्थ है अपने सर्वाधिक दीनहीन देशवासियों की स्वतंत्रता....मुझे भारत को केवल अंग्रेजों की पराधीनता से मुक्त कराने में ही दिलचस्पी नहीं है | मैं भारत की सभी प्रकार की पराधीनताओं से मुक्त कराने के लिए कठिनाई हूँ | मुझे एक शासक के ठहरे पर दूसरे शासक को लाने की जरूरत भी इच्छा नहीं है | (यंग, 12-6-1924, पृ. 195)

स्वराज से मेरा तात्पर्य ऐसी भारत सरकार से है जो देश की व्यस्क जनता के बहुमत की राय से कायम की गई हो; व्यस्कों में स्वीकार्य पुरुष, यहाँ जन्मे तथा बाहर से आकर वे सभी लोग सम्मिलित होंगे जिन्होंने राज्य की सेवा में किसी प्रकार का शारीरिक भ्रमदान किया होगा तथा मदद के रूप में अपने नाम को पंजीकृत कराने का कष्ट उठाया होगा |

स्वराज का अर्थ है सरकार के सिंधुलाहुर तथा प्रतिकृत से नहीं आएगा, बल्कि सत्य का दुरुपयोग किए जाने की सुरत में, उसका प्रतिरोध करने की जनता का सामर्थ्य विकसित होने से आएगा | दूसरे शब्दों में, स्वराज जनता को सत्य का नियमन तथा नियंत्रण करने की अपनी क्षमता का विकास करने की शिक्षा देने से आएगा | (यंग, 29-7-1925, पृ. 41)

स्वराज का अर्थ है सरकार के नियंत्रण से मुक्त होने का सत्ता प्रयास, यह सरकार विदेशी हो अथवा राष्ट्रीय | (यंग, 6-8-1925, पृ. 276)

स्वराज एक पवित्र शब्द है, यह एक वैदिक शब्द है जिसका अर्थ है स्वाधीनता तथा आत्मनिरघ्र; इसका अर्थ सब प्रकार के संयमों से मुक्त नहीं है जैसा कि प्राय: ‘स्वाधीनता’ का अर्थ लगाया जाता है | (यंग, 19-3-1931, पृ.38)

गरीबों का स्वराज

मेरे-हमारे-पासों का स्वराज किसी प्रजातिगत अथवा धार्मिक भेदभावों को नहीं मानता | न यह शिक्षितों अथवा धर्मवानों की इजाफा होगा | स्वराज सभी का होगा, शिक्षितों और धर्मवानों का भी, पर इसमें खास तौर से अंग्रेज, नेत्रहीन, भूखे और मेहनतशीर करोड़ों भारतवासी शामिल होंगे | (यंग, 1-5-1930, पृ. 149)

मेरे पासों का स्वराज गरीबों का स्वराज है | जीवन की अनिवार्य वस्तुओं को भी संभालने के लिए जिस प्रकार राजाओं और धर्मवानों को उपलब्ध होता है | लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम्हारे पास उन जैसे ही महल भी होंगे | सुखी जीवन के लिए ये आवश्यक नहीं हैं | तुम या मैं तो उनमें खो जाएंगे | लेकिन तुम्हें जीवन की वे सभी सामान्य सुख-सुविधाएं मिलनी चाहिए जो एक धनी व्यक्ति का उपलब्ध है | मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि जब तक तुम्हें उन सुख-सुविधाओं की गारंटी नहीं मिलती तब तक स्वराज यूनियन स्वराज नहीं माना जा सकता | (यंग, 26-3-1931, पृ. 46)
...)पूर्ण स्वराज से क्या अभिप्राय है और हम उससे क्या पाना चाहते हैं….पूर्ण स्वराज जनसाधारण के बीच एक जागृति है, उनमें अपने वास्तविक हित की जानकारी और समूही दुनिया का मुकाबला करके भी उस हित को साधने की क्षमता है….यह एक सामंजस्य है, भोजी अथवा बाहरी आक्रमण से मुक्त है, और आम लोगों की आर्थिक स्थिति में क्रांतिक सुधार है…. (यंग, 18-6-1931, पृ. 147)

सबसे स्वराज का अनुभव स्त्री, पुरुष और बच्चों, सभी को होना चाहिए | इस संस्थान के लिए प्रयास करना ही सच्ची क्रांति है | भारत संसार की सभी शाश्वत प्रजातियों के लिए एक आदर्श बन गया है, क्योंकि भारत ने एक खुला और निभाय संघर्ष किया है जो शोषणकर्ता को क्षति पहुंचाए बिना सभी से बलिदान मांगता है | पूर्ण स्वराज संघर्ष खुला और निभाय न होता तो भारत की करोड़ों जनता में जागृति न फैली | संघर्ष के सीधे रास्ते से हम जब-जब विचलित हुए हैं तब-तब कुछ समय के लिए हमारी विकासात्मक क्रांति को धक्का लगा है | (हरर, 3-3-1946, पृ. 31)

वहुसंख्यकों का शासन नहीं

यह कहा गया है कि भारत का स्वराज बहुसंख्यकों अर्थात हिंदुओं का शासन होगा | इससे बड़ी भावति और कोई नहीं हो सकती | यदि ऐसा हो तो मैं उसे स्वराज मानने से इंकार कर दूंगा | अपने पूरी क्रांति के साथ उसका विरोध करुँगा….क्योंकि वह दृष्टि में हिंद के स्वराज का अर्थ है सब लोगों का शासन, यथार्थ स्वराज | इस शासन में, मंत्री चाहे विद्रोह हों, मुसलमान हों या सिख हों और विधान सभाओं के सदस्य चाहे केवल हिंदू हों, केवल मुसलमान हों अथवा किसी अन्य समुदाय के हों, सबको निषेध न्याय करना होगा | (यंग, 16-4-1931, पृ. 78)

आज हमारे मन विश्वास हैं | हम अज्ञानव  एक-दूसरे से लड़ रहे हैं और अपने ही भाइयों के साथ दंगा-फसाद कर रहे हैं | ऐसे लोगों के लिए न मौक़ है, न स्वराज | स्वशासन अथवा स्वराज की पहली शर्त आत्मनुशासन है | (हरर, 28-4-1946, पृ. 111)

अभिभावकता की स्वतंत्रता

हमारे ऐसे विशाल देश में, सभी ईमानदारीपूर्ण विचार-संग्रहालयों के लिए स्थान होना चाहिए | इसलिए हमारा अपने प्रति और दूसरों के प्रति कम-से-कम यह दायित्व अवश्य है कि हम अपने विरोधी के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करें और यदि हम उसे स्वीकार न कर पाएं तो उसका उसी प्रकार पूरी तरह सम्मान करें जिस प्रकार हम चाहते हैं कि वह हमारे दृष्टिकोण का करें | यह दृष्टि सार्वजनिक जीवन की एक अपरीलक कसौटी है और इसलिए स्वराज के लिए भी आवश्यक है | (यंग, 17-4-1924, पृ. 170)

वाणी और लेखनी की स्वतंत्रता स्वराज की आधारशिला है | अगर यह खतरे में है तो तुम्हें अपनी संपूर्ण शक्ति लगाकर इसकी रक्षा करनी चाहिए | (हरर, 29-9-1940, पृ. 306)
स्वराज की प्राप्ति

मैंने यह कहने की दिल्ली की है कि स्वराज हमें भगवान भी नहीं दे सकता। यह तो हमें स्वयं ही अर्जित करना होगा। स्वराज की प्रकृति ही ऐसी है कि वह किसी के देने की चीज़ नहीं है। (यंग, 25-5-1921, पृ. 164)

स्वराज मूल्य के भय का परिलक्षण है जो राष्ट्र स्वयं को मूल्य के भय से प्रभावित होने देता है वह स्वराज प्राप्त नहीं कर सकता, और यदि किसी प्रत्यक्ष कर भी ले तो उसकी रक्षा नहीं कर सकता। (यंग, 13-10-1921, पृ. 326)

स्वराज अपने से बता द्वारा दूसरे राष्ट्र को निष्ठुर्वेद के रूप में कभी नहीं दिया जा सकता। यह तो ऐसी निधि है जो राष्ट्र के सबसे मूल्यवान लहर को देखकर खरीदनी पड़ती है। (यंग, 5-1-1922, पृ. 4)

स्वराज शक्ति ही आसान से नहीं टपकेगा। जो राष्ट्र स्वयं को मृत्यु के भय से प्रभावित होता है उसे स्वराज प्राप्त नहीं कर सकता, और यदि कोई राष्ट्र की रक्षा करने में लिए जाए तो उसकी रक्षा नहीं कर सकता। (यंग, 13-10-1921, पृ. 326)

स्वराज शक्ति एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र के मूल्य के रूप में कभी नहीं देने की चीज़ है जो राष्ट्र की तीर्थबाहु यात्रा एक छोटी-से छोटी बातों पर भी ध्यान देनी पड़ती है। इसका अथ शक संगठन की जबर्दस्त योग्यता, इसका अथ शक प्रामाण्य से गांवों में पैदा होने देने में, इसका अथ शक राष्ट्रीय शिक्षा अथ शक सर्वसाधारण की शिक्षा। इसका अथ शक सर्वसाधारण में राष्ट्रीय चेतना का विकास। (यंग, 5-1-1922, पृ. 4)

मेरी दृष्टि में, स्वराज के लिए एक ही गुरुक्षणा आवश्यक है और वह हमें समुद्री दुनिया से अपनी रक्षा करने तथा पूर्ण सत्ता के साथ राजी जीने की योग्यता विकसित करना; इसमें अनेक दोष रह जाएं, पर उसकी चिंता नहीं। (यंग, 22-9-1920, पृ. 1)

स्वराज की तीर्थयात्रा एक कठिन चढ़ाई है। इसमें छोटी-से छोटी बातों पर भी ध्यान देनी पड़ती है। (यंग, 5-1-1922, पृ. 4)

कभी-कभी सुनने को मिलता है, ‘भारत सरकार हमारे हाथ में आ जाए, तब सब कुछ ठीक हो जाएगा।’ इससे कोई अन्य श्रद्धांजलि और कोई नहीं चढ़ता। (यंग, 21-5-1925, पृ. 178)

संगठन का जबर्दस्त स्वाधीनता, इसका अर्थ है ग्रामवासियों की सेवा के उद्देश्य से गांवों में पैदा होने देने में, इसका अर्थ है सर्वसाधारण में राष्ट्रीय चेतना का विकास। (यंग, 2-11-1921, पृ. 164)

कभी-कभी सुनने को मिलता है, ‘जब स्वराज की धर्मार्थता हमारे अनुभव स्वराज की प्राप्ति के लिए अपनी योग्यता विकसित करते हैं। (यंग, 21-5-1925, पृ. 178)
स्वराज का आधार आत्मत्याग

स्वराज तभी कायम रह सकता है जब बड़ी संख्या में नैशिक और राजनीतिक लोग अपने निजी लाभ और दूसरे तमाम सरोकारों से बड़कर राष्ट्र की भलाई को सर्वोपरि समझेंगे | (यंग, 28-7-1921, पृ. 238)

मेरा स्वराज....दूसरों की हत्या का परिणाम नहीं होगा, बल्कि सत्ता आत्मत्याग की स्थल-स्पृहा भावना से पैदा होगा | मेरा स्वराज रक्तपात द्वारा अधिकारों को हथियार प्राप्त नहीं किया जाएगा, बल्कि वह भली प्रकार एवं सच्चे रूप में अपने कर्तव्य के निर्वाह का सुंदर एवं सहज फल होगा | यह नीरो जैसा नहीं बल्कि चैतन्य जैसा....उद्योग प्रदान करेगा | स्वराज ऐसे समय भी आ सकता है - कभी-कभी आत्म भी है - जब क्षितिज अंधकारक में भी | लेकिन मेरी जानता है कि स्वराज से पहले युवा सत्री-पुरुषों के एक ऐसे वर्ग का उदय होगा जिन्हें राष्ट्र के लिए काम, काम और केवल काम में पूर्ण उद्योग का अनुभव होगा | (यंग, 27-8-1925, पृ. 297)

सत्य और अहिंसा के जरिए

यदि हम सत्य और अहिंसा के जरिए स्वराज हासिल करना चाहते हैं तो उसका एकमात्र उपाय रचनात्मक प्रयास द्वारा इसका नीव से शुरु करके ऊपर की ओर धीरे-धीरे किंतु मजबूती से निर्माण करना है | इसमें जान-बुझकर ऐसी अराजक स्थिति के निर्माण का कोई स्थान नहीं है जो स्थापित व्यवस्था की इस आशा से उखाड़ फेके कि हमारे बीच से कोई ऐसा तानाशाह उभर आए जो डंडे की जोर पर शासन करेगा और अव्यवस्था को व्यवस्था में बदल देगा | (हरि, 25-3-1939, पृ. 64)
हमारी सभ्यता की प्रतिभा

मेरा स्वराज अपनी सभ्यता की प्रतिभा को अक्षुण्ण रखने के लिए हूँ | मैं बहुत-सी नयी बातें लिखना चाहता हूँ, लेकिन वे सभी भारतीय स्लेट पर ही लिखी जाएँगी | मैं पश्चिम से उधार लेने के लिए सहर्ष प्रस्तुत हूँ, पर तभी जबकि मैं उसे उचित व्याज के साथ लौटा सकूँ | (यंग, 26-6-1924, पृ. 210)

यदि स्वराज हमें सभ्य न बनाए, हमारी सभ्यता को निर्मल और दृढ़ न करे तो यह बेकार है | हमारी सभ्यता का सारतत्त्व यही है कि हम अपने सार्वजनिक या निजी, सभी कामों में नैतिकता को सर्वोपरि स्थान देते हैं | (यंग, 23-1-1930, पृ. 26)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

66. मैं ब्रिटेन-विरोधी नहीं हूँ

मानव प्रकृति में मेरा विश्वास अधिक है और अर्धसंतोष परिस्थितियों में भी, मैंने अंग्रेजों को तक्ष और अनुमय के साथ झूठते देखा है | चूँकि स्पष्टतः अनुप्रति काम करते हुए भी वे सदैव नायप्रिय दिखाई देना चाहते हैं, इसलिए और लोगों की अपेक्षा उन्हें सही काम करने के लिए विवश करना ज़्यादा आसान है | (यंग, 7-1-1920, पृ. 2)

मेरा व्यक्तिगत धर्म...मुझे यह सामर्थ्य देता है कि मैं अंग्रेजों, या किसी अन्य लोगों, को क्षति पहुँचाए बिना अपने देशवासियों की सेवा कर सकूं | जो मैं अपने सगे भाई के साथ काम करने के लिए तैयार नहीं हूं, वह मैं किसी अंग्रेज के साथ भी नहीं करूँगा | मैं किसी राज्य को हासिल करने के लिए उसे चोट नहीं पहुँचाएगा | लेकिन आक्षेपकार हुई तो मैं उससे अपना सहयोग उसी प्रकार वापस लेंगा जिस प्रकार, जरूरी होने पर, मैंने अपने भाई (जो अब स्वर्गवासी हो चुके हैं) से ते लिया था | मैं ब्रिटिश साम्राज्य की अनिश्चितियों में भागीदारी न करके उसकी सेवा कर रहा हूं | (यंग, 5-5-1920, पृ. 4)

मैं अंग्रेज-विरोधी नहीं हूँ, मैं ब्रिटेन-विरोधी नहीं हूँ, मैं किसी सरकार के विरोध में भी नहीं हूं पर मैं असत्य के विरोध में हूं, छल-कपट के विरोध में हूं और अन्याय के विरोध में हूं | जब तक सरकार अन्याय पर आरूढ़ है तब तक वह मुझे अपना त्यस्त कठोरता स्वीकार कर सकती है | (स्पीरा, पृ. 523)

कोई मेरे ऊपर यह आरोप नहीं लगा सकता कि मेरी प्रवृत्ति अंग्रेज-विरोधी है | सच पूछा जाए तो मुझे अपने देशवासियों के साथ गार्व है | उनकी बहुत-सी बातों का मैंने साभार अनुकरण किया है | समय-पालन, अत्यभाषिता, सार्वजनिक स्वच्छता, स्वतंत्र शांतिक, विवेक का प्रयोग आदि कई बातें मैंने अंग्रेजों के साहचयर से ही सीखी हैं | (यंग, 6-3-1930, पृ. 80)

मेरा राष्ट्रवाद इतना संकुचित नहीं है कि मैं...अंग्रेजों की परेशानियों को महसूस न कर सकूं या कि उन पर प्रसन्नता का अनुभव करूं | मैं किसी दूसरे देश की खुशी की बलि देकर अपने देश की खुशी हासिल करना नहीं चाहता | (यंग, 15-10-1931, पृ. 309)

मेरे अंदर कोई कटूता नहीं है | मैं शक्तितम पशुओं को भी अपना बंधू मानता हूँ | तो फिर अंग्रेजों को भी अपना बंधू क्यों न मानूँ जिनके साथ हम एक शताब्दी से भी अधिक समय से, भले अथवा बुरे कारणों से, बंधे हुए हैं और जिनमें से कुछ तो मेरे अन्यतम मित्र हैं? आप (अंग्रेज) पाएंगे कि मैं एक सरल व्यक्ति हूँ, लेकिन आप आप मेरी दोस्ती के अधार पर झटक देंगे तो मैं अपने द्वार हो जाऊँगा, पर इसके लिए मेरे मन में कटूता नहीं होगी, बल्कि मैं समझूं कि मैं इतना निर्मल नहीं था कि आपके हृदयों में स्थान पा सकता | (वही, पृ. 310)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

भ्रंतीवासियों के प्रति मेरा प्रेम उतना ही है जितना कि अपने देशवासियों के प्रति | यह कोई खास बात नहीं है, क्योंकि मैं निरपवाद रूप से सभी मानों को एक जैसा प्रेम करता हूँ | मैं उसका कोई प्रतिदान नहीं मांगता | मैं इस दुनिया में किसी को अपना शत्रु नहीं मानता | यही मेरा धर्म है | (बांग्रा, 9-8-1942)

...मैं उसका कोई प्रशंसन नहीं किया है, जब प्रशंसन वर्ष के अपने अविचित सर्वजनिक जीवन के दौरान भ्रंती सरकार के साथ जितना सहयोग किया है, उससे अधिक किसी भारतीय ने नहीं किया....

मैं भ्रंती साम्राज्य की खातिर कार्य करने वाले अपने जीवन को संकट में डाला है; बोअर युद्ध के समय मैं एम्बुलेंस कोर का प्रमुख था और हमारे काम की प्रारंभिक जनरल बुलर ने अपने खरीदे में की थी; नेटाल में जुलू विद्रोह के समय जब मैं इसी प्रकार एम्बुलेंस कोर का प्रमुख था; गत विश्व युद्ध की शुरुआत के समय जब मैं एक एम्बुलेंस कोर खड़ी की थी और कठिन विश्वासात्मक के फलस्वरूप मुझ पर ज्ञातिका का भयंकर आक्रमण हो गया था; और अंतिम बार, दिल्ली में अयोध्या युद्ध समूह में | लाई चेम्सफोर्ड को दिये गये वचन को पूरा करने के लिए जब मैं एम्बुलेंस कोर का प्रमुख था; गत श्वासकाय समय जब मैंने एम्बुलेंस कोर की भरती के लिए लंबी और कठिन यात्राएं की | उससे कोई भी व्यवस्था शकया जाता, जो कोई भी प्रबुद्ध का स्वागत अवश्य जाएगा जो हमारा प्रभु बनकर नहीं बब्लि एक सच्चे शमत्र के रूप में सेवा की भावना से यहां आएगा | स्वाधीनता के उपरांत भारत को इस प्रकार की हर मदद की जरूरत होगी | अंग्रेजों के प्रति अविश्वास की भावना....| यहां है | (हरर, 31-3-1946, पृ. 60)
...अभी तक भारतवासियों ने अंग्रेजों को शासक जाति के सदस्यों के रूप में ही देखा है – कृपालु या फिर, दंभी | आम भारतीय इस तरह के अंग्रेज और अच्छे, विनम्र यूरोपवासी में भेद नहीं करता | वह पुराने ढंग के सुपररश शासनों में साम्राज्य-निम्नता अंग्रेज और पूरे ढंग के अंग्रेज, जिनमें अपने पूर्वजों के किए-धरे का प्राप्तक्षित करने की अदन्त इच्छा है, के बीच भेद नहीं कर पाता | (हरे, पृ. 61)

*1947 से पूर्व

एक नव अध्याय

मैं यह नहीं भूल सकता कि ब्रिटेन का भारत के साथ संबंध तोड़ देगा वायदों और बवस्त आशाओं के एक त्रासदी है | हमें अपना दिमाग खुला रखना चाहिए | कोई सत्यशोधक अपने विरोधी के वक्तव्य के प्रति अविश्वास के साथ अपना व्यवहार कभी शुरू नहीं करेगा | अतः मैं आशाशीत् हूँ और वस्तुतः कोई जीमेदार भारतीय इसके अलावा कुछ और नहीं सोच रहा | मैं समझता हूँ कि यह बार अंग्रेज जो कह रहे हैं, वही करेगे | लेकिन आजादी का प्रस्ताव सहसा आया है....

....कट्टुता का ज्वार पूरे जोरों पर है और आत्मा के लिए यह शुभ नहीं है....यह केवल भारत और ब्रिटेन के इतिहास का ही नहीं अपितु समूचे विश्व इतिहास के मील का पत्थर है.... (हरे, 14-4-1946, पृ. 90)

राष्ट्रमंडल

भारत का गौरव इसमें नहीं है कि वह अंग्रेजों को अपना पक्का दुश्मन माने और वह मानें कि ये मौका मिलते ही भारत से खदेड़ देने योग्य है, बल्कि इसमें है कि हम उन्हें अपना मित्र बना ले और एक ऐसे साम्राज्य के स्थान पर जो दुनिया के कमजोर अथवा अविश्वसनीय राष्ट्रों और प्रजातियों के शोषण अर्थात् बलप्रयोग पर टिका था, एक नये राष्ट्रमंडल में उनके साथ भागीदारी करें | (यंग, 5-1-1922, पृ. 4)

सम्राट् (किंग इम्परर) की भूमिका का महत्व मुख्य एंडूज ने समझाया | ब्रिटेन का राजा डोमिनियनों का राजा भी है, पर भारत का वह सम्राट है | साम्राज्य केवल भारत है | डोमिनियनों में तो आपके (अंग्रेजों के) भाई बसते हैं | लेकिन हम भारतीय, जिनकी संस्कृति और परंपराएं भिन्न हैं, कभी ब्रिटिश परिवार के सदस्य नहीं बन सकते | हम राष्ट्रों के विश्वव्यापी परिवार के सदस्य हो सकते हैं, पर पहले हम पदलितों की श्रेणी से तो निकलें | इसीलिए मैं आजादी हासिल करना चाहता हूँ....

अंग्रेजों को बनिया नहीं, ब्राह्मण बनना सीखना चाहिए | बनिया व्यापारी होता है या, जैसा कि नेपोलियन ने कहा था, दुनियादार होता है या | ब्राह्मण वह है जिसमें जीवन के भौतिक मूल्यों की अपेक्षा नैतिक मूल्यों को अधिक महत्व देने की बौद्धिक क्षमता होती है....अंग्रेजों को अभी अगले अंदर उस ब्राह्मणत्व का विकास करना है....
यदि भारत आज़ादी हासिल कर लेता है तो संभवतः ऐसी किसी (ब्रिटेन के साथ रक्षाभरक मैत्री की) संधि में शामिल हो सकता है, पर इसका निर्णय वह अपनी स्वतंत्र इच्छा से करेगा। यदि ऐसा हुआ तो भारत और ब्रिटेन की स्वत:प्रसूत मैत्री का विस्तार अन्य शक्तियों तक हो सकेगा जो परस्पर मिलकर शक्ति संतुलन स्थापित करेंगे क्योंकि नैतिक बल केवल उन्हीं के पास होगा। इस स्वप्न को साकार होते देखने के लिए मैं 125 वर्ष की अवस्था तक जीना चाहता हूँ। (यंग, 14-4-1946, पृ. 91)
67. रामराज्य

रामराज्य से मेरा अभिप्राय हिंदू राज से नहीं है | रामराज्य से मेरा अभिप्राय है देवी राज्य अर्थात इंश्वर का साम्राज्य | मेरी दृष्टि में राम और रहीम एक ही हैं | मेरे केवल एक ही इंश्वर की जानता हूं और वह है सत्य तथा सदाचार का इंश्वर | 

मेरी कल्पना के राम कभी इस पृथ्वी पर रहे हों या न रहे हों, रामराज्य का प्राचीन आदर्श निस्तंदेह एक सच्चा लोकतंत्र है जिसमें श्रद्धलत नागरिक भी लंबी-चौड़ी और महंगी प्रक्रिया के बिना श्रीमत न्याय पा सकता है | कवि के वर्णन के अनुसार रामराज्य में कूते तक को न्याय मिला था | (शंगा, 19-9-1929, प्र. 305)

मेरे सपने के रामराज्य में राजा और रंग, दोनों के अशधकार समान होते हैं | (अबाप, 2-8-1934)

स्वाधीनता की परिभाषा

राजनीतिक स्वाधीनता से मेरा अभिप्राय हाउस ऑफ कामन्स, या रूस के सोशवयत्ास या इटली के फास्कोवादी शासन अथवा जर्मनी के नाजी शासन के अनुकरण से नहीं है | ये प्रणालियाँ उनकी अपनी-अपनी प्रकृति के अनुकूल हैं | हमारी प्रणाली हमारे अनुकूल होने चाहिए | वह जो मैं बता सकता हूं, उससे भी बढ़कर हो सकती है | मैंने उसे रामराज्य कहा है अर्थात लोगों की संप्रभुता, जिसका आधार विश्व नैतिक सत्य हो | (हरर, 2-1-1937, प्र. 374)

भिन्न ने मुझे बार-बार चुनती दी है कि मैं स्वाधीनता को परिभाषित करूँ | मैं फिर कहता हूँ कि मेरे सपनों की स्वाधीनता का अर्थ है रामराज्य अर्थात पृथ्वी पर इंश्वर के साम्राज्य की स्थापना | मैं नहीं जानता कि स्वर्ग में इंश्वर का साम्राज्य कैसा होगा | इसकी दूर की चीज़ को जानने की मुझे कामना भी नहीं है | यदि वर्तमान पर्याप्त आकर्षक हो तो भविष्य भी उससे बहुत भिन्न नहीं हो सकता | (हरर, 5-5-1946, प्र. 116)

बलप्रयोग नहीं

मेरी धारणा के रामराज्य में ब्रिटेन की फोज की जगह कोई राष्ट्रीय आधिपत्य-सेना नहीं आएगी | ऐसा देश जिस पर किसी सेना का शासन हो, चाहे वह उसकी राष्ट्रीय सेना ही क्यों न हो, कभी नैतिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं माना जा सकता और इसलिए उसका तथाकथित दुर्बलतम नागरिक कभी अपने पूर्णतम नैतिक उक्त्तर को प्राप्त नहीं कर सकता | (वही)

आज की अन्यायपूर्ण असमानताओं की स्थिति में जिसमें मुझे भी भोग ऐश्वर्य भोग रहे हैं और आम आदमी के लिए पेट भरना भी कठिन है, रामराज्य कभी नहीं आ सकता.....समाजवादियों और अन्य लोगों से मेरा विरोध यही है कि मैं किसी भी स्थायी सुधार के लिए हिंसा का सहारा लेना गलत समझता हूं | (हरर, 1-6-1947, प्र. 172)
मैं निर्वाण की तुलना रामराज्य अथवा पृथ्वी पर ईश्वर के साम्राज्य के साथ करता हूँ...ब्रिटिश सत्ता के हट जाने से रामराज्य नहीं आएगा | यदि हम अपने हृदयों में अहिंसा के वेश में हिंसा को पालते आ रहे हैं तो रामराज्य कहां से आ जाएगा? (हरि 3-8-1947, पृ. 262)

दूसरों का आदर
मेरा हिंदुत्व मुझे सभी धर्मों का आदर करना सिखाता है | रामराज्य का रहस्य इसी में निहित है | (हरि, 19-10-1947, पृ. 378)

यदि आप रामराज्य के रूप में ईश्वर का दर्शन करना चाहते हैं तो पहले आपको आत्मनिरीक्षण करना होगा | आपको अपने दोषों को हज़ार गुना बढ़ाकर देखना होगा और अपने पड़ोसियों के दोषों से आंख मूंद लेनी होगी | सच्ची प्रगति का यही एक मार्ग है | (हरि, 26-10-1947, पृ. 387)
68. कश्मीर

समस्या और समाधान

स्थिति क्या है? बताया जाता है कि अफरीदी लोगों और उन जैसे अन्य बागीयों की एक फौज, कुशल अधिकारियों के निर्देश में, श्रीनगर की ओर बढ़ रही थी और उसने रास्ते में पड़ने वाले गांवों को लूट लिया था और जला डाला था। साथ ही, उसने बिजलीघर को भी नष्ट कर दिया था जिससे श्रीनगर अंधकार में दुबू गया था। यह विश्वास करना कठिन है कि कश्मीर में बलवाइयों का यह प्रवेश पाश्चात्य सरकार के किसी-न-किसी मदद के बगैर संभव था। इस मामले के गुण-दोषों के बारे में निर्णय करने के लिए मेरे पास पथेष्ठ जानकारी नहीं है। न मेरे प्रयोजन के लिए उसकी आवश्यकता है। मैं तो सिफर यह जानता हूँ कि संघ सरकार ने श्रीनगर के लिए सैनिक टुकड़ियां, भले ही वे थोड़ी ही हों, रचना करके सही कदम उठाया है। इससे इतना तो होगा ही कि कश्मीरियों में आमविश्वास की भावना जगेगी।

यह शवश्वास करना कठिन है कि कश्मीर में बलवाइयों का यह प्रवेश पाश्चात्य सरकार की कस्तोर्दनीजसके के बगैर संभव था। इस मामले के गुण-दोषों के बारे में जानकारी नहीं थी। न मेरे प्रयोजन के लिए उसकी आवश्यकता है। मैं तो सिफर यह जानता हूँ कि संघ सरकार ने श्रीनगर के लिए सैनिक टुकड़ियां, भले ही वे थोड़ी ही हों, रचना करके सही कदम उठाया है। इससे इतना तो होगा ही कि कश्मीरियों में आमविश्वास की भावना जगेगी।

यह शवश्वास करना कठिन है कि पाश्चात्य सरकार ने राष्ट्रसंघ के सम्मुख भारत द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन की सत्यता को चुनती है और इस बात से इंकार करने से कुछ नहीं होता। हमलावरों को खदेड़ने के लिए जब कश्मीर ने भारत संघ से सहयोग मांगी तो उसके लिए कश्मीर की मदद के लिए पहुँचना लाजमी था और पाकिस्तान का यह कर्तव्य था कि वह इस शहर से भारत की संघ सरकार के साथ सहयोग कर्तव्य की, पर इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाया।

दोनों दोमिनियों में युद्ध हुआ तो ये किसी तीसरी शक्ति के नियंत्रण में चले जाएंगे जिससे बुरी कोई और बात नहीं हो सकती। मैं मित्रता और सहयोग के लिए अपील करता हूँ। लेकिन पाकिस्तान ने सहयोग करने की इच्छा तो व्यक्त की, पर इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाया।

(हरिर, 12-1-1948, पृ. 509)
69. भारत में विदेशी बस्तिया

(अ) गोवा

अब बदलाव जरूरी

यह छोटी-सी पुर्तगाली बस्ती जो ब्रिटिश सरकार की मौन अनुमति से ही यहां टिकी है, उसके कुलित तौर-तरीकों की नकल करके चल नहीं सकती | स्वतंत्र भारत में, गोवा को स्वतंत्र राज्य के कानूनों का विरोध करते हुए अपना अलग अस्तित्व बनाए रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती | एक भी गोली चले बिना, गोवा के लोग स्वतंत्र राज्य के नागरिक अधिकार प्राप्त करने में सफल हो जाएगे | वर्तमान पुर्तगाली सरकार गोवा के निवासियों को उनकी इच्छा के बगैर अपनी अधीनता में अलग-थलग रखने के लिए अब ब्रिटिश हथियारों के संरक्षण पर निर्भर नहीं रह सकेगी | मैं गोवा की पुर्तगाली सरकार को परामर्श देना चाहता हूं, गोवा के पुतकगारों के साथ समानता की आश्रय लेने के बजाए गोवावासियों के साथ सम्मानजनक समझौता कर ले | (हरिर, 30-6-1946, पृ. 208)

आतंक का राज्य

...मैं मौजाबीक, डेलगोवा और इन्यमबान गया हूं | मैं वहां लोकोपकार की दृष्टि से चलाई जाने वाली कोई सरकार नहीं देखा | वस्तुत: मुझे यह देखकर अच्छा हुआ कि वहां की सरकार भारतीयों और पुर्तगालियों तथा अफ्रीकियों और अपने बीच भेद करती है | भारत में पुर्तगाली बस्तियों का इतिहास भी उनके लोकोपकारी शासन के दावे को सिद्ध नहीं करता | गोवा के हालात के बारे में मैंने जो देखा-सुना है, वह कतई प्रशंसनीय नहीं है।

गोवा के भारतीयों ने अभी तक आवाज नहीं उठाई है; यह पुर्तगाली सरकार की निर्दोषिता अथवा परोपकारी प्रकृति के कारण नहीं है, बल्कि वहां व्याप्त आतंक के राज्य के कारण है |**88** (हरिर, 11-8-1946, पृ. 260)

...पुर्तगाल को गोवा के भारतीयों की जन्मभूमि कहना...बिलकुल बेतुकी बात है | जिस प्रकार मेरी मातृभूमि भारत है, उसी प्रकार उनकी मातृभूमि भी भारत ही है | गोवा ब्रिटिश भारत से बाहर जरूर है, पर वह भोगोलिक दृष्टि से भारत का ही अंग है | और पुर्तगालियों तथा गोवा के भारतीयों के बीच शायद ही कोई समानता है | (हरिर, 8-9-1946, पृ. 305)

नागरिक स्वतंत्रता

गोवावासियों से मेरा कहना है कि वे पुर्तगाली सरकार का डर अपने मन से उसी तरह निकाल दें जिस तरह भारत के अन्य भागों के लोगों ने शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार का डर अपने मन से निकाल दिया है और नागरिक
आंदोलन की सफलता के लिए यह परम आवश्यक है कि गोमंतक इसे नागरिक स्वतंत्रता के स्पष्टतम मुद्दे को लेकर चलाएं। स्वराज का बड़ा मुद्दा तब तक प्रतीक्षा कर सकता है जब तक कि संपूर्ण भारत स्वराज प्राप्त नहीं कर लेता। हां, यह बात और है कि पुर्तगाली सरकार बुद्धिमानी से काम लेते हैं। स्वयं ही अपनी बस्तियों के निवासियों के साथ मैथीसूर्य बालीत्र के द्वारा कोई समझौता कर ले। गोवा के नागरिक किसी सीधी कारवाई के द्वारा, वह हिंसक हो अथवा अहिंसक, स्वराज प्राप्त नहीं कर सकते। अहिंसक कारवाई में सफलता अवश्य मिलती है, पर उसके लिए प्रत्येक देशवासी को वीर की भांति अपना जीवन दांव पर लगाने के लिए उद्धर होना पड़ता है। भारत के मुकामदेवों के, जिसकी जनसंख्या विशाल हैं और जिसके पास अनुभव है तथा जहाँ जागृति भी काफी फैल चुकी हैं, गोवा में अभी इसकी आशा करना कठिन है। इसलिए अभी तो नागरिक स्वतंत्रता के स्पष्टतम मुद्दे को ही अपना लक्ष्य बनाना ठीक होगा।

कामयाबी की दूसरी शर्त यह है कि संघर्ष अहिंसक हो और, इसलिए, पूर्णतया प्रकट रूप में चलाया जाए। तीसरे, सत्ता और पद के लिए किन्हीं पार्टियों के बीच संघर्ष न हो। जब लक्ष्य समाप्त हो तो भिन्न-भिन्न पार्टियों का कोई अर्थ नहीं होता। (हरि, 30-6-1946, पृ. 208)

भारत के इस भाग में मुझे व्यक्तिगत रूप से जो विवरण प्राप्त हुए हैं अथवा जो कुछ मैंने समाचारपत्रों में पढ़ा है, उससे तो यही सिद्ध होता है कि गोवा में नागरिक स्वतंत्रता है ही नहीं। मैं समझता हूँ कि कोर्ट मार्शल द्वारा डा. ब्रिगेजा को आठ साल की सजा तथा उन्हें किसी दूसरी पुर्तगाली बस्ति में निर्वासित करने का समाचार इस बात का पक्का सबूत है कि गोवा में नागरिक स्वतंत्रता का घोर अभाव है। डा. ब्रिगेजा जैसे कानून के पाबंद नागरिक को इतना खतरनाक क्यों समझा गया कि उनके निर्वासन का आदेश दिया गया?....

गोवावासी स्वाधीनता के लिए तब तक प्रतीक्षा कर सकते हैं जब तक कि बृहत भारत को स्वाधीनता प्राप्त नहीं हो जाती। लेकिन कोई व्यक्ति अथवा वर्ग अपना आत्मसम्मान खोए बगैर नागरिक स्वतंत्रता के बिना इस प्रकार जीवित नहीं रह सकता। (हरि, 11-8-1946, पृ. 260)

....नागरिक स्वतंत्रता के प्रेषमयों को निशाना बनाने का खेल गोवा में खूब खेला जा रहा है। छोटी शक्ति, अपने छोटे होने के कारण, प्राय: दंड के भय से मुक्त अनुभव करते हुए काम करती है जोकि बड़ी शक्ति नहीं कर पाती। पुर्तगाल तो परोक्ष का भावना तथा रोमन कैथोलिक वर्ग के साथ अपनी मैथी की बड़ी शक्ति बचाता है। हमें मनुष्य और ईश्वर के सामने अपने कृतियों की न्यायोचितता सिद्ध करनी पड़ती | निर्दोषों का रक्त....उनके मकबरों
या भस्मों से चीख-चीखकर लुकारेगा | उसमें जीवित व्यक्तियों की वाणी से कहीं अधिक शक्ति होती है, वे व्यक्ति चाहे कितने ही शक्तिशाली और वापस हों | (हरर, 1-9-1946, पृ. 286)

(आ) फ्रांसीसी भारत

....साम्राज्यवाद के हाथ सदा रक्तरंजित होते हैं | साम्राज्यवादी शक्तियां, अशोक महान की तरह, जितनी जल्दी अपने साम्राज्यवाद का त्याग कर दें, इस कराहती दुनिया के लिए उतना ही अच्छा है | लेकिन फ्रांस श्रार्द्धसम्राज्य है, अतः उसकी प्रशंसा की जा सकती है; फ्रांसीसी भारत की स्थिति इसका एक उदाहरण है.... (हरर, 8-9-1946, पृ. 305)

मेरा यह निश्चित मत है कि इन फ्रांस-अधिकृत क्षेत्रों के भारतीय समय रहते स्वतंत्र भारत के अंग बन जाएंगे | बस यही है कि इन क्षेत्रों के भारतीयों को कानून अपने हाथ में नहीं लेना चाहिए | संवैधानिक उपाय उन्हें सुभाष्ट करने हैं और फिर, हमारे मुख्यमंत्री (जवाहरलाल नेहरू) भी है जिन्होंने इंडोनेशिया को स्वतंत्रता प्राप्त कराई है | निश्चय ही, वे (फ्रांस-अधिकृत) इन दो क्षेत्रों के अपने ही लोगों की उपेक्षा नहीं करेंगे | (हरर, 24-8-1947, पृ. 295)

....आखिर, फ्रांसीसी बड़े महान लोग हैं और वे स्वतंत्रता-प्रेमी हैं | भारत द्वारा, जिसने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है, उन पर कोई दबाव नहीं डाला जाना चाहिए | (हरर, 31-8-1947, पृ. 298)

....मेरी राय बिलकुल साफ है | अब जबकि करोड़ों भारतवासी ब्रिटिश शासन से मुक्त हो चुके हैं तो इन छोटी-छोटी विदेशी वस्त्रमें के निजीसियों को पराधीन रहने के लिए विवश नहीं किया जा सकता | मैं यह कभी सहन नहीं कर सकता कि इन छोटी-छोटी विदेशी वस्त्रमें की स्थिति शेष भारत से कमतर रहे | मैं आशा करता हूँ कि....महान फ्रांसीसी राष्ट्र भारत में या कहीं अन्यत्र काले अथवा भूरे लोगों के दमन में कभी योग नहीं देगा | (हरर, 16-11-1947, पृ. 416)
70. भारत और पाकिस्तान

विभाजन गैर-इस्लामी

मेरी पक्की धारणा है कि मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की जो मांग उठाई है, वह गैर-इस्लामी है, इसलिए मैंने निज्ज़ाकों उसे पापमय कहा है।

इस्लाम मानव जाति की एकता और भाईचारे का समर्थक है, वह मानव परिवार की एकता को खड़ित करने का पक्षधर नहीं है। इसलिए जो लोग भारत को दो युगुँसु वर्गों में बांट देना चाहते हैं, वे भारत के भी शत्रु हैं और इस्लाम के भी। (हरि, 6-10-1946, पृ. 339)

‘द्वि-राष्ट्र सिद्धांत’ गलत है। भारत के मुसलमान एक पृथक राष्ट्र हैं, इसके पक्ष में शायद कुछ तरक दिए जा सकते हों। लेकिन मैं कभी किसी को यह कहते नहीं सुना कि दुनिया में जितने धर्म हैं, उतने ही राष्ट्र हैं। (हरि, 11-11-1939, पृ. 336)

भारत के अधिकांश मुसलमान या तो वे हैं जिन्होंने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया है। फिर, ऐसे धर्म-परिवर्तितों के वंशज हैं। धर्म-परिवर्तन करते ही वे एक पृथक राष्ट्र नहीं बन गए। (हरि, 6-4-1940, पृ. 76)

मेरी सदा से यह धारणा रही है कि हिंदुओं और मुसलमानों में कोई भेद नहीं है। भले ही उनके साथ-साथ राष्ट्रों में फर्क है, पर इससे वे पृथक नहीं माने जा सकते। यह सही है कि वे भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायी हैं, लेकिन अन्य लोगों की भांति, उनका मूल एक ही है। (हरि, 9-11-1947, पृ. 400)

विभाजन का बलपूर्वक प्रतिरोध नहीं

अगर भारत के मुसलमान वस्तुतः इसके लिए जोर देते हैं तो अहिंसा का पुजारी होने के नाते मैं प्रस्तावित विभाजन का बलपूर्वक प्रतिरोध नहीं करूंगा। लेकिन मैं राष्ट्र के ढुकड़े किए जाने का खैर्षापूर्वक समर्थन कभी नहीं कर सकता। (हरि, 13-4-1940, पृ. 92)

मैंने जीवन में अनेक समझौते किए हैं, पर उन्होंने मुझे अपने लक्ष्य के निकट पहुंचने में मदद ही की है....अब यदि ईश्वर की यही इच्छा है तो मुझे अपने सपनों के टूटने का विवश साक्षी बनना पड़ेगा। (हरि, 4-5-1940, पृ. 115)

यदि आठ करोड़ मुसलमान यही चाहते हैं तो हिंसक अथवा अहिंसक विरोध करने पर भी दुनिया की कोई ताकत विभाजन को नहीं रोक सकती। (वही, पृ. 117)

पाकिस्तान को ताकत के बल पर समाप्त करना, स्वराज को समाप्त करना होगा। (हरि, 5-10-1947, पृ. 355)
यदि सभी आशंकाएं दूर कर दी जाएं और शातुता को मिलनता में तथा अविश्वास को विश्वास में बदल दिया जाए तो पाकिस्तान, जिसे मैंने एक बुराई की संज्ञा दी है, विश्वास अवधार में परिवर्तित हो सकता है | (हरि 13-7-1947, पृ 236)

अप्संधाभकों का संरक्षण

मैं ऐसे पाकिस्तान की कल्पना नहीं कर सकता जिसमें गैर-मुसलमान लोग शातता और सुरक्षा के साथ न रह सकें, न ऐसे हिंदुस्तान की कल्पना कर सकता हूँ जिसमें मुसलमान असुरक्षी हों | (हरि 27-4-1947, पृ 123)

मैं इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए काम कर रहा हूँ | मैं ऐसी सुरत पैदा करने की कोशिश कर रहा हूँ कि प्रत्येक राज्य का बहुसंख्यक समुदाय स्वयं आगे आएं आकर स्वतंत्रता के लिए आवश्यक परिस्थितियां उत्पन्न करे | (हरि 14-9-1947, पृ 323)

मैं ऐसे पाश्चात्य रचनात्मकों की सेवा के लिए अपने को समर्पित कर दूं | अगर दोनों जगहों के हिंदू और मुसलमान शाती से रहना आरंभ कर दें और अपनी शातुता को भूल जाएं तो यह एक नये जन्म के समान होगा और मुझे अतिरिक्त शक्ति प्रदान करेगा | (हरि 11-5-1947, पृ 146)

यह पाकिस्तान के बहुसंख्यकों और उसी प्रकार भारत संघ के बहुसंख्यकों का गुरूत्व करता है कि वे अपने यहां के अप्संधाभकों को संरक्षण प्रदान करें जिनकी आबरू और जान-माल की हिफ़ाज़त उनके हाथों में हैं....

हर मुसलमान को भारत से निकाल बाहर करने और हर हिंदू तथा सिख को पाकिस्तान से खदेड़ देने का परिणाम होगा युद्ध और मेका का सदा के लिए सवकना | (हरि 28-9-1947, पृ 352)

मतभेदों का निपटान : युद्ध नहीं

भारत और पाकिस्तान को चाहिए कि अपने मतभेदों को अपसी बातचीत से सुलझाए और अगर उसमें कामयाब न हो पाए तो पंच फैसले का सहारा लें | (हरि 5-10-1947, पृ 363)

अगर पाकिस्तान ने अपना गलत रवैया जारी रखा तो भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध निषिद्ध है | (हरि 28-9-1947, पृ 349)

अगर भारत और पाकिस्तान के बीच निरंतर शातुता रही और उनमें परस्पर युद्ध हुआ तो दोनों दोमिनियन बरबर हो जाएंगे और उनकी इतनी कठिनाई से मिली स्वतंत्रता का शीघ्र ही लोप हो जाएगा | मैं वह दिन देखने के लिए जीवित रहना नहीं चाहता | (वही, पृ 339)

यह सही है कि दोनों दोमिनियनों के बीच युद्ध नहीं होना चाहिए | उनमें मित्रों की तरह रहना होगा या फिर वे नष्ट हो जाएंगे | दोनों को निकट सहयोग रखते हुए काम करना होगा | एक-दूसरे से स्वतंत्र होते हुए भी उनमें बहुत-
सी बातें समान हैं | यदि उन्होंने शान्ति का भाव रखा तो उनमें कुछ भी समान नहीं रह जाएगा | यदि उनके बीच सच्ची मित्रता रही तो दोनों राज्यों के निवासी एक-दूसरे के प्रति निष्ठावान रह सकेंगे | ये दोनों एक ही राष्ट्रमंडल के सदस्य हैं | ये परस्पर शान्त कैसे हो सकते हैं ?¹¹⁴ (हरि, 5-10-1947, पृ. 356)
71. भारत का ध्येय

आत्मिक बल का आश्रय

मैं यह अनुभव करता हूँ कि भारत का ध्येय दूसरे देशों से भिन्न है | भारत के रास्ते विश्व का धार्मिक नेतृत्व करने का सामर्थ्य है | उसने संज्ञा से जिस प्रकार अपना शुद्धीकरण किया है, उसकी मिसाल दुनिया में नहीं मिलती | भारत को फौजी हथियारों की जरूरत उतनी नहीं है, उसने अपनी लड़ाई देवी हथियारों से लड़ी है; वह आज भी यह कर सकता है | अन्य राष्ट्र पशुबल के पक्ष में नहीं रहे हैं | यूरोप में जो विकट युद्ध छिड़ा हुआ है, वह इसी सच्चाई का जोरदार सबूत है | भारत अपने आत्मिक बल से सभी को जीत सकता है |

इतिहास में अनेक उदाहरण इस बात के उल्लेख हैं जिनसे सिद्ध होता है कि आत्मिक बल के सामने पशुबल कुछ भी नहीं है | इसका गुणगान किया गया है और मनोरंजनों ने उसके संबंध में अपने अनुभवों का वर्णन किया है | (स्पीरा, पृ. 405)

भारत कायरों का राष्ट्र नहीं है, यह उसकी युद्धप्रथा जातियों – वे चाहे हिंदु हों, मुसलमान हों, सिख हों या गोरखा हों – की व्यक्तिगत वीरता और साहस के वृत्तांतों से सिद्ध होता है | मेरा कहना यह है कि युद्ध की भावना भारत-भूमि के लिए परायी है और उसे संभवतः विश्व के विकास में एक उच्चतर भूमि का निभावा है | समय ही बताएगा कि उसकी नियति क्या होगी | (यंग, 22-6-1921, पृ. 199)

मैं ईश्वर का साक्षात करना चाहता हूँ | मैं जानता हूँ कि ईश्वर सत्य है | मेरी दृष्टि में, ईश्वर को जानने का एकमात्र निश्चित साधन अधिष्ठा अर्थत प्रेम है | मैं भारत की आजादी के लिए ही जी रहा हूँ और उसी के लिए मरूंगा, क्योंकि वह सत्य का अंग है | केवल स्वतंत्र भारत ही सबे ईश्वर की आराधना कर सकता है |

मैं भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रयासरत हुं | क्योंकि मेरी तीर्थों की भावना मुझे यह सिखाती है कि भारत का निवासी होने और उसकी संस्कृति का वारिस होने के नाते में उसकी सेवा करने के सर्वाधिक योग्य हूँ और मेरी सेवा पर उसका सर्वोपरि अधिकार है |

लेकिन मेरा राष्ट्रप्रेम अन्य नहीं है; इससे न केवल किसी अन्य राष्ट्र को हानि न पहुँचाने की बात है, बल्कि सच्चे अर्थों में सभी का हित करना भी शामिल है | भारत की स्वतंत्रता की मेरी जो धारणा है, उसके अनुसार वह दुनिया को कष्ट देने वाली कभी सिद्ध नहीं होगी | (यंग, 3-4-1924, पृ. 109)

भारत की नियति पशुबल के रक्तरंजित मार्ग पर चलने में निहित नहीं है, जिससे वह स्वयं थक चला है; भारत को तो शांति के रक्तहीन मार्ग पर चलना है जो सादा और देवी जीवन जीने से पैदा होता है | भारत के सम्पूर्ण अपनी आत्मा के नाश का संकट है | उसकी आत्मा न रही तो वह भी जीवित नहीं रहेगा | इसलिए उसे अकर्मण्यता और
लाचारी के स्वर में यह नहीं कहना चाहिए कि ‘मैं पश्चम से आने वाली हवा को नहीं रोक पा रहा |’ उसे इतनी मजबूती दिखानी होगी कि अपनी और दुनिया की खातिर इस हवा का प्रतिरोध कर सके | (यंग, 7-10-1926, पृ. 348)

भारत में अनादि काल से अहिंसा की अविच्छेद परंपरा है | लेकिन जहां तक मैं जानता हूँ, उसके प्राचीन इतिहास में ऐसा समय कभी नहीं आया जब सारे देश में पूर्ण अहिंसा का राज्य रहा हो | फिर भी, मुझे अहिंसा विश्वास है कि मानव जाति को अहिंसा का संदेश सुनाने का शुभ कार्य भारत ही करेगा | इसे फलित बनाने में युगों का समय लग सकता है | लेकिन जहां तक मैं समझता हूँ, भारत से पहले कोई और देश यह काम नहीं कर सकेगा | (हरि, 12-10-1935, पृ. 276)

संसार की सभी शोषित प्रजातियों के मार्गदर्शन का भाग भारत के है हम | भारत में जब तक अहिंसा का राज्य और ज्यादातर हमें नैतिक तौर पर भारत के लिए अहिंसा का प्रयास कर रहा हूँ | भारत दक्षिणी तथा शोषित प्रजातियों के लिए प्रकाशशस्त्र तथा बन सकेगा जब वह अपनी प्रजाओं के लिए स्वतंत्रता को समर्पित कर दे और विदेशी नियंत्रण से मुक्त होते ही हमारा परिप्रेक्ष्य न कर दे | (हरि, 19-5-1946, पृ. 134)

कर्मभूमि

....भारत भोगभूमि नहीं, अपितु मूलतः कर्मभूमि है | (यंग, 5-2-1925, पृ. 45)

....भारत की हर चीज़ मुझे आकर्षित करती है | इसके पास वह सब कुछ है जो किसी मानव को अपनी उच्चतम आकांक्षाओं की प्राप्ति के लिए अपेक्षित प्रतीत हो सकता है | (यंग, 21-2-1929, पृ. 60)

भारत और दुनिया

यूरोप के चरणों में नत भारत मानवता को आशा की कोई किरण नहीं दिखा सकता | जापान और घरेलू भारत ही कराहती दुनिया को शांति और सद्भावना के संदेश दे सकता है | (यंग, 1-6-1921, पृ. 173)

मानवता के लिए प्राणोपालन करने की आकांक्षा पालने से पहले भारत को जीना सीखना होगा | (यंग, 13-10-1921, पृ. 326)

....मेरी न्यूनतम आकांक्षा यह है कि भारत के प्रयासों के जरिए अंतरराष्ट्रीय मामले नैतिकता पर आधारित हो जाएं | (यंग, 26-12-1924, पृ. 421)

भारत का उदय होना हृं हो ताकि सारी दुनिया उससे लाभार्थी हो सके | मैं यह नहीं चाहता कि भारत का निर्माण किन्हीं अन्य राष्ट्रों के धर्मावेशों के ऊपर हो | इसलिए यदि भारत सुदृढ़ और योग्य बना तो वह सारी
दुनिया को अपनी कलाकृतियों और स्वास्थ्यवर्धक मसालों का निर्माण करेगा, पर अफीम या मादक द्रव्यों का निर्माण करने से इंकार कर देगा, भले ही इससे उसे प्रथम धन की प्राप्ति हो सकती हो | (यंग, 12-3-1925, पृ. 88)

मैं भारत को स्वतंत्र और सुदृढ़ देखना चाहता हूँ ताकि वह दुनिया की खुशहाली के लिए स्वयं को स्वेच्छापूर्वक एक विशुद्ध बल के रूप में प्रस्तुत कर सके | व्यक्ति यदि सुदृढ़ होता है तो वह परिवार के लिए अपनी बलि देता है; इसी प्रकार, परिवार गांव के लिए, गाव जिले के लिए, जिला प्रांत के लिए, प्रांत राष्ट्र के लिए और राष्ट्र सबके हित के लिए बलि हो जाता है | (यंग, 17-9-1925, पृ. 321)

मैं पूरी विनम्रता के साथ यह स्वीकार करता हूँ कि हम पश्चिम की बहुत-सी बातों को आत्मसात करके लाभार्थ हो सकते हैं | बुद्धिमत्ता किसी एक महाद्वीप अथवा प्रजाप्रविध की बपौदत नहीं है | पश्चिमी सभ्यता के प्रति मेरा विरोध वस्तुतः उसके अंधाधुंध और विवेकहीन अनुकरण के प्रति है जो इस धारणा पर आधारित है कि एशियावासियों में पश्चिम से आने वाली हर चीज़ की नकल करने भर की योग्यता है | (यंग, 11-8-1927, पृ. 253)

भारत का ध्येय कहीं अधिक उदारता है अर्थविश्व में मैत्री और शांति की स्थापना | शांति केवल सम्मेलन करने से नहीं आती | हम सभी देखते हैं कि सम्मेलन होते रहते हैं और फिर भी, शांति भंग होती है | (हरर, 17-11-1946, पृ. 404)

सहिष्णुता का पाठ

भूतान और सहिष्णुता का मूल्य तभी है जब वह कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी अक्षुण्ण रहे | यदि ऐसा नहीं हुआ तो वह भारत के लिए खेद का अवसर होगा.... (हरर, 5-10-1947, पृ. 354)

क्या भारत संघ एक धर्मतंत्रीय राज्य होगा और हिंदू धर्म के सिद्धांत अहिंसाओं पर थोपे जाएंगे ? मैं नहीं समझता कि ऐसा होगा | यदि हुआ तो भारत संघ आशा और विश्वास का देश नहीं रह जाएगा | एक ऐसा देश नहीं रह जाएगा जिसकी ओर एशियाई और अफ्रीकी प्रजातियाँ ही नहीं बल्कि समूची दुनिया उम्मीद की नजरों से देख रही है | (हरर, 16-11-1947, पृ. 411)
जब भारत सच्चे अर्थों में स्वतंत्र होगा तो वह अफगानिस्तान, लंका और बर्मा जैसे अपने पड़ोसियों की विपत्तियों में सहायता करने के लिए अवश्य दोइँगा | यही बात उपयुक्त तीनों देशों के पड़ोसियों पर भी लागू होती है किसी अर्थ है कि वे भी भारत के पड़ोसी होंगे | इस प्रकार, यदि व्यक्तिगत बलिदान जीता-जागता बलिदान है तो वह समूही मानवता को अपने में समेट लेता है | (हरर, 23-3-1947, पृ. 78)

भारत और एशिया

यदि भारत असफल हुआ तो एशिया का कोई भविष्य नहीं रह जाएगा | भारत को अनेक मिली-जुली संस्कृतियों और सभ्यताओं की पोषणस्थली कहा गया है, जो सर्वथा उपयुक्त भी है | भारत को एशिया, अफ्रीका और दुनिया के किसी भी हिस्से की शोषित प्रजातियों के लिए आशा का केंद्र बनाना और बने रहना चाहिए | (हरर, 5-10-1947, पृ. 354)

सभी आंखें भारत पर टिकी हैं जो एशिया और अफ्रीका ही नहीं बल्कि समूही दुनिया की आशा का केंद्र बन चुका है | यदि भारत को इस आशा के अनुरूप बनाना है तो उसे भावुकता बंद करनी होगी और सभी भारतीयों को मित्रों तथा भाईयों की तरह रहना होगा | निर्मल हदय उस सुखद अवस्था की पहली शर्त है | (हरर, 26-10-1947, पृ. 388)
72. लोकतंत्र का सार

लोकतंत्र की भावना कोई यात्रिक वस्तु नहीं है जिसे ढांचों का उन्मूलन करके समायोजित किया जा सके | उसके लिए हृदय-परिवर्तन आवश्यक है....उसके लिए भाईचारे की भावना का विकास आवश्यक है.... | (यंग, 8-12-1920, पृ. 3)

सार रूप में, लोकतंत्र का अर्थ होना चाहिए सभी की आम भलाई के लिए लोगों के सभी वर्गों के समस्त भौतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक संसाधनों के जुटाव की कला तथा विज्ञान | (हरर, 27-5-1939, पृ. 143)

अनुशासन

स्वतंत्रता के उच्चतम स्तर के लिए अधिकार अनुशासन और विन्द्रता की अपेक्षा होती है | जो स्वतंत्रता अनुशासन और विनिमय से उत्पन्न होती है वह छीनी नहीं जा सकती; वे-लगाम स्वेच्छाचार असहभागता का चिह्न है जो व्यक्ति को भी हानि पहुँचाता है और उसके पड़ोसियों को भी | (यंग, 3-6-1926, पृ. 203)

अनुशासित और प्रबुद्ध लोकतंत्र दुनिया की सबसे बढ़िया चीज़ है | पूर्वाधिकृत, अज्ञानमय और अंधविश्वासपूर्ण लोकतंत्र अव्यवस्था को जन्म देता है और स्वयं ही अपना विनाश कर लेता है | (यंग, 30-7-1931, पृ. 199)

व्यक्ति का उत्तरदायित्व

सच्चे लोकतंत्र में, प्रत्येक स्त्री-पुरुष को स्वयं विचार करने की शक्षा दी जाती है | मैं नहीं जानता कि सुधार के अनुसार, जो दान की तरह अपने से ही आरंभ किया जाना चाहिए, और कौन-सी विधि है जिससे यह सच्ची क्रांति लाई जा सकती है | (हरर, 14-7-1946, पृ. 220)

लोकतंत्र में व्यक्ति की इच्छा समाज की इच्छा, जिसे राज्य कहा जाता है, के द्वारा शासित और मयादत होती है जो लोकतंत्र द्वारा और उसके हित के लिए चलाया जाता है | पद्धति हर व्यक्ति कानून को अपने हाथों में लेने लगे तो राज्य नाम की चीज़ ही नहीं रहेगी, अराजकता फैल जाएगी जिसका अर्थ है कि सामाजिक कानून यानी राज्य का लोप हो जाएगा | इसी से अंतत: स्वतंत्रता का नाश होता है | इसलिए आपको अपने क्रोध को वश में रखना चाहिए और न्याय सुनिश्चित करने का काम राज्य को करने देना चाहिए | (हरर, 28-9-1947, पृ. 350)

कसौटी

लोकतंत्र के सबसे ऊँची कसौटी यह है कि जब तक व्यक्ति किसी दूसरे के जान-माल को हानि न पहुँचाए तब तक उसे जो वह चाहे वह करने की आज़ादी होनी चाहिए | सार्वजनिक आचार को गुंडागरी से नियंत्रित करना असंभव है | (यंग, 1-8-1920, पृ. 4)
यदि निर्णयतम मनुष्य के साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित करने, उससे बेहतर जीवन न जीने की उकट इच्छा रखने और अपनी अधिकारयोग्यतानुसार उस स्तर तक पहुंचना का सचेतन प्रयास करने से कोई व्यक्ति लोकतांत्रिक कहलाए सकता हो तो मैं लोकतांत्रिक कहलाने का दावेदार हं। (बांकर, 18-9-1934)

जन्मजात लोकतांत्रिक जन्मजात अनुसार होता है। जिस व्यक्ति का सामान्य स्वभाव सभी मानव-निमित्त अथवा देवी नियमों के स्वेच्छापूर्वक पालन करने का है, उसे लोकतंत्र सहज प्रतीत होता है। जिन्हें लोकतंत्र की सेवा करने की आकांक्षा है, उन्हें वाहिक कि पहले अपने आप को लोकतंत्र की इस कसौटी पर कसकर देखें | एक बात और है कि लोकतांत्रिक व्यक्ति को परम निस्स्वार्थी होना चाहिए। उसे अपने अथवा अपनी पार्टी के हित के बारे में नहीं सोचना चाहिए बल्कि केवल लोकतंत्र के संदर्भ में सोचना चाहिए। ऐसा व्यक्ति इस विश्वास से अवज्ञा करने का अधिकार होता है।

मैं यह नहीं चाहता कि कोई व्यक्ति अपनी धारणाओं का लागू करे अथवा अपना दमन करे | मैं नहीं मानता कि स्वस्थ और सच्चा मतभेद हमारे ध्येय को हासिल करके सकता है। लेकिन अवसरवाद, छुटकाराथर्य अथवा ऊपरी मन से किए गए समझौते अवश्य हानिपहुंचाते हैं।| अगर आप किसी बात से असहमत हैं तो यह ध्यान रखें कि आपकी अंतरतम की धारणाओं का उपलब्धित करने के लिए में उपस्थितिक जनता का सामान्य स्वभाव ऐसा है, जैसे-जैसे छह हज़ार व्यक्ति की संख्या में सकता है | उसी में सच्चा लोकतंत्र, सच्चा खुलेपंचायत राज निहित है। (हरर, 16-11-1947, पृ. 409)

लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व

मैं इसे पूर्णतया श्रांत धारणा मानता हूँ कि प्रतिनिधियों की संख्या अधिक होने से कार्य संचालन बेहतर होता है | करोड़ों लोगों के श्रम का वृद्धि अथवा ऊपरी मन से किया जाए तो उससे करोड़ों लोगों की संसद में स्वस्थ वृद्धि की जा सकती है | उसी में सच्चा लोकतंत्र, सच्चा पंचायत राज निहित है। (हरर, 28-12-1947, पृ. 488)

लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व

मैं इसे पूर्णतया श्रांत धारणा मानता हूँ कि प्रतिनिधियों की संख्या अधिक होने से कार्य संचालन बेहतर होता है या कि इससे लोकतंत्र के सिद्धांत को रक्षा होती है। | जैसे-जैसे चुने गए छह हज़ार अधिकारियों की संख्या में ऐसे पंद्रह सी प्रतिनिधि हर हाल में लोकतंत्र की बेहतर ढंग से रक्षा कर सकते हैं जो जनता के हितों के प्रति सतर्क हों, खुले दिमाग के हों और सत्यनिष्ठ हों। | लोकतंत्र की रक्षा करने के लिए लोगों में स्वाधीनता, आत्मसम्मान और एकता की उकट भावना होनी चाहिए और उन्हें ऐसे ही लोगों को अपना प्रतिनिधिचुनना चाहिए जो भले और सत्यनिष्ठ हों। | (ए. पृ. 369)
अगर लोगों के प्रतिनिधित्व थोड़ी ही संख्या में हों पर वे लोगों की भावना, आशा तथा आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करते हों तो इससे सच्चे लोकतंत्र की कोई हानि नहीं होती। मेरी धारणा है कि जोर-जबरदस्ती करके लोकतंत्र का विकास नहीं किया जा सकता | वह तो अंदर से ही प्रस्फूटित होनी चाहिए | (बांका, 18-9-1934)

लोकतंत्र का सार यही है कि प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र के सभी तरह-तरह के हितों का प्रतिनिधित्व करे | यह सही है कि इसमें विशेष हितों के लिए विशेष प्रतिनिधित्व की कोई मनाही नहीं है, और न होनी चाहिए, पर यह प्रतिनिधित्व उसकी कसौटी नहीं है | वह तो उसकी अपूर्तान्त का चिह्न है | (हरर, 22-4-1939, पृ. 99)

भारत के सच्चे लोकतंत्र में, गांव को इकाई माना जाएगा.... दल्ला लोकतंत्र केन्द्र में बैठे बीस लोगों के द्वारा नहीं चलाया जा सकता | इसका संचालन तो नीचे से, हर गांव के लोग करेंगे | (हरर, 18-1-1948, पृ. 519)

....इसमें संदेह नहीं कि यदि लोग आम तौर पर किसी खास चीज़ में विश्वास करते हों और उसे चाहते हों तो लोकतंत्र में उसे कार्यरूप देने में भीतर का अनुभव नहीं किया जाना चाहिए | जन-प्रतिनिधित्वों को जनता की मांग को उपयोग शासन का उपाय अवश्य करना चाहिए | ऐसा देखा गया है कि यदि जनता की मानसिक प्रवृत्ति अनुकूल हो तो संघषों में शक्ति पाने में बड़ी मदद मिलती है | (हरर, पृ. 518)

जनता की आवाज़ ईश्वर की आवाज़ अर्थात धर्म की आवाज़ मानी जा सकती है | लेकिन जहां लोग ख्यात ही शोषित होते हों वहां उनकी आवाज़ ईश्वर की आवाज़ कैसे होगी.... अगर लोगों की आवाज़ ईश्वर की आवाज़ है तो वह दलीय हितों से ऊपर होनी चाहिए | ईश्वर हर मुद्दे को सत्य और अशंका की तुला पर रखकर शक्तिकृत शक्ति करेगा | (हरर, 29-9-1946, पृ. 332)

मैंने असंख्य बार कहा है कि राष्ट्र का काम करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के पास राजनीतिक शक्ति हो | लेकिन यह आवश्यक है कि लोग जिनके हाथों में सत्य दें, उनके साथ निरंतर संयुक्त बनाए रखें | ये लोग दृष्टिकोण में बहुत थोड़े रहें | लेकिन जनता अगर अपनी शक्ति को पहचानाने और उसे बुद्धिमानी के साथ तथा अच्छी तरह इसेमेल में लाए तो चीज़ें अपने आप ठीक हो जाएंगी | (हरर, 14-9-1947, पृ. 321)

लोकतंत्र में, यदि सरकार कोई गलती करे तो लोगों को उसका ध्यान उस गलती की ओर आकर्षित करके ही संदेह हो जाना चाहिए | अगर वे चाहें तो सरकार को जटा सकते हैं | लेकिन सरकार के विरुद्ध आंदोलन करके उसके काम में बाधा नहीं डाली जानी चाहिए | हमारी सरकार कोई सरकार नहीं है जिसके पास उसकी सहायता के लिए शक्तिशाली स्थल एवं नौसेना हो | वह तो अपनी शक्ति जनता से ही प्राप्त करती है | (हरर, 26-10-1947, पृ. 382)

लोकतंत्र में जनता की इच्छा ही सर्वोपरि है.... (हरर, 14-12-1947, पृ. 471)
यदि अधिकांश लोग स्वार्थी और अविश्वसनीय हों तो लोकतंत्र अर्थात पंचायत राज किस तरह चल सकता है?
(हरि, 28-12-1947, प. 486)

बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक
विवेक के मामले में, बहुसंख्या के नियम का कोई स्थान नहीं है।
(यंग, 4-8-1920, प. 4)

हमें जनादेश के सिद्धांत को बदलकर सीमा तक नहीं बनाए लेना चाहिए और बहुसंख्यकों के संकल्पों का दास नहीं बनाना चाहिए। वह पत्रिका का और भी संगीतिक रूप में पुनर्जीवन होगा। यदि अल्पसंख्यकों के अधिकारों का समान्यता किया जाना है तो बहुसंख्यकों को उनकी राय और कार्यवाही को सहन करना चाहिए और उसका आदर करना चाहिए। यह सुनिश्चित करना बहुसंख्यकों का काम है कि अल्पसंख्यकों की बात ठीक से सुनी जाती है।
(यंग, 26-1-1922, प. 54)

बहुसंख्या के शनयम की प्राप्तकरण काफी सीमित है, वह यह है कि बैरों की बातों में हमें बहुसंख्या की बात माननी चाहिए।
(यंग, 2-3-1922, प. 129)

लोकतंत्र में, राय जाहिर करने और कार्य करने की अधिकार चाहिए।
(यंग, 8-12-1921, प. 403)

बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक शववेक के मामले में, बहुसंख्या के शनयम का कोई स्थान नहीं है।
(यंग, 4-8-1920, प. 4)

बहुसंख्या के शनयम का प्राप्तकरण काफी सीमित है; वह यह है कि बैरों की बातों में हमें बहुसंख्या की बात माननी चाहिए। लेकिन बहुसंख्या जो भी निर्णय करे, उन्हें मानना दासता है। लोकतंत्र भेड़चाल नहीं है।
(यंग, 2-3-1922, प. 129)

असवहष्णुता
उदाहरण के लिए, मैंने बार-बार कहा है कि कोई विचार-संप्रदाय इस बात का दावा नहीं कर सकता कि सही निर्णय होने के अधिकार केवल हमी ने है।
(यंग, 2-2-1921, प. 33)

जीती-जागती आस्था की रचना बहुसंख्या के नियम द्वारा नहीं की जा सकती।
(यंग, 16-3-1922, प. 161)

असवहष्णुता
उदाहरण के लिए, मैंने बार-बार कहा है कि कोई विचार-संप्रदाय इस बात का दावा नहीं कर सकता कि उसकी निर्णय लेने का अधिकार केवल हमी ने है। हम सभी से गलती हो सकते हैं और हम मानेंगे कि अपने फैसले में रद्दबदल करनी पड़ती है।
(यंग, 2-2-1921, प. 33)
को समझने का प्रयास करे और यदि उसे स्वीकार न कर सकें तो उसे उसी प्रकार पूरा समान दें जिस प्रकार हम चाहते हैं किंव रोधी हमारे दक्षिणों का समान करे | स्वस्थ सार्वजनिक जीवन की यह एक अपरिहार्य कसोटी है, अतः यह स्वराज के लिए भी आवश्यक है

यदि हमें उदारता और सहिष्णुता नहीं है तो हम कभी यातपुर्वक अपने मतभेदों को दूर नहीं कर सकेंगे और हमें हमेशा विवाद के लिए किसी तृतीय पक्ष अर्थात विदेशी शक्ति का मुंह देखना होगा | (यंग, 17-4-1924, प. 130)

असहिष्णुता, अशिष्टता और कठोरता...सभी अच्छे सामाजिक में वर्जित होते है और ये निश्चितता लोकतंत्र की भावना की प्रतिकूल है | (हरि, 14-8-1937, प. 209)

यदि हम दूसरे पक्ष की बात सुनने के लिए तैयार नहीं हैं तो लोकतंत्र का विकास नहीं हो सकता | जब हम अपने विरोधी की बात को सुनने से इंकार कर देते हैं या सुनकर उसका महीन उठाते हैं तो हम तर्क का द्वार ही बंद कर देते हैं | यदि असहिष्णुता हमारी आदत बन जाए तो सत्य की हमारे हाथों से फिसल जाने का खतरा पैदा हो जाता है | एक और जहां हम ईश्वर से मिले प्रकाश का अपनी सीमित बुद्धि के अनुसार अर्थ लगाकर उस पर निभापुर्वक अचानक करना चाहिए वहीं हम अपने दिमाग की हमेशा खुला रखना चाहिए और सदा इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि जिसे हम सत्य समझ बैठे थे वह अंतत: सत्य नहीं था | दिमाग का यह खुलापन हमारे अंदर के सत्य को दद करता है और उसमें यदि कोई दोष है तो उसे दूर कर देता है | (हरि, 31-5-1942, प. 172)

संख्या नहीं, गुणवत्ता

मैं मात्रा जिनं भी हो, उसकी तुलना में गुणवत्ता को अधिक महत्व देता हूँ...संदेह, कलह, परस्पर विरोधी हित, अन्द्रविश्वास, भय, अविश्वास आदि के रहते हुए संख्याओं में कोई सुरक्षा नहीं है बल्कि खतरा भी हो सकता है...जब लोग कड़े अनुशासन के अधीन पूरी तरह एक होकर कार्यवाह करते हैं तो उन्हें दबाव मुक्त कर जाता है | लेकिन जब प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना सुर अलापता है अथवा किसी को यह पता नहीं होता कि किसके का है तो जनशक्ति अपना सर्वनाश स्वर्ण कर लेती है | (यंग, 30-4-1925, प. 152)

मैं उम्मीदवार से केवल यह पूछता हूँ, ‘तुम्हें कितना चारूस अथवा स्वीकार की भावना में उम्मीदवार का दृष्टि है या तुम तुम्हारे अंदर समय की मांग को देखते हुए स्वयं को उसके अनुसरण सिद्ध करने की योग्यता है’? यदि वह इस परीक्षा में खरा उतरता है तो मैं पहले उस उम्मीदवार को चुनूंगा जो सबसे अत्यधिक वर्ग का होगा | इस प्रकार, मैं भारत के कल्याण का ध्यान में रखते हुए सभी अत्यसंख्यकों को उचित अधिमान देंगा...भारत के कल्याण का अर्थ है समूह के भारत का कल्याण, केवल हिंदू या मुसलमान या किसी समुदाय विशेष का ही कल्याण नहीं | (यंग, 13-8-1925, प. 278)
मेरे आपसे कहता हूँ कि इस विचार से भयभीत मत होइए कि आप संख्या में बहुत कम हैं। कभी-कभी यह विशेषाधिकार की बनाती होती है। मैंने प्रायः कहा है कि यदि मैं एक के अत्यंत मत में रह जाऊँ तो मुझे बड़ा अच्छा लगेगा क्योंकि यह कृत्रिम बहुमत जो लोगों के मेरे प्रति आदरभाव का परिणाम है, मेरी प्रगति को अवरुद्ध कर देता है।

यह अवरोध न हो तो मैं नित्तिद्ध होकर अवज्ञा करूँगा... (वही, पृ. 279)

अहिंसा में पक्का विश्वास होने का अर्थ यह अवश्य है कि मैं अल्पसंख्यकों की बात मानूँगा। प्रथम यह कि अनुरक्षण बीती है तो अपराधियों को कमजोर बनाने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि उनकी बात मानते जाओ।

लोकतंत्र को ठीक से चलाने के लिए वस्तुतः तथ्यों के ज्ञान की नहीं, अपि सही शिक्षा की आवश्यकता होती है। (हरि, 29-9-1946, पृ. 334)

स्वस्थ लोकतंत्र का क्या असर होता है, यह हम अभी पूरी तरह समझ नहीं पाते हैं...लोकतंत्र जब हिस्सक और आक्रमक रूप में लाया अपना लेता है तब वह असहनीय हो जाता है। (यंग, 7-5-1931, पृ. 103)

लोकतंत्र के पास एक ही बल है और वह है लोकतंत्र का। सत्याग्रह, सत्यी और उपवास तथा बल के प्रचुर या प्रकट प्रयोग के बीच कोई साम्य नहीं है। लेकिन लोकतंत्र में उनका भी सीमित उपयोग ही है। (हरि, 7-9-1947, पृ. 316)

विधान

लोकतंत्र से आगे बढ़कर बनाया गया विधान प्रायः बिलकुल बेकार होता है। लोकतंत्र को तैयार करने का सबसे त्वरित उपाय असहयोग है। (यंग, 29-9-1921, पृ. 208)
लोकतंत्र में कानून बनाने से पहले उसके विषय में लोगों को धैर्यपूर्वक जानकारी देना आवश्यक है | (हरी, 16-6-1946, पृ. 181)

राजनीतिक कार्य
...
...मे राजनीतिक क्षेत्र में आने के लिए विवश इसलिए हुआ कि मैंने देखा कि राजनीति का स्वर्ण किए बिना में सामाजिक कार्य तक नहीं कर सकता | मैं अनुभव करता हूँ कि राजनीतिक कार्य की सामाजिक और नैतिक प्रगति के संदर्भ में लिया जाना चाहिए | लोकतंत्र में, जीवन का कोई अंग राजनीति से अछूता नहीं होता | (हरी, 6-10-1946, पृ. 341)

सत्ता की प्रकृति
सत्ता मिलने पर मनुष्य अंधे-बहरे हो जाते हैं | ऐसे अपनी नाक के नीचे होने वाली बातें भी उन्हें दिखाई नहीं देती, न अपने कानों से टकराने वाले शब्द ही सुनाई देते हैं | इसलिए यह कोई नहीं कह सकता कि सत्ता के मद में उन्मृत सत्ता क्या नहीं कर बैठेगी | अतः देशप्रेमियों को मूत, जेल और इसी तरह की अन्य घटनाओं के लिए तैयार रहना चाहिए | (यंग, 13-10-1921, पृ. 327)

निश्च से साथ सेवा करने से जो शक्ति प्राप्त होती है, वह मनुष्य का उदारीकरण करती है | लेकिन वह सत्ता जिसे सेवा की दृष्टि से देखने वाले होने वाले वह सत्ता का प्रयास किया जाए और जो केवल अधिक वोटों के बल पर प्राप्त की जा सकती हो, केवल एक भ्राता है और इसके फंदे से बचना चाहिए | (यंग, 11-9-1924, पृ. 301)

सत्ता दो प्रकार की होती है | एक वह जो दंड के भय द्वारा प्राप्त की जाती है और दूसरी वह जो प्रेम की कलाओं से अर्जित की जाती है | प्रेम पर आधारित सत्ता दंड के भय से उद्भूत सत्ता की तुलना में हज़ार गुना अधिक कारगर और स्थायी होती है | (यंग, 8-1-1925, पृ. 15)

मेरी दृष्टि में, राजनीतिक सत्ता अपने आप में कोई लक्ष्य नहीं है, बल्कि यह जीवन के सभी क्षेत्रों में लोगों की दशा को सुधारने का एक साधन मात्र है | राजनीतिक सत्ता का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व के द्वारा राष्ट्रीय जीवन को नियंत्रित करने की क्षमता | यदि राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण बन जाए कि वह अपना नियम त्वम कर सके तो फिर किसी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं है | तब वह प्रबुद्ध अराजकता की स्थिति कहलाती है | इस स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति अपना शासक स्वयं होता है | वह अपने ऊपर इस प्रकार शासन करता है कि अपने पड़ोसी के मार्ग में कभी बाधक न बने | इसलिए आदर्श राज्य में राजनीतिक सत्ता नाम की कोई चीज नहीं होती, क्योंकि उसमें राज्य का ही अस्तित्व नहीं होता | लेकिन जीवन में आदर्श की पूरी तरह प्राप्ति कभी नहीं होती | इसलिए थोरू का क्लासिक कथन ही सत्य है कि सबसे अच्छी सत्ता वह है जो सबसे कम शासन करे | (यंग, 2-7-1931, पृ. 162)
जहां ऊपर से थोपी गई सता को सदा पुलिस और फौज की जरूरत रहती है वहां अंदर से उत्पन्न सता के लिए इनका बहुत ठोळा या कोई उपयोग नहीं होना चाहिए। *(हरि, 4-9-1937, पृ. 233)*

लोकतंत्र तब तक संभव नहीं है जब तक सता में सभी की भागीदारी न हो, लेकिन लोकतंत्र का इतना पतन नहीं होने देना चाहिए कि वह भीड़ङ्क में रूप ले ले। स्वशासन में अदुर्जू या मजदूर की भी, जिनकी बदौलत आप अपनी आजीविका कमा पाते हैं, भागीदारी होंगी। लेकिन आपकी उनके संपर्क में आना होगा, जाकर उनकी झूठपड़ीयां देखनी होंगी जिनमें वे भेड़-बकरियों की तरह भरे रहते हैं। मानवता के इस हिस्से की देखभाल करने का काम आपका है। उनके जीवन को बनाना या बिगाड़ना आपके हाथों में है। *(यंग, 11-1-1936, पृ. 380)*

तानाशाही

अनेक व्यक्तियों के ऊपर एक व्यक्ति का शासन असहिनीय है। वह समाप्त होना चाहिए। प्रश्न यह है कि ‘कैसे’? रास्ता यह है कि लोग जीना शुरू करें। किसी शासक का सिर काट देना काफी आसान काम है। रावण की कथा याद कीजिए। उसके दस सिर थे। एक सिर के कटने रहे उसके स्थान पर दूसरा सिर उग आता था। इससे सीख यह मिलती है कि जनता जाग्रत हो तो सिर काटने की जरूरत ही नहीं पड़ती। *(हरि, 6-10-1946, पृ. 341)*

लोगों का, लोगों के द्वारा और लोगों के लिए शासन किसी एक व्यक्ति के इशारे पर नहीं चलाया जा सकता, वह व्यक्ति चाहे कितना ही महान क्यों न हो। *(हरि, 14-9-1947, पृ. 320)*

व्यक्तिगत रूप से में शासन के कोष की उत्तरी चिता नहीं करता जितनी कि भीड़ के कोष की करता हूं। भीड़ का कोष राष्ट्रीय अत्याचार का बिहार होता है। इसलिए शासन की अपेक्षा, जो एक छोटा-सा तंत्र होता है, भीड़ के साथ निपटना काफी कठिन काम है। जिस सरकार में शासन करने की योग्यता नहीं रह गई है, उसे अपदस्थ करना सरल है, किंतु उन्मत्त अनजान लोगों की भीड़ का इलाज जनता कठिन है। *(यंग, 28-7-1920, पृ. 3)*
भीड़तंत्र

...भीड़ को प्रशिक्षित करने से ज्यादा आसान काम दूसरा नहीं है, क्योंकि न तो उसके पास बुद्धि होती है, न कोई पूर्वचित्त वे तो उन्माद के अर्थी होकर काम करते हैं। उन्हें पछतावा भी बड़ी जल्दी होता है...मैं लोकतंत्र का विकास करने के लिए असहयोग के अस्त का इस्तेमाल कर रहा हूँ। (यंग, 8-9-1920, पृ. 5)

...हमें इन जनसमूहों को प्रशिक्षित करना चाहिए जिनके हृदय बड़े निर्मल हैं, जिन्हें देश का ख्याल है और जो चाहते हैं कि उन्हें कोई सिकायत और उनका नेतृत्व करे। बस, धोड़े-से प्रभुद्व और सच्चे स्थानीय कार्यकर्ता मिल जाएं तो समूचे राष्ट्र को बुद्धिमत्ता के साथ कार्य करने के लिए संगठित किया जा सकता है और भीड़तंत्र में से लोकतंत्र का विकास किया जा सकता है। (यंग, 22-9-1920, पृ. 3)

लोकतांत्रिक संस्था में हर कीमत पर सही कदम उठाने का साहस होना चाहिए। जो व्यक्ति लोगों की कमजोरीयों को हवा देता है वह अपना और लोगों का, दोनों का पतन करता है और उन्हें लोकतांत्रिक नहीं अपनी भीड़ के शासन की ओर ले जाता है। लोकतंत्र और भीड़तंत्र के बीच अंतर करने वाली रेखा प्रायः बड़ी महीन होती है, पर वह फौलाद से भी ज्यादा मजबूत होती है।

लोकतंत्र जीवन और प्रगति की ओर ले जाता है, जबकि भीड़तंत्र विशुद्ध मृत्यु की ओर। हमें अपने पतन का कारण अंततः अपने अंदर ही खोजना चाहिए, बाहर नहीं। यदि हम लोग संदेह और प्रलोभन के शक्तिकार न हुए होते तो दुनिया के सारे साम्राज्य मिलकर भी हमें पराधीन नहीं बना सकते थे। इसे सिर्फ चिस्टी-पिटी बात न समझें। अगर हम मौलिक तथ्यों को समझ लें तो हम सच्चाई और धैर्य के साथ व्यवहार कर सकेंगे और भीतर या बाहर से पैदा होने वाली हर कठिनाई का सामना कर सकेंगे। (हरर, 31-3-1946, पृ. 66)

सैन्यवाद

...लोकतंत्र और सेना तथा पुलिस पर निर्भरता में कोई मेल नहीं है। आप यह नहीं कह सकते कि यह एक जगह ठीक है और दूसरी जगह ठीक नहीं है। सेना से सहायता लेने पर आपके अंदर गिरावट आ जाएगी। लोकतंत्र में, मतदाता यदि किसी गुंडे को शासनाध्यक्ष चुन लेते हैं, तो या तो उन्हें अपने किए का परिणाम भोगना पड़ेगा या अगर आक्षेपकं कर हुई तो स्वागत की सहायता से मतदाताओं में परिवर्तन लाना होगा। यही लोकतंत्र है। (हरर, 12-1-1947, पृ. 488-89)

मैं लोकतंत्र और सैन्य भावना को एक-दूसरे का विरोधी मानता हूँ। लोकतांत्रिक व्यक्ति दुनिया के सामने अपने राज्य के शस्त्रों का प्रदर्शन नहीं करता, बल्कि दुनिया के लाभ के लिए उसे अपने राज्य का नैतिक बल उपलब्ध कराता है। (हरर, 13-7-1947, पृ. 233)
सरकारी या लोकप्रेरित आतंकवाद के बीच लोकतंत्र की भावना का विकास नहीं किया जा सकता | कई मामलों में सरकारी आतंकवाद की अपेक्षा लोकप्रेरित आतंकवाद लोकतंत्र की भावना के विकास का प्रबलतापूर्वक विरोध सिद्ध होता है | कारण यह है कि सरकारी आतंकवाद लोकतंत्र की भावना को दंड करता है जबकि जनप्रेरित आतंकवाद उसे नष्ठ ही कर देता है | (यंग, 23-2-1921, प. 59)

लोकतंत्र और अहिंसा

लोकतंत्र और हिंसा साथ-साथ नहीं चल सकते | जो राज्य आज नाम के लोकतांत्रिक हैं, उन्हें या तो खुल्लमखुल्ला सर्वसत्साम्य बन जाना होगा या, अगर वे सचमुच लोकतांत्रिक बनना चाहते हैं तो हिम्मत करके अहिंसक रूप धारण करना होगा | यह कहना निरंतर नहीं हो सकता कि अहिंसा पर आचरण केवल व्यक्ति कर सकते हैं, राष्ट्र कभी नहीं, जो कि व्यक्तियों से ही मिलकर बनते हैं | (हरै, 12-11-1938, प. 328)

सच्चा लोकतांत्रिक वह है जो विशुद्ध अहिंसक उपायों से अपनी स्वाधीनता की ओर उसके जरिए अपने देश तथा अंतः: सारी दुनिया की स्वाधीनता की रक्षा करता है | (हरै, 15-4-1939, प. 90)

सच्चा लोकतंत्र अथवा स्वराज झूठे और हिंसक साधनों का आश्रय लेकर कभी स्वाधीनता की कारण है जो अपने हर प्रकार के व्यक्तियों को देशनिकाला दे देना होगा | हम इसे व्यक्तिगत सत्तारूप नहीं कह सकते | यह सच्चा लोकतंत्र वह है जो सच्चा अशहंसा के अलावा और इनके प्रयोग का स्वाभाविक उपप्रयोग होता है | (यंग, 27-5-1939, प. 143)

मेरी लोकतंत्र की धारणा यह है कि इसमें सच्ची अशहंसा की भी अवसर उपलब्ध हों जो सच्ची अशहंसा का प्राप्ति को भी नहीं अवसर उपलब्ध होना चाहिए जो सच्ची अशहंसा के समस्त अवसर नहीं किया जा सकता | क्योंकि इनके प्रयोग का स्वाभाविक उपपरीण होगा कि आपको अपने हर प्रकार के विरोध को समाप्त करने के लिए दमनचकर चलना होगा या विरोधियों को देवनिकाला दे देना होगा | हम इसे कौशल्य सत्तारूप नहीं कह सकते | व्यक्तिगत सत्तारूप केवल विशुद्ध अहिंसा के बावरण में ही पतचगत हो सकती है | (हरै, 18-5-1940, प. 129)

मेरा विश्वास है कि सच्चा लोकतंत्र केवल अहिंसा का परिणाम हो सकता है | (गंगाग, 1942-44, प. 143)

...पूर्ण लोकतंत्र तब तक संभव नहीं है जब तक वह पूर्ण अहिंसा द्वारा समर्पित न हो | (हरै, 2-3-1947, प. 44)

लोकतंत्र : पूर्ण तथा पश्चिमी

पश्चिमी लोकतंत्र अगर पहले ही असफल नहीं हो चुका है तो परीक्षाधीन तो है ही | क्यों न भारत अपनी योग्यता का प्रत्यक्ष प्रदर्शन करके लोकतंत्र के सच्चे व्यक्तियों को विकसित करने का श्रेय लें ? भ्रष्टाचार और पाखंड लोकतंत्र
की अपरिहार्य उपज नहीं होनी चाहिए, जैसे कि निस्संदेह दिखाई दे रहे हैं; न परंपरां को लोकतंत्र की सच्ची कसौटी है। (प्रेस वक्तव्य, 17-9-1934)

मेरी राय में, पश्चिम में जो लोकतंत्र है, वह केवल नाम के लिए है। यह सही है कि उसमें सच्चे लोकतंत्र के बीज विद्यमान हैं। पर सच्चा लोकतंत्र तभी स्थापित हो सकता है जब सब प्रकार की हिंसा का त्याग कर दिया जाए और कदाचार का नामोनिष्ठ न रहे। ये दोनों चीजें साथ-साथ चलती हैं। सच पूछा जाए तो कदाचार हिंसा का ही एक रूप है। यदि भारत को सच्चे लोकतंत्र का विकास करना है तो उसे हिंसा या झूठ के साथ कोई समझौता नहीं करना चाहिए। (हरि, 3-9-1938, पृ. 24)

भारत सच्चे अर्थात हिंसारहित लोकतंत्र को विकसित करने का प्रयत्न कर रहा है। हमारे हथियार हैं: चरखे के रूप में व्यक्त होने वाला सत्याग्रह, ग्रामोद्योग, छू आछूत-निवारण, सांप्रदायिक सद्भावना, मद्यनिष्ठें और श्रमिकों का अहमदाबाद तरह का अहिंसक संगठन। इन्हें लिए सबा पैमाने पर प्रयास और लोक शिक्षा की आवश्यकता है। इन कार्यकलापों को चलाने के लिए हमारे पास बड़ी बड़ी एजेंसियां हैं। ये पूर्णतया स्वतंत्र हैं और निमंत्रण व्यक्ति की सेवा ही इनका पुरस्कार है। (हरि, 18-5-1940, पृ. 129)
73. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

कांग्रेस का अपक्ष

जब कांग्रेस में विवेक और नैतिक प्रभाव का स्थान गुंडागर्दी ले लेगी तो उसकी स्वाभाविक मृत्यु हो जाएगी, जो ठीक भी होगा। (हरर, 18-6-1938, पृ. 149)

कांग्रेस में फैली गंदगी को दूर करने के लिए केवल संकल्प के आवश्यकता है | लेकिन अगर कांग्रेस समितियों के अध्यक्ष उदासीन अथवा अकर्मण्य रहे तो भ्रष्टाचार से निपटना संभव नहीं होगा | जब नमक में से उसका जायका जाता रहेगा तो नमक में जायका कहां से आएगा ? (हरर, 22-10-1938, पृ. 299)

रोम का अपक्ष उसके पतन से पहले ही शुरू हो गया था | इसी तरह कांग्रेस, जिसका पोषण चारसे अधिक वर्षों तक देश के आता-से-आला दिमागों ने किया है, अपक्रम आरंभ होते ही एकदम नहीं टूट जाएगी | वस्तु: यदि समय रहते भ्रष्टाचार का इलाज कर लिया गया तो कांग्रेस के टूटने की नीबुल बिलकुल नहीं आएगी। (हरर, 28-1-1939, पृ. 444)

कांग्रेस और अहिंसा

कांग्रेस अपना प्रभाव तभी कायम रख सकती है जब वह अहिंसा का दामन न छोड़े | उसकी एकमात्र पूंजी उसका नैतिक प्रभाव है | कोई और स्थिति सांघातिक झगड़ों और रक्तपात को जन्म देकर सकती है। (हरर, 29-7-1939, पृ. 218)

अगर आपके दिल में तलवार हो और आप नाम अहिंसा का लें तो यह केवल पाखंड और बेईमानी ही नहीं बल्कि कायरतापूर्ण भी होगा। | ब्रिटिश सरकार के समक्ष हमें जिस अहिंसा का प्रदर्शन किया, वह कमजोर आदमी की अहिंसा थी | ऐसा न होता तो हमारे बीच यह तू-तू में में क्यों होती?

...कमजोर और नूपुस्क आदमी की नकली अहिंसा से अधिक भ्रष्ट करने वाली चीज़ कोई और नहीं है | अगर हमारे अंदर सच्ची अहिंसा होती तो हमारे सार्वजनिक जीवन में सहिष्णुता का प्रमुख स्थान होता | तब जितने मत होते, उतनी ही पार्टियों के लिए गुंजाइश रहती | तब, मतभेद बुद्धि की ख्याति स्वाधीनता का चिह्न होते, जो जीवन का निम्न है, दलीय कुचिकों और दलीय कलह का चिह्न न होते जिनका स्वाधीनता से कोई लेना-देना नहीं है। (हरर, 6-10-1946, पृ. 338)

बुनियादी लक्ष्य

कांग्रेस यदि कठिनाई के समय में लोकप्रिय न रह पाए तो वह लोकप्रिय संस्था नहीं कहलाएगी | अगर यह बेरोजगार और भूखे लोगों को काम न दे सके, अगर यह तूम्पमार से लोगों की रक्षा न कर सके या उन्हें उसका
मुकाबला करना न सिखा सके, अगर यह खतरे के वक्त लोगों की मदद न कर सके तो यह अपनी प्रतिशत और लोकप्रियता खो बैठेगी | (हर, 18-1-1942, पृ. 4)

हमारी पार्टी

कांग्रेस में केवल एक ही पार्टी हो सकती है, कोई दूसरी नहीं और वह है कांग्रेसियों की पार्टी | कहने का आशय यह नहीं है कि कांग्रेस में भिन-भिन राय रखने वाले व्यक्तियों या समूहों के लिए कोई स्थान नहीं है | मैं जड़ एकरूपता में विश्वास नहीं करता | प्रकृति के इस नियम का सभी व्यक्ति समकक्ष और स्वतंत्र पैदा होते हैं, शाब्दिक अर्थ नहीं लेना चाहिए | उदाहरण के लिए, सभी व्यक्ति एक-सी बुद्धि लेकर पैदा होते हैं, लेकिन समानता का यह सिद्धांत तभी सत्य हो सकता है जब अधिक बुद्धिमान लोग अपनी बुद्धि का इस्तेमाल दूसरों की कीमत पर अपनी तरक्की के लिए न करके अपने से कम बुद्धिमान लोगों की सेवा के लिए करेंगे | आज कांग्रेस में सभी तरह के लोग हैं.... | (हर, 6-10-1946, पृ. 338)

...सत्य-प्राप्ति के साथ ही कांग्रेसजन यह समझने लगे हैं कि सब कुछ उनकी कार है | एक अर्थ में तो यह सही है | लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम अनुशासन को ध्वंस बनाते हैं | अनुशासन और विनम्रता कांग्रेसजनों के लिए गौरव का विषय होना चाहिए | (हर, 1-6-1947, पृ. 176)

कांग्रेस दलीय कुचक्रों से ऊपर उठेगी और समुद्रे भारत की एकता और सेवा का प्रतीक बनेगी | (वही, पृ. 175)

पूर्ण स्वराज का लक्ष्य

कांग्रेस को, जो सबसे पुराना राष्ट्रीय राजनीतिक संगठन है और जिसने अनेक संघर्षों के बाद अहिंसक मार्ग पर चलते आए स्वतंत्रता प्राप्त की है, टूटने नहीं दिया जा सकता | यह तो राष्ट्र के साथ ही टूटेगी | कोई भी समापन संगठन या तो बराबर बढ़ता रहता है या फिर वह समाप्त हो जाता है | कांग्रेस ने राजनीतिक स्वतंत्रता तो हासिल कर ली है पर उसे अभी आर्थिक, सामाजिक और नैतिक स्वतंत्रता हासिल करनी है | राजनीतिक की अपेक्षा इन स्वतंत्रताओं को हासिल करना कठिन है, क्योंकि ये रचनात्मक हैं तथा उतना मज़ाक लोग करने वाली और देखने में उतनी शानदार नहीं हैं | सर्वसमावेशी रचनात्मक कार्य के लिए जनता के प्रत्येक सदस्य की ऊजाज का योग अपेक्षित है | कांग्रेस ने अपनी स्वतंत्रता के प्रारंभिक और आवश्यक पहलु को हासिल कर लिया है | लेकिन कठिन कार्य तो अब आएगा | लोकतंत्र की कठिन चढ़ाई के दौरान इसने अपरिहार्य रूप से ऐसे बेकार के गढ़ खड़े कर दिए हैं जिनसे भ्रष्टाचार पनपता है और ऐसे संस्थाएं खड़ी हो गई हैं जो केवल कहने के लिए ही लोकप्रिय तथा लोकतांत्रिक हैं | इस अपकारक और बेतुकी बढ़वार से किस तरह मुक्त हुआ जाए ?
संघटन
कांग्रेस को अपने सदस्यों का विशेष रजिस्टर रखना बंट कर देना चाहिए; इसमें कभी एक करोड़ से ज्यादा नाम दर्ज नहीं रहे और तब भी उन सभी सदस्यों की पहचान कर पाना आसान नहीं था। कांग्रेस का एक अज्ञात रजिस्टर भी था जिसमें लाखों-करोड़ों लोगों के नाम शामिल थे जिनकी कभी जरूरत नहीं पड़ सकती थी। अब कांग्रेस के रजिस्टर में उन सभी स्थी-पुरुषों के नाम शामिल माने जाने चाहिए जो देश की मतदाता सूचियों में दर्ज हैं। यह सुनिश्चित करना कांग्रेस का काम है कि इन सूचियों में कोई फर्जी नाम शामिल न हो पाए और कोई वैध नाम शामिल होने से छुट न जाए। कांग्रेस के अपने रजिस्टर में उन राष्ट्रसेवकों के नाम हों जो, कार्यकर्ताओं के रूप में, समय-समय पर उन्हें सीधे गए कामों को अंजाम देंगे।

देश के लिए यह दुर्भाग्य की बात है कि फिटहाल अधिकांश कार्यकर्ताओं नगरवासी हों जिनसे गांवों में जाकर गांवों के लिए काम करने को कहा जाएगा। लेकिन गांवों से अधिकांश संख्या में कार्यकर्ता भरती करने के प्रयास किए जाने चाहिए।

लोकसेवक
इन लोकसेवकों से अपेक्षा की जाएगी कि वे विधि के अनुसार परंपरागत अपने अड़ोस-पड़ोस के मतदाताओं की सेवा करें। और भी बहुत-से व्यक्ति और दल उन्हें अपनी और आकर्षित करने का प्रयास करेंगे। जिसका कार्य सर्वोत्तम होगा, वही उनका हादस जीतेगी। यही एक उपाय है जिससे कि कांग्रेस देश में अपनी अभिलिय कितु तेजी से गिरती हुई स्थिति को पुन: प्राप्त कर सकती है। अभी कल की बात है जब कांग्रेस अनजाने में ही राष्ट्र की सेवक थी, उसे खुदाई खिदमतकार अर्थत ईश्वर का सेवक कहा जाता था। अब उसे स्वयं अपने तथा दुनिया के समक्ष यह घोषित कर देना चाहिए कि वह केवल ईश्वर की सेवक है। न इसके कम, न ज्यादा। अगर वह सत्ता की भद्री उठा-पटक में उलझ गई तो एक दिन दिनाएं कि उसका अस्तित्व ही नहीं रहा है। ईश्वर का धन्यवाद है कि अब राजनीतिक क्षेत्र में कांग्रेस ही एकमात्र दल नहीं है।

हरों और कस्तों से शभन्न, अपने सात लाख गांवों के लिए भारत को अभी सामाजिक, नैतिक और आर्थिक स्वाधीनता हासिल करनी है। जब भारत अपने लोकतांत्रिक लक्ष्य की ओर प्रगति करेगा तो यह निश्चित है कि उसकी असैनिक शक्ति सैनिक शक्ति के ऊपर अपना वर्तमान स्थापित करने के लिए संघर्ष करेगी। उसे राजनीतिक पार्टियों और सांप्रदायिक संस्थाओं की गंधी प्रतियोगिता से परे।
रखना आवश्यक है | इस और ऐसे ही अन्य कारणों से, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी वर्तमान कांग्रेस संगठन को विपरीत करने का संकल्प करती है और एक लोक सेवक संघ की स्थापना का निश्चय करती है जिसके नियम नीचे लिखे अनुसार होंगे जिनमें समय की मांग को देखते हुए परिवर्तन करने का अधिकार संघ को होगा |

पंचायत
पांच वयस्क पुरुषों अथवा स्त्रियों की पंचायत को इकाई माना जाएगा | ये स्त्री-पुरुष ग्रामवासी या ग्राममोन्पुखी वृत्ति वाले लोग होंगे |

*कांग्रेस के इस नये रूप के बारे में गांधीजी का प्रस्ताव ‘हररजन’ में ‘हिज लास्ट विल एंड टेस्टामेंट’ शर्तक से प्रकाशित हुआ था |

दो निकटस्थ पंचायतें मिलकर एक कार्यकारी दल (रिकार्ज पार्टी) का रूप लेंगी जो अपने बीच से चुने गए एक नेता के अधीन कार्य करेगा |

ऐसी सी पंचायतें हो जाने पर उनके पचास प्रथम स्तर के नेता अपने बीच से एक द्वितीय स्तर का नेता चुनेंगे और यही प्रक्रिया आगे जारी रहेगी; इस दौरान प्रथम स्तर के नेता द्वितीय स्तर के नेता के अधीन कार्य करेंगे | दो-दो सी पंचायतों के समानांतर समूह तब तक बनते जाएंगे जब तक कि समूहों भारत में इनका जाल नहीं फैल जाएगा; पंचायतों का हर नया समूह प्रथम स्तर के नेता की तरह अपना द्वितीय स्तर का नेता भी चुनना जाएगा | द्वितीय स्तर के सभी नेता अपने-अपने क्षेत्र की और साथ ही, समूहे देश की सेवा करेंगे | द्वितीय स्तर के नेता जब आवश्यक समझे तो अपने बीच से एक प्रमुख का चुनाव कर सकेंगे जो, उनके प्रसाद पर्यंत, सभी समूहों का विनियमन करेगा और उन्हें आवश्यक आदेश देगा |

(लूक प्रांतों अथवा जिलों का अंतिम निर्माण अभी अनिश्चित की स्थिति में है इसलिए सेवकों के इस समूह को प्रांतीय अथवा जिला परिषदों में विभाजित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया है | जिस समय तक जितने समूह बन जाएंगे, उनके क्षेत्राधिकार में सारा देश होगा | ध्यान रहे कि सेवकों के इस निकाय के पास जो भी अधिकार अथवा शक्ति होगी वह उसे अपने स्वामी अर्थात समूहे भारत की खुशी-खुशी और विवेकपूर्वक सेवा करने से प्राप्त होगी |)

कार्यकर्ताओं की योग्यताएं |

(1) यह कार्यकर्ता आदतन हाथ से कते सूत अथवा ऑल इंडिया स्पिनर्स एसोसिएशन द्वारा प्रमाणित सूत से बने खादी के वस्त्र धारण करेगा | उसके लिए मद्यत्यागी होना आवश्यक है | यदि वह हिंदू है तो उसने तथा उसके परिवार ने छूआउत्त के सभी रूपों का सशय प्रयास कर दिया हो, उसे सांप्रदायिक एकता के आदर्श में विश्वास


हो, सभी धर्मों के प्रति समान श्रद्धा तथा आदर का भाव हो, तथा जाति, पंथ अथवा स्त्री-पुरुष के भेद-भाव के बिना सभी को समान अवसर दिए जाने के सिद्धांत में आशा हो।

(2) वह अपने क्षेत्र के प्रत्येक ग्रामवासी के व्यक्तिगत संपर्क में आपेक्षिकता देगा।

(3) वह ग्रामवासियों में से कार्यकर्ताओं की भरती करेगा, उन्हें प्रशिक्षण देगा और ऐसे सभी कार्यकर्ताओं का एक रजिस्टर रखेगा।

(4) वह अपने प्रतिदिन के काम का लेखाजोखा रखेगा।

(5) वह गांवों को इस प्रकार संगठित करेगा कि वे अपनी कृषि और दस्तकारी की सहायता से खाद्य-पूर्ण और आत्मनिःसंति में बन सकें।

(6) वह गांव के लोगों को सफाई और स्वास्थ्य-रक्षा की शिक्षा देगा और उनमें अस्वास्थ्य तथा बीमारी की रोकथाम के लिए सभी संबंध उपाय करेगा।

(7) वह हिंदुस्तानी तालीमी संघ द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार नयी तालीम के दर्जे पर गांव के लोगों की आजीवन शिक्षा की व्यवस्था करेगा।

(8) वह यह सुनिश्चित करेगा कि जिन लोगों के नाम मतदाता सूचियों में नहीं हैं, उनके नाम उनमें दर्ज हो जाएं।

(9) जिन लोगों ने अभी तक मतदान का अधिकार प्राप्त करने की योग्यता हासिल नहीं की है, उन्हें अपेक्षित योग्यता हासिल करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

(10) उपर्युक्त प्रयोजनों और इसमें समय-समय पर जोड़े जाने वाले अन्य कामों के लिए, लोक सेवक संघ द्वारा निर्धारित नियमों के अनुसार, स्वयं को प्रशिक्षित करेगा और योग्य बनाएगा।

रचनात्मक संगठन

संघ निम्नलिखित प्रयोजनों को अपने साथ संबंधित करेगा:

1. ए.आई.एस.ए. [आल-इंडिया स्पिनर्स एसोसिएशन],
2. ए.आई.बी.ए.आई. [आल-इंडिया विलेज इंडस्ट्रीज एसोसिएशन],
3. हिंदुस्तानी तालीमी संघ,
4. हरिजन सेवक संघ,
5. गोसेवा संघ।
वित्त
संघ अपने ध्येय की पूर्ति के लिए ग्रामवासियों और दूसरे लोगों से धनराशि एकत्र करेगा; इसमें विशेष बल निर्धार
व्यक्तियों के योगदान पर दिया जाएगा। (हरि, 15-2-1948, पृ. 32)
ए. लोकप्रिय मंत्रिमंडल

मंत्रिमंडलों का रचना

विभिन्न हितों की संसूचि के लिए मंत्रियों के पद बनाना निश्चित रूप से गलत होगा | यदि मैं प्रधानमंत्री होऊं और मुझे इस तरह के दावों पर परिशोध किया जाए तो मैं तो अपने निर्वाचकों से कह दूं कि वे मेरे स्थान पर दूसरा नेता चुन लें | इस तरह के पद तदस्त्र भाव से धारण किये जाने चाहिए, ऐसा न हो कि आप उनसे चिपक ही जाएं | ये कांटों के ताज होने चाहिए, प्रतिस्पर्द प्राप्त करने के साधन कदाचं नहीं | पदों को प्राप्त करते समय दृष्टि यह होनी चाहिए कि ये अपने लक्ष्य तक पहुंचने की हमारी गति को तीव्र करें |

यह बड़ा दुर्भावपूर्ण होगा यदि स्वार्थों और पप्पुरभ ढूंढ़ समर्थकों को इस बात की छुट मिल जाए कि वे प्रधानमंत्री के ऊपर स्वयं को धोपकर राष्ट्र की प्रगति को अवरुद्ध कर सकें | यदि उन लोगों की तसल्ली करना आवश्यक है जिसने अंतः मंत्रियों का शक्ति प्राप्त होनी है तो यह कहीं अधिक आवश्यक है कि उनसे समझदारी, असंवेदित निश्चित और अनुबोध रूप से धारण किया जाए | और अंत में, असली कसोटी यह है कि जिन्हें मंत्रिपद दिया जाए, ये पार्टी के उन सदस्यों को भी पसंद हों जिनके हाथ में प्रधानमंत्रियों का नामांकन है | कोई प्रधानमंत्री एक क्षण के लिए भी अपनी पदस्थत के स्थित अवध एवं वृत्त का पार्टी के ऊपर नहीं धोप सकता | यह प्रथाम इसलिए है कि पार्टी को उसकी योग्यता, लोगों के विषय में उसकी जानकारी, तथा उसके अनु िक गुणों पर पूरा-पूरा भरोसा है | (हरिर, 7-8-1937, पृ. 204 )

मंत्रियों और कांग्रेस टिकट पर निर्विचित होकर आने वाले विधायकों को निर्भरता-पूर्वक अपने कर्त्त्व का पालन करना चाहिए | उन्हें अपनी सीटों अथवा पदों के चले जाने का जोखिम उठाने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए | कांग्रेस की प्रतिष्ठा और शक्ति को बढ़ाने की योग्यता के अलावा इन पदों और विधानमंडलों की सीटों का और कोई महत्व समझना है | और चूंकि ये दोनों बातें पूर्ण सत्य, सार्वजनिक और नजी कैदी अवधारणाओं पर निर्भर करती हैं, अतः यह समझना चाहिए कि कोई भी नैतिक चूक कांग्रेस को चोट पहुंचाएगी | यह अहिंसा का अनिवार्य नितिहार नहीं है | (हरिर, 23-4-1938, पृ. 88 )

इसमें संदेह नहीं कि मंत्री अपनी पार्टी का हित-संवर्धन करता है, लेकिन यह कभी समूहों राष्ट्र की कीमत पर नहीं किया जा सकता | सच पूछा जाए तो वह कांग्रेस की भलाई उसी सीमा तक कर सकता है जिस सीमा तक देश की भलाई कर सकता है | क्योंकि वह जानता है कि वह अगर विदेशी शासन का मुकाबला नहीं कर सकता तो राष्ट्र के अंदर के अपने विरोधियों का भी नहीं कर सकता | और चूंकि असेंबली एक ऐसा स्थान है जहां सभी समुदाय देश में मिल बैठने के लिए बाध्य है, अतः वह यदि वहां अपने विरोधियों के अपने पक्ष में कर सके तो निर्णय वहां लिए जाएगे, उनका प्रतिरोध नहीं होगा | यदि असेंबली को....राष्ट्र की समस्याओं को सुलझाने का मंच
मान लिया जाए तो...सांप्रदायिक एकता सहित राष्ट्र की सभी समस्याएं सुलझाई जा सकती हैं... (हरि, 16-7-1938, पृ. 184)

सादगी में भी एक सौदर्य तथा कला है | साफ-सुधर और गरीबामय जीवन जीने के लिए धन की आवश्यकता नहीं होती | ठाठ-बाट और आडंबर से प्रायः कुरुचि ही झलकती है | (हरि, 17-7-1937, पृ. 180)

पद-धारण ऐसी चीज़ है जिससे या तो योग्यता की प्रतिश्रवण में वृद्धि होती है या फिर वह पूरी तरह मिली मिल जाती है | अगर प्रतिश्रवण से पूरी तरह हाय नहीं थे बैठना है तो मंत्रियों और विधायकों को अपने निजी और सार्वजनिक आचरण पर पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए | सीजर की पल्ली की तरह उन्हें भी सभी संदेहों से परे रहना होगा |

उन्हें अपने या अपने रिश्वदारों अथवा मित्रों के निजी लाभ के लिए कोई काम नहीं करना चाहिए | यदि रिश्वदारों अथवा मित्रों की कहीं नियुक्ति हो तो वह केवल इसी आधार पर हो कि वे उपलब्ध उम्मीदवारों में सर्वश्रेष्ठ थे और उनका बाजार-मूल्य सरकार में उन्हें मिलने वाले पारिश्रमिक से सदेव अधिक होना चाहिए | (हरि, 23-4-1938, पृ. 88)

मंत्रियों के लिए सहिता

कांग्रेस सरकार में प्रत्येक पद केवल सेवा की भावना से धारण किया जाना चाहिए; उसमें निजी लाभ की आशा का लेश भी नहीं होना चाहिए | (हरि, 3-9-1938, पृ. 242)

अगर कांग्रेस का जनता का संगठन बने रहना है तो उसके मंत्री साहब लोगों की तरह से नहीं रह सकते और न वे सरकारी काम के लिए मिलने वाली सुविधाओं का निजी काम के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं | (हरि, 29-9-1946, पृ. 333)

मंत्रियों को जनता की आलोचना को सहन करना सीखना चाहिए | उन्हें छोटी-छोटी आलोचना तक की अविचलित भाव से ग्रहण करना चाहिए....आलोचकगण जनता के इन सेवकों से अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक सादगी, साहस, ईमानदारी और परिश्रमशीलता की आशा रखते हैं... (हरि, 21-9-1947, पृ. 325)

हमारे मंत्री जनता के हैं और जनता में से लिये गए हैं | उन्हें यह नहीं समझ बैठना चाहिए कि उन्हें उन अनुभवी लोगों से अधिक ज्ञान है जो मंत्रिपद पर आसीन नहीं हैं | (हरि, 16-11-1947, पृ. 409)

नेताओं के हाथ में सरकार की बागडोर है और खर्च करने के लिए करोड़ों रुपए हैं | अत: उन्हें सतर्क रहना चाहिए | उन्हें विनिमय का व्यवहार करना चाहिए | लोग प्रायः सहज भाव से वापसी करके उनसे मुकस्त रहते हैं | मंत्रियों को कभी ऐसे वापसी करने का चाहिए जिन्हें वे पूरा न कर सकते हों | एक बार जो वापसी कर लिया जाए, वह हर कीमत पर पूरा किया जाना चाहिए | (हरि, 14-12-1947, पृ. 467)
मंशत्रगण जनता के सेवक हैं वे जनता की स्पष्ट इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकते जनता जितने दिन चाहे, उससे एक दिन भी अधिक वे अपने पद पर नहीं रह सकते | (हरि, 4-1-1948, पृ. 495)

विधानमंडल

आपके, विधानमंडलों की उपयोगिता पर विचार करें विधानमंडल सरकार के दोषों को उजागर कर सकते हैं, यह उतने महत्वपूर्ण सेवा नहीं है | सबसे सेवा तो वह करता है जो लोगों को यह बताता है कि वे सरकार के दोषों का ज्ञान होने के बावजूद उसके शिकार बने हुए हैं और उन्हें सिखाता है कि सरकार के अन्यायों का विरोध किस तरह किया जाए | यह अनिवार्य सेवा विधानमंडलों के सदस्य प्रदान नहीं कर सकते, क्योंकि उनका काम तो लोगों को इस बात के लिए प्रेरित करना है कि वे अन्यायों के निराकरण के लिए उनका सहारा लें।

विधानमंडलों की दूसरी उपयोगिता अवांछनीय कानूनों को पास होने से रोकना है और ऐसे विधेयक प्रस्तुत करना है जो लोकोपयोगी हों और जिनसे रचनात्मक कार्यक्रम को अधिकाधिक सहायता मिल सके।

विधानमंडलों से अपेक्षा की जाती है कि वे जनता की इच्छा का पालन करें इन निकायों में भाषणकला का थोड़ा-बहुत ताकतवर महत्व हो सकता है, यह उन्हें आवश्यकता नहीं है अवश्यकता तो उन विशेषज्ञों की है जिन्हें व्यावहारिक ज्ञान है और उन लोगों की है जो इन विशेषज्ञों को अपेक्षित समर्थन प्रदान कर सकें | जो संगठन सेवा के लिए बना है और जिसने पदवियों और इस प्रकार की अन्य तुल्य चीज़ों का बहिष्कार किया हुआ है, उनकी सदस्यता के लिए उम्मीदवार को अगर प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाए तो यह हानिप्रद होगा | यदि इस भावना ने जड़ पकड़ ली तो इससे कांग्रेस की बदनामी होगी और अंततः यह उसकी बर्बादी का कारण सिद्ध होगी।

यदि कांग्रेसजनों में इतनी गिरावट आ गई तो भारत के करोड़ों कंकालों को नवजीवन कौन देगा? भारत और संसार किसकी ओर आशा-भरी दृष्टि से देखें? (हरि, 17-2-1946, पृ. 13)

लोकप्रिय मंत्रिमंडल विधानमंडलों के प्रति उत्तरदायी होते हैं और उनकी सहमति के बिना कोई काम नहीं कर सकते | लोकप्रिय विधानमंडलों का प्रत्येक सदस्य अपने मतदाताओं के प्रति उत्तरदायी होता है | अतः जनता का प्रतिनिधित्व करने वाले मतदाता को अपने ही द्वारा बनाई सरकार की आलोचना करने के पहले अच्छी तरह सोच-विचार कर लेना चाहिए।

इसके अलावा, लोगों की एक बुरी आदत ध्यान में रखनी चाहिए | वे किसी तरह का कोई कर देना नहीं चाहते | सरकार अच्छी हो तो करदाता को अपने धन के बदले पूरा प्रतिफल मिल जाता है | नगरों में दिया जाने वाला जल-कर इसका एक उदाहरण है | कोई करदाता इतनी साधारण धनराशि से पानी की निजी व्यवस्था नहीं कर
सकता | लेकिन इसके बावजूद लोग इस तरह के कर देने से भी कतराते हैं, हालांकि वे जनता की इच्छा से ही लगाए जाते हैं।

यह सही है कि सभी करों से मिलने वाले लाभ को इस तरह सिद्ध नहीं किया जा सकता जिस तरह ऊपर दिए गए जल-कर के उदाहरण में संबंध है | लेकिन जैसे-जैसे समाज का आकार बढ़ता है और सेवा का क्षेत्र विस्तृत होता है, हर करदाता को यह समझना कठिन होता जाता है कि किसी कर विशेष से उसे क्या प्रतिफल मिला | लेकिन यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि, कुल मिलाकर, करों से होने वाली आय पूरे समाज के हितार्थ व्यय की जानी चाहिए | यदि ऐसा न हो तो यह तर्क नहीं टिक सकता कि कर जनता की इच्छा से लगाए गए हैं | (हरै, 8-9-1946, पृ. 293)
75. मेरे सपनों का भारत

हिंदू-मुस्लिम एकता और अहिंसक उपायों अर्थात विश्वदृढ़ आत्मियां के जरिए सची स्वाधीनता और आत्माभिज्ञता हासिल करके भारत वर्तमान अंधकार से बाहर निकलने का मार्ग दिखा सकता है | (यंग, 6-10-1920, पृ. 4)

अगर जनता की आवाज ईश्वर की आवाज है तो उसमें ईमानदारी, वीरता, सौम्यता, विनम्रता और पूर्ण आत्मियां की धनन होनी चाहिए | (यंग, 19-11-1925, पृ. 400)

मेरा विश्वास है कि कोई चीज स्थिर नहीं रहती | मानव प्रकृति का या तो उक्तत होता है या फकर, अपक्तत | हम आशा करें कि भारत में इसका उक्तत हो रहा है | अन्यथा भारत और संभवत: पूरी दुनिया में प्रलय हो जाएगी |....

स्वतंत्र भारत विश्व के सम्मुख शांति का पाठ प्रस्तुत करेगा या घृणा और हिंसा का जिससे दुनिया पहले ही बुरी तरह त्रस्त है (यंग, 6-10-1920, पृ. 4)

यदि संपूर्ण भारत प्रेम के इस शांत नियम को अंगीकार कर ले तो वह समूचे विश्व का निर्विवाद नेता बन जाएगा....मैं केवल यह कहना चाहता हूँ कि हमें विवेक के अतिरिक्त और किसी की बात नहीं माननी चाहिए (वही, पृ. 181)

नया भारत

मैं केवल आशा लगाएं हूँ और प्रार्थना कर रहा हूँ...कि एक नये और स्वस्थ भारत का उदय होगा जो पश्चिम की सभी बीभत्स बातों की घटिया नकल करने वाला एक युद्धप्रिय राष्ट्र नहीं होगा, अपितु ऐसा नया भारत होगा जो पश्चिम की उक्रूण बातों को सीखेगा और केवल एशिया तथा अफ्रीका ही नहीं बल्कि सारी दुनिया के लिए आशा की किरण बनेगा |

मैं मानता हूँ कि जिस तरह आज हम सेना और नंगे पशुबल से जुड़ी तमाम बातों का आश्रय लेते हैं, उसे देखते हुए ऐसी आशा लगाना व्यर्थ है...फिर भी, पश्चिम की तड़क-टड़क की झूठी नकल और उन्माद के बावजूद, मैं और भारत के दूसरे बहुत-से लोगों के मन आशा की इस दौर से बंधे हैं कि भारत इस मरण-नृत्य से बच निकलेगा और 1915 से लेकर बरीस वर्ष तक उसने, आधा-अधूरा ही सही पर, अहिंसा का जो प्रशिक्षण लिया है, उसके फलस्वरूप वह जिस उंचे नैतिक आसन पर बैठने का हकदार है, उसे अवश्य ग्रहण करेगा | (हरं, 7-12-1947, पृ. 453)

‘पृथ्वी पर स्वर्ग’

जब मैंने 1896 में आगरे और दिल्ली के किले देखे थे तो उनमें से किसी में एक दरवाजे के ऊपर एक शेर खुदा देखा था जिसका अनुवाद है : ‘यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है, तो वह यहाँ है, यहाँ है, यहाँ है |’ अपनी सारी शान के
बावजूद मुझे वह किला स्वर्ग नहीं लगा था | पर मुझे खुशी होगी अगर पाकिस्तान के सभी प्रवेशद्वारों पर इंसाफ के साथ उपर्युक्त शेर खुदा हो | ऐसे स्वर्ग में, बाहर वह भारत में हो या पाकिस्तान में, न कोई कंगाल होगा न भिखारी, न ऊंच न नीच, न लखपति न अशभूखा कर्मचारी, न मादक पेप, न नशीली दवाइयां | वहां जो सम्मान पुरुषों को प्राप्त होगा वही स्लियों को भी दिया जाएगा, स्त्री-पुरुषों की पवित्रता और शुद्धता की सावधानीपूर्वक रक्षा की जाएगी, वहां अपनी पत्नी के अतिरिक्त हर स्त्री को, सभी धर्मविलंबी, उसकी आयु के अनुसार माता, बहिन या बेटी मानकर व्यवहार करेंगे, वहां छूआछूत का नामोनिशान नहीं होगा और सभी धर्मों को समान आदर की दीड़ से देखा जाएगा | वहां सभी लोग रोटी कमाने के लिए प्रसन्नतापूर्वक और स्वेच्छा से श्रम करने में गौरव का अनुभव करेंगे |  (यंग, 18-1-1948, पृ. 526)
76. वापस गांवों की ओर

सच्चा भारत

मेरा विश्वास रहा है और मैंने अनेक बार यह बात दोहराई है कि भारत उसके शहरों में नहीं बसता, बल्कि उसके 7 लाख गांवों में बसता है | हम नगरवासी यह समझते हैं कि भारत नगरों में बसता है और गांव केवल हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए हैं | हमने कभी यह जानना का कष्ट नहीं उठाया है कि उन निर्धन ग्रामवासियों के पास खाने और पहनने के लिए पर्याप्त व्यवस्था है अथवा नहीं और उनके पास धूप और वर्षा से अपनी रक्षा करने के लिए कोई आश्रय-स्थल भी है या नहीं | (हरिर, 4-4-1936, पृ. 63)

अब तक गांव वालों ने हजारों की संख्या में अपने जीवन की बल्दी है ताकि हम नगरवासी जीवन रह सकें | अब उनके जीवन के लिए हमको अपना जीवन देना का समय आ गया है | लेकिन इन दोनों के बीच मौलिक भेद है | ग्रामवासी ने अनजाने और अनचाहे अपने प्राणों की आहुशत दी है | उनके इस विवेक बलिदान से हम नगरवासी पतित हुए हैं | अब यदि हम जान-ज्ञानक हों तो इससे हमारा और समूचे राष्ट्र का उदािीकरण होगा | यदि हम एक स्वाभीन और आस्मानी राष्ट्र के रूप में जीवन रहना है तो हम इस आवश्यक ल्याग से पीछे नहीं हटना चाहिए | (यंग, 17-4-1924, पृ. 130)

गांव और शहर

शहर अपनी देखभाल करने में स्वयं समथक हैं | इसलिए हम गांवों की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है | हमें उनके पूर्वग्रहों, अंधविश्वासों, संकीर्ण देखिकोण आदि से मुक्त करना है | और इसका इससे अंध और कोई उपाय नहीं है कि हम उनके बीच में जाकर रहें, उनकी खुशियों और गमों में भाग लें और उनके बीच शिक्षा और उपयोगी जानकारी का प्रसार करें | (यंग, 30-4-1931, पृ. 94)

मैंने पाया है कि नगरवासी ने आम तौर पर ग्रामवासी का शोषण किया है | सच पूर्वजाते तो वह निर्धन ग्रामवासी की परवरिश पर जीता आया है | बहुत-से अंग्रेज अधिकारियों ने भारतवासियों की दशा के बारे में लिखा है | लेकिन जहां तक मेरी जानकारी है, किसी ने यह नहीं कहा है कि भारत के ग्रामवासी के पास अपनी प्राणरक्षा के लिए आवश्यक साधन उपलब्ध है | इसके विपरीत, उन्होंने यह सवीकार किया है कि अधिकांश जनसंख्या लगभग भूखियों मरने की स्थिति में रह रही है और 10 अन्तर्भाज लोगों को तो आध-पेट ही भोजन मिल पाता है और करोड़ों लोग ऐसे हैं जिन्हें गंदे नमक, मिच्च और पत्तियों विके हुए चावल या भूने अन्न पर ही जीवन निर्वाह करना पड़ता है।

आप सच मानिए कि आगर हमें से किसी को यह खाना खाना पड़े तो हम एक महीने से अधिक जीवित नहीं रह पाएंगे या अपनी मानसिक क्षमताएँ खो बैठेंगे | फिर भी हमारे ग्रामवासी इस जीवन को जी रहे हैं | (हरिर, 4-4-1936, पृ. 63-64)
किसान

आप भारतीय किसान से बात करना शुरू कीजिए, जैसे ही वह अपना मुंह खोलता है, उससे बुद्धिमत्तापूर्ण बातें निकलनी आरंभ हो जाती हैं | ऊपर से गंवार दिखाई देने पर भी उसके अंदर आप आध्यात्मिकता का गहरा सागर सागर पाएंगे | मैं इसी को संस्कृति कहता हूँ - यह बात आपको पानिम में नहीं मिलेगी | आप यूरोप के किसी किसान से बात करने की कोशिश कीजिए तो आप देखेंगे कि उसे आध्यात्मिक बातों में कोई दिलचस्पी ही नहीं है | जहां तक भारतीय क्रांतवासी का संबंध है, उसके गंवारपन की पपड़ी के नीचे धर्म का उत्साह आ रहा है | इसकी यह पपड़ी उतार दीशजए, उसकी जमाने से चली आ रही गरीबी और निरक्षरता को हटा दीजिए तो आप आपके अंदर निरक्षरता का गहरा सागर पाएंगे | मैं इसी को संस्कृत कहता हूँ - यह बात आपको पश्चात में नहीं शमलेगी | आप क्रांतवासी के शक्ति से बात करने की कोशिश कीजिए तो आप देखेंगे कि वे क्रांति की बातों में कोई दिलचस्पी ही नहीं | (हरी, 28-1-1939, पृ. 439)

हमारी जनसंख्या के 75 प्रतिशत से भी अधिक लोग खेदित हैं...लेकिन आगर हम उनके श्रम के लगभग पूरे प्रतिशत से विचित्रर कर देते हैं तो यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे अंदर उत्साह का कोई उत्साहनीय भावना विद्रोही है | (स्पीरा, पृ. 323)

जब हमारे नगर गांवों से प्राप्त शक्ति और पोषण के बदले उन्हें प्रभाव प्रदान करना अपना कर्तव्य मान लेंगे और अपने स्वास्थ्यवश्न उनका शोषण बंद कर देंगे तभी नगरवासी ने उनके श्रम को अपना व्यवसाय मान लेंगे और उनका रूप होना चाहए | (हरी, 23-6-1946, पृ. 198)

....मैं जानता हूँ कि अगर भारत को निर्मल विचारों पर आधारित निर्मल कर्म के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करना है तो ईश्वर बड़े लोगों की बुद्धि को चक्रा देगा और गांव वालों को अपनी बात उस रूप में रखने की शक्ति देगा जिस रूप में उसका रखा जाना उचित है | (हरी, 28-7-1946, पृ. 236)

भारत गांवों से मिलकर बना है, लेकिन हमारे प्रबुद्ध वर्ग ने उनकी उपेक्षा की है...गांवों का जीवन नगर के जीवन की नकल या उसका पुंछत्य नहीं होना चाहिए | आपको उड़ाए कि वे गांवों की जीवन-पद्धति को अपनाएं और गांवों के लिए अपनी जीवन दें | (हरी, 3-11-1946, पृ. 381)
हमारा कर्तव्य

हमें उन ग्रामवासियों के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए जो अपनी बुद्धि और स्वतंत्रता के उपर कड़ी धूप सहते हुए घोर परंपरा करते हैं और यह देखना चाहिए कि जिस पोखर में वे नहाते हैं, अपने कपड़े-बर्तन धोते हैं और उनके पशु पानी पी और तैरते रहते हैं, क्या हम उनका पानी पी सकते हैं? जब तक यह नहीं होगा तब तक हम सब रूप में अपने देश की जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाएं और निश्चय जानिए कि वे भी हमारी हर बात को नहीं सुनेंगे। (यंग, 11-9-1924, पृ. 300)

हमें आदर्श ग्रामवासी बनना है, ऐसे ग्रामवासी नहीं जिनके विचार खंडकला के विषय में बड़े बिच्छिन्हों या कोई विचार ही न हो और जिन्हें इस बात का कोई ध्यान ही न हो कि वह क्या खाते हैं और कैसे खा रहे हैं। हमें उनमें से अधिकांश की तरह यह नहीं करना है कि किसी भी तरह पका लिया, कैसे ही खा लिया और किसी भी तरह रह रहे हैं। हमें उनको यह बताना है कि आदर्श भोजन क्या है। हमें केवल पसंदगी और नापसंदगी की बात ही नहीं करनी है, बल्कि उन पसंदगियों और नापसंदगियों की जड़ तक भी जाना है।

हमें ग्रामवासियों को यह बताना है कि वे बिना किसी विशेष खर्च के अपने उपयोग की साग-सब्लब्जयां पैदा कर सकते हैं और स्वस्थ जीवन बिताकर सकते हैं। हमें उन्हें यह भी बताना है कि सब वे पकाते हैं तो उनके अधिकांश विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

इसका केवल एक ही उपाय है कि हम ग्रामवासियों के बीच में जाकर बैठें और उनके संरक्षकों के रूप में नहीं बल्कि पूरी आशा के साथ अपने सभी आग्रहों और पक्षपातों को भूलकर उनके मेहतरों, पूर्वरुत्सरों और सेवकों के रूप में काम करें। हमें एक श्रीरक्षण के लिए स्वराज की बात भूल जानी चाहिए और हमें स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद भी निश्चय जाने चाहिए कि हम करदम पर आलक्षित करती हैं। उनके अपनी ज्ञान रहने दीजिए। इन बड़ी समस्याओं से निष्कर्षितके के लिए बहुत लोग हैं। हम गांव के इस छोटे-से काम को हाथ में लेना चाहिए जो अब नितांत आवश्यक है और हमारे अपने लक्ष्य प्राप्त करने के बाद भी आवश्यक रहेगा। सच पूछा जाए तो गांव के काम में सफलता प्राप्त होने से हम अपने लक्ष्य के और भी निकट पहुंच जा सकते हैं। (हरिर, 16-5-1936, पृ. 112)
ग्राम आंदोलन

ग्राम आंदोलन जिस प्रकार ग्रामवासियों के लिए एक शिक्षा है उसी प्रकार यह नगरवासियों के लिए भी है | ग्राम-विकास करने के लिए शहरों से जो कार्यकर्ता आए उन्हें अपने अंदर गांवों की मानसिकता का विकास करना चाहिए और ग्रामवासियों की तरह जीवनयापन की कला सीखनी चाहिए | इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वे ग्रामवासियों की तरह भूखे रहने लगे, लेकिन इसका आशय यह अवश्य है कि उन्हें अपने जीवन की पुरानी पद्धति में आमूल परिवर्तन करना चाहिए | (हरि, 11-4-1936, पृ. 68)

स्वाधीनता की जो तस्वीर मेरे मन में है उसमें ग्राम समुदाय को इकाई माना जाएगा | स्वाधीनता की अधिरचना ग्राम इकाई के ऊपर खड़ी नहीं की जाएगी जिससे कि वे 40 करोड़ लोग कुचल न जाएं जो इस देश का आधार हैं.... |

ग्राम इकाई की जो धारणा मैंने बनाई है उसके अनुसार वह एक सुदृढ़ इकाई होगी | मेरी कल्पना के ग्राम में लगभग 1000 की आबादी होगी | यदि ऐसी इकाई का संगठन आत्मनिर्भरता के आधार पर किया गया तो वह बहुत ही अच्छा परिणाम प्रदर्शित कर सकती है | (हरि, 4-8-1946, पृ. 251,252)

आज हमारे सामने खतरा यह है कि कहीं हम अपने हाथों का इस्तेमाल करना न भूल जाएं | यदि हम यह भूल गए कि जमीन कैसे खोदी जाती है और मिट्टी की देखभाल किस तरह की जाती है तो समझिए हम स्वयं को भूल गए | यदि आप यह समझते हैं कि केवल शहरों की सेवा करके ही आप अपने मंत्री-पद को सफल सिद्ध कर सकते हैं तो आप यह भूलते हैं कि भारत वस्तुत: अपने 7 लाख गांवों में बसता है | आदमी को सारी दुनिया मिल जाए, लेकिन बदले में उसे अपनी आत्मा दे देनी पड़े तो उसके पास बचा ही क्या? | (हरि, 25-8-1946, पृ. 282)
77. समग्र ग्राम सेवा

सच्चा भारत उसके 7 लाख गांवों में बसता है | यदि भारतीय सभ्यता को एक स्थायी विश्व व्यवस्था के निमित्त में अपना पूरा-पूरा योगदान करना है तो गांवों में बसने वाली इस विशाल जनसंख्या की...फिर से जीना सिखाना होगा | ( हरी, 27-4-1947, पृ. 122)

आज हमारे गांव जिन तीन बीमारियों के चंगूल में हैं, वे हैं : (i) सामूहिक खराबत का अभाव, (ii) अपर्याप्त आहार, (iii) ज़हाड़ा.... | ग्रामवासियों को स्वयं अपने कल्याण में रुचि नहीं है | जो सफाई के आधुनिक तरीकों की खूबियां नहीं देख पाते | वे अपने खेतों को जोतने या अरसे से चले आ रहे मेहनत के कामों के अलावा कोई और काम करना नहीं चाहते | यह कठिनाइयों वास्तविक और गंभीर है | तब तक हमें इनसे घबराना नहीं चाहिए |

हमें अपने ध्येय में अदभुत आस्था होनी चाहिए | हमें लोगों के साथ कल्याण से पेश आना चाहिए | अभी हम स्वयं ही ग्राम-कार्य में नौसिखिये हैं | हमें पुरानी बीमारियों का इलाज करना है | अपने हमें ध्येय और अध्यात्मिक होना तो हम बड़ी-बड़ी कठिनाइयों को पार कर सकेंगे | हम उन परिवारिकों की तरह से हैं जिनें अपने रोगियों को इससे छोड़कर नहीं चले जाना चाहिए कि वे असाध्य रोगों से ग्रस्त हैं | ( हरी, 16-5-1936, पृ. 111-12)

गांव बहुत लम्बे समय से उन लोगों की उपेक्षा के शिकार रहे हैं जो शिक्षित हैं | शिक्षित लोग शहरों में जा बसे हैं | ग्राम आंदोलन गांवों के साथ स्वस्थ संपर्क स्थापित करने का एक प्रयास है जिसके लिए हम लोगों को गांव में जाकर बसने के लिए प्रेरित करना है | जिनमें सेवा की उत्कट भावना है और जो ग्रामवासियों की सेवा में आत्माभिमान का सुख अनुभव करते हैं.... | जो लोग सेवा की भावना से गांवों में जाकर बस गए हैं, वे अपने सामने आने वाली कठिनाइयों से घबराये नहीं हैं | वे वहां जाने से पहले ही जानते थे कि उन्हें ग्रामीण भारत की रुखाई सहित अनेक कठिनाओं का सामना करना पडेगा | इसलिए गांवों की सेवा वही लोग कर सकेंगे जिनें अपने में और अपने ध्येय में आस्था है |

कार्यकर्ता

लोगों के बीच रहकर सच्चा जीवन विद्वान अपने आप में एक पदार्थ पाठ है | इसका अपने आसपास के वातावरण पर प्रभाव अवश्य पड़ना चाहिए | कठिनाइयों शायद यह है कि हमारे युवाजन सेवा की भावना के बगैर ही केवल जीविकोपार्जन के लिए गांवों में गए हैं | मैं मानता हूँ कि जो लोग धनोपार्जन के विचार से गांवों में जाते हैं, उनके लिए वहां कोई आकर्षण नहीं है | यदि सेवा की प्रेरणा नहीं है तो ग्रामीण नवीनता की अनुभूति समाप्त होते ही नीरस लगने लगेगा | गांवों में जाने वाले युवकों को ठोंड़ी-सी कठिनाई आते ही अपने ध्येय को छोड़ नहीं देना चाहिए | प्रेरणपूर्वक प्रयास करने से सिद्ध हो
जाएगा कि गांवों के लोग शहर के लोगों से ज्यादा भिन्न नहीं हैं और उन पर आपके प्रेम और उनकी समस्याओं की ओर ध्यान दिये जाने का अनुकूल प्रभाव अवश्य पड़ेगा।

यह निष्ठुर रूप से सही है कि गांवों में आपको देश के महान नेताओं से संपर्क के अवसर नहीं मिल पाएंगे। लेकिन ज्यों-ज्यों ग्राम मानसिकता में वृद्धि होगी त्यों-त्यों नेताओं को भी गांवों का दौरा करना आवश्यक प्रतीत होने लगेगा और वे गांवों के अधिकारी संस्थाओं में आएंगे। इसके अलावा, आप आपको महान पुरुषों का सत्संग चाहिए तो आप चातन्, रामायण, तुलसीदास, कवि, नानक, दादू, तुकाराम, तिरुवल्लुवर आदि अनेक जाने-माने महापुरुषों की रचनाओं को पढ़कर उसका सुख प्राप्त कर सकते हैं। इनके अलावा भी अनेक संत हुए हैं जो इनके समान प्रशस्त और पवित्र आत्मा थे।

साहित्य

कठिनाई अपने मन को स्थायी मूल्यों को प्राप्त करने के अनुकूल बनाने की है। यदि हमें राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों से संबंधित आधुनिक विचारों का अध्ययन करना है तो हमारी उत्सुकता को शांत करने के लिए साहित्य उपलब्ध है। लेकिन मानता हूँ कि जितनी सरलता से धार्मिक साहित्य उपलब्ध है, उतनी सरलता से आधुनिक साहित्य उपलब्ध नहीं है। संतों ने अपने जनता के लिए लिखी और उपदेश किया था। अभी आधुनिक विचारों का आम जनता के समझने योग्य भाषा में अनुवाद करने की परंपरा ठीक से शुरू ही हुई है। लेकिन समय के साथ-साथ इसमें नगदी अवश्य होगी।

अतः मैं युवकों को परामर्श द्वारा कि वे...हिम्मत न हारें और अपने प्रयास जारी रखें तथा अपनी उपस्थिति से गांवों को रहने योग्य और आकर्षक बनाएं। यह काम वे तभी कर सकते हैं जबकि वे गांवों की सेवा उस रूप में करें जिस रूप में वह ग्रामवासियों के लिए स्वीकार्य हो। इसकी शुरुआत हर आदमी अपने परिश्रम के द्वारा गांवों की सफाई करके और अपनी क्षमता के अनुसार गांवों में निरक्षरता का निराशाज करके कर सकता है। यदि कार्यकर्ताओं का रहन-सहन साफ-सुथरा, व्यवस्थित और परिश्रमपूर्ण होगा तो इसमें संदेह नहीं है कि वे जिन गांवों में काम कर रहे होंगे वहाँ इसका प्रभाव अवश्य फैलेगा। (हरि, 20-2-1937, पृ. 16)

समग्र ग्राम-सेवा

समग्र ग्राम-सेवक का अपने गांव के प्रत्येक निवासी से परिचय होना चाहिए और उसे जितना बन पड़े उन्हीं से ग्रामवासियों की करनी चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है कि वह सारा काम अकेले ही कर सकता है। वह ग्रामवासियों को यह बताएगा कि वे किस प्रकार अपनी सहायता स्वयं कर सकते हैं और उन्हें जो सहायता एवं सामग्री की आवश्यकता होगी, उसे उनके लिए उपलब्ध कराएगा। वह अपने सहयोगियों को भी प्रशिक्षित करेगा। वह ग्रामवासियों के मन को इस तरह जीतने का प्रयास करेगा कि वे उसके पास परम्परा के लिए आने लगें।
मान लीजिए मैं एक कोल्हू लेकर किसी गांव में जाकर बस जाता हूँ तो मैं 15-20 रूपये माहवार कमाने वाला कोई साधारण तेली नहीं होऊँगा | मैं तो एक महाघाती तेली होऊँगा | मैंने यहाँ 'महाघात' शब्द का प्रयोग विनोद के लिए किया है, मेरा असली आशय तो यह है कि तेली के रूप में मैं ग्रामवासियों के अनुकूलण के लिए एक आदर्श बन जाऊँगा | मैं ऐसा तेली होऊँगा जिसे गीता और कुरान की जानकारी है | मैं इतना पढ़ा-लिखा होऊँगा कि उनके बच्चों को शिक्षा दे सकें | यह बात और है कि मुझे इसके लिए शायद समय न लिये | तब गांव वाले मेरे पास आएंगे और मुझे से कहेंगे, “मेहरबानी करके हमारे बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था कर दीजिजे |” तब मैं उनसे कहूँगा, “मैं आपके लिए एक शिक्षक की व्यवस्था कर सकता हूँ, पर आपको उसका खर्च बदरिश्त करना होगा |” और वे खुशी-खुशी इसके लिए तैयार हो जाएंगे |

मैं उन्हें कतई सिखाऊँगा और जब वे मुझ से किसी बुनकर को लाने के लिए आग्रह करते हैं तो मैं उन्हें उसी प्रकार बुनकर लाकर दूँगा जिस प्रकार मैंने उन्हें शिक्षक लाकर दिया है | यह बुनकर उन्हें सिखायेगा कि वे अपना कपड़ा किस प्रकार बुन सकते हैं | मैं उन्हें स्वास्थ्य-रक्षा और सफाई के महत्व के प्रति जागरूक करूँगा और जब वे मुझ से कहेंगे कि मैं उनके लिए एक महत्व की व्यवस्था कर दूँ तो मैं कहूँगा, “मैं आपको महत्व हूँ और आपको इस काम की शिक्षा में दूँगा |”

समग्र ग्राम-सेवा की मेरी धारणा यह है | आप कह सकते हैं कि इस जमाने में मुझे ऐसा तेली कहीं नहीं मिलेगा जैसा कि मैने ऊपर वर्णन किया है | मेरा उत्तर होगा कि यदि ऐसा है तो हम इस जमाने में अपने गांवों के सुधार की आशा नहीं कर सकते....आखिर, जो आदर्श तेल-मिल बचाता है वह तेली तो होता ही है | उसके पास पैसा तो होता है, पर उसकी शिक्षा उसके पैसे में निहित नहीं होती | उसकी सच्ची शिक्षा उसके ज्ञान में निहित होती है | सच्चा ज्ञान मनुष्य को नैतिक प्रतिष्ठा और नैतिक शक्ति देता है | ऐसे व्यक्ति से हर कोई परामर्श लेना चाहता है| (हरी, 17-3-1946, पृ. 42)

आर्थिक सर्वेक्षण

सभी गांवों का सर्वेक्षण कराया जाएगा और उन चीजों की सूची तैयार कराई जाएगी जो कम से कम या किसी तरह की सहायता के बिना स्थानीय रूप से तैयार की जा सकती हैं और जो या तो गांवों के ही इस्तेमाल में आ जाएंगी या जिन्हें बाहर बेचा जा सकेगा | उदाहरण के लिए, कोल्हू से पेसा गया तेल और खली, कोल्हू से पेसा गया जलने का तेल, हाथ से कुछ चावल, ताज़ा गुड़, शहद, खिलौने, चटाइयां, हाथ से बना कागज, साबुन आदि | इस प्रकार यदि पर्याप्त ध्यान दिया जाए तो ऐसे गांवों में जो निष्पादन हो चुके हैं या निष्पादन होने की प्रक्रिया में हैं, नवजीवन का संचार हो सकेगा तथा उनकी स्वयं अपने और भारत के शहरों और कस्बों के इस्तेमाल के लिए
आवश्यकता की अधिकांश वस्तुओं के निर्माण की अन्तर संभावनाओं का पता चल सकेगा | (हरि, 28-4-1946, पृ. 104)

कला और शिल्प
ग्रामवासियों को अपने कौशल में इतनी वृद्धि कर लेनी चाहिए कि उनके द्वारा तैयार की गई चीजें बाहर जाते ही हाथों-हाथ बिक जाएं | जब हमारे गांवों का पूर्ण विकास हो जाएगा तो वहाँ उन्हें दर्जे के कौशल और कलात्मक प्रतिभा वाले लोगों की कर्म नहीं होगी | तब गांवों के अपने कवि भी होंगे, कलाकार होंगे, वास्तुशिल्पी होंगे, भाषाविद्य होंगे और अनुसंधानकर्ता भी होंगे | संक्षेप में, जीवन में जो कुछ भी प्राप्त है, वह सब गांवों में उपलब्ध होगा | आज हमारे गांव गोबर के ढेर मात्र हैं | कल वे सुंदर-सुंदर वाशट्काओं का रूप ले लेंगे शजनें इतनी प्रखर वृद्धि के लोग निवास करेंगे शजने न कोई धोखा दे सकेंगा और न उनका ठोसण कर सकेंगा | ऊपर बताई गई पद्धत के अनुसार गांवों के पुनर्निर्माण का कार्य तकाल शुरू कर देना चाहिए...गांवों का पुनर्निर्माण अस्थायी नहीं, स्थायी आधार पर किया जाना चाहिए | (हरि, 10-11-1946, पृ. 394)

आर्थिक पुनर्गठन
पूर्ण स्वदेशी से संबंधित अपने लेखन में मैंने बताया है कि किस प्रकार इसके कुछ पहलुओं को दृढ़ता हाथ में लिया जा सकता है जिससे लाखों भूखे लोगों को आर्थिक दृष्टि से और स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से लाभ पहुंच सकता है | देश के धनी-धनी व्यक्ति इस लाभ में सहारा दे सकते हैं | मान लें, यदि पुरानी पद्धति के अनुसार गांवों में चावल की हथकुटाई हो सके तो इससे मिलने वाली मजदूरी उन बहनों की जेब में जाएगी जो चावल कूटने का काम करेंगी और चावल खाने वाले लाखों लोगों को पालिका किए हुए चावल से प्राप्त होने वाली शुद्ध माड़ी के स्थान पर हाथ से कुटे चावल से मिलने वाले पोषक तत्वों का लाभ प्राप्त हो सकेगा | मनुष्य का लोभ जो हमें लोगों के स्वास्थ्य या उनकी संपत्ति की कोई परवाह नहीं करने देता, चावल पैदा करने वाले क्षेत्रों में सर्वत्र फैले भद्रे चावल-मिलों के लिए उत्तरदायी है | यदि लोकमत शक्तिशाली बन जाए तो वह बहार पालिका किए चावल के उपयोग पर जोर देकर सब चावल-मिलों को बंद कर सकता है और चावल-मिलों के मालिकों से अपील कर सकता है कि वे ऐसी चीज़ का उत्पादन बंद कर दे जिससे समूचे राष्ट्र के स्वास्थ्य की हानि होती है और गरीबों को आजीविका के एक निर्दोष साधन से वंचित होना पड़ता है | (हरि,26-10-1934, पृ.292)

....मेरा कहना तो यह है कि अगर गांव नष्ट होते हैं तो भारत भी नष्ट हो जाएगा | तब भारत भारत नहीं रहेगा | दुनिया में भारत का अपना मिशन ही खत्म हो जाएगा | गांवों का पुनर्जीवन भी संभव है जब उनका शोषण
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

समाप्त हो | बड़े पैमाने के औद्योगीकरण से अनिवार्यत: ग्रामवासियों का निक्रिय अथवा सक्रिय शोषण होगा, क्योंकि औद्योगीकरण के साथ प्रतियोगिता और विपणन की समस्याएं जुड़ी हुई हैं।

इसलिए हमें गांवों को स्वतःपूर्ण बनाने पर जोर देना होगा जो अपने इस्तेमाल की चीजें खुद बनाए | यदि ग्राम उद्योगों के इस स्वरूप की रक्षा की जाती है तो फिर ग्रामवासियों द्वारा उन आधुनिक मशीनों और औद्योगिकों का इस्तेमाल करने पर भी कोई आपत्ति नहीं है जिन्हें वे बना सकते हैं और जिनका इस्तेमाल करने का सामर्थ्य उन्हें हो | यह जरूर है कि हमें दूसरों के शोषण का साधन नहीं बनाया जाना चाहिए। (हरिअ, 29-8-1936, पृ. 226)

अहिंसक अर्थव्यवस्था

आप फैक्टरी सभ्यता के ऊपर अहिंसा का भवन खड़ा नहीं कर सकते, पर स्वतःपूर्ण गांवों के ऊपर कर सकते हैं....ग्राम अर्थव्यवस्था की जो मेरी धारणा है, उसमें शोषण का कोई स्थान नहीं है, और शोषण ही हिंसा का सार है | इसलिए यदि आप अहिंसक बनना चाहते हैं तो आपको अपने अंदर गांव की मानसिकता का विकास करना होगा और गांव की मानसिकता के मानी हैं चरखे में आस्था | (हरिअ. 4-11-1939, पृ. 331)

हमें दो में से एक चीज चुननी होगी – गांवों का भारत जो उतने ही प्राचीन है | मेरी धारणा है, जो गांवों को इस तरह चूस रहे हैं कि वे ख़ड़े हुए जा रहे हैं | मेरी खादी की मानसिकता मुझे बताती है कि जब शहरों का प्रभुत्व समाप्त हो जाएगा तो हमारे गांवों के लोग अपने अंदर गांव की मानसिकता का उर्जित स्थान देना होगा। (हरिअ. 20-1-1940, पृ. 423)

आहार विषयक सुधार

चूंकि गांवों के आर्थिक पुनर्गठन का काम आहार विषयक सुधारों से शुरू किया गया है, इसलिए इस बात का पता लगाना आवश्यक है कि वे सादे से सादे और सादे खाद्य पदार्थ की कोई नहीं से हैं जिनसे ग्रामवासी अपने खाऊँ हुए स्वास्थ्य को पुनःप्राप्त कर सकते हैं | उनके आहार में हरे पत्ते शामिल करने से वे उन अनेक बीमारियों को शिकार होने से बच सकेंगे जिनसे वे इस समय ग्रस्त हैं | (हरिअ. 15-2-1935, पृ. 1)

आहार विषयक सुधार

चूंकि गांवों के आर्थिक पुनर्गठन का काम आहार विषयक सुधारों से शुरू किया गया है, इसलिए इस बात का पता लगाना आवश्यक है कि वे सादे से सादे और सादे खाद्य पदार्थ की कोई नहीं से हैं जिनसे ग्रामवासी अपने खाऊँ हुए स्वास्थ्य को पुनःप्राप्त कर सकते हैं | उनके आहार में हरे पत्ते शामिल करने से वे उन अनेक बीमारियों का शिकार होने से बच सकेंगे जिनसे वे इस समय ग्रस्त हैं | (हरिअ. 15-2-1935, पृ. 1)
शक्तिचालित मशीनें

अगर प्रत्येक गांव के सभी घरों में बिजली आ जाए तो मुझे ग्रामवासियों द्वारा अपनी मशीनों और औजारों को बिजली से चलाए जाने पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए | लेकिन बिजलीघरों का स्वामित्व या तो राज्य के पास होना चाहिए या ग्राम समुदायों के पास, जैसा कि इस समय चरागाहों के विषय में है | लेकिन जहां न बिजली है, न मशीनहै, वहां खाली हाथ क्या करें ? (हरि, 22-6-1935, पृ. 146)

मैं हजारों गांवों में लगी अनाज पीसने की चब्लक्कयों को लाचारगी की हद मानता हूं | मेरा अनुमान है कि इन सभी इंजनों और चब्लक्कयों का विनिमय भारत में ही नहीं होता....गांवों में बड़ी संख्या में इन मशीनों और इंजनों को लगाना लोभ-लालच की निशानी भी है | क्या गरीब आदमी के पेट पर लात मारकर इस तरह अपनी जेब भरना ठीक है ? ऐसी हर मशीन हजारों हथचब्लक्कयों को बेचकर कर देती है जिससे हजारों घरेलु और बेरोजगार हो जाती हैं और चब्लक्कयों बनाने वाले कारीगरों का व्यय चौपट हो जाता है |

इसके अलावा यह भी है कि यह प्रकृति संक्रामक होती है, इसलिए यह गांव के सभी उद्योगों को अपनी मशीन के लें लेंगी | अगर ग्राममंदिर नष्ट हो गए तो कलाकार का भी क्षय हो जाएगा | हां, अगर पुरानी दस्तकारियों का व्यापार नयी दस्तकारियों ले लें तो कोई विशेष आपत्ति का बात नहीं है | लेकिन जैसी नहीं होता | जिन हजारों गांवों में शक्तिचालित आटा चक्कियां लग गई हैं, वहां मुंह-अंधेरे सुनाई देने वाला हथचब्लक्कयों का मधुर संगीत अब सदा के लिए सो गया है | (हरि, 10-3-1946, पृ. 34)
78. पंचायत राज

ग्राम गणतंत्र

भारत को ग्राम गणतंत्रों का अनुभव है | मेरी कल्पना है कि ये अनजाने ही अहिंसा द्वारा शासित थे....अब एक जानी-बुझी अहिंसक योजना के तहत इनके पुनरुज्जीवन का प्रयास करना होगा | (हरी, 4-8-1940, पृ. 240)

सबसे उत्तम, प्रत्येक के इंटर और कुशल उपाय नीचे से निर्माण करने का है....प्रत्येक गांव को एक स्वातंत्र्य ग्रामतंत्र बनाना होगा | इसके लिए लंबे-चौड़े प्रस्ताव पास करने की जरूरत नहीं है | इसके लिए साहसिक, सामूहिक और विवेकपूर्ण कार्य की जरूरत है.... (हरी, 18-1-1922, पृ. 4)

स्वाधीनता नीचे से शुरू होनी चाहिए | तदनुसार प्रत्येक गांव एक ग्रामतंत्र या पंचायत होगी जिसे समस्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी | इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक गांव को आधिनिष्ठ होना पड़ेगा और अपने मामलों की देखरेख स्वरूप करनी होगी, यहां तक कि उसे दुनिया से अपनी रक्षा करने का सामर्थ्य भी अवश्यक होगा | गांव की बाहरी आक्रामण से अपनी रक्षा करने और आक्रामक होते हैं उस प्रयास में नष्ट हो जाने के लिए प्रशिक्षित और उद्यमी किया जाएगा | इस प्रकार अंतत: व्यक्ति ही इकाई माना जाएगा |

इसका मतलब यह नहीं है कि वह पड़ोसियों पर या बाहरी दुनिया पर कई निर्भर नहीं होगा या उनके द्वारा स्वेच्छा से की गई सहायता को भी स्वीकार नहीं करेगा | लेकिन यह पारस्परिक व्यवहार उभय पक्षों की स्वतंत्रता और स्वेच्छा से संचालित होगा | ऐसा समाज अनिवार्य: अत्यंत सुसंस्कृत होगा, जिसमें प्रत्येक स्त्री-पुरुष को यह ज्ञान होगा कि उसे क्या चाहिए और इससे भी बढ़ी बात यह है कि उसे यह मालूम होगा कि उसे ऐसी किसी चीज़ की इच्छा नहीं करनी चाहिए जिसे दूसरे लोग भी उतनी ही श्रम करके प्राप्त न कर सकते हों | यह समाज स्वभावतः सत्य और अहिंसा पर आधारित होना चाहिए जो, मेरी राय में, तब तक संभव नहीं है जब तक मनुष्य को ईश्वर में जाग्रत आस्था न हो – ईश्वर जो स्वयंभू और स्वर्गीय है, जो विश्व को ज्ञात सभी बलों में अंतरित है, जो किसी पर आश्रित नहीं है और जो सभी बलों के नष्ट अथवा निक्रिय हो जाने पर भी विद्यमान रहेगा | इस स्वदेशसमावेशी जागरूक आलोक में आस्था रखने का नतीजा है जहां तक अपने जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकता |

विस्तारशील वलय

अर्थात गांवों से बने इस ढांचे में एक के बाद एक विस्तारशील निर्माण अंतर्निष्ठ नहीं रहने वाले वलय होंगे | जीवन एक पिरामिड की तरह नहीं होगा जिसमें आधार की शीर्ष का भार वहन करना पड़ता है बल्कि वह एक समुद्री वलय की तरह होगा जिसके केन्द्र में व्यक्ति होगा जो सदेव अपने गांव के लिए मर-मिटने के वातावरण के लिए तैयार रहेगा, गांव गांव-समूहों के बावजूद नष्ट हो जाने के लिए तैयार रहेगा, और यह प्रक्रिया वहां तक चलती रहेगी जहां संपूर्ण विश्व एक जीवन का रूप धारण कर लेगा; सभी व्यक्ति इस एक जीवन के अंग होंगे, वे कभी आक्रामक
रुख नहीं अपनाएं बल्कि सदा विनम्रता का व्यवहार करेंगे और उस समुद्री वलय के ऐश्र्य में भागीदार होंगे जिसकी वे अंगभूत इकाइयाँ हैं।

इस समुद्री वलय की बाह्ततम परिधि के पास अंतरिक परिधि को कुचलने की क्षमता नहीं होगी, बल्कि वह अपने अंदर की सभी परिधियों को शक्ति प्रदान करेगी और स्वयं उससे शक्ति प्राप्त करेगी। लोग मुझे प्लटकर उलझाना दे सकते हैं कि ये सब यूटोपियाई बातें हैं और जरा भी विचारणीय नहीं हैं। यदि यूक्लिड के बिंदु का, भले ही कोई भी मनुष्य उसे कागज पर न उतार सके, अक्षय मूल्य है तो मेरे उपर्युक्त तस्वीर का भी मानव जाति के लिए मूल्य है।

आदर्श

भारत को इस सच्ची तस्वीर के लिए जीना चाहिए, भले ही हम उसे कभी पूरी तरह प्राप्त न कर सकें। हम जो चाहते हैं, हमारे सामने उसकी सच्ची तस्वीर होनी चाहिए, तभी हम उसे प्राप्त करने की दिशा में प्रयास कर सकते हैं। अगर भारत का प्रत्येक गांव कभी गणतंत्र बना तो मेरा दावा है कि मेरी तस्वीर ही सच्ची साशबद्ध होगी।

इस तस्वीर में हर धर्म को पूरा और बराबर का स्थान प्राप्त है। हम सभी एक शानदार वृक्ष की पत्तियाँ हैं जिसकी जडें पृथ्वी के गभक में इस तरह जमी हुई हैं जो उसके तने को उसकी जडों से अलग नहीं किया जा सकता।

इस तस्वीर में ऐसी मशीनों के लिए कोई स्थान नहीं है जो मानव श्रम को विस्थापित करती हैं और मुद्दी भर लोगों में शक्ति का केंद्रीकरण करती हैं। सुसंस्कृत मानव परिवार में श्रम का स्थान बेजोड़ है। ऐसी हर मशीन का स्थान है जो प्रत्येक वृक्ष की सहायता करती है। हां, यह बात मानने के लिए तैयार हूँ कि मैं अभी तक इस प्रश्न पर चर्चा कर नहीं कर पाया हूँ कि ऐसी मशीन कौन-सी हो सकती है।

सुसंस्कृत मानव परिवार में अभी तक इसकी केंद्रीकरण करता है।

(हरिर, 28-7-1946, पृ. 236)

मैं जानता हूँ कि एक आदर्श गांव का निर्माण उलझाना ही कठिन है जितना कि आदर्श भारत का निर्माण है। लेकिन जहाँ एक वृक्ष के लिए एक-एक दिन एक गांव को आदर्श रूप प्रदान करने की अपनी आकांक्षा को पूरा करना संभव है वहाँ सारे भारत को आदर्श देश बनाने के लिए किसी एक वृक्ष का जीवनकाल बहुत थोड़ा है। लेकिन अगर एक आदमी एक गांव को आदर्श स्वरूप प्रदान कर सकता है तो वह न केवल सारे देश बल्कि पूरी दुनिया के सामने एक नमूना पेश करेगा। सत्यशोधक को इससे बड़ी उपलब्धि की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए।

(हरिर, 4-8-1940, पृ. 235)
ग्राम गणतंत्रों के अंतर्गत

मैं ऐसे भारत की कल्पना नहीं कर रहा हूँ जो निर्धनता का शिकार होगा और जिसमें करोड़ों अज्ञानी लोगों का वास होगा | मेरी कल्पना का भारत अपनी प्रकृति के अनुसार निरंतर प्रगति करने वाला देश होगा | लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि भारत पश्चिम के अंतर्गत में आने की चिंता हो | अनुकूलन के साथ होता है और देश के सात लाख गांवों में से प्रत्येक गांव एक स्वर्ण गणतंत्र बनता है जिसमें कोई व्यक्ति निरक्षर नहीं होगा, कोई बेरोजगार नहीं होगा, हरेक के पास भरपूर काम होगा और पौष्ठिक भोजन होगा, हवादार मकान होंगे, तन ढकने के लिए पैर्स्क खादी होगी, सभी ग्रामवासियों को स्वास्थ्य-रक्षा क्षेत्र में स्वतन्त्रता होगी और वे उनका पालन करते होंगे, तो ऐसी स्थिति में राज्य की आवश्यकताएं विविध और वर्तमान होंगी जिनकी पूर्ति उसे करनी होगी अन्यथा उसकी प्रगति अरुढ़ हो जाएगी | (हरी, 30-7-1938, पृ. 200)

ग्राम स्वराज

ग्राम स्वराज की मेरी धारणा के अनुसार वह एक पूर्ण गणतंत्र होगा जो अपनी बुनियादी आवश्यकताओं के मामले में अपने पड़ोसियों पर निर्भर नहीं होगा | फिर भी, जिन मामलों में निर्भरता आवश्यक है, उनमें गांवों के बीच परस्पर निर्भरता की स्थिति होगी | तदनुसार, प्रत्येक गांव का पहला काम अपने खाने के लायक आत्र और कपड़े के लिए कपास उगाना होगा | वह अपने पशुओं के लिए चरागाह और वयस्कों तथा बच्चों के लिए मनोरंजन और खेल के मैदान की व्यवस्था भी करेगा | इसके बाद अगर और जमीन उपलब्ध होगी तो उस पर गांव, तंबाकू और अफीम को छोड़कर अन्य नकदी फसलें उगाई जाएगी | गांव में एक मंच, स्कूल और सर्वजनिक सभागार होगा | उसका अपना जल संस्थान होगा जो स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिश्चित करेगा | इसकी व्यवस्था नियंत्रित कुंओं या तालाबों से की जा सकती है | बुनियादी पाठ्यक्रम के अंतिम वर्ष तक की शिक्षा अनिवार्य होगी | जहां तक संभव होगा, प्रत्येक कार्यकालाप सहकारिता के आधार पर चलाया जाएगा | आज जैसी जातियां जिनमें न्यूनाधिक आधुनिक चलनमार्ग प्रचलित है, समाप्त हो जाएगी | सत्याग्रह और असहयोग की तकनीक से युक्त अहिंसा ग्राम समुदाय की दंड-शक्ति होगी | ग्राम-रक्षकों के रूप में सबको अनिवार्य सैना करनी होगी; रक्षकों का चुनाव गांव द्वारा रखे जाने वाले रजिस्टर में से बारी-बारी से किया जाएगा | गांव का शासन

गांव का शासन पांच व्यक्तियों की पंचायत चलाएगी जो न्यूनतम निर्धरित योग्यता रखने वाले वयस्क स्त्री-पुरुषों द्वारा प्रतिवर्ष चुनी जाएगी | इन पंचों के पास समस्त प्राधिकार और अपेक्षित क्षेत्राधिकार होंगे | चूंकि दंड का
सामान्यतया जो अर्थ लगाया जाता है उस अर्थ में कोई दंड-प्रणाली लागू नहीं होगी, इसलिए यह पंचायत ही अपने कार्यकाल के दौरान विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका, तीनों को स्वयं में समाविष्ट करते हुए उनके कर्तव्यों का निर्वाह करेगी....

मैंने यहां इस बात पर विचार नहीं किया है कि पंचायत के अपने पड़ोसी गांवों और केंद्र के साथ, यदि हुआ तो, क्या संबंध होगे | मेरा उद्देश्य ग्राम शासन की रूपरेखा प्रस्तुत करना है | गांव में पूर्ण लोकतंत्र चलेगा जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधारित होगा | व्यक्ति ही अपनी सरकार का निर्मित होगा | उस पर और उसकी सरकार पर अहिंसा के नियम का शासन होगा | वह और उसका गांव सारी दुनिया की ताकत को चुनौती दे सकेंगे | कारण कि, प्रत्येक ग्रामवासी इस नियम से शासित होगा कि वह अपने और अपने गांव के समान की रक्षा में अपने प्राणों की आहुष्टत देने के लिए तैयार रहेगा....

उपर जो तस्वीर पे की गई है, उसमें कोई बात ऐसी नहीं है जिसे असंभव कहा जा सके | ऐसे आदर्श गांव की स्थापना करने में व्यक्ति का पूरा जीवनकाल लग सकता है | सबचे लोकतंत्र और ग्राम-जीवन का कोई प्रेमी यदि एक गांव चुन ले और उसे अपनी दुनिया तथा एकमात्र कायम मानकर जुट जाए तो उसे निक्षेप ही काफ़ी अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे | (हरि, 26-7-1942, पृ. 238)

लोकमत

पंचायत राज की स्थापना हो जाने पर लोकमत वह काम कर सकता है जो हिंसा कभी नहीं कर सकती | जमींदारों, पूंजीपतियों और राजाओं की वर्तमान शक्ति का बोलबाला लगभग तभी तक रह सकता है जब तक आम लोगों को अपनी शक्ति का अहसास नहीं होता | अगर लोग जमींदारी या पूंजीवाद की बुराइयों के साथ असहयोग करने लगें तो वह अर्थहीन होकर नष्ट हो जाएगा | पंचायत राज में केवल पंचायत का ही आदेश चलेगा और पंचायत अपने ही बनाए कानूनों के मुताबिक काम करेगी | (हरि, 1-6-1947, पृ. 172)

असली शासक तो मेहनतकर जनता है | (हरि, 15-6-1947, पृ. 193)

किसान मेरुदंड है

स्वाभाविक है कि पंचायत राज के अंतर्गत, भारत में सर्वाधिक महत्व किसान का होगा | प्रश्न यह है कि उसे किस प्रकार आगे बढ़ाया जाए ? (हरि, 7-12-1947, पृ. 458)

पंचायतों के पास जितनी अधिक शक्ति होगी, लोगों के लिए उतना ही अच्छा है | एक बात और है कि पंचायतों के अंतर्गत कारगर और कुशल बन सकती हैं जब लोगों की शिक्षा के स्तर में पर्याप्त वृद्धि की जाए | मैं लोगों की शक्ति में वृद्धि की जो बात कह रहा हूँ, वह सैन्य शक्ति नहीं बल्कि नैतिक शक्ति की बात है | स्वभावतया, इस संदर्भ में मैं नयी तालीम का कायल हूँ | (हरि, 21-12-1947, पृ. 473)
पंचायत का कार्य
पंचायत का क्रम ईमानदारी और अध्यक्षता की पुन:प्रतिष्ठा करना है....यह काम पंचायतों का है कि अगर उन्हें झगड़ों को सुलझाना है तो वे गांव वालों को झगड़ों से बचने की सीख दें | इससे बिना किसी खर्च के शीघ्र नयाँ दिया जा सकेगा | न आपको पुलिस की जरूरत पड़ेगी, न सेना की....

पंचायत को पशुओं की नस्करता के सुधार पर ध्यान देना है | यह काम पंचायतों का है शक अगर उन्हें झगड़ों को सुलझाना होता है, तो वे गांव वालों को झगड़ों से बचने की सीख दें | इससे शब्दनाम शकसी के की न्याय उत्पन्न होगा | न आपको पुरुष की जरूरत पड़ेगी, न सेना की....

पंचायत की स्थिति
अगर हम पंचायत राज अर्थात सच्चे लोकतंत्र का सपना पूरा होता देख सके तो हम दीनतम और निम्नतम भारतीय को भी देश के बढ़े-बढ़े व्यक्ति के समक्ष भारत के शासक का दर्जा देंगे | यह तभी संभव है जब सब लोग शुद्ध हों और जो शुद्ध नहीं हैं, वे शुद्ध बनें | और शुद्धता के साथ बुद्धिमत्ता का भी योग हो | तब कोई व्यक्ति एक समुदाय और दूसरे समुदाय तथा जाति और जाति-बहिष्कृत के बीच भेद नहीं मानेगा | प्रत्येक व्यक्ति सबी को अपने बराबर समझेंगे और उन्हें अपने साथ सेह की रेशमी डोर में बांधकर रखेंगे | कोई किसी को अछूत नहीं मानेगा | हम मेहनतक श्रवन्द्र को और धनी पूंजीपति को एक समान समझेंगे | हर आदमी को शारीरिक और धैर्यक परिश्रम करके ईमानदारी से अपनी रोजी-रोटी कमाना आएगा और वह बौद्धिक तथा शारीरिक श्रम के बीच कोई भेद नहीं मानेगा | इसकी यथाशीघ्र संसदिधि के लिए हम सभी स्वीकार से अपने को झाड़ूबर्दार मान लेंगे | कोई भी बुद्धिहीन व्यक्ति अफीम, शाराब या किसी मादक पदार्थ को कभी नहीं छुएगा | हर व्यक्ति स्वदेशी की जीवन का नियम मानेगा और हर पुरुष अपनी पत्नी के अलावा हर स्त्री को, उसकी आयू के अनुसार अपनी माता, बहन अथवा पुत्री मानेगा और हर देश में हर प्रति कभी कामेखा उत्पन्न नहीं होना देगा | वह आदर्शजनता पढ़ने पर अपने प्राणों की आहुति देने के लिए तैयार रहेगा, पर कभी किसी दूसरे के प्राण लेने का विचार नहीं करेगा....

(हरिर, 4-1-1948, पृ. 500)

(हरिर, 18-1-1948, पृ. 517)
79. शिक्षा

प्राचीन सूक्ति ‘सा विद्या या विमुक्ति’ आज भी उतनी ही सत्य है जितनी कि पहले थी | शिक्षा से यहां आशयकेवल आध्यात्मिक शिक्षा से नहीं है, न विमुक्ति से आशय मूल्य के उपरांत मोक्ष से है | ज्ञान में वह समस्तप्रशिक्षण समाहित है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और विमुक्ति का अर्थ है वर्तमान जीवन की भीसभी प्रकार की पराधीनताओं से निकलिये | ज्ञान के अर्जन के लिए न दिखाई देगा आंतरिक सत्य है शवमुक्ति से आ गया है, न शवमुक्ति से आ गया मृत्यु के उपरांत मोक्ष से है | ज्ञान के अर्जन के लिए न ही शवमुक्ति है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और शवमुक्ति का अर्थ है वर्तमान जीवन की भीसभी प्रकार की पराधीनताओं की दासता | इसी आदर्श की प्राप्ति के लिए किया गया ज्ञानाभ्यास सच्चीशिक्षा है | (हरि, 10-3-1946, पृ. 38)

जीने का ज्ञान

आज शुद्ध जल, शुद्ध पृथ्वी और शुद्ध वायु हमारे लिए अपरिचित हो गए हैं | हम आकाश और सूर्य के अपरिमेयमूल्य को नहीं पहचानते | अगर हम पंच तत्त्वों* का बुद्धिमानतापूर्ण उपयोग करें और सही तथा संतुष्ट भोजन करें तो हम युगों का काम पूरा कर सकेंगे | इस ज्ञान के अर्जन के लिए न दिखाई देगा आंतरिक सत्य है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और शवमुक्ति से आ गया मृत्यु के उपरांत मोक्ष से है | न दिखाई देगा आंतरिक सत्य है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और शवमुक्ति से आ गया मृत्यु के उपरांत मोक्ष से है | ज्ञान के अर्जन के लिए न ही शवमुक्ति है जो मानव जाति की सेवा के लिए उपयोगी है और शवमुक्ति का अर्थ है वर्तमान जीवन की भीसभी प्रकार की पराधीनताओं की दासता | इसी आदर्श की प्राप्ति के लिए किया गया ज्ञानाभ्यास सच्चीशिक्षा है | (हरि, 1-9-1946, पृ. 286)

निरंतर शंका और शुद्ध जिज्ञासा किसी भी प्रकार के ज्ञानाभ्यास की पहली शर्तें हैं | जिज्ञासा के मूल में विनम्रता औरगुरु के प्रति आदरभाव होना चाहिए | ध्यान रखें कि वह विकृत होकर उज्ज्वलता में न बदल जाए | उज्ज्वलता बुद्धि की ग्रहणशीलता की श्रुति है | विनम्रता और सीखने की इच्छा के बिना ज्ञान की प्राप्ति असंभव है | (हरि, 8-9-1946, पृ. 306)

नये संसार की रचना के लिए शिक्षा भी नयी तरह की होनी चाहिए | (हरि, 19-1-1947, पृ. 494)

आदमी साक्षरता अथवा विद्वत्व से आदमी नहीं बनता, बल्कि सचे जीवन के लिए ली गई शिक्षा से बनता है | (हरि, 2-2-1947, पृ. 3)

मेरा आप्रवाह है कि वयस्क मताधिकार के साथ-ही-साथ, अथवा उससे भी पहले, सर्वजननी शिक्षा की व्यवस्था कीजानी चाहिए जिसका पुस्तकीय होना अनिवार्य नहीं है – पुस्तकों को संबंधत: उसकी सहायक की भूमिका ही निभा सकती है | मेरा मानना है कि अंग्रेजी शिक्षा ने हमारे दिमागों को कंगाल बना दिया है, कमजोर कर दिया है औरउन्हें साहसी नागरिकता के लिए कभी तैयार नहीं किया | मैं उन्हें समृद्ध भाषाओं में ऐसा पर्याप्त ज्ञान दूरा जिसपर कोई भी देश गर्व कर सके | यदि हमें ईमानदारी और उसाह हो तो नागरिकता के मर्म को समझने कीशिक्षा अल्पसमय में ही ग्रहण की जा सकती है | (हरि, 2-3-1947, पृ. 46)
श्रम की गरिमा

मेरी धारणा है कि चूंकि हमारा अधिकांश समय रोजी-रोटी के लिए श्रम करने में जाता है, इसलिए हमारे बच्चों को शुरू से ही इस प्रकार के श्रम की गरिमा का पाठ पढ़ाया जाना चाहिए। हमारे बच्चों की शिक्षा ऐसी नहीं होनी चाहिए कि वे श्रम को हेप समझने लगें| कोई कारण नहीं है कि किसी का बेटा, स्कूल जाने के बाद, खेतिहर श्रमिक के रूप में काम करना न चाहे, जैसा कि आजकल देखने में आ रहा है| (योग, 1-9-1921, पृ. 277)

*पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु|

पुस्तकीय शिक्षा हाथ की शिक्षा के बाद आरंभ होनी चाहिए – हाथ मनुष्य को प्रकृति की ऐसी देन है जो उसे पशु से भिन्न बनाती है।| यह सोचना अंतरिक्ष का है कि पढ़ने-लिखने की कला जाने बिना मनुष्य का पूरा-पूरा विकास असंभव है| यह सही है कि पढ़ना-लिखना अपने जीवन की श्रीवृब्लद् होती है, लेकिन यह किसी भी रूप में मनुष्य के नैतिक, शारीरिक अथवा भौतिक विकास के लिए अपरेहार्य नहीं है| (हरर, 8-3-1935, पृ. 28)

मेरी धारणा है कि बुद्धि की सच्ची शिक्षा केवल हाथ, पैर, नेत्र, कान, नाक आदि शारीरिक अंगों के उचित व्यायाम एवं प्रशिक्षण से ही प्राप्त की जा सकती है| दूसरे शब्दों में, बच्चों को उसके शारीरिक अंगों के बुद्धिमत्तपूर्ण उपयोग की शिक्षा देना ही उसकी बुद्धि का सर्वोत्तम और शीघ्रतम विकास करने की विधि है| लेकिन जब तक बुद्धि और शारीर के विकास के साथ-साथ, उसी गति से, आत्मा की जागृति का काम भी नहीं चलता तब तक विकास एकांगी ही सिद्ध होगा। आध्यात्मिक प्रशिक्षण से मेरा आशय है हृदय की शिक्षा| इसलिए बुद्धि का उचित और समग्र विकास तभी हो सकता है जब वह बच्चों की शारीरिक एवं आध्यात्मिक क्षमताओं की शिक्षा के समरूप प्राप्ति करे| यह सब एक अविभाज्य इकाई है| अतः: इस सिद्धांत के अनुसार, यह समझना निरंतर भाविपूर्ण है कि इनका विकास ख़ड़ाश: अथवा एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप में किया जा सकता है| (हरर, 8-5-1937, पृ. 104)

सामंजस्पूर्ण मेल

शारीर, बुद्धि और आत्मा की विविध क्षमताओं के बीच उचित समन्वय और सामंजस्य के अभाव के दुस्पर्शियां स्पष्ट है| उन्हें हम अपने चंदू और देख सकते हैं; बस यही है कि अपने वर्तमान विनियम साहचर्यों के कारण हमें उनका बोध नहीं होता.... (हरर, 8-5-1937, पृ. 104)

मनुष्य न केवल बुद्धि है, न निपट पाशीविक शारीर और न केवल हृदय अथवा आत्मा| समग्र मानव इन तीनों के उचित और सामंजस्पूर्ण योग से ही बनता है और शिक्षा की सच्ची योजना में इसी का समावेश होना चाहिए। (वही)
मेरी नयी तालीम धन पर निर्भर नहीं है | इसे चलाने का खर्च स्वयं शिक्षा प्रक्रिया से ही निकल आना चाहिए | इसकी जो भी आलोचना हो, यह जानता हूँ कि शिक्षा वही है जो ‘आत्मनिर्भर’ हो | (हरि, 2-3-1947, पृ. 48)

इसे शिक्षा की नयी पद्धति इसलिए कहते हैं कि यह विदेशों से आयातित अथवा उनके द्वारा आरोपित नहीं है, अथवा भारत के पर्यावरण के अनुकूल है जो ग्राम-प्रदूषन है | यह शरीर, बुद्धि और आत्मा – जिनसे मिलकर मनुष्य बना है – के बीच संतुलन स्थापित करने पर विश्वास करती है | यह पाश्चात्य शिक्षा जैसी नहीं है जो प्रशासनिक सैन्यवादी है, जिसमें मुख्य रूप से शरीर और बुद्धि की ओर ध्यान दिया जाता है और आत्मा को गणना समझा जाता है | सबसे अच्छा तरीका यह है कि शिक्षा हस्तशिल्पों के माध्यम से दी जाए | नयी तालीम की दूसरी
विशेषता यह है कि यह पूर्णतया आत्मनिर्भर है | इसलिए इसे चलाने के वास्ते करोड़ों रुपए खर्च करने की जरूरत नहीं है | (हरि, 11-5-1947, पृ. 147)

अध्यापक जो लेते हैं वही उनकी कमाई है | नयी तालीम जीने की कला का पक्षधर है | इसलिए अध्यापक और शिक्षा, दोनों को सिखाने और सीखने की प्रक्रिया में ही कुछ उपयोग करना पड़ता है | यह शुरू से ही जीवन को समृद्ध बनाती है | यह राष्ट्र को रोजगार द्वारा के इंद्रजल से मुक्ति दिलाती है | (वही, पृ. 145)

हमारी शिक्षा पद्धति बुद्धि, शरीर और आत्मा, तीनों का विकास करती है | इसकी तुलना में, सामान्य शिक्षा पद्धति केवल बुद्धि की ओर ध्यान देती है | (हरि, 9-11-1947, पृ. 401)

इसे आम तौर पर लोग हस्तिलियों के माध्यम से शिक्षा कहकर पुकारते हैं, जो ठीक ही है | लेकिन यह सत्य का केवल एक अंश है | वस्तुत: नयी तालीम की जरूरत नहीं है और भी गहरी जानती है | वे मानव क्रिया के प्रत्येक क्षेत्र में सत्य और प्रेम की प्रयुक्ति तक फैली हुई है | हस्तिलियों के माध्यम से शिक्षा देने की धारणा इस विचार से उदभूत है कि जीवन के कार्यकलाप सत्य और प्रेम से व्याप्त होने चाहिए | प्रेम की आपेक्षा है कि सच्ची शिक्षा सभी को सरलता से प्राप्त होने चाहिए और वह प्रत्येक ग्रामवासी के तैयार करने के लिए उपयोगी होने चाहिए | ऐसी शिक्षा पुस्तकों से ग्रहण नहीं की जाती और न वह उन पर निर्भर होती है | इसकी धार्मिक पंथों से भी कोई संबंध नहीं है | यदि इसका धर्म से कोई संबंध माना जा सकता है तो वह साधारण धर्म है जिससे सभी धार्मिक पंथ निकले हैं | इसलिए यह शिक्षा जीवन की पुस्तक से ग्रहण की जाती है जिस पर कोई लागत नहीं आती और जिसे दुनिया की कोई ताकत आपसे नहीं छीन सकती | (हरि, 21-12-1947, पृ. 480)

विश्वविद्यालयी शिक्षा

विश्वविद्यालयी शिक्षा का ध्येय देश के सच्चे सेवक तैयार करना होना चाहिए जो देश की स्वतंत्रता के लिए जिए और मरें | इसलिए मेरी राय है कि विश्वविद्यालयी शिक्षा का बुनियादी शिक्षा के साथ समन्वय किया जाना चाहिए और यह उसी सांचे में ढली होनी चाहिए.... (हरि, 25-8-1946, पृ. 283)

जहां तक स्त्री शिक्षा का संबंध है, मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि यह पुरुषों की शिक्षा से भिन्न होनी चाहिए या नहीं और इसकी शुरुआत कब होनी चाहिए | लेकिन मेरी पक्की राय है कि स्त्रियों को भी पुरुषों के समकक्ष शिक्षा-सुविधाएं मिलनी चाहिए और जहां आवश्यक हो वहां उन्हें विशेष सुविधाएं भी दी जानी चाहिए | (हरि 5-8-1950, पृ. 195); आश्वम एन्टीवीटीज (1932), अनु. बी. जी. देसाई

मैं अपने विद्वानों के विदेश जाने का हिमायती कभी नहीं रहा हूं | मेरा अनुभव है कि ये विद्वानों विदेशों से लौटने पर यहां के वातावरण में खप नहीं पाते | अनुभव वही सबसे मूल्यवान होता है और देश की समृद्धि में सर्वाधिक योगदान करता है जो अपनी ही धरती से पैदा हुआ हो | (हरि, 8-9-1946, पृ. 308)
विद्यार्थियों के लिए संहिता

आंदोलन के लिए उन लोगों के लिए है जिन्होंने अपनी अध्ययन पूरा कर लिया है | अध्ययन के दौरान विद्यार्थियों का एकमात्र कार्य अपने ज्ञान में वृद्धि करना होना चाहिए....देश में दी जाने वाली हर प्रकार की शिक्षा, देश की प्रगति को बढ़ाने वाली सिद्ध होनी चाहिए | (हरी, 7-9-1947, पृ. 312)

सर्वोपरि बात यह है कि विद्यार्थियों को विनम्र और सदृशों वाला होना चाहिए....सबसे महान वही है जो स्वेच्छा से निष्ठाम ध्यान देता करे | यदि मैं हिन्दू आस्था के ज्ञान के आधार पर कह सकूं तो विद्यार्थियों का जीवन उसके अध्ययन की समाप्ति के समय तक समयस्विकृत तरीक़े में पूरा कर सकता है | उसे कठोर अनुशासन में रहना चाहिए | वह विवाद नहीं कर सकता, न दुराचरण में निम्न हो सकता है | वह किसी तरह की नसीबी वस्तुओं का सेवन नहीं कर सकता, उसका व्यवहार एक आदर्श संयमी का-सा होना चाहिए | (हरी, पृ. 314)

शिक्षा का माध्यम

शिक्षा के गतत अवभारतीयकरण से करोड़ों छात्रों को जो निरंतर और अधिकाधिक हानि पहुंच रही है, उसके प्रमाण में नित्य देखता हूँ....

हम यह समझने लगे हैं कि अंग्रेजी जाने बगैर कोई 'बोस' नहीं बन सकता | इससे बड़े अंधविश्वास की बात और कोई नहीं हो सकती | जैसी लाचारगी के शिकार हम हो गए लगते हैं वैसी किसी जापानी को तो महसूस नहीं होती....

शिक्षा का माध्यम तकाल बदल देना चाहिए और प्रांतीय भाषाओं को हर कीमत पर उनका उचित स्थान दिया जाना चाहिए | हो सकता है, इससे उच्चतर शिक्षा में कुछ समय के लिए अव्यवस्था आ जाए, पर आज जो भयंकर बबाकदी हो रही है, उसकी अपेक्षा वह अव्यवस्था कम हानिकर होगी |

प्रांतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा और उनके बाजार-मूल्य को बढ़ाने के लिए मैं चाहूँगा कि प्रांत की कानूनी अदालतों की भाषा उस प्रांत की भाषा ही बना देंगी चाहिए | प्रांतीय विधानमंडलों की कार्यवाही उस प्रांत की भाषा में होनी चाहिए और अगर किसी प्रांत में एक से अधिक भाषाएं प्रचलित हैं तो वह उन सभी भाषाओं में चलाई जा सकती है....केंद्र में सर्वोपरि स्थान हिंदुस्तानी को दिया जाना चाहिए |

मेरी राय में यह प्रश्न ऐसा नहीं है जिसका निर्णय विद्वानों के ऊपर छोड़ दिया जाए....जब देश सच्चमुच स्वतंत्र होगा तो शिक्षा के माध्यम के प्रश्न के केवल यही एक हल होगा | विद्वानों का काम पाठ्यक्रम बनाना और उनके अनुसार पाठ्य-पुस्तकें तैयार करना होगा | तब आप देखेंगे कि स्वतंत्र भारत में शिक्षा ग्रहण करके जो छात्र निकलेंगे वे देश की आवश्यकताओं के अनुरूप होंगे....मुझे इस संदेह नहीं है कि जब तक हम पढ़े-लिखे लोग इस प्रश्न से
खिलाड़ करते रहेंगे तब तक हम अपने सपनों के स्वतंत्र और स्वस्थ भारत का निर्माण नहीं कर सकेंगे। हमें कठोर प्रयास करने के अपनी गुलामी के बंधनों को तोड़ना होगा, यह बंधन चाहे शैक्षिक हों, आर्थिक हों या सामाजिक अथवा राजनीतिक हों। तीन-चौथाई लड़ाई तो प्रयालों में ही निहित है। (हरि, 9-7-1938, पृ. 177-78)

मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि जिन लोगों के हाथों में युवाओं की शिक्षा है, वे यदि निर्णय लेना चाहेंगे तो पाएंगे कि मातृभाषा मनुष्य के मानसिक विकास के लिए उसी प्रकार स्वाभाविक है जिस प्रकार मां का दूध शिशु के शरीर के विकास के लिए है। इसके अलावा यह जानना भी निहित है कि इस तरह कोई भी कैसे सकता है जिसके पहले पाठ मां से सीखता है। इसलिए बच्चों के मानसिक विकास के लिए उनके ऊपर मातृभाषा के अलावा भाषा योग्यता में मातृभूषण के विरुद्ध पापाचार समझता हूँ। (मीइन्स, पृ. 8)

राष्ट्रभाषा

अंग्रेजी भाषा....केवल देवनागरी या उर्दू में लिखी गई हिंदुस्तानी ही हो सकती है....

अंग्रेजी को सांस्कृतिक अनधिकारग्राही मानक देश से निकालने का आयोज में उसी तरह कर रहा हूँ जिस तरह हमने अंग्रेज अनधिकारग्राहीयों के राजनीतिक शासन को सफलतापूर्वक देश से निकाला है। समूद्र अंग्रेजी भाषा का वाणिज्य और कृतनिति की अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वाभाविक स्थान सदा बना रहेगा। (हरि, 21-9-1947, पृ. 332)

यदि प्रांतीय भाषाओं का अधिकतम उल्लेख करना है तो प्रांतों का भाषायी आधार पर पुनर्गठन आवश्यक है। हिंदुस्तानी भाषा में राष्ट्रभाषा होगी, पर वह प्रांतीय भाषाओं का स्थान नहीं ले सकती। वह प्रांतों में शिक्षा का माध्यम नहीं बन सकती -- और अंग्रेजी तो कर्तव्य नहीं है। उसका कार्य प्रांतों को भारत के साथ अपने आंतिक संबंध को समझने में मदद देना है। (हरि, 1-2-1948, पृ. 14)

अंग्रेजी भाषा

भारतीय मानस का अधिकतम विकास अंग्रेजी के ज्ञान के बिना संभव होना चाहिए। (यंग, 2-2-1921, पृ. 34)

मेरा सुविचार इसमें रहता है कि अंग्रेजी की शिक्षा जिस रूप में हमारे यहाँ दी गई है उसने अंग्रेज पढ़-लिखे भारतीयों का दूरबीन किया है, भारतीय विद्वानों की साय्यिक ऊर्जा पर जबरदस्त दबाव डाला है, और हमें नकलची बना दिया है....अनुवादकों की जमात पैदा करके कोई देश राष्ट्र नहीं बन सकता। (यंग, 27-4-1921, पृ. 130)

आज अंग्रेजी निर्विवाद रूप से विश्व-भाषा है। अतः मैं इसे स्कूल स्तर पर तो नहीं, पर विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में वैकल्पिक भाषा के रूप में द्वितीय स्तर पर रखूँगा। वह कुछ चुने हुए लोगों के लिए ही हो सकती है – लाखों
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

के लिए नहीं....यह हमारी मानसिक दासता है जो हम समझते हैं कि अंग्रेजी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता। मैं इस पराजयवाद का समर्थन कभी नहीं कर सकता। (हरर, 25-8-1946, पृ. 284)

साहित्य

यह न समझिए कि मैं अंग्रेजी अथवा उसके उदात्त साहित्य की निदान कर रहा हूं। ‘हरिजन’ के संभव मेरे अंग्रेजी-प्रेम के पर्याप्त प्रमाण तथा लेकिन जिस प्रकार इंग्लैंड की शीतोष्ण जलवायु या दृश्यावली का लाभ भारत नहीं उठा सकता, उसी प्रकार उसका उदात्त साहित्य भारत के काम नहीं आ सकता। भारत को अपनी ही जलवायु, अपनी ही दृश्यावली और अपने ही साहित्य में पनपना होगा, भले ही ये इंग्लैंड की जलवायु, दृश्यावली और साहित्य से कमतर हों। हमें और हमारी संतानों को अपनी ही विरासत पर अपनी प्रानि का प्रासाद खड़ा करना है। यदि हम किसी दूसरे की विरासत उधार लेंगे तो अपनी विरासत की खो बैठेंगे। हम परापा अपने खाकर कभी नहीं पनप सकते। मैं चाहूंगा कि हम अंग्रेजी और, उसी प्रकार, विश्व की अन्य भाषाओं के उक्त्रुष्ट साहित्य को भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़ें। मुझे अनुपम कृतियों का रसास्वादन करने के लिए बंगला सीखने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें मैं सूंदर अनुवादों के माध्यम से पढ़ सकता हूं। हम आयंद लेने के लिए गुजराती लड़के-लड़कियों की रूसी भाषा नहीं पढ़नी पड़ती। उन्हें वे अच्छे अनुवादों के माध्यम से पढ़ सकते हैं। अंग्रेजों को इस बात का गवक है कि विश्व का सर्वोत्कृष्ट साहित्य प्रकाशन के एक सप्ताह के अंदर-अंदर राष्ट्र को सरल अंग्रेजी में उपलब्ध हो जाता है। तो फिर, मुझे शेक्सपियर और मिल्टन का साहित्य पढ़ने के लिए अंग्रेजी सीखने की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए? (हरर, 9-7-1938, पृ. 177)
80. भाषावार प्रांत

कांग्रेस के कामकाज के लिए प्रांतों के भाषावार पुनर्गठन को मान्यता दिलाने में मेरी प्रमुख भूमिका थी | मैंने हमेशा यह आवाज़ उठाई है कि सरकार भी इस तरह के पुनर्गठन को स्वीकार कर ले | (हरी, 29-3-1942, पृ. 97)

मेरा विश्वास है कि प्रांतों के सीमारेखांकन का सही आधार भाषाएं हैं | पर यदि इसमें कोई आपत्ति नहीं है अगर एक ही भाषा को बोलने वाले राज्य दो हो जाएं, तो अपने ही भाषी बोली जाती हो तो भी मैं उन्हें दो अलग-अलग प्रांत मानूंगा | (हरी, 19-4-1942, पृ. 118)

प्रांतीय विश्वविद्यालय

मैं मानता हूँ कि ऐसे विश्वविद्यालय होने चाहिए...यदि समूह प्रांतीय भाषाओं और उन्हें बोलने वाले लोगों का अपना पूरा विकास करना है तो पर मुझे भय है कि हमने यदि इस धेर की पूर्व में आवश्यक आतुरता दिखाई तो हम अपने ही धार्मिक और लोकतन्त्रीय प्रांतों के साथ सटे हैं | पहला कदम होना चाहिए प्रांतों का भाषायी आधार पर राजनीतिक पुनर्गठन | (हरी, 2-11-1947, पृ. 392)

अन्यता की भावना हमेशा सर्वोपर्यंत पाई जाती है | हर आदमी अपने और अपने परिवार के बारे में सोचता है | पूरे भारत के बारे में कोई नहीं सोचता | केंद्रीयभूमिका बल होता तो अवश्य है, पर वह कभी मुख्य नहीं होता, कभी प्रचंड नहीं होता; इसकी तुलना में, केंद्रीयभूमिका बल सदा प्रत्यक्ष रहता है, उसकी प्रकृति ही ऐसी है कि वह सबसे ज्यादा शोक करता है और सबका ध्यान आकर्षण करता है | वह सांप्रदायिक स्वरूप लेकर उभर आता है | इससे अन्य क्षेत्रों में भी भय उत्पन्न हो गया है....

उस्तादी सुधारक भी विवादास्पद मुद्दों को ऐसे अनुकूल समय के लिए टाल देते हैं जब, देश के हित में, ‘आदान-प्रदान’ की भावना को खुले मन से मान्यता दी जाएगी और भारत की भलाई के एकमात्र हित को, जिसमें सबकी भलाई निहित है, वर्गीय हितों के ऊपर वरीयता दी जाएगी |

इसलिए मेरे जैसे लोगों को, जो यह चाहते हैं कि रचनात्मक सुझावों पर तक्षात्मक अमल शुरु कर दिया जाए, स्वस्थ वातावरण तैयार करने के लिए प्रयास करना होगा जिसमें मनमुड़ वे स्थान पर मैत्री, संघर्ष के स्थान पर शांति, अवनति के स्थान पर प्रगति और मृत्यु के स्थान पर जीवन पनप सके | (हरी, 30-11-1947, पृ. 436)

अन्य प्रांतवाद नहीं

मेरी धारणा है कि सभी प्रांतों के लोग भारत के हैं और भारत उन सबका है | शारीरिक त्योहार यह है कि कोई आदमी किसी दूसरे प्रांत में उसका शोषण करने, उस पर शासन करने या उसके हितों को क्षति पहुंचाने के इरादे से
भारत की एकता
कांग्रेस प्रांतों के भाषावार पुनर्गठन के सिद्धांत को पहले ही स्वीकार कर चुकी है और उसने घोषणा कर दी है कि सत्ता में आते ही वह इसको संवैधानिक स्वरूप दे देगी; अतः यह पुनर्गठन देश की संस्कृति प्रगति का मार्ग प्रशस्त करेगा। लेकिन इस पुनर्गठन से भारत की आंधी एकता को क्षति नहीं पहुंचनी चाहिए। स्वायत्तता का अर्थ विघटन नहीं है और न होना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि प्रांत एक-दूसरे की अथवा केंद्र की परवाह किए बिना जो मर्जी आए करें। यदि प्रत्येक प्रांत अपनी प्रत्येक स्वतंत्र भाषा के एक तत्त्व संप्रभु इकाई मानने लगें तो भारत की स्वातंत्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा और इसके साथ ही, उसकी स्वतंत्र इकाइयों की स्वतंत्रता का भी लोप हो जाएगा।
बाहरी दुनिया हमें भाषाओं, मराठीयों, तामिलों आदि के रूप में नहीं जानती बल्कि केवल भारतीय के रूप में जानती है।
इसलिए हमें विघटनकारी प्रौद्योगिकी को दृढ़तापूर्वक हतोत्साहित करना चाहिए और भारतीयों की सराहना की तरह अनुभव और व्यवहार करना चाहिए। इस सर्वपारि विचार की रक्षा की जाती रहे तो भारत के भाषावार पुनर्गठन से शिक्षा और व्यापार को प्रोत्साहन मिलेगा। (यंग, 1-2-1948, पृ. 11)
81. गोरक्षा

गाय का स्थान

गाय करूणा का काव्य है | यह सौभाग्यपूर्व मूर्तिमान करूणा है | वह करोड़ों भारतीयों की मां है | गोरक्षा का अर्थ है ईश्वर की समस्त मूक सृशष्टि की रक्षा | प्राचीन ऋषि ने, वह जो भी रहा हो, आरंभ गाय से किया | सृशष्टि के निम्नतम प्राणियों की रक्षा का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि ईश्वर ने उन्हें वाणी नहीं दी है | (यंग, 6-10-1921, पृ. 36)

...गाय अवमाननीय सृशष्टि का पत्तितम रूप है | वह प्राणियों में सबसे समयर्थ अर्थात मनुष्य के हाथों न्याय पाने के वास्ते भी अवमाननीय जीवों की ओर से हमसे गुहार करता है | वह अपनी अंखों की भाषा में हमसे कहती है 'ईश्वर ने हमें वाणी नहीं दी है जो भी रहा हो, आरंभ गाय से किया' | सृशष्टि के शनम्नतम प्रश्न और भी महत्वपूणक है क्योंकि ईश्वर ने उन्हें वाणी नहीं दी है | (यंग, 26-6-1924, पृ. 214)

मैं गाय की पूजा करता हूं और उसकी पूजा का समर्थन करने के लिए दुनिया का मुकाबला करने के लिए तैयार हूं | (यंग, 1-1-1925, पृ. 8)

गोमाता अनेक अर्थों में हमें जन्म देने वाली माता से श्रेष्ठ है | हमारी माता हमें दो वर्ष दुश्पान रखते हैं और यह आशा करती है कि हम बड़े होकर उसकी सेवा करेंगे | गाय हमसे चारे और दाने के आलावा किसी और चीज़ की आशा नहीं करती | हमारी मान प्राय: रुण हो जाती है और हमसे सेवा करने की अपेक्षा करती है | गोमाता शायद ही कभी बिल्कुल घटती है | गोमाता हमारी सेवा आजीवन ही नहीं करती, अपनी अंखों के द्वारा हमें जन्म देने वाली माता से श्रेष्ठ है | हमारी माता हमें दो वर्ष दुश्पान करती है और यह आशा करती है कि हम बड़े होकर उसकी सेवा करेंगे | गाय हमसे चारे और दाने के आलावा किसी और चीज़ की आशा नहीं करती | हमारी मान प्राय: रुण हो जाती है और हमसे सेवा करने की अपेक्षा करती है | गोमाता शायद ही कभी बिल्कुल घटती है | (यंग, 1-1-1925, पृ. 8)

गोमाता हमारी सेवा आजीवन ही नहीं करती, अपनी अंखों के द्वारा हमें जन्म देने वाली माता से श्रेष्ठ है | अपनी मां की मृत्यु होने पर हमें उसे दफनाने या उसका दाह संस्कार करने पर धनराशि ब्याप मनुष्य करने को पड़ती है | गोमाता मर जाने पर भी उतनी ही उपयोगी सिद्ध होती है जितनी अपने जीवन-काल में थी | हम उसके शरीर के हर अंग – मांस, अंसाम्य, आंत, गोत्र और चर्म – का इस्तेमाल कर सकते हैं | मैं यह बात हमें हमें जन्म देने वाली माता की निंदा के विचार से नहीं कह रहा हूं, बल्कि यह दिखाने के लिए कह रहा हूं कि मैं गाय की पूजा क्यों करता हूं | (हरर, 15-9-1940, पृ. 281)

हिंदू धर्म में गाय

हिंदू धर्म का केंद्रीय तत्त्व गोरक्षा है | मैं गोरक्षा को मानव विकाश की सबसे अदभुत घटना मानता हूं | यह मानव का उदात्तीकरण करती है | मेरी दृष्टि में गाय का अर्थ समस्त अवमाननीय जगत है | गाय के माध्यम से मनुष्य समस्त जीवजगत के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करता है | गाय को देवमार्गस्तुण के लिए कम चुना गया, इसका
कारण स्पष्ट है | भारत में गाय मनुष्य की सबसे अच्छी साथिन थी | उसे कामधेनु कहा गया | वह केवल दूध ही नहीं देती थी, बल्कि उसी की बदौलत कृषि संभव हो पाई....

गोरक्ष विश्व को हिंदू धर्म की देन है | हिंदू धर्म तब तक जीवित रहेगा जब तक गोरक्षक हिंदू मौजूद हैं....

हिंदूओं की परख उनके तिलकों, मंट्रों के शुद्ध उच्चारण, तीर्थयात्राओं तथा जात-पात के नियमों के अत्योपचारिक पालन से नहीं की जाएगी, बल्कि गाय की रक्षा करने की उनकी योग्यता के आधार पर की जाएगी | (यंग, 6-10-1921, पृ. 36)

गोवध

जिस प्रकार मैं किसी गाय की रक्षा करने के लिए मनुष्य को नहीं मारूंगा, उसी प्रकार मनुष्य की रक्षा के लिए – उसका जीवन चाहे जितना मूल्यवान हो – गाय का वध नहीं करूंगा | (यंग, 18-5-1921, पृ. 156)

मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि मुझे अपने आचरण से उन लोगों के मन में जिनका मत मुझसे भिन्न है, यह विश्वास पैदा करना चाहिए कि गोवध पाप है अत: इसे बंद करना चाहिए | (यंग, 29-1-1925, पृ. 38)

गोवध कानून से कभी बंद नहीं किया जा सकता | ज्ञान, शिक्षा और गाय के प्रति दयाभाव से ही यह बंद किया जा सकता है | उन पशुओं को बचाना संभव नहीं होगा जो भूमि पर भार है, बल्कि उस मनुष्य की भी रक्षा नहीं की जा सकती जो भारस्वरूप है | (हरिर, 15-9-1946, पृ. 310)

मेरी आकांक्षा है कि गोरक्ष के सिद्धांत की मायना संपूर्ण विश्व में हो | पर इसके लिए यह आवश्यक है कि पहले भारत में गोवध की दुर्गति समाप्त हो और उसे उचित स्थान मिले | (यंग, 29-1-1925, पृ. 38)

मेरी दृष्टि में, गोरक्ष का अर्थ केवल गाय की रक्षा नहीं है | इसका अर्थ संसार के उन सभी जीवों की रक्षा है जो असहाय हैं और दुर्बल हैं | (यंग, 7-5-1925, पृ. 160)

मैं इस बात को दुर्स्थानां चाहूंगा....कि गोवध पर कानून पाबंदी गोरक्ष के कार्यक्रम का सबसे गौं पहलू है....लोग शायद यह सोचते हैं कि किसी बुराई के विरुद्ध कानून पास होते ही वह बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के समाप्त हो जाएगी | इससे बड़ी आत्मप्रवर्तन की ओर नहीं हो सकती | किसी अज्ञानी या छोटे-छोटे दुष्कुश्विरके खिलाफ बनाया गया कानून तो फिर भी कारगर हो सकता है, लेकिन ऐसा कानून कभी कामयाब नहीं हो सकता जिसका विरोध सम्मानदार और संगठित लोकमत द्वारा किया जा रहा हो या कोई कटुपंथी अत्यसंख्यक वर्म धर्म की आड़ लेकर कर रहा हो | मैं गोरक्ष के प्रश्न पर जितना ही अधिक विचार करता हूँ, मेरी यह धारणा दूर होती जाती है कि गी और गोवध की रक्षा तभी संभव है जब हम मेरे द्वारा सुझाए गए उपाय अपनाते हुए एक अविचार एवं दीर्घकालिन रचनात्मक कार्यक्रम हाथ में लें | (यंग, 7-7-1927, पृ. 219)
गोसेवा
पशुओं का संरक्षण गोसेवा का महत्वपूर्ण अंग है | भारत के लिए इसका बड़ा महत्व है...इसके लिए गंभीर अध्ययन और त्याग की भावना की तकलीफ आवश्यकता है | विद्वान धन का संचय और दान-पुण्य सच्ची व्यवसायिक क्षमता का परिचयक नहीं है | पशुओं के संरक्षण के विषय में ज्ञानर्जन, जनता के बीच उस ज्ञान का प्रसार और स्वयं को उस आदर्श के अनुरूप बनाना तथा इस कार्य के लिए रूपयां खर्च करना सच्चा व्यवसाय है। (हरि, 17-2-1946, पृ. 11)

जहां तक गोरक्षा की शुद्ध आर्थिक आवश्यकता का प्रश्न है, यदि इस पर केवल इसी दृष्टि से विचार किया जाए तो इसका हल आसान है | वे तो बिना कोई विचार किए उन सभी पशुओं को मार देना चाहिए, जिनका दूध सुख गया है। जिन पर अन्य वाले खर्च की तुलना में उनसे मिलने वाले दूध की कीमत कम है या जो बुढ़े और नाकारा हो गए हैं। लेकिन इस हृदयहीन अर्थव्यवस्था के लिए भारत में कोई स्थान नहीं है, यद्यपि विरोधाभासों की इस भूमि के निवासी वस्तुतः अनेक हृदयहीन कुलों के दोष हैं।

सरकारी उपाय
तब, पर्याप्त दूध न देसकने या किसी अन्य रूप में अलाभकर सिद्ध हो जाने पर गाय को मारे जाने से किस तरह बचाया जाए ? इस प्रश्न का समाधान, संशय में, यह हो सकता है:
(1) हिंदू गाय और गोवंश के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करें | यदि वे ऐसा करेंगे तो हमारे पशु भारत और विश्व के लिए गर्व की वजह होंगे। वर्तमान स्थिति इसके विलुप्त होने का दूसरी विवरण है।
(2) पशुपालन के विज्ञान का अध्ययन किया जाएगा | आज इस क्षेत्र में पूर्ण अराजकता है।
(3) बवधया बनाने की वर्तमान कृत्तिपूर्ण विधि के स्थान पर पक्ष के मानवीय विधियों को अपनाया जाए।
(4) भारत के पिंजरे पशुओं (बुढ़ी गायों के लिए बनी संस्थाओं) का आमूल स्वास्थ्य किया जाए। आज जिन लोगों के हाथों में इनका प्रबंध है, वे निर्तांत अज्ञात हैं और विलुप्त होने के अवसर के लिए अपने का अन्यतम दंग से लागू करते हैं।
(5) जब ये बुढ़यादी बातें की जाएं तो हम देखेंगे कि मुसलमान, अपने हिंदू भाइयों को खातर ही सही, गोमांस अथवा अन्य उद्देश्यों के लिए गोवंश करने की आवश्यकता को स्वेच्छा से स्वीकार कर लेंगे।
पाठक पाएं कि उपयुक्त अपेक्षाओं की जड़ में एक चीज है और वह है अहिंसा, जिसे सार्वभौम कारण भी कहा जा सकता है। यदि हम उस पर आचरण करने लगें तो बाकी सब कुछ आसान हो जाएगा। जहां अहिंसा है, वहां असीम धैय, आंतरिक, शांति, बिवेक, आत्मत्याग और सबे ज्ञान का वास होता है। (हरि, 31-8-1947, पृ. 300)
82. सहकारी पशुपालन

यह किसी किसान के लिए संभव नहीं है कि वह अपने पशु को अपने घर में ही रखकर उचित एवं वैज्ञानिक ढंग से उसकी देखभाल कर सके | गाय और सामान्यतः सभी पशुओं की दुर्दशा के अनेक कारणों में से एक प्रमुख कारण सामूहिक प्रयास का अभाव है |

आज दुनिया जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सामूहिक अथवा सहकारी प्रयास के आदर्श की ओर बढ़ रही है | इसमें काफी सकलता मिली है और मिल रही है | इस विवाद ने हमारे देश में भी प्रवेश पाया है, लेकिन वह ऐसे विकृत रूप में आया है कि निर्धारित लोगों को उसका लाभ नहीं मिल सका है | हमारी जनसंख्या में वृद्धि होने के साथ-साथ, औसत किसान की जीत बराबर छोटी होती जा रही है | और, व्यक्ति के पास तो प्राप्त: बहुत ही कम जमीन रह गई है |

ऐसे किसानों के लिए अपने घर में पशु रखना आसान नहीं है: लेकिन फिर भी आज यही हो रहा है | किसान अर्थशास्त्र को सर्वोपरि मानते हैं और धार्मिक, नैतिक या मानवीय दृष्टिकोण को बहुत कम महत्व देते हैं, वे पूरे जीवन के साथ यह बात कह रहे हैं कि पशुओं के चारे पर होने वाले खर्च की तुलना में उनसे होने वाली आमदनी इतनी कम है कि वसूल: पशु किसान को खाए जा रहा है | उनका कहना है कि ऐसे में सभी अनुपयोगी पशुओं का वध न कर देना बुरूंखता है | प्रश्न यह है कि मानवतावादी लोग क्या करें? इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि हम कोई ऐसा नाम निकाले जिससे केवल पशुओं का जीवन-रक्षा हो सके बल्कि वे किसान और बीमार न रहें | मैं निश्चित कह सकता हूँ कि इसमें सहकारी प्रयास बहुत हद तक हमारी सहायता कर सकता है | इस संदर्भ में, निम्नलिखित तुलना लाभकारी सिद्ध हो सकती है:

(1) सामूहिक प्रणाली के अंतर्गत कोई किसान अपने घर में पशु नहीं रख सकता, जैसा कि वह आज कर रहा है | पशु वापस को दूरित करते हैं और अपने आसपास गंदगी फैलाते हैं | पशु के साथ रहने में न बुद्धिमानी है, न मानवतावाद | आदमी पशुओं के साथ रहने के लिए नहीं बना | यदि सामूहिक प्रणाली अपना ली जाए तो घर में जो स्थान इस समय पशु के रहने के काम में आ रहा है वह किसान और उसके परिवार के लिए उपलब्ध हो जाएगा।

(2) जैसे-जैसे पशुओं की संख्या बढ़ती है, किसान का अपने घर का जीवन कठिन होता होता है | इसलिए वह बढ़ते हुए बढ़ते हैं, पशुओं का मार देता है या भूखों मर जाने के लिए घर से बाहर निकाल देता है | अगर पशुपालन सहकारिता के आधार पर होने लगे तो यह अमानवीय कृत्य बंद हो जाएगा।

(3) सामूहिक पशुपालन की स्थिति में, पशुओं के बीमार पड़ने पर उनकी चिकित्सा की व्यवस्था सुनिश्चित हो सकती | कोई वित्तीय किसान अपने बूहों पर इसका खर्च नहीं उठा सकता |
इसी प्रकार, सामूहिक प्रणाली में, कई गायों के लिए एक बड़ा सांड पाला जा सकता है | अन्यथा इसकी व्यवस्था असंभव है – कोई उपकार कर दे तो और बात है |

सहकारी प्रणाली के अंतर्गत, चरागाह या पशुओं को फिराने के लिए जमीन आसानी से उपलब्ध हो सकेगी, जबकि अपने सामान्यतया किसान को व्यक्तिगत रूप से ऐसी कई सुविधा प्राप्त नहीं है |

सामूहिक प्रणाली में चारों का खर्च भी अपेक्षाकृत कम बैठता है |

इसी प्रकार, सामूहिक प्रणाली में, कई गायों के लिए एक बड़ा सांड पाला जा सकता है | अन्यथा इसकी व्यवस्था असंभव है – कोई उपकार कर दे तो और बात है |

इससे पशुओं की नस्ल को सुधारना आसान हो जाएगा |

उपयुक्त लाभ सहकारी पशुपालन के समर्थन में पर्याप्त तरक प्रस्तुत करते हैं | इसके पक्ष में सबसे प्रबल तरक तो यही है कि हर किसान द्वारा अपने-अपने पशुओं को पालने की स्वतन्त्रता ने हमारी और हमारे पशुओं की दशा को दमनीय बनाया है | यह आवश्यक परिवर्तन करने ही हम स्वभाव को हम अपने पशुओं को बचा सकते हैं |

मेरा यह भी पक्का विश्वास है कि जब तक हम सहकारी खेती को नहीं अपनाए | तब तक खेती के पूरे फायदे हमें नहीं मिलेंगे | क्या यह बात समझना कठिन है कि हर किसान द्वारा अपने-अपने पशुओं को पालने की प्रणाली ने हमारी और हमारे पशुओं की दशा को दमनीय बनाया है | यह आवश्यक परिवर्तन करने ही हम स्वभाव को हम अपने पशुओं को बचा सकते हैं |

मेरा यह भी पक्का विश्वास है कि जब तक हम सहकारी खेती को नहीं अपनाएंगे तब तक खेती के पूरे फायदे हमें नहीं मिलेंगे | क्या यह बात समझना कठिन है कि हर किसान द्वारा अपने-अपने पशुओं को पालने की प्रणाली ने हमारी और हमारे पशुओं की दशा को दमनीय बनाया है | यह आवश्यक परिवर्तन करने ही हम स्वभाव को हम अपने पशुओं को बचा सकते हैं |

यह बात दूसरी है कि लोगों को एकाएक इस जीवन-पद्धति को चीकर करने के लिए सहमत करना कठिन हो सकता है | सीधी और संकरी सड़क पर चलना हमेशा असंभव होता है | गोसेवा के कार्यक्रम का प्रलेख चरण कठिनाइयों से भरा है | लेकिन इन कठिनाइयों का मुकाबला करके ही हम अपना रास्ता सरल बना सकते हैं |

इससे पशुपालन व्यक्तिगत पशुपालन से श्रेष्ठ है | मेरा यह भी मत है कि सामूहिक प्रणाली ही ही है, व्यक्तिगत प्रणाली गलत है | सच पूछा जाए तो व्यक्ति अपनी स्वार्थों की रक्षा सहकारिता के माध्यम से ही कर सकता है | पशुपालन के व्यक्तिगत: प्रयास ने स्वार्थ और अमानुषिकता को ही बढ़ावा दिया है, जबकि सामूहिक प्रयास इन दोनों बुराइयों को दूर नहीं तो काफी हद तक कम जरूर कर सकता है | (हरि, 5-2-1942, पृ. 39)
83. प्राकृतिक चिकित्सा

मेरा विश्वास है कि मनुष्य को दवाइयां लेने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए | हज़ार में से 999 मामले सुनियमित आहार, पानी तथा मिट्टी के उपचार और इसी तरह के घरेलू उपायों से ठीक किए जा सकते हैं। (पृ. 199)

मेरी धारणा है कि जहां स्वस्थता के निती, घरेलू और सार्वजनिक नियमों का कड़ोरता से पालन किया जाता है और आहार तथा व्यायाम के संबंध में उचित सावधानी बरती जाती है, वहां हारी-बीमारी का कोई भय नहीं होना चाहिए | जहां पूर्ण आंतरिक और बाह्य सुशिक्षा है, वहां बीमारी पास नहीं फटक सकती | अगर गांव के लोग इस बात को समझ जाएं तो उन्में डाक्टरों, हकीमों या वैद्यों की जरूरत नहीं पड़ेगी.... (हरी, 26-5-1946, पृ. 153)

वेधता जीवन

प्राकृतिक चिकित्सा में यह बात निहित है कि मनुष्य की जीवनचयाक आद होनी चाहिए और यह तभी संभव है जबकि शहरों और गांवों की रहन-सहन की परिस्थितियां आदर्श हों | एक बात और है कि प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली भगवान के नाम को अपना संबल मानकर चलती है | (वही)

प्राकृतिक चिकित्सा में यह बात निहित है कि उपचार सस्ते-से-सस्ता और सरलतम होना चाहिए | सबसे अच्छा तो यह है कि ऐसा उपचार गांवों में रहते हुए ही किया जाए | गांवों के लोग इसके लिए आवश्यक साधन और उपकरण जुटाने में समर्थ होनेवाले चाहिए | जो चीज़ गांवों में उपलब्ध न हो, वह बाहर से मंगाई जा सकती है।

प्राकृतिक चिकित्सा से स्वयं जीवन के प्रति मनुष्य के दृष्टिकोण में लाभकारी परिवर्तन आता है | वह मनुष्य को इस बात के लिए प्रेरित करती है कि वह अपने जीवन में स्वास्थ्य के नियमों का पालन करे | यह अस्पताल जाकर मुफ्त में या पैसे देकर दवाई लाने जैसी चीज़ नहीं है | जो व्यक्ति अस्पताल से मुफ्त इलाज करता है, वह दान लेता है | जो व्यक्ति प्राकृतिक चिकित्सा का आश्रय लेता है, वह कभी दान नहीं मांगता | स्वावलंबन से आत्मसम्मान में वृद्धि होती है | वह अपने शरीर से विषों को निकालकर रोगमुक्त होने के उपाय करता है और ऐसे प्रयास बरतता है कि फिर बीमार न पड़े.... (हरी, 2-6-1946, पृ. 165)

सही आहार

सही एवं संतुलित आहार आवश्यक है | आज हमारे गांव हमारी तरह ही दिवालिया हो गए हैं | गांवों में पर्याप्त सज्जियां, फल और दूध का उत्पादन प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का आवश्यक अंग है | इस पर खर्च होने वाले समय को अपब्यं नहीं मानना चाहिए | इससे सभी गांवों को और अंतः सारे भारत को लाभ अवश्य पहुँचेगा। (वही)

सही आहार

सही एवं संतुलित आहार आवश्यक है | आज हमारे गांव हमारी तरह ही दिवालिया हो गए हैं | गांवों में पर्याप्त सज्जियां, फल और दूध का उत्पादन प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली का आवश्यक अंग है | इस पर खर्च होने वाले समय को अपब्यं नहीं मानना चाहिए | इससे सभी गांवों को और अंतः सारे भारत को लाभ अवश्य पहुँचेगा। (वही)
प्राकृतिक चिकित्सा का सार यह है कि हम स्वास्थ्य-रक्षा और स्वच्छता के नियमों को समझिए और उनका तथा उचित पोषण से संबंधित नियमों का पालन करें। इससे हर आदमी अपना डाक्टर स्वयं बन जाता है।

जो व्यक्ति जीवित रहने के लिए भोजन करता है, जो पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु, इन पंचतत्वों के साथ में भर रखता है और इन सबके सृष्टि ईश्वर का सेवक है, वह कभी बीमार पड़े भी तो उसे भगवान पर भरोसा करें हैं। चित्त को शांत रखना चाहिए और, अंत समय आ ही जाए तो शांतिपूर्वक प्राण त्याग कर देना चाहिए।

अगर उसके गांव के खेतों में कोई बृक्षक जड़ी-बूटियां हों तो वह उनका सेवन कर सकता है। करोड़ों लोग इसी प्रकार सहज भाव से जीते और मरते हैं। वे जानते हैं कि क्या होता है, देखने की तो बात दूर है।

बीमारी

बीमारी प्रकृति के नियमों को अज्ञातता या जान-बूझकर भंग करने से पैदा होती है। इसका अर्थ यह हुआ है कि हम समय रहते और उन नियमों का पालन करने लगे तो पुनः स्वास्थ-लाभ कर सकते हैं। जिस व्यक्ति ने प्रकृति का लंबे समय तक निरंतर उल्लंघन किया है, उसे या या प्रकृति द्वारा दिए गए दंड को भगवान होगा या उससे बचने के लिए, आवश्यकतानुसार, कायमिक या शरीरिक की सहायता लेखी होगी।

गांवों के लिए है

प्राकृतिक चिकित्सा की मेरी योजना केवल ग्रामवासियों और गांवों के लिए है। इसलिए उसमें सूक्ष्मदर्शियों, एक-दूसरे आदि के लिए कोई स्थान नहीं है। न उसमें कुनैन, इमेटिन और पेनिसिलिन जैसी दवाइयों का कोई काम है। उसमें तो बुनियादी महत्व व्यक्तिगत स्वच्छता और स्वास्थ्यकर जीवन-प्रदूष का है। बस, ये ही काफी है।
यदि प्रत्येक व्यक्ति इस कला में पारंपरित हो जाए तो बीमारी रहेगी ही नहीं | और यदि प्रकृति के सभी नियमों का पालन करते हुए भी बीमारी पुस्तक के सबसे कारगर इलाज रामनाम है | लेकिन रामनाम का इलाज पत्थर से जबकि ही सबके लिए विचार सिद्ध नहीं हो सकता | मरीज में आस्था जगाने के लिए यह आवश्यक है कि चिकिस्म वस्तुंत करते हुए भी बीमारी घुस आए तो सबसे कारगर साधन हैं। | (वहीं, पृ. 260)

आइए, हम वस्तुंत: ग्राममुखी हो जाएं | हमारे पास गांव के बच्चे और वयस्क लोग आते हैं | हम उन्हें जीने के सच्चे ढंग की सीख दें | डाक्टरों का कहना है कि 99 प्रतिशत बीमारियां गंदगी, गलत भोजन और अपोषण के कारण होती हैं | यदि हम इस 99 प्रतिशत को जीने की कला सिखा सकें और शेष 1 को भूल भी जाएं तो कोई बात नहीं…हो सकती है, उन्हें चिकिस्म के लिए कोई लोकोपकारी डाक्टर मिल जाए… | उनकी चिंता करने की हमें आवश्यकता नहीं है | (हरर, 1-9-1946, पृ. 286)

मैं जानना चाहूंगा कि डाक्टर और वैज्ञानिक देश के लिए क्या कर रहे हैं ? वे विशेष बीमारियों की चिकिस्म के नये तरीकों को सीखने के लिए विदेश जाने को सदा तपर रहते हैं | मेरा आग्रह है कि वे भारत के साथ लाख गांवों की ओर ध्यान दें | वे पाएंगे कि ग्रामसेवा के लिए सभी योग्यताप्राप्त स्त्री और पुरुष विकिस्मों की आवश्यकता है; यह अवश्य है कि वह ग्रामसेवा पूर्ण ढंग की होगी, पाश्चात्य ढंग की नहीं | तब वे स्वयं को अनेक देसी प्रणालियों के अनुकूल बना लेंगे। | भारत के गांवों में जब स्वयं ही औषधियों का अक्षय भंडार पैदा होता है तो हमें पक्षिम से दवाइयां मंगाने की कोई जरूरत नहीं है | लेकिन दवाइयों से ज्यादा जरूरी यह है कि डाक्टर लोग ग्रामवासियों को जीने का सही ढंग सिखाएं | (हरर, 15-6-1947, पृ. 184-85)
84. सामूहिक स्वच्छता

नागरिक विवेक

सामूहिक स्वच्छता तभी सुनिश्चित की जा सकती है जब सामूहिक विवेक हो और सार्वजनिक स्थानों को स्वच्छ रखने के प्रति सामूहिक आयार हो | हमारी सड़कों और निजी तथा सार्वजनिक शौचालयों की गंदगी के लिए बहुत हद तक हमारी छूआँकू जिम्मेदार है | आरंभ में, छूआँकू स्वच्छता का एक नियम था, जो भारत को छोड़कर दुनिया के सभी भागों में आज भी है | नियम यह है कि अस्वच्छ व्यक्ति या वस्तु अस्वच्छ है, लेकिन उसकी अस्वच्छता दूर होते ही वह अस्वच्छ नहीं रह जाती | तदनुसार, सफाई करने वाला व्यक्ति, वह चाहे पैसे लेकर काम करने वाला मेहतर हो या निशुल्क काम करने वाली हमारी मां हो, तभी तक अस्वच्छ है जब तक कि उसने गंदगी दूर करने के बाद अपनी सफाई नहीं कर ली है | (हरर, 11-2-1933, पृ. 8)

नगरपालिकाएं

कोई नगरपालिका कर लगाकर या स्वेतन कर्मचारी रखकर नगर की गंदगी और भीड़-भाड़ से पार नहीं पा सकती | यह महत्वपूर्ण सुधार धनी और निर्धन, सभी लोगों के स्वैच्छिक सहयोग से ही संभव है | (यंग, 26-11-1925, पृ. 416)

मैं यदि किसी परिषद या नगरपालिका की सीमाओं में निवास करने वाला करदाता होता तो जब तक कि हमारे पैसे के चौगुड़े के बराबर की सेवाएं हमें न मिलतीं तब तक अतिरिक्त करों के रूप में एक पैसा भी न देता और अन्य लोगों की भी ऐसी ही करने का प्रारंभ देता | जो लोग हमारे प्रतिनिधि बनकर स्थानीय परिषदों या नगरपालिकाओं में जाते हैं, उन्हें समझना चाहिए कि वे वहाँ समान पाने या आपस में स्पर्धा करने के लिए नहीं बल्कि प्रेमजन्य सेवा के लिए गए हैं जिसके लिए धन की आवश्यकता नहीं होती | हमारा देश कंगाल है | यदि हमारे नगरपालिका-पार्षदों में सेवा की सच्ची भावना होगी तो वे अवैतनिक झाड़ूवाले, मेहतर और सड़क बनाने वाले मज़दूर के रूप में काम करने के लिए आगे आएंगे और इसमें गवर्न में अनुभव करेंगे | वे अपने उन साथी पार्षदों को भी, जो कांग्रेस की टिकट पर चुन कर नहीं आएं, अपने साथ श्रम करने के लिए आमंत्रित करेंगे और अगर उन्हें अपने जोड में विश्वास है तो उनका आमंत्रण व्यर्थ नहीं जाएगा | इसका अर्थ यह है कि नगरपालिका का पार्षद पूर्णकालिक होना चाहिए | उसका कोई निजी स्वार्थ नहीं होना चाहिए | अगला कदम यह हो कि नगरपालिका अथवा स्थानीय परिषद की सीमा में निवास करने वाली सारी
वयस्क जनसंख्या की सूची तैयार की जाए | सभी से नगरपालिका के कार्यकलाप में अपना योगदान करने के लिए कहा जाए | एक नियमित रजिस्टर रखा जाए | जो इतने निर्धारित है कि द्रव्य के रूप में कोई अंशदान नहीं कर सकते पर समर्थन हैं और शासीक रूप से सक्षम हैं, उन्हें श्रमदान करने के लिए कहा जा सकता है | (हरि, 18-2-1939, पृ. 22)

प्रकृति के विरुद्ध अपराध
कोई व्यक्ति जो लापरवाही से यहाँ-वहाँ धूककर, कूड़ा-करकट फेंककर या किसी अन्य रूप में जमीन को गंदा करके वायु को दूषित करता है, वह मनुष्य और प्रकृति, दोनों के प्रति पाप करता है | मनुष्य का शरीर भगवान का मंदिर है | जो व्यक्ति इस मंदिर में प्रवेश करने वाली वायु को दूषित करता है, वह मंदिर को अपवित्र करता है | वह कितना ही रामनाम जपे, सब बेकार है | (हरि, 7-4-1946, पृ. 69)

राष्ट्रीय अथवा सामाजिक स्वच्छता की भावना हमारे गुणों में सम्मिलित नहीं है | हम स्नान तो करते हैं, पर उस कुंए या तालाब अथवा नदी को गंदा करने से नहीं चुकते जिसके किनारे या जिसमें हम नहाते-धोते हैं | मैं इस दोष को बड़ी भारी बुराई मानता हूं जो हमारे गांवों और पवित्र नदियों के पवित्र कूलों की दुर्दशा तथा गंदगी से पैदा होने वाली बीमारियों के लिए जिम्मेदार है | (काप्रो, पृ. 15)
85. सांप्रदायिक सद्भाव

मेरे जीवनकाल में नहीं तो मेरी मृत्यु के बाद हिंदू और मुसलमान, दोनों इसके साक्षी होंगे कि मेरे सांप्रदायिक शांति की लालसा कभी नहीं छोड़ी थी। (यंग, 11-5-1921, पृ. 148)

मेरी लालसा है कि, यदि आवश्यक हो तो, मैं अपने रक्त से हिंदू और मुसलमानों के बीच संबंधों को दृढ़ कर सकूं। (यंग, 25-9-1924, पृ. 314)

मेरी लालसा है, उतना ही मुसलमानों को भी करता हूं। मेरे हृदय में जो भाव हिंदुओं के लिए उठते हैं, वही मुसलमानों के लिए भी उठते हैं। यदि मैं अपना हृदय बिकार दिखा सकता तो आप पते कि उसमें कोई अलग-अलग खाने नहीं हैं, एक हिंदुओं के लिए, दूसरा मुसलमानों के लिए, तीसरा किसी और के लिए, आदि-आदि। (यंग, 13-8-1921, पृ. 215)

एकता का अर्थ

मैं अपनी युवावस्था के आरंभ से ही हिंदू-मुसलम एकता का दीवाना रहा हूं। कई उत्तम कोटि के मुसलमान मेरे अन्यतम मित्र हैं। इस्लाम की एक भक्ति मेरी पुत्री के समान है। वह हिंदू-मुसलम एकता के लिए जीती हैं और इसके लिए खुशी-खुशी अपने जन स्वागत कर देगी। जब मैं अपनी मस्जिद के मुअज्जन का बेटा मेरे आश्रम का पक्का संवासी रह चुका हूं। (हरर, 30-4-1938, पृ. 99)

हिंदू-मुसलम एकता का अर्थ यह है कि हमारा समान प्रयोजन हो, समान ध्येय हो और समान गम हों। हम एक-दूसरे के गमों में साझी होकर और परस्पर सहजाता की भावना रखकर एक-दूसरे के साथ सहयोग करते हुए अपने सामान्य लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। तो यह हिंदू-मुसलम एकता की दिशा में सबसे मजबूत कदम होगा। (यंग, 25-8-1920, पृ. 3)

हिंदू-मुसलम एकता का अर्थ केवल हिंदुओं और मुसलमानों के बीच एकता नहीं है, बल्कि उन सब लोगों के बीच एकता है जो भारत को अपना घर समझते हैं। उनका धर्म चाहे जो हो। (यंग, 11-5-1921, पृ. 148)

हमारी मैत्री का आधार प्रेम है, जो धर्म का भी आधार है। मैं प्रेम के अधिकार के बल पर मुसलमानों से मैत्री चाहता हूं। यदि मैं एक सांप्रदायिक भी प्रेम पर आरूढ़ रहे तो हमारे राष्ट्रीय जीवन में एकता की समस्या कभी पैदा नहीं होगी। (यंग, 20-10-1921, पृ. 333)

एक परिवार

सर्वोत्तम उपाय विश्व-मैत्री है जिसका अर्थ है, समस्त मानवों को अपने परिवार के सदस्य मानना। जो व्यक्ति अपने परिवार और दूसरे परिवार के सदस्यों के बीच भेद करता है, वह अपने ही परिवार के सदस्यों की कुश्किल का दोषी है और मनुष्यता तथा अधर्म का मार्ग प्रशास्त करता है। (हरर, 17-11-1946, पृ. 402)
सांप्रदायिक उपद्रव

सांप्रदायिक अव्यवस्था एक बहुपुष्पी रक्षस है | यह उसके लिए जिम्मेदार लोगों सहित अंतत: सभी को क्षति पहुंचाता है | (हरी, 15-9-1940, पृ. 284)

यदि एक पक्ष जवाबी कार्रवाई बंद कर दे तो उपद्रव जारी नहीं रह सकता | (हरी, 14-7-1946, पृ. 219)

गलत काम करने वाले व्यक्ति के सहारा ही राक्षस रहता है | यह उसके लिए शलए शजम्मेदार लोगों सशहत अंतत: सभी को क्षति पहुंचाता है | (हरी, 17-11-1946, पृ. 408)

इस्लाम में और हिंदू धर्म में ऐसे लोग पैदा होने चाहिए जिनका चरित्र अपेक्षित निम्न हो और जो गुंडों के बीच जाकर काम करें | (यंग, 29-8-1924, पृ. 181)

हम गुंडों का हृदय-परिवर्तन करेंगे और उन्हें नियंत्रित करेंगे | (हरी, 7-4-1946, पृ. 74)

किसी भी अच्छे धर्म में, चाहे हिंदू या कोई और हो, गुंडागर्दी के लिए कोई स्थान नहीं है | (हरी, 5-1-1947, पृ. 478)

धर्मों के प्रति आदर

प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे के धर्म का आदर करना चाहिए और उसके अपकार की बात मन में भी नहीं लानी चाहिए | (यंग, 7-5-1919)

ऐसे किसी प्रचार की अनुमति नहीं दी जा सकती जो दूसरे धर्मों की निंदा करता हो | (यंग, 29-5-1924, पृ. 180)

एक-दूसरे के धर्म की निंदा करना, गैर-जिम्मेदारियां वक्तव्य देना, भूल बोलना, निर्दोष लोगों के सिर फोड़ना, मंदिरों या मस्जिदों को अपवित्र करना भगवान को नकारना है | (यंग, 25-9-1924, पृ. 313)

सांप्रदायिक समस्या के समाधान की कुंजी यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्म की सर्वोच्च बातों को माने और अन्य धर्मों तथा उनके मानने वालों को उतना ही सम्मान दे | (हरी, 4-1-1948, पृ. 497)

प्राचीन संस्कृति के गुड़ कोशों की खोज का प्रयास करते हुए मुझे यह अनुमान रच हाथ लगा है कि प्राचीन हिंदू संस्कृति के सनातन तत्व ईसा, बुद्ध, मुहम्मद और जरदुश्त के उपदेशों में भी मौजूद हैं | (विगंगसी, पृ. 131)

हिंदू धर्म ने विश्व के सभी धर्मों की उत्कृष्ट बातें आमसाम तक किए हैं और इस अर्थ में यह कोई एकातिक धर्म नहीं है | (हरी, 28-9-1947, पृ. 349)

तलवार इस्लाम की प्रतीक नहीं है | लेकिन इस्लाम ऐसे पथरवर रहने का जीवन हाथ लगा है | (हरी, 30-12-1926, पृ. 458)
इस्लाम का विशेष योगदान है....ईश्वर के एकत्व में उसका हड़ताल विश्वास और अपने अनुयायियों के बीच भाईचारे की सच्चाई की व्यावहारिक प्रयुक्ति | (यंग, 21-3-1929, पृ. 95)

‘इस्लाम’ शब्द का अर्थ है ‘शांति’ | शांति केवल मुसलमानों तक सीमित नहीं रखी जा सकती | उसका अर्थ संपूर्ण विश्व की शांति होना चाहिए | (यंग, 22-8-1940, पृ. 294)

धर्मांतरण

बलात धर्म-परिवर्तन के दिन अब लद गए | (यंग, 11-5-1921, पृ. 148)

एक धर्म को छोड़कर दूसरे धर्म को अंगीकार करने और प्रतिस्पर्धी धर्मों का खंडन करने से ही परस्पर घृणा की भावना पैदा होती है | (यंग, 6-1-1927, पृ. 1)

कुरान में ऐसा कुछ नहीं है जो धर्मपरिवर्तन के लिए बलप्रयोग का समर्थन करता है |371 (यंग, 29-9-1921, पृ. 307)

जिस प्रकार हम नागरिक समस्याओं को लेकर एक-दूसरे का सिर नहीं फोड़ते उसी प्रकार हमें धार्मिक मामलों में भी यह नहीं करना चाहिए | (यंग, 29-5-1924, पृ. 176)

मुझे विश्वास है कि अगर नेतागण लड़ने पर उतारना हो तो आम जनता लड़ना नहीं चाहेगी | इसलिए अगर नेता इस बात के लिए तैयार हो जाएं कि अन्य उत्तर देशों की तरह वे भी अपने आपसी झगड़ों को बर्बर और अधार्मिक मानक सार्वजनिक जीवन से मिटा देंगे तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि आम जनता चुपचाप उनका अनुगमन करेगी | (हरी, पृ. 182)

मध्यस्थता (बीच-बचाव)

बीच-बचाव और मध्यस्थता ऐसी पद्धति है जो जमाने से चली आ रही है और यह एक सभ्य पद्धति है | (हरी, 24-5-1942, पृ. 166)

परस्पर सहिष्णुता सभी कालों और सभी प्रजातियों के लिए एक आकाशशक्ति गुण है | (यंग, 25-2-1920, पृ. 3)

ईमानदार लोकमत व्यक्ति को इन्हें अपने हाथों में नहीं लेने देता और हर विवादास्पद मामला या तो किसी आपसी मध्यस्थ को सोप दिया जाना चाहिए या कानूनी अदालतों को.... (यंग, 5-6-1924, पृ. 188)

मस्जिदों के सामने बाजा

जहां हिंदू इस प्रथा का जान-बुझकर पालन करते आ रहे हैं कि वे मस्जिदों के सामने बाजा बंद कर देते हैं, वहां उन्हें इस प्रथा को तोड़ना नहीं चाहिए | लेकिन जहाँ वे बिना रोकटोक बाजा जारी रखते आ रहे हैं वहां यह प्रथा
जारी रहनी चाहिए | जहां झागड़े का अंदेशा है या तथ्यों पर मतभेद है वहां दोनों को मामला मध्यस्थ के सुपूर्द कर देना चाहिए | (यंग, 18-9-1924, पृ. 312)

गाय
गोरखा हिंदुओं का धर्म है, लेकिन अहिंदू के विरूद्ध बल-प्रयोग करके गाय की रक्षा करना उसका धर्म कदापि नहीं हो सकता | (हरर, पृ. 311)

....हिंदू बहुसंख्यकों के लिए यह अ-बुद्धिमत्तापूर्ण....और अनुविचित होगा, कि वे अत्यंत संख्यक मुसलमानों पर, गोरखा के कानून निषेध को मानने के लिए बल का प्रयोग करें | (यंग, 29-1-1925, पृ. 38)

लिपियाँ
हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा हिंदी और उर्दू लिपियों को अपनाने की मेरी सलाह एकात्मक पद्धति पर आधारित है | (हरर, 1-2-1942, पृ. 27)

नौकरीयाँ
यदि हम सरकारी विभागों में सांप्रदायिक भावना फैलाएँगे तो यह सुशासन के लिए घातक होगा |381 (यंग, 29-5-1924, पृ. 182)

अत्यंत संख्यक पूरा-पूरा न्याय पाने के हकदार हैं | कुशलता और योग्यता ही एकमात्र कसौटी होनी चाहिए .... (हरर, 27-7-1947, पृ. 250)

सहिष्णुता
जिस एकता की हमें कामना है, वह तभी बनी रह सकती है जब हम एक-दूसरे के प्रति लचीली और उदार मनोवृत्ति का विकास करें | (यंग, 11-5-1921, पृ. 148)

सहिष्णुता ही वह चीज़ है जो भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायियों को अच्छे पड़ोसियों और मित्रों के रूप में रहने में मदद करेगी | (हरर, 3-11-1946, पृ. 383)

पंथनिरपेक्षता
संप्रदायवाद से राष्ट्रवाद बड़ा है | इस अर्थ में हम पहले भारतीय हैं और उसके बाद हिंदू, मुसलमान, पारसी और ईसाई हैं |385 (यंग, 26-1-1922, पृ. 62)
राज्य के लिए पूरी तरह पंथनिरपेक्ष होना अनिवार्य है....तदनुसार, कानून की नजरों में सभी लोग बराबर होंगे | लेकिन प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी रोकटक के अपने धर्म का पालन करने के लिए स्वतंत्र होगा बशर्त कि वह सामान्य विधि का अतिक्रमण न करे | (हरिं, 31-8-1947, पृ. 297)

समकक्ष नागररकता
अत्यंतश्चककों को इस बात की प्रतीति कराई जानी चाहिए कि जिस राज्य में वे रहते हैं, उसके वे उतने ही मूल्यवान नागररक हैं जितने कि बहुसंख्यक वर्ग के लोग हैं | (हरिं, 7-9-1947, पृ. 310)
अगर बहुसंख्यक हिंदू अपने धर्म और कर्तव्य को बहुमूल्य समझते हैं तो वे हर क्रिया पर न्यायोचित व्यवहार करेंगे | वे अत्यंतश्चककों की कमियों या तुटियों पर ध्यान नहीं देंगे, क्योंकि अत्यंतश्चक न्याय पाने के लिए केवल उन्हीं वर्ग अवलंबित हैं | (हरिं, 31-8-1947, पृ. 298)
आपको मुसलमानों को समकक्ष नागररक मानना चाहिए | बराबरी के व्यवहार का तकाजा है कि उद्धर लिपि को आदर की दृष्टि से देखा जाए | (हरिं, 26-10-1947, पृ. 383)
अत्यंतश्चक वर्ग कितना ही छोटा हो, उसे यह अनुभव नहीं होना चाहिए कि उसका दमन किया जा रहा है | भाषा, लिपि आदि के प्रश्नों को बड़ी नरमाई से सुलझाए चाहिए | (वहीं, पृ. 387)
हिंदू-मुसलमान के मसले पर मेरा एकमात्र ध्येय यह है कि इसका पूर्ण समाधान तभी होगा जब भारत या पाकिस्तान में रहने वाले अत्यंतश्चक अपने को पूरी तरह सुरक्षित अनुभव करेंगे, चाहे वह संख्या में एक ही रह जाए | (हरिं, 14-9-1947, पृ. 323)
हिंदू और सिख लियों को मुसलमान बहनों के पास जाकर उनसे मित्रता स्थापित करनी चाहिए | उन्हें चाहिए कि वे मुसलमान बहनों को लौहारों और उस्तावों पर नियंत्रित करें और इसी प्रकार मुसलमान बहनें उन्हें नियंत्रित करें | मुसलमान लड़कियों और लड़कों को सांप्रदायिक विद्यालयों की बजाए सामाजिक विद्यालयों में प्रवेश लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाए | उन्हें खेलकुद में मिल-जुलकर भाग लेना चाहिए | (हरिं, 25-1-1940, पृ. 536)
13. स्वदेशी

86. चरखे का दिव्य संदेश

निर्धन के लिए

मैं जब-जब चरखे पर सूत कातता हूँ तो मुझे भारत के निर्धन लोगों का स्मरण हो आता है | मध्यम वर्ग अथवा धनवानों से भी अधिक, भारत के निर्धन लोगों ने आज ईश्वर में अपना विश्वास खो दिया है | भूख से तड़पते आदमी के लिए, जिसकी एकमात्र कामना अपना पेट भरने की है, उसका पेट ही उसका ईश्वर है | उसे जो भी रोटी देगा, वह उसी को अपना मालिक मानेगा | उसे संभवतः उसी में भगवान के दर्शन भी होंगे | ऐसे लोगों के लिए चरखे का विद्वान शेरीफ ने आज ईश्वर में अपना स्वप्न खो दिया है | मध्यम वर्ग अथवा धनवानों से भी अशधक, भारत के निर्धन लोगों ने आज ईश्वर में अपना स्वप्न खो दिया है | भूख से तड़पते आदमी के लिए, जिसकी एकमात्र कामना अपना पेट भरने की है, उसका पेट ही उसका ईश्वर है | उसे जो भी रोटी देगा, वह उसी को अपना मालिक मानेगा | उसे संभवतः उसी में भगवान के दर्शन भी होंगे | ऐसे लोगों को भक्ति देना जो समथािंग हैं, अपने को और उन्हें, दोनों को भक्ति करना है | वस्तुतः उन्हें किसी तरह का काम-ध्वान चाहिए और अन्य से सूत कातना ही वह एकमात्र काम है जो करोड़ों लोगों को रोजगार दे सकता है | जयसंभर ने अपने कुटे को तप अथवा परमप्रसाद माना है | और वस्तुतः उन्हें किसी रोटी देना जो समथािंग हैं, अपने को और उन्हें, दोनों को भक्ति करना है | वस्तुतः उन्हें किसी तरह का काम-ध्वान चाहिए और अन्य से सूत कातना ही वह एकमात्र काम है जो करोड़ों लोगों को रोजगार दे सकता है |

....मैंने अपनी कताई को तप अथवा परमप्रसाद माना है | और चूंकि मुझे विश्वास है कि जहां निर्धनों के प्रति विश्वास और सक्रिय प्रेम है वहां भगवान का वास भी है, अत: मैंने अपने चरखे से काता गए हर सूत में भगवान के दर्शन होते हैं | (यंग, 20-5-1926, पृ. 187)

....चरखा करोड़ों देशवासियों के साथ हमारा तादात्म्य कराता है | लखपति सोचते हैं कि पैसा उन्हें दुनिया की हर चीज मुहैया करा सकता है | लेकिन ऐसा नहीं है | मृत्यु किसी भी क्षण आकर उनका जीवन-दीप बुझा सकती है | जीवन से हाथ धोना....और ‘स्वयं’ को मिटा देना एक ही बात नहीं है | मनुष्य को भगवत्प्रसाद के लिए लागे के रूप में स्वामी में अपनी असही अथवा अहंकार को मिटाने का पाठ सीखा पड़ता है | चरखे में कोई अनन्यता नहीं है | यह निर्धनतम व्यक्ति सहित सभी का है | इसलिए वह हमसे विनोबा बनने और अपने गर्व को पूरी तरह मिटा देने की अपेक्षा रखता है | (हरर, 13-10-1946, पृ. 345)

देश की निर्धनता को दूर करने के लिए कुटीर उद्योग के पुनरुज्जीवन की आवश्यकता है, कुटीर उद्योगों के पुनरुज्जीवन की नहीं | बस एक उद्योग का पुनरुज्जीवन ही जाए तो अन्य सभी उद्योग उसका अनुमान कर सकेंगे....मैं सुहृद ग्रामजीवन के निर्माण के लिए चरखे को आधार बनाऊंगा | मैं चरखे को सारे कार्यक्रम का केंद्र बनाऊंगा | (यंग, 21-5-1925, पृ. 176,177)

चरखा का संदेश

मेरा....दावा है कि चरखा सर्वाधिक सहज, सरल, सस्ते और व्यावहारिक ढंग से हमारे आधिक क्लेश की समस्या का समाधान कर सकता है....यह राष्ट्र की समृद्धि का और इसीलिए, स्वतंत्रता का प्रतीक है | यह वाणिज्यिक युद्ध का नहीं, अपितु वाणिज्यिक शांति का प्रतीक है | (यंग, 8-12-1921, पृ. 406)
चरखे का संदेश उसकी परिधि से अधिक व्यापक है | उसका संदेश है सादगी, मानव जाति की सेवा, इस प्रकार जीना कि दूसरों को कष्ट न पहुँचे, धनवानों और निर्धार, पूंजी और श्रम तथा राजा और रंक के बीच अमित संबंधों की स्थापना | इतना व्यापक संदेश तो स्वभावत: सभी के लिए हुआ | (यंग, 17-9-1925, पृ. 321)

चरखे का संदेश वस्तुतः शोषण की भावना के स्थान पर सेवा की भावना को प्रशतशष्ठत करने का है | पश्चम का प्रमुख स्वर शोषण का स्वर है | मेरी कतई इच्छा नहीं है कि हमारा देश उस भावना अथवा उस स्वर की नकल करे | (यंग, 2-2-1928, पृ. 34)

मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि चरखे के पास अमरीका और सारी दुनिया को देने के लिए संदेश है | लेकिन इसका समय तब आएगा जब भारत दुनिया को वह दिखा देगा कि उसने चरखे को पूरी तरह अंगीकार कर लिया है; अभी यह स्थिति नहीं है | दोष चरखे में नहीं है | मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि भारत और विश्व का ज्ञान चरखे के विश्वसंदेश है | यदि भारत मशीन का गुलाम बन गया तो, मेरा कहना है कि, दुनिया को भगवान ही बचाए | (यंग, 17-11-1946, पृ. 404)

सादगी की ओर वापसी

अगर मैं भोगवादी आधुनिक कृतिम जीवन के विरुद्ध प्रचार करता हूँ और स्त्रियों तथा पुरूषों को सादा जीवन, जिसका प्रतीक चरखा है, की ओर लौटने के लिए प्रेरित करता हूँ तो वह इसलिए कि मैं जानता हूँ कि समझदारी के साथ सादगी की ओर लौटने के लिए प्रेरित हूँ | यदि भारत मशीन का गुलाम बन गया तो, मेरा कहना है कि, दुनिया की भगवान ही बचाए | (यंग, 21-7-1921, पृ. 228-29)

मेरा विश्वास है कि भारत को अहिंसा के अलावा और कोई रास्ता माफिक नहीं आएगा | भारत के लिए उस धर्म का प्रतीक चरखा है, क्योंकि केवल चरखा ही विपिनों से प्रस्त लोगों का मित्र है और निर्धारों को समृद्धि देने वाला है | प्रेम का नियम स्थान तथा काल की सीमाओं को नहीं जानता | इसलिए मेरे स्वराज में भगियों, तेड़ों, डूबलों और दुर्बलतम व्यक्तियों के लिए भी स्थान है और मैं चरखे के अलावा और कोई ऐसी चीज़ नहीं जानता जो इन सबकी मित्र हो | (यंग, 8-1-1925, पृ. 18)

जीवन का चक्र

मानसिक शांति के लिए चरखा कातिये | चरखे का संगीत आपकी आक्ता के लिए मरहम का काम करेगा | मेरा विश्वास है कि हम जो सूत कातते हैं वह हमारे जीवन के दूरे ताने-बाने की जोड़ने का सामर्थ्य रखता है | चरखा अहिंसा का प्रतीक है जिस पर, यदि हम सच्चा जीवन जीना चाहते हैं तो, संपूर्ण जीवन आधारित होना चाहिए | (हरिद, 27-4-1947, पृ. 122)
चरखे से कुछ लोगों को शांति के समाराम अशोक का स्मरण हो आएगा जिन्होंने एक साम्राज्य की नींव रखी थी, किंतु सत्ता का सारा वैभव और आंदोलन कहाँ किया अंतः लोगों के हृदय के निर्विवाद समार बन गए और जिन्होंने उस समय के सभी ज्ञात धर्म का प्रतिनिधित्व किया। यदि हम चरखे में उस नियम के चक के दर्शन करें जो दया और प्रेम के जागृत सागर के साथ जुड़ा है तो यह चरखे की युक्तियुक्त स्मृति होगी।

चरखे की इस प्रकार स्मृति करने पर यह करोड़ों मानवों के जीवन को अर्थवान बनाता है। अशोक कच्छ के साथ इसकी तुलना करने और इसे उससे व्युत्पन्न नननाने का अर्थ है साधारण-से दिखने वाले चरखे में प्रेम के देवी नियम के सदा प्रवर्तनशील कच्छ के पालन की आवश्यकता को स्वीकार करना।

चरखा आश्रम की प्रारंभिक का एक अनिवार्य अंग बन गया है। यह स्मृति के साथ जोड़ दिया गया है जिसका कारण यह है कि हम चरखे की निर्धारण की मुद्दत का एकमात्र आशा मानते हैं।

चरखे की इस प्रकार स्मृति करने पर उस का प्रतीक मानते हुए उसे ईश्वर की धारणा के साथ जोड़ दिया गया है जिसका कारण यह है: हम चरखे को नक्षत्रों की एकमात्र आशा मानते हैं।

मेरा दावा है: हम स्मृति की सर्वव्यापी बनाने से और चरखे के उद्देश्यों को पूरी जानकारी का प्रारंभ करने से ही भारत जैसे विशाल देश की जड़ता समाप्त की जा सकती है।

कताई का वर्णन

जिस प्रकार हमें से हर व्यक्ति के लिए खाना-पीना और कपड़े पहनना आवश्यक है उसी प्रकार हमें से हरएक को स्वयं कताई भी करनी चाहिए।

मेरा दावा है कि इसकी यह स्मृति के साथ जोड़ दी जाए तो हम यह स्मृति के साथ जोड़ दिया जाए।

कताई का वर्णन

मेरा दावा है कि इसकी यह स्मृति के साथ जोड़ दी जाए तो हम यह स्मृति के साथ जोड़ दिया जाए।

यदि भारत की हर स्मृति कताई शुरू कर दे तो देश में निश्चित रूप से एक मौन क्रांति आ जाएगी जिसका अधिकतम लाभ जवाहरलाल नेहरु जैसा नेता उठा सकता है।

यदि भारत की हर स्मृति कताई शुरू कर दे तो देश में निश्चित रूप से एक मौन क्रांति आ जाएगी जिसका अधिकतम लाभ जवाहरलाल नेहरु जैसा नेता उठा सकता है।
चरखे का वैज्ञानिक अध्ययन हमें समाजशास्त्र की ओर ले जाएगा | जब तक हम चरखे से संबंधित विविध विज्ञानों का गहन अध्ययन नहीं करेंगे तब तक चरखा हमारे हाथों में भारत की स्वाधीनता का प्रभावी अस्त नहीं बनेगा | यदि हमने ऐसा किया तो यह न केवल भारत को स्वतंत्र कराएगा, अपितु पुरी दुनिया को मार्ग दिखाएगा | (हरी, 31-3-1946, प. 59)

“आज़ादी की वर्दी”

...एक और जहां खादी गरीब के लिए रोटी कमाने का एक समानानीय व्यवसाय है वहां यह अहिंसक तरीकों से देखते हमें समाज की ओर ले जाएगा | जब तक हम चरखे से संबंधित शवज्ञानों का गहन अध्ययन नहीं करेंगे तब तक चरखा हमारे हाथों में भारत की स्वाधीनता का प्रभावी अस्त नहीं बनेगा | (हरी, 28-4-1946, प. 104)

सन् 1908 में, दक्षिण अफ्रीका में, मेरी यह धारणा बनी शकती कि अगर निर्धनता से ग्रस्त भारत को विदेशी हुकुमत के जुए से मुक्त कराना है तो उसे चरखा और हाथ से कते खादी गांव को गुलामी का नहीं बलि आज़ादी का प्रतीक मान लेना चाहिए | इससे निर्धन व्यक्ति को अपनी जीवन आय में धोड़ी-बहुत वृद्धि करने का भी लाभ मिलता है | (हरी, 22-9-1946, प. 320)

मेरी दृष्टि में खादी भारतवासियों की एकता, उनकी आर्थिक स्वाधीनता और समानता का प्रतीक है | अतः जवाहरलाल नेहरु की कायमत भाषा में यह अंततः “भारत की आज़ादी की वर्दी” है |

इसके अलावा, खादी की मानसिकता का अर्थ है जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन और वितरण का विकेंद्रीकरण | इसलिए अभी जो सूत्र तैयार किया गया है वह यह है कि प्रत्येक गांव अपनी जरूरत की सभी चीजों का उत्पादन करे और साथ में, शहरों की आवश्यकताओं के लिए भी कुछ अतिरिक्त माल तैयार करे | भारी उद्योग निक्षिप ही केंद्रीकृत और राष्ट्रीयकृत होंगे | लेकिन विशाल राष्ट्रीय उपक्रम में जो मुख्तार गांवों में होगा, भारी उद्योगों का स्थान अत्यन्त साधारण रहेगा |....

इस केंद्रीय ग्राम उद्योग और संबंध हस्तशिल्पों के निर्धयतापूर्वक विनाश के बाद से बुद्धिमत्ता और प्रतिभा गांवों से पलायन कर गई है जिससे गांव बुद्धीहीन और निस्तेज हो गए हैं और उनकी स्थिति वैसी ही हो गई है जैसे कि वहां पलने वाले राष्ट्र और उद्योगों का रूप में कोई सादा-पीला वृद्धि होना आवश्यक है | वर्षों पहले कताई एक कुटीर उद्योग था और यदि हमें लोगों को भुखमरी से बचाना है तो हमें
अपने घरों में फिर से कताई की शुरूआत करनी चाहिए और हर गांव के पास फिर से अपना बुनकर होना चाहिए। (यंग, 21-7-1920, पृ. 4)

चरखा दुनिया के राष्ट्रों के प्रति किसी दुर्भावना का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह सद्भावना और स्वामलबन का संदेशवाहक है | इससे विश्व की शांति और उसके संसाधनों के दोनों के लिए कोई खतरा पैदा होने वाला नहीं है जिसके लिए नौसेना की सहायता की आवश्यकता हो | हां, इसके लिए हमारे लाखों देशवासियों को यह धार्मिक संकल्प लेना होगा कि जिस प्रकार वे अपना खाना अपने घरों में ही पकाते हैं उसी प्रकार अपनी आवश्यकता का सूत भी अपने घरों में ही कातेंगे।

मुझे मेरी भूल-चूकों के लिए आगे आने वाली पीढियां दोष दे सकती हैं, लेकिन मुझे इस बात का पक्का भरोसा है कि चरखे के पुनरुद्धार के लिए वे मुझे आशीर्ष ही देंगी | मैंने इसके लिए अपना सब कुछ दांव पर लगा दया है चरखे का हर चक्कर शम्भावना और स्वाभाविक प्रेम बुनता है और जिस प्रकार चरखे का पुनरुद्धार हो जाने से भारत गुलाम हो गया था, उसी प्रकार इसके तथा इससे जुड़ी सभी बातों के स्वैब्लिक पुनरुद्धार से भारत को आज़ादी शमलेगी। (यंग, 8-12-1921, पृ. 406)

ग्रामीण जनता की आशा

मैंने प्राय: कहा है कि यदि भारत के 7 लाख गांवों को जीवित रखना है और शांति, जो सारी सभ्यता की जड़ है, को हासिल करना है तो हमें चरखे को सभी हस्तशिल्पों का केंद्र बनाना होगा। (हरर, 19-2-1938, पृ. 11)

मेरी दृष्टि में चरखा आम जनता की आशा का प्रतीक है | चरखे के लोप के साथ आम जनता की आज़ादी का लोप हो गया था | ग्रामवासियों के लिए चरखा कृषि का पूरक था और उन्हें गरीबार्द्धन करता था | वह विधवाओं और बहनों का मित्र और आसरा था | उससे गांव वाले निक्षिप्तता से मुक्त रहते थे, क्योंकि चरखे के साथ उनके उद्योग जुड़े हुए थे। यसके लिए अभार, धुनाई, तानी करना, माड़ी देना, रंगाई, बुनाई आदि | इनके कारण गांव के बढ़ई और लुहार भी व्यस्त रहते थे।

चरखे की बदलत हमारे 7 लाख गांव स्वतंत्रता पूर्ण है | चरखे के साथ कोई भी अन्य उद्योगों का भी लोप हो गया | इनका स्थान किसी भी अन्य उद्योगों ने नहीं लिया | परिणाम यह हुआ कि गांवों के विकास व्यवसाय समाप्त हो गए और उनके साथ ही सृजनात्मक प्रतिभा का भी लोप हो गया और जो धोखा-बहुत कमाई उनसे होती थी, वह भी जाती रही...इससे यदि हम चाहते हैं कि गांवों का पुनरुद्धार हो तो सबसे सहज बात यह है कि हमें चरखे और उससे जुड़ी तमाम चीज़ों का पुनरुद्धार करना चाहिए। (हरर, 13-4-1940, पृ. 85)

मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि चरखा मनुष्य की आजीविका का सफल साधन सिद्ध हो सकता है और इसके साथ ही चरखा कातने वाला अपने पड़ोसियों की उपयोगी सेवा भी कर सकता है...बुब्लिकानी के साथ चरखा
कातने के लिए उसे कताई से पहले और बाद की सभी क्रियाओं की जानकारी होनी चाहिए | (हरि, 17-3-1946, पृ. 42)

भारत आने से पहले ही मेरे मन में यह धारणा घर गर गई थी कि हथकताई को पुनरुज्जीवित करने से ही भारत को अपने प्राचीन गौरव की पुन: प्राप्ति हो सकेगी | तब से मैंने चरखे की तुलना सूची के साथ की है जिसकी परिक्रमा हमारी संपूणु ग्राम अर्थव्यवस्था करती है | यह धनवानों और निर्धन के बीच स्थानिक सेटु है | (हरि, 21-7-1946, पृ. 231)

चरखा पश्चात की छोटी या बड़ी मीनों की तरह नहीं है | वहां इन-गिने विशेष स्थानों में करोड़ों घड़ियों का उत्पादन होता है | ये घड़ियां सारी दुनिया में बेची जाती हैं | यही बात सिलाई की मीनों पर भी लागू होती है | ये चीजें एक सभ्यता की प्रतीक हैं | ये चीजें एक स्थान पर बड़े पैमाने पर उत्पादन करके चरखे का सावक भयानक करना नहीं चाहते | हमारा आदर्श यह है कि जिस बस्ती में कताई करने वाले रहते हों वहीं चरखे और उसकी सहायक वस्तुओं का निर्माण होना चाहिए | इसी में चरखे का मूल्य निहित है | चरखे में यदि कोई खराबी आ जाए तो वह वहीं ठीक हो सकनी चाहिए और कताई करने वालों को इसके लिए प्रशिक्षित करना चाहिए | (हरि, 20-10-1946, पृ. 363-64)

मिल उद्योग

हमारे सूती मिल अज हमारी जरूरत के लायक सूती नहीं कात पाते और यदि कात भी पाएं तो उनकी कीमतें तब तक कम नहीं रखेंगे जब तक कि उन्हें इसके लिए विवश न किया जाए | वे खुल्लमखुल्ला पैसा कमाने वाले उद्योग हैं और यही कारण है कि वे राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप कीमतों का निर्माण नहीं करेंगे | इसलिए हथकताई का हमारा प्रयोजन यह है कि निर्धन ग्रामवासियों के हाथ में करोड़ों रुपये पहुंचें | हर कृष्णप्रथान देश को एक ऐसे पूरक उद्योग की आवश्यकता होती है जिसे चलाकर कृषि अपने छात्री समय का उपयोग कर सके | भारत के मामले में कताई ही इस प्रकार का पूरक उद्योग रहा है | यह क्या कोई बड़ा स्वप्न देश है... एक ऐसे प्राचीन धंडे को पुनरुज्जीवित करना जिसके विनाश के साथ भारत में दासता तथा कंगाली आई और अनुपम कला-प्रतिभा का लोप हो गया, जिसकी बदौलत भारत ऐसा अद्वृत कपड़ा तैयार करता था जो समस्त संसार के लिए ईर्ष्या की वस्तू थी | (यंग, 16-2-1921, पृ. 50-51)

मुझे प्राय: पूछा जाता है कि क्या मैं मिल उद्योग को नष्ट करना चाहता हूं? यदि मैं ऐसा चाहता तो क्या मैंने उत्पादन शुल्क को समाप्त किए जाने की मांग उठाई होती? मैं मिल उद्योग की समृद्धि चाहता हूं – बस यह नहीं चाहता कि यह देश को हानि पहुंचाकर हो | लेकिन यदि देश का हित इसमें है कि यह उद्योग समाप्त हो जाए तो मुझे इसकी समाप्ति पर तनिक भी खेद नहीं होगा | (यंग, 24-2-1927, पृ. 58)
मेरी राय में मिल-मज़दूर भी उसी प्रकार अपनी मिलों के मालिक हैं जिस प्रकार कि उनके शेयरधारक हैं और मिल-मालिक जब इस बात को समझ जाएंगे कि मिल-मज़दूर भी उन्हीं के समान अपनी मिलों के मालिक हैं तो उनके बीच के सारे झगड़े खत्म हो जाएंगे। (यंगं, 4-8-1927, पृ. 248)
87. स्वदेशी का अर्थ

स्वदेशी की भावना
स्वदेशी वह भावना है जो हमें दूर-दराज के इलाकों को छोड़कर अपने समीपस्थ क्षेत्रों का उपयोग करने और उनकी सेवा करने तक सीमित करती है | इस प्रकार, धर्म के मामले में इस परिभाषा के अनुसार, मुझे अपने पूर्वजों के धर्म को तसील रखना चाहिए | यह मेरे समीपस्थ अर्थात् वातावरण का उपयोग करने का अर्थ हैं।

राजनीति के क्षेत्र में, मुझे देशी संस्थाओं का उपयोग करना चाहिए और उनके प्रकट दोषों को दूर करने के लिए उनकी सेवा करनी चाहिए | इस प्रकार, धमके मामले में इस परिभाषा के अनुसार, मुझे उन धार्मिक कार्य-क्रमांक और पूर्ण बनाने के लिए उनकी सेवा करनी चाहिए | स्वदेशी की इस भावना पर यदि आचरण किया जाए तो यह हजार वर्ष तक चलती जाएगी....

धर्म
...हिंदू धर्म एक रूढ़िवादी धर्म बन गया है और चूंकि इसके मूल में स्वदेशी की भावना है, इसलिए यह अत्यधिक शक्ति-संपत्त हो गया है | यह सबसे अधिक सहिष्णु धर्म है, क्योंकि इसमें अन्य लोगों का धर्म-परिवर्तन करके उन्हें हिंदू बनाने का कोई विधान नहीं है और यह जितना विस्तारशील पहले था उतना ही आज भी है | इसने बौद्ध धर्म को देश से बाहर नहीं निकाला बल्कि उसे आभासत कर लिया, हालांकि लोगों की यह भांत धारणा है कि हिंदू धर्म ने बौद्ध धर्म को देश से बहिष्कृत कर दिया था | स्वदेशी की भावना के कारण ही हिंदू अपना धर्म बदलने से इंकार करता है; इसका अन्वितार्थ: यह कारण नहीं है कि वह अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानता है, बल्कि यह है कि वह इस बात को जानता है कि वह इसमें अपेक्षित सुधार लाकर इसकी कर्मयों को दूर कर सकता है | मैंने अभी जो बात हिंदू धर्म के बारे में कही है, मैं समझता हूँ कि, वह विश्व के सभी बड़े धर्मों के बारे में कही जा सकती है; यह अवश्य है कि हिंदू धर्म के बारे में यह विशेष रूप से लागू होती है |

शिक्षा
शिक्षा के मामले में स्वदेशी की भावना के घाटक लागू से हमें बहुत अधिक हानि पहुँची है | हमारी शिक्षित वर्ग की शिक्षा विदेशी भाषा के माध्यम से हुई है | इसका परिणाम यह हुआ है कि हम आम जनता के साथ तात्त्विक नहीं कर पाए | हम आम जनता का प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं, लेकिन उसमें सफल नहीं हो पाते | आम लोग हमें उसी अपरिचय की दृष्टि से देखते हैं जिस दृष्टि से हम अंग्रेज अधिकारियों को देखते हैं | उनके दिलों की बात को न हम समझ पाते हैं और न अंग्रेज अधिकारी | आम आदमी की आकांक्षाएं हमारी आकांक्षाएं नहीं हैं, इसलिए
उनके और हमारे बीच में एक खाई पैदा हो गई है | इसलिए आप जो देख रहे हैं वह वस्तुः हमारे संगठन की असफलता नहीं है, बल्कि प्रतिनिधियों और जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं उनके बीच तादाम्य का अभाव है | यदि पिछले 50 वर्षों के दौरान हमारी शिक्षा अपने देश की भाषाओं में हुई होती तो हमारे बुजुर्ग और हमारे नौकर-चाकर तथा पड़ोसी हमारे ज्ञान में भागीदार होते, बोस या राय की खोजों का उसी प्रकार घर-घर प्रचार होता जैसा क्योंकि रामायण और महाभारत का है | आज स्थिति यह है कि जहां तक हमारे आम आदमी का तात्पूर्तिक है, उसके लिए इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि ये खोजें भारतीयों ने की हैं या विदेशियों ने | यदि शिक्षा की सभी शाखाओं में पढ़ाई देशी भाषाओं के माध्यम से हो रही होती तो मैं इस बात को दावे के साथ कह सकता हूँ कि उनकी अदभुत समृद्धि हुई होती....

आर्थिक जीवन

आम आदमी की घोर निर्भरता का सबसे बड़ा कारण आर्थिक और औद्योगिक क्षेत्र में स्वदेशी का लागू है | यदि एक भी चीज भारत के बाहर से न खरीदी जाती तो इस देश में धी-दूर्ध की नदियां बह रही होतीं | लेकिन ऐसी नहीं होना था | हम लालची हैं और हम जैसा लालची ही इंग्लैंड भी था | इंग्लैंड और भारत के बीच का संबंध स्पष्ट ‘तया एक गलती के ऊपर आधाररत था....

यदि हम स्वदेशी की सिद्धांत का पालन करें तो आपका और मेरा यह कर्तव्य हो जाएगा कि ऐसे पड़ोसियों को दूरें जो हमारी आवश्यकता की वस्तुएं हमें दे सकें और यदि वे किन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करने में असमर्थ हों तो हम उन्हें अपेक्षित प्रतीक्षण दे | यहां हम यह मानकर बतल रहे हैं कि हमारे पड़ोस में ऐसे लोग हैं जो स्वस्थ काम-धंधे की तलाश में हैं | यदि ऐसा होगा तो भारत का प्रशांक मिनार लाभाभ स्वावलंबी और स्वत:पूणक हो जाएगा और वह दूरभर स्वदेशी वस्तुओं के साथ उन्हें आवश्यक वस्तुओं की अदला-बदली करेगा जिनका स्थानीय उत्पादन संभव नहीं है | ये बातें मूखकता प्रतीत हो सकती हैं | मेरा जवाब है कि यह देश है ही मूर्खों का | यदि हमारा कंटेण्ट प्लास्टिक से सूखा जा रहा है और कोई दयालु मुसलमान हमें शुद्ध जल पिलाने के लिए तैयार है तो भी आप हम उसे पीने से इंकार करते हैं तो यह भी मूर्खता ही है | फिर भी, लाखों हिंदू किसी मुसलमान के घर से लेकर पानी पीने की अपेक्षा प्लास्टिक से मर जाना बेहतर समझें | इन मूर्ख लोगों के मन में यदि इस बात बेडा दी जाए कि उनके धर्म की मांग यह है कि वे केवल भारत में बनाए गए कपड़े को ही पहनें और भारत में पैदा होने वाली वस्तुओं को ही खाएं तो ये लोग देशी के अलावा अन्य किसी कपड़े को पहनने और अन्य किसी खाद्य वस्तु को खाने से इनकार कर देंगे....

धार्मिक अनुशासन

प्रायः कहा जाता है कि भारत अपने आर्थिक जीवन में तो स्वदेशी को अपना ही नहीं सकता | जो लोग यह आपत्ति उठाते हैं वे स्वदेशी को जीवन के नियम के रूप में स्वीकार नहीं करते | उनकी दृष्टि में यह केवल राष्ट्र-भावना से
प्रेरित एक प्रयास है जिसमें यदि कष्ट हो तो उसे छोड़ा भी जा सकता है | स्वदेशी की जो परिभाषा मैं ऊपर दी है उसके अनुसार यह एक धार्मिक अनुशासन है जिसका हमें भौतिक कष्ट की तनिक भी चिता न करते हुए पालन करना है | स्वदेशी की भवाना के प्रभाव में यदि हम पिन या सुई से स्वयं को इसलिए वंचित कर देंगे कि इसका विनिर्माण भारत में नहीं होता तो हमें इसका कष्ट बिलकुल नहीं सताएगा | स्वदेशी का पालन करने वाले व्यक्ति को ऐसी सैकड़ों चीजें छोड़ने के लिए तेयार होना होगा जिन्हें वह आज आवश्यक मानता है....

मेरा कहना है कि स्वदेशी ही वह एकमात्र सिद्धांत है जो विनिर्माण और प्रेम के नियम के अनुरूप है | यदि मैं अपने परिवार की ही ठीक से सेवा न कर पाऊं तो मेरे लिए भावना की जरूरत का भाव करना है | प्रेम के प्रभाव में यह मुझे शपन्धा या सुई से स्वयं को इसलिए वंचित कर देंगे कि मैं ऐसा करके संपूर्ण राष्ट्र बल्कि कहिए कि संपूर्ण मानवता की सेवा कर रहा हूँ | यही विनिर्माण है और यही प्रेम है|

हमारे कार्य की उत्कृष्टता इस बात पर निर्भर करती है कि उसके दीवा हमारा प्रयोजन क्या है | हो सकता है कि मैं अपने परिवार की सेवा करते समय इस बात की चिता ही न करूँ कि इससे मैं दूसरे लोगों को कितना कष्ट दे रहा हूँ | उदाहरण के रूप में, मैं कोई ऐसा काम उठा लूं जिसमें मुझे लोगों से रुपए ऐंठने पड़ते हों इससे मुझे पैसा जरूर मिलेगा और मैं अपने परिवार की बहुत-सी नाजायज मांगों को पूरा कर सकूँगा, लेकिन ऐसा करते हुए में न अपने परिवार की सेवा कर रहा हूँ और न अपने राज्य की |

यह भी संभव है कि मैं इस बात को समझूँ कि भगवान ने मुझे हाथ-पैर इसलिए दिए हैं कि मैं अपने और अपने आश्रयों के जीवन-निर्वाह के लिए काम करने के बाद हमारा इतिहास करूँ | ऐसा समझने पर मेरे और मेरे निकट के लोगों के जीवन में तत्काल सादगी आ जाएगी | तब मैं किसी अन्य व्यक्ति को क्षति पहुंचाए बिना अपने परिवार की सेवा करूँगा | यदि हर व्यक्ति इस जीवन-पद्धति को अपना ले तो हमारा राज्य एक आदर्श राज्य हो जाए | मैं भावना हूँ कि सभी लोग एक साथ इस अवस्था की प्राप्ति नहीं कर सकते, लेकिन इस सिद्धांत की सत्यता को स्वीकार करते हुए हममें से जो भी लोग इस पर आवर्ण करेंगे वे निश्चित ही उस आदर्श स्थिति की प्राप्ति को निकटतर ले आएंगे | (स्पीरा, पृ. 336-44)

पड़ोसियों की सेवा

स्वदेशी की मेरी परिभाषा सुविदित है | मैं अपने निकटस्थ पड़ोसी की कीमत पर किसी दूरस्थ पड़ोसी की सेवा नहीं करूँगा | इसमें सिद्धांत प्रेरित या दंड देने की भावना कदापि नहीं है | यह किसी भी अर्थ में संकुचित भावना का परिचायक नहीं है, क्योंकि मुझे अपनी संवृद्धि के लिए जो कुछ चाहिए वह मैं विश्व के हरएक भाग से खरीदूंगा,
लेकिन मैं बहुत बढ़िया और सुंदर होते हुए भी कोई ऐसी चीज़ किसी से नहीं खरीदूगा जो मेरी संवृथौ में बाधक हो या उन लोगों को क्षति पहुंचाने वाली हो जिन्हें प्रकृति ने मेरी देखरेख में दिया हुआ है।

मैं दुनिया के हर कोने से अच्छा साहित्य खरीदूंगा। मैं इंग्लैंड से शत्य चिकित्सा के औजार, आस्तिया से पिने और पेसिलें और स्वट्जरलैंड से घड़ियां खरीदूंगा। लेकिन मैं इंग्लैंड या जापान या दुनिया के किसी देश से एक इंच भी बढ़िया सूती कपड़ा नहीं खरीदूंगा, क्योंकि इससे भारत के करोड़ों भारतवासियों के हितों को क्षति पहुंची है और अधिकाधिक पहुंच रही है।

मैं भारत के जनरतमंद करोड़ों निर्धरी लोगों से द्वारा कार्यात्मक और बुद्धिमान और सुंदर बने होते हुए भी कोई ऐसी चीज़ से नहीं खरीदूंगा जो मेरी संवृथौ में बाधक हो या उन लोगों को क्षति पहुंचाने वाली हो।

लेकिन मैं इंग्लैंड या जापान या दुनिया के किसी देश से एक इंच भी बढ़िया सूती कपड़ा नहीं खरीदूंगा, क्योंकि इससे भारत के करोड़ों भारतवासियों के हितों को क्षति पहुंची है और अधिकाधिक पहुंच रही है।

हमें अपने हृदय में यह अचूक शमश्व पक्के तर पर बैठा लेना चाशहए। इस वचन के रूप में अन्य लोगों की शचंता शकए समाचार एक ही साथ अपने पूड़ों की सेवा कर सकता है; तक यही है, जैसा मैं ऊपर कह चुका हूँ, आपका अन्य अकांक्षा और अपने ऐसे कल्याण को समझकर उसे अपने पूड़ों की सेवा करने की इच्छा जताते हैं।
अंतराष्ट्रभक्ति नहीं

जीवन की इस योजना के तहत, दूसरे सभी देशों को छोड़कर केवल भारत की सेवा कर, मैं किसी अन्य देश को कोई क्षति नहीं पहुंचाता। मेरा राष्ट्रप्रेम व्यावस्थित भी है और समावेशी भी। व्यावस्थित इस अर्थ में है कि मैं, पूरी विनिमय के साथ, अपना ध्यान अपनी जनमभूमि तक सीमित रखता हूं और समावेशी इस अर्थ में है कि मेरी सेवा का स्वरूप स्पष्टमित या विरोधाभास बिलकुल नहीं है। 'अपनी संपत्ति का इस्तेमाल इस तरह करूँ कि वह किसी दूसरे को क्षति न पहुंचाए', केवल कानून की ही सूचना है, अपितु जीवन का एक महान सिद्धांत है। यह अहिंसा या प्रेम पर स्थान करने की कुंजी है। (स्पीरा, पृ. 344)

मेरा यह विचार कभी नहीं रहा है कि स्वदेश की यह अर्थ लिया जाए कि विदेश में बनी हर चीज़ को हर हालत में त्याज्य समझना है। स्वदेश की मौट परिबाषा यह है कि हमें देशी उद्योगों को संरक्षण प्रदान करने के लिए विदेशी वस्तुओं का ल्याग करके देशी वस्तुओं का इस्तेमाल करना चाहिए; यह बात उन उद्योगों पर खास तौर से लागू होती है जिनके नष्ट होने पर भारत कंगाल हो जाएगा। इसलिए, मेरी राय में, स्वदेश का यह अर्थ लगाना उसकी व्याख्या को संकुचित करना होगा कि हमें प्रत्येक विदेशी वस्तु का ल्याग कर देना चाहिए भले ही वह कितनी ही फायदेमंद हो; और उसके कारण देश में किसी के कामधंड को हानि न पहुँचाती हो। (यंग, 17-6-1926, पृ. 218)

यदि हम स्वदेशी की जड़पूजा करने लगे तो किसी भी अन्य अच्छी चीज़ की तरह यह भी मौत का परवाना बन जाएगी। हमें इस खतरे से सावधान रहना होगा। विदेशों में बनी चीजें या केवल इसलिए ल्याग करना कि ये विदेशों में बनी हैं, और परिस्थितियाँ अनुकूल न होने पर भी, अपने देश में ही उनका विनिमय करने के लिए राष्ट्रीय समय और धन का अपव्यय करना, नूरख्तापूर्ण और स्वदेशी की भावना को नकारना होगा। स्वदेशी का सच्चा पुजारी किसी विदेशी के प्रति कभी मन दृभवाना नहीं पालेगा; वह दुनिया में किसी के प्रति विरोध की वृद्धि से प्रेरित नहीं होगा। स्वदेशी का अभियान घृणा कैलाने का अभियान नहीं है। यह निस्वार्थ सेवा का सिद्धांत है जिसकी जड़ में किसी भी अहिंसा अर्थत प्रेम है। (फ़ायम, पृ. 66)
14. भाईचारा

88. प्रेम का दिव्य संदेश

आपस में जोड़ने वाली शक्ति

प्रेम का बल वही है जो आत्मा अथवा सत्य का बल है | हमें पग-पग पर उसकी कार्यशीलता का प्रमाण मिलता है | वह बल न हो तो विधु का लोप हो जाएगा....इसी बल के अत्यंत सक्रिय रूप से कार्यशील होने के कारण हजारों-लाखों लोगों का जीवन अस्तित्व में है | इसी बल की बदोलत लाखों परिवारों के दैनंदिन जीवन में उठने वाले छोटे-मोटे झगड़े निपट जाते हैं | सैकड़ों राष्ट्र शालिपूर्वक विद्वान हैं | इतिहास तो वस्तुतः प्रेम या आत्मा के बल के सुचारू प्रवर्तन में उत्पन्न होने वाले व्यवस्थाओं का अभिलेख है | दो भाइयों में लड़ाई होती है, उनमें से एक पक्षात्मक करता है और अपने अंदर सुप्रसिद्ध प्रेम को फिर से जगाता है; दोनों भाई फिर शालिपूर्वक रहने लगते हैं, किसी का ध्यान इस घटना की ओर नहीं जाता | लेकिन, अगर ये दोनों भाई, वकीलों के हस्तक्षेप अथवा किसी अन्य कारण से, हथियार उठा लें या कोई में बालजी जाएं – जो पश्चात्बाद के प्रदर्शन का ही दूसरा रूप है – तो उनके कार्यालयों की चर्चा तुरंत समाप्त हो जाती है, पद्धतियों का ध्यान भी उनकी ओर जाता है और हो सकता है कि यह झगड़ा इतिहास का विषय बन जाए | और जो बात परिवारों और समुदायों के बारे में सही है, वही राष्ट्रों के बारे में भी सही है | ऐसा मानना की कोई कारण नहीं है कि परिवारों पर एक नियम लागू होता है और राष्ट्रों पर कोई दूसरा | इस प्रकार, इतिहास प्रकृति के क्रम में उत्पन्न होने वाले व्यवस्थाओं का अभिलेख है | आत्मा के बल कूचक प्राकृतिक है, इसलिए इतिहास में इसका उल्लेख नहीं होता। (हिंदी, पृ. 77-79)

वैज्ञानिक बताते हैं कि जिन अणुओं से मिलकर हमारी पृथ्वी की रचना हुई है उनके बीच यदि संसंजक या संसक्तिील बल विद्यमान न हो तो पृथ्वी खड़-खड़ हो जाएगी और हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा; और जिस प्रकार जड़ पदार्थों में संसंजक बल है उसी प्रकार सभी चेतन पदार्थों में भी यह बल उपस्थित नहीं होता चाहिए, और चेतन पदार्थों में इस संसक्तिील बल का नाम है ‘प्रेम’ | हमें इसके दर्शन पिता-पुत्र में, भाई-बहन में और मित्र-मित्र में होते हैं, लेकिन हमें समस्त प्राणी-जनवर के बीच इस बल के प्रयोग का अभ्यास डालना चाहिए; इस प्रयोग में हमारा ईश्वर का ज्ञान शपथ है | जहां प्रेम है वहां जीवन है, घृणा विनाश की ओर ले जाती है | (यंग, 5-5-1920, पृ. 7)

मेरा मानना है कि मानव जाति की ऊर्जा का कुल योग हमारे अपकर्ष के लिए नहीं, अपितु हमारे उत्कर्ष के लिए है और यह प्रेम के नियम के अचेतन किंतु निश्चित प्रवर्तन का ही परिणाम है | मात्र यह तथा कि मानव जाति का असिद्ध बरकरार है, इस बात का प्रमाण है कि संसक्तिील बल विच्छेदक बल से अधिक शक्तिशाली है, अभिकेंद्री-बल अपकेंद्री-बल से बढ़कर है | (यंग, 12-11-1931, पृ. 355)
हमारे अस्तित्व का नियम

हजारों साल से इस दुनिया पर बर्बर बल का राज रहा है और मानव जाति उसके अंत्य कटू परिणाम भोगती रही है, यह हर अध्येता जान सकता है | भविष्य में भी उस बर्बर बल के कोई शुभ परिणाम सामने आने की आशा नहीं है | यदि धरों अध्यक्ष के भीतर से कभी प्रकाश का जन्म संभव हो, केवल तभी धृष्ट रूप में से प्रेम का उदय संभव है | (ससा, पृ. 188)

मैंने देखा है कि विश्व के बीच भी जीवन बर्बर रहता है | अतः कोई ऐसा नियम अवश्य होना चाहिए जो विश्व के नियम से उच्चतर है | उसी नियम के अंतर्गत एक सुव्यवस्थित समाज की स्थापना की जा सकेगी और जीवन जीने योग्य बन सकेगा | और, यदि वही जीवन का नियम है तो हमें अपने दैनिक जीवन में उसे उतारने का प्रयास करना चाहिए | अगर कहीं तकराव हो, अगर तुम्हारे साथ निरोध खड़ा हो तो उसे प्रेम से जीतो | इसी अनगढ़ उपाय के सहारे मैंने अपने जीवन-क्रम को सफलतापूर्वक चलाया है | इसका मतलब यह नहीं है कि मेरी सभी कठिनाइयाँ दूर हो गई हैं | लेकिन मैंने यह अवश्य पाया है कि जिस प्रकार प्रेम का नियम काम आता है उस प्रकार विश्व का नियम कभी काम नहीं आता | (यंग, 1-10-1931, पृ. 286)

यदि प्रेम अथवा अहिंसा हमारे अस्तित्व का नियम नहीं है....तो हम बारेरे लड़े जाने वाले युद्धों के शिकार होने से बच नहीं सकेंगे और प्रलेख नया युद्ध भैषणता में अपने पूर्ववर्ती से बढ़कर होगा....

आज तक जितने उपेक्षक हुए हैं उन्होंने न्यूनाधिक शक्ति के साथ इस नियम का प्रचार किया है | यदि प्रेम जीवन का नियम न होता तो मौत के बीच जीवन के सातत्व के दर्शन न होते | जीवन ने सदा ही मृत्यु पर विजय पाई है | मनुष्यों और पशुओं के बीच यदि कोई मौलिक भेद है तो वह मनुष्य द्वारा प्रेम के नियम की अधिकाधिक स्त्रीकृति और अपने व्यक्तिगत जीवन में उसे व्यवहार में लाने का प्रयास है | विश्व के सभी, प्राचीन और आधुनिक, संत अपनी-अपनी प्रतिभा और शक्ति के अनुसार हमारे अस्तित्व के इस नियम के जीते-जागते उदाहरण थे | यह सही है कि प्राप्त: हमारे भीतर बैठा पशु बड़ी सरलता से विजयी होता दिखाई देता है, किंतु इससे प्रेम का नियम झूठा साबित नहीं होता | इससे सिफर यह साबित होता है कि प्रेम के नियम पर आवश्यकता नहीं है | जो नियम स्वस्थ सत्य के समान ऊंचा है उसका पालन करना कठिन नहीं है और क्या होगा | जब सभी लोग इस नियम का पालन करने लगेंगे तो पृथ्वी पर ईश्वर का उसी प्रकार राज्य हो जाएगा जिस प्रकार अभी स्वर्ग पर है | यहाँ यह स्पर्श दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि पृथ्वी और स्वर्ग, दोनों हमारे अपने भीतर ही हैं | हम पृथ्वी को तो जानते हैं, पर अपने भीतर के स्वर्ग से अनजान हैं | अगर यह मान लिया जाए कि कुछ लोगों के लिए प्रेम का व्यवहार करना संभव है तो यह मान लेना आह्मकारपूर्ण होगा कि शेष लोगों द्वारा इसका आचरण किए जाने की कोई संभावना ही नहीं है | बहुत ज्यादा वक्त नहीं जुगरा कि हमारे पूर्वज नरभक्षी थे, वे और भी ऐसे बहुत-से काम...
करते थे जिन्हें आज हम घृणा की दृष्टि से देखते हैं | उस जमाने में भी निस्संदेह डिक शपत्स जैसे लोग रहे होंगे जिन पर लोग हंसते होंगे और अपने ही साथी मनुष्यों को न खाने के (उनके लिए) विचित्र सिद्धांत का प्रचार करने पर शायद उन्हें टिकटी में खड़ा करके सजाएं भी दी गई होंगी | (हर, 26-9-1936, पृ. 260)

इतिहास एक के बाद एक लड़े गए युद्धों का अभिलेख है, कितू हम एक नये इतिहास के निर्माण का प्रयास कर रहे हैं - यह बात में, कम-से-कम जहाँ तक अहिंसा का संबंध है, राष्ट्रीय मानस के प्रतिनिधि के रूप में कह रहा हूँ | मैंने तलवार के सिद्धांत को तर्क की दुलार पर तोलकर देख लिया है, मैंने उसकी संभावनाओं पर विचार कर लिया है और मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूँ कि मानव का भविष्य जंगल के नियम के स्थान पर प्रेम के नियम की प्राप्ति करने में ही निहित है | (हर, 3-7-1937, पृ. 165)

जहां प्रेम है, वहाँ ईश्वर भी है | (ससा, पृ. 360)

प्रेम मांगता नहीं, हमेशा देता ही है | प्रेम स्वयं पीड़ा भोगता है, कभी दोष प्रकट्नहीं करता, कभी बदला नहीं लेता | (यंग, 9-7-1925, पृ. 24)

सेवा का नियम

व्यवहार का सबसे सुरक्षित नियम यह है कि जब हम सेवा करना चाहें तो बंधुता स्थापित करें और जब कोई अधिकार मांगना चाहें तो बंधुता पर जोर न दें | मैं इसे व्यवहार का स्वर्णिम नियम कहकर पुकारता हूँ और मैंने जीवन के इस नियम को भारत के अंत:प्रांतीय संबंधों पर भी लागू किया है....मानव मामलों में मधुर संबंध बनाए रखने का कोई और तरीका मुझे नहीं आता और वर्णों के लंबे अनुभव से मेरी यह धारणा और भी पुष्ट हुई है कि जहां-जहां इस स्वर्णिम नियम का भंग हुआ है वहाँ-वहाँ कलह, झगड़े और सर-फुट्वल तक की नौबत आ गई है.... (यंग, 8-12-1927, पृ. 407)

व्यवहार की समानता

मेरा प्रमुख उद्देश्य समूची मानवता के लिए समान व्यवहार सुनिश्चित करना है और उस समान व्यवहार का अर्थ है सेवा की समानता | (यंग, 12-3-1925, पृ. 91)

बात यह है कि यद्यपि सब लोग एक-समान आपु, एक बराबर कद, एक ही चमड़ी और एक जैसी बुब्लद्वाले नहीं हैं, पर ये असमानताएँ अस्थायी और सतही हैं; इस मिट्टी की पपड़ी के नीचे जो आत्मा छिपी है, वह सभी प्रदेशों के तमाम स्त-पुरुषों में बिलकुल एक ही है....हमें अपने चारों ओर जो बिविधता दिखाई देती है, उसमें एक सच्ची और तालिक एकता है | ‘असमानता’ एक गंदा शब्द है जिसने पूर्व और पश्चिम, दोनों में बड़े घमंड और अमानवीयताओं को जन्म दिया है | और जो बात व्यक्तियों के बारे में सही है वही राष्ट्रों के बारे में भी है, क्योंकि
मेरे राष्ट्र के सार्वभौम नियम में विश्वास करता हूँ जो किसी तरह के भेदभावों को नहीं मानता।

हमें अपने प्रेम की परम्परा का विस्तार तब तक करते जाना चाहिए जब तक पूरा गांव न समा जाए; इसी प्रकार गांव को शाहर, शाहर को प्रांत, प्रांत को देश और देश को समूची दुनिया को अपने प्रेम के राज्य में समेट लेना चाहिए।

मैं अपने प्रेम की परम्परा का विस्तार तब तक करते जाना चाहिए जब तक पूरा गांव न समा जाए; इसी प्रकार गांव को शाहर, शाहर को प्रांत, प्रांत को देश और देश को समूची दुनिया को अपने प्रेम के राज्य में समेट लेना चाहिए।

हम ऐसे समय में रह रहे हैं जब मूल्य बड़ी तेजी से बदल रहे हैं। हम धीमे परिणामों से संतोष नहीं हो रहा। इसमें केवल अपनी ही जाति के लोगों या अपने ही देश के कल्याण से संतोष नहीं हो रहा। हम समूची मानवता के लिए सोचते हैं या सोचना चाहते हैं। ये बातें मानवता की अपने लक्ष्य की खोज के लिए बड़ी लाभकारी हैं।

मेरा आपसे आग्रह है कि... अपने हृदय के समान विशाल बनाए।... दूसरों के निर्णय को मनाते हुए उसमें तुला पर तोला जाए।... ऊपर सबका निर्णय बैठा है। जो आपको फांसी लगा सकता है, पर उसने कृपापूर्वक आपको ढूँढ़ रखा है।... आपके अंदर और बाहर इतने शत्रु हैं, पर ईश्वर उनसे आपकी रक्षा करता है और आप पर कृपापूर्वक रखता है।
पारस्परिक सहिष्णुता

व्यवहार का स्वर्णिम नियम....पारस्परिक सहिष्णुता है, क्योंकि हम सभी के विचार कभी एक जैसे नहीं हो पाएंगे और सत्य को हम हमेशा खेड़शः और अलग-अलग कोणों से देखेंगे | सबका विवेक एक-सा नहीं होता | इसलिए, यद्यपि यह व्यक्ति के व्यवहार का अच्छा मार्गदर्शक है, पर उस व्यवहार को सब पर धोपने से हर आदमी की अपने विवेक को इस्तेमाल करने की ख्यातता पर गहरा कुठाराधात होगा....अत्यधिक विवेकशील मनुष्यों के बीच भी, खरे मतभेदों की गुणजाहिः सदा रहेगी | अतः प्रत्येक सम्भव समाज में, पारस्परिक सहिष्णुता ही व्यवहार का एकमात्र संभव नियम है | (यंग, 23-9-1926, प. 334)

क्षमा आत्मा का गुण है, इसलिए यह एक सकारात्मक गुण है | यह नकारात्मक नहीं है | भगवान बुद्ध ने कहा है, 'क्रोध को अ-क्रोध से जीतो' | यह अ-क्रोध क्या है ? यह एक सकारात्मक गुण है और इसका अर्थ है उदारता अथवा प्रेम का सर्वोच्च गुण | तुम्हें अपने अंदर इस सदृश्य का विकास करना चाहिए जिससे कि तुम क्रोधी व्यक्ति के पास जाकर उसके क्रोध का कारण पूछ सको और यदि तुमने उसे किसी रूप में चोट पहुंचाई है तो अपना सुधार कर सको, अन्यथा उसे उसकी गुरु बता सको और यह प्रतीति कर सको कि क्रोधित होना गलत है | आत्मा के गुण का यह बोध और उसका सविभाजक प्रयोग केवल मनुष्य का ही नहीं बल्कि उसके चारों और के वातावरण का उम्मीद करता है | यह अवश्य है कि इसका प्रयोग वही कर पाएगा जिसने प्रेम के गुण का विकास कर लिया है | इसमें संदेह नहीं कि निरंतर प्रयास के द्वारा इस गुण का विकास अवश्य किया जा सकता है | (यंग, 12-1-1928, प. 11)

जो बात व्यक्तियों के बारे में सही है वह राष्ट्रों के बारे में भी सही है | जो दुर्भाग्य हैं, वे कभी क्षमा नहीं कर सकते | क्षमा तो सामाजिकवादों का गुण है | (यंग, 2-4-1931, प. 59)

भरोसा

मैं मानव प्रकृति में संदेह करने से इंकार करता हूँ | वह किसी भी उदार और मैत्रीपूर्ण कार्य का प्रथमता देगी, जरूर देगी | (यंग, 4-8-1920, प. 5)

मेरे अंदर मानव और मानव जाति के प्रति अविश्वास की कोई भावना नहीं है | जो विश्वास को तोड़ेगे, उन्हें ईश्वर को जवाब देना होगा, इसलिए इसकी चिंता मैं क्यों करूँ ? लेकिन जहां तक मेरे अपने जीवन-लक्ष्य का प्रश्न है, मेरा विचार सक्रिय है, और मैं संदेहों और अविश्वास के बावजूद सबका भला चाहने की कोशिश करता हूँ | मेरे भाग्य में पीढ़ा लिखी है तो मैं उसे भोगूंगा | लेकिन मुझे मझे जब तक बुराई से लड़ने की शक्ति है तब तक मुझे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है | (स्पेक्ट, 6-3-1942)
परस्पर विश्वास और परस्पर प्रेम कोई विश्वास और प्रेम नहीं है | सच्चे प्रेम तो यह है कि जो तुमसे घृणा करते हैं, उनसे प्रेम करो, अपने पहलों के प्रति अविश्वास होते हुए भी हमसे प्रेम करो | मेरे पास अंग्रेज अधिकारी-वर्ग में अविश्वास करने के ठोस कारण हैं | यदि मेरा प्रेम सच्चा है तो मुझे अपने अविश्वास के बावजूद अंग्रेजों से प्रेम करना चाहिए | उस प्रेम का म्यूल्टी है जो केवल तब तक टिके जब तक मुझे अपने मित्र के प्रति विश्वास है? ऐसा तो चोर भी करते हैं | विश्वास दूरस्त ही वे एक-दूसरे के शत्रु बन जाते हैं। \( \text{(हरि, 3-३-१९४६, पृ. २८) } \)

अबोध बच्चों के मुंह से

विश्वास कीजिए, मैं सैकड़ों नहीं हजारों बच्चों के निजी अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ कि हमारी अपेक्षा बच्चों में आत्मसम्मान की अनुभूति कहीं अधिक सूक्ष्म होती है | अगर हममें विनिमय हो तो हम जीवन के महानतम पाठ तथाकथित अबोध बच्चों से सीख सकते हैं, उनके लिए बड़ी उम्र के विद्वानों के पास जाने की आवश्यकता नहीं है | ईसा ने इससे ऊपर और महान सत्य की बात कोई नहीं कही ज्ञान की बातें भोले-भाले बच्चों के मुंह से फूटी है | मैं इससे पूरी तरह सहमत हूँ | मैंने अपने अनुभव में यह बात पाई है कि अगर हम विनिमय और भोलेपन के साथ बच्चों से बात करें तो हम हमारे पास प्रेम का पाठ पढ़ सकते हैं।

विश्व-शांति

मैंने एक सबक सीखा है कि जो चीज मनुष्य के लिए असंभव है, वह भगवान के लिए बच्चों का खेल है और यदि हमें उस दिव्य शक्ति में आस्था है जो अपनी सृष्टि के शक्तिमान जीव की भी भावावधात्री है तो मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि भोले भक्त का खेल है और इसी अंतिम आशा में, मैं जीता तथा अपना समय गुजारता हूँ | और उस सर्वशक्तिमान की इच्छा का पालन करने का प्रयास करता हूँ।

...यदि हमें इस संसार में सबी शांति प्राप्त करनी है और युद्ध के खिलाफ सबी का लड़ाई लड़ना है तो हमें शुरुआत बच्चों से करनी होगी; हमारे बच्चे अगर अपने सहज भोले-भक्त रूप में बढ़े हो सके तो न हमें संघर्ष करना पड़ेगा और न व्यर्थ के प्रस्ताव पास करनी पड़ेगी | तब हम एक प्रेम से दूसरे प्रेम और एक शांति से दूसरी शांति तक बढ़ते चले जाएंगे, यहां तक कि विश्व में सर्वशांति और प्रेम का साम्राज्य छा जाएगा जिसके लिए आज सारी दुनिया तरस रही है। \( \text{(यंग, 19-11-1931, पृ. 361)} \)

आत्मा का बल

जीवन में प्रतिक्षण मुझे यह महसूस होता है कि ईश्वर मेरी परीक्षा ले रहा है | \( \text{पृ. 326} \)

यदि मे पशु-बल के स्थान पर आत्मा के बल को, जो प्रेम के बल का ही दूसरा नाम है, लोकप्रिय बना सकूँ तो मैं जानता हूँ कि मैं अपने एक-एक ऐसे भारत दे सकता हूँ जो सारी दुनिया को अपने प्रति वुरे-से-वुरा रहेगा अपनाकर देखने के लिए चुनौती दे सकता है | इसलिए मैं अपने जीवन में पीड़ा-भोग के इस शास्त्र नियम की अभिव्यक्ति
करने के लिए निरंतर कठोर प्रयास करना और जो इसे अंगीकार करने के लिए तैयार हों, उनके समक्ष इसे प्रस्तुत करना | यदि मैं किसी अन्य कार्यकलाप में भाग लेता हूं तो वह भी इस नियम की अनुपम श्रेष्ठता को प्रदर्शित करने के लिए ही है | (यही, पृ. 331)

tलवार को एक तरफ फें के देने के बाद, अब मेरे पास अपने विरोधियों को पेश करने के लिए प्रेम के याले के अलावा और कुछ नहीं है | यह याला पेश करके ही मैं उन्हें अपने निर्देश लाने की आवश्यकता है | मैं आदमी-आदमी के बीच स्थायी हृदय की बात नहीं सीधे सकता, और पुनर्जीवन के सिद्धांत में विश्वास करने के कारण में इस आशा में जी रहा हूं कि यदि इस जन्म में नहीं तो किसी अगले जन्म में मैं समूही मानवता को मेमी के पाश में बांध सकूंगा | (यंग, 2-4-1931, पृ. 54)

प्रेम का तक्ष्य
मुझे पूरी विनम्रता के साथ इस सच्चाई को मानना होगा कि मैं अपने अस्तित्व के प्रतियोगिता में प्रेम की इलाके पेदा करना का प्रयास करता हूं, भले ही मैं इसे कितने ही तत्पर भाव से करूँ | मैं अपने सिरजनहार की, जो सत्य स्वरूप है, उपस्थिति का अनुभव करने के लिए अधीर हूँ, और मैंने अपने जीवन के आरंभिक वर्षों में ही जान लिया था कि अगर मुझे सत्य को पाना है तो मुझे अपनी जान की परवाह न करते हुए प्रेम के नियम का पालन करना चाहिए | प्रभु-कृपा से जब मुझे सत्य की प्राप्ति हुई तो मैंने पाया कि प्रेम के नियम की छोटे बच्चों के द्वारा सबसे अच्छी तरह समझा और सीखा जा सकता है | मैं निर्विवाद रूप से इसमें विश्वास करता हूँ कि कोई बच्चा बदमाश की वृत्ति लेकर पैदा नहीं होता | यदि बच्चे के जन्म से पहले और उसके उपरांत, जब वह बढ़ रहा हो, उसके माता-पिता उसके साथ ठीक से व्यवहार करे तो यह सुविधित तथ्य है कि बच्चा सहज रूप से सत्य के नियम और प्रेम के नियम का पालन करने लगेगा | अपने जीवन के आरंभिक वर्षों में जब मैंने यह सब सीखा तो जीवन में धीरे-धीरे किंतु एक निश्चित परिवर्तन आने लगा |

मैं आपके समक्ष उन कई अवस्थाओं का वर्णन करने नहीं चाहता जिससे होकर मेरा यह झंझावात्पूर्ण जीवन गुजारा है, लेकिन मैं पूरी सच्चाई और विनम्रता के साथ इस तथ्य का साक्षी अवश्य हूँ कि मैंने अपने जीवन में जिस सीमा तक मनता, वाचा, कर्मण प्रेम का प्रतिनिधित्व किया है, उस सीमा तक मुझे अद्वैत हृदय की प्राप्ति हुई है | मेरे बहुत-से मित्र मेरे जीवन में विवाह मानने की शांति को देखकर चकरा गए हैं, उन्हें मुझसे ऐसी भी हुई है और उन्होंने मुझसे मेरी इस अमूल्य संपत्ति का कारण पूछा है | मैंने उनका समाधान करने के लिए इसके अलावा और कुछ नहीं कह सका हूँ कि यदि उन्हें मेरे जीवन में शांति के दर्शन होते हैं तो उसका एकमात्र कारण यही है कि मैने मानव अस्तित्व के स्वीकार नियम – प्रेम के नियम – का पालन करने का प्रयास किया है |29 (यंग, 19-11-1931, पृ. 361)
मेरा प्रयास है कि मेरे जीवन का हर क्षण अहिंसा अर्थात प्रेम द्वारा निर्देशित हो | मैं मूलत: शांतिप्रेमी हूं | मैं मनमुटव पैदा करना नहीं चाहता | मैं अपने विरोधियों को यह आश्वासन देता हूं कि मैं ऐसा कोई काम नहीं करूंगा जिसे मैं सत्य और प्रेम के विरुद्ध समझता हूं | (हरि, 12-1-1934, पृ. 8)

किसी पर अधिकार जमाने के लिए मेरे पास प्रेम के सिवा और कोई अस्थ ही नहीं है | (बांका, 9-9-1942)

मेरा लक्ष्य विश्व-मैत्री है और मैं गलत काम का अधिकतम विरोध करते हुए भी अधिकतम प्रेम का परिचय दे सकता हूं | (यंग, 10-3-1920, पृ. 5)

मुझे अपने लक्ष्य में इतनी अड्डिग आस्था है कि यदि यह सफल हो गया – जो जरूर होगा, इसे सफल होना ही है – तो इतिहास इसे एक ऐसे आंदोलन के रूप में दर्ज करेगा जिसका उद्देश्य दुनिया के सभी लोगों को एक समूह में बांधना है जिनमें एक-दूसरे के प्रति आक्रामक भाव नहीं होगा, बल्कि वे संयम का एक समृद्धि का अंश मानकर चलेंगे | (हरि, 26-1-1934, पृ. 8)
89. समस्त जीवन एक है

सबके साथ बंधुता
मेरा नीतिशास्त्र मुझे न केवल इस बात का दावा करने की अनुमति देता है, अपितु आदेश देता है कि मैं बंदर ही नहीं बल्कि चोड़े और भेड़, शेर और तेंदुए, सांप और बिचू तक को अपना बंधु मानूं।| इन प्राणियों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे भी मेरे प्रति ऐसी ही भाव रखें।

मेरे जीवन को शासित करने वाला यह कठोर नीतिशास्त्र – और मेरी धारणा है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष पर इसी का शासन होना चाहिए – मेरे ऊपर यह इकतरफा दायित्व आरोपित करता है। यह आरोपण इसलिए है कि केवल मनुष्य की सृष्टि ने ही ईश्वर को साकार शकया है।  

इस प्रस्थापना को सिद्ध करने के लिए कि मनुष्य की सृष्टि ही है ईश्वर का साकार हुआ है, यह दिखाना जरूरी है कि सभी मनुष्यों के व्यक्तित्व में उसके दर्शन होते हैं।| और इस बात के कारण कर सकता है कि मानव जाति में जन्मे महान दानदेतों में साक्षात ईश्वर के दर्शन हुए हैं। (यंग, 8-7-1926, पृ. 244)

मेरा विश्वास है कि मैं अहिंसा से ओतप्रोत हूँ। अहिंसा और सत्य मेरे दो फेफड़े हैं। मैं उनके बिना जीवित नहीं रह सकता। लेकिन मैं प्रतिक्रिया, अधिकाधिक स्पष्टता के साथ, अहिंसा की असीम शक्ति और मानव की श्रद्धा का अनुभव कर रहा हूँ।

अपूर्ण अहिंसा
बनवासी भी अपनी असीम करुणा के खाते, हिंसा से पूर्णतया मुक्त नहीं माना जा सकता | हर श्वास के साथ वह कुछ-न-कुछ हिंसा करता ही है।| शरीर स्वयं एक बूढ़ द्रव्याकार है, इसलिए मोक्ष के अन्तरिक्त अन्य सभी सुख क्षणों एवं अपूर्ण हैं। यही कारण है कि हमें अपने दैनिक जीवन में हिंसा के अनेक कड़वे घूंघट पीने पड़ते हैं। (यंग, 21-10-1926, पृ. 364)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

किसी-न-किसी तरह की हिंसा के सहारे ही शरीर में प्राण टिके हैं | इसलिए, उच्चतम धर्म को एक नकारात्मक शब्द – अहिंसा – देकर परिभाषित किया गया है | संसार विनाश की एक शृंखला में बंधा है | दूसरे शब्दों में, शरीर में प्राण की रक्षा के लिए हिंसा अनिवार्य है | तभी तो अहिंसा का पुजारी सदा देह के बंधन से पूर्णत: मुक्त होने की प्रार्थना करता है | (यंग, 4-10-1928, पृ. 331)

मुझे इस बात का दुखद बोध है शक रीर में प्राणों को बनाए रखने की मेरी कामना मुझसे शनरंतर शहंसा करा रही है | इसलिए, मैं अपने इस भौतिक शरीर के प्रति अधिकारिक उदासीन होता जाता हूं | उदासीन के लिए, मुझे पता है कि श्वास लेने की क्रिया में हमारे वाले असंख्य जीवाणुओं का संहार करता हूं | किंतु मैं श्वास लेने बंद नहीं करता | संशयों को खाने में हिंसा है, पर मैं उन्हें नहीं छोड़ पाता |

कीटाणुशासन पदात्रों के इस्तेमाल में भी हिंसा है, लेकिन मैं मछली बगीचा से अपनी रक्षा करने के लिए मिट्टी के तेल आश्रम की उपहार शहंसा का इस्तेमाल करने से अपने को नहीं रोक पाता | आश्रम में जब सांपों को पकड़ना या भगाना संभव नहीं हो पाता तो उन्हें मारना पड़ता है - यह हिंसा भी मैं बहते हूं | आश्रम में बैलों को हांडने के लिए उन्हें नहीं छोड़ पाता | आश्रम में सांपों को भगाना संभव नहीं था, पर मैं उन्हें नहीं छोड़ पाता | इसलिए भौतिक और आपत्तिजनक रूप से मुझे होती है, उसका कोई अंत नहीं है... यदि इस निर्वम अपराध-स्वीकरण के फलस्वरूप मेरे मिट्टी में लगी जांच करना चाहें तो मुझे दुख तो अवधि होगा लेकिन फिर भी, मैं अहिंसा पर आचरण करने में मेरी जीवन अपूर्णता हैं, उन्हें छिपाना का प्रयास नहीं करूंगा | मेरा दावा तो बस इस तथ्त है कि मैं अहिंसा जैसे महान आदर्शों के निःशुल्कों को समझने और मनसा, वाचा, कर्मणा उन्हें अपने जीवन में उतारने का निरंतर प्रयास कर रहा हूं जिसमें मेरी समझ में मुझे वृद्धि-भुतत सफलता भी मिली है | लेकिन मैं जानता हूं कि मुझे इस दिशा में अभी बड़ा तंबा रास्ता तय करना है | (यंग, 1-11-1928, पृ. 361)

जीवच्छेदन

मैं वैज्ञानिक प्रगति के विरुद्ध नहीं हूं | बल्कि पक्षम की वैज्ञानिक भावना को मैं प्रशंसा की दृष्टि से देखता हूं; इस प्रशंसा में अगर कोई हिचक है तो यदि वो पक्षम का वैज्ञानिक ईश्वर क्रिया की निपटाता है, तो उसका अंत नहीं है | मैं अपनी आत्मा की पूरी शक्ति के साथ जीवच्छेदन से पूरी घृणा करता हूं | मैं विज्ञान और समस्या की अक्षम्यता को पूरी घृणा करता हूं और निर्देश राज्य के निःशुल्क खोजों को निःशुल्क तथा महत्वपूर्ण मानता हूं | बैलों की खोज जीवच्छेदन के बिना संभव नहीं थी तो मानव जाति को इसे जाने बिना ही रह जाना चाहिए था | मैं स्पष्ट: यह दिन निकट आता देख रहा हूं जब पक्षम का इमानदार वैज्ञानिक ज्ञानार्जन की चर्चा विभिन्न विषयों की कुछ मर्यादाएं बांध देगा |
निम्नतर प्राणी

भावी तुलनाओं में केवल मानव परिवार को ही नहीं, बल्कि समस्त प्राणिजगत को दृष्टि में रखा जाएगा | और, जिस प्रकार हम धीरे-धीरे किंतु निश्चित रूप से इस फैसले पर आ रहे हैं कि यह समझना गलत है कि हिंदू अपनी संख्या के पांचवें हिस्से को निक्रृत मानने पर भी उन्नति कर सकते हैं या पशुक्षेत्र के देश पूर्व और अफ्रीकी राष्ट्रों को शोषित और पददलित करके उसके सहारे जी तथा उन्नति कर सकते हैं, उसी तरह हमें समय आने पर यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि सुष्क निम्नतर प्राणियों पर हमारा प्रभुत्व इस्तेमाल है न कि हम उन्हें मार डालें, बल्कि यह हमारे और उनके पारस्परिक हित-संवर्धन के लिए है | मैं यह निश्चित रूप से कह सकता हूं कि ईश्वर ने उन प्राणियों को भी वैसी ही आत्मा दी है जैसे कि मुझे | (यंग, 17-12-1925, पृ. 440)

ऐसा प्रतीत होता है कि सभ्यता की और अधिक प्रभुत्व के साथ-साथ मनुष्य का पशु पर प्रभुत्व तो बढ़ेगा, पर उनका उपयोग करने की विधि अधिकाधिकारी मानवीय होती जायगी | मानवतावादियों के तीन संप्रदाय हैं | एक संप्रदाय पशु की शक्ति के तौर पर किसी अन्य शक्ति के उपयोग का पक्ष है | दूसरा संप्रदाय पशु के मनुष्य के साथ मानने में विश्वास करता है और उनका उस रूप में इस्तेमाल करने का हिमायती है जो भावार्थी की भावना के अनुसार हो | तीसरा संप्रदाय निम्नतर पशुओं के मनुष्य की स्वार्थ-सिद्धि के लिए इस्तेमाल करना नहीं चाहता, बल्कि अपनी और इन पशुओं की शक्ति का उस सीमा तक इस्तेमाल करना चाहता है जहां तक पशु समझदारी और स्वेच्छा से ऐसा करने दें | मैं इस तीसरे संप्रदाय का सदस्य हूं | (हरर, 5-5-1946, पृ. 121)

“दया-मृत्यु”

मैं एक क्षण के लिए भी किसी कुत्ते या अन्य जीव की धीरे-धीरे मृत्यु के मुख में जाने की यंत्रणा को बेबसी से होते हुए नहीं देख सकता | ऐसी ही परिस्थितियों के शिकार मनुष्य को मैं इस्तेमाल नहीं मारता कि उसे राहत पहुंचाने के उपाय मोजूद हैं, किंतु कुत्ते के लिए कोई उपचार उपलब्ध नहीं है इसलिए मुझे उसे देना चाहिए | अगर मेरे बच्चे के रेबीज हो जाए और उसे यंत्रणा से राहत दिलाने का कोई कारगर उपचार उपलब्ध न हो तो मुझे उसे मार देना अपना कर्तव्य मानना चाहिए |

भावावाद की अपनी सीमाएं हैं | हम सभी उपाय कर लेने के बाद ही चीजों को भाव के ऊपर छोड़ते हैं | यंत्रणाप्रेस बालक के कष्ट को दूर करने के उपायों में से एक तथा अत्य उपचार उसके जीवन को समाप्त कर देना है | (यंग, 18-11-1926, पृ. 396)

मैं जिस प्रकार एक गाय की प्राणरक्षा के लिए किसी मनुष्य की जान नहीं लूंगा उसी प्रकार एक मनुष्य की प्राणरक्षा के लिए भी किसी गाय की जान नहीं लूंगा, भले ही उस मनुष्य का जीवन कितना ही मूल्यवान हो | (यंग, 18-5-1921, पृ. 156)
मेरी समझ में एक मेमने का जीवन एक मनुष्य के जीवन से कम मूल्यवान नहीं है | किसी मानव शरीर की खातिर मेमने की जान लेने में मुझे संकोच होना चाहिए | मेरी धारणा है कि जो प्राणी जितना ही अधिक लातार है उतना ही अधिक वह मनुष्य द्वारा मनुष्य की कृत्तिता से संरक्षण पाने का अधिकार है | (ए. पृ. 172)

विषैले पशुओं की समस्या

मेरा सांप की भी हत्या करके जीना नहीं चाहता | उसकी जान लेने के बजाए मैं उसकी जीवन को मनुष्य के जीवन से कम मूल्यवान नहीं मानता हूँ | उसकी जान लेने में मुझे संकोच होना चाहिए | मेरी धारणा है कि शक जो प्राणी शजन्ता ही अशधक लाचार है उतना ही अशधक वह मनुष्य द्वारा मनुष्य की कृत्तिता से संरक्षण पाने का अधिकार है | (ए. पृ. 121)

....हम मौत के साथ में रहते हुए सत्य तक पहुंचने का प्रयास कर रहे हैं | शायद उन्होंने यही स्मरण करने का प्रयास कर रहे हैं कि हमें जीवन में हर क्षण खतरों का सामना करना पड़े, क्योंकि खतरों की जानकारी तथा अपने अस्तित्व की अनिश्चितता का बोध होने के बावजूद, हम अहंकार में इतने चूर हैं कि संपूर्ण सृष्टि के कर्ता की ओर अभिमुख नहीं होते | 

....मेरी विचारशक्ति किसी भी प्रकार की जीवन का नाश करने पर विद्रोह करती है | कितु मेरा हदय इन्तना मजबूत नहीं है कि उन प्राणियों से मित्रता स्थापित कर सके जिन्हें हम अपने अनुभव के आधार पर, विनाशकारी मानते हैं
दृढ़ शवश्वास की भाषा, जो वास्तविक अनुभव से उत्पन्न होती है, मुझे जवाब दे जाती है और तब तक देती रहेगी जब तक मैं इतना कायर बना रहूंगा कि सांपों, बाघों आदि से डरता रहूं। (यंग, 17-7-1927, पृ. 222)

मुझे पक्का शवश्वास है कि मनुष्य की जरा-जरा-सी बात पर दूसरे मनुष्य की जान ले लेने की आदत ने उसके विवेक पर पदार्थ डाल दिया है और वह अन्य श्रीगुणों के आदर के साथ निरस्कोट खिलावड़ करता रहता है; वह ऐसा करते हुए कांप उठैला। आगर उसे सचमुच इस बात का यकीन हो जाए कि ईश्वर प्रेम और दया का ईश्वर है जो भी हो, भले ही मैं बाघों, सांपों, पिस्सूओं, मछुओं आदि को मृत्यु के भय के कारण मार डालूं, पर मैं निरंतर प्रभु से उस आलोक के लिए प्रार्थना करता रहता हूं जिसके बिना पर मृत्यु का भय पूर्णरूपन आकृति हो जाएगा और किसी का जीवन लेने के विचार का सर्वथा स्थायी अधिकार करके मैं इतना जीवन सहरू$, क्योंकि मेरे ऊपर दया-भाव रखने वाली शक्ति ही मुझे औरों पर दया करना सिखाएगी। (हरर, 9-6-1946, पृ. 172)

हत्या न करने का सिद्धांत

मेरी अहिंसा मेरी अपनी है | मैं जानवरों की हत्या न करने के सिद्धांत को पूरी तरह स्वीकार नहीं कर सकता | जो जानवर नरभक्षी हैं या मनुष्य को चोट पहुँचाते हैं, उनके जीवन की रक्षा करने का कोई आयाह मेरे मन में नहीं है | मैं ऐसे जानवरों की वंशज्ञान में सहायक होना गलत मानता हूं | इसलिए मैं चीटियों, बंदरों और कुत्तों को खिलाने से इंकार करता हूं | मैं इन जानवरों की प्राणरक्षा के लिए किसी मनुष्य के जीवन की बलि कभी नहीं दूंगा |
इस प्रकार विचार करते हुए मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि जहां-जहां बंदर मनुष्य के लिए संकट बन गए हैं, वहां उन्हें समाप्त कर देना क्षम्य है | बल्कि यह एक कर्तव्य है | प्रश्न उठ सकता है कि यही नियम मनुष्यों पर भी लागू क्यों नहीं किया जाना चाहिए? यह इसलिए लागू नहीं किया जा सकता कि मनुष्य कितने भी बुरे हों, वे मनुष्य हैं | ईश्वर ने मनुष्य को विवेक की शक्ति दी है जो पशुओं को नहीं दी | (हरिर, 5-5-1946, पृ. 123)

सच्ची अहिंसा की मांग है कि अगर हमें बंदरों आदि के उत्पात से समाज की और अपनी रक्षा करनी है तो हमें उनकी हत्या करनी ही होगी | सामान्य नियम यह है कि हमें जहां तक तनिक भी संभव हो वहां तक हिंसा से बचना चाहिए | समाज की अहिंसा व्यक्ति की अहिंसा से अनिवार्यत: भिन्न है | समाज से दूर रहने वाला व्यक्ति सभी एहतियातों को ताक पर रख सकता है, पर समाज ऐसा नहीं कर सकता | (हरिर, 7-7-1946, पृ. 213)
90. में सांस्कृतिक अलगाव नहीं चाहता

मैं नहीं चाहता कि मेरा घर चारों ओर से दीवारों से घिरा हो और उसकी सभी खिड़कियाँ बंद हों। मैं चाहता हूँ कि सभी देशों की संस्कृतियों की सुवासित बायु मेरे घर के चारों ओर बहे | लेकिन मैं ऐसी किसी बायु से अपने पांव नहीं उखड़ने दूंगा। मुझे औरों के घर में दस्तंदाज, भिखारी या गुलाम बनकर रहने से इंकार है। (यंग, 1-6-1921, पृ. 170)

यह बात मेरे मन में दूर-दूर नहीं है कि हम एकांतक बन जाएं या अपने चारों ओर अवरोध खड़े कर ले। लेकिन मैं सादर कितुं बलपूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि औरों की संस्कृति की सराहना का प्रश्न अपनी संस्कृति की सराहना और उसके आक्रमण के बाद उठना उचित है, उससे पहले केवलियं हों। मेरा दृढ़ मत है कि जो बहुमूल्य रत्न हमारी संस्कृति के पास हैं, वे किसी अन्य संस्कृति के पास नहीं हैं। पर हमें उनका ज्ञान ही नहीं है; हमें अपनी संस्कृति के अध्ययन का विरोध करने और उसका अभ्यास करने की पहली पढ़ाई गई है। परिणाम यह है कि हमने अपनी संस्कृति को जीना लगभग छोड़ ही दिया है। आचरण के बिना कोई शाति ज्ञान एक संस्कृतित शह के समान होता है जो देखने में भले ही सुंदर लगे, पर वह प्रेरणा देने या उदाहरण करने वाला सिद्ध नहीं हो सकता।

भारतीय संस्कृति एक संस्कृति उन विभिन्न संस्कृतियों का संश्लेषण है जो इस देश में रच-बस गई हैं और जिन्होंने भारतीय जीवन को प्रभावित किया है। तथा स्वयं इस धरती की आत्मा से प्रभावित हुई हैं। स्वभावतया इस संश्लेषण का स्वरूप स्वदेशी है जिसमें हर संस्कृति के लिए उचित स्थान सुनिश्चित है।... (यंग, 17-11-1920, पृ. 6)

भारतीय सम्पत्ति भिन्न-भिन्न धर्मों का प्रतिनिधित्व करने वाली और अपने-अपने भौगोलिक तथा अन्य पर्यावरणों से प्रभावित संस्कृतियों का संगम है। तदनुसार इस्लामी संस्कृति अरब, तुर्की, मिस्र और भारत में एक जैसी नहीं है, लेकिन वह स्वयं इन देशों की परस्थितियों से प्रभावित हुई है। अत: भारतीय संस्कृति भारतीय है। यह न फूंकता तरह हिंदू है, न इस्लामी और न कोई अन्य। यह इन सबका मिला-जुला रूप है और मूलतः पूर्वी है। जो व्यक्ति स्वयं को भारतीय कहता है, उसका यह कर्त्तव्य है कि इस संस्कृति की कद्र करे, इसका न्यासी बने और यदि इस पर कोई आंच आए तो उसका प्रतिकार करे। (यंग, 30-4-1931, पृ. 88)
हमारे युग की भारतीय संस्कृति अभी निर्माणाधीन है | हममें से अनेक लोग उन संस्कृतियों का, जिनके बीच आज टकराव की स्थिति दिखाई दे रही है, एक मिश्रण तैयार करने का प्रयास कर रहे हैं | जो संस्कृति एकांतिक रहने का प्रयास करेगी, वह जीवित नहीं रह सकेगी |

आज भारत में विशुद्ध आर्य संस्कृति जैसी कोई चीज़ विद्यमान नहीं है | आर्य लोग भारत के ही मूल निवासी थे या वे यहां जबरदस्ती घुस आए, यह जानने में मेरी कोई विशेष रुचि नहीं है | मेरी रुचि तो इस तथ्य में है कि मेरे बहुत पहले के पूर्वज पूरी स्वतंत्रता के साथ एक-दूसरे से पुल-मिल गए थे और हमारी वर्तमान पीढ़ी उसी मिश्रण का परिणाम है |

यह भविष्य ही बताएगा कि क्या हम अपनी जन्मभूमि का और उस छोटी-सी पृथ्वी का, जिसकी बदौलत हम जीवित हैं, कोई भला कर रहे हैं, अथवा उसके ऊपर भार है? (हरिर, 9-5-1936, पृ. 100-01)

या तो हम विभिन्न धर्मावलीयों द्वारा मिट्टिया के बंधन में बंधकर साथ रहते हुए संस्कृति का जो सुंदर मिश्रण तैयार किया गया है, उसे बनाए रखने और सुदृढ़ करने का प्रयास करेंगे या उस दिन की खोज में लग जाएंगे जब हिंदुस्तान में केवल एक धर्म था और अपने कदम उसी एकांतिक संस्कृति की ओर वापस मोड़ ले जाएंगे |

यह भी संभव है कि हम ऐसे किसी ऐतिहासिक तिथि की खोज में सफल ही न हो पाएं और अगर हो भी जाएं और अपने कदम वापस मोड़ लें तो अपनी संस्कृति को किसी कुरूप युग की ओर ढके लें | यदि ऐसा हुआ तो दुनिया हमें कोसेगी, जो उचित ही होगा | (हरिर, 2-11-1947, पृ. 392)

पाश्चात्य संस्कृति

जहां तक मेरा प्रश्न है, यद्यपि मैंने अपने ऊपर पाश्चात्य संस्कृति के ऋण को खुलकर स्वीकार किया है, पर मैं यह कह सकता हूँ कि इस राष्ट्र की जो भी सेवा मुझसे बन पड़ी है वह केवल इसलिए कि मैंने प्राच्य संस्कृति का दामन पकड़े रहने की भरसक कोशिश की है | मैं आगर अंग्रेज़ियां को अपनाकर एक विशेष व्यक्ति बन गया होता और भारत की आम जनता के बारे में कुछ न जानता और उनकी चिंता ही न करता तथा उनके तीर-तरीकों, आदतों, विचारों और आकांक्षाओं को तिरस्कार की दृष्टि से देखता तो मैं उनके लिए बिलकुल बेकार साबित हुआ होता | (यंग, 5-7-1928, पृ. 224)

यूरोपीय सभ्यता निरस्तर यूरोपवासियों के अनुकूल है, लेकिन हम यदि उसके अनुकरण का प्रयास करेंगे तो भारत बबाकद हो जाएगा | कहने का ताप्य यह नहीं है कि उसमें जो कुछ अच्छा और अंगीकार करने योग्य है, हम उसे भी न अपनाएं; इसका अर्थ वह भी नहीं है कि यूरोपीय सभ्यता में यदि कोई बुराईयां पैदा हो गई हों तो उन्हें निकालना यूरोपवासियों के लिए लाजमी नहीं है |
भौतिक सुंडों के पीछे लगातार दौड़ना और उनमें अंधाधुंध बृद्धि करना ऐसी ही एक बुराई है; और मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि यूरोपवासी जिन सुंडों के गुलाम हुए जा रहे हैं, अगर उनके भार तले बढ़कर नष्ठ हो जाना नहीं चाहते तो उन्हें अपने दशिकों में बदलाव लाना लगातार होगा। हो सकता है कि मेरी बात गलत हो, लेकिन यह मैं जानता हूं कि अगर भारत ने इस स्वर्णमूर्ति के पीछे दौड़ना शुरू कर दिया तो वह निश्चित रूप से मौत के मुह में चला जाएगा।

हमें पाश्चात्य दार्शनिक के ‘सादा जीवन उच्च वाद’ वाले आदर्श वाक्य को अपने उदय-पद्धार्म पर अंकित कर लेना चाहिए।

आज यह स्पष्ट हो चुका है कि हम लाख-करोड़ों लोगों को उच्च स्तर के जीवन उपलब्ध नहीं कर सकते और हम मुद्दा भर लोगों को सर्वसाधारण के घर की बात सोचने का दावा करते हैं, उच्चतर जीवन-स्तर की खोज में तो कामयाब हो नहीं पाएँगे, उच्च विवाह के आदर्श को भी कोई बैठेंगे। (यंग, 30-4-1931, पृ. 38)

पक्षिक का सांस्कृतिक प्रभुत्व

मैं समझता हूं कि हमारे पास संस्कृति का रक्षा का काम कोई दूसरा नहीं कर सकता। इसकी रक्षा हमें स्वयं करनी होगी और हम इसे अपनी मूर्तियाँ के कारण नष्ठ भी कर सकते हैं। (हरर, 25-5-1947, पृ. 166)

यद्यपि हमें राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त हो गई है, पर हम पक्षिक के सुक्ष्म प्रभुत्व से दूर नहीं हो पाएँ हैं। मुझे राजनीतिकों के उस संप्रदाय से कुछ नहीं कहना जो यह मानता है कि ज्ञान वेळा पक्षिक से मिल सकता है। न मैं इस विश्वास को सही मानता हूं कि पक्षिक से हमें कोई अच्छी चीज़ नहीं मिली है। लेकिन मुझे भय है कि हम अभी तक इस मामले में किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सके हैं।

मुझे आशा है कि यह दावा कोई नहीं करेगा कि चूंकि हमें विदेशी आधिकार से राजनीतिक स्वतंत्रता मिल गई है, अतः मात्र यही तथ्य हमें विदेशी भाषा और विदेशी विचारों के सूक्ष्मतर प्रभाव से बिना स्वतंत्रता दिलाने के लिए पर्याप्त है। (हरर, 2-11-1947, पृ. 392)

एशिया एशियावासियों के लिए कि यदि यह सिद्धांत कि ‘एशिया एशियावासियों के लिए है’ किसी यूरोप-विरोधी संगठ का बोधक है तो मैं इसका पक्षधर नहीं हूं। यदि हम एशिया को कृपमंडूक ही नहीं रहने देना चाहते तो हम एशिया एशियावासियों के लिए का नाम कैसे लगा सकते हैं? लेकिन एशिया का काम कृपमंडूक रहकर नहीं चल सकता। उसके पास विश्व को देने के लिए एक संदेश है, वैसे कि वह स्वयं उसके अनुसार आचरण करने के लिए तैयार हो। संपूर्ण एशिया पर जिसमें भारत, चीन, जापान, बर्मा, लंका और मलय राज्य सम्मिलित हैं, बीद्ध धर्म का प्रभाव है। मैंने बर्मा और
लंका के लोगों से कहा कि वे नाम के ही बोल्ड हैं; सच्चे बोल्ड तो भारतवासी हैं | मी और जापान के लोगों से भी में यही कहूँगा | एशिया केवल एशियावासियों के लिए न रहकर समूही दुनिया के लिए हो, इसके लिए आवश्यक है कि एशिया बोल्ड के संदेश को फिर से समझे और उसे दुनिया को सुनाए | आज इस संदेश की सर्वत्र उपेक्षा हो रही है | मेरे पास....आपको देने के लिए एक ही संदेश है....कि आपको अपनी प्राचीन विरासत के प्रति निश्चय बनाए रखने चाहिए | बोल्ड का संदेश 2500 वर्ष पुराना है, लेकिन अभी तक उस पर सच्चाई के साथ आचरण नहीं किया गया है | लेकिन 2500 वर्ष होते भी क्या है ? ये कालवर्क के एक मनके के बराबर हैं | अहिंसा के फूल को, जो मुझे दिखाई देता है, अभी पूरी तरह खिलना है | (हरर, 24-12-1938, पृ. 404)

हरास्त आश्चर्य है कि....विभिन्न एशियाई देशों के सभी प्रतिनिधि केवल ‘एक विश्व’ के सपनों को साकार करने के लिए भारत के प्रयास करते हैं | उन्हें इस आदर्श की प्राचीन विरासत के लिए प्रयास और साधन खोजने होंगे | यदि आप २५० संस्कृति से काम करेंगे तो इसमें एक संदेश नहीं है कि हम इस सपने को अपनी पीढ़ियों में ही सच कर दिखाएंगे....अगर दुनिया का एक नहीं होना है तो मैं इसमें रहना नहीं चाहूँगा | मैं निश्चित रूप से यह चाहता हूँ कि यह सपना मेरे जीवनकाल में ही सच हो जाए | (हरर, 20-4-1947, पृ. 109)

सभी आंखें भारत की ओर लगी हैं, विशेषकर एशिया और अफ्रीका की....भारत ने अहिंसा के जरिए आजादी की लड़ाई लड़कर ब्रिटेन के ऊपर नैतिक विजय प्राप्त की है, इसलिए एशिया के देश उसकी और उपयुक्त मार्गदर्शन के लिए आश्चर्य की दृष्टि में देख रहे हैं | यह प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है कि वह इस आशा को न झुठलाए | यह एशिया और अफ्रीका को भारत से सही मानकद की मांगके दिशा में देख रहे हैं | यह दुश्मन का नक्शा ही बदल जाएगा | (हरर, 11-5-1947, पृ. 148)

एक विश्व

ईश्वर ने विश्व की व्यवस्था इस तरह की है कि कोई व्यक्ति अपनी भलाई या बुराई को अपने तक सीमित नहीं रख सकता | संपूर्ण विश्व एक मानव शरीर की भांति है जिसके विभिन्न अंग है | एक अंग में पीड़ा होने पर उसकी अनुभूति पूरे शरीर को होती है | एक अंग में सड़न पैदा होने पर अनिवार्यतः संपूर्ण शरीर में विष फैल जाता है | (हरर, 26-5-1946, पृ. 154)

मनुष्य को हृदय से ईश्वर की संपूर्ण सृष्टि के कल्याण की कामना करनी चाहिए और यह प्राचीन कर्म की देवी है | ईश्वर हमें उसे कार्यान्वित करने के लिए प्रयात्मक शक्ति दे | सबके कल्याण की कामना में ही व्यक्ति का अपना कल्याण भी निम्न है, जो व्यक्ति केवल अपने या अपने समुदाय के कल्याण की ही कामना करता है, वह स्वार्थी है और उसका भला कभी नहीं हो सकता | (हरर, 27-10-1946, पृ. 375)
यह भारत और पाकिस्तान, दोनों नये राज्यों के लिए संभव है कि वे....स्वाधीन विश्व राज्यों के एक परिवार की स्थापना को अपना ध्येय बनाएं जिसके साथ यह बात अनिवार्य है कि इन राज्यों की अपनी-अपनी आंतरिक सेनाएं नहीं होंगी। मैं नहीं सोचता कि भारत अकारण दूसरे देशों के हितों के विरुद्ध जाने की नीति अपनाएगा और विश्व-शांति के लिए संकट सिद्ध होगा....

यदि भारत के प्रयासों से स्वतंत्र एवं स्वाधीन राज्यों का ऐसा विश्व परिसंघ अस्तित्व में आता है तो इस बात की आशा करना भी संभवतः उचित होगा कि संसार में ईश्वर के साम्राज्य की, जिसे रामराज्य भी कहा गया है, स्थापना हो सकेगी। (हरिर, 13-7-1947, पृ. 235)

यूनेस्को

मुझे शैक्षिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के जरिए शांति-स्थापना के यूनेस्को के प्रयासों में गहरी दिलचस्पी है। मैं इस बात को अच्छी तरह समझता हूं कि दुनिया के राष्ट्रों के बीच आज जो घोर शैक्षिक तथा सांस्कृतिक असमानताएं हैं, वे जब तक दूर नहीं होंगी तब तक सच्ची सुरक्षा और स्थायी शांति सुनिश्चित नहीं की जा सकती। उन कम भाग्यशाली देशों के दूसरों घरों में भी प्रकाश पहुंचाना चाहिए जो अपेक्षाकृत अंधकार में हैं और मैं समझता हूं कि इस दिशा में कदम उठाने की खास जिम्मेदारी उन राष्ट्रों की है जो आर्थिक और शैक्षिक दृष्टि से उन्नत हैं। (हरिर, 16-11-1947, पृ. 412-13)
राष्ट्रभक्ति बनाम अंतरराष्ट्रीयतावाद

भारतीय राष्ट्रीयता

मैं अपने देश की स्वतंत्रता इसलिए चाहता हूँ ताकि दूसरे देश मेरे स्वतंत्र देश से कुछ सीख सकें और मेरे देश के संसाधनों का उपयोग मानव जाति के हित के लिए किया जा सके।

जिस प्रकार राष्ट्रप्रेम का मार्ग आज हमें सिखाना है कि व्यक्ति को परिवार के लिए प्राणोंसेर नहीं डाल देने का बहुत असाधारण दृष्टिकोण है, उसी प्रकार देश के लिए स्वतंत्र होना इसलिए आवश्यक है कि यदि आवश्यकता हो तो वह विश्व के हित के लिए स्वयं को समर्पित कर सके। अतः राष्ट्रीयता के प्रति मेरा प्रेम अथवा राष्ट्रीयता की मेरी धारणा यह है कि मेरा देश स्वतंत्र हो ताकि आप आवश्यकता पड़े तो मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए वह स्वयं को होम कर सके। इस धारणा में प्रजातीय घृणा का कोई स्थान नहीं है यही हमारी राष्ट्रीयता की भावना होनी चाहिए। (दृढि, पृ. 171)

हमारी राष्ट्रीयता किन्हीं अन्य देशों के लिए संकट का कारण नहीं बन सकती, क्योंकि हम न किसी को शोषण करेंगे, न किसी को अपना शोषण करने देंगे हम स्वराज के माध्यम से सारी दुशमनों को विद्रोह करेंगे। (यंग, 16-4-1931, पृ. 79)

मेरे लिए राष्ट्रीयता और मानवता एक ही चीज़ है | मेरा राष्ट्रभक्ति इसलिए हूँ कि मैं मानव और सहदेव हूँ | मेरी राष्ट्रीयता एकांशत नहीं है, मैं भारत की सेवा करने के लिए इंग्लैंड या जर्मनी को क्षति नहीं पहुँचाऊंगा | मेरी जीवन-योजना में साम्राज्यवाद के लिए कोई स्थान नहीं है | राष्ट्रभक्ति का नियम परिवार के मुखिया के नियम से भिन्न नहीं है | और जिस राष्ट्रभक्ति में मानवतावाद के प्रति उत्साह कम है, वह उतना ही कम राष्ट्रभक्त भी माना जाएगा। नजी और राजनीतिक विधि के बीच कोई टकराव नहीं है | (यंग, 16-3-1921, पृ. 81)

जो व्यक्ति राष्ट्रीय नहीं है, वह अंतरराष्ट्रीय नहीं हो सकता | अंतरराष्ट्रीय भी संभव है जब राष्ट्रभक्ति अस्तित्व में आ जाए, अर्थात जब भिन्न-भिन्न देशों के लोग संगठित हो चुके और वे एक व्यक्ति की तरह काम करने योग्य बन जाएं | राष्ट्रवाद बुरी चीज़ नहीं है, बुरी है संकुचित वृत्ति, स्वार्थप्रति और एकांशत को आधुनिक राष्ट्रों के विनाश के लिए उत्साही है | इनमें से प्रत्येक राष्ट्र दूसरे की कीमत पर, उसे नष्ट करके, उपस्थिति करना चाहता है | भारतीय राष्ट्रवाद ने एक भिन्न मार्ग चुना है | यह समूची मानवता के हित तथा उसकी सेवा के लिए स्वयं को संगठित करना यानी पूर्ण आत्माभव्यक्ति की स्थिति को प्राप्त करना चाहता है....जूनून भई ने मेरा भाव भारत के लोगों के साथ बांध दिया है इसलिए यदि मैं उनकी सेवा न करता तो अपने सिरजनहार के साथ विश्वासघात करने का दोषी होता | यदि मैं भारतवासियों की सेवा न कर सका तो मैं मानवता की सेवा करने योग्य भी नहीं बन
पाऊंगा | और जब तक मैं अपने देश की सेवा करते समय किन्हीं अन्य राष्ट्रों को हानि नहीं पहुँचाता तब तक मैं समझता हूं कि मैं गलत रास्ते पर नहीं जा रहा | (यंग, 18-6-1925, पृ. 211)

भारत मानवता को समाविष्ट करता है
मैं समूची दुनिया की बात नहीं सोचता | भारत भवनक्त में सामान्यतया सारी मानव जाति की भलाई समाविष्ट है | इस प्रकार, मेरी भारत सेवा में मानवता की सेवा समाविष्ट है....भारत की मुक्ति की संपूर्ण योजना ही आंतरिक रामचक के विकास पर आधारित है | यह आत्मशृद्धीकरण की योजना है | इसलिए, पश्चिम के लोग यदि भारत के आंदोलन में सहायता देना चाहें तो उसका सबसे अच्छा तरीका यह होगा कि वे कुछ विशेषज्ञों को, अलग से, इस आंदोलन के आंतरिक रूप का अध्ययन करने के काम पर लगा दें | ये विशेषज्ञ खुले दिमाग से भारत आएं, उनके अंदर विविधता की भावना हो, जैसे कि प्रत्येक सत्यशोधक के अंदर होनी चाहिए....
मैं शब्दशक्ति – वह लिखित शब्दों की हो या मौखिक शब्दों की – की अपेक्षा विचार-शक्ति में अधिक शिक्षा करता हूं | और मैं जिस आंदोलन का प्रतिनिधित्व कर रहा हूं, उसमें यदि जीवनी शक्ति है और उसे दैवी आशीर्वाद प्राप्त हो तो वह संपूर्ण विश्व में व्याप्त हो जाएगा, भले ही मैं उसके भिन्न-भिन्न रूपों में स्वयं न जा पाऊं....
यदि मैं बीना किसी अंतर्कार के तथा पूरी विरासत के साथ कह सकूं तो मेरा निवेदन है कि मेरा संदेश और मेरे तरीके समुच्च मूलत: सारी दुनिया के लिए है और मुझे यह देखकर बड़ा संतोष होता है कि बहुत बड़ी संख्या में पश्चिम के स्त्री-पुरुषों के हृदयों में इसकी अद्वैत अनुक्रम हुई है, और ऐसे लोगों की संख्या दिनोंदिन बढ़ रही है | (यंग, 17-9-1925, पृ. 320)
अपनी सीमित क्षमताओं के कारण, जिनका मुझे दुखद बोध है, मैं समझता हूँ कि मुझे अपने प्रयोगों को पूर्वी के एक खंड तक ही सीमित रखना चाहिए | जो चीज एक खंड के लिए सही है वह संपूर्ण इकाई के लिए भी सही होनी चाहिए....मैं सारी दुनिया में सहायता देने के लिए लालामित हूँ | वह आ भी रहा है....लेकिन मैं जानता हूँ कि इससे पहले कि एक प्रचार प्रवाह के रूप में – जो हमें भुद भी करेगा और स्फूर्त भी देगा – हमारे पास आए, हमें स्वयं को इसके योग्य बनाना होगा | (वहीं, पृ. 322)

भाईचारे का लक्ष्य
मेरा लक्ष्य केवल भारतीयों के बीच भाईचारे की स्थापना नहीं है | मेरा लक्ष्य केवल भारत की स्वतंत्रता नहीं है, यद्यपि इसमें संदेह नहीं कि आज मेरा लक्ष्य पूरा जीवन और पूरा समय इसी में लगा है | लेकिन भारत की आज्ञाओं को हासिल करने के जरिए मैं संपूर्ण मानवता के बीच भाईचारे के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता और भारतीय राष्ट्रभक्ति कोई एकांकित वस्तु नहीं है | यह सर्वसमावेशी है और मैं उस राष्ट्रभक्ति को नकार दूंगा जो अन्य राष्ट्रियों के दुख और शोषण पर सवार होने का प्रयास करेगी | राष्ट्रभक्ति की मेरी धारणा निरन्तर है यदि
संपूर्ण मानवता की अधिकतम भलाई के साथ इसकी, निरपवाद रूप से, पूरी-पूरी संगति न हो | यही नहीं, मेरे धर्म और उससे व्युत्पन्न मेरी राष्ट्रविरोध में संपूर्ण प्राप्ति कम समावश्चित है | मैं केवल मानव जाति के बीच ही भाईचारे अथवा उसके साथ तात्तात्य की स्थापना करना नहीं चाहता, बल्कि पृथ्वी पर रंगने वाले जीवों सहित समस्त प्राणिज्ञात के साथ तात्तात्य स्थापित करना चाहता हू | यदि अपना सुनकर धकका न लगे तो मैं कहना चाहूंगा कि मैं पृथ्वी पर रंगने वाले जीवों के साथ भी तात्तात्य स्थापित करना चाहता हूं, क्योंकि हम सब एक ही ईश्वर की संतान हैं | इसलिए जीवन जितने रूपों में है, सब मूलतः एक ही है | (यंग, 4-4-1929, पृ. 107)

मैं भारत का मिश्रा सेवक हूं और भारत की सेवा करने का प्रयास करते हुए, मैं समूनी मानवता की सेवा कर रहा हूं | मैंने अपने जीवन के आर्थिक दिनों में ही यह समझ लिया था कि भारत की सेवा और मानवता की सेवा के बीच कोई विरोध नहीं है | जैसे-जैसे मैं बढ़ा हुआ, और शायद मेरी बुद्धि का भी विकास हुआ, मुझे लगने लगा कि मेरी धारणा ठीक ही थी और आज लगभग 50 वर्ष के सार्वजनिक जीवन के बाद, मैं यह कह सकता हूं कि मेरा इस सिद्धांत में विश्वास और दृढ़ हुआ है कि देशसेवा और विश्वसेवा के बीच कोई विरोध नहीं है | यह एक अच्छा सिद्धांत है | इसे अंगीकार करने से ही विविध की स्थिति में तनाव घटे और विभिन्न राष्ट्रों के बीच पारस्परिक ईश्वर व्यूह होती है | (हाई, 17-11-1933, पृ. 5-6)

स्वाधीनता बनाम परस्परनिर्भरता

एकांतिक स्वाधीनता विश्व-राज्यों का लक्ष्य नहीं है | उनका लक्ष्य परस्परनिर्भरता है | (यंग, 17-7-1924, पृ. 236)

दुनिया के समझदार लोग आज ऐसे परस्म स्वाधीन राज्यों की स्थापना के पक्ष में नहीं हैं जिनके बीच संघर्ष चलता रहे, बल्कि वे मेंसीपूर्ण स्वाधीन राज्यों के परिसंघ के पक्ष में हैं | ऐसे परिसंघ की स्थापना में शायद अभी काफी समय लगे | मैं अपने देश के बारे में कोई लंबे-चोटे दावे करना नहीं चाहता | लेकिन अगर हम स्वाधीनता के बजाय सार्वभौम परस्परनिर्भरता के लिए तैयार हो जाएं तो यह कोई बहुत बड़ी या असंभव बात नहीं होगी | मैं चाहता हूं कि हम आजादी का जोर दिखाने के बजाए पूरी तरह आजाद होने की योग्यता का विकास करें | आज जबकि ब्रिटेन साम्राज्य के भीतर भारत को बराबरी का दर्जा देने के अपने इरादे की घोषणा करने जा रहा है, मैं जो भी योजना बनाउंगा उसका ध्येय मैत्री होगा, मैत्रीसंहत स्वाधीनता नहीं | (यंग, 26-12-1924, पृ. 425)

सामाजिक परस्पर संबंध

मनुष्य का आदर्श जितना आत्मनिर्भरता है उतना ही परस्परनिर्भरता भी है और यही होना चाहिए | मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है | समाज के साथ परस्पर संबंध रखे बिना वह विश्व के साथ एकात्मता स्थापित नहीं कर सकता अथवा अपने अहंकार का दमन नहीं कर सकता | उसकी सामाजिक परस्परनिर्भरता उसे अपनी आस्था की परीक्षा लेने और विचार की व्याख्या को कसोटी पर कसने का अवसर देती है | यदि मनुष्य इस स्थिति में होता
या स्वयं को रख सकता कि वह अपने साथियों पर तनिक भी निर्भर न हो तो वह इतना गर्वीता और दंभी हो जाता कि पृथ्वी के ऊपर वसतुः भार बन जाता और उसके लिए कंटक सिद्ध होता | समाज पर निर्भर रहने के कारण ही उसमें मानवता का विकास होता है | यह तो ठीक है कि मनुष्य इस योग्य होना चाहिए कि अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर सके; लेकिन मुझे इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि यदि स्वावलंबन की भावना का विस्तार इस सीमा तक किया जाए कि मनुष्य समाज से अलग-थलग पड़ जाए तो यह पाप जैसी ही होगा | आदमी कपास उगाने से सूत काटने तक के सारे काम अकेला नहीं कर सकता | उसे किसी-न-किसी काम में अपने परिवार के अन्य सदस्यों की सहायता लेनी पड़ती है | और, यदि आदमी अपने परिवार की सहायता लेने है तो अपने पड़ोसी की क्यों नहीं ? अन्यथा, इस महान उक्ति का कि ‘संपूर्ण विश्व मेरा परिवार है’ क्या महत्व रह जाता है ? (यंग, 21-3-1929, पृ. 93)

हमें यह नहीं...भूलना चाहिए कि मनुष्य की सामाजिक प्रकृति ही उसे पशुजगत से भिन्न बनाती है | यदि स्वाधीन होना उसका विशेषधिकर है तो परस्परनिर्भरता उसका कर्तव्य है | कोई दंभी व्यक्ति ही दुनिया के तमाम लोगों से स्वतंत्र और स्वत:पूर्ण होने का दावा कर सकता है | (यंग, 25-4-1929, पृ. 135)

व्यक्ति

समाज में जीने के लिए व्यक्तिगत स्वाधीनता और परस्परनिर्भरता, दोनों आवश्यक हैं | पूरी तरह आत्मनिर्भर तो कोई सोव्हिज़न क्रूस ही हो सकता है | अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यथासंभव प्रयास कर लेने के बाद, मनुष्य शेष आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से सहयोग मांगेगा | यही सच्ची सहकारिता होगी! (यंग, 31-3-1946, पृ. 59)

आत्मशौचन मनुष्य का उदात्त बनाता है जबकि दूसरों का शोधन उसे भ्रष्ट करता है | हमें सामूहिक जीवन की कला और गुण को सीखना चाहिए जिसमें सहकारिता की परिधि निरंतर विस्तृत होती जाती है, यहां तक कि अंत में वह सारी मानव जाति को अपने में समाविष्ट कर लेती है | (यंग, 14-12-1947, पृ. 465)

ऐसा एक भी गुण नहीं है जिसका लक्ष्य केवल व्यक्ति का कल्याण हो | इसके पिरपीत, ऐसा एक भी दोष नहीं है जो वास्तविक दोष के अलावा, प्रस्ताव या अप्रस्ताव रूप से, और बहुत-से लोगों को प्रभावित न करता हो | इसलिए व्यक्ति का अच्छा या बुरा होना केवल उसी का सरोकार नहीं है, बल्कि पूरे समुदाय या कहना चाहिए कि पूरी दुनिया का सरोकार है | (एरी, पृ. 55)

मानव जाति एक है, क्योंकि नैतिक नियम सब पर समान रूप से लागू हैं | ईश्वर की दृष्टि में सभी लोग बराबर हैं | यह ठीक है कि लोगों में प्रजाति, हैसियत आदि को लेकर अंतर पाए जाते हैं, पर जिस व्यक्ति की हैसियत जितनी ऊंची है, उसकी जिम्मेदारी भी उतनी ही ज्यादा है | (वहीं, पृ. 57)
में इसमें विश्वास नहीं करता....कि एक आदमी का आध्यात्मिक लाभ हो जाए और उसके आसपास के लोग दुख में लिप्त रहें | मैं अंदेश में विश्वास करता हूं, मुझे मनव की ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र की अनिवार्य एकता में विश्वास है | इसलिए मेरा विश्वास है कि अगर एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ मिलता है तो उसके साथ सारी दुनिया का लाभ होता है, और अगर एक आदमी का पतन होता है, तो उस सीमा तक सारी दुनिया का पतन होता है | (यंग, 4-12-1924, पृ. 398)

आत्मबलिदान की तार्किक परिणति यह है कि व्यक्ति समुदाय के लिए अपना बलिदान करे, समुदाय जिले के लिए, जिला प्रांत के लिए, प्रांत राष्ट्र के लिए, और राष्ट्र संसार के लिए अपना बलिदान करे | समुद्र से छिटकी हुई बूंद किसी का भला किए बिना नष्ट हो जाती है | यदि वह समुद्र का अंश बनी रहती है तो अपने वक्ष पर शक्तिशाली पोतों के बेड़े के तरण का गौरव प्राप्त करती है | (हरि, 23-3-1947, पृ. 78)
92. नस्लवाद

यह संभव नहीं है कि मनुष्य अपने जीवन के एक क्षेत्र में तो गलत काम करता रहे और किसी दूसरे क्षेत्र में सही काम करे | जीवन एक अविभाज्य सम्पत्ति है | (यंग, 27-1-1927, पु. 31)

मेरी जीवन-योजना जिस प्रकार भारत के भिन्न-भिन्न धर्मावलंबियों के बीच भेद नहीं मानती उसी प्रकार भिन्न-भिन्न प्रजातियों के बीच भी कोई भेद नहीं मानती | मेरी दृष्टि में ‘मनुष्य बस मनुष्य है’ | (यंग, 20-2-1920, पु. 61)

श्वेत नीति

दक्षिण अफ्रीका की श्वेत नीति में विश्व-युद्ध का बीज छिपा है | (हरर, 24-3-1946, पु. 52)

क्या श्वेत लोगों की वास्तविक श्वेतता को कानून के रूप में बाहरी सहारों की आवश्यकता है ? (कहीं)

जिस सभ्यता को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए प्रजाति कानून और अपहरण कानून जैसे संदिग्ध सहारों की आवश्यकता अनुभव होती हो, क्या उसे सभ्यता कहा जा सकता है ? (हरर, 30-6-1946, पु. 204)

प्रतिशोध

अश्वेत प्रजातियों को यदि किसी ने सत्यग्रह का अस्त न धमाल में तो एक दिन वे अपने श्वेत अत्याचारियों के विरुद्ध प्रतिशोधकारी अटील की तरह उठ खड़ी होंगी | (हरर, 19-5-1946, पु. 134)

यदि दक्षिण अफ्रीका में अपहरण कानून को लागू किया गया तो यह श्वेत सभ्यता के इतिहास पर एक कलंक होगा | मुझे अश्वेत जाति की सरकार और मानव जाति की सभ्य अंतश्चेतना ऐसा नहीं होने देगी| (कहीं, पु. 206)

यह नयी प्रजाति-व्यवस्था भारत की प्राचीन जाति-व्यवस्था से भी बुरी है जो समाप्तप्राप्त है, पर जिसमें कुछ अच्छाइयां भी हैं | जाति-व्यवस्था के इस नये व्यवस्था में तो एक भी अच्छाई नहीं है | यह बेहताई के साथ इस बात की घोषणा करती है कि श्वेत सभ्यता को पशियाइयों और अफ्रीकियों से अपनी रक्षा करने के लिए कानूनी अवरोध खड़े करने जरूरी हैं | (हरर, 2-6-1946, पु. 157)

’श्वेत जाति का भार’

श्वेत जाति का वास्तविक भार उसके द्वारा संरक्षण के नाम पर धृष्टतापूर्वक किया जा रहा भूरे अथवा काले लोगों का आधिपत्य नहीं है, बल्कि इस पाखंड से बाज आना है जो भीतर-ही-भीतर उसे खाए जा रहा है | समय आ गया है जब गोरों की यह मान लेना चाहिए कि सभी लोग समकक्ष हैं | चमड़ी की सफेदी के पीछे कोई रहस्य नहीं है |
यह बारंबार सिद्ध हो चुका है कि समान अवसर मिलें तो किसी भी रंग या देश का व्यक्ति दूसरों के पूर्णतया समकक्ष बनकर दिखा सकता है।

....."ओरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें।" जिस महान पुरुष के ये शब्द हैं, उसका नाम क्या गोरे लोग बूढ़-मूढ़ ही लेते हैं? जिस महान अश्रुत एशियाई ने दुनिया को उपर्युक्त संदेश दिया था, क्या उन्होंने उसका नाम अपने हृदयपट्ट से बिलकुल ही मिटा दिया है?

क्या वे इस बात को भूल गए हैं कि मानव जाति के महानतम उपदेशक सभी एशिया की तरह जिनके चेहरे गोरे नहीं थे? जिस महान पुरुष यदि आज पृथ्वी पर उतर आए और दक्षिण अफ्रीका जाएं तो वहां इन सभी को पृथ्वी के बस्तियों में रहना होगा, उन्हें एशियाई तथा अश्रुत माना जाएगा, जो कानूनी मजदूरों की बराबरी करने योग्य नहीं हैं?

(हरि, 30-6-1946, पृ. 204)

प्रजातिवाद का उन्मूलन

जो लोग यह मानते हैं कि प्रजातिगत असमानता का उन्मूलन किया जाना चाहिए, लेकिन फिर भी उस बुराई के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए कोई प्रयास नहीं करते, वे नयुक्त हैं। मुझे इन लोगों से कुछ नहीं कहना है और अंतत: पदवियों को अपना उद्देश्य स्वयं ही करना होगा। समाधान काफी हद तक भारत के हाथों में है। यदि भारत की आंतरिक स्थिति सब प्रकार से ठीक रही तो वह शायद इस समस्या के निपटारे में कारगर भूमिका निभाएगा।

यदि राष्ट्रसंघ दक्षिण अफ्रीकी-भारतीय विवाद को न्यायपूर्ण ढंग से चुलझाने में असफल रहता है तो उसकी प्रतिहारा समाप्त हो जाएगी। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि राष्ट्रसंघ तभी आगे बढ़ सकता है जब वह न्याय का पक्ष ले।

(हरि, 26-10-1947, पृ. 385)
93. युद्ध और शांति

युद्ध में मेरी भागीदारी

इतने वर्षों तक आत्मविश्वासन करने के बाद भी मैं यह अनुभव करता हूँ कि बोअर युद्ध और बुहत यूरोपीय युद्ध तथा इसी प्रकार, 1906 में नेटाल में हुए तथाकथित जुडूं ‘विद्रोह’ के समय जिन परिस्थितियों में मैं था, उनमें मैं वही कार्य करने के लिए दिशा नहीं मिलने की |

जिंदगी एक ही साथ कई बलों द्वारा संचालित होती है | अगर आदमी अपनी कार्य-दिशा का निर्धारण आखिर मुंदकर, एक ही सामान्य सिद्धांत पर चलते हुए कर सके तो जीवन बड़ा सीधा-सरल हो जाए | लेकिन मुझे अपना एक भी काम ऐसा याद नहीं आता जिसका निर्णय इतनी सरलता से किया जा सका हो |

युद्ध का पक्का विरोधी होने के कारण मैंने प्रशिक्षण के अवसर मिलने के बावजूद बन चुका दिनांक शिवुकी हथियारों को चलाने का प्रशिक्षण नहीं लिया | संभवतः इसी कारण मैं मानव जीवन का प्रयत्नवाह करने से बच गया | लेकिन जब तक मैं एक ऐसी शासन-प्रणाली के अधीन रह रहा था और उस प्रणाली द्वारा मेरे लिए उपलब्ध कराई गई वस्तुओं तथा विशेषधारकों का स्वेच्छापूर्वक उपभोग कर रहा था तब तक मेरे लिए यह लाभमी था कि युद्ध में उलझी सरकार की अपनी योग्यता नुसार सहायता करता | हां, यदि मैं सरकार से असहयोग कर देता और उसके द्वारा प्रदत्त विशेषधारकों का अपनी शक्ति भर लगाने के लिए अवसर आये तो जीवन बड़ा सीधा-सरल हो जाए | लेकिन मैं ऐसा नहीं करता,

आईए, हम एक उदाहरण द्वारा इस तरह कार्य करे मैंने किसी संस्था का सदस्य भी नहीं था जिसके पास कुछ एकदम जमीन है; इस पर खड़ी फसल को बंदरों द्वारा तुरंत नष्ट किये जाने का खतरा है | जीवन की पवित्रता में विश्वास होने के कारण मैं बंदरों को चोट पहुंचाना अहिंसा का उल्लंघन मानता हूँ | लेकिन मैं फसल को बचाने की खातिर बंदरों पर हमला करने के लिए उसे हमला लगाने का अनुकूलन करने में संकोच नहीं करता | यदि मैं इस बुराई से बचना चाहूँ तो मैं संस्था को छोड़ देंगे या उसे तोड़कर उससे बच सकता हूँ | लेकिन मैं ऐसा नहीं करता, क्योंकि मुझे ऐसा समाज शायद कहीं न मिले जहां मैं पहुंच जाती हूँ और इसलिए जहां भी हिंसा होती है, अतः मैं इसे अपने दर्जनों द्वारा बंदरों पर किये जाने वाले हमले में हिंसा लेता हूँ....

इसी मनोवृत्ति को लेकर मैंने तीनों लड़ाइयों में हिंसा लिया | मैंने जिस समाज में रहता था, उसके साथ संबंध नहीं था; ऐसा करना पागलपन ही था | इस कारण मैं अपने अवसरों पर, ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग करने की बात मेरे विचार में आयी ही नहीं थी | आज उस सरकार के संबंध में मेरी स्थिति बिलकुल भिन्न है, अत: मुझे स्वेच्छा से उसके युद्धों में भाग नहीं लेना चाहिए | यदि मुझे उसकी सैनिक कार्यवाहियों के
सिलसिले में हथियार उठाने या किसी अन्य रूप में भाग लेने के लिए मजबूर किया जाए तो मुझे ऐसा करने के बजाए जेल जाने या फांसी के तख्ते पर चढ़ने का खतरा भी उठाना चाहिए। (यंग, 13-9-1928, पृ. 308)

राष्ट्रीय नागरिक सेना

...यदि देश में राष्ट्रीय सरकार हो तो, हालांकि मैं स्वयं किसी युद्ध में भाग नहीं लूंगा या युद्ध में भाग नहीं लूंगा पर, इस बात की नीति आ सकती है कि जो लोग सैनिक प्रशिक्षण लेना चाहते हैं उनके प्रशिक्षण का समर्थन करना अपना कर्तव्य समझने का खतरा भी उठाना चाहिए। (यंग, 13-9-1929, पृ. 10)

अहिस्सा की कार्यप्रणाली

अहिस्सा बड़े ही रहस्यमय दंगा से काम करती है | बहुत बार, मनुष्य के कार्यक्षेत्र को अहिस्सा की तुला पर तोलना असंभव हो जाता है | इसी प्रकार, अनेक बार मनुष्य के कार्यक्षेत्र देखने में तो हिंसक प्रतीत होते हैं, पर अत्यधिकतम में वह उच्चतम स्तर की अहिस्सा का पालन कर रहा होता है और बाद में, यह पूरी तरह स्पष्ट बन जाता है | मैं तो यही देखा जाता है कि, उल्लिखित अवसर पर, मेरा व्यवहार अहिस्सा के हितों के अनुरूप ही था | किसी अन्य हिंदी के बलि देकर स्वार्थपूर्ण राष्ट्रीय अथवा अन्य किसी हिंदी के साथ का विचार मेरे मन में बिलकुल नहीं था....
मेरी दृष्टि में, अहिंसा केवल एक दार्शनिक सिद्धांत ही नहीं है | यह मेरे जीवन का नियम और उसकी श्रास्त्र है | मैं जानता हूँ कि मैं कभी जान-बूझकर और ज्यादातर अनजाने में, अहिंसा के पालन में असफल हो जाता हूँ | यह मामला बुद्धि से नहीं बल्कि हृदय से संबंधित है | सच्चा मार्गदर्शन निरंतर भगवान की सेवा, अधिकतम विनम्रता, आमतौर और हर समय आमबलिदान के लिए तैयार रहने से प्राप्त होता है | अहिंसा का पालन करने के लिए उच्चतम कोटि के अभय और साहस की आवश्यकता होती है | मुझे अपनी कभी क्षमायें के दुखद बोध है | लेकिन मेरे भीतर का प्रकाश स्पर्श एवं स्पष्ट है | हममें से किसी के लिए सत्य और अहिंसा के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है | मैं जानता हूँ कि युद्ध समाप्त अवस्था होगा | मुझे पक्का विश्वास है कि रक्तपात और छल-कपट से हाशसल की गई आज़ादी कोई आज़ादी नहीं होती | ....मानव जाति का नियम हिंसा और असत्य नहीं है, बल्कि अहिंसा और सत्य है | (यंग, 30-1-1930, पृ. 37)

सैन्य सेवा

सैन्य सेवा से इंकार करना ही काफी नहीं है | करना यह है कि इस बुराई से लड़ने के लगभग सभी उपाय नाकाम हो जाने के बाद, जब लड़ाई की नींद आ जाए तो हम सैन्य सेवा करने से इंकार कर दें | सैन्य सेवा तो एक गंभीर बीमारी का ऊपरी लक्षण मात्र है | मैं कहता हूँ कि जिन लोगों के नाम सैन्य सेवा के रजिस्टर में दर्ज नहीं हैं, वे भी यदि किसी भी रूप में राज्य को समर्पित प्रदान कर रहे हैं तो हिंसा में भागीदारी करने के उतने ही दोषी हैं | सैन्य पद्धति पर संगठित राज्य को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से समर्पित देने वाले सभी सी-पुरुष युद्ध में भागीदारी करने के दोषी हैं | प्रत्येक व्यक्ति, वह बुढ़ा हो या जवान, जो राज्य के खर्च के लिए कर देता है, युद्ध में भागीदारी करने का दोषी है | इसीलिए युद्ध के दौरान मैंने अपने-आप से कहा कि जब तब मैं सेना की सहायता से प्राप्त गेहूं खाने वाले बिना दे सकते हुए दंगा हुआ है | ऐसी सूरत में सबसे अच्छा यही है कि मैं सेना में भर्ती होकर दुसरे की गोली का शिकार हो जाऊँ | यदि मैं ऐसा न कर पाऊँ तो मुझे हिमालय की ओर प्रस्थान कर देना चाहिए और प्रकृति द्वारा उपलब्ध खाद्य पदार्थों पर निर्भर करना चाहिए |
इसलिए वे सभी लोग जो सैन्य सेवा को रोकना चाहते हैं, सरकार के साथ हर तरह का सहयोग समाप्त करके ही ऐसा कर सकते हैं | सरकार को समर्थन देने वाले संपूर्ण तंत्र के साथ असहयोग करने की तुलना में सैन्य सेवा से इंकार करना कहीं ज्यादा सत्य है | लेकिन तब आपका विरोध इतना तेज और कारगर रूप ले लेगा कि या तो आप जेल में ठूंस दिए जाएंगे या घरों से निकालकर सड़कों पर फेंक दिए जाएंगे | (यंग, 31-12-1931, पृ. 426)

युद्ध का प्रतिरोध

जब दो राष्ट्रों में लड़ाई हो रही हो तो अहिंसा के पुजारी का कर्तव्य यह है कि युद्ध को रुकवाए | जो इस कर्तव्य का निर्वाह करने में अक्षम है, जिसमें युद्ध का प्रतिरोध करने की शक्ति नहीं है, जिसमें युद्ध का प्रतिरोध करने की पात्रता नहीं है, वह युद्ध में हिस्सा ले सकता है और फिर भी स्वयं को, अपने राष्ट्र को और दुनिया को युद्ध से मुक्त करने के लिए भरसक प्रयास कर सकता है | (ए, पृ. 258)

यह इस बात में....पक्का विश्वास है कि युद्ध एक विश्वेद के रूप में है | कोई भी कहे, मैं युद्ध के प्रति अपना घृणा-भाव नहीं छोड़ूंगा | लेकिन विश्वास एक बात है और सभी आवरण दूसरी बात | युद्ध के विषय में एक जैसा दृष्टिकोण होने पर भी युद्ध का प्रतिरोध करने वाला एक व्यक्ति अपने ध्येय के लिए जो काम करेगा, ही सकता है कि कोई दूसरा युद्धविरोधी उसे बिलकुल वसंत न करे और उससे बिलकुल उलटा काम करे | यह विरोध मानव प्रकृति की विस्मयकारी जितिलता के कारण उत्पन्न होता है | मैं तो बस यही आग्रह कर सकता हूँ कि एक ही मत का प्रचार करने वाले लोगों के बीच भी परस्पर सही सहायता हो | (यंग, 7-2-1929, पृ. 46)

जब तक युद्ध के कारणों को नहीं समझा जाएगा और उनको जड़ से नष्ट नहीं किया जाएगा तब तक युद्ध को रोकने के सारे प्रयत्न व्यर्थ होंगे | क्या आधुनिक युद्धों का प्रमुख कारण दुनिया की तथा अमानवीय होड़ नहीं है? (यंग, 9-5-1929, पृ. 148)

यदि युद्ध में एक भी अथवा न होती, यदि उसके पीछे दायित्व और वीरता न होती तो वह एक निन्दनीय चीज़ होती और उसे नष्ट करने के लिए भाषण न देने पड़ते | लेकिन मैं जो युद्ध देने जा रहा हूँ वह रेडक्रास संगठन सहित युद्ध के सभी उपक्रमों से कहीं ज्यादा उदार है | मेरा विश्वास कीजिए, इस दुनिया में और भी करोड़ों बंदी मौजूद है – अपने मनोनेंद्रों तथा जीवन की दशाओं के दास; मेरा विश्वास कीजिए कि इस दुनिया में करोड़ों लोग अपनी मृदुता से आहत हैं और करोड़ों घर बरबाद हैं | इसलिए कल की शांति समितियां जब अंतर्राष्ट्रीय सेवा हाथ में लेंगी तो उनके पास करने के लिए बहुत काम होगा.... (यंग, 31-12-1931, पृ. 427)

आज हमारे चारों ओर जो हो रहा है वह अहिंसा के नियम का घोर उपेक्षा और हिंसा के नियम की पूजा है मानो कि यही शाश्वत नियम हो....हम देख रहे हैं कि आज शांतीकरण के मामले में एक-दूसरे को मात्र देने के लिए पागल दोढ़ हो रही है | और टकराव की घड़ी आने पर – जो आएगी जरूर – अगर लोकतंत्र विजयी होने तो
केवल इसलिए कि उन्हें अपनी जनता का समर्थन प्राप्त है जो यह समझती है कि अपनी सरकार को चलाने में उनका भी योगदान है.... (हर्र, 11-2-1939, पृ. 8)

द्वितीय विश्व युद्ध

व्यक्तिगत रूप से इस विचार है कि विश्व युद्ध का अंत महाभारत के युद्ध जैसा ही होगा | त्रावनकोर के एक सज्जन ने महाभारत को मानव का स्थायी इतिहास बताया है, और यह बिलकुल सही है | उस महाकाव्य में जो वर्णन किया गया है, वही आज ज्यों-का-लिये हमारी आंखों के सामने पटित हो रहा है | युद्धरत राज्य जिस उन्माद और क्रुद्धता के साथ सवन्त को नष्ट कर रहे हैं उससे लगता है कि अंत में उन सभी की शक्ति चूक जाएगी | तब विजयी राष्ट्रों की वही हालत होगी जो पाषाणों की हुई थी | महाभारती अर्जुन को दिनदहाड़े एक मामूली लुटेरे ने लूट लिया था | आज के इस विरोध में से एक नयी व्यवस्था जन्म लेगी जिसके लिए करोड़ों शोषित मज़दूर तरस रहे हैं | शांतिप्रेमियों की प्रार्थना वर्य उन्हीं जा सकतीं | सत्याग्रह व्यवस्था व्यक्ति आमा की अचूक मौन प्रार्थना है | (हर्र, 15-2-1942, पृ. 40)

कुछ लोगों की दलील है कि घृणा को प्रेम में नहीं बदला जा सकता | जिन्हें हिसामें विश्वास है, वे स्वभावतः यहीं कहेंगे, "अपने शत्रु को, जहां भी हो सके, खुल्लमखुल्ला या चोरी-छिपे, जैसी आवश्यकता हो, मारो; उसे और उसकी संपत्ति को नुकसान पहुंचाओ।" नतीजा यह होगा कि दोनों ओर नफरत, जबाबी नफरत और प्रतिशोध का जोर-शोर से घोषणा कर दी है | जब यह देखना बाकी है कि तथाकथित विजयी राष्ट्र समुच्च विजयी हुए हैं या कि अपने शत्रुओं को गिराने के प्रयास में खुद भी गिर गए हैं | (हर्र, 24-2-1946, पृ. 20)
94. परमाणु युद्ध

अणु बम

संसार में प्रत्यक्ष परिवर्तन हुए हैं | क्या मैं अब भी सत्य और अशहंसा के प्रति अपनी आस्था पर दूर हूँ? | क्या अणु बम ने इस आस्था को ध्वस्त नहीं कर दिया है? | न सिर्फ यह कि अणु बम ने ऐसा नहीं किया है, बल्कि इसने मुझे स्पष्ट सूचना दी है कि विश्व में सत्य और अशहंसा ही सर्वोपरि शक्तियां हैं | इसके सामने अणु बम बेरोज़ नहीं है | ये दो विरोधी बल एक-दूसरे से विकृतिभीत्र प्रकार के हैं, एक नैतिक तथा आध्यात्मिक है और दूसरा ध्न्य तथा भौतिक | पहला निकाशील रूप से दूसरे की तुलना में शक्ति है जिसकी प्रकृति ही ऐसी है कि उसका अंत अवश्यंभावी है | आत्मा का बल सदा प्रगामी और अनंत होता है | पूर्वतया अभिव्यक्ति होने पर संसार की कोई शक्ति उसे पराजित नहीं कर सकती | मैं जानता हूँ कि ऐसा कहकर मैंने कोई नयी बात नहीं कही है | मैं तो तथ्य का साक्षी बन दूं | बड़ी बात है कि प्रत्येक सँग, प्रत्येक चेर में – उसकी चमड़ी का रंग कोई भी हो – इस बल का नियास है | बस यही है कि बहुत-से लोगों में यह सुप्ता रूप में होता है | लेकिन सुविचारित प्रशिक्षण के द्वारा इसे जगाया जा सकता है | यह बात भी समझ पक्षी है कि इस सत्य को पहचानने वाला और उसे प्राप्त करने का समुचित प्रयास किए बिना मनुष्य आमतौर से बच नहीं सकता | उपाय यही है कि प्रत्येक व्यक्ति इस बात की चिंता किए बिना कि उसका प्रभाव उसे पराजित नहीं कर सकती | मैं जानता हूँ कि ऐसा कहकर मैंने कोई नयी बात नहीं कही है | मैं तो तथ्य का साक्षी बन दूं | बड़ी बात है कि प्रत्येक सँग, प्रत्येक चेर में – उसकी चमड़ी का रंग कोई भी हो – इस बल का नियास है | बस यही है कि बहुत-से लोगों में यह सुप्ता रूप में होता है | लेकिन सुविचारित प्रशिक्षण के द्वारा इसे जगाया जा सकता है | क्या अणु बम ने सभी प्रकार की हिंसा की व्यधि को सिद्ध नहीं कर दिया है? | (हरिर, 10-2-1946, पृ. 8)

समाधान अहिंसा है

अमरीकी मित्रों का कहना है कि अहिंसा लाने का काम अणु बम से ज्यादा अच्छी तरह कोई और नहीं कर सकता | यह बात ठीक हो सकती है, अगर इसका यह तात्पर्य है कि अणु बम की संहारक शक्ति दुनिया में इतनी विरूद्ध पैदा कर देगी कि वह कुछ समय के लिए हिंसा से दूर हो जाएगी | यह उसी तरह है जैसे कि कोई आदमी स्वादिष्ट व्यंजनों को हर साल अधिक मात्रा में खा लेकि उसका जी मिलियाने लगे, उसके बाद कुछ समय के लिए वह उन्हें खाना छोड़ देगा, लेकिन मिलियाने दूर होते ही दूसरे जोश से फिर उन पर टूट पड़ेगा | ठीक इसी तरह विरूद्ध का प्रभाव दूर होते ही दुनिया दुर्गम उत्साह से हिंसा की ओर लौट आएगी | प्राय: बुराई में से अच्छाई जन्म लेती है | लेकिन यह चमकार इंक्वल कर सकता है, मनुष्य नहीं | मनुष्य तो यही जानता है कि जिस प्रकार अच्छाई का परिणाम अच्छा होता है उसी प्रकार बुराई का परिणाम केवल बुरा ही हो सकता है |
इस बात की संभावना से निस्संदेह इंकार नहीं किया जा सकता कि यद्यपि अमरीकी वैज्ञानिकों और सैनिकों ने आणवक उद्देश्य का प्रयोग संहारक प्रयोजनों के लिए किया है, पर अन्य वैज्ञानिक इसे लोकोपकारी कामों के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। कंटो मेरे अमरीकी मित्रों का इशारा इस और नहीं था। वे इतने सरल नहीं कि ऐसा प्रश्न उठाएं जिसका उत्तर कोई सहज सल्व हो। आगजनी पर उतारू व्यक्ति जिस अभ्यि का इस्तेमाल अपने विनाशकारी और जघन्य इरादों को पूरा करने के लिए करता है, गृहिणी नियम उसी अभ्यि का इस्तेमाल लोगों के लिए पौष्टिक भोजन तैयार करने के वास्ते करती है।

जहां तक मैं समझता हूँ, अणु बम ने उस उल्कृष्ठतम भवना को निर्जीव कर दिया है जिसमें मानव जाति को पुरोगृहीत रखा है। यूड्ड के बीच तथाकथित नियम होते थे जिनके कारण यूड्ड सही बन जाता था। लेकिन अब सच्चाई खुलकर सामने आई है कि ताकत के अलावा यूड्ड का और कोई नया नहीं है। अणु बम ने मित्र राष्ट्रों को एक खोखली व्यजय दिला दी है, पर इसके परिणामस्वरूप फिलहाल जापान की आत्मा का नाश हो गया है।

यह देखना अभी भेष है कि विनाशकारी राष्ट्र की आत्मा की हालत क्या है? प्रकृति की शक्तियों रहस्यमोचन दंग से काम करती है। लेकिन हम अज्ञात परिणाम को इसी तरह की पिछली घटनाओं के ज्ञात परिणामों के आधार पर निकालकर इस रहस्य को सुलझा सकते हैं। दासों का मालिक दास के लिए बने पिंजरे में स्वयं को या अपने सहायक को बंद किए बिना दास को बांधकर नहीं रख सकता। कोई यह न समझ बैठें कि अपनी निरंतर आकांक्षा की पूर्ति के लिए जापानियों द्वारा किए गए कुकूरमों को मैं उत्थित ठहरा रहा हूँ। अंतर केवल मात्रा का था। मैं मानता हूँ कि जापान का लालच ज्ञात निरंतर था। लेकिन इसके कारण कम निरंतर लालच वालों को यह अधिकार तो नहीं था कि वे ज्ञात निरंतर लालच वाले जापान के किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाले स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों का निर्दयतापूर्वक संहार कर दें।

अणु बम की भीषण त्रासदी से हम यह सीख ले सकते हैं कि इसका खाम अभी जवाबी बम से नहीं होगा, वैसे ही जैसे कि हिस्सा का खाम अभियोगण्य से नहीं होता। मानव जाति केवल अभियोगण्य के जरिए ही हिस्सा पर विजय पा सकती है। घृणा को प्रेम से ही जीता जा सकता है। जवाबी घृणा केवल घृणा का विस्तार करती है और उसे गहराई है। मैं जानता हूँ कि मैं उसी बात को कहना रहा हूँ जिसे बहुत बार कह चुका हूँ। और जिस पर अपनी पूरी योग्यता और क्षमता के अनुसार आचरण करने का प्रयास करता आया हूँ। जो बात मैंने पहले कही थी वह भी नयी नहीं थी। वह भी उतनी ही पुरानी है जितने कि पहाड़ हैं। हां, यह अवस्था है कि मैंने कोई किताब दुल्हन नहीं सुनाई थी बल्कि जो आफ़ा मेरी रण-रन में बसी है, उसी की सप्त घृणा की थी। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सात वर्ष तक किए गए अमल ने इस आफ़ा को गहराया ही है तथा मित्रों के अनुभव ने भी इसकी पुष्प की है। यह केंद्रीय सत्य है जिस पर आदमी बिना हिचक अकेला ही आरूढ़ रह सकता है। मैं मैक्स्मूलर द्वारा वर्षों पहले
कहीं गई बात में विश्वास करता हूँ कि सत्य को तब तक दुःखाते जाना जरूरी है जब तक उस पर अविश्वास करने वाले लोग मौजूद हैं। (हरर: 7-7-1946, पृ. 212)

“अणु बम की अति भोजनता भी क्या दुनिया पर जबरहस्ती अहिष्ठा नहीं लाद सकती? यदि दुनिया के सभी राष्ट्रों के पास अणु बम हो जाए तो क्या वे इसका इस्तेमाल करने से बाज़ नहीं आएगे, क्योंकि तब तो सभी का पूर्णतया नाश हो जाएगा?” मेरी राय में ऐसा नहीं होगा। हिस्सक मनुष्य की आंख इस संभावना से चमक उठी जा सकती? यशद दुश्रा के सभी राष्ट्रों के पास अणु बम हो जाएं तो क्या वे इसका इस्तेमाल करने से बाज़ नहीं आएं गे क्योंकि तब तो सभी का पूणकतया ना हो जाएगा?

(हरर: 23-7-1946, पृ. 197)

बम का प्रतिकार

मैं स्त्री, पुरुषों और बच्चों के सर्वनाश के लिए अणु बम के इस्तेमाल को विज्ञान का सबसे कूर उपयोग मानता हूँ।

“इसका प्रतिकार क्या है? क्या उसने अहिष्ठा को प्रचलन से बाहर कर दिया है?” नहीं। बल्कि अब मैदान में सिर्फ अहिष्ठा ही खड़ी रह गई है। यही एक चीज़ है जिसे अणु बम नष्ट नहीं कर सकता। जब मैंने पहली बार सुना कि अणु बम ने हिंसात्मक रूप तक मिटा दिया है तो मुझमें कोई सिंहरन नहीं हुई। बल्कि मैंने स्वयं कहा, ‘अब अगर दुनिया अहिष्ठा को नहीं अपनाती तो मानव जाति को आत्महत्या करनी पड़ेगी।’

(हरर: 29-9-1946, पृ. 335)

मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब तक बड़े राष्ट्रों शासन की कामना और हिस्सा की भावना का त्याग नहीं करेंगे, जिनकी शान्त अभिव्यक्ति युद्ध और अणु बम के रूप में होती है, तब तक विश्व में शांति की आशा करना व्यर्थ है।

मैंने युद्ध के दौरान आत्मा उठाने की कोशिश की थी और ब्रिटिश जनता, हिटलर तथा जापान के नाम खुली चिटियां लिखी थीं, पर मुझे इसके लिए पंचांगमांगी करार दे दिया गया। (हरर: 10-11-1946, पृ. 389)

पूर्व के मनीषी

सबसे पहला मनीषी जड़दृश्य था। वह पूर्व का था। उसके बाद बुद्ध आए – वह भारत अर्थात पूर्व के ही थे। बुद्ध के बाद कौन आए? ईसा, वे भी पूर्व के थे। ईसा से पहले मूसा आए जो फिलस्फीनी थे, हालांकि वह पौड़ी मिस्त्र में हुए थे। ईसा के बाद मोहम्मद आए। मैने कृष्ण, राम तथा अन्य मनीषों का नाम छोड़ दिया है। मैं उन्हें कम मनीषी नहीं मानता, पर साहित्यिक जगत के लिए वे उत्तर से जाने-माने नहीं हैं। फिर भी, मुझे संसार का एक भी व्यक्ति ऐसा दिखाई नहीं देता जो ईश्वर के इन महापुरुषों की बराबरी कर सके। पर फिर क्या है? ईसाई धर्म मुझे जब पश्चिम में गया तो उसका स्वरूप विकृत हो गया। मुझे यह कहते हुए दुःख हो रहा है। मैं इस विषय की चर्चा और अधिक नहीं करूंगा....
एशिया का संदेश

मैं चाहता हूँ कि आप एशिया के संदेश को समझें। इसे आप पक्षिम के चश्मे या अणु बम की नकल करके नहीं समझ सकते। यदि आप पक्षिम को कोई संदेश देना चाहते हैं तो वह प्रेम का और सत्य का संदेश होना चाहिए।...लोकतंत्र के इस युग में, निर्धनतम व्यक्तियों के जागरण के इस युग में, आप और भी अधिक बल देकर यह संदेश दुर्घट सकते हैं। आप यह सोचें कि चूँकि पक्षिम ने हमारा शोषण किया है, इसलिए हम इसका बदला लेंगे। तो आप पक्षिम को पूरी तरह नहीं जीत सकते। आप उसे सच्ची समझदारी का व्यवहार करके ही जीत सकते हैं। मुझे आशा है कि यदि आप बुद्धि ही नहीं बल्कि अपने दलदल को हम एकजुट करके पूर्व के इन मनीषयों द्वारा हमारे लिए छोड़े गए संदेश के सहर को समझेंगे और स्वयं को उस महान संदेश के सही उत्तराधिकारी सिद्ध करेंगे तो पक्षिम की हमारी विजय पूर्णता को प्राप्त हो सकेगी। इस विजय पर पक्षिम को भी प्रसन्नता होगी।

आज पक्षिम ज्ञान के लिए तरस रहा है। वह अणु बमों की संख्या में वृद्धि से हताश है, चूँकि अणु बम का अर्थ है, न केवल पक्षिम बल्कि सारी दुनिया का विनाश। मानो कि बाइबल की भविष्यवाणी सही सिद्ध होने जा रही है और पूर्ण प्रत्येक आकर ही रहेगी। यह आपका कर्तव्य है कि आप दुनिया को उसकी बुराई और पाप के बारे में बताएं। यह विरासत है जिसकी सीख आपके ओर ऐसे गुरुओं ने एशिया को दी है। (हरिद, 20-4-1947, पृ. 116-17)

सच्ची अहिंसा के मुकाबले पर आते ही हिंसा का हथियार, भले ही वह अणु बम हो, नाकाम साबित हो जाता है। (हरिद, 1-6-1947, पृ. 172)
95. शांति का मार्ग

(अ) निरस्तीकरण

मेरा कहना है कि अहिंसा का सिद्धांत राष्ट्रों के बीच भी सच्चा सिद्ध होता है | मैं जानता हूँ कि अगर मैं गत युद्ध की चर्चा करता हूँ तो वह एक नाजुक मामले को छेद़ना होगा | फिर भी, स्थिति को स्पष्ट करने के लिए मुझे ऐसा करना ही होगा | जहाँ तक मैं समझा हूँ, गत युद्ध उभय पक्षों के लिए विवर्धन का युद्ध था | यह दुर्बल राष्ट्रों के शोषण से प्राप्त दौलत को बांटने का युद्ध था – जिसे प्रीतिका का रूप देकर विष्ठ-वाणिज्य कहा जाता है....अगर देखेंगे कि यूरोप में आम निरस्तीकरण की शुरुआत – यूरोप को आम्हत्ता नहीं करनी तो आगे-पीछे होनी ही चाहिए – से पहले किसी राष्ट्र को बड़े खतरों में लेते हुए स्वयं को निरस्त करने का साहस दिखाना होगा | अगर किसी राष्ट्र ने यह सुखद कदम उठाया तो उस राष्ट्र में अहिंसा का स्तर इतना उठ चुका होगा कि सारी दुनिया उसे आदर की दृष्टि से देखेगी | सभी राष्ट्रों के निर्णय बटटिया होंगे, वह दुःस्विराम होगा, उसमें आत्मसम्पत्ति की भारी क्षमता होगी और वह जितनी अपनी भलाई चाहेगा उतनी ही दूसरे राष्ट्रों की भी चाहेगा | (यूग, 8-10-1925, अप्रैल, 345)

अफीम के उत्पादन की तरह, तलवारों के विक्षेपण को भी प्रशंसा किया जाना चाहिए | दुनिया की बरबादी के लिए तलवार शायद अफीम से भी ज्यादा जिम्मेदार है | (यूग, 19-11-1925, अप्रैल, 397)

तट्स्थ राज्य का कर्तव्य

"चूंकि निरस्तीकरण मुख्यतः बड़ी शक्तियों पर निर्भर करता है, इसलिए स्विट्जरलैंड से, जो एक छोटा-सा और तट्स्थ राष्ट्र है, निरस्त्र होने का आग्रह क्यों किया जाना चाहिए?"

आपके देश की तट्स्थ भूमि से मैं केवल स्विट्जरलैंड को ही नहीं, बल्कि सभी शक्तियों को संबोधित कर रहा हूँ | अगर आप इस संदेश को यूरोप के अन्य भागों तक नहीं पहुँचाएंगे तो मैं पूरी तरह दोषमुक्त हो जाऊंगा | इस बात को ध्यान में रखते हुए कि स्विट्जरलैंड एक तट्स्थ क्षेत्र है और अनाक्रमणकारी राष्ट्र है, यह और भी पुकार संगत है कि स्विट्जरलैंड के लिए सेना रखना आवश्यक नहीं होना चाहिए | दूसरी बात यह है कि आपकी आत्मा-प्रेरणा और अनुकूल स्थिति के कारण ही अन्य राष्ट्रों के लोग आपके यहां आते हैं | आपके लिए दुनिया को निरस्तीकरण का पाठ पढ़ना और यह दिखाना संभव होना चाहिए कि आप इतने बहादुर हैं कि सेना के बिना रह सकते हैं | (वही)

"कोई निरस्त तट्स्थ देश अन्य राष्ट्रों को नष्ट कैसे होने दे सकता है? गत युद्ध के दौरान यदि हमारी सेना हमारी सीमाओं पर तैयार खड़ी न होती तो हम बरबाद हो गए होते।"
बड़ी शक्तियों का त्याग करना होगा, पृथ्वी के तथाकथित असभ्य अथवा अधक-सभ्य राष्ट्रों का ऊषण बंद करना पड़ेगा तथा अपने रहन-सहन के ढंग में बदलाव लाना होगा | इसका अर्थ है संपूर्ण क्रांति | बड़ी शक्तियों से यह आशा करना कठिन है कि वे सामान्य रूप से उस दिशा को छोड़कर अचानक एक विपरीत दिशा पकड़ सकेंगी जिसमें अब तक वे
चलती रही हैं और जिसमें, उनकी धारणा के अनुसार, उन्हें विजय पर विजय मिलती गई है | लेकिन चमकार तो पहले भी हुए हैं और इस अवसर नीरस युग में भी हो सकते हैं | नगराई को मिटाने की ईश्वर की शक्ति पर अंकुश लगाने का साहस किसमें है? एक बात निश्चित है | यदि शासीकरण की होड़ जारी रही तो इसमें परिणामस्वरूप ऐसा भीषण नरसंहार होगा जिसकी मिसाल पूरे इतिहास में नहीं मिलेगी | इसमें अगर कोई नगराई विजयी हुआ भी और वह नष्ट होने से बच गया तो उसकी विजय जीतित मृत्यु के समान होगी | इस सर्वनाश से बचने का एक ही उपाय है कि हम हिम्मत करके अहिंसा के तरीके को उसके समस्त गौरवपूर्ण निहितार्थ सहित बिना किसी शर्त के अंगीकार कर लें। (हरि, 12-11-1938, पु. 328)

(आ) आततायीपन बनाम अहिंसा

“उन राष्ट्रों का क्या किया जाए जो आततायी राष्ट्र हैं, यदि में इस प्रायःप्रयुक्त अभियोग का प्रयोग करूँ? अमेरिका में कुछ आततायी दस्तू थे | वहां की स्थानीय और राष्ट्रीय पुलिस ने सबक चोट उठाकर उनका सफाया कर दिया | क्या हम राष्ट्रों के बीच आततायीपन को समाप्त करने के लिए ऐसा ही कोई उपाय नहीं कर सकते – मंचूरिया में अफीम के विश्व का जघन्य प्रयोग, अफ्रीकी में यथार्थ और स्पेन में ई मुकृत, आस्ट्रिया का सहसा अभिग्रहण और चेकोस्लोवाकिया का मामला आततायीपन के उदाहरण हैं?”

यदि विश्व के मनीषयों ने अहिंसा की भावना को आत्मसात न किया तो उन्हें पारंपरिक ढंग से इस आततायीपन का मुकाबला करना पड़ेगा | लेकिन उससे यह सिद्ध होगा कि हम सभी जंगल के नियम से अधिकृत ऊपर नहीं उठ पाए हैं, कि अभी हमने ईश्वर द्वारा मनुष्य को दी गई विरासत का मूल्य नहीं समझा है, कि 1900 वर्ष पूर्व ईसाई धर्म और उससे भी प्राचीन हिंदू तथा बौद्ध धर्म और इस्लाम (यदि मैंने उसे ठीक पढ़ा है) के उपदेशों के बावजूद हमने माननें के रूप में अभी कोई विशेष प्रमाण नहीं की है | लेकिन जहां मैं उन लोगों के द्वारा हिंदी के प्रयोग को समझ सकता हूँ जिनमें अहिंसा की भावना नहीं है, उन्हें मानना गहरा कि जो अहिंसा को जानते हैं, वह पूरा जोर लगाकर यह प्रदर्शित करें कि आततायीपन का मुकदमा भी अहिंसा से ही करना होगा | बात यह है कि आप बल का प्रयोग चाहे जितने और पवित्रपूर्वक करें, पर वह अंतत: हमें उसी दलदल के संकट में पंखा देगा जिसमें हिटलर और मुसोलिनी की ताकत ने फंसाया | इनके बीच केवल मात्रा का भेद होगा | आप और हमें से जो अहिंसा में विश्वास करते हैं, उन्हें संकटपूर्ण स्थिति में इसका इतिहास करने से नहीं चुकना चाहिए | अगर हमें एक क्षण के लिए यह भी लगे कि हम अपने सिर दीवालों से टकरा रहे हैं तो भी हमें आततायी तक के उदयों में प्रेरित रहना के प्रयास में हताश का अनुभव नहीं करना चाहिए। (हरि, 10-12-1938, पु. 372)
अहिंसक विकल्प
अहिंसा की तराजू पर तोलते हुए मुझे कहना होगा कि 40 करोड़ की जनसंख्या वाले चीन जैसे बड़े और सुसंकृत देश को यह शोभा नहीं देता कि वह जापानी आक्रमण का सामना जापानी तरीकों को अपनाते हुए ही करे। यदि चीनियों में मेरी धारणा वाली अहिंसा होती तो उनके लिए वैसी विनाशक मशीनें का कोई उपयोग न रह जाता जैसी जापान के पास थीं। तब चीन के लोग जापानियों से कहते, ‘अपनी सब मशीनें ले आओ, हम अपनी आधी जनसंख्या दुस्म हेंट करते हैं।’ अगर चीन ने ऐसा किया होता तो जापान उसका गुलाम हो गया होता। (हरिर, 24-12-1938, पृ. 394)

...जोलंदावासियों का जमकर के अपेक्षाकृत बहुत बड़ी सेना, सैनिक साज-सामान और ताकत के सामने बहादुरी से डट जाना लगभग अहिंसा ही थी। मुझे इस कथन को बार-बार दुर्घटनातात्मक होने की आशा थी। आप ‘लगभग’ शब्द को पूर्व महत्व दें। हम संख्या में 40 करोड़ हैं। अगर हम एक विशाल सेना खड़ी कर लें और विवेकी आक्रमण का मुकाबला करने की तैयारी करे तो हम उसे अहिंसक तो छोड़ दें। लगभग’ अहिंसक भी किस तरह छो पाएगे? जोलंदावासियों पर जमकर झुकना, उसके लिए चीनी तैयार नहीं थे। जब हम सैनिक तैयारी की बात करते हैं तो हम संभालते हैं कि हमारा मुकाबला अपनी शहंसा से ही होगा। जब भारत ने कभी स्वयं को इस रूप में तैयार किया तो हमारे सामने एक अश्लील आक्रमण का मुकाबला अपनी आधी जनसंख्या से ही होगा। (हरिर, 25-8-1940, पृ. 261)

(ह) प्रेम के द्वारा शांति
हो सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय मामलों में प्रेम के निम्न का मान्यता मिलने में अभी काफी समय लगे। सरकारीं तंत्र विभिन्न राष्ट्रों के नागरिकों के बीच रुकावट बन जाते हैं और उनके हंदयों की मिलने नहीं देते। फिर भी..हम देख सकते हैं कि दुनिया किस तरह इस तथ्य की अधिकाधिक समझती जा रही है कि जिस प्रकार व्यक्तियों की पारस्परिक समस्याएं ताकत के जोर पर नहीं सुलझाई जा सकतीं, उसी प्रकार राष्ट्रों के आपसी झगड़ों को भी ताकत का सहारा लेकर सुलझाना संभव नहीं है, बल्कि व्यय सेवा और नौसेवा की अपेक्षा असहयोग की आर्थिक शक्ति कहीं ज्यादा शानति और निर्णायक है। (यंग, 23-6-1919, पृ. 50)

जब तक किसी नयी ऊर्जा का दोहन करके उसका उपयोग शुरू नहीं किया जाता तब तक पुरानी ऊर्जाओं के नापक इस नवाचार को सैद्धांतिक, अव्यवहारिक, आदर्शात्मक आदि मानते रहे। अंतर्राष्ट्रीय प्रेम के तारों को बिछाने में समय लग सकता है, लेकिन भौतिक बलप्रयोग के ऊपर अंतर्राष्ट्रीय असहयोग को अधिमान देना....अंतिम और सच्चे समाधान की दिशा में एक निश्चित प्रगति का परिचायक है। (वही, पृ. 57)
स्थायी शांति

स्थायी शांति की संभावना में विश्वास न करना मानव प्रकृति की ईश्वरपरायणता में अविश्वास करना है | अब तक किए गए उपाय इसलिए असफल हुए हैं कि उन्हें करने वालों के हड़प्पों में सच्चाई नहीं थी | इस चीज़ को उन्होंने समझा नहीं है | बात यह है कि जिस प्रकार कोई रसायनिक योग तब तक सही नहीं बन सकता जब तक उसकी सभी शर्तें पूरी न की जाएँ, उसी प्रकार शर्तें के अंत: पालन से शांति स्थापित नहीं की जा सकती | यदि मानव जाति के जाने-माने नेता, जिनके नियंत्रण में विनाश के उपकरण हैं, उन्हें लगाने के निहितादेशों को पूरी तरह समझने हुए उनका पूर्ण लागू कर दें तो शांति स्थापित हो सकती है | यह तब तक स्पष्टता असंभव है जब तक बड़ी शक्तियां अपने साम्राज्यवादी मंत्री मंत्री को नहीं छोड़ देतीं | और, यह तब तक नहीं हो सकता जब तक बड़े राष्ट्र आत्मा का नाश करने वाली प्रतियोगिता, आवश्यकताओं के बढ़तीकरण और उसके लिए अपनी भौतिक संपत्ति में वृद्धि करने में विश्वास रखने बंद नहीं कर देते | मुझे पक्का विश्वास है कि कुली की असली जड़ जाग्रत ईश्वर के प्रति जाग्रत आस्था का अभाव है | यह कितनी साम्राज्य तांत्रिक है कि पुर्बी के वे निवासी जो ईसा अनीह के संदेश में आस्था रखने का दावा करते हैं और ईस्वी को शांति का दूत मानते हैं, अपने आचरण में उस आधार का कोई परिचय नहीं देते | इस बात को देखकर दुख होता है कि सबों ईसाई धर्मचित्त ने ईसा के संदेश को गिने-चुने व्यक्तियों तक सीमित कर दिया है | मुझे यह बात बचपन से त्याग कर दिया है और मैंने इसकी सच्चाई को अनुभव कि कसटी पर कसकर देख दिया है कि आधारभूत मानवीय गुणों का विकास निम्नतम मनुष्य भी कर सकता है | यह असंदिघ्न संभावना ही मनुष्य को ईश्वर की शेष सृष्टि से भिन्न करती है | यदि एक राष्ट्र भी बिना शर्त लागू का उत्तम कृत्य कर दिखाए तो हममें से अनेक लोग अपने जीवनकाल में ही पृथ्वी पर शांति की झलक पा सकेंगे।

शांति तब तक नहीं आयेगी जब तक बड़ी शक्तियां साहस करके अपना निरस्तकरण नहीं करेंगी | मुझे लगता है कि हाल की घटनाएं बड़ी शक्तियों को इसमें विश्वास करने के लिए बाध्य कर देगी | मुझे इसमें अंधिग विश्वास है, और यह विश्वास आधी शांतबहु तक अहिंसा पर लगातार अमल करने के बाद आज पहले से कहीं अधिक प्रबल हो गया है, कि मानव जाति को केवल अहिंसा ही बचा सकती है – बाइबिल को यदि मैंने ठीक से समझा है तो उसका मुख्य उपदेश भी यही है | (हर, 24-12-1938, पृ. 395)

'तुष्टिकरण' नहीं

मेरे 'तुष्टिकरण' की तरफदारी कभी नहीं की है – यह शब्द आज निदामक अर्थ देता है | मैं समस्त मानव जाति में शांति चाहता हूँ, लेकिन इसके लिए हर कीमत चुकाने के वास्ते तैयार नहीं हूँ, आक्रामक को तुष्ट करके या
आत्मसम्मान बेचकर तो कदापि नहीं। इसलिए जो यह समझता है कि मैं इन दोनों में से किसी बुराई का दोषी हूँ, वह हमारे सम्मुख उपस्थित प्रयोजन को भारी हानि पहुँचाएगा। (बांक्रा, 9-8-1942)

मेरा अनुभव, जो निरंतर दृढ़ तथा गहन होता जाता है, मुझे बताता है कि सत्य और अहिंसा का अधिकतम पालन किए बिना व्यक्तियों और राष्ट्रों को शांति नहीं मिल सकती। प्रतिकार की नीति आज तक कभी सफल नहीं हुई है। (यंग, 15-12-1927, पृ. 421)

अहिंसक समाज

यह कहना आज केन्द्रीय कार्य का बात हो गई है कि समाज को अहिंसक तरीके से संगठित करना और चलाना संभव नहीं है। मैं इस मुद्दे पर बहस के लिए तैयार हूँ। परिवार में जब पिता अपराधी बच्चे को धर्म प्राप्तता है तो बच्चा उसका बदला लेने की बात नहीं सोचता। यह पिता की आज्ञा का पालन धर्म के भय से नहीं करता बल्कि उसके पीछे पिता का जो आह्वान प्रेम है, हमारे कारण करता है। मेरी राय में यही वह भावना है जिसके अनुसार समाज का संचालन होता है। अत्याचार का शासन और राष्ट्रों का अशहंसा में अंशत नहीं हो सकता। (हरर, 3-12-1938, पृ. 358)

युद्ध का अंत

मैं अपनी धारणा को फिर दुर्दूः कि मित्र राष्ट्रों और धर्म उनमें में तब तक शांति स्थापित नहीं होगी जब तक वे युद्ध की प्रभावता और वह उसके साथ जुड़े जबरदस्त धोखे तथा कपट पर से अपना विश्वास नहीं उठा लेते और सभी प्रतिभातियों एवं राष्ट्रों की स्वतंत्रता में वायुविद्या तथा बराबरी पर आधारित सच्ची शांति की स्थापना के लिए धौत निष्ठुर नहीं कर लेते। तमाम रचन के युद्धों को समाप्त करने के लिए प्रयास संसार में एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्रों के शोषण अथवा आधिपत्य के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। केवल ऐसी ही दुनिया में, सेना दृष्टि से दुर्बल राष्ट्र अभिन्नत्रास अथवा शोषण के भय से मुक्त हो सकेंगे। (बांक्रा, 18-4-1945)

दुनिया में रहने का सभ्य तरीका सिर्फ यह है कि हिंसा का जवाब हिंसा से न दिया जाए, बल्कि उसे अपनी भिन्नता के हाथ को दूर रखकर आसार दिया जाए; अथों ही, आक्रामक द्वारा ताकत के जोर पर की गई मांग को मानने से इंकार कर दिया जाए। इसके अलावा कोई और तरीका हिंसियों की हड़तों को जम्म देगा; बीच-बीच में शांति के दौर आएगे, जब तक राष्ट्रों के लड़ते-लड़ते जो निश्चय से बढ़ जाने के कारण आएगे और उस दौरान भी वे उग्रता हिंसा के लिए तैयार जारी रहेंगे। उग्रता हिंसा की तैयारी के दौर में दिखाई देने वाली शांति अनवार्यत: अपूर्व और वैसे ही संहारक अस्स्फोटों का जम्म देती है। यह अहिंसा और लोकतंत्र का पूर्ण नकार है – लोकतंत्र तो अहिंसा के बिना संभव ही नहीं है। (हरर, 30-3-1947, पृ. 86)
मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूं कि अगर दुनिया में शांति स्थापित होनी है तो उस लक्ष्य की प्राप्ति का साधन अहिंसा ही है, कुछ और नहीं। (हरि, 20-7-1947, पृ. 243)

शांतिवाद और शांतिवादी

सच्चा शांतिवादी सच्चा सत्याग्रही होता है | सत्याग्रही आस्था के बल पर कार्य करता है, इसलिए वह परिणाम की चिंता नहीं करता, क्योंकि वह जानता है कि यदि कार्य सच्चा है तो अभीष्ट परिणाम सुनिश्चित है।

....शांतिवादियों को रक्षात्मक तथा आक्रामक, दोनों प्रकार के युद्धों से कोई सरोकार रखने से दुष्टापूर्वक इंकार करके अपनी आस्था को सिद्ध करना होगा। (हरि, 15-4-1939, पृ. 90)

....शांतिवादियों को अपना जीवन टीक ‘सरमन ऑन द माउंट’ के आदेशों के अनुसार जीना होगा और तब वे तत्काल पाएंगे कि उन्हें बहुत-सी बातों का स्वाग करना है और बहुत-सी बातों को नया रूप देना है | सबसे बड़ी बात यह है कि उन्हें स्वयं को साम्राज्यवाद का फल चखने से वंचित रखना होगा.... (हरि, 15-3-1942, पृ. 73)
96. कल की दुनिया

भविष्य के विषय में जितनी अटकलें आज लगाई जा रही हैं, उतनी शायद पहले कभी नहीं लगानी पड़ीं | क्या हमारी दुनिया में हमेशा हिंसा का बीतबाला रहेगा? क्या यहां सदा दरिद्रता, भुखमरी और दुख का सामान्य रूप रहेगा? क्या धर्म में हमारी आत्मा और द्रढ़ता व्यापक हो गई या दुनिया नास्तिक हो जाएगी? अगर समाज में भारी परिवर्तन आता है तो वह किस तरह आएगा? युद्ध से या क्रांति से? या, शांतिपूर्ण दूर से?

हर व्यक्ति के पास इन प्रश्नों के उत्तर अलग-अलग हैं, हर व्यक्ति कल की दुनिया का नक्षा अपनी आशाओं और अभिलाषाओं के हिसाब से बना रहा है | मैं केवल विश्वास के सहारे ही नहीं, बल्कि धारणा के बल पर कहता हूँ | कल की दुनिया अहिंसा पर आधारित समाज होगी – ऐसा ज़रूर होगा | यह प्रथम नियम है; अन्य सभी वर्तमान इसी में से प्रकट होगा | यह एक दुरस्थ लक्ष्य, एक अवज्ञवादी यूनिवर्स दुर्दृष्टि का साधन हो सकता है लेकिन यह अप्राप्त कतई नहीं है, क्योंकि इस पर आज ही और अभी अभी अभी किया जा सकता है | कोई भी व्यक्ति दूसरों की प्रतिशोध किए बिना भावी संसार की जीवन-पद्धति को – अहिंसक पद्धति को – अपना सम्बन्ध स्थापित कर सकता है | और यदि व्यक्ति ऐसे कर सकता है तो पूरे-पूरे व्यक्ति-समूह क्यों नहीं कर सकते? समूहवादियों को नहीं कर सकते? लोग अक्षर शुरुआत करने से इसलिए विचार करते हैं कि उन्हें लगता है कि लक्ष्य को पूरी तरह प्राप्त नहीं किया जा सकेगा.

हमारी यह मनोवृत्ति ही प्रामाण्य का आय यह है कि दुश्मनी की शक्तियों के आगे ही नहीं, बल्कि धारणा के बल पर कहता हूँ |

समान वितरण

जहां तक मैं देख पा रहा हूँ, कल की दुनिया का दूसरा महान नियम समान वितरण का है जो अहिंसा से ही उत्पन्न होता है | उस नियम का आशय यह नहीं है कि दुनिया की वस्तुओं का याहूँक आधार पर विभाजन कर दिया जाएगा, बल्कि यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के पास अपनी पूरी आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन उपलब्ध हों; उससे ज्यादा उसके पास कुछ नहीं होगा | एक मोटा उदाहरण ले तो यदि एक आदमी को प्रति सप्ताह चौथाई पौंड आटा की किरदारत है और दूसरे आदमी को पांच पौंड देन की तो उन दोनों को चौथाई-चौथाई पौंड या पांच-पांच पौंड आटा नहीं मिलना चाहिए बल्कि अपनी-अपनी आवश्यकताओं के अनुसार मिलना चाहिए.

यह बात हमें उस मुद्दे पर ले आती है कि शायद कल की दुनिया के रूप में निर्धारित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है | यह समान वितरण किया किस तरह जाए? क्या धनवानों से उनकी सारी संपत्ति छीन ली जाए?

अहिंसा का उत्तर है कि ‘नहीं‘ | कोई भी ऐसी चीज़ जो हिंसक है, वह मानव जाति को स्थायी लाभ नहीं पहुँचा सकती | धनवानों से बलत संपत्ति छीनने का परिणाम यह होगा कि समाज को अनेक बड़ी प्रतिभाओं से वंचित
होना पड़ेगा; धनवान जानता है कि संपत्ति किस तरह अर्जित तथा खर्च की जाती है, समाज को उसकी योग्यता से वंचित नहीं होना चाहिए। इसके बजाय करना यह चाहिए कि उसके पास उसकी संपत्ति रहने दी जाए और उसे उसमें से अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जितना उचित हो, उतना हिस्सा खर्च करने दिया जाए तथा शेष संपत्ति के विषय में वह न्यासी के रूप में काम करे और उस समाज के हित में खर्च करे।

इसे लोग हुए हैं और आज भी हैं। इसे मेरी समझ में, ज्यों ही मनुष्य खर्च को समाज का सेवक मानने लगता है, उसकी खातिर कमाई और उसकी खातिर खर्च करता है त्यों ही उसकी कमाई अच्छा रूप धारण कर लेती है और उसका व्यवसाय रचनात्मक बन जाता है।

**मानव प्रकृति में परिवर्तन**

लेकिन क्या अहिंसा के उस संपूर्ण विचार को अपनाने के लिए मानव प्रकृति की बदलने की आवश्यकता नहीं होगी? क्या इतिहास में ऐसे बदलाव का कोई उल्लेख मिलता है? जी हाँ, अवश्य मिलता है। अनेक व्यक्तियों ने घटिया, निजी और परिग्रहीत मनोवृत्ति का स्वाग करके संपूर्ण समाज के संबंध में सोचा है और उसके हितार्थ काम किया है। यदि ऐसा बदलाव एक आदाम में आया है तो बहुतों में भी आ सकता है।

**भविष्य**

मैं कल की दुनिया में न दरिद्रता देखता हूँ, न युद्ध, न क्रांतियों, न रक्तपात। उस दुनिया में ईश्वर के प्रति इतनी व्यापक और गहन आस्था होगी जैसी पहले कभी नहीं थी। व्यापक अर्थ में देखा जाए तो विश्व का अस्तित्व ही धर्म पर निर्भर है। उसे मिटाने के सभी प्रयास असफल हो जाएंगे। (नावाद्य, पृ. 49-51)

विश्व परिसंघ का ढांचा केवल अहिंसा की नींव पर ही खड़ा किया जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में हिस्सा को पूरी तरह खातिर देना चाहिए। (गांधी, 1942-44, पृ. 143, गांधी, 1942-44, पृ. 143)
15. प्रासंगिक विचार

अंधविश्वास

ज्यों ही हम सही ढंग से जीना आरंभ करते हैं, अंधविश्वास और अवांछनीय बातें अपने आप हमारे जीवन से हट जाती हैं | मैं अपना सरोकार विश्वास से नहीं रखता, किन्तु इस पद्धति की अपनाते ही विश्वास अपने आप सही रूप ले लेते हैं | (यंग, 11-8-1927, पृ. 251)

मैं उन सभी अंधविश्वासों की आंख मूंदकर पूजा नहीं करता जो 'प्राचीन' के नाम पर चले आ रहे हैं | मैंने कभी बुरी अथवा अनैतिक बात को मिटाने में हिचक का अनुभव नहीं किया है, बल्कि ही वह कितनी ही प्राचीन हो | एक बात जरूर है कि मैं प्राचीन संस्थाओं का पुजारी और मुझे इस बात का सोचकर दुख नहीं है कि हर आधुनिक चीज के पीछे पागल होकर दौड़ने वाले लोग अपनी असही परंपराओं की निंदा करने लग जाते हैं और अपने जीवन में उन्हें कोई स्थान नहीं देते | (विगांसी, पृ. 107)

मेरा विश्वास है कि मेरे अंदर अंधविश्वास नहीं है | सत्य के लिए सत्य नहीं है कि यह प्राचीन है | न इसे अनिवार्य अनशनात: संदेह की दृष्टि से केवल इसीलिए देखा जाना चाहिए कि यह प्राचीन है | जीवन के कुछ मौलिक सिद्धांत हैं जिन्हें सिर्फ इसीलिए नहीं छोड़ा जा सकता कि उन्हें जीवन में लागू करना कठिन है | (हरर, 14-3-1936, पृ. 36)

अच्छाई

कहा जाता है कि जो स्वयं अच्छा है उसके लिए सारी दुनिया अच्छी बन जाती है | व्यक्ति के बारे में तो यह बात सही है, लेकिन अच्छाई गत्यात्मक रूप तभी धारण करती है जब बुराई सामने होने पर भी अच्छाई पर अमल किया जाए | अगर आप अच्छाई के बदले अच्छाई का व्यवहार करते हैं तो यह एक तरह का सौदा है और इसमें कोई प्रशंसा की बात नहीं है | लेकिन अगर आप अच्छाई के बदले अच्छाई करते हैं तो यह एक मुक्ति देने वाला बल सिद्ध होता है | तब अच्छाई के सामने बुराई पराजित हो जाती है और अच्छाई का प्रभाव बढ़ते-बढ़ते ऐसा रूप धारण कर लेता है जो अदम्य होता है | (हरर, 2-6-1946, पृ. 166)

अनासक्ति

ऊपरी तौर पर, मेरे शारीरिक स्वास्थ्य का कारण यह है कि मैं खाने, पीने और सोने में नियमित आदतों का कठोरतापूर्वक पालन करता हूँ; एक कारण यह भी है कि मैंने 1901 से अपने जीवन में प्राकृतिक चिकित्सा पर पूरा-पूरा बल दिया है....लेकिन इनसे भी बड़ी बात यह है कि मैं देश से अनासक्त रहने का प्रयास करता हूँ |
अनासक्ति से मेरा तात्पर्य है कि जब तक आपका ध्येय शुद्ध है और आपके द्वारा अपनाये गए साधन ठीक हैं तब तक आपको इस बात की चिंता नहीं करनी चाहिए कि आपने जो कुछ किया है उसका बांछित परिणाम निकलेगा या नहीं। सच्ची बात यह है कि यदि आप अपने साधनों को सही रखें और शेष भगवान के ऊपर छोड़ दें तो अंततः सब कुछ ठीक होता है। (हरि, 7-4-1946, पृ. 71-72)

यदि मेरा पिछला व्यवहार ऐसा नहीं है कि मैं अपने वर्तमान जीवन को चाहैं कितना ही ठीक रखूँ, उसे पूर्ण आयुष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। जब तक आपका ध्येय शुद्ध है और आपने अपनाये साधनें सही हैं तब तक आपको इस बात की चिंता नहीं करनी चाहिए कि आपने जो कुछ किया है उसका वांछित परिणाम निकलेगा। | सच्ची बात यह है कि आप अपने साधनों को सही रखें और भगवान के ऊपर छोड़ दें। तो अंततः सब कुछ ठीक होता है। (वही, पृ. 72)

कवि, आत्मविश्लेषण के क्षण में, अपने आपसे पूछता है: “हेमनुष, तूने भगवान का नाम लेना क्यों छोड़ दिया? तूने न क्रोध छोड़ा, न वासना छोड़ी, न लोभ छोड़ा, बस तू सच को भूल गया। कैसी तारती है कि तूने कोई भी काम किया है। जैसे, जैसे कि तू अपने प्रत्येक काम की खातिर भगवान के नाम का उपयोग नहीं करना चाहते हैं।” इसका तात्पर्य यह नहीं है कि अगर किसी के पास धन-दोलत है तो वह क्यों एक दे और अपनी पत्नी तथा बच्चों को घर से बाहर निकाल दे। इसका सीधा-सा मतलब यह है कि आदमी को इन चीजों के प्रति आसक्ति का लघू नहीं देना चाहिए और अपना सर्वस्व भगवान को समर्पित कर देना चाहिए और ईश्वर जो कुछ हमें दिया है उसका उपयोग उसी की सेवा के निमित्त करना चाहिए। इसका यह भी मतलब है कि यदि हम सच्ची भावना के साथ भगवान का नाम लेंगे तो हमें वासना नहीं और खोजते विकारों से अपने आप छुटकारा मिल जाएगा। (हरि, 28-4-1946, पृ. 111)

अदम्य उत्साह और उसके साथ पूर्ण अनासक्ति सभी सफलताओं की कुंजी है। (हरि, 29-9-1946, पृ. 336)
अनुशासन

अनुशासन के मामले में न कोई बड़ा है, न छोटा | जो राजा अनुशासन के मूल्य को समझता है वह उन मामलों में जिनका निर्णय परिचर के हाथ में है, परिचर की बात को ही सर्वपूर्वतर रखता है | (यंग, 25-6-1925, पृ. 220)

स्वतंत्रता के उच्चतम स्वरूप के लिए अधिकतम अनुशासन और विनम्रता की अपेक्षा होती है | जो स्वतंत्रता अनुशासन और विनम्रता से उदभवत होती है उसे कोई नहीं छीन सकता; बे-लगाम उच्छेकलता स्वयं अपने और अपने पद्धतियों के प्रति असभ्यता का चिह्न है | (यंग, 3-6-1926, पृ. 203)

मैं ऐसे अवसरों की कल्पना कर सकता हूँ जब किसी बात के कारणों पर विचार करने की प्रतीक्षा किए बगैर चुपचाप उस बात का पालन करना आवश्यक होता है | बुनियादी तौर पर, यह सिपाही का गुण है और कोई राजा तब तक उत्तराधिकारी नहीं कर सकता जब तक कि उसके निवासियों की बहुत बड़ी संख्या के पास यह गुण न हो | उसके इस प्रकार बिना कोई तर्क किए बात को मानने के अवसर बहुत विरल होते हैं और किसी भी सुव्यवस्थित समाज में इसका विरल होना आवश्यक है | (यंग, 24-6-1926, पृ. 226)

यदि हम कोई महान और स्वाधीन उपलब्धि के आकांक्षी हैं तो हमें कठोर अनुशासन में चलना होगा और यह अनुशासन केवल शास्त्रीय और तर्क-वितर्क से पैदा नहीं हो सकता | अनुशासन कष्ट्मय साधना है | जब हमारे उसाही युवक बिना किसी संशोधन के उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करने का प्रशिक्षण लेंगे तभी वे समझोंगे कि उत्तरदायित्व और अनुशासन क्या होते हैं | (यंग, 19-5-1927, पृ. 160)

स्वैस्चिक अनुशासन सामूहिक स्वतंत्रता की पहली शर्त है....जो राष्ट्र अपनी स्वाधीनता की ओर बढ़ रहा है, उसके लिए अनुशासन की आवश्यकता उससे कहीं ज्यादा है जो फौजियों के कूच के लिए अपेक्षित होती है | इसके अभाव में रामराज्य, जो पृथ्वी पर ईश्वर के साम्राज्य का ही दूसरा नाम है, कोरा सपना बनकर रह जाएगा | (हरि, 18-8-1946, पृ. 264)

जो लोग एक महान राष्ट्र बनाने के आकांक्षी हैं, उनके लिए व्यापक अनुशासन एक आवश्यक शर्त है | (हरि, 11-1-1948, पृ. 507)

अमरता

मैं आत्मा की अमरता में विश्वास रखता हूँ | इसे समझने के लिए मैं समुद्र की उपमा देना चाहूगा | समुद्र जल की बूंदों से मिलकर बना है जिसमें हर बूंद का अपना अर्थ है, लेकिन फिर भी वह संपूर्ण समुद्र का एक अंश है, “वह अनेक में एक है” जीवन के समुद्र में हम सब छोटी-छोटी बूंदों के समान ही हैं |
मेरा सिद्धांत कहता है कि मुझे समस्त प्राणिज्ञात के साथ अपना तात्त्विक स्थापन करना चाहिए और ईश्वर के साधनिक में जीवन के ऐश्वर्य में भागीदारी करनी चाहिए। इस जीवन का पूर्ण योग ही ईश्वर है। (ईके, पृ. 245)

आत्मशुद्धीकरण

आत्मशुद्धीकरण के बिना समस्त जीवन के साथ तात्त्विक स्थापित करना असंभव है। आत्मशुद्धीकरण के बिना अहिंसा के नियम का पालन एक कोरा सपना बनकर ही रह जाएगा। जिस व्यक्ति का हृदय निर्भर नहीं है उसे ईश्वर-प्राप्ति कभी नहीं सकती। अतः आत्मशुद्धीकरण से तात्त्विक जीवन के सभी क्षेत्रों में शुद्धीकरण से है। शुद्धीकरण एक संक्रामक वस्तु है, जिसका अर्थ यह है कि आत्मा के अपने शुद्धीकरण के परिणामस्वरूप उसके आस्यामा का वातावरण भी अनिवार्य: शुद्ध हो जाता है। लेकिन शुद्धीकरण का मार्ग कठिन और ठालू है। पूर्ण शुद्ध होने के लिए मनुष्य का मनसा, बाचा, कर्मण विकारायुक्त होना आवश्यक है। उसे प्रेम और पूर्ण, आसक्ति और विकर्ण की विरोधी धाराओं के ऊपर उठना होता है। मैं जानता हूँ कि निरंतर और अथक प्रयास के बावजूद मुझमें अभी तक यह शत्रु बुद्ध नहीं आ पाई है। यही कारण है कि दुश्नयन की प्रथा मुझे छूनहीं पाती। सच्चा पूछा जाए तो यह प्राय: मुझे दंग ही देती है। सूक्ष्म मनोध्वकारों को जीतना होता है। (पृ. 371)

अदर्श

अदर्श का गुण उसकी सीमाहीनता में है। लेकिन यद्यपि धार्मिक अदर्श, सभावतया, हम अपूर्ण मानवों के लिए अप्राप्त होने चाहिए और हम जितने ही उनके निकट जा जाते हैं, अपनी सीमाहीनता के गुण के कारण वे हमसे उतने ही दूर होते जाने चाहिए। पर चूँकि हमें उनको वास्तविकता और सच्चाई का अपने शरीर के अस्तित्व से भी अधिक पक्का निक्षप होता है इसलिए वे हमें अपने हाथ-पैरों से भी ज्यादा नजदीक नहीं होते हैं। अपने आदर्शों के प्रति यही आस्था सच्चा जीवन है बल्कि, कहना चाहिए कि मनुष्य का सर्वस्व है। (यंग, 22-11-1928, पृ. 391)

ईमानदारी

सी फीसदी ईमानदारी बरतते हुए व्यवसाय चलना चाहिए तो पर असंभव नहीं है। सच्चाई यह है कि व्यवसाय में जितनी ही ज्यादा ईमानदारी होगी, उतनी ही अधिक सफलता उसमें मिलेगी। इसीलिए व्यवसायों में यह कहावत चलती है कि: “ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है”...यह सही है कि ईमानदारी बरतते हुए विपुल धन-संपत्ति एकत्र नहीं की जा सकती। “यह बिलकुल सच है कि उंट के छोटे में से निकल जाए, पर धनवान
कामना
आदमी की कृति वस्तुः उसके संतोष में निहित होती है | किसी कामना के पास चाहे जितनी धन-दौलत हो, पर अगर वह असंतृप्त है तो वह अपनी कामनाओं का दास बन जाता है | और सचमुच, कामनाओं की दासता से बढ़कर और कोई दासता नहीं है | सभी ऋषि-मुनियों ने पूरा बल देकर यह बात कही है कि मनुष्य ही अपना सबसे बड़ा शत्रु और अपना सबसे बड़ा मित्र है | यह उसके अपने हाथ में है कि वह स्वतंत्र रहे या दास का जीवन व्यतीत करे | और जो बात कामना के बारे में सच्चा है, वही समाज के बारे में भी है | (हरर, 28-7-1946, पृ. 233)

क्षमा
क्षमा वीर का गुण है, कायर का नहीं | विराट के यहां अज्ञातवास व्यतीत करते हुए जब पांडवों में से एक भाई को अचानक चोट लग गई तो दूसरे भाईयों ने न केवल इस घटना को छिपाया बल्कि इस डर से कि आगर रक्त की एक बूंद भी पृथ्वी पर गिरा गई तो विराट का अन्धों हो सकता है, उन्होंने रक्त को एक भाई की कटोरी लगाया और पृथ्वी पर हाशनकारक भी होगा | मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक भारतीय, वह चाहे हिंदू हो अथवा मुसलमान, ईसाई, पारसी या सिख हो, अपने अंदर इसी कोटि की सहिष्णुता और साहस का विकास करे | (हरर, 1-2-1942, पृ. 27)

गुरु
मुझे हिंदुओं के गुरु बनाने के सिद्धांत और आध्यात्मिक सिद्धि के लिए उसके महल पर विश्वास है | मैं समझता हूँ कि इस सिद्धांत में काफी सच्चाई है कि गुरु के बिना सच्चा ज्ञान प्राप्त करना असंभव है | रोजमर्रा के मामले में तो अपूर्ण शिक्षक से भी काम चल सकता है, किंतु आध्यात्मिक मामले में इसकी गुंजाइ नहीं है | वहां तो पूर्ण ज्ञानी को ही गुरु के सिद्धांत पर बैठाया जा सकता है | (ए, पृ. 64-65)
यदि मेरा कोई गुरु होता – और मैं गुरु की खोज में हूँ – तो मैं अपने शरीर और आत्मा के साथ उसके समक्ष अपना समर्पण कर देता | तब इस अविश्वास के इस युग में सच्चा गुरु मिलना कठिन है | कोई ऐसा-वैसा गुरु न सिर्फ व्यर्थ सिद्ध होगा, बल्कि निश्चित रूप से हानिकारक भी होगा | इसलिए मैं सभी लोगों को अपूर्ण व्यक्ति को गुरु बनाने के विरुद्ध चेतावनी देना चाहता हूँ | ऐसे व्यक्ति को गुरु बनाने से जो “यह नहीं जानता कि वह क्या नहीं जानता”, अच्छा यह है कि आदमी अंधेरे में हाथ-पैर मारे और लाखों जूटों करते हुए तक पहुंचने का रास्ता स्वयं निकाले | वह आज तक किसी आदमी ने अपने गले में पथर बांधकर तैरना सीखा है | (यंग, 3-12-1925, पृ. 422)
गुरु की मेरी धारणा कोई साधारण धारणा नहीं है | गुरु जब तक पूर्ण नहीं होगा तब तक मेरी संतुष्टि नहीं होगी | मैं ऐसे गुरु की खोज में हूँ जो इस पारिशद्धारा में निवास करते हुए भी भ्रष्टाचार से सर्वथा मुक्त हो, वासनाओं के आगे जल्द बादल न हो, दुःख से मुक्त हो, सत्य और अहिंसा का अवतार हो और इसलिए न किसी से दर्द हो, न किसी को दर्द हो | (यंग, 17-6-1926, पृ. 215)

तीन महान प्रभाव
मेरे जीवन पर तीन महापुरुषों ने गहरी छाप छोड़ी है और मुझे मुग्ध शकया है: राय चंद्रभाई ने अपने सजीव संपक के द्वारा; टाल्स्टॉय ने अपनी पुस्तक ‘द शकंगिम आफ गोि इज शव’ से; तथा रब्लस्कन ने अपनी पुस्तक ‘अनटू शदस लास्ट’ से | (ए, पृ. 65)

मैं मानता हूँ कि मुझे अपनी कुछ गहनतम धारणाएं रस्किन के इस महान ग्रंथ में प्रतिबिंबित दिखाई दीं और इसलिए इसने मुझे अत्यंत प्रभावित किया और मेरे जीवन की कायापलट कर दी....मेरी समझ के अनुसार ‘अनटू दिस लास्ट’ की सीख इस प्रकार है:

(1) सबकी भलाई में ही व्यक्ति की भलाई निहित है | (2) चूंकि सभी व्यक्तियों को अपने काम के द्वारा आजीविका कमाने का समान अधिकार है, इसलिए एक वकील का काम भी उतना ही मूर्त्वाव समझा जाना चाहिए पिताना किसी नाई का | (3) श्रमक अर्थजमीन को जोतने वाले और दस्तकार का जीवन ही जीने योग्य है |

उपर्युक्त में से पहली सीख के बारे में मुझे पहले से ही ज्ञान था | दूसरी सीख का मुझे किंचित असपष्ट बोध था | तीसरी सीख मेरे ध्यान में कभी आई ही नहीं थी | ‘अनटू दिस लास्ट’ ने मेरे सामने यह बात दिन के प्रकाश की तरह सप्त कर दी कि दूसरी और तीसरी सीख पहली सीख में समाहित हैं | (वही, पृ. 220-21)

मेरे राजनीतिक गुरु
मैंने गोखले को अपना राजनीतिक गुरु बताया है | लेकिन मुझे कहते हुए खेद होता है कि आध्यात्मिक मामलों में मुझे अभी तक कोई गुरु नहीं मिला जिसे मैं स्वयं को पूरी तरह समर्पित कर सकूँ और जिसकी सम्मति को उसी प्रकार अविचल भाव से और बिना कोई शंका किए मान लूँ | जिस प्रकार राजनीतिक मामलों में मैं गोखले की बात को मानता था | संभवतः मैं अभी आध्यात्मिक गुरु के योग्य नहीं बना पाया हूँ, क्योंकि मेरा विश्वास है कि जब आप इस योग्य हो जाते हैं तो आध्यात्मिक गुरु स्वयं चलकर आपके पास आ जाता है | बल्कि सच पूरा जाए तो जब आप उसके लिए तैयार होते हैं तो वह आपको स्वयं ही खोज लेता है |
यद्यपि मेरे हृदय में आध्यात्मिक गुरु का सिंहासन अभी तक खाली है, पर रायचंदभाई के बाद आधुनिक पुरूषों में टाल्स्टॉय ने मेरे जीवन पर सबसे गहरी आध्यात्मिक छाप छोड़ी है; तीसरे नंबर पर रस्किन का नाम आता है | 40 वर्ष पहले जब मैं संशय और विश्वास के घोर संकट से गुजर रहा था तब मेरे हाथ टाल्स्टॉय की पुस्तक ‘द किंगडम आफ गॉड’ इज विदिन’ ले, जिसने मुझ पर बहुत गहरी छाप छोड़ी | उस समय मुझे लिस्सा में आश्चर्य था | इस पुस्तक को पढ़ने से मेरी शंकाएं दूर हो गई और मैं अहिंसा का पक्का पुजारी बन गया | टाल्स्टॉय के जीवन की जिस बात ने मुझे सबसे अधिक आकर्षित किया वह यह था कि उन्होंने जिस बात का प्रचार किया उस पर अपने जीवन में पूरा-पूरा अमल भी किया और सत्य के मार्ग पर चलने के लिए कोई भी त्याग अधिक नहीं माना | (यंग, 20-9-1928, पृ. 319)

मेरे कोई शिष्य नहीं हैं; अभी तो मैं गुरु की छोट में हूँ और स्वयं शिष्य बनने का आकांक्षी हूँ | (हरि, 19-12-1936, पृ. 362)

### गोपनीयता

सारे पाप छिपाकर किए जाते हैं | जिस क्षण हमें यह एहसास हो जाए कि ईश्वर हमारे विचारों तक का साक्षी है उसी क्षण हम स्वतंत्र हो गए समझें | (यंग, 5-6-1924, पृ. 186)

मैं गोपनीयता को एक पाप मानता हूँ, विशेषकर राजनीतिक मामलों में | जब हम यह समझ जाएं कि हम जो कुछ कहते और करते हैं ईश्वर उसका साक्षी होता है कि हम दुनिया में कभी किसी से कोई बात नहीं छिपाए गए | क्योंकि तब हम अपने सृष्टिकर्ता के समक्ष गंदे विचार मन में भी नहीं लाए, उन्हें मुह में लाने की बात तो दूर रही | गंदी चीजें के लिए ही गोपनीयता और अन्धकार की जरूरत महसूस होती है | मनुष्य की प्रकृति गंदगी को छिपाने की है, हम गंदी चीजें देखना या खुश पसंद नहीं करते, और उन्हें अपनी नजरों से दूर कर देना चाहते हैं | यहीं बात हमारी वाणी पर भी लागू होनी चाहिए | मैं तो कहूँगा कि जो विचार हम दुनिया से छिपाना चाहते हैं, उन्हें अपने मन में भी नहीं लाना चाहिए | (यंग, 22-2-1920, पृ. 3)

मैं विश्वद अहिंसक कार्रवाई और प्रकट साधनों का पक्ष रूप में हमारे गोपनीयता को पूरा की दृष्टि से देखता हूँ | (हरि, 10-3-1946, पृ. 37)

जो संस्था पूरी तरह खुले रूप में कार्य नहीं करती वह लोगों के जीवन या धर्म को सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकती | (हरि, 20-4-1947, पृ. 120)

### घुड़दौड़

मैं घुड़दौड़ के बारे में कुछ नहीं जानता | उसके साथ जो-जो बातें जुड़ी है उन्हें लेकर मैं हमेशा इसे एक भयावह वक्तृ मानता रहा हूँ | मुझे पता है कि घुड़दौड़ ने बहुत से लोगों को बर्बाद कर दिया है | (यंग, 27-4-1921, पृ.132)
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

जहां तक घोड़ों पर दांव लगाने का संबंध है, मेरा विचार है कि यह भी पश्चिम से ती गई अनेक चीजों में से एक है और अगर मेरा बस चले तो मैं घोड़ों पर खेले जाने वाले जुए को जितना कुछ कानूनी संरक्षण प्राप्त है, उसे समाप्त कर दूं...मैंने लोगों को यह देखा है कि आचे घोड़ों की नस्ल तैयार करने के लिए घुड़ड़ों जरूरी हैं। ऐसा हो सकता है, यह बात सही हो। लेकिन क्या जुए के बगैर घुड़ड़ों नहीं हो सकती, या कि घोड़ों की नस्ल सुधारने के लिए जुआ भी जरूरी हैं?

(हरिर, 4-9-1937, पृ. 233-34)

घोड़ों के प्रति प्रेम के कारण घुड़ड़ों आयोजित करना और उसके साथ उत्तेजक कार्यक्रम रखना निराशाजनक है। यह लोगों में दुर्गुणों की वृद्धि करती है और हम में अच्छी कृषि-योग्य भूमि तथा विपुल धन से भी वंचित करती है। क्या कोई व्यक्ति ऐसा है जिसने अच्छे-अच्छे घोड़ों को घुड़ड़ों में जुआ खेलने से बचाया होता है न देखा हो? समय आ गया है जब हम पश्चिम से दो बुराइयों का त्याग कर दें और उसकी उम्मीद बातों का अपनाएं।

(हरिर, 18-1-1948, पृ. 515)

जूरी द्वारा सुनवाई

में न्यायाधीशों के बजाए जूरी द्वारा सुनवाई किए जाने के फायदे से सहमत नहीं हूं...इंग्लैंड तक में यह देखने में आया है कि जूरी ऐन वक्ता पर असफल सिद्ध हुई हैं। जब मान्यता उत्तेजक हो जाता है तो उसका प्रभाव जूरीयों पर भी पड़ता है और वे विकृत निर्णय देते हैं।

मैंने देखा है कि विपरीत साक्ष्य के होते हुए भी जूरीयों ने अभियुक्तों को दोषी करार दिया है, जिसके असहमत होकर जजों ने भी विपरीत निर्णय दिया है।

हमें अंग्रेजों की हर बात का दासता की भावना के साथ अनुकरण नहीं करना चाहिए। जहां पूर्ण निष्पक्षता, शांतिपूर्वक और साक्ष्य की छानबीन करके सही बात का पता करने की योग्यता एवं मानव प्रकृति की समझ की दरकार है वहाँ हमें प्रशिक्षित न्यायाधीशों के स्थान पर प्रशिक्षित व्यक्तियों को संयोग से संकुचन करके उन्हें न्याय देने का काम सुपूर्द नहीं करना चाहिए।

हमारा ध्येय तो नीचे से लेकर ऊपर तक एक ऐसी न्यायपालिका की स्थापना करना होना चाहिए जो भ्रष्टाचार से ऊपर हो, निष्पक्ष हो और योग्य हो।

(यंग, 27-8-1931, पृ. 240)

जूरी निंदा

सार्वजनिक व्यक्तियों को सदा ही जूरी निंदा और मिथ्या-कथन का पात्र बनना पड़ता है। विरोधी से पार पाने का एक ही उपाय है और वह है अप्रतिम...इसलिए सामान्यत: मेरा परम्परा यह होता है कि आधारहीन और दुर्भावनाओं से प्रेरित आक्षेपों की ओर बिलकुल ध्यान न दिया जाए, बल्कि आक्षेपकारों के प्रति दया प्रदर्शित की जाए और यह आशा तथा प्रार्थना की जाए कि अंततः उसकी मनोवृत्ति में बदलाव आ जाएगा।
मनुष्य अपने प्रति निश्चायण हो तो वही काफ़ी है, फिर वह ‘अफवाहों के गंदे नाले’ को बेफ़क्री से बहने दे सकता है | (यंग, 6-12-1928, पृ. 405)

**डाक्टर**

सच्चाई यह है कि डाक्टर हमें गलत बातों में प्रवृत्त होने के लिए उकसाते हैं जिसका परिणाम यह हुआ है कि हम आत्मनिर्णय खो बैठे हैं और सैन हो गए हैं | (हिस्स, पृ. 59)

चिकित्सा व्यवसाय से मेरा समान्यतः झगड़ा यह है कि वह आत्मा की पूर्णता उपेक्षा करता है और शरीर जैसे भ्रंगुर साधन की ढोक-पीट के लिए कोई प्रयास उठा नहीं रखता। आत्मा की उपेक्षा करके चिकित्सा व्यवसाय लोगों को अपनी दया पर निर्भर बना देता है और मानव गरिमा तथा आत्मनिर्णय के हास में योगदान करता है।

मैं इस बात का बड़ा उपकार मानता हं कि पश्चिम में धीरे-धीरे किंतु निश्चित रूप से एक ऐसा विचार-संप्रदाय उठ रहा है जो बीमार शरीर का उपचार करते समय आत्मा की ओर ध्यान देता है और इसलिए दवाइयों का सहारा कम लेता है और शक्तिशाली रोग-निवारक के रूप में प्रकृति पर अधिक बल देता है | (यंग, 11-6-1925, पृ. 205)

**आत्मा के चिकित्सक**

हमें शारीरों से अधिक आत्मा के चिकित्सकों की आवश्यकता है। अत्यस्तताओं और चिकित्सकों की बढ़ती हुई संख्या सच्ची सभ्यता का चिह्न नहीं है। हम अपने शरीर को जितना ही कम महत्त्व देंगे, उतना ही हमारे और दुनिया के लिए अच्छा साबित होगा। | (यंग, 29-9-1927, पृ. 327)

शरीर की भगवान का मंदिर मानकर इस्तेमाल करने के बजाए हम इसे विषय-भोगों का साधन बना लेते हैं और उनमें वृद्धि करने तथा इस पारिवर्ध शरीर का दुरुपयोग करने के प्रयास में मदद लेने के लिए बेहदै से डाक्टरों की ओर दौड़ते हैं। | (यंग, 8-8-1929, पृ. 261)

डाक्टर की पदवी ही कोई कसोटी नहीं है; असल डाक्टर वह है जो सच्चा सेवक है। | (हरी, 10-2-1946, पृ. 8)

डाक्टर, वैद्य और हकीम सब पसंद के गुलाम हैं। वे मात्र सेवा की भावना से इस व्यवसाय को नहीं अपनाते। आप यह दृष्टी देकर मेरे कथन को नहीं झूठला सकते कि कुछ चिकित्सकों में तो सेवाभाव होता है। | (हरी, 2-6-1946, पृ. 158)

**दवाई**

मेरे पश्चिम की दवाइयों के विरुद्ध बोला हूँ कि जिन्हें मैंने काले जादू का संघनित सार कहकर पुकारा है | मेरा यह दृष्टिकोण मेरी अहिस्ता से अद्वैत है, क्योंकि मेरी आत्मा जीवच्छेदन के विरुद्ध विद्रोह करती है...मेरा कहना है कि जो कृपा मैं अपने ऊपर कर सकता वह मुझे निम्न स्तर के जीवों के साथ क्यों करनी चाहिए?
लेकिन मैं हर तरह की चिकित्सा की निदान नहीं करता। मैं जानता हूँ कि सुरक्षित प्रयूत्ति और शिक्षाओं की देखभाल के मामले में हम पश्चिम से बहुत कुछ सीख सकते हैं। हमारे बच्चे जैसे-तौसे पैदा हो जाते हैं और हमारी अधिकांश महिलाओं को बच्चों के लालन-पालन के विज्ञान की सम्योजित जानकारी नहीं है। इन मामलों में हम पश्चिम से काफ़ी कुछ सीख सकते हैं।

लेकिन पश्चिम मनुष्य के पार्श्वितिक अस्तित्व को अधिक-से-अधिक समय तक बनाए रखने को जरूरत से ज्यादा महत्व देता है। मनुष्य की अंतिम श्राद्ध चलने तक वह उसे एक के बाद एक दवाइयाँ देता जाता है। यहाँ तक कि इंजेक्शनों के जरिए भी उसे किसी-न-किसी तरह जीवित रखने का प्रयास करता है। मेरे विचार में इसका युद्ध में उनके द्वारा अन्धाधुंध झूंकी गई जानों के साथ कोई मेल नहीं है। (हरिद, 3-7-1937, पृ. 165)

धन

मैं अनुभव से पाता हूँ कि जो बात भाईचारे, सेहपूर्ण शब्दों और सेहमयी दृष्टि मे है वह धन में नहीं है। यदि कोई व्यक्ति धनवान बनने के लिए बड़ा उत्सुक है और उसे किसी से बिना किसी सहानुभूति के धन की प्राप्ति हो जाए तो वह कालांतर में उस व्यक्ति से अपना संबंध तोड़ लेता है। इसके विपरीत, यदि किसी को प्रेम से जीता गया है तो जिसने उसे प्रेम दिया है उसके लिए वह कितना ही कष्ट उठाने के बाद तैयार हो जाता है। (ससा, पृ. 222)

मुझे पक्का ज्ञान है और यह अनुभवसिद्ध है कि भावना के मामले में रुपये-पेसे की भूमिका का महत्व सबसे कम होता है। (हरिद, 26-12-1936, पृ. 368)

धूम्रपान

तम्बाकू ने मानव जाति को बुरी तरह तबाह किया है। इसके चंगुल में फंस जाने के बाद शायद ही किसी को इससे छुटकारा मिलता हो। तालस्टॉय ने इसे सभी नशा में सबसे बुरा बताया है।

भारत में लोग तम्बाकू का प्रयोग पीने, सूंघने और चबाने के रूप में करते हैं। जिन्हें अपने स्वास्थ्य से प्रेम है वे अगर इनमें से किसी भी बुरी आदत के शिकार हो तो उन्हें हटाने का प्रयास करते हैं। कई लोग इनमें से एक-दो या तीनों आदतों के शिकार होते हैं। वे उन्हें धरीनी नहीं लगती, लेकिन अगर हम शांति से विचार करें तो धुंध उड़ाने या पूरी दिन मुंह में तम्बाकू और पान दूंगे रहने या बार-बार नसवार की डिब्बियाँ खोकर उसे सूंघने में कोई शानदारी नहीं है। ये तीनों बेहद गंभीर आदतें हैं। (के है, पृ. 39-42)

मैं शराब की ही तरह धूम्रपान से भी भय खाता हूँ। मैं धूम्रपान को एक दुर्गुण मानता हूँ। यह मनुष्य की अंशिकता को जड़ बनाता है और इस दृष्टि से शराब से भी बुरा है। इसका प्रभाव प्रचुर रूप से होता है। एक बार आदमी इसके चंगुल में फंस जाते तो फिर उससे निकलना मुश्किल होता है। यह एक खारीदी लत है। इससे श्वास
दृग्धमय हो जाता है, दांतों का रंग मैला हो जाता है और कभी-कभी कैंसर तक हो जाता है | यह एक गांधी आदत है | (यंग, 12-1-1921, प. 11)

धूम्रपान इस दृष्टि से शराब से भी बढ़ा अभिशाप है कि इसके शिकार को समय रहते चेत नहीं आता | यह बर्बरता की निशानी नहीं समझा जाता और सभ्य लोग भी इसे अच्छी नजर से देखते हैं | मैं सिफर यही कह सकता हूँ कि जो लोग इसे छोड़ सकते हैं वे छोड़कर औरों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करें | (यंग, 4-2-1926, पृ. 46)

ध्वज

ध्वज सभी राष्ट्रों के लिए आवश्यक है | लाखों लोगों ने ध्वज की खातिर प्राणों की बल्कि दी है | इसमें संदेह नहीं कि यह एक प्रकार की मूर्ति-पूजा है जिसे नष्ट करना पाप होगा | बात यह है कि ध्वज एक आदर्श का अभिवंजक होता है | यूनियन जेक के फहराने पर अंग्रेजों के हृदयों में जो भाव उठते हैं, उनकी शक्ति को मापना कठिन है | इसी प्रकार अमरीकियों के लिए सितारों और धाररयों वाला उनका ध्वज संसार की सबसे बड़ी चीज़ है | चांद-सितारे वाले ध्वज की रक्षा के लिए मुसलमान जान की बाजी लगाने के लिए तैयार हो जाएंगे |

हिंदुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, यहूदियों, वायवियों और उन सभी के लिए जो भारत को अपना घर मानते हैं, एक झंडा होना जरूरी है जिसके लिए वे जी और मर सकें | (यंग, 13-4-1921, पृ. 116)

नदियां

हमारे यहां दो से अधिक गंगा-जमुना हैं...ये हमें इस बात का समरण कराती हैं कि हम जिस देश में रह रहे हैं उसके लिए हमें कितने लाग करने चाहिए | यह बहने की प्रक्रिया में प्रतिक्षण अपने को शुद्ध करती रहती है मानो हमें समरण कराती हैं कि हमकों भी इसी प्रकार अपना शुद्धीकरण करते रहना चाहिए...आज की आपाधापी में हमारे लिए नदियां का मुख्य उपयोग यही रह गया है कि हम उनमें अपनी गंदी नालियों का पानी उंडेल दे और अपना व्यापारिक माल ले जाने के लिए उनमें नाव और पोत चलाए और इस प्रक्रिया में उन्हें और भी अधिक गंदा कर दें | हमारे पास इस बात के लिए समय नहीं है...कि हम उनके तटों पर ठहरे और शांत भाव से ध्यान लगाकर सुनें कि हमें क्या संदेह दे रही हैं | (यंग, 23-12-1926, पृ. 446)

नियति

मैं नहीं जानता कि मृत्यु का समय, स्थान और स्वरूप पूर्वनिष्ठित है अथवा नहीं | मैं तो केवल यह जानता हूँ कि “ईश्वर की इच्छा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता” | इसे भी मैं अस्पष्ट्ता के साथ ही जानता हूँ, लेकिन ईश्वर के समक्ष प्रार्थनारत रहने पर जो चीज आज अस्पष्ट है वह कल या परसों स्पष्ट हो जाएगी | (हरर, 28-7-1946, पृ. 233)
कहते हैं कि मनुष्य अपनी नियति का निर्धारक स्वयं ही है । अंशतः यह बात सत्य है । लेकिन वह अपनी नियति को उसी सीमा तक निरंतर कर सकता है जहाँ तक कि परमात्मा उसे करने दे । वह हमारे इरादों और हमारी योजनाओं को निरस्त करके अपनी ही योजनाओं को कायान्वित करता है । (हरी, 20-4-1947, पृ. 109)

नेतृत्व
मैं समझता हूँ कि अपने मत को सिर्फ दोहराते जाना और आम जनता की राय के सामने झुक जाना केवल अपर्याप्त ही नहीं है, अपितु अस्तित्व महत्त्वपूर्ण मामलों में नेताओं को यदि आम लोगों की राय उचित प्रतीत न होती हो तो उसके विपरीत भी जाना चाहिए । (यंग, 14-7-1920, पृ. 4)

मैं निश्चित रूप से यह मानता हूँ कि किसी डरपोक और संशयालु वकील के मुकाबले कोई बीर और आस्थावान बुनकर या मोची हमारे संघर्ष को ज्ञाता कारगर दंग से नेतृत्व प्रदान कर सकता है । सफलता वीरता, त्याग, सत्य, प्रेम और आस्था पर निर्भर करती है ; कानूनी प्रतिभा, जोड़-टोड़, कूटनीति, घृणा और अविश्वास पर नहीं । (यंग, 25-8-1921, पृ. 266)

नेता केवल समक्षों में प्रथम होता है । किसी-न-किसी को तो प्रथम स्थान देना ही है, लेकिन वह शृंखला की दुर्बलतम कड़ी से अधिक जबरदस्त नहीं होता और होना भी नहीं चाहिए । एक बार किसी को अपना नेता चुन लेने के बाद हमें उसका अनुगमन करना चाहिए अनुधा श्रृंखला टूट जाती है और सर्वनाश हो जाता है । (यंग, 8-12-1921, पृ. 402)

वह नेता बेकार है जो भिन्न-भिन्न दश्कोण रखने वाले अनेक व्यक्तियों से चिरा होने के बावजूद अपने अंतःकरण के आदेश के अनुसार नहीं चलता । यदि उसकी अंतर्वाणै उसको दृढ़ता प्रदान नहीं करती और उसका मार्गदर्शन नहीं करती तो वह बिना लंबाई के पोत के समान हिंचकोले खाएगा और पथभ्रष्ट हो जाएगा । (यंग, 23-2-1922, पृ. 112)

नेता को अच्छा-बुरा उसके अनुपारी ही बनाते हैं । वह जनसाधारण की सुप्त आकांक्षाओं का स्पष्ट प्रतिबिंब होता है । (यंग, 2-2-1947, पृ. 3)

नैतिकता
सच्ची नैतिकता लकीर पीटने में निहित नहीं होती, बल्कि अपने लिए सच्चा रास्ता ढूंढने और निर्भयतापूर्वक उस पर चलने में निहित होती है । (एरी, पृ. 36)

जो काम स्वेच्छा से न किया जाए उसे नैतिक नहीं कहा जा सकता । जब तक हम यंत्रवत कार्य करते हैं तब तक नैतिकता का प्रश्न ही नहीं उठता । यदि हम अपने किसी कार्य को नैतिक कहना चाहें तो वह सोच-समझकर और कर्तव्य के रूप में किया जाना चाहिए । (एफा, पृ. 43)
नैतिक प्राधिकार को उसके साथ चिपककर नहीं बनाए रखा जा सकता | वह बिना मांगे ही मिलता है और उसे बनाए रखने के लिए प्रयास की आवश्यकता नहीं होती | (यंग, 29-1-1925, पृ. 40)

हमें अपनी नीति निर्धारित करते समय सस्ती लोकप्रियता हासिल करने के प्रलोभन से निर्देशित नहीं होना चाहिए, बल्कि जो सही है उस पर दृढ़ रहना चाहिए | (हरी, 28-7-1946, पृ. 233)

पत्रकारिता

पत्रकारिता का एकमात्र थेरेसा होना चाहिए | समाचारपत्रों के पास बड़ी भारी शक्ति है, लेकिन जिस प्रकार अनियमित मार्ग का पानी पूरी तरह से डूबा देता है और फसलों को नष्ट कर देता है, इसी प्रकार अनियमित लेखनी की सेवा भी विनाशकारी होती है | यदि उसका नियंत्रण बाहर से किया जाए तो वह नियंत्रणहीनता से भी अधिक विनाशकारी सिद्ध होता है | प्रेस का नियंत्रण तभी लाभकारी हो सकता है जब प्रेस उसे स्वयं अपने ऊपर आरोपित करें | अगर यह तरह सही है तो दुनिया के कितने पत्र इस कसोटी पर ख़ेर उतरेंगे? लेकिन जो पत्रकारियों के लिए ही निकलती है, उन्हें कौन बता सकता है? अच्छे और बुरे से तरीक़े देखने की आवश्यकता है और उपयोगी भी साथ-साथ चलेंगी और मनुष्य को अपनी चुनाव खुद करने का अनुभव करना होगा | (ए, पृ. 211)

पत्रकारिता को सही काम लोकमानस को शिक्षित करना है उसे वाचित-अवाचित विचारों से भरना नहीं | इसलिए अखबार में क्या बात देनी है और कब देनी है, इसका निर्णय पत्रकार को अपने विवेक से करना चाहिए | आज स्थिति यह है कि पत्रकार केवल तथ्य देकर संतोष का अनुभव नहीं करते | पत्रकारिता ‘घटनाओं की प्रबुद्ध पूर्वपिक्षा’ की कला बन गयी है | (हरी, 29-9-1946, पृ. 334)

आधुनिक पत्रकारिता

आधुनिक पत्रकारिता में जिस तरह सतहीपन, पक्षपात, अ-यथार्थता और यहाँ तक कि बेरूमानी भी पूछा आई है वह उन ईमानदार लोगों को बराबर गलत रास्ते पर ले जाती है जो केवल यह चाहते हैं कि न्याय की जज्ञासा हो | (यंग, 12-5-1920, पृ. 4)

मेरे सामने पत्र-पत्रिकाओं के ऐसे उद्देश्य हैं जिनमें वीभत्स बातें दी गई हैं | उनमें सांप्रदायिकताई भड़कने, घोर मिथ्याकथन और राजनीतिक हिंसा को भड़काने की इच्छा के समान गंभीर बातें हैं | सरकार के लिए ऐसी पत्र-पत्रिकाओं पर मुकदमे चलाना या दमनकारी अध्यादेश जारी करना मुख्तार बात नहीं है, लेकिन इनसे कोई मतलब हल नहीं होता और यदि कोई प्रभाव होता भी है तो वह बड़ा ही अस्थायी होता है; किसी भी हालत में, इनसे लेखकों के रवैये में कोई परिवर्तन नहीं आता जो प्रेस के खुले मंच से रोक देने पर प्राय: गोपनीय प्रचार में प्रवृत्त हो जाते हैं।
इसका असली उपचार स्वस्थ लोकमत है जिसे विशेषतः पत्र-पत्रिकाओं को संरचना देने से इकार कर देना चाहिए...प्रेस की स्वतंत्रता एक मूल्यवान विशेषाधिकार है जिसे कोई देश छोड़ नहीं सकता | लेकिन बहुत हल्की रोकथाम के अलावा कोई कारगर कानूनी रोक न हो, जो नहीं होनी चाहिए, तो जैसा मैंने ऊपर कहा है, आंतरिक रोक का होना जरूरी है जो न तो असंभव है और न उस पर आपत्ति की जानी चाहिए | (यंग, 28-5-1931, पृ. 121)

विज्ञापन

मेरी धारणा है कि अनैतिक विज्ञापनों...के बल पर अखबार चलाना गलत है | मेरा विश्वास है कि यदि विज्ञापन लिया ही जाए तो अखबारों के मालिकों और स्वंय संपादकों को पहले उनकी कड़ी छानबीन कर लेनी चाहिए और केवल स्वस्थ विज्ञापन ही स्वीकार किए जाने चाहिए |

आज बड़े-से-बड़े प्रतिष्ठित अखबार और पत्रिकाएं भी अनैतिक विज्ञापनों की बुराई की शिकार हैं | इसका सामना अखबारों के मालिकों और संपादकों के विवेक के परिष्कार करके ही किया जा सकता है | यह परिष्कार मेरे जैसे नौसिखिया संपादक के प्रभाववश नहीं हो सकता; यह तो तभी होगा जब इस बड़ी हुई बुराई को पहचानकर उनका अपना विवेक जागृत हो गया या जनता की प्रतिनिधि सरकार जनता के नैतिक आदर्शों के प्रति जागरूक होकर उन पर अपना विवेक आरोपित करेगी | (यंग, 25-3-1926, पृ. 114)

अखबार और सच्चाई

पश्चिम की तरह पूर्व में भी अखबार लोगों की बाइबिल, कुरान, जेड-अवेस्ता और भगवद्गीता बनते जा रहे हैं | अखबारों में जो कुछ छपता है उसे लोग ईश्वरीय सत्य मानते हैं | (हरि, 28-4-1946, पृ. 101)

मैं अखबारों से राय उदार लेने की आदत को खराब समझता हूँ | अखबार करने के लिए है | उन्हें स्वतंत्र विचार की हमारी आदत को मारने की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए | (हरि, 26-5-1946, पृ. 154)

मैं अखबारों का कर्तव्य यह समझता हूँ कि वे अपने पाठकों को केवल तथ्य दें, और कुछ नहीं | (हरि, 9-2-1947, पृ. 19)

प्रेस की शक्ति

प्रेस की लोकतंत्र का चौथा संभ कहा जा सकता है | उसके शक्तिशाली होने में कोई संदेह नहीं है, लेकिन उस शक्ति का दुरुपयोग करना एक अपराध है | मैं स्वयं एक पत्रकार हूँ और अपने साथी पत्रकारों से अपील करता हूँ कि वे अपने उत्तरदायित्व को समझें और अपना काम करते समय केवल इस विचार को प्रश्न दें कि सच्चाई को सामने लाना है और उसी का पक्ष लेना है | (हरि, 27-4-1947, पृ. 128)
अखबारों का बड़ा जबरदस्त असर होता है | संपादकों का यह कर्तव्य है कि वे यह सुनिश्चित करें कि उनके अखबारों में कोई खूबी रिपोर्ट प्रकाशित न हो और न कोई ऐसी रिपोर्ट प्रकाशित हो जिससे जनता के भड़कने की आशंका हो।

संपादकों और उनके सहायकों को खबरें और उनके देने के ढंग के बारे में विशेष रूप से सावधान रहना चाहिए | स्वाधीनता की स्थिति में, सरकार के लिए प्रेस पर नियंत्रण रखना लगभग असंभव है | यह काम जनता का है कि वह अखबारों पर कड़ी नजर रखे और उन्हें सही रास्ते पर चलाए | प्रबुद्ध जनता भड़कने वाले या अश्लील अखबारों को संरक्षण देने से इंकार कर देगी | (हरर, 19-10-1947, पृ. 378)

लोग किसी भी छपी गई चीज़ को दैवी सत्य मान लेते हैं | इसके कारण संपादकों और समाचार-लेखकों का उत्तरदायित्व बहुत अधिक बढ़ जाता है | (हरर, 2-11-1947, पृ. 391)

मैं स्वयं कभी अखबारों की रिपोर्टों पर बहुत अधिक भरोसा नहीं करता और अखबारों के पाठकों को भी चेतावनी देना चाहता हूँ कि वे उनमें छपी कहाशनयों से आसानी से प्रभावित न हों | अच्छे-से-अच्छे अखबार भी अशतरंजना और भाषा के अलंकरण से मुक्त नहीं होते | (हरर, 30-11-1947, पृ. 447)

पहनावा

मेरा संकुचित राष्ट्रवाद मुझे हैट के विरूद्ध विवाद करने के लिए प्रेरित करता है, लेकिन मेरा प्रच्छन्न अंतरराष्ट्रीय सोला हैट को यूरोप के कुछ वर्षों में से एक भाग है | यदि हैट के विरूद्ध इतना अधिक राष्ट्रीय पूर्वाग्रह न होता तो मैं सोला हैटों को लोकप्रिय बनाने के लिए संगठित किसी लीग का अध्यक्ष बन गया होता |

भारत के शिक्षित वर्मा ने इस देश की जलवायु के लिए अनावश्यक, अस्वास्थ्यकर और भयानक पतलूनों को अंतिमीकर करके और सोला हैट को अपनाने में हिचक अनुभव करके एक गलती की है | लेकिन मैं जानता हूँ कि राष्ट्रीय रुचियां और अस्वास्थ्य से झटका नहीं होता | (यंग, 6-6-1929, पृ. 192)

मैं राष्ट्रीय पहनावा इसलिए पहलता हूँ कि यह सबसे स्वाभाविक है और एक भारतीय के लिए स्वाभाविक रूप से है | मैं मानता हूँ कि पश्चिमी पहनावे के हम जो नकल करते हैं वह हमारे अपकर्ष, अपमान और दुर्भिक्षा का चिह्न है और हम उस पहनावे को अस्वीकार करके एक राष्ट्रीय पाप कर रहे हैं जो भारत की जलवायु के सबसे अधिक अनुकूल है और जो इतना सादा और सस्ता है कि संसार का कोई पहनावा इसका मुकाबला नहीं कर सकता | इसके साथ ही, यह हमें साफ-सुधरा रहने में भी मदद करता है | यदि मिथ्या गौरव और प्रतिष्ठा की मिथ्या भावना बाधक न होती तो अंग्रेजें ने बहुत पहले भारतीय पोशाक को अपना लिया होता |
मैं पशवत्रता का विचार करते हुए जूते नहीं पहनता और मुझे यह भी लगता है कि जहां तक संभव हो, जूते न पहनना ज्यादा स्वाभाविक और स्वास्थ्यपरक है। (स्पीरा, पृ. 393-94)

पाप और पापी

मैं अपने पाप के परिणामों से मुक्त नहीं चाहता; मैं तो चाहता हूं कि स्वयं पाप अथवा पाप करने के विचार मात्र से मुक्ति मिल जाए। जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती, तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पारंपरिक धारणा यह है कि पापों से मुक्ति अगले जन्म में मिलती है। मैं अपने जीवन के पापों से मुक्त आने को भी मानता हूं जहां संभव हो। जूते न चाहता हूं। स्वथा और स्वस्थ्यपरक है। (स्पीरा, पृ. 393-94)

पापों के शवचार का अहंकार| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापों के परिणाम| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापियों के शवचार का अहंकार| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापों के परिणाम| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापों के परिणाम| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापों के परिणाम| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)

पापों के परिणाम| जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुझे चैन नहीं आएगा। (ए, पृ. 90)
मैंने अपने अनेक पापों को बिलकुल खुलकर स्वीकार किया है | मैं उनका बोझ अपने कंधों पर लादकर नहीं चलता | यदि मैं ईश्वर की ओर बढ़ रहा हूँ, जैसा कि मैं अनुभव करता हूँ, तो मैं सब प्रकार से सुरक्षित हूँ | मुझे ईश्वर की उपस्थिति की गरमाहट का अनुभव होता है | मैं जानता हूँ कि मेरी सादगी, उपवास और प्रार्थनाएं किसी काम की नहीं है, यदि मैं स्वयं की सुधार के लिए उन पर निर्भर नहीं। लेकिन यदि वे एक ऐसी आत्मा की पुकार का प्रतिनिधित्व करती है जो अपने सृष्टिकर्ता की गोद में अपना थाका-हारा सर रख देने के लिए व्यक्त है तो मैं समझता हूँ कि इन सभी का मूल्य आपरिमित है | (हरर, 18-4-1936, पृ. 77)

गलती करना आदर्श का काम है | उन्हें स्वीकार करके हम अपनी गलतियों को प्रगाढ़ की सीमाओं में बदल देते हैं | इसके विपरीत जो व्यक्ति अपनी गलतियों को छिपाने की कोशिश करता है, वह जीता-जागता कपटी बन जाता है और उसका पतन हो जाता है | मनुष्य न तो पशु है और न ईश्वर है, वह ईश्वर के देवता की प्रगति के लिए प्रयासमंद ईश्वर की सृष्टि मात्र है | ईश्वर-प्रार्थना और आमदुशिकरण ईश्वर-प्राप्ति के दो साधन हैं | जैसे ही हम अपनी किसी गलती के लिए पश्चाताप करते हैं और उसके लिए ईश्वर से क्षमा मांगते हैं वैसे ही हम पापकृत हो जाते हैं और हमारे लिए एक नये जीवन की शुरुआत हो जाती है | सच्चा पश्चाताप प्रार्थना की अनिवार्य शर्त है | (हरर, 21-4-1946, पृ. 94)

केवल मुंह से निंदा करके किसी पाप को नहीं धोया जा सकता | (हरर, 23-6-1946, पृ. 200)

गलती या पाप का पता चलते ही उसे स्वीकार करने से हम उससे मुक्त हो जाते हैं | (हरर, 20-10-1946, पृ. 367)

पुनर्जन्म

मुझे पूर्व-जन्म और पुनर्जन्म में विश्वास है | हमारे सभी संबंध पूर्व-जन्म से प्राप्त संस्कारों के परिणाम होते हैं | ईश्वर के नियम बड़े गुद्ध हैं और उन पर निरंतर अनुसंधान होता रहा है, लेकिन कोई उनकी बाह नहीं या सकेगा | (हरर, 18-8-1940, पृ. 254)

पुरुषोहित

यह एक दुखद बात है किंतु ऐतिहासिक सत्य है कि पुरुषोहित जो धर्म के वास्तविक रक्षक होने चाहिए थे, वे उसे नष्ट करने के साधन सिद्ध हुए हैं | (यंग, 20-10-1927, पृ. 353)

प्रयोग

मैं केवल अपने और दूसरों के ऊपर प्रयोग करके आगे बढ़ सकता हूँ | मैं ईश्वर के पूर्व एकता में विश्वास करता हूँ, इसीलिए मानव जाति में भी मेरी आस्था है | क्या फरक पड़ता है अगर हमारे शरीर अलग-अलग हैं? हममें आत्मा
प्रेतात्मवाद

मुझे प्रेतात्माओं से कभी कोई संदेह प्राप्त नहीं होते | ऐसे संदेहों की संभावना के प्रति अविश्वास करने का भी मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है | लेकिन ऐसे संदेह प्राप्त करने या उनके लिए प्रयास करने का मान सच्चति हूँ | इस तरह की कोशिश प्राप्त थी: धोखा देने वाली और कल्पना की उपज होती है | प्रेतात्माओं को होने वाली हानि की कारण उसकी कोशिश वह स्वयं को पृथ्वी से मुक्त करके अश्वद्ध करने का मौका उपलब्ध होता है | इस प्रकार के भाषणों में प्रेतात्मा को अश्वद्ध करना उनके मृत्यु पर पृथ्वी की ओर बंधन करने का कारण होता है | यह स्तरों की ओर जाए तब तक में रीर छोड़ देने से ही आत्मा अशवद्ध होगी | जहां तक माध्यम का प्रश्न है, मैं यह बात अच्छी तरह जानता हं | (यंग, 25-9-1924, पृ. 313)

बीमा

...मैं सोचता था कि जीवन-बीमा का अर्थ है भय तथा ईश्वर में आश्वास का अभाव....अपने जीवन का बीमा करके मैंने अपनी पत्नी और बच्चों को स्वावलंबी बनाने से रोक लिया था | दुनिया के असंख्य निर्धन परिवारों पर क्या गुजरती है? उनसे अपनी परवरिश करने की आशा क्यों नहीं की जानी चाहिए? मैं अपने को उनमें से एक क्यों
भोजन

...चूर्ण के निर्माण में या देख के कमान के लिए भोजन को जो बढ़ा-चढ़ाकर महत्व दिया जाता है वह गलत है | यह सही है कि भोजन एक शक्तिशाली तत्त्व है जिसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए, लेकिन भोजन को ही धर्म का सब कुछ मानना लेना, जैसा कि प्रायः भारत में किया जाता है, उतना ही गलत है जितना कि भोजन के संबंध में हर प्रकार के संयम को ल्याए देना और अपनी जिज्ञासा के खास के लिए कोई भी कसर न उठा रखना | शाकाहारवाद हिंदू धर्म की अमूल्य देन है | इसे यो ही ल्याए देना ठीक नहीं है | इसलिए इस घृंठ धारणा का उचित साधन बन गया है तक अद्वीतीय या जड़ बन गए हैं | सभी महान हिंदू सुधारक अपनी पीड़ित्रे के सक्रिय तत्त्वों में से रहे हैं और वे सभी शाकाहारी थे | शंकर या दयानंद से अशधक सशक्रय उनके युगों में किन रहा होगा?

...भोजन के चुनाव का धर्म से कोई वास्तव नहीं है | यह ऐसा मामला है जिसका निर्णय प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छेंक से करना चाहिए | इसके लिए शाकाहार्वाद पर काफी साहित्य सामने आया है, विशेषकर पक्षमें, जिसे पहाड़कर प्रयोग सम्प्रेक्षण को लाभानवत हो सकता है | इस साहित्य में अनेक दृष्टि चिकित्सकों ने योगदान किया है | भारत में शाकाहार जो कुलाहाने के लिए आक्षेपक कभी नहीं पड़ी, क्योकि इसे अभी तक सबसे वांछनीय और आदरणीय वस्तु माना जाता रहा है | जिन लोगों की मति...डावाडोल है उन्हें पक्षमें शाकाहार्वाद के प्रति बढ़ती हुई रूचि का अध्ययन करना चाहिए | (यंग, 7-10-1946, पृ. 347)

जीने के लिए खाना

मनुष्य को रसना की तुलना के लिए नहीं, अपितु शरीर की रक्षा के लिए भोजन करना चाहिए | जब हमारी प्रत्येक इंद्रिय शरीर और शरीर के माध्यम से आत्मा की सेवा करने लगती है तो उसके विशेष रस शून्यता हो जाता है और वह उस रूप में कार्य करना शुरू कर देती है जिस रूप में कार्य करने के लिए प्रकृति ने उसे बनाया था | प्रकृति के साथ यह मेल बिठाने के लिए जितने प्रयोग और ल्याए किए जाए, कम हैं | लेकिन दुबर्भिये से आजकल हवाओं विपरीत दिशा में भी है | हम इस नश्वर शरीर को सजाने और कुछ क्षयों के लिए इसके अस्तित्व को लाभ करने के लिए अनेक जीवों की बल्देने में शर्म का अनुभव नहीं करते, जिसका परिणाम यह है कि हम स्वयं को – शरीरत व साथ आत्मा दोनों को – मारे डाल रहे हैं | एक गृही बीमारी का इलाज करने के प्रयास में हम असंख्य नयी बीमारियां मोल ले रहे हैं; इंद्रियों के अधिकाधिक भोग के प्रयास में हम अंतः भोग करने की अपनी
क्षमता को ही खो बैठते हैं | यह सब कुछ हमारी अपनी आंखों के सामने ही हो रहा है, लेकिन जो देखकर भी नहीं देखते उनका क्या इलाज है ? (ए पृ. 237)

इस कथन में काफी सच्ची है कि आदमी जैसा खाता है वैसा ही उसका मन बन जाता है | भोजन जितना स्थूल होगा, शरीर भी उतना ही स्थूल हो जाएगा | (हरिर 5-8-1933, पृ. 4)

मांस-भोजन

आध्यात्मिक विकास में मादक पेयों और इसी तरह के अन्य सभी खाद्य पदार्थों विशेषकर मांस से परहेज करना निरस्संदेह बड़ा सहायक सिद्ध होता है, लेकिन यह किसी भी रूप में अपने आप में साध्य नहीं है | बहुत-से लोग जो मांस खाते हैं, लेकिन ईश्वर से भय मानते हुए जीते हैं | वे उन लोगों से कहीं अधिक अपनी स्वतंत्रता के निकट हैं | जो मांस और बहुत-सी चीज़ों से तो परहेज करते हैं, लेकिन अपने प्रत्येक कुल से ईश्वर की अनुशासन करते हैं | (यंग, 6-10-1921, पृ. 318)

सही या गलत, यह मेरे धार्मिक विश्वास का अंग है कि मनुष्य को मांस, अंडे और भक्षण के सिद्ध होते हैं | आखिर अपने आपको जीवित रखने के साधनों की बहुत कोई सीमा होनी चाहिए | कुछ चीज़ें जो ऐसी हों जिनें हम अपनी प्राणरक्षा के लिए भी न करें | (ए पृ. 180)

मैं किसी भी अवस्था और किसी भी जलवायु में जिसमें मनुष्य सामान्यतः जीवित रह सकता है, मांस का सेवन आवश्यक नहीं मानता | मेरी धारणा है कि मांस-भक्षण मनुष्यों के लिए नहीं है | यदि हम निश्चित पशु-जगत से श्रेष्ठ हैं तो हमें उनका अनुकरण नहीं करना चाहिए | अनुभव सिखाता है कि मेरे ही अपने मनोवेगों पर नियंत्रण पाना हो उनके लिए मांस-भोजन अनुकूल नहीं पड़ता | (यंग, 7-10-1926, पृ. 347)

मैं अनुभव करता हूं कि आध्यात्मिक प्रगति किसी-न-किसी अवस्था में यह अपेक्षा रखनी है कि हम अपने शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने सहचर प्राणियों की हत्या करना बंद कर दें | (इंके, पृ. 402-03)

शाकाहार

मैं सदा शुद्ध शाकाहारी भोजन के पक्ष में रहा हूं | लेकिन अनुबंध ने मुझे सिखाया है कि पूर्ण स्वस्थ रहने के लिए शाकाहारी भोजन में दूध और दही, मक्खन, त्ती आदि दूध से बनी चीज़ें शामिल होनी चाहिए....

लेकिन यह धारणा है कि इस विशाल वनस्पति-जगत में कोई ऐसी चीज़ जरूर हो होती है जो हमें वे आवश्यक तत्त्व दे सकें जिनें हम दूध और मांस से प्राप्त करते हैं, पर साथ ही जो नैतिक तथा अन्य दोषों से मुक्त हो | मेरी राय में दूध या मांस का सेवन करने में निषिद्ध दोष है | मांस के लिए हमें जीवनस्तुप करनी चाहिए | जहां तक दूध का तात्लुक है, हमें अपने शैववाद में मांस से जो दूध मिलता है उसके अलावा और किसी दूध पर हमारा
कोई अधिकार नहीं है | नैतिक दोष के अलावा भी स्वास्थ्य की हड़ताल से बहुत-से दूसरे दोष हैं | दूध और मांस का सेवन करने से हमारे अंदर उस पशु की भी खराबियाँ आ जाती है जिनसे वह दूध और मांस ग्रहण किया गया है....

भोजन में जो रस भूख के कारण उत्पन्न होता है वह रस दुनिया का कोई स्वादिष्ट-स्वादिष्ट भ्यंजन भी नहीं दे सकता | (की, प. 14-16)

मेरी निश्चित धारणा है कि मनुष्य को शिशु रूप में अपनी मां से मिले दूध के बाद किसी और दूध की जरूरत नहीं पड़नी चाहिए | उसके भोजन में केवल पेड़ पर पके फल और मेवा होने चाहिए | अंगूर जैसे फलों और बादाम जैसी मेवाओं से वह अपने उत्साहों और साइंटिकों, दोनों के लिए पार्वती स्रोत प्राप्त कर सकता है | जो व्यक्ति ऐसे भोजन पर रहता है, उसके लिए कामवासना और अन्य विकारों पर संयम रखना सरल हो जाता है | (ए प. 200)

आहार-अनुसंधान

व्यक्ति आदतन मांस या, और नहीं तो, दूध और उसके उपोत्साहों पर आक्रीत रहता है, अन्यथा वनस्पति-जंगल में मनुष्य को पूर्ण स्वस्थ रखने की आवश्यकता स्मरण है – यह ऐसा विषय है जो आधुनिक आयुर्विज्ञान से अभी तक अलग है | इस कर्त्तव्य का निर्वाह भारत के आयुर्विज्ञानियों को करना चाहिए जिनकी परंपरा शाकाहारी की है | विटामिनों के विषय में तेजी से हो रहे अनुसंधानों और अधिकांश विटामिनों के सीधे सूचर से ग्रहण करने की संभावनाओं ने भोजन के विषय में आयुर्विज्ञान द्वारा प्रतिपादित अनेक सिद्धांतों और विश्लेषणों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का मार्ग प्रशस्त कर दिया है | (यंग, 18-7-1929, प. 236)

मैंने दैर्घ्य अनुभव और प्रेरणा से यह नतीजा निकाला है कि सभी प्रकार के शरीरों के लिए आहार का एक ही नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता | अक्षे-से-अक्षे चिकित्सक भी केवल इतना ही दाखल कर सकते हैं कि किसी विशेष मामले में अमृत-अमृत की चीज़ से फायदा होने की संभावना है, क्योंकि ऐसे ही अधिकांश मामलों में यह माफिक आती देखी गई है | विज्ञान की किसी और शाखा में वैज्ञानिक को अनुसंधान करते समय उतनी बाधा महसूस नहीं होती जितनी कि आयुर्विज्ञान में | वह किसी खास दाह या खाने की चीज़ के प्रभाव या मानव शरीर की प्रतिक्रियाओं के बारे में विश्वासपूर्वक कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं कर पाता | यह विषय सदा अनुभवशिष्ट रहेगा | यह लोकप्रिय कहावत कि एक मनुष्य का आहार दूसरे मनुष्य के लिए विष सिद्ध हो सकता है, बड़े व्यापक अनुभव पर आक्रीत है और इसके प्रमाण आए दिन मिलते रहते हैं | ऐसी स्थिति में, बुद्धिमान सती-पुरुषों के लिए प्रयोग का असीमित क्षेत्र खुला है | आम आदमियों को शरीर के बारे में कामचलाऊ ज्ञान अवश्य होना चाहिए, क्योंकि शरीर के भीतर बैठी आत्मा के विकास में शरीर की भूमिका महत्वपूर्ण होती है | फिर भी, जितनी लापरवाही अथवा अज्ञान का प्रमाण हम अपने शरीर के मामले में देते हैं उत्तन किसी अन्य मामले में नहीं | (यंग, 8-8-1929, प. 261)
मेरा निवेदन है कि वैज्ञानिकों ने अभी तक मनुष्य को अधिकतम पोषण देने के लिए मांस और फलों की प्रचुर संभावनाओं का पता नहीं लगाया है | एक बात यह भी है कि मांसाशी के प्रति लगाव के साथ जो जबरदस्त निहित स्वार्थ जुड़ गए हैं, उन्होंने चिकित्सकों को पूरे तटस्थ भाव से इस प्रश्न की धार नहीं लेने दी है। | (यंग, 15-8-1929, पृ. 265)

नैतिक आधार

शाकाहार के प्रति पूरी निष्ठा रखने के लिए आदमी को कुछ नैतिक आधार चाहिए....कारण कि, यह आत्मा के निर्माण के लिए है, शरीर के नहीं | आदमी के वेंट मांस ही नहीं है | हमारा सरोकार उसके भीतर बैठी आत्मा से है। | इसलिए, शाकाहारियों का नैतिक आधार यह होना चाहिए कि मनुष्य का जन्म मांसभक्षी पशु के रूप में नहीं हुआ है, अपितु पृथ्वी द्वारा उत्पन्न फलों और शकों पर जीवन-निवांग करने के लिए हुआ है। | (हरिन, 20-2-1949, पृ. 430-31)

अहिंसा केवल आहारविज्ञान का मामला नहीं है, यह उससे परे की चीज़ है | आदमी ब्या खाता-पीता है, इसका उत्तर महत्त्व नहीं है; महल उसके पीछे जो आलमत्याग और आत्मसंयम है, उसका है | अपने भोजन की वस्तुओं के चुनने में जितना अधिक संयम बरतना चाहें, शौक से बरतिए | संयम प्रशंसनीय है, जरूरी भी, लेकिन यह अहिंसा की स्पर्श को ही कृता है | यह संघव है कि आहार के मामले में डटकर आजादी बरतने वाला व्यक्ति भी अहिंसा की मूर्ति हो, और यदि उसका हदय प्रेम से आपत्तित है और उसके पीछे का दृष्टिकोण हो उठता है तथा उसके बाहर नहीं है, तो हम उसे जरूर आदर देंगे | इसी से, आहार में जा भवनशील बरतने वाला व्यक्ति यदि धर्म और वासनाओं का दास है तथा हदय का निर्मित है तो यह कहना पड़ेगा कि वह अहिंसा के पास भी नहीं फटका है और वह एक गृहनिवासी की आदमी है। | (यंग, 6-9-1928, पृ. 300-01)

यह भी स्मरण रखने योग्य है कि केवल जीवन के ही हम काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और कपट, इन 'छह मारक शत्रुओं' पर विजय पाने में सफल नहीं हो सकते....जो व्यक्ति चिथियों और कीड़ों को रोज भोजन खिलाता है और जीवन क्षण भी नहीं करता पर काम और क्रोध में आकंठ बुझ रहता है, उसमें कुछ भी ऐसा नहीं है जिसकी प्रशंसा की जाए | उसके जीवन के एक यांत्रिक कर्म है जिसका कोई आध्यात्मिक मूल्य नहीं है | बल्कि सच पूछा जाए तो यह यंत्रवत कार्य वैसे भी गिरा हुआ काम है – यह अंदर के भ्रष्ट आचरण की छिपाने का एक पाखंडयुक्त आचरण है। | (यंग, 15-9-1940, पृ. 285)

मताधिकार

...मैं व्यक्त मताधिकार का पूरी तरह समर्थन करता हूँ...व्यक्त मताधिकार कई कारणों से आवश्यक है; यही दृष्टि में एक निर्णयक कारण यह है कि यह न केवल मुसलमानों बल्कि तथाकथित अछूतों, ईशाइयों, मजदूरों और
दूसरे तमाम वर्गों की उचित आकांक्षाओं की पूर्ति करता है | मैं संभवतः इस बात को सहन नहीं कर सकता कि जो व्यक्ति चरित्रवान है तो जिसके पास पैसा नहीं है या जो निरक्षर है उसको वोट देने का अधिकार न हो या जो व्यक्ति रात-दिन पसीना बहाकर ईमानदारी की रोजी-रोटी कमाता है उसे सिर्फ इस अपराध के कारण वोट देने का अधिकार न हो कि वह निर्धन है | (यंग, 8-10-1931, पृ. 297)

महानता

सोलन को किसी व्यक्ति के जीवन-काल में उसके सुख के विषय में निर्णय देने में कठिनाई अनुभव हुई थी; ऐसी सूरत में, मनुष्य की महानता के विषय में निर्णय देना तो और भी कितना कठिन काम हो सकता है ? सच्ची महानता पहाड़ी के ऊपर बैठकर आम लोगों की भीड़ को दर्शन नहीं देती | इसके विपरीत, मेरे सत्तर वर्ष के अनुभव ने मुझे सिखाया है कि जो लोग सचमुच में महान है, उनके बारे में अथवा उनकी महानता के बारे में दुनिया को उनके जीवन-काल में शायद ही कभी कोई जानकारी हो पाती है | सच्ची महानता का निर्णयिक केवल ईश्वर ही हो सकता है, क्योंकि वही लोगों के दिलों को पहचानता है | (हरर, 10-12-1938, पृ. 377)

माता-पिता

मैंने आज तक एक भी ऐसा सपूत नहीं देखा जिसे अपनी मां बुढ़ापे के कारण कुरूप दिखाई देती है | शुद्ध सोने पर मुलम्मा चढ़ाना तो शायद संभव भी हो जाए, पर ऐसा पुत्र अभी तक पैदा नहीं हुआ जो अपने पिता का परिश्रम कर सके | (हरर, 3-8-1947, पृ. 260)

मृत्यु

अनेक वर्षों से मैं इस प्रस्थापना के प्रति बौद्धिक सहमशत व्यक्त करता रहा हूँ कि मृत्यु जीवन में आने वाला एक बड़ा परिवर्तन मात्र है, इससे अधिक कुछ भी नहीं, तथा यह जब भी आए, हमें इसका स्वागत करना चाहिए | मैंने सोच-समझ-कर अपने हृदय से मृत्यु का भय सहित सभी भयों को दूर करने के लिए घोर प्रयास किया है | मुझे अपने जीवन के वे अवसर अब भी याद है जब मैं आस्त्र मृत्यु के विचार से उसी प्रकार आनंदित हुआ हूँ जिस प्रकार कोई अपने बिचड़े मित्र से मिलने की आशा से आनंदित होता है | मनुष्य प्राप्त के हृदय में जानकारी के सभी प्रयासों के बावजूद दुर्निर्णयशील बना रहता है और जो स्मृति बुढ़ि तक सीमित रह जाता है और हृदय में नहीं उतरता, वह जीवन के क्रांतिकार क्षणों में कोई काम नहीं आ पाता।

एक बात और है कि जब व्यक्ति को बाहर से मदद मिलती है और वह उसे स्वीकार कर लेता है तो उसकी आत्मा की शक्ति प्राप्त करती है | सत्याग्रही को सदा ऐसे प्रलोभनों से सावधान रहना चाहिए | (ससा, पृ. 186)
मुझे यह बात दिन के प्रकाश की तरह स्पष्ट दिखाई देती है कि जीवन और मृत्यु एक ही चीज़ की दो अवस्थाएं हैं, एक ही सिक्के के दो ओर हैं।| कारण यह है कि मैं जानता हूं कि आदमी कितनी ही सावधानियों बरत ले, पर मृत्यु तो अवश्य भारी है।| मैं चाहूंगा कि आप इस बात को समझें कि मैं भारत के उन इन्हें पिने सार्वजनिक व्यक्तियों में से एक हूँ जो अपने स्वास्थ की रक्षा करना जाते हैं।| इशारा ही जानता है कि उसे मुझसे क्या काम लेना है।| उसे अपने काम के लिए मेरी जब तक आवश्यकता है, उससे एक क्षण भी अधिक वह मुझे जीवित नहीं रहने देगा।| (हरिर, 15-1-1938, पृ. 416)

मृत्यु का भय

अगर कोई मुझसे यह कहे कि मौत से बचने के लिए मुझे इस वर्ष के अंत तक के बारे हिमालय में जाकर वास करना चाहिए तो मैं ऐसा बिलकुल नहीं करूंगा।| कारण यह है कि मैं जानता हूं कि आदमी कितनी ही सावधानियाँ बरत ले, पर मृत्यु तो अवश्य भारी है।| मैं चाहूंगा कि आप इस बात को समझें कि मैं भारत के उन इन्हें पिने सार्वजनिक व्यक्तियों में से एक हूँ जो अपने स्वास्थ की रक्षा करना जाते हैं।| इशारा ही जानता है कि उसे मुझसे क्या काम लेना है।| उसे अपने काम के लिए मेरी जब तक आवश्यकता है, उससे एक क्षण भी अधिक वह मुझे जीवित नहीं रहने देगा।| (हरिर, 15-1-1938, पृ. 416)

मृत्यु एक सहचरी तथा मित्र है| जो बहादुरी के साथ मरते हैं, मौत उन्हें प्रिय लगती है।| (हरिर, 20-4-1947, पृ. 117)

मृत्यु से किसी को भयभीत नहीं होना चाहिए।| मृत्यु प्रत्येक मनुष्य के लिए अवश्य भारी है।| लेकिन अगर हम मुखराते हुए मरते हैं, हमें एक नया जीवन प्राप्त होगा।| (वहीं, पृ. 120)

आदमी मृत्यु से बचने के लिए ही जीवित नहीं रहता।| अगर कोई ऐसा करता है तो वह गलती करता है।

मनुष्य को मृत्यु से अधिक नहीं हैं उतना प्रेम तो करना ही चाहिए जितना वह जीवन से करता है।| अपने जीवन में कठिन बात और इस पर असल करना और भी कठिन है।| पर हर अच्छे काम को करना कठिन होता है।| चांदी हमेशा कठिन होती है।| उत्तराधिकार और प्राय: फिसलनी होती है।| जीवन तभी तक जीने योग्य है जब तक हम मृत्यु को मित्र मानें, शत्रु कदापि नहीं।

जीवन के प्रलोभनों को जीतने के लिए मृत्यु की सहायता मांगिए।| कार्य आदमी मृत्यु को टालने के लिए अपना सम्मान, पती, पुत्री आदि सभी की बलि दे देता है।| साहसी व्यक्ति आत्मसम्मान की बलि देने के बजाए मौत को गले लगाना बेहतर समझता है।

जब समय आएगा, छिंदकी कल्पना को जा सकती है।| तो मैं अपना परामर्श सुझाव देंगे।| साहसी व्यक्ति आत्मसम्मान की बलि देने के बजाए मौत को गले लगाना बेहतर समझता है।| (हरिर, 30-11-1947, पृ. 437)
सभी को किसी-न-किसी दिन मरना है | मृत्यु से कोई नहीं बच सकता | तो फिर उससे डरना क्या ? वास्तव में, मृत्यु तो एक मित्र है जो दुखों से छुटकारा दिलाती है | (हरिर, 25-1-1948, पृ. 529)

मृत्यु-शुल्क
मृत्यु-शुल्क क्यों नहीं लगाए जाने चाहिए ? लक्षणियों के बेटे जो वयस्क हो चुके हैं, अपने माता-पिताओं की संपत्ति के वारिस बनने के कारण ही नुकसान उठाते हैं | इससे राष्ट्र को दोहरा नुकसान होता है | विरासत पर राष्ट्र का ही अधिकार होना चाहिए | राष्ट्र की उपराधिकारियों की क्षमताओं से भी हाथ धोना पड़ता है, क्योंकि दौलत के बोझ तले दबकर उपराधिकारी अपनी पूरी क्षमता का उपयोग नहीं कर पाते | (हरिर, 31-7-1937, पृ. 197)

व्यक्तिगत रूप से, मैं विरासत में मिली धन-दौलत में विश्लेषण नहीं करता | धनवान लोगों को अपने बच्चों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए और उनका पतन-पोषण इस प्रकार करना चाहिए कि वे अपने पैरों पर खड़ा होना सीखें | दुख का विषय है कि वे ऐसा नहीं करते | उनके बच्चे थोड़े-बहुत पढ़ जाते हैं, वे गरीबी के गुणवान में कुछ कविताएं भी सुनाने लगते हैं, लेकिन उन्हें अपनी पैतृक संपत्ति का उपयोग करने में कोई तकलीफ महसूस नहीं होती | (हरिर, 8-3-1942, पृ. 67)

युवा
मेरी आशा का केंद्र देश का युवा वर्ग है | जो युवा दुरुस्तों के शिकार हैं....वे भी प्रकृति से बुरे नहीं हैं | वे मजबूरी में और बिना सोचे-समझे दुरुस्तों की ओर आकृत हो गए हैं | उन्हें समझना चाहिए कि इनके कारण भय उन्हें और समाज को चित्र हानि पहुंची है | उन्हें यह भी समझना चाहिए कि कठोर अनुशासन में रहकर ही वे अपने को और देश को पूरी बर्बादी से बचा सकते हैं | (यंग, 9-7-1925, पृ. 239)

मुझे उच्च वर्ग के युवाों में फैशन के प्रति दीवानगी को देखकर बड़ी मनोव्यथा होती है | वे यह नहीं जानते कि पश्चिम की इस मोहक चकाचौंड की गुलामी के कारण वे ध्यान को उन निर्धारित देशवासियों से अलग-थलग कर रहे हैं जो कभी इन फैशनों को नहीं अपना सकते | मैं यह नहीं भूल सकता कि यदि हमारा युवा वर्ग....इस झूठी लाइन के चक्कर में सादगी की वृत्ति को खो बैठा तो वह एक राष्ट्रीय महासंकट होगा, एक राष्ट्रीय त्रासदी होगी। | (यंग, 8-12-1927, पृ. 416)

वकील
अगर हम वकीलों और अदालतों के मायाजाल में न फंसे होते और हमें अदालतों के दलदल में फंसाने और हमारे निकृष्ठतम मनोवेगों को गहरा देने वाले दलदल न होते हो तो हमारा जीवन आज की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी होता | अदालतों के चक्कर लगाने वाले ऊंचे-से-ऊंचे व्यक्ति भी इस बात की गवाह देंगे कि वह जाने का वातावरण निहायत
गंदा होता है | दोनों ओर झुठे गवाह खड़े किए जाते हैं जो पैसे के लिए या दोस्ती की खातिर अपनी आँखें बंद करने के लिए तैयार रहते हैं | (यंग, 6-10-1920, पृ. 2-3)

मैंने सच्ची वकालत करना सीखा; मनुष्य के गुण – उसके उज्ज्वल पक्ष को खोजना सीखा; मनुष्य के ह्रदय में प्रवेश करना सीखा। मैंने देखा कि वकील का कर्त्तव्य है कि वादी और प्रतिवादी के बीच की खात्री को बनाया | यह शिक्षा मेरे ह्रदय में इतनी गहराई के साथ अकिंत हो गई कि अपने बीस साल के वकील-जीवन में मेरा अधिक समय सैकड़ों मुकदमों में दोनों पक्षों के बीच समझौता कराने में बीता | इसमें मैंने खोया कुछ नहीं | धन खोया हो, यह भी नहीं कह सकते; और आँख को तो किसी तरह नहीं खोया | (ए, पृ. 97)

कानून और सच्चाई

मैं यह धारण करता हूँ कि बच्चों की सेवा के काम में आए तैयार रहते हैं | इंग्लैंड में यहाँ बड़े बाल भी हैं वकीलों के काम की सेवा के काम में आए | हमारे सामने सभी देशों के मूर्त्तियां, जिन्होंने आत्मवान का जीवन जीया, और अपनी प्रखर कानूनी प्रतिभा का उपयोग सही तरह देश की सेवा के लिए किया, हालांकि इसके कारण उन्हें एका जीवन जीना पड़ा....

वकील का कर्त्तव्य

...आप रस्किन द्वारा अपनी पुस्तक ‘अन्दू दिस लास्ट’ में दिए गए निर्देश का पालन कर सकते हैं | वह पूछते हैं, ‘अगर बड़ई को अपने काम के बदले मुक्किल से पंद्रह हिलिंग मिलते हैं तो वकील को पंद्रह पौड क्यों मिलने चाहिए ।’ वकीलों द्वारा बसूल की गई फौस सर्वत्र अनाप-शानाप है....इंग्लैंड में, अफ्रीका में, लगभग सभी जगह, मैंने यह देखा है कि अपने बातों द्वारा वकील जाने-अनजाने अपने मुक्किलों की खातिर झूठ बोलते हैं | एक प्रतिष्ठित वकील ने तो यहाँ तक कहा है कि वह वकील का कर्त्तव्य है कि वह यह जानते हुए भी कि उसका मुक्किल दोषी है, उसे बचाना का प्रयास करे | मैं इस विचार से सहमत नहीं हूँ | वकील का कर्त्तव्य हमेशा यह है कि वह ययातीयों के समक्ष मामला पेश कर दे और उन्हें सच्चाई तक पहुँचने दे; वकील का काम दोषी को निरोध सिद्ध करना कदापि नहीं है | (वहीं, पृ. 427-28)
विचार-शक्ति

महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

शुद्ध जीवन जीने के आकाङ्क्षी व्यक्ति को मुझसे यह सीख लेनी चाहिए कि शरीर को क्षति पहुंचाने के मामले में जितना प्रबल अशुद्ध कर्म है, प्रायः उतना ही प्रबल अशुद्ध विचार भी है। (यंग, 25-8-1927, पृ. 278)

मनुष्य जैसा स्वयं को मानता है, प्रायः वो ही बन जाता है। अगर मैं अपने आप से कहता रहूँ कि मैं अमूक काम नहीं कर पाऊँगा तो इस बात की पूरी संभावना है कि अंत में मेरे अंदर वसूला उस काम को करने की क्षमता नहीं रहेगी। इसके विपरीत, अगर मुझे विश्वास है कि मैं वह काम कर सकूँगा तो भले ही मेरे अंदर शुद्ध में क्षमता का अभाव हो, पर मैं उसे करने की क्षमता अवश्य अर्जित कर लूंगा। (हरौ, 1-9-1940, पृ. 268)

आप जो सोचते हैं, वो ही हो जाते हैं। विचार तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक कि वह कार्य में परिणाम नहीं हो जाता और कार्य आपके विचार की सीमा निक्षित करता है। जब ऐसे लोगों के बीच पूर्ण सामजिक स्थापित होता है तभी जीवन पूर्ण और सहज बन पाता है। (यंग, 17-9-1919, पृ. 149-50)

शराब

आप इस खुशनुमा दलित के धोखे में न आएं कि भारत को जबरन अमद्या नहीं बनाया जाना चाहिए और जो लोग पीना चाहते हैं, उन्हें इसके लिए सुविधाएं उपलब्ध की जानी चाहिए। राज्य का काम लोगों के दुर्गुणों के लिए व्यवस्था करना नहीं है। हम बदनाम कोठों का नियमन नहीं करते, न उन्हें लाइसेंस जारी करते हैं। हम चोरों को चोरी करने के लिए सुविधाएं देते हैं। मैं शराबखोरों को चौर या शायद वेश्यावृति से भी अधिक निदंस्य मानता हूँ। क्या ये दोनों दुर्गुण प्रायः शराबखोरों से ही उत्पन्न नहीं होते? (यंग, 8-6-1921, पृ. 181)

शराब बीमारी ज्यादा है, दुर्गुण कम। मैं बीमियों लोगों को जानता हूँ जो हो सके तो खुशी-खुशी इस लत से पिंड छुड़ाने के लिए तैयार हैं। मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूँ जिन्होंने कहा है कि शराब की बोतल उनके सामने न आने दी जाए। पर बोतल दूर कर देने पर भी उनमें से कितने ही लोगों ने चुराकर शराब पी हैं।...बीमार लोगों को स्वयं उन्हीं से बचाने की जरूरत पड़ती है। (यंग, 6-7-1921, पृ. 240)

शराब और नशीली दवाइयाँ अनेक दशियों में मलेरिया आदि से भी कहीं ज्यादा हानिकार हैं, क्योंकि जहां मलेरिया केवल शरीर को नुकसान पहुंचाता है वहीं शराब शरीर और आत्मा दोनों को चूस जाती है। (यंग, 3-3-1927, पृ. 68)
कंगाल बनाना

मैं अपने बीच हजारों शराबियों के बजाए यह ज्यादा अच्छा समझूगा कि भारत कंगाल हो जाए | भारत में मद्धनिषेध लागू करने के लिए यदि उसे अशिक्षित रखना अनिवार्य हो तो मैं इसके लिए भी तैयार हूँ | (यंग, 15-9-1927, पृ. 306)

जो राष्ट्र शराबियों का शिकार है, उसके हाथ बरबरी के अलावा और कुछ नहीं लगने वाला | इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस लत के कारण पूरे साम्राज्य नष्ट हो गए हैं | भारत में ही श्रीकृष्ण के यदुवंश का पतन इसी व्यसन के कारण हुआ | रोम के पतन के कारणों में से एक कारण निस्संदेह यह व्यसन ही था | (यंग, 11-4-1929, पृ. 115)

शराबियों की आत्मा का नाश कर देती है और उसे पशु बना देती है जो पती, मां और बहिन के बीच फर्क नहीं कर पाता | मैंने ऐसे लोग देखे हैं जो शराब के नशे में यह फर्क भूल जाते हैं | (हरर, 9-3-1934, पृ. 30)

बहुत समय बाद मुझे कोई संदेह नहीं है कि निर्धन मदरासेवियों के नैतिक और भौतिक साधनों का पी जाने वाली आबकारी के पक्ष में यह सेना का भार करने के लिए आवश्यक है | यह सेना के पक्ष में यह अच्छा समझूंगा कि यह सेना के भार को वहन करने के लिए आवश्यक है, नये भारत के संदर्भ में यह तर्क भी व्यर्थ है, क्योंकि यह भार अब रहेगा ही नहीं | इसलिए आबकारी की आमदनी का अवलंब और बिना हिचक स्वरूप हाशन कर देना चाहिए | इस आमदनी की हाशन के विचार को इस अत्यावश्यक सुधार की प्रगति के मार्ग में रुकावट नहीं बनाना चाहिए....

मद्धनिषेध के नकारात्मक पक्ष के साथ-साथ उसके सकारात्मक पक्ष पर भी ध्यान देना आवश्यक है | सकारात्मक पक्ष यह है कि मद्रासों के लिए वैकल्पिक स्वास्थ्यप्रद आर्थिक और निर्दोष मनोरंजन के साथ जुटाए जाने चाहिए | (हरर, 15-9-1946, पृ. 313)

श्रम का विभाजन

श्रम का विभाजन आवश्यक है | यह उल्लिखित नहीं है कि एक व्यक्ति ही सारा काम करे; संगठित कार्य-प्रणाली के लिए तो यह निश्चित रूप से बाधक है | ब्रिटिश राजतंत्र कोई व्यक्तिगत संगठन नहीं है | "राजा विवंगत हुआ | राजा दीर्घजीवी हो", इसीलिए कहा गया है कि "राजा से कोई ज्वाला नहीं हो सकती" | एक व्यक्ति के रूप में, राजा शूर्त हो सकता है, लेकिन संगठन के रूप में मृत्तिका होने पर वह उतना ही पूर्ण माना जाता है जितना 'पूर्ण' शब्द से तात्पर्य उस समाज ने लिया है |
सूत्र यह है कि किसी प्रगतिशील संगठन में, आरंभिक चरणों के दौरान, उसके प्रभारी लोगों की कार्यकुशलता कितनी ही कम हो, पर उनका आचरण संदेह से परे होना चाहिए; वे संस्था के हित को सर्वाधिक माने और अपने हित को सबसे कम तर्की दें। अगर संगठन का काम धूतों के जरीए चलाने का प्रयास किया जाएगा तो संगठन के मुखिया का पद हमेशा किसी धूतों के कब्जे में रहेगा। (हरि, 31-3-1946, पृ. 61)

समय-पालन

मैंने मिट्टी के बीच प्रायः यह राय जाहिर की है कि जहाँ तक अनासक्ति की क्षमता का प्रश्न है, अंग्रेज हमसे कहीं अधिक आगे होंगे। कितने ही महत्व का रक्षात्मक मसला हो, वे अपने भोजन और मनोरंजन के माध्यम से पालन करते हैं। वे खदा सामने देखकर या महासंकट की आशंका से घबराते नहीं हैं। इसे गीता के भाषा में अनासक्त भाव से कायम करना कहा जा सकता है। भारत के राजनीतिक कार्यकर्ताओं में बहुत ही कम लोग हैं जिनकी इस मामले में अंग्रेजों के स्तर के समय से अधिक है। (हरि, 24-9-1938, पृ. 266)

समाज-सुधार

मेरा अर्थ से यह विचार रहा है कि राजनीतिक सुधार के अपेक्षा समाज-सुधार का काम ज्यादा मुश्किल है। राजनीतिक सुधारों के लिए तो वातावरण तैयार है, लोगों की उसमें दिलचस्प भी है और बाहर के देश यह समझते हैं कि इसे आत्मशुद्धिकरण के बिना ही किया जा सकता है। दूसरी ओर, समाज-सुधार के काम में लोगों की रुचि बहुत कम है, इनके आंदोलनों के परिणाम प्रभावशाली नहीं होते और समाज-सुधारकों को बाहर या नियंत्रण मिलने की भी ज्यादा गुंवाई नहीं होती। इसलिए समाज-सुधारकों का कुछ समय इसी तरह निकालना होगा और शांति के साथ काम करते हुए जाहिरा मामूली नतीजों से ही संतोष करना होगा। (यंग, 6-9-1928, पृ. 301-02)

मेरी राय में, सुधारक को अपने अभियान में सबसे कम जरूरत पैसे की होती है। अपनी वास्तविक आवश्यकताओं के ठीक अनुपात में उसे पैसा बिना मांगे मिलता है। जो सुधारक मेरे पास आकर यह दलील देते
है कि वे पैसे की कमी की वजह से अच्छे परिणाम प्राप्त नहीं कर पाए, उन्हें मैं सदा संदेह की दृष्टि से देखता आया हूँ।

जहाँ उत्साह है, समुचित जानकारी है और अपने ऊपर भरोसा है, वहाँ विचित्र सहायता हमेशा उपलब्ध हो जाती है। (यंग, 14-11-1929, पृ. 369)

सादा जीवन

यह मानना कि इस दुनिया का प्रयोक्त व्यक्ति अधिकार करकर रहन-सहन के उच्चतम स्तर तक पहुँच सकता है, उत्तम ही काल्पनिक है जितना कि सूई की नोक से ऊट के गुजर सकने की आशा करना......विलासमय जीवन जीना....समूह समाज के लिए कभी संभव नहीं हो पाएगा। इसके अलावा, जब विलास की कोई सीमा ही नहीं है तो हम रुकेंगे कहां जा करे? विश्व के सभी धर्मग्रंथों ने इससे बिलकुल विपरीत बात की ही सीख दी है।

उन्होंने हमारे सामने ‘सादा जीवन उच्च विवाह’ का आदर्श रखा है। अधिकांश लोग इस आदर्श की सत्यता को समझते हैं, किंतु मानवीय दृष्टि के कारण उसे प्राप्त नहीं कर पाते।

लेकिन इस आदर्श की प्राप्ति पूर्णता संभव है......जो ही हम अपनी दैनिक आवश्यकताओं में वृद्धि करना चाहते हैं, हम ‘सादा जीवन उच्च विवाह’ के आदर्श से दूर हो जाते हैं। इतिहास में इसके पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है। (हरिर, 1-2-1942, पृ. 27)

सादगी साबित करने का सार है। (हरिर, 7-4-1946, पृ. 69)

जीवन की सादगी के अलावा, अन्य किसी तरीके से मानव व्यक्तित्व की रक्षा नहीं की जा सकती। मैं ‘अनूठे दिस्तास’ के निहितार्थ का दूसरा सभी सम्भव करता हूँ। इस पुतले ने मेरे जीवन का रूख ही मोड़ दिया। हमें समाज के निम्नतम व्यक्ति के लिए वह सब करना चाहिए जो हम चाहते हैं कि दुनिया हमारे लिए करे। (यंग, 17-11-1946, पृ. 404)

साधन और साध्य

उनका कहना है कि ‘साधन तो आकों साधन ही हैं’ | मैं कहता हूँ कि ‘साधन ही सब कुछ है’ | जैसे साधन, वैसा साध्य | हिंसक साधनों से हिंसक स्वराज की ही प्राप्ति होगी | वह सारी दुनिया और स्वयं भारत के लिए मुसीबत भेद कर देगा....साधनों से साध्य को पूरक करने के लिए बीच में कोई दीवार नहीं है | वास्तविकता यह है कि ईश्वर ने हमें केवल साधनों पर नियंत्रण दिया है (वह भी बड़ी सीमित), साध्य पर हमारा कोई क्षण नहीं है | साधनों
के ठीक अनुपात में ही साध्य की प्राप्ति होती है | इस प्रस्थापना का कोई अपवाद नहीं है | अपने इस विश्वास के कारण ही मैं इस बात का प्रयास कर रहा हूँ कि देश उन्हीं साधनों को अपनाए जो विशुद्ध रूप से शांतिपूर्ण और वैध हैं | (यंग, 17-7-1924, पृ. 236-37)

मेरे जीवन-दर्शन में साधन और साध्य परिवर्तनीय शब्द हैं | (यंग, 26-12-1924, पृ. 3)

सार्वजनिक कार्यकर्ता
आधुनिक सार्वजनिक जीवन की एक प्रवृत्ति यह है कि जब तक कोई सार्वजनिक कार्यकर्ता किसी प्रशासनिक तंत्र में अपना काम कुशलतापूर्वक अंगजाम देता है तब तक उसके चरित्र की ओर विलकुल भी ध्यान न दिया जाए | कहा जाता है कि व्यक्ति का चरित्र उसके अपने निजी सरोकार की चीज़ है | यह जानने हुए भी कि लोगों का प्राय: यही दृष्टिकोण है, मैं कभी इससे सहमत नहीं हो पाता, इसे अपनाने की तो बात ही छोड़ दिए | मैंने ऐसे संगठनों को जो निजी चरित्र को कोई महत्व नहीं देते, इसके गंभीर परिणामों को भुगतान देखा है | (हरर, 7-11-1936, पृ. 308)

सार्वजनिक जीवन मैंने बार-बार यह कहा है कि कोई विचार-संप्रदाय इस बात का दावा नहीं कर सकता कि सही निर्णय लेने की बपौती वेतन उसी की है | हम सभी से गलतियां होती हैं और हमें व्यक्ति: अपने फैसलों में रद्दोदल करनी पड़ती है | हमारे प्रति और दूसरों के प्रति कम-से-कम यह दायित्व अवश्य है कि हम अपने विचारों के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करें और यदि हम उसे स्वीकार न कर पाएं तो उसका उसी प्रकार पूरी तरह सम्मान करें जैसा कि हम चाहते हैं कि वह हमारे दृष्टिकोण का करें | यह स्वस्थ सार्वजनिक जीवन की एक अपरिहार्य कसौटी है और इसलिए स्वार्ज के लिए भी आवश्यक है |

यदि हमें उदारता और सहिष्णुता नहीं होगी तो हम अपने मतभेदों को कभी नहीं सुलझा सकेंगे और उन्हें हमें विवाद के लिए किसी तुली पक्ष को सौपणा होगा, जिसका अर्थ होगा विदेशी प्रभुत्व | (यंग, 17-4-1924, पृ. 130)

मेरा यह निष्ठुल मत है कि सार्वजनिक कार्यकर्ता को कभी महंगे उपहार स्वीकार नहीं करने चाहिए | (ए, पृ. 161)

सार्वजनिक धन यदि हम जनता से मिली पाई-पाई का ठीक से हिसाब न रखे और उसे समझदारी से खर्च न करें तो उचित यही होगा कि हमें सार्वजनिक जीवन से निष्कासित कर दिया जाए | (यंग, 6-7-1921, पृ. 209)
मेरे पास ऐसी कोई संपत्ति नहीं है जिसे मैं अपनी कह सकूं। क्या मुझे इस बात का हक है कि मैं चंदे के पैसे का उपयोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करूं? अपने पूरे जीवन में मैंने ऐसा कभी नहीं किया है और मित्रों को भी ऐसा न करने की सलाह दी है। मेरी धारणा है कि जिन लोगों को जनता का विश्वास प्राप्त है और जिन्हें जनता यह मानकर चंदा देती है वे किसी सार्वजनिक कार्य के लिए इसका इस्तेमाल उनकी अपेक्षा अधिक बुद्धिमानी और सावधानी के साथ करेंगे, उनके सामने और कोई रास्ता खुला नहीं है। अगर जनता द्वारा किसी व्यक्ति के प्रति किए गए विश्वास को निजी प्रयोजनों के लिए तोड़ा गया तो यह बड़ी भयंकर बात होगी।

सार्वजनिक संस्थाएँ

मेरी निश्चित धारणा है कि कोई अच्छी संस्था समर्थन के अभाव के कारण कभी समाप्त नहीं होती। जो संस्थाएँ समाप्त हुई हैं वे या तो इसलिए छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुककी क्रिया का प्रतीक छुक करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसमें संस्था की नैतिक अधोगति का बीज समाप्ति रहता है। सार्वजनिक संस्था का अर्थ है लोगों की मंजूरी और उसके धन से चलने वाली संस्था।

सुख से तात्पर्य है: मानव गरमी की प्रबुद्ध सिद्धि और मानव स्वातंत्र्य के लिए लक्ष, जो व्यक्तिगत सुविधाओं और भीतिक आवश्यकताओं की केवल स्वार्थिमूर्ति से अधिक महत्व स्वंय वे देती है और उसकी रक्षा के निमित्त इसका सहयोग में तय करने के लिए उत्तर रहती है।

सुख स्वयं प्रत्येक व्यक्ति के भीतर और पूर्णता तथा सत्य की खोज में निवास करता है:..."क्या सभी लोग पूर्णता की प्राप्ति कर सकते हैं?" – अवश्य, वह तो उनके अंदर ही है।
स्वास्थ्य

यह पूरी तरह प्रमाणित है कि मानव जाति को जो बीमारियां विरोध कर रहे हैं, उनमें से अधिकांश के लिए स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों की अनभिज्ञता और अवहेलना जिम्मेदार है | इसमें संदेह नहीं कि हमारे यहां की इतनी ऊँची मृत्यु-दर का कारण मुख्य रूप से हमारी घोर दररोध है, पर यदि लोगों को अपने स्वास्थ्य और स्वास्थ्य-रक्षा के विषय में ठीक से शिक्षित किया जाकर तो इस समस्या का समाधान संभव है |

‘स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन’ मानव जाति का पहला नियम है | यह एक स्वतंत्र स्वभाव है | मन और शरीर के बीच अपरिहार्य संबंध है | अगर हमारे मन स्वस्थ होंगे तो हम सभी प्रकार के हिंसा का व्याप कर देंगे और स्वास्थ्य के नियमों का पालन करते हुए अपने शरीर को भी स्वस्थ रख सकेंगे |

स्वास्थ्य और स्वास्थ्य-रक्षा के बुनियादी नियम बड़े सरल हैं और उन्हें आसानी से सीख जा सकता है | कठिनाई केवल उनका पालन करने से अपने अंूबोध होती है | इसमें से कुछ नियम इस प्रकार हैं |

विचारों को सुदृढ़ रखिए; निरर्थक और अशुद्ध विचारों को मन से निकाल दीजिए |

दिन-रात शुद्ध वायु में श्वास लीजिए |

शारीरिक और मानसिक श्रम के बीच संतुलन स्थापित कीजिए |

सिधे खड़े होइए, सिधे बैठिए और अपने हर काम में स्वच्छता बरतिए तथा इन्हें अपनी आंतररक स्थिति का अभिव्यंजक बनाए |

मानव सेवा के लिए जीने की खातिर भोजन करें | विषय-भोगों के लिए न जिए | अतः आपका भोजन बस इतना हो कि वह आपके मन और शरीर को ठीक रख सकें | आदमी जैसा खाता है, वैसा ही बन जाता है |

आपका पानी, भोजन और वायु स्वच्छ होने चाहिए और आपको केवल व्यक्तिगत स्वच्छता से ही संतोष नहीं कर लेना चाहिए, बल्कि अपने चारों और भी वही विद्विध स्वच्छता सुनिश्चित करनी चाहिए जैसे कि आप स्वयं अपने लिए चाहते हैं | ( काप्रो, पृ. 18-19 )

पूर्वनियात के सिद्धांत के यह अर्थ अधारपि नहीं है कि हम बीमार पड़ जाने पर भी अपनी देखभाल करने की चिंता करें | बीमार पड़ने से भी बड़ा अपराध बीमारी के प्रति लापतवाही बरतना है | बीते कल की तुलना में आज बेहतर काम करने की कोशिश को कोई सीमा नहीं है | हमें इस बात की चिंता करनी चाहिए और मालूम करना चाहिए कि हम बीमार क्यों हैं अथवा बीमार क्यों पड़े ? प्रकृति का नियम सेहत है, बीमारी नहीं | अगर हम बीमार नहीं पड़ना चाहते और अगर पड़ जाए तो ठीक हो जाना चाहते हैं तो हमें प्रकृति के नियम का शोध करना चाहिए और उसका पालन करना चाहिए | ( हरी, 28-7-1946, पृ. 233 )
शरीर और आत्मा

मेरा विश्वास है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ आत्मा का निवास होना चाहिए | इसलिए जिस सीमा तक आत्मा के स्वास्थ्य का उन्नयन होता है और वह विकारों से मुक्त होती है उसी सीमा तक शरीर भी उस स्थिति को प्राप्त होने के लिए विकसित होता जाता है | इसका तात्पर्य यह नहीं है कि स्वस्थ शरीर अनिवार्यतः तगड़ा होना चाहिए | वीर आत्मा प्रायः दुर्बल शरीर में निवास करती है | एक स्थिति के बाद, ज्यों-ज्यों आत्मा का विकास होता है, शरीर का मांस घटता जाता है | पूर्णतया स्वस्थ शरीर देखने में बड़ा कृष्ण लग सकता है | तगड़ा शरीर प्रायः अनेक बीमारियों का घर होता है | अगर वह जाहिरा तौर पर रोगमुक्त भी हो तो भी वह संक्रामक रोगों, टूट की बीमारियों आदि से उच्च नहीं होता | इसके विपरीत, पूर्णतया स्वस्थ शरीर को ऐसी कोई बीमारी नहीं लग सकती | शुद्ध रक्त में सभी संक्रामक रोगों का प्रतिरोध करने का प्रकृत सामर्थ्य होता है | ऐसी साम्यावस्था प्राप्त करना वास्तव में काफी कठिन है | अन्यथा, मैं इसे प्राप्त कर चुका होता, क्योंकि मेरी आत्मा इस बात की साक्षी है चं कि मैं इस स्थिति की प्राप्ति के लिए कोई भी कष्ट उठाने को तैयार हूँ | मेरे और इस साम्यावस्था के बीच कोई बाह्य अवरोध खड़ा नहीं हो सकता | अपने पिछले संस्कारों को मिटा पाना सबके वस्त्र की बात की नहीं है; कम-से-कम मेरे लिए तो यह काफी कठिन है | लेकिन इसमें विलंब से मैं हताश नहीं हूँ | बात यह है कि मेरे मन में उस परिपूर्ण स्थिति की तस्वीर स्पष्ट है | मुझे उसकी अनुभव झलक भी मिली है | अब तक जितनी प्रगति मैं कर सका हूँ उसे देखकर मुझे निराशा नहीं होती, बल्कि मेरे अंदर आशा का चांगला होता है | यदि इस आशा के पूरा होने के पहले ही मेरा शरीर टूट जाए तो मैं यह नहीं समझा गा कि मैं असफल हो गया हूँ | चूंकि मैं जितना अपने वर्तमान शरीर के अस्तित्व में विश्वास करता हूँ उतना ही पुनर्जन्म में भी करता हूँ | इसलिए मैं जानता हूँ कि साधारण-सा प्रयास भी व्यर्थ नहीं जाएगा | (यंग, 5-6-1924, पृ. 187)
### स्रोत

<table>
<thead>
<tr>
<th>अबाप</th>
<th>अमृत बाजार पत्रिका: कलकत्ता से प्रकाशित अंग्रेज़ी दैनिक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>आआए</td>
<td>आश्रम ऑब्जेक्शन्स इन एक्शन: वी. जी. देसाई द्वारा गुजराती से अनूदित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1955</td>
</tr>
<tr>
<td>इंके</td>
<td>इंडियाज केस कॉर्स्फ्लार राय; डब्ल्यू. पी. कबाड़ी द्वारा संपादित; वेश्यानंद एंड क., बंबई, 1932</td>
</tr>
<tr>
<td>ए</td>
<td>एन ऑटोबायोग्राफी, ओर द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरीएंस इन दूध: एम. के. गांधी; महादेव देसाई द्वारा गुजराती से अनूदित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद; खंड I, 1927; खंड II, 1929, प्रयुक्त संस्करण: 1959</td>
</tr>
<tr>
<td>एए</td>
<td>एशिया एंड द अमेरिकन: न्यूयॉर्क से प्रकाशित मासिक</td>
</tr>
<tr>
<td>एंघे</td>
<td>एम्ग द ग्रेट: डिलीप कुमार राय; प्राक्कथन – एस. राधाकृष्णन; नालंदा पब्लिकेशंस, बंबई, 1945; प्रयुक्त संस्करण: पुनर्मुद्रण: जयको पब्लिशिंग हाउस, बंबई, 1950</td>
</tr>
<tr>
<td>एफ़ा</td>
<td>द एफिक फास्ट: शहंदी; मोहनलाल मण्डल ब्लक्टवर्ला; अहमदाबाद, 1932</td>
</tr>
<tr>
<td>एमके</td>
<td>एम. के. गांधी: एन इंडियन पेट्रियट इन साउथ एफ्रिका: लेखक – जे. जे. डोक; प्राक्कथन – लाई एम्बेसी; द लंडन इंडियन क्रॉनिकल, लंडन, 1909</td>
</tr>
<tr>
<td>एरी</td>
<td>एथिकल रिलीजन: महात्मा गांधी; बी. रामा अय्यर द्वारा हिंदी से अनूदित; एस. गणेशन, मद्रास, 1930</td>
</tr>
<tr>
<td>काप्रो</td>
<td>कन्स्ट्रक्शन प्रोग्राम: इट्स मीनिंग एंड प्लेंस: एम. के. गांधी; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1941; प्रयुक्त संस्करण, 1948</td>
</tr>
<tr>
<td>कीहे</td>
<td>की टू हेल्थ: एम. के. गांधी; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1948</td>
</tr>
<tr>
<td>गांकाग</td>
<td>गांधीजी कर्स्पोज़ विश्व द ग्वार्नमेंट, 1942-44; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, अप्रैल 1945</td>
</tr>
<tr>
<td>गाइवि</td>
<td>गांधीजी इन इंडियन विलेजेज: महादेव देसाई; इस. गणेशन, मद्रास, 1927</td>
</tr>
<tr>
<td>टाइ</td>
<td>द टाइम्स ऑफ इंडिया: बंबई से प्रकाशित दैनिक</td>
</tr>
</tbody>
</table>
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

नव नवजीवन (1919-1931): गुजराती साप्ताहिक, कभी-कभी सप्ताह में दो अंक भी; 7 सितंबर, 1919 को प्रथम बार प्रकाशित; गांधीजी द्वारा संपादित और अहमदाबाद से प्रकाशित

नावावे नॉन-वायलेट वे टू वर्ल्ड पीस: एम. के. गांधी; आर के. देसाई द्वारा संपादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1959

फ्रायम फ्रॉम परवदा मैंडिर: आश्रम ऑफेर्वेंजेज: एम. के. गांधी; वी. जी. देसाई द्वारा अनूदित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1933; प्रयुक्त संस्करण: 1957

बांक्रा द बांबे क्रोनिकल: बंबई से प्रकाशित दैनिक

म महामा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचंद गांधी: िी. जी. तेंदुलकर; शवट्ठलभाई के . झावेरी तथा िी. जी. तेंदुलकर, बंबई 1951-54; 8 खंड

मगांआ महामा गांधीज आइडियाज़: सी. एफ. सेट्स्वॉट्ज़; जॉर्ज एलन, लंदन, 1929

मगां महामा गांधी: द लास्ट फेज़: प्यारेलाल; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद; खंड I, फरवरी 1956; खंड II, फरवरी 1958

माना माइ नॉन-वायलेस: एम. के. गांधी; शेलेशकुमार बंदोपाध्याय द्वारा संपादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1960

मारि द मॉडर्न रिब्यू: कलकत्ता से प्रकाशित मासिक पत्रिका

मासो माई सोशलिम्म: एम. के. गांधी, आर. के. प्रभु द्वारा संकलित, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1959

मीइन्स मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शन: एम. के. गांधी; भारतन कुमारप्पा द्वारा संपादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1954

यंग यंग इंडिया: (1919-1932) अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र, गांधीजी की देखरेख में 7 मई, 1919 से बंबई से सप्ताह में दो बार प्रकाशित और गांधीजी के संपादकत्व में 8 अक्टूबर 1919 से साप्ताहिक के रूप में अहमदाबाद से प्रकाशित
रिपोर्ट ऑफ द कमीशन एपाइटेड बाइ द पंजाब सब कमिटी ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस: के. संथानम द्वारा प्रकाशित, लाहौर, 1920

ली द लीडर: इलाहाबाद से प्रकाशित दैनिक

विखंडन रिपोर्ट ऑफ द कमीशन एपाइटेड बाइ द पंजाब सब कमिटी ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस: एस. गणेशन, मद्रास, 1928

सली सत्याग्रह लीफेलेट्स: मार्च-मई 1919 के दौरान बंबई से समय-समय पर प्रकाशित

ससा सत्याग्रह इन साउथ अफ्रीका: एम. के. गांधी; वी. जी. देसाई द्वारा अनूदित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1928; प्रयुक्त संस्करण: 1950

स्पीचेज एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी: जी. ए. नट्सन एंड कं., मद्रास, 1933, चतुर्थ संस्करण

स्पेक्टर द स्पेक्टेटर: लंदन से जारी साप्ताहिक

हरि हरिजन: (1933-1956) गांधीजी द्वारा संस्थापित अंग्रेजी साप्ताहिक, हरिजन सेवक संघ, पुणे के तत्ताबाधन में प्रकाशित और 1942 से नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित | 1940 में 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' के दौरान इसका प्रकाशन स्थगित रहा; जनवरी 1942 में प्रकाशन पुनः आरंभ हुआ, पर भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान बंद हो गया | 1946 से फिर प्रकाशित होना आरंभ हुआ।

हिं द अंग्रेजी साप्ताहिक मद्रास से प्रकाशित दैनिक

हिंस्ट द हिन्दुस्तान स्टैंडर्ड: कलकत्ता से प्रकाशित दैनिक पत्र

हिंस्क हिंद स्पेक्टर ऑफ इंडियन होम रूल: महात्मा गांधी; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1938; प्रयुक्त संस्करण: 1958
कालानुक्रम

1869  अक्टूबर 2  मोहनदास करमचंद गांधी का जन्म पोरबंदर, काश्तयावाड़ के एक बसन्य (वैश्य अथवा व्यापारी जाति) परिवार में हुआ। वह करमचंद गांधी उर्फ काबा गांधी, जो क्रमशः पोरबंदर, राजकोट और बांकानेर राज्य के प्रधानमंत्री रहे, और उनकी चौथी पत्नी पुतलीबाई के तीन पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र थे।

1876  माता-पिता के साथ राजकोट गये; वहां बारह वर्ष की आयु तक प्राथमिक स्कूल में शिक्षा पाई; एक व्यापारी गोकुलदास माकनजी की पुत्री कस्तूरबा के साथ सगाई हुई।

1881  राजकोट में उच्च विद्यालय में प्रवेश लिया।

1883  कस्तूरबा से विवाह।

1884-85  छिपकर मांसहार प्रारंभ किया, परंतु माता-पिता से विश्वासघात करने का विचार आने पर एक वर्ष के पश्चात इस आदत का परित्याग कर दिया। पिता का 63 वर्ष की आयु में देहांत हुआ।

1887  मैट्रिक की परीक्षा पास की; भावनगर (काश्तयावाड़) के एक महाविद्यालय में दाखिला लिया, परंतु प्रथम सत्र की समाप्ति पर पढ़ाई छोड़ दी।

1888  सितंबर 4  समुद्र के रास्ते इंग्लैंड के लिए रवाना हुए।

अक्टूबर 28  लंदन पहुंचे।

1889  शाकाहारी भोजन पर रहे; एक भद्र पुरुष के लिए नृत्य और संगीत आवश्यक है, ऐसा सोचते हुए नृत्य और संगीत की शिक्षा लेनी आरंभ की।

1890  सादा जीवन के विषय में पुस्तकें पढ़ीं और अपने व्यय को आधा करने का निश्चय किया; धार्मिक साहित्य पढ़ा; गीता का पहली बार अध्ययन किया और उससे गहन रूप से प्रभावित हुए।

1890  जून  शाकाहारी अभियान से जुड़े; कुछ समय के लिए शाकाहारी कल्याण कल्याण कल्याण कल्याण।

सितंबर  लंदन की मैट्रिक परीक्षा पास की।
<table>
<thead>
<tr>
<th>Year</th>
<th>Month</th>
<th>Event</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1891</td>
<td>जून 10</td>
<td>बैरिस्टर हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1891</td>
<td>जुलाई 12</td>
<td>समुद्र के रास्ते भारत के लिए रवाना हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1891</td>
<td>नवंबर</td>
<td>बैरिस्टर हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1892</td>
<td>जून 12</td>
<td>समुद्र के रास्ते भारत के लिए रवाना हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1893</td>
<td>जुलाई 10</td>
<td>बंबई पहुंचे</td>
</tr>
<tr>
<td>1893</td>
<td>जून 12</td>
<td>बंबई उच्च न्यायालय में प्रवेश के लिए आवेदन किया</td>
</tr>
<tr>
<td>1893</td>
<td>जुलाई 11</td>
<td>राजकोट और बंबई में वकालत के लिए संघर्ष किया; बाद में राजकोट में विधिक द्राक्ष करने लगे</td>
</tr>
<tr>
<td>1893</td>
<td>अगस्त</td>
<td>कानून के लिए एक मुसलमान फर्रा द्वारा नियुक्त किये जाने पर दक्षिण अफ्रीका के लिए प्रस्थान</td>
</tr>
<tr>
<td>1894</td>
<td>मई-जून</td>
<td>अनेक प्रकार के रंग-भेद के अनुभव हुए; वहां रहकर जातीय पूर्वाञ्चलों के लिए संघर्ष करने का निश्चय</td>
</tr>
<tr>
<td>1895</td>
<td>जुलाई 10</td>
<td>बैरिस्टर हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1895</td>
<td>जून 12</td>
<td>समुद्र के रास्ते भारत के लिए रवाना हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>1896</td>
<td>अगस्त 14</td>
<td>राजकोट में ‘द ग्रीन पैम्पल्ट’ प्रकाशित किया; दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की शिकायतों के संबंध में भारतीयों को जानकारी देने के लिए बंबई, मद्रास, पूना और कलकटा के दौरा किया</td>
</tr>
<tr>
<td>1896</td>
<td>जून 30</td>
<td>पत्नी और बच्चों के साथ समुद्र के रास्ते दक्षिण अफ्रीका के लिए रवाना हुए</td>
</tr>
<tr>
<td>वर्ष</td>
<td>महीना</td>
<td>तारीख</td>
</tr>
<tr>
<td>-------</td>
<td>---------</td>
<td>----------</td>
</tr>
<tr>
<td>1897</td>
<td>जनवरी</td>
<td>13</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>20</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>अप्रैल</td>
<td>6</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1898-99</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1899</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1900</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1901</td>
<td>अक्टूबर</td>
<td>18</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>दिसंबर</td>
<td>14</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>27</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>1902</td>
<td>जनवरी</td>
<td>28</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>फरवरी</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>जुलाई</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>नवंबर</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>महात्मा गांधी के विचार</td>
<td><a href="http://www.mkgandhi.org">www.mkgandhi.org</a></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>----------------------</td>
<td>----------------------</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>दिसंबर 1903</td>
<td>ट्रांसवाल के सूप्रीम कोर्ट में अर्टर्स के रूप में नाम रजिस्टर कराया, ट्रांसवाल ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन की स्थापना की</td>
<td>दादाभाई नोरोजी को हालात के संबंध में साप्ताहिक विवरण भेजते रहे</td>
</tr>
<tr>
<td>जून 1904</td>
<td>रस्किन की पुस्तक ‘अनूद दिस लास’ पढ़ी, डरबन (नेटाल) के निकट फिनिक्स की स्थापना की; जोहांसबर्ग में प्लेग फैलने पर अस्पताल की व्यवस्था की; गुजरात में आहारविज्ञान पर क्रमबद्ध लेख लिखे, कुछ समय बाद इनका अनुवाद अंग्रेजी में किया गया जो ‘गाइड टु हैल्थ’ में प्रकाशित हुए</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>जून-जुलाई 1905</td>
<td>बंगाल विभाजन का विरोध किया, विलायती वस्तुओं के बहिष्कार का समर्थन किया</td>
<td>जब गोखले-लाजपतराय विचार संघ के भारतीयों के अंतर्गत बनाया गया, तब उपमानी वादियाँ के साथ भारत को ‘साम्राज्य का एक अभिन्न अंग’ मानने तथा सम्मानजनक दर्जे देने की अपील की</td>
</tr>
<tr>
<td>मई सितंबर 1906</td>
<td>ब्रिटिश उच्च-आयुक्त लाइट एसोसिएशन को ट्रांसवाल के भारतीयों की समस्याओं से अवगत कराने के लिए एक प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>मई 27</td>
<td>‘न्याय के नाम पर और मानवता की भलाई के लिए’</td>
<td>भारत के लिए ‘होम रूल’ का समर्थन किया</td>
</tr>
<tr>
<td>जून-जुलाई 27</td>
<td>सांसारिक वस्तुओं में अरुचि प्रकट करते हुए अपने भाई लक्ष्मीदास को पत्र लिखा</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>सितंबर 11</td>
<td>जोहांसबर्ग में भारतीयों की विवाद समा को संबोधित किया जिसमें ताजा जारी किए गए ट्रांसवाल एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश के विरुद्ध निषिद्ध प्रतिरोध करने की शपथ ली गई</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>अक्टूबर-नवंबर 21-30</td>
<td>औपचारिक मंत्री के सामने भारतीयों का मामला प्रस्तुत करने के लिए एक प्रतिनिधि के रूप में इंग्लैंड गए</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>
दिसंबर 18

1907 जनवरी-फरवरी 'नैतिक धर्म' पर गुजराती में क्रमबद्ध आठ लेख लिखे जो 'इंडियन ओपिनियन' में साप्ताहिक और तत्पश्चात एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए।

मार्च त्रांसवाल की पारियामेंट में एशियाई पंजीकरण अधिनियम पास हुआ। भारतीयों ने विरोध प्रकट करने के लिए सभाएं आयोजित की।

अप्रैल 'ट्रांसवाल' की पारियामेंट में एशियाई पंजीकरण अधिनियम पास हुआ। इंडियन ओपिनियन' में 'ब्लैक एक्ट' का विरोध करने की शपथ ली।

मई 'ब्लैक एक्ट' को ब्रिटिश सम्राट की स्वीकृति प्राप्त हुई।

जुलाई 'ब्लैक एक्ट' का विरोध करते हुए जनसभा को संबोधित किया।

अगस्त पंजीकरण अधिनियम की आत्मोदना करते हुए स्मट्स को पत्र लिखा जिसमें कुछ संशोधनों का सुझाव दिया।

निफ्क्रिय प्रतिरोध, परमिट कार्यालयों पर पिकेटिंग की; अदालतों में निफ्क्रिय प्रतिरोध करने वालों का बचाव किया।

दिसंबर स्मट्स ने गांधीजी पर मुकदमा चलाने का निश्चय किया।

1908 जनवरी 8 सरकार से पंजीकरण अधिनियम को निलंबित करने के लिए कहा, स्वैच्छिक पंजीकरण के लिए प्रस्ताव किया।

10 निफ्क्रिय प्रतिरोध के स्थान पर 'सत्याग्रह' शब्द अपनाया।

ट्रांसवाल छोड़ने में असफल होने के कारण दो माह के कारावास का दंड मिला।

21 पंजीकरण अधिनियम को रद्द किए जाने की स्थिति में, स्वैच्छिक पंजीकरण के आधार पर फैसला करने के लिए सहमत हो गए।

30 प्रिटोरिया में जनरल स्मट्स से मिलने के लिए बुलाया गया और समझौता हो जाने पर कारावास से छोड़ दिया गया।
<table>
<thead>
<tr>
<th>माह</th>
<th>घटना</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>फरवरी 10</td>
<td>समझौते के अंतर्गत भारतीयों द्वारा सैकड़क रूप से अपने अंगुलिक्षाप दिए जाने को अपने हितों के प्रति विश्वासघात मानते हुए पठानों द्वारा गांधीजी पर लगभग घातक आक्रमण; अपने आक्रमणकारियों पर मुकदमा चलाने से इंकार।</td>
</tr>
<tr>
<td>मार्च-जून</td>
<td>अधिनियम को रद्द करने के बचन को पूरा कराने के लिए स्मट्स से बातचीत; स्मट्स द्वारा बचन निभाने से इंकार।</td>
</tr>
<tr>
<td>जुलाई</td>
<td>स्मट्स के साथ किया गया पत्र-व्यवहार प्रकाशित; भारतीयों ने एक विशाल जनसभा में अंगुलिक्षाप देने से इंकार करने का निश्चय किया और पंजीकरण प्रमाणपत्रों को जला दिया।</td>
</tr>
<tr>
<td>अगस्त</td>
<td>“भारत में ब्रिटिश राज्य को उखाड़ फेंकने के लिए हिंसा के प्रयोग को हानिकारक, यहां तक कि व्यर्थ घोषित किया। स्मट्स से ‘ब्लैक एक्ट’ को रद्द करने की अपील की। सभाओं में पंजीकरण प्रमाणपत्रों को जलाया गया; निष्क्रिय प्रतिरोध फिर से आरंभ।</td>
</tr>
<tr>
<td>सितंबर</td>
<td>संशोधित पंजीकरण अधिनियम को सम्पाद की स्वीकृति प्राप्त। स्मट्स ने समझौते के लिए भारतीय शर्तों को अस्वीकार किया।</td>
</tr>
<tr>
<td>अक्टूबर 15</td>
<td>गांधीजी बंदी बनाए गए और दो माह के कठोर कारावास की सजा दी गई।</td>
</tr>
<tr>
<td>दिसंबर 12</td>
<td>फोक्सरस्ट जेल से रिहा। दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों के ब्रिटिश भारतीयों के साथ कठोर, अपमानजनक और निषुर व्यवहार को ब्रिटिश साम्राज्य के लिए हानिकारक बताते हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा दक्षिण अफ्रीका पर संक्षेप पारित किया गया।</td>
</tr>
<tr>
<td>1909 जनवरी 16</td>
<td>पंजीकरण प्रमाणपत्र न दिखा पाने के लिए फोक्सरस्ट में गिरफ्तार हुए; देशानिकाला दिया गया, वापस आ गए और फिर से गिरफ्तार कर लिया गया, परंतु जमानत पर छोड़ दिए गए।</td>
</tr>
<tr>
<td>20</td>
<td>समावापदों में लेख लिखकर भारतीयों से अंतिम संघर्ष के लिए तैयार होने का आह्वान किया।</td>
</tr>
<tr>
<td>फरवरी 25</td>
<td>फोक्सरस्ट में गिरफ्तार; तीन महीनों की सजा दी गई।</td>
</tr>
<tr>
<td>मई 2</td>
<td>प्रिटोरिया केंद्रीय जेल में स्थानांतरण।</td>
</tr>
</tbody>
</table>
महात्मा गांधी के विचार | www.mkgandhi.org

24 जेल से रिहा कर दिए गए।

जून 21 भारतीयों का मामला प्रस्तुत करने के लिए हाजी हबीब के साथ प्रतिनिधि के रूप में इंग्लैंड रवाना हुए।

जुलाई 10 लंदन पहुंचे।
लाउ एम्पिलित की सहायता से प्रभावशाली ब्रिटिश नेताओं और जन-समुदाय को भारत के मामले की सही जानकारी देने तथा साम्राज्यिक अधिकारियों के सामने अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए निरंतर कार्य करते रहे।

अक्टूबर 1 निष्क्रिय प्रतिरोध आंदोलन के संबंध में टालस्टॉय को पत्र लिखा।

नवंबर 9 'द टाइम्स' द्वारा ट्रांसवाल कानूनों पर गांधीजी और सरकार के बीच समझौता-वार्ता असफल हो जाने का समाचार प्रकाशित।

10 टालस्टॉय के पत्र का उत्तर दिया; अपनी जीवनी डोक के हाथों भेजी।

13 इंग्लैंड से दक्षिण अफ्रीका के लिए प्रस्थान।

“एस. एस. किल्डॉन कासल” पर 'हिंद स्वराज' लिखा।

30 दक्षिण अफ्रीका पहुंचे।

दिसंबर 29 दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के संघर्ष की प्रशंसा करते हुए और अनुबंध की प्रथा पर रोक लगाने की मांग करते हुए लाहौर कांग्रेस द्वारा संकल्प पारत।

1910 अप्रैल 4 टालस्टॉय को 'इंडियन होम रूल' की प्रति भेजी तथा उनसे उस पर समर्थन देने का अनुरोध किया।

मई 8 टालस्टॉय ने उत्तर दिया कि निष्क्रिय प्रतिरोध का प्रश्न न केवल भारत के लिए बल्कि समूची मानवता के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

30 टालस्टॉय फार्म की नींव रखी।

दिसंबर 4 टालस्टॉय की श्रद्धांजलि अर्पित की।

1911 जनवरी अप्रवासी प्रतिबंध विधेयक में संशोधनों के संबंध में स्मद्द से लिखा-पढ़ी की; स्मद्द ने आश्वासन दिया कि कानूनों में रंग-भेद संबंधी कोई दोष नहीं रहेगा।
| मार्च 27 | केपटाउन में स्मद्स से साक्षात्कार किया |
| अप्रैल 22 | निष्क्रिय प्रतिरोध आंदोलन को निलंबित करने पर, स्मद्स भारतीयों द्वारा मांगे गए, आश्वासन देने के लिए सहमत हो गए |
| मई 3 | स्मद्स से भेंट की; स्मद्स द्वारा एशियाई पंजीकरण तथा अप्रवासी प्रतिबंध अधिनियम को रद्द करने का वचन देने पर एक ‘अस्थायी समझौता’ हुआ |
| जून 24 | राज्यभिषेक के अवसर पर सम्राट के प्रति निश्चय व्यक्त की |
| दिसंबर 8 | गोखले को दक्षिण अफ्रीका आने के लिए आमंत्रित किया |
| 1912 मार्च 16 | गोखले द्वारा अनुबंध प्रथा का उन्मूलन करने के प्रयासों की प्रशंसा की |
| सितंबर 12 | फोनिक्स ट्रस्ट की स्थापना की |
| अक्टूबर 22 | गोखले के साथ दक्षिण अफ्रीका, लीरिक्रो, मारकीस, मोजंबीक और जंजीबार का दौरा किया |
| जून 24 | राज्यभिषेक के अवसर पर सम्राट के प्रति निश्चय व्यक्त की |
| 1913 जनवरी 18 | ‘इंडियन ओपिनियन’ में वर्ष के अंत तक भारत वापस जाने की संभावना का जिक्र किया |
| मार्च 14 | सिक्सर्ट्स के सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि दक्षिण अफ्रीका में हुए भारतीय विवाह अमान्य हैं |
| 30 | सिक्सर्ट्स के निर्णय का भारतीयों की विशाल जनसभा द्वारा विरोध |
| अप्रैल 12 | 1911 के अस्थायी समझौते की शर्तों को पूरा करने में नये अप्रवासी बिल की असफलता की और ‘इंडियन ओपिनियन’ में ध्यान दिलाया गया |
| मई 19 | सरकार को चेतावनी दी कि यदि उसने अपने वायदे के अनुसार राहत न दी तो आंदोलन फिर से शुरू कर दिया जाएगा |
जून 7 भेदभावमूलक कानूनों का कठोरता से प्रयोग किए जाने तथा सत्याग्रह फिर से प्रारंभ होने की संभावना को ध्यान में रखते हुए भारत लौट जाने का विचार स्थगित कर दिया।

28 बातचीत के लिए सहमति व्यक्त की।

सितंबर 13 बातचीत “निष्फल सिद्ध हुई” की घोषणा।

15 निष्क्रिय प्रतिरोध फिर से प्रारंभ किया।

16 कस्तूरबा को बंदी बनाया गया।

अक्टूबर 17 न्यू कासल गए; अनुबंधित भारतीयों से आग्रह किया कि जब तक 3 पाउंड का कर रद्द न कर दिया जाए तब तक काम बंद कर दे। 3000 खनियाँ ने हड़ताल कर दी।

24 ट्रांसवाल की ओर ‘मार्च’ करने का प्रस्ताव किया।

28 न्यू कासल से ‘मार्च’ प्रारंभ हुआ।

30 चार्ल्सटाउन पहुँचे।

नवंबर 3 गिरफ्तारी देने के लिए ट्रांसवाल की ओर ‘मार्च’ की घोषणा की।

5 स्पेंस को तीन पाउंड के कर को रद्द करने का आश्वासन लेने के लिए फोन किया।

6 ‘ग्रेट मार्च’ का नेतृत्व किया। पामफोर्ड में गिरफ्तार किए गए।

7 फोकसरस्ट में जमानत पर रिहा कर दिया गए; मार्च करने वालों में फिर सम्मिलित हो गए।

8 स्टैंडर्टन में गिरफ्तार किए गए; मुचलके पर रिहाई; ‘मार्च’ जारी।

9 टीकवर्थ में गिरफ्तार किए गए; बेलफोर ले जाए गए।

10 जब तक कर रद्द न हो जाए तब तक दिन में एक बार भोजन करने की प्रतिज्ञा की।

11 डंडी में नौ माह के कठोर कारावास का दंड दिया गया।
फोक्सरूस्ट जेल ले जाए गए |

फोक्सरूस्ट में नया अभियोग चलाए जाने पर तीन माह का दंड दिया गया |

दिसंबर 18 बिना शर्त रिहा कर दिया गया | रिहाई के समय से लेकर समझौता होने तक दिन में एक बार भोजन करने का निश्चय किया और अनुबंधित मज़दूरों की पोशाक पहनने लगे |

1914 जनवरी 13, 16 स्मट्स से साक्षात्कार किया; प्रस्ताव प्रस्तुत किए |

22 स्मट्स से समझौता हो जाने पर सत्याग्रह स्थगित कर दिया |

फार्म के निवासियों की नैतिक चूक के लिए पश्चाताप के रूप में 14 दिन का उपवास किया |

जून भारतीय राहत अधिनियम पारित किया गया |

जुलाई 18 भारत के लिए इंग्लैंड के रास्ते जलपोत से रवाना हुए |

अगस्त 4 लंदन पहुंचे |

अक्टूबर भारतीय स्वयंसेवक कोर की स्थापना की | स्वयंसेवक कोर की तैनाती | कोर के कार्य में प्रशासनिक हस्तक्षेप होने पर सत्याग्रह किया |

दिसंबर 19 भारत के लिए जलपोत से रवाना हुए |

1915 जनवरी 9 भारत पहुंचे |

एम्बुलेंस सेवाओं के लिए केसर-ए-हिंद स्वर्ण-पदक से सम्मानित किया गया |

मई 20 अहमदाबाद में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की (बाद में, यह साबरमती नदी के नाम पर साबरमती आश्रम के नाम से जाना गया) |

1915-16 भारत और बर्मा का दौरा किया, रेल में तृतीय श्रेणी में यात्रा की |

1917 अनुबंधित भारतीयों के उप्रवास के विरुद्ध सफलतापूर्वक आंदोलन चलाया; बड़े पैमाने पर हस्तनिर्मित कपड़ा बनाने के लिए चरखे के उपयोग का विचार मन में आया |
अप्रैल

नील की खेती में मज़दूरों के हालात की जांच करने के लिए चम्पार न (बिहार) गए; बंदी बनाए गए और बाद में छोड़ दिया गया; रायत की शिकायतों की जांच करने के लिए बिहार सरकार द्वारा गठित समिति में सदस्य नियुक्त हुए।

1918 जनवरी-मार्च

अहमदाबाद में कपड़ा मज़दूरों का मामला हाथ में लिया और विवाद को शांतिपूर्वक हल करने के लिए उपवास किया। फसल न होने पर लगान मुल्तवी करने के लिए जिला खेड़ा (बंबई) में सत्याग्रह प्रारंभ किया।

अप्रैल 27

दिल्ली में वायसराय के युद्ध सम्मेलन में भाग लिया और उसे हिंदुस्तानी में संबोधित किया; तत्पश्चात सेना में लोगों की भर्ती के लिए खेड़ा जिले का दौरा किया।

1919 फरवरी 28

रौलट बिल को वापिस लिया जाए, इसके लिए सत्याग्रह करने की शपथ पर हस्ताक्षर किए।

अप्रैल 6

अखिल भारतीय सत्याग्रह आंदोलन का उद्घाटन किया; देशव्यापी हड़ताल हुई।

8 – 11

पंजाब में प्रवेश न करने के आदेश को मानने से इंकार करने के लिए दिल्ली जाते हुए बंदी बनाए गए; बंबई वापिस लाया गया; अनेक शहरों में हिंसा भड़क उठी।

अमृतसर में जलियांवाला बाग की दुखद घटना घटी। सेना ने निहले लोगों पर गोलियाँ चलाई जिससे 400 से अधिक लोगों की जानें गई। साबरमती आश्रम के पास सार्वजनिक सभा को संबोधित किया और पश्चाताप के रूप में तीन दिन के उपवास की घोषणा की।

14

नाडियाड में सत्याग्रह के बारे में अपनी ‘भयंकर भूल’ को स्वीकार किया।

पंजाब में मार्शल लों की घोषणा हुई।

18

सत्याग्रह स्थगित कर दिया।

सितंबर

गुजराती मासिक पत्रिका ‘नवजीवन’ का संपादन संभाला; बाद में, यह हिंदी में भी साप्ताहिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित हुआ।
अक्टूबर

अंग्रेजी साप्ताहिक 'यंग इंडिया' का संपादन संभाला; पंजाब में सरकारी ज्यादातियों की जांच के लिए गठित गैर-सरकारी समिति में सम्मिलित हुए।

नवम्बर 24

दिल्ली में अखिल भारतीय खिलाफत समीक्षक की अध्यक्षता की।

दिसंबर

अमृतसर में, कांग्रेस द्वारा मोटिस्थू-चैम्सफोििक सुधारों को स्वीकार किए जाने की सलाह दी।

1920 जनवरी

तुर्की के सुलतान को (जो मुसलमानों का खलीफा भी था) इस्लाम के पवित्र स्थलों पर अपने अधिराजक से वंचित न करने के लिए ब्रिटिश सरकार पर दबाव डालवाने के उद्देश्य से वायसराय के पास जाने वाले प्रशंसनश्चिंदल का नेतृत्व किया।

अगस्त 1

कैसर-ए-हिंद पदक, जुलूयुद्ध पदक तथा बोअर युद्ध पदक को वापस करते हुए वायसराय को पत्र लिखा।

सितंबर

कलकत्ता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के विशेष अधिवेशन द्वारा पंजाब और खिलाफत संबंधी अन्यायों की समाप्ति के लिए गांधीजी के असहयोग कार्यक्रम की स्थीति की।

नवंबर

अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की।

दिसंबर

नागपुर कांग्रेस में उनके इस संकल्प को स्वीकार किया गया कि कांग्रेस का उद्देश्य भारतीयों के लिए सभी वैध और शांतिपूर्ण साधनों द्वारा स्वराज की प्राप्ति है।

1921 अप्रैल

राष्ट्रीय रचनात्मक आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए भारत में कांग्रेस के एक करोड़ सदस्य बनाने, तलक स्वराज फंड के लिए एक करोड़ रुपये जमा करने और 20 लाख चरखों की स्थापना का कार्यक्रम प्रारंभ किया।

अगस्त

विदेशी वस्त्रों के पूर्ण बहिष्कार के अभियान का नेतृत्व किया और बंबई में विदेशी कपड़ों की विशाल होली जलाई।

दिसंबर

अहमदाबाद अधिवेशन में कांग्रेस द्वारा उन्हें अपना सर्विसवर्क (डिक्टेटर) मानकर संपूर्ण शक्तियां प्रदान की गई।
1922 फरवरी 1 बारदोली (गुजरात) में सत्याग्रह आंदोलन चलाने के इरादे का वायसराय को नोटिस दिया।

5 चौरीचौरा (उत्तर प्रदेश) की दुर्खांत घटना पर, जिसमें भीड़ द्वारा 21 पुलिस कांस्टेबलों और एक उपनिरीक्षक को जिंदा जला दिया गया था, पांच दिन का उपवास किया और सत्याग्रह आंदोलन की योजना को ल्याया दिया।

मार्च 10 साबरमती में राजद्रोह के लिए मिरफ्तियार किया गया और (18 मार्च को) छह वर्ष के कारावास का दंड दिया गया।

1924 जनवरी-फरवरी सैसून अस्पताल, पूना में (12 जनवरी को) ऐपेंशियों का आपरेंशिलिस का आपरेंटिक किया गया और 5 फरवरी को उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया।

अप्रैल 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' पत्रिकाओं के संपादक का कार्य फिर से हाथ में लिया।

सितंबर 18 हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए 21 दिन का उपवास प्रारंभ किया।

दिसंबर बेलगांव में कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता की।

1925 सितंबर चरखा काटने वालों के अखिल भारतीय संघ की स्थापना की।

नवंबर आधिकारिक दृष्टियों द्वारा किए दुश्कर्मों के लिए उनकी ओर से सात दिन का उपवास किया।

अपनी आत्मकथा 'द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरियेंस विंड द्रुथ' लिखना प्रारंभ किया।

1927 नवंबर लंका की यात्रा पर गए।

1928 दिसंबर कलकत्ता कांग्रेस में यह संक्षेप प्रस्तुत किया कि यदि 1929 के अंत तक भारत को स्वतंत्र उपनिवेश का दर्जा नहीं दिया जाता तो फिर उसका लक्ष्य स्वतंत्रता ही होगा।

1929 दिसंबर लाहौर कांग्रेस में उनके आग्रह पर यह घोषित किया गया कि कांग्रेस के मतानुसार स्वराज का अर्थ है पूर्ण स्वराज (अर्थात पूर्ण स्वतंत्रता)।
1930 फरवरी अखिल भारतीय कांग्रेस समिति द्वारा सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने के लिए कांग्रेस के सर्वसंचार (डिव्येटर) नियुक्त किए गए।

मार्च 2 वायसराय को पत्र लिखा कि यदि कांग्रेस की मांगों को नहीं माना गया तो वे नमक कानून भंग करेंगे।

12 डांडी समुद्र-टट के लिए यात्रा आरंभ की जहां उन्होंने औपचारिक रूप से नमक हाथ में लिया (अप्रैल 6)।

मई 5 गिरफ्तार किए गए और बिना मुकदमा चलाए जेल भेज दिए गए; संपूर्ण भारत में हड़ताल हुई; वर्ष की समाप्ति तक 1,00,000 से भी ज्यादा लोगों को जेल भेजा गया।

1931 जनवरी 26 जेल से बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

फरवरी-मार्च वायसराय के साथ कई बार वार्ता हुई जिसके परिणामस्वरूप इर्विन-गांधी समझौता हुआ।

अगस्त 29 द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में भाग लेने के लिए समुद्र के रास्ते इंग्लैंड के लिए रवाना हुए।

सितंबर-दिसंबर सम्मेलन के सत्रों में भाग लिया।

दिसंबर 5 इंग्लैंड से भारत के लिए प्रस्थान।

दिसंबर 28 बंबई उतरे।

1932 जनवरी 4 गिरफ्तार किए गए और बिना मुकदमा चलाए जेल में डाल दिए गए।

सितंबर 20 सांप्रदायिक अधिनियम में हरिजनों के लिए अलग निर्वाचन मंडलों की व्यवस्था का उन्मूलन करने के लिए जेल में ‘आमरण अन्नशन’ प्रारंभ किया।

26 भारत सरकार द्वारा हरिजनों के संबंध में उनकी मांगें मान लिए जाने पर उपवास तोड़ दिया।

1933 फरवरी 11 अंग्रेजी और हिंदी में प्रकाश्य साहित्यिक पत्र ‘हरिजन’ की स्थापना की।

मई 8 आमशुद्धि के लिए दोपहर से 21 दिन का उपवास प्रारंभ किया; रात 9 बजे बिना शर्त रिहा कर दिए गए।
सब्ज़िय अवज्ञा आंदोलन छह सप्ताह के लिए स्थगित करने की घोषणा की और सरकार से अपने अध्यादेशों को वापिस लेने की मांग की।

29 उपवास सीधे दिया।

जुलाई 26 सत्याग्रह आश्रम को विघटित कर दिया।

30 सब्ज़िय अवज्ञा आंदोलन को फिर से प्रारंभ करने के लिए अहमदाबाद से रास तक 33 अनुग्रामियों सहित मार्च करने के अपने निर्णय की सूचना बंबई सरकार को दी।

31 गिरफ्तार कर लिए गए और मुकदमा चलाए बिना जेल भेज दिए गए।

अगस्त 4 छोड़ दिए गए और एक प्रतिबंध आदेश को भंग करने के लिए फिर से बंदी बना लिए गए।

16 छुआ-छू आँदोलन के लिए निष्क्रिय रहने के लिए सुविधाओं से वंचित किए जाने पर उपवास किया।

23 बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

नवंबर 7 हरिजन-उद्धार के लिए दोपहर प्रारंभ किया।

1934 सितंबर 17 ग्रामीण उद्योगों के विकास, हरिजन-सेवा और बुनियादी हस्तशिल्पों के जरिए शिक्षा देने के कार्य में लग जाने के लिए 1 अक्तूबर से राजनीति से संयुक्त लेने के निर्णय की घोषणा की।

अक्टूबर 26 अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का उद्घाटन किया।

1936 अप्रैल 30 मध्यप्रांत में वर्षा के निकट एक गांव, सेवा ग्राम को अपना मुख्यालय बनाकर वहीं रहने लगे।

1937 अक्टूबर 22 वर्षा में शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए बुनियादी हस्तशिल्पों के जरिए शिक्षा देने की अपनी योजना की रूपरेखा प्रस्तुत की।

1939 मार्च 3 प्रशासन में सुधार लाने के शासन के वायदे को पूरा करने के लिए राजकोट में ‘आमरण अन्नशेष’ प्रारंभ किया और वायसराय के हस्तक्षेप पर 7 मार्च को यह अन्तिम समाप्त कर दिया।
1940 जून तथा सितंबर
युद्ध की स्थिति के संबंध में चर्चा करने के लिए वायसराय द्वारा निर्देशित किए जाने पर उनसे भेंट की।

अक्टूबर
वैयक्तिक सविंत्र अवज्ञा के लिए स्वीकृत थी; सवायम हविष्य पर 'हरिजन' में प्रकाशित रिपोर्ट तथा लेखों के पूर्व-संसर की सरकारी मांग पर 'हरिजन' और संबंध साप्ताहिक पत्रों का प्रकाशन स्थगित कर दिया।

1941 दिसम्बर 30
अपने ही अनुरोध पर कांग्रेस कार्यकारिणी समिति द्वारा कांग्रेस के नेतृत्व से भारमुक्त हुए।

1942 जनवरी 18
'हरिजन' और संबंध साप्ताहिक पत्रिकाएं फिर से प्रारंभ की।

मार्च 27
नयी दिल्ली में सर स्टीफोर्ड क्रिप्स से भेंट की; तत्पश्चात क्रिप्स के प्रस्तावों को एक 'उत्तर दिनांकित' (पोस्ट डेटिड) चैक बताया।

मई
ब्रिटिश सरकार से भारत छोड़ने के लिए अपील की।

अगस्त 8
'भारत छोड़ो' संकल्प के निहितार्थ पर प्रकाश डालने के लिए बंबई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक को संबोधित किया।

9
गिरफ्तार किए गए और पूना में आगाखां महल में नजरबंद कर दिए गए।

15
आगाखां महल में गांधीजी के निजी सचिव महादेव देसाई का हृदयगति रुक जाने से देहांत।

अगस्त-दिसम्बर
दंगों के संबंध में वायसराय तथा भारत सरकार से पत्राचार।

1943 फरवरी 10
21 दिन का उपवास प्रारंभ किया जो 3 मार्च को तोड़ा।

1944 फरवरी 22
आगाखां महल में कस्तूरबा गांधी का निधन।

मई 6
बीना शर्त रिहा किया गया।

सितंबर 9 – 27
एम. ए. जिम्मा से पाकिस्तान के संबंध में बातचीत जारी रखी।

अक्टूबर 2
75वें जन्म-दिवस के अवसर पर कस्तूरबा स्मारक के लिए 110 लाख रुपये (825,000 पौंड) की राशि भेंट की गई।
1945 अप्रैल 17 आगामी सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन के संबंध में एक वक्तव्य में घोषणा करते हुए कहा कि समानता और भारत की स्वतंत्रता के बिना शांति असंभव है | जर्मनी और जापान के लिए भी न्यायोपचित शांति की मांग की |

दिसंबर 19 शांति निवेदन में सी.एफ. एंडूज स्मारक अस्पताल की नीव रखी |

1945-46 दिसंबर-जनवरी बंगाल और असम का दौरा किया |

1946 ज. तथा फ. छूआछूत के विरोध तथा हिंदुस्तानी के प्रचार के लिए दक्षिण भारत का दौरा किया |

फरवरी 10 हरिजन और संबंध साप्ताहिक पत्रिकाओं का प्रकाशन फिर से प्रारंभ किया |

अप्रैल दिल्ली में केबिनेट मिशन के साथ राजनीतिक वार्ता में भाग लिया |

मई 5-12 शिमला गए; शिमला सम्मेलन आयोजित; विचार-विमर्श निष्कलित हुआ |

16 केबिनेट मिशन ने अपनी योजना की घोषणा की |

18-19 केबिनेट मिशन के साथ उनकी योजना पर चर्चा की |

26 तत्कालीन परिस्थितियों में, ब्रिटिश सरकार द्वारा तैयार किए गए दस्तावेज को सर्वश्रेष्ठ माना |

जून 6 मसूरी गए |

7 दिल्ली वापिस आए |

10 मित्र देशों की विजय पर यह कहते हुए हर्ष प्रकट करने से इंकार किया कि यह “असल पर सत्य की विजय नहीं है” |

11 वायसराय ने गांधीजी से साक्षात्कार किया; केंद्र में साधा सरकार का प्रस्ताव रखा |

16 केबिनेट मिशन की बातचीत स्थगित हो गई; वायसराय ने अंतरिम सरकार बनाने का प्रस्ताव रखा |

18 कांग्रेस कार्यकर्ताओं के समिति ने अंतरिम सरकार की योजना को स्वीकार करने का निर्णय किया |
कार्यकारिणी समिति की बैठक में भाग लिया; क्रिप्स ने गांधीजी से भेंट की।

कांग्रेस को अंतरिम सरकार में शामिल न होकर केवल संविधान सभा में सम्मिलित होने की सलाह दी।

केबिनेट मिशन से भेंट की।

दिल्ली से पूर्व के लिए रवाना हुए। रास्ते में गाड़ी को पटरी से उतारने के प्रयत्न किए गए।

जुलाई 7 बंबई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को संबोधित किया; कांग्रेस ने केबिनेट मिशन की 16 मई की योजना को स्वीकार कर लिया।

31 जिन्ना ने ‘सीधी कार्यवाह’ करने की धमकी दी।

अगस्त 12 वायसराय ने कांग्रेस को अस्थायी सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करने की योजना की।

16-18 कलक्टा में भीषण नरसंहार।

24 वायसराय वेंवेल ने योजना का रेष्यो पर प्रसारण किया।

27 गांधीजी ने ब्रिटिश सरकार से बंगाल त्रासदी को दोहराने के विरुद्ध चेतावनी देते हुए तार दिया; वेंवेल को भी पत्र लिखा।

सितंबर 4 अंतरिम सरकार बनाई गई।

26 वेंवेल से साक्षात्कार किया।

अक्टूबर 9 जिन्ना की 9-सूत्री मांगों के विषय में कांग्रेस को सूचित किया।

10 नोआखाली में नरसंहार।

15 मुस्लिम लीग अंतरिम सरकार में सम्मिलित होने के लिए सहमत हो गई।

28 कलक्टा के लिए प्रस्थान। बिहार में दंगे-फसाद प्रारंभ।

नवंबर 6 नोआखाली के लिए प्रस्थान, ‘आंशिक उपवास’ के बारे में वक्रत्व जारी किया; नोआखाली का दौरा आरंभ।

20 बिना किसी को साथ लिए निकल पड़े।
दिसंबर 20 श्रीरामपुर में एक माह का प्रवास पूरा किया।
25 नोआखाली में उन्होंने कहा, “ईश्वर मेरी जमकर परीक्षा ले रहा है।”
30 जवाहरलाल नेहरू गांधी से आकर मिले जिनसे उन्होंने कहा, “मेरा विवेक मेरे हृदय के भावों का पूरी तरह समर्थन कर रहा है।”

1947 जनवरी 2 उन्होंने कहा, “मेरे चारों तरफ अंधेरा-ही-अंधेरा है।”
श्रीरामपुर से पैदल दौरे पर चल पड़े।
3 – 29 बिहार में दंगों से प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया।
30 पटना से दिल्ली के लिए रवाना हुए।
नये वायसराय माउंटबेटन दिल्ली पहुंचे।

अप्रैल 1 – 2 गांधीजी ने दिल्ली में एशियाई संबंध सम्मेलन को संबोधित किया।
15 जिम्मा के साथ मिलकर सांप्रदायिक शांति के लिए संयुक्त अपील जारी की।
29 बिहार गए।

मई 1 कांग्रेस कार्यकारिणी ने सैद्धांतिक रूप से देश का विभाजन स्वीकार कर लिया।
5 एक साझेदार में गांधीजी ने इस बात से इंकार किया कि भारत का सांप्रदायिक आधार पर विभाजन अपरिहार्य है।
24 बिहार से दिल्ली के लिए प्रस्थान किया।
31 गांधीजी ने घोषित किया कि विभाजन से पहले शांति स्थापित होनी चाहिए। यह भी कि वे भारत के जीवक्षेत्र (विभाजन) के निर्णय में भागीदार नहीं हैं।

जून 2 वायसराय ने देश-विभाजन की योजना प्रस्तुत की; कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने इसे अपनी स्वीकृति दी।
3 भारतीय नेताओं द्वारा माउंटबेटन की योजना पर रेडियो भाषण।
6 गांधीजी ने पाकिस्तान को स्वीकार करते हुए माउंटबेटन को लिखा कि वे जिम्मा को कांग्रेस के साथ चिंता तथा सभी विवादप्रस्त विषयों को मित्रतापूर्वक ध्यान से निपटाने के लिए राजी करें।
कृत्रिम कार्यकारिणी समिति को संबोधित किया | 12

जुलाई

'भारत स्वतंत्रता बिल' पास हुआ |

27 भारत की रियासतों के राजाओं से जनता के वर्चस्व को एक विशेषाधिकार मानने की अपील की |

अगस्त

14 अंग्रेजों की दासता से मुक्ति पाने पर अगले दिन का हर्षोल्लास दिवस के रूप में स्वागत; परंतु देश-विभाजन की निदां; पाकिस्तान का जन्म |

अगस्त

15 कलक्टे में हिंदू-मुसलमानों में भाई-चारा |

16 'कलक्टा में हुए इस चमकलार' का स्वागत |

सितंबर

1 कलक्टे की शांति को नौ दिन का आक्षर्य बताया; उपवास का निष्पादन |

2 कलक्टे के घर में भारी भीड़ ने उन्हें घेरा; नोआखाली जाने का विचार ल्याय दिया; शांति के लिए किए जाने वाले प्रयत्नों को तेज किया |

4 उपवास तोड़ दिया |

7 कलक्टे से दिल्ली के लिए प्रस्थान; दंगों से पीड़ित क्षेत्रों का प्रतिदिन दौरा करना प्रारंभ किया |

24 पाकिस्तानी हमलावरों द्वारा कश्मीर पर हमला |

25 कश्मीर भारतीय संघ में समिलित हुआ |

26 'ब्रिटिश भारत में सर्वनाश' वक्तव्य की आलोचना |

नवंबर

1 भारतीय सेना का जूनागढ़ में प्रवेश |

3 जूनागढ़ भारत में समिलित हो गया | अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को संबोधित किया |

11 जूनागढ़ के भारत में समिलित होने का समर्थन |

दिसंबर

25 भारत और पाकिस्तान के बीच मित्रतापूर्ण समझौते का आग्रह |

30 भारत द्वारा कश्मीर-विवाद संयुक्त राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत |

1948 जनवरी

12 दिल्ली में सांप्रदायिक शांति के लिए उपवास करने का
निर्णय; माउंटबेटन गांधीजी को उपवास न रखने के लिए राजी करने में असफल।

15 स्वास्थ्य की स्थिति 'नाजुक'। भारतीय मंत्रिमंडल द्वारा पाकिस्तान को देय 55 करोड़ की राशि अदा किए जाने के निर्णय का स्वागत किया। सांप्रदायिक शांति की स्थापना के लिए उपवास जारी रखा।

17 चिकित्सकों ने चेतावनी दी कि उपवास समाप्त करना अब नितांत आवश्यक है। केंद्रीय शांति समिति का गठन जिसने 'शांति के लिए शपथ' लेने का निर्णय लिया।

18 शांति समिति ने 'शपथ' पर हस्ताक्षर किए, 'शांति-शपथ' गांधीजी को प्रस्तुत की गई; गांधीजी ने उपवास तोड़ा।

20 प्रार्थना-सभा में बम फटा।

27 महरौली में मुसलमानों के मेले में गए।

29 कृद्ध शरणार्थियों द्वारा गांधीजी से संयात्स केक हिमालय चले जाने की मांग।

30 कांग्रेस को लोक सेवक संघ में रूपांतरित करने के लिए एक संविधान का प्रारूप तैयार किया; प्रार्थना-सभा में जाते समय उनकी हत्या कर दी गई।